ॐ

महात्मा श्री स्वामी नित्यानन्दजीका

जीवनचरित्र।

सन् १९१८.

मुंबई.

J.A.Flendrig & J.H.M. van Tongeren,
University Department of Medicine, St.Radboud Hospital, Nijmegen,
The Netherlands.

WITH IDIOPATHIC HAEMOCHROMATOSIS. J.A.Flendrig & J.H.M. van Tongeren,

University Department of Medicine, St.Radboud Hospital, Nijmegen,
The Netherlands.

Iron absorption and retention were measured by means of ^{59}Fe and a whole body counter, equipped with four sodium iodide crystals. The detector arrangement and procedure were such, that in the period between oral iron administration and the first defaecation, the
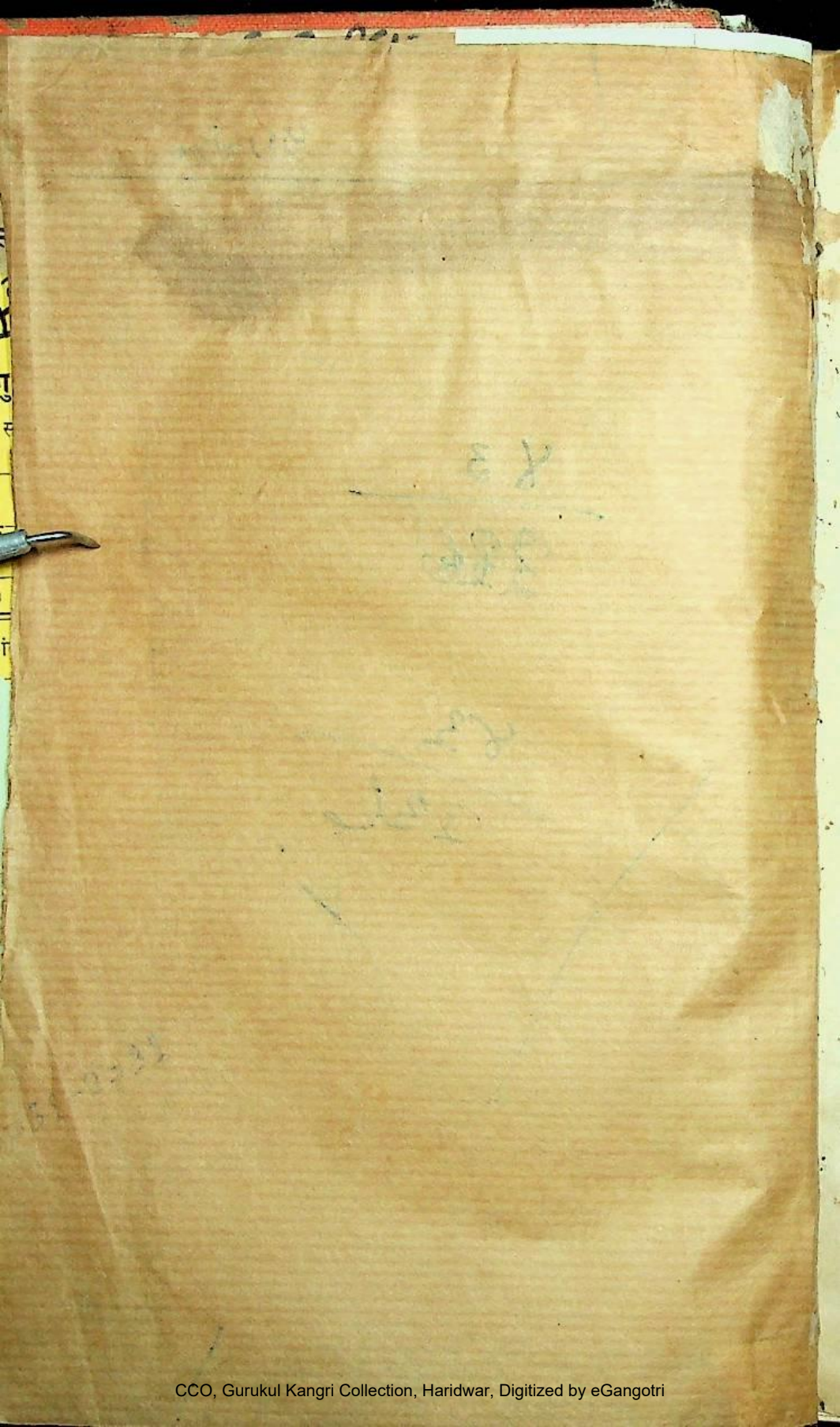
ओ३म्

महात्मा श्री स्वामी

नित्यानन्द सरस्वतीजी

का

जीवनचरित्र
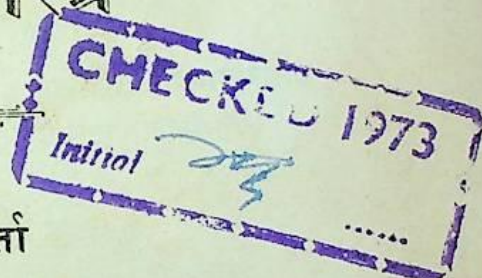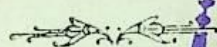
प्रसिद्धकर्ता

श्रीयुत सेठ रणछोड़दास भवान,

सभासद् श्रीमती परोपकारिणीसभा,

तथा

प्रधान आर्य्यप्रतिनिधिसभा बम्बई प्रदेश.

नवंबर १९१७

मुंबई वैभवप्रेस,-मुंबई.

श्रीमान शेठ रणछोडदास भवान.

॥ ओ३म् ॥

व्याख्यानकी प्रस्तावना.
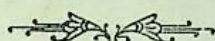
स्वामीजीके व्याख्यान.

जिस तेजस्वी व्याख्याताको महामति रानडे महोदयने Gifted Preacher की उपाधिदी हो उसकी वाणी जिन सहृदयोंने स्वयं अपने कानोंसे सुनकर अपनी आत्मा पवित्रकी है वेही उस सौम्य और गम्भीर नादका अनुभव कर सकते हैं। अजमेरमें लेखककोभी स्वामीके कतिपय व्याख्यान सुननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अतःउसे यह प्रकट करनेमें कोई संकोच नहीं प्रतीत होता कि आगे जो दो चार व्याख्यान स्वामीजीके दिये जाते हैं उनका प्रभाव श्रीमुखसे उच्चारित होनेपर श्रोतृगणोंपर पड़ाथा उसका शतांशभी पाठकोंको प्राप्त हो जाय तो बहुत जानिये।

साथमें दिये हुए प्रायः सारेही भाषण गुजराती और मराठीसे अनुवादित हैं अतः कहीं २ उक्त भाषाओंकी झलकभी दिखाई दे जावे तो पाठक क्षमा करेंगे।

व्याख्यानोंकी महत्ता और गौरवके विषयमें निर्णय करनेका भार सहृदय और निष्पक्ष पाठकों परही छोड़ दिया है।

एक दो व्याख्यानोंमें पूर्व और पश्चात्‌की कार्य्यवाहीकाभी दिग्दर्शन पाठकोंकी विज्ञप्तिके लिये कराया गया है।

पहले चार व्याख्यान "आर्य्यमित्र" के सम्पादकनेभी अपने पत्रमे प्रकाशित किये था और ये वहींसे उद्धृत किये गये हैं।

१७ वां और १९ वां व्याख्यान यद्यपि एकही है तथापि भिन्न २ रिपोर्टरोंने "बडोदावत्सल" और "सयाजीविजय" पत्रोंमें एक आशयको अपने २ लेखोंसे किस प्रकार दर्शाया है, यह जाननेके लिये यहां दुबारा दिया है।

॥ ओ३म् ॥

जीवनचरित्रका लेखकके दो शब्द.
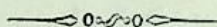
लेखकका निवेदन.

लेखकने पृष्ठोंमें स्वामीजीके प्रवास और कार्य्यका वर्णन पाठकोंकी सेवामें उपस्थित करनेका उद्योग किया है । इसका कारण यह है कि आर्य्यजगत्ने स्वामीजीके जीवन सम्बन्धी घटनाओंका पूर्ण वृत्तान्त समाचारों और निजूपत्रोंद्वारा प्रकटकी हुई इच्छाके अनुसार श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजके पास भेजनेका उद्योग नहीं किया । तथापि जो कुछ लिखा गया है वह आगे कभी लिखे जानेवाले जीवनचरित्रके लिये संकेत देनेको अलम् होगा । जो कुछ लिखना गया है उसकी सत्यतामें सन्देह करनेका कोई कारण नहीं ।

चरित्रका प्रायः सर्वांशही श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजके लिखाये हुए वृत्तान्तके आधारपर लिखा गया है, कुछ थोडासा अंश समाचार पत्रोंसे लिया गया है । लिखे जानेके पश्चात् स्वामीजीने आद्यन्त इसे सुन लेनेकी कृपाकी है । अतः किसी प्रकारकी असत्य घटनाका उल्लेख होना सम्भव नहीं ।

लेखकका यह प्रथम प्रयास है अतः भाषा और भाव सम्बन्धी त्रुटियां अनेक रही होंगी जिनके लिये वह पाठकोंसे क्षमा आर्थी है यदि कोई सहृदय पाठक उसे इन त्रुटियोंका अवगम करादेंगें तो अत्यन्त कृपा होगी ।

विनीत.

लेखक,

सूचना—पाठक ! जीवनचरित्रमें १७८ पृ. से आगेके पृष्टमें भूलसे १९१–१९४ आदि अंक छपगये हैं कृपया सुधार लें. संशोधक.

भाग दूसरा (पत्रव्यवहार)

श्री. स्वामी नित्यानन्दजीके व्याख्यान

———

स्वामी श्री नित्यानंदजी महाराज.

जन्म संवत १९१७. मृत्यु संवत १९७०.

॥ ओ३म् ॥

भूमिका ।
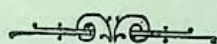
महात्मा श्रीस्वामी नित्यानन्द सरस्वतीके जीवनचरित्रसम्बन्धी कुछ लेखरूपी भूमिका लिखनेसे पूर्व यह उचित प्रतीत होता है, कि हम आर्य्यसमाजके आवश्यक जीवनपर एक दृष्टिपात करें और ऐसा करनेसे पूर्व, आर्य्यसमाजके संस्थापकके जीवनोद्देश्यके सम्बन्धमें कुछ विचार दर्शाना सबसे प्रथम आवश्यक होगा।

योरोपके विद्वान् मानते हैं कि " History repeats itself " जिसका तात्पर्य यह है, कि ऐतिहासिक घटनाएं पुनः २ हुआ करती हैं । यदि विचारदृष्टिसे देखें तो प्रतीत होगा कि मानवघटनाएं जो इतिहासका विषय हैं, वही पुनः पुनः नहीं होतीं किन्तु वह अन्य सब घटनाएं जो किसीभी इतिहासका विषय नहीं, वह भी पुनः पुनः हुआ करती हैं। ग्रीन महोदयके जन्मसे पूर्व, क्षत्रिय पुरुषोंका राजाओंके युद्धादि व्यवहारोंका वर्णन करना ही **इतिहास** समझा जाता था।

ग्रीन महोदयने अपना अपूर्व इतिहास लिखकर यूरुपमें यह दर्शादिया कि पूर्ण इतिहास वही हो सकता है, जिसमें न केवल राजपुरुषोंके व्यवहारोंका ही वर्णन हो, प्रत्युत जिसमें अन्य सब प्रजाके अग्रगन्ता तथा हितकारी सेवकोंका भी इतिहास हो । ग्रीन साहेबने इतिहासको राजाओंके युद्धादिकाही दर्शक नहीं बनाया किन्तु Peoples' History अर्थात् प्रजाका भी इतिहास बना दिया। उन्होंने अपने इतिहासमें लिखा कि Crecy (क्रेसी) युद्धका वर्णन इतना उपयोगी नहीं जितना कि Caxton (कैकस्टन) महोदयका जिसने छापनेका यन्त्र निर्मित किया। शेक्स्पियर आदि कवियोंको पहिले इतिहासमें कभी इतना आदरका स्थान नहीं मिल सकता था जितना कि ग्रीन महोदयके कालसे मिलने लगा और अब तो जहां महान् क्षत्रिय एलफ्रेड दी ग्रेटकी जीवनी पृथक् लिखी जाती है, वहां शेक्स्पियर आदि पंडितोंके जीवनचरित्र भी उतनेही महत्वके समझे जाकर पृथक् लिखते हैं इस समय शेक्स्पियर महाकविके यूरुपके इतिहासलेखक—

" Poet For all times "

अर्थात् " नित्य कवि " की महान् पदवी दे रहे हैं जिसका भाव यह है कि योरोपके लोग जो उन्नति २, प्रगति २, की पुकार रात दिन मचा रहे हैं वह भी यह न समझें कि शेक्स्पियर जो आजसे दो शताब्दी पीछे होगया उसकी कीमत आज कल

पुराना होनेसे न्यून हो गई है। उनके मानेहुए उन्नति वा प्रगतिके नियमके अनुसार तो उससे बढकर कोई महाकवि आजकल अवश्य होना चाहिये ॥

क्या २०० वर्षतक " प्रगति " का नियम झूठा होगया जब युरुपके विद्वान् मुक्त कंठसे कहते और लिखते हैं कि यह—

प्रगतियुग

है, तो अवश्य प्रत्येक बातमें उन्नति वा प्रगति होनीही चाहिये. क्यों नहीं शेक्स्पियर जैसा वा सच्च पूछो तो उससे बढिया कवि आजतक इंग्लैंड वा योरूपमें जन्मा? भविष्यकालके लिये भी यही कवि काम दे ऐसा क्यों प्रगतियुगमें हो । जो पुस्तक पुरानी हुई वह गई वह आगे क्यों कर लोगोंका उद्धार करसकती है ? एक तरफ प्रगति युग मानना दूसरी तरफ शेक्स्पियरको भविष्यके लिये भी महान् उपयोगी कवि मानना इस परम्पराके विरोधको वह दूर नहीं कर सके । उधर (History repeats itself) (ऐतिहासिक घटनाएं पुनः २ हुआ करती है.) यह महावाक्य भी जब मौजूद है तो फिर आजतक २०० वर्ष हो गये क्यों दूसरा **वैसाही कवि** जो कि इतिहासके इस महावाक्यका भाव है वा उससे **बढ़िया कवि** जो " प्रगति " के माने हुए सिद्धान्तका भाव है पैदा नहीं हुआ ? अभीतक तो इन प्रश्नोंके उत्तर वहांके विद्वान् नहीं दे पाये !

भारतीय आर्य्योंसे यदि कोई यह प्रश्न पूछे तो वह उसका उत्तर दे सकते ह क्योंकि वे कर्मके अटल सिद्धान्तको माननेवाले हैं और कर्मफलप्रदाता ईश्वरको न्यायकारी मानते हैं।

वे मानवजातिको एक मानते और जिस देश कालमें जिस जीवको जैसे क्रमफल भोगने हैं वह वहां ईश्वरके नियमानुसार अवश्य उत्पन्न होगा । उन्नति वा प्रगतिका नियम केवल यूरुपके लिये हो अफरिकाके हबसियोंके लिये नहीं ऐसा कर्मसिद्धान्त और ईश्वरके न्यायकारी होनेकी दशामें कभी कोई मान नहीं सकता ।

आर्य्यलोग युक्तिपूर्वक इस बातको सिद्ध कर सकते हैं कि जिस प्रकारके उच्च श्रेणीके उन्नत मनुष्य भूतकालमें एक वा अनेक देशोंमें हुए उन जैसे योग्यताके मनुष्य अब हैं वा हो सकते हैं और भविष्यमें सर्वत्र होंगे। ऐतिहासिक घटनाएं पुनः पुनः हुआ करती हैं. यह बात ठीक है। कभी समय था कि भारतमें राजा लोग " उडन खटोलों " में आकाशमार्गमें विचरण करते थे और पुष्पकविमानके निर्माणकर्त्ता भूगोल पर पाये जाते थे जिसका वर्णन रामायण महाभारत आदिमें मौजूद है।

उडन खटोलोंकी कथाएं प्रत्येक आर्य्यबच्चा अपनी आर्य्यमातासे भारतके सब प्रान्तोंमें आजतक श्रवण कर रहा है कई हजार वर्षोंसे ये उडन खटोले भूगोलपर दृष्टि नहीं पडे । इस शताब्दिमें योरूपके विश्वकर्मा (इंजिनियर) लोगोंकी बुद्धि उनके—

कर्मानुसार

उस स्थलपर पहूँची। जहां पहिले भारतके विश्वकर्मा उपाधिधारी पुरुषोंकी पहुंच

चुकी थीं तो विमानोंका आविष्कार पुनः हुआ और विश्वकर्मा ब्राह्मणोंकी कृति तथा मस्तिष्कको इतिहासने पुनः दोहरा दिया। आर्य्योंके लिये शुभकर्मोंका फल सर्व काल और सर्व देशोंमें प्रगति वा उन्नति है और मन्द कर्मोंका फल सर्वत्र और सदैव अवनति तथा अधोगति है।

पुराने भारतकी उन्नतिका कारण एक मात्र आर्य्यप्रजाके उन्नत कर्म थे। यद्यपि वह कर्म अनेक थे परन्तु उनको मुख्य करके हम तीन भागोंमें बांट सकते हैं—

(१) प्रथम तो यह कि आर्यप्रजा सत्यव्रतधारी अर्थात् सत्यमानी सत्यवादी और सदाचारी हुआ करती थी।

(२) दूसरे आर्य्य लोग विद्याप्रेमी, विद्वान् और विद्याका दान करनेवाले थे।

(३) तीसरे **अमृततत्वके जिज्ञासु** होनेसे ब्रह्मनिष्ठ योगी योगाभ्यासी तथा तपस्वी होते थे,—

उस समयके ऋषियोंके ग्रन्थोंमें हम यह महावाक्य पाते हैं कि:—

असतोमा-सद्गमय.
तमसोमा-ज्योतिर्गमय.
मृत्योर्मा-अमृतंगमय.

जबसे आर्य्यप्रजाने उक्त तीन प्रकारके कर्म छोड दिये तबसे भारतवर्षका पतन होने लगा। वर्णाश्रमोंकी मर्यादा लोप होगई और श्रीविक्रमादित्य महाराजकी मृत्युके साथही भारतकी रही सही उन्नति भी मृत्युको पहुंच गई। ज्यों २ समय आगे बढता गया त्यों त्यों सत्यव्रतकी जगह, छलकपट और मिथ्या भाषणने लेली। विद्याकी जगह घोर अन्धकार फैल गया। मनुष्यको भ्रमजालमें गिरानेवाली कल्पित बातोंने विद्यापूर्ण अद्भुत शास्त्रोंका स्थान लेकर चारों वर्णोंके पुरुष स्त्रियोंको वेदविद्याविहीन कर दिया। वैदिकज्योतिकी जगह सर्वत्र भ्रमरूपी तमसही छा गया। आस्तिक्यपन तो बोरिया बिस्तर बान्धकर भारतदेशसे चल गये। मूर्तिपूजा आदि कर्मोंने योगाभ्यासका आसन छीनकर उसको धक्के मार देश निकाला दे दिया।

यह जो कुछ था वह भारतप्रजाके मन्दकर्मोंका ही मन्दफल था। ईश्वर पूर्ण न्यायकारी हैं, उनके न्यायमें सदैव दया रहती है। वह किसी प्रजाके सान्त कर्मोंका फल अनन्त नहीं देते। भारतप्रजाका पुनः उन्नत जीवन होना था, पुराने ऋषियोंकी उन्नतिके रहस्यके दर्शन करनेका समय आगया था। भूगोलके अनेक देश पतित अवस्थासे जागृत हो उन्नत अवस्थामें आ रहे थे **बृटिश साम्राज्य** के शुभ शासनने शान्ति प्रसरण कर दी थी। बुद्धदेव, शंकराचार्य, कबीर देव, नानक देव, तुकाराम, नरसिंहमहेता, राम मोहनराय, केशवचन्द्रसेन, देवेन्द्रनाथ ठाकुर आदि अनेक सिद्ध तथा प्रसिद्ध

पुरुष अपने २ समयपर सुधारका काम कर चुके थे, तिसपर भी भारतप्रजा अवनत दशामें ही थी।

काठियावाडकी वीरभूमिमें एक संस्कारी जीवने मोरवी नगरमें औदिच्य ब्राह्मणके गृहमें जन्म लिया। बालपनसे ही इसके सत्यव्रत धारी होनेके संस्कार स्फुरित होने लगे. शिवरात्रीके समय शिवमूर्त्ति पूजनके समय मूषकको इसपर क्रीडा करते देख इस **सत्याभिलाषी**के मनमें शंका हुई कि यह विश्वनाथ कैसे हो सकता है? कुछ काल पीछे गृहमें दो प्राणप्यारे संबंधियोंकी मृत्यु हुई उस समय

मृत्युसे अमृत

की तरफ जानेके संस्कार इस वेगसे स्फुरित हुए कि उनका वर्णन करनेकी लेखनीको सामर्थ्य कहां? इसके साथ ही विद्याके स्थानोंमें जाकर विद्याज्योति ग्रहण करने की तीव्र लालसा पूर्णरूपसे जागृत हो गई। यह संस्कार पुरानें समयमें ऋषियोंको फुरा करते थे, क्योंकि उनके ग्रन्थोंमें हम यह प्रार्थनाएं पाते हैं किः—

असतो मा—सद्गमय
तमसोमा-ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा-अमृतं गमय

अब इतिहासने अपनी ऋषि बननेंकी पुरानी घटनाको पुनः प्रकट किया। यह युवा पुरुष किस प्रकार घरको त्यागता है किस प्रकार विद्याज्योति की शोधमें भटकता है; किस प्रकार नर्मदाके किनारे २ कांटोंमें अपने शरीरको सचमुच छलनी बनाता और अमृत तत्त्वकी खोजमें निकलता है? किस प्रकार यह वीर मनवाला आबू और हिमालयके पहाडों पर केवल कोपीन धारण किये हुए गर्मी और सर्दीकी परवाह न करता हुआ अद्भुत तपस्वीके रूपमें चढता और उतरता है अखंड ब्रह्मचर्य्यव्रतको धारण किये किस प्रकार यह अनेक साधु महात्माओं और धुरन्धर संस्कृतज्ञ पंडितोंकी छानबीनमें अपने पगसे रातदिन यात्रा करते हुए। नैष्ठिक ब्रह्मचारी महर्षी तपस्वी विरजानन्द सरस्वतीके पास मथुरा जा पहुंचता है? अकालके दारुण समयमें विद्यार्थी दयानन्दको मूर्तिपूजक न होनेसे पेट भरनेको अन्न भी सुभीतासे नहीं मिलता। सत्यव्रती, विद्यावती दयानन्द ब्रह्मचारीने घरसे निकलनेके समयसे लेकर इस समयतक तपस्याकी पराकाष्ठा करदी। ऋषिश्रेणीका आत्मा गुरुदक्षिणा दे और विद्या समाप्त कर मथुरासे चलता है। सच पूछो तो गुरुसे परोपकार करनेकी प्रतिज्ञा करता है। भूगोलमेंः—

सत्यप्रचार वैदिक ज्योतिप्रसार और अमृतदान

देनेके लिये वह लोकैषणा, वित्तैषणा और पुत्रैषणाका **पूर्णत्यागी** होकर विचरता है। एक कौपीन, एक दंड और छ आनेके पैसे लिये हुए काशीके मठधारी संन्यासियोंमें

वैदिकधर्मप्रचारके निमित्त जाता है। स्वामी श्रीविशुद्धानन्द सरस्वती मानते हैं कि दयानन्द कहता तो सच है पर वह "उल्टी गंगा बहाना चाहता है" सच है वह सतयुग लाना चाहता है वह प्रकाश युग स्थापन करना चाहता है वह योग-युग देखना चाहता है। इसी उलटी गंगा वहनेकी धुनमें स्वामी दयानन्दने बम्बईमें प्रथम आर्यसमाज स्थापित किया। इन ही युगोंको पुनः लानेकी धुनमें उसने आर्य्य समाजके १० नियम रचे जिनमें प्रथम और दूसरे नियममें अमृततत्वका बोधन कराया। चोथेमें सत्यव्रत धारण करना ठहराया और तीसरेमें वेदोंका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना अथवा वैदिक ज्योतिकी वृद्धि और अविद्यान्धकार का नाश परम कर्तव्य दर्शाया। इन दस नियमोंके अनुसार आर्यसमाजको जो कुछ करना चाहिये उसका व्योरा यह है।

(१) पहिले नियमके प्रचारके लिये जिसका भाव आस्तिकपनका प्रचार करना है बड़े योग्य विद्वानोंकी जरूरत है। डारविन मत या नास्तिकपनकी लहरमें बहनेवाले अनेक कॉलेजोंके पढ़े लिखे विद्वान् मिलेंगे इनको आस्तिक बनाना सहज काम नहीं। जहां तर्कशास्त्री इस कामको करें वहां साथ ही योगाभ्यासी मंडल स्थापन करने चाहिये ताकि विद्वान् योगाभ्यासद्वारा अपने जीवनमें ब्रह्मके उच्चभावको अनुभव कर, शुद्ध जीवनसे औरोंको आस्तिकपनका जीवन प्रदान कर सकें। इस नियमकी पूर्त्तिके लिये, जहां गृहस्थ पंडित वा विद्वान् काम करें वहां **वानप्रस्थ, संन्यस्त अवस्था**के योग्य पुरुष योगा-भ्यास करते हुए अपने जीवनको पवित्र कर अनेक जिज्ञासु नास्तिकोंको आस्तिक बना सकें।

(२) दूसरे नियमके प्रचार करनेके लिये अथवा यह कहो कि ईश्वरका स्वरूप तथा उसकी अष्टांगयोगद्वारा उपासना सिखानेवाले मुख्य करके वानप्रस्थ तथा संन्यासीही हो सकते हैं।

(३) तीसरे नियमके प्रचारके लिये आर्यसमाजको निम्न लिखित काम करने चाहिये।

(क) **स्वाध्याय**की वृद्धि और उसके प्रचारके लिये वेदोंके व्याख्यानरूपी ग्रन्थ विद्वानोंद्वारा नाना-भाषाओंमें प्रकट करने और फैलाने ॥

(ख) नानाप्रकारकी पाठशालाएं, स्कूल, कॉलेज, गुरुकुल, लडके लडकियोंके, लिये जारी करने कराने।

(ग) वैदिक सिद्धान्त जनताको श्रवण करानेके लिये धर्मोपदेशक नियत करने कराने। ये धर्मोपदेशक गृहस्थ, वानप्रस्थ, और संन्यासी हो सकते हैं गृहस्थ और वानप्रस्थ तो स्थानविशेषमें काम कर सकते हैं। और संन्यासी सर्व प्रान्तों वा सर्व देशोंमें घूम सकते हैं।

(४) आचरणद्वाराही चौथे नियमका पालन हो सकता है।

(५) आचरणद्वारा ही पांचवा नियम पाल सकते हैं ।

(६) संसारके त्रिविध उपकार करनेके लिये आर्य्यसमाजिकोंको अपनी ही संस्थाओंके पालनपोषणमें नहीं रह जाना चाहियं; प्रत्युत समाजसे बाहिर भी जो लोग हैं उनके कल्याणार्थ काम करना वा उनकी संस्थाओंमें योग देना चाहिये ।

(७) व्यवहारद्वाराही यह नियम पाल सकते हैं ।

(८) दो प्रकारसे विद्याका प्रचार होता है;

(क) उपदेशद्वारा-गृहस्थोंमें ।

(ख) पाठशालाओंद्वारा बालकोंमें ।

(९) परसेवा और परोपकार मन वचन और कर्मसे करनेपर इस नियमको पाल सकते हैं ।

(१०) आजकल भारतमें यह रोग फैल रहा है कि मैं सर्वोपरि हो जाऊं. समाज सभा सब मेरी अंगुलीके इशारे पर चलें. यदि मेरी बात नहीं मानी जाती तो मैं सभा समाजको छोड़ दूंगा । अहंभावको समाजके आगे तुच्छ समझना, समाजके कल्याणक लिये अहंभाव वा अभिमानको दबाना चाहिये । अभिमान, व्यक्तिगत सत्ता, छोड़नेसे ही यह नियम पालन हो सकता है । सामाजिक सर्वहितकारी नियमोंको पालनेमें अपने आपको परतन्त्र मानकर व्यवहार करना इस नियमका भाव है ।

—नियमोंको पालन करने करानेके साधन ये सिद्ध होते हैं ।

१–गृहस्थ पंडित (विद्वान्) जो उपदेशद्वारा आस्तिकपनका प्रचार कर सकें,

२–वानप्रस्थ महात्मा–जो आस्तिकताका प्रचार कर सकें ।

३–संन्यासी महात्मा-जो आस्तिकपनका प्रचार कर सकें,

४–वेदोंके व्याख्यान करनेवाले नाना भाषाओंके पंडित (विद्वान्)—जो स्वाध्यायके योग्य पुस्तक तैयार कर सकें ।

५–लडके लडकियोंकी पाठशालाएं, स्कूल, कॉलेज महाविद्यालय गुरुकुलोंमें पढाने वाले अध्यापक तथा व्यवस्थापक, चाहे गृहस्थ हों चाहे वानप्रस्थ ।

६–गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यासी धर्मोपदेशक ।

७–आचार शुद्धि, परसेवा, मनुष्यमात्रका उपकार करना ।

८–अभिमानका ह्रास आचरणद्वारा दर्शाना ।

यह सम्भव है कि हमने जो प्रकार नियमोंके पालन करने प्रचार करनेके ऊपर दर्शाये हैं वा जो २ साधन गिनाये हैं वह सर्वांशमें ठीक न हों । पर यह निर्विवाद है कि आर्यसमाजको अपने दशनियमानुसार काम करनेके लिये तीन प्रकारके विभाग बनाने चाहियें ।

(१) धर्मप्रचार मंडल ।
(२) विद्याप्रचार मंडल ।
(३) आचारसुधार मंडल ।

पहिले मंडलके लिये इसको धर्मोपदेशक, धर्मग्रन्थोंके व्याख्यान करनेवाले विशेष कर चाहियें ।

विद्याप्रचारमंडलका काम स्कूलों कॉलेजों गुरुकुलों कन्या महाविद्यालयोंद्वारा होना चाहिये ।

आचारसुधारमंडलका काम सबसे कठिन है जो योगाभ्यासी तपस्वी सत्यव्रती है वेही दूसरेका आचार शुद्ध कर सकते हैं ।

इस समय आर्यसमाजकी रुचि विद्याप्रचारके काममें बहुत लग रही है यह बहुत उत्तम बात है पर इसके साथ २ वैसी ही रुचिसे इसके धर्मप्रचार और आचारसुधारके दो काम और करने होंगे । वरना दश नियम पालन नहीं हो सकेंगे ।

२० करोड हिन्दू जो धर्म पाल रहे हैं उसको जीवित रखनेके लिये उनके पास **बावन लाख साधु महात्मा उपदेशक** और एक करोडसे भी अधिक गृहस्थ पंडित हैं । संसारका उपकार करनेवाले आर्य्यसमाजको कितने लाख संन्यासी महात्मा उपदेशकोंकी जरूरत होगी । भारतमें ही बावन लाख साधु उपदेशकोंके मुकाबलेपर हमने कितने लाख साधु उपदेशक तैयार कर लिये ।

हाथका काम हाथसे होगा आंखसे नहीं, जो काम धर्मउपदेशका एक संन्यासी कर सकता है वह एक स्कूल नहीं करेगा । बालकोंमें विद्याप्रचारका काम जो एक स्कूल करेगा वह दश संन्यासी महात्मा नहीं कर सकते हमें स्कूलोंकालेजों और गुरुकुलोंकी जरूरत है । पर उसके साथ हमें ५२ लाख आर्य्यसंन्यासी महात्माओंकी कम जरूरत नहीं ।

महात्मा स्वामी नित्यानन्दका जीवनचरित्र दर्शा रहा है । कि एक धर्मोपदेशक संन्यासी न केवल साधारण प्रजामें धर्मके भाव फैला सकता है । प्रत्युत बड़े २ सेठों ठाकुरों और राजाओंतक वह भाव पहुँचा सकता है । पढ़ानेका काम सब कर सकते हैं । पर जिस अध्यापकने जितनी अधिक योग्यता प्राप्त की होगी उतनी ही उच्च कॉलेज आदि श्रेणि-योंको वह पढ़ा सकेगा । संन्यासियोंमें भी योग्यताके कारण उत्तम मध्यमादि भेद रहेंगे । यह महात्मा जिनका यह जीवन चरित्र है । एक विलक्षण संस्कारी जीव थे । यदि हम यह कहें कि वह जन्मसे ही **व्याख्यान वाचस्पति** जैसा कि महात्मा जस्टिस रानडेने आपको Gifted Preacher कहा है होनेके संस्कार लेकर आये थे । तो इसमें लेशमात्र भी अत्युक्ति नहीं होगी । राजपूतोंकी उस वीरभूमिमें जिसने राणा सांगा महाराणा प्रताप और राठोड़ दुर्गादाससे अद्भुत तेजस्वी वीरोंको उत्पन्न किया इनका एक ग्राममें जन्म लेना दर्शाता है कि मनकी दृढ़ता इनको उस देशके क्षत्रियकुल-

भूषणोंकी जीवनकथासे प्राप्त हुई थी जोधपुरराज्यान्तर्गत सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक जालोर नगरमें श्रीमाली ब्राह्मणके घरमें जन्म लेकर यह बाल्यावस्थामें अपने नाना के पास क्या रहे मानो एक संस्कृत और हिन्दीकी पाठशालामें छोड़े गये । विधाताने कोकिलकंठ तो इनको दिया ही था । पर उसपर रुद्राध्यायका स्वरसहित पाठ अनेक ललित श्लो-कोंका जिह्वाग्र करना मानो सोनेमें सुगन्धका काम कर गया ।

यदि केवल कोकिलकंठ ही होते तो कदाचित् केवल गानविद्यामें निष्णात हो जगत्‌को गायनामृत पिलाते रहते परन्तु कविताशक्तिके साथ उनके संस्कार तर्कशास्त्रमें भी निष्णात होनेके थे, और वह जागे विना भला कैसे रह सकते थे ? काशीमें जाकर रागविद्या नहीं शास्त्रोंका अभ्यास करनेकी उत्कट अभिलाषा इनके हृदयमें जिस वेगसे उत्पन्न हुई उसके साक्ष्यके लिये इनके जीवनचरित्रमें पुष्कल घटनाएं हैं । गृहसे निकलकर प्रथम आप अहमदाबादमें एक जैनमहात्मा "बूटा" महाराजके पास, शास्त्र पढ़नेके लिये ठहरे इनकी मेधाने उन महात्माको परिचय दिलाया कि यह बालक तर्कवाचस्पति होनेकी योग्यता रखता है । ऐसे होनहार शिष्यको प्राप्त कर कौन गुरु अपना सौभाग्य नहीं समझता चुनान्चे ऐसाही हुआ । महात्मा "बूटा" महाराजने बहुत यत्न किये कि किसी प्रकारसे यह मेरे जैन-मतावलम्बी शिष्य हो जावें पर जब बुद्धि जैनमतके सिद्धान्तोंसे तुष्ट न होसकी तो यह कैसे हो सकते ? निदान जैनगुरुको छोड यह काशीमें जो भारतका प्राचीन कालसे संस्कृत विद्यालय चला आरहा है दर्शनशास्त्रोंके अध्ययनार्थ गये जब अच्छे पंडित होगये तो इनसे अपनेसे भी बढ़कर एक विद्यामार्तंडऋषि दयानन्दकी कीर्तिका वर्णन संन्यासी गोपालगिरीजीने किया । महात्मा स्वामी गोपालगिरीजीके हृदयपर परमहंस परिव्राजका-चार्य स्वामी दयानन्दकी मृत्युने अद्भुत प्रभाव डाला था । अहो ! योगी दयानन्द तेरा जन्म, तेरा जीवन और तेरी मृत्यु एकसे एक बढ़ कर हैं । तूने जीवनमें बडे २ पंडितों, संन्यासी महात्माओं, अंग्रेजीके विद्वान् जिज्ञासुओंको ही वैदिकधर्मी नहीं बनाया किन्तु बीमारी और मौतके समयमें भी अपने योगमय जीवनसे जहां एक तरफ अंग्रेजी सायन्स और फिलासोफीके प्रथमश्रेणीके विद्वान् गुरुदत्त एम. ए. को नास्तिकपनके संशयागारसे विना वोले आस्तिक वना आर्य्यसमाजकी सेवाके लिये अपने पीछे छोड जाता है वहां दूसरी ओर धन्य है तेरा ऋषिजीवन कि जो महात्मा स्वामी गोपाल-गिरीजी जैसे संन्यासियोंके हृदयमें तेरे दर्शाए हुए मार्गकी मोहर लग जाती है । यदि महात्मा स्वामी गोपालगिरिजी नित्यानन्दजीको स्वामी दयानन्दका गौरव न वतलाते तो कौन जानता है कि यह **नररत्न नित्यानन्द** आर्य्यसमाजको प्राप्त होता या नहीं ?

इसके पीछे महात्मा स्वामी नित्यानन्दके जीवनमें वह घटना आती है कि वह बरेलीमें जाकर आर्य्योपदेशक पंडित यज्ञदत्तजीको एक दर्शनशास्त्र पढाते हैं । पंडित यज्ञ

दत्तजी आर्य्यसमाजके रंगमें रंगेहुए थे, वह मनसे चाहते थे कि ऐसा **अद्भुत ब्रह्मचारी नित्यानन्द** आर्य्यसमाजका उपदेशक बन सके और इसके लिये जो यत्न उन्होंने किये वह अत्युत्तम थे । श्रीयुत पंडित यज्ञदत्तने सत्यार्थप्रकाशादि ऋषिप्रणीत ग्रन्थ ब्रह्मचारी नित्यानन्दके हाथमें पढनेको दिये । लोहा जिस प्रकार चुम्बकको प्राप्त हो चंचलता छोडता है उसी प्रकार नित्यानंदजीकी चंचलबुद्धिने सत्यके सरोवरसे मानों अमृतपान कर शान्ति प्राप्त की । श्रीयुत महाशय चिम्मनलालजी वैश्यने जब नित्यानन्द ब्रह्मचारीके दर्शन किये तो उनके हृदयमें यही संकल्प उठे कि यह महात्मा आर्य्यसमाजको मिल जावे ।

महात्मा नित्यानन्द भ्रमण करतेहुए मेरठ देहली आदिस्थानोंमें गये और समाज सम्बन्धी कई अत्युत्तम व्याख्यान दिये । कई जगह इन्होंने शास्त्रार्थ कर अपनी अद्भुत तर्कशक्ति और संस्कृत पांडित्यका परिचय जनताको दिया । इनके जीवनमें एक वह भी घटना आई कि इनको एक महानुभाव महाशय थियोसोफिस्ट बनानेके लिए उद्यत हुए । जिसने दर्शनशास्त्रको मननपूर्वक पढा हो जिसने ऋषी दयानन्दके ग्रन्थोंका पाठ किया हो उसको विना वैदिक फिलासोफीके कोई फिलोसोफी भला अपनी ओर खींच सकती थी । ग्वालीयर, दतिया, करोली आदि राज्योंमें जिस उत्तम रीतिसे इन्होंने वैदिक-धर्म प्रचारका काम किया है वह अतीव प्रशंसाके योग्य है । न्यायमूर्ति महात्मा माधव गोविन्द रानडेसे जब इनकी भेट हुई तब इन्होंने अपनी विद्वत्ता और उच्च विचारोंका जो प्रभाव उनके हृदयपर डाला वह रानडेजीके उस पत्रसे विदित हो रहा है जो कि इन्होंने इनके सम्बन्धमें बडोदाके दीवान साहब ओर मद्रासप्रान्तके अनेक विद्वानोंको लिखे । इनके जीवनमें वह विचित्र घटनाभी आती है जिसमें आर्य्यसमाजके स्तम्भ ऋषि दयानन्दके भक्त श्रीयुत राजाधिराज श्रीनाहरसिंहजी वर्मा शहापुराधीश (मेवाड) ने इनकी योग्यतासे संतुष्ट हो परोपकारिणी सभाके एक अवसरपर अजमेरमें व्याख्यान करानेका प्रबन्ध किया ।

यह मान आर्य्यसमाजके कुछ पुरुषोंको जो ईर्षाके रोगमें ग्रस्त थे, न भाया और उन्होंने शिर तोड यत्न किया कि ब्रह्मचारी नित्यानन्दका व्याख्यान न होने पावे; पर वह सफल मनोरथ न हुए । श्रीयुत पंडित हमीरमलजीनें इस व्याख्यानके करानेमें जो सहायता दी वह प्रशंसाके योग्य है । व्याख्यान हुआ और लोग एक व्याख्यानवाचस्पति वेदशास्त्रोंके भारी विद्वान् तर्कनिधि और ऋषी दयानन्दके सच्चे भक्तकी जिव्हासे उपदेशामृत पान कर मुग्ध हो गये ।

इनके जीवनमें सबसे बड़ा महत्वका यदि कोई शास्त्रार्थ कहा जा सकता है तो वह शास्त्रार्थ बून्दी है । इस शास्त्रार्थमें जहां इन्होंने संस्कृत पांडित्य, अद्भुत तर्क और वैदिक सिद्धांतोंके मर्म्मज्ञ होनेका परिचय दिया वहां साथ ही उस गुप्त मनोबलको प्रकट किया जो राजपूतानेकी वीरभूमीमें जन्म लेनेसे ऐसे महापुरुषके हृदयमें संस्काररूपसे शयन कर

रहा था। जो अपमान इनका और श्रीयुत महात्मा स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीका हुआ उसको जिस आर्य्यत्वसे इन वीर उपदेशकोंने सहा वह इन्हींका काम था। यदि इन दोनों महात्माओंके हृदयमें आर्य्यसमाजके सिद्धान्तोंसे सच्चा प्रेम न होता तो यह आर्य्य-समाजसे भाग निकलते। बून्दी शास्त्रार्थके समयमें एक चौबेद्वारा इनको धनका प्रलोभन दिया गया परन्तु ये धर्म पर दृढ़ रहे। इनकी इस दृढ़ताने इनकी ख्याति-

आर्य्य समाजिकजगत्

में बडी भारी की, आर्य्यसमाजमें इनकी अद्भुत प्रसिद्धिका भारी कारण यही शास्त्रार्थ हुआ। जब श्रीशाहपुराधीश श्रीमान् राजाधिराज श्रीनाहरसिंहजी वर्माकी शुभ सम्मतिसे इस शास्त्रार्थका वृत्तान्त छपनेको गया तो एक विद्वान् आर्य्यसमाजिक पंडितने जिसने, कि, हिंसारूपी ईर्षा शत्रुपर विजय नहीं पाई हुई थी और जो अपने निज-स्वार्थको सामाजिक सर्वहितसे भी बड़ा मान रहा था-इसके छपनेका विरोध किया। इस समय जिस दूरदर्शिता तथा गहरे विचारसे श्रीमान् राजाधिराज श्रीनाहरसिंहजी महोदय शाहपुराधीशने काम लिया उनकी स्तुति किन शब्दोंमें हमकरें। पूज्य शाहपुरा-धीशने पंजाबके सुप्रसिद्ध महात्मा पंडित गुरुदत्तजी एम्. ए. के पास शास्त्रार्थ की प्रति-लिपि (कौपी) सम्मतिके लिये भेज दी। महात्मा पंडित गुरुदत्तजी एम्. ए. जहां एक तरफ प्रथम श्रेणीके अंग्रेजीके विद्वान् थे वहां साथ ही प्रथम श्रेणीके संस्कृतज्ञवा वेदज्ञ और इससे भी बढकर उनके पास वह धन था जिसको—

सदाचार

कहते हैं वह यम नियमोंके पालने का अखंड व्रत ऋषी दयानन्दकी मृत्युके समय धारण कर चुके थे।

वह अपने जैसे योग्य अनेक अंग्रेजीके विद्वानोंको आर्यसमाजमें सभासद वा सहा-यकके रूपमें लाना अपना कर्त्तव्य समझे हुए थे। अपनेसे भी बढ़कर संस्कृत विद्याके विद्वानोंको वह समाजमें लानेके लिये सदैव तैयार रहते थे। वह योगाभ्यासी होनेसे **प्रत्याहार**की अवस्थातक पहुँचे हुए थे। ईर्षा, द्वेष जो हिंसाके ही रूप हैं इन-पर वह पूर्ण विजय पा चुके थे। अन्यायद्वारा सर्वोपरि बननेका दुष्ट भाव उनके हृदयमें न था। जब उन्होंने अपनेसे भी अधिक संस्कृतज्ञ स्वामी श्री नित्यानन्दजीके शास्त्रार्थका लेख पढ़ा तो अपनी निष्पक्ष सम्मति निम्न लिखित शब्दोंमें श्री शाहपुराधीशजीके पास भेजी "**महर्षी दयानन्दकी मृत्युके पीछे ऐसा महत्त्वपूर्ण कोई शास्त्रार्थ आर्य्यसमाजने नहीं किया** इस सत्य सम्मतिके पानेपर जिज्ञासु शाह-पुराधीशजीके हर्षकी कोई सीमा न रही। उनकी श्रद्धा दोनों स्वामी महात्माओंपर दृढ़ होगई और राजस्थानमें उन्होंने इनके यशका मानों डंका बजा दिया। इनके संस्कृत पांडित्यका नाद मानों गूंज उठा। साथ ही इनका सत्यपर प्रेम प्रकट हो गया।

इसके पीछे इनके जीवनमें वह समय आता है जब कि इन्होंने भारत वर्षके आर्य्य समाज़ोंमें अपने युक्ति युक्त सारगर्भित व्याख्यान दिये उस मद्रासप्रान्तमें जिसमें महर्षी दयानन्द वा धर्मवीर आर्य्यपथिक श्रीयुत पंडित लेखरामजी भी नहीं जा सके थे। ये महानुभाव गये और तीन आर्य्यसमाज ही नहीं स्थापित किये किन्तु स्वर्गवासी श्रीमान् महीशूर नरेश को आर्य्यसमाजका परम भक्त बना दिया। उसी दिनसे इनकी ख्याति।

राजोपदेशक

के तौरपर दक्षिणमें होने लगी। आर्य्यसमाज के उस भूकम्पमें जो सिद्धान्तके सम्वादके नामसे प्रसिद्ध है इन महात्माओंने अपने वेदज्ञ होने का भारी परिचय दिया और स्पष्ट कह दिया कि वेदोंमें मांसभक्षण वा यज्ञमें पशुहिंसा करनेकी आज्ञा नहीं। इसी मांस भक्षणके प्रश्नके सम्बन्धमें इनको बड़ा भारी प्रलोभन देनेके लिये विचित्र यत्न हुए। इनके जीवनमें इतना भारी प्रलोभनका समय कभी नहीं आया था इस समय इन्होंने इस प्रलोभनकी परवाह न करते हुए वही पक्ष लिया जिसको ये आत्मासे सत्य मानते थे, ये बराबर यही कहते रहे कि चारों वेदोंमें कहीं भी मांस भक्षणका विधान नहीं। प्रलोभनोंका त्याग करते हुए सत्य कह देनेसे इन दोनों विद्वानोंने।

महान् आत्मा

अर्थात् महात्मा होनेका परिचय आर्य्यसमाजको दिया। अनेक आर्य्यसमाजोंके वेद प्रचार निधि तथा गुरुकुलनिधिकी सहायता आदिमें इन्होंने अनेक स्थलोंमें अनेक व्याख्यान दिये। वर्षों आर्य्यसमाजोंके महोत्सवोंकी स्वामी नित्यानन्दजी अपनी अद्भुत ओजस्वीनी वक्तृता तथा तर्कपूर्ण सारगर्भित शास्त्रीय व्याख्यानोंसे सेवा करते रहे। बडे २ संस्कृतज्ञ पंडितोंसे संस्कृतमें शास्त्रार्थ कर वैदिकसिद्धान्तकी रक्षा की अंग्रेजीके विद्वानों और राजा महाराजाओंके गूढ़ शंकाओंका शास्त्रीय प्रमाणों तथा अखंड युक्तियोंसे समाधान किया। कश्मीरसे महीशूरतक, रांचीसे करांचीतक देशाटन कर वैदिक धर्मका प्रचार किया, बडी लम्बी २ यात्राके समय इनके परम मित्र वा धर्म बन्धु दूरदर्शी विद्यानिधी वेदज्ञ महात्मा श्री विश्वेश्वरानन्द जी इनके साथ ही रहे।

राम लक्ष्मणकी प्रीति हमने इन दोनों मित्रोंमें देखी—**सहनाववतु सहनौ भुनक्तु सहवीर्य्यं करवावहै तेजस्विना वधीतमस्तु मा विद्विषावहै**। इस ऋषि-वाक्यको इन दो विद्वान् मित्रोंने अपने जीवनमें सार्थक कर दिखाया। दो विद्वान् मिलकर क्या बडा भारी काम कर सकते हैं, यह इन्होंने प्रत्यक्ष कर दिखाया, जिस प्रकार स्वामी नित्यानन्दजी सुवक्ता थे उसी प्रकार सुलेखक भी थे. इनका रचा हुआ

पुरुषार्थप्रकाश

इसका दृष्टान्त है। इस ग्रन्थके संबंधमें पंजाब के एक भारी विद्वान् तपस्वी तथा

परोपकारी आर्य्यसमाजिक महाशय श्रीयुत रायठाकुर दत्तजी धवन डिस्ट्रिक्ट जज लाहोरने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक वैदिक धर्म प्रचारनामी में जो

आर्य्यप्रतिनिधि सभा पंजाब

की औरसे प्रकाशित हुई थी लिखाथा उसका भावार्थ यह है कि-**सत्यार्थ प्रकाशसे दूसरे दर्जेपर यह पुस्तक है।**

विद्यामूर्ति, परोपकारी, लोकमान्य, जगत्प्रसिद्ध श्रीमन्त महाराज

श्री सयाजीराव गायकवाड **बडोदा नरेश ने**

इन महात्माओंको विद्यावृद्धि निमित्त कई सहस्र रुपयोंकी भारी सहायता दी है कि यह वैदिककोश निर्माण कर सकें। उस वृहत्कोषकी अनुक्रमणिका तो प्रकाशित हो चुकी है पर अभी कोशके अंक निकलने आरम्भ नहीं हुए।

महात्मा स्वामी नित्यानन्द जी संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, मारवाडी, मराठी, इन पांच भाषाओंमें धारा प्रवाह व्याख्यान दे सकते थे और उर्दू, अंग्रेजी तथा बंगला इन भाषाओंको भलीभान्ति समझ सकते तथा इनमें बात चीत कर सकते थे।

स्वामी श्री नित्यानन्दजी तथा स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजीमें एक आदर्श। आदरणीय गुण यह रहा कि इन्होंने कभी अपनी ३० वर्षकी सामाजिक सेवामें किसी अधिकारको प्राप्त करने व आरुढ रहनेका स्वप्नमें भी संकल्प नहीं किया यदि वे चाहते तो आयुभर किसी एक दो प्रतिनिधि सभाओ अथवा अनेक आर्य्यसंस्थाओंके सूत्रधार बने रहते।

जब अधिकारके लिये मनमें संकल्प न था तो इसकी पूर्तिका साधन जिसको पार्टी कहते हैं वो कैसे बना सकते थे? आर्य्य समाज में एक भी पुरुष कभी यह नहीं कह सकता कि उक्त महात्माओंने कभी अपनी पार्टी बनानेका प्रयत्न किया हो। समाजका बहुत बड़ा भाग हमारे मन्द कर्मोंके कारण अधिकार तृष्णा और पार्टी बनानेमें अपना बहुत समय सम्प्रति का व्यतीत कर रहा है। उक्त महात्माओंका जीवन इस विषयमें एक ज्योतिस्तम्भ Chight bouse) का काम देगा।

एक और अद्भुत गुण इन दोनों महानुभावोंमें सिद्धान्तोंकी रक्षा और समाजके हितके आगे किसी व्यक्ति विशेषका असत्य पक्ष नहीं लिया। और सदैव अपनी आवाज जहां असत्य प्रतीत हुआ उसके विपरीत उठाते रहे।

जहां बड़े २ राजाओंसे इनका पत्रव्यवहार था वहां बड़े २ नामी अंग्रेजोंसे भी पत्र व्यवहार रखते थे और कई अंग्रेज इनको-A great Indian Sanskrit Scholar की पदवी दिया करते थे।

इनकी अन्तिम बीमारीके समय पर जहां इनके नौकर कुंवरसेन नामीने सच्ची भक्तिसे सेवा की वहां आर्य्य समाजके जिन अनेक रत्नोंने भी भारी सेवा सुश्रुषाकी उनके शुभ तथा अमर नाम ये हैं।

१—श्रीयुत डाक्टर कल्याण दास, जे. देसाई बी. ए. एल. एम. एंड एस. मन्त्री आर्य्यविद्यासभा बम्बई. आदि

२—महात्मा श्रीस्वामी परमानन्दजी सरस्वती-आग्रानिवासी.

३—महात्मा श्रीस्वामी अनुभवानन्दजी सरस्वती–अमृतसरनिवासी.

स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी प्रायः इनके संगही रहते थे पर कर्मकी विचित्र गति समझिये कि इनकी अन्तिम बीमारीके समय वह बम्बईमें इनके पास न थे इनकी मृत्युने भारतका एक रत्न छीन लिया। आर्य्यसमाजका एक भारी ज्योतिस्तम्भ और प्रसिद्ध राजोपदेशक इसको रोते हुए सूना छोड चला गया। स्वामी श्रीनित्यानन्दजीके दो स्मारक एक बम्बई और दूसरा शिमलेमें स्थापित हुए हैं पहिला बम्बईके विद्वान् दानवीर आर्य समाजके रत्न श्रीयुत सेठ रणछोडदासजी भवानने एक उत्तम पुस्तकालय तथा बाचनालयके रूपमें एक भव्य मकानमें बनाया है, इसका नाम **नित्यानन्द पुस्तकालय-बम्बई** है. दूसरा शिमलेमें इनके परम मित्र तथा धर्मबन्धु श्री स्वामी महात्मा विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वतीने एक अति रमणीय स्थानपर एक सुन्दर बंगलेके रूपमें **नित्यानन्द आश्रमके** नामसे बनाया है। इस आश्रममें जहां एक वाचनालय तथा पुस्तकालय होगा वहां संस्कृत तथा अंग्रेजीके बडे २ स्कालरों और अनेक देशसेवकोंके लिये निवासस्थानभी होगा।

पाठकवृन्द तीसरा स्मारक उनका यह जीवनचरित्र है जो आर्य्यसमाजके भक्त श्रीयुत महाशय-**ब्रह्मदत्तजी** अजमेर निवासीने बड़े श्रमसे एकत्र कर निर्माण किया है। जिस उत्तमता तथा योग्यतासे महाशय ब्रह्मदत्तजीने यह कार्य पूर्ण किया है वह प्रशंसाके योग्य है।

महात्मा स्वामी श्रीनित्यानन्दजी एक साधारण विद्यार्थीकी दशासे एक जगत्प्रसिद्ध, **व्याख्यानवाचस्पति तर्कनिधि वेदज्ञ राजोपदेशक** के बहुमान्य पदको प्राप्त हुए उसका उत्तर आपको उनका यह **जीवन चरित्र** देनेको तैयार है।

बडोदा—
ता. २४ जनवरी १९१७ ई०

पाठकोंका प्रेमसेवक
आत्माराम अमृतसरी

धन्यवाद।

वेदशास्त्रसंपन्न धर्मात्मा श्री पण्डित **बालकृष्णजी शर्मा**, भूतपूर्व आचार्य्य गुरुकुल शांताक्रुज (बंबई) ने जो अपना अमूल्य समय इस ग्रन्थके छपते समय लेखा संशोधनादिके लिये दिया उसके लिये वह आर्य्यजनताके धन्यवादके पात्र हैं।

आत्माराम अमृतसरी।

स्वामी नित्यानन्द विश्वेश्वरानन्दकृत पुस्तकोंका
विज्ञापन ।

१ ऋगादि ४ चारों वेदोंके संपूर्ण पद (शब्दों) की सूची.

परमात्माके अनन्तज्ञानका खजाना ब्रह्मादि सर्व महर्षियोंका सर्वस्व संसारकी लायब्रेरीका सबसे प्राचीनतम पुस्तक आर्यजातिका परम पवित्र माननीय अखिल धर्मका मूल व सम्पूर्ण विद्याका भण्डार और मनुष्यजातिकी उन्नति व सभ्यताके आदि कारण रूप ४ चारों वेदोंके समस्त शब्दोंके जाननेका सबसे सुगम उपाय वैदिक शब्दसूची अर्थात् चारों वेदोंके सम्पूर्ण शब्द और शब्दार्थ जाननेवालोंके लिये परमोपयोगी अपूर्व साधन केवळ यही वैदिकशब्दोंकी सूची है. वेदरूपी समुद्रको मथकर पूरी २ खोज करके बडे परिश्रमसे ४ वेदोंके सब शब्दोंकी अर्थात् आख्यात नामोपसर्ग निपात आदि सर्व शब्दोंकी अकारादि क्रमसे (अल्फेबेटिकली ओर्डरमें) यह शब्दसूची तैयार की गई है.

वर्षोंतक बराबर पढनेपरभी जिन वैदिक शब्दोंका ज्ञान बडे २ धुरन्धर पण्डितोंको नहीं होसकता है उन समस्त वैदिक शब्दोंका इस शब्दसूचीके द्वारा देवनागरी अक्षर जाननेवाले साधारण पुरुषको भी ज्ञान होकर पूरा २ यथार्थ यह पता लग जाता है कि ४ चारों वेदोंके सब (कुल) शब्द कितने हैं अर्थात् अस्ति भवति भवाति करोति अकृणोत् आदि क्रिया कितनी हैं और आत्मा देव पृथ्वी अग्न्यादि संज्ञाएँ कितनी हैं और प्र प्रा आ आदि उपसर्ग व स्वरादिनिपात कितने हैं और ये सब शब्द चारों वेदोंमें किस २ मन्त्रमें कितनी वार आये हैं और अमुक शब्द वेदोंमें है वा नहीं इन सबबातोंका पूरा २ पता इस शब्दसूचीसे एक क्षणमात्रमे लग जाता है. इतनाहि नहीं किन्तु किस २ शब्दका क्या २ अर्थ है और सायण महीधर उव्वट व श्रीस्वामी दयानन्दजी आदि भाष्यकारोंने इन शब्दोंके क्या २ अर्थ किये हैं यह पताभी इन शब्दोंके भाष्यद्वारा उसी समयमें लग जाता है. सर्व साधारणको वेदोंका पूरा ज्ञान करानेके लिये बड़ेहि परिश्रम व बहुतसा धनव्यय करके सस्वर यह शब्दसूची तैयार करके सुन्दर कागजपर बोम्बेके निर्णयसागर प्रेसमें शुद्ध छपाकर चारों वेदोंकी अलग २ जिल्द बन्धवाकर तैयार की गई है. कीमत (मूल्य) भी डाकव्ययातिरिक्त केवल १०) दश रुपैये हैं.

२ पुरुषार्थ प्रकाश. की. १॥ रु. ३ सनातन धर्मप्रकाश. की. ४ आना. ४ बुन्दी शास्त्रार्थ ४ आना.

पुस्तक मिलनेका पता—

बुकडिपार्टमेंट, आर्य प्रतिनिधि सभा,
आर्यसमाज,
काकडवाडी—गिरगाव,
मुंबई.

पं० रामचंद्र शर्मा,
हमीरलॉज
अजमेर.

॥ ओ३म् ॥

महात्मा स्वामी श्री नित्यानंदजी सरस्वती राजोपदेशक ।
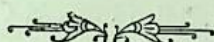
महात्मा स्वामी श्री नित्यानन्दजीका जन्म भाद्रपद शुक्ला १४ संवत् १९१७ विक्रमी

जन्म. को जोधपुर राज्यान्तर्गत जालोर नामक ग्राममें हुआ था।

स्वामीजीके पिताका नाम पंडित श्री पुरुषोत्तमजी था। और माताजीका नाम श्रीमती

कुटुम्ब कृष्णा देवी। आपके ३ भाई और दो बहिनें थीं। स्वामीजीका जन्म नाम रामदत्त था और ये गुजराती श्रीमाली ब्राह्मण थे।

स्वामीजीके बालकपनका विशेष वृत्तान्त नहीं मिलता परन्तु जो थोडासा प्राप्त हुआ है

बाल्यकाल वह इस प्रकार है। बालकपनमें रामदत्तजी अपने नानाजीके यहां विशेष रहते थे। नानाजीसे आपने सन्ध्यावन्दन रुद्री, पुरुषसूक्त और वेदपाठ आदिका अभ्यास किया। प्रचलित सामाजिक कुरीतियों से आपको उस समय भी दुःख होता था। मृत्युके अवसर पर जो आने जानेमें समयका अपव्यय होता है इसे आप निरर्थक कहा करते थे। जन्मसे ही आप की रुचि विद्याभ्यासकी ओर अधिक थी जितना ज्ञान पिताजी और नानाजीसे आप प्राप्त कर सकते थे वह बहुत शीघ्रकर लिया और तत्पश्चात् विद्या प्राप्तिके निमित्त काशी आदि स्थानोंमें जानेके लिये आग्रह करने लगे। स्वामीजी की माताजीका स्वभाव बड़ा ही उदार, सरल पवित्र और विचारशील था। स्वामीजीने उदारता, सरलता, सर्वप्रियता, आदि गुण मानो अपनी माताजीसे ही प्राप्त कियेथे। स्वामीजी " मातृमान् पुरुषो वेद " इस आप्त वाक्य की सत्यता प्रामाणिक करनेके ज्वलन्त उदाहरण थे। बालकपन में ही स्वामीजीने सुन्दरदासजीके सवैये और सहस्रों समयोचित श्लोक कण्ठस्थ कर लिये थे और इनका उच्चारण वे समय समय पर अपनी आयुभर किया करते थे। आपके नानाजी कुछ २ योगसाधन भी करते थे अतः स्वामीजी में योगके संस्कारोंकी प्रवृत्तिका एक कारण यह भी था सुन्दरदासजीके सवैये वैराग्य उत्पन्न करनेमें विशेष कारणरूप हुए। गृहनिवासमें स्वामीजी पूर्ण उद्योग करते रहे कि पिताजी पढाईका प्रबन्ध काशी अथवा अन्य किसी स्थानमें करदें। परन्तु जब प्रबन्धके स्थानमें केवल टालमटोल होते देखी तो विद्या प्राप्तिके लिये घरसे निकल पड़े।

जालोरसे स्वामीजी अहमदाबाद आये और यति " बूटा " महाराजके यहां जैन ग्रन्थोंके लिखनेका कार्य्य करते रहे। परन्तु अपना मुख्य उद्देश्य विद्या प्राप्ति ही रक्खा और पण्डितोंसे संस्कृत पढना आरम्भ कर दिया। स्वामीजीके गुणोंसे प्रभावित होकर महात्मा यति बूटा जी महाराजने बहुत उद्योग किया कि स्वामीजी उनके शिष्य बन जावें परन्तु सफल नहीं हुए।

विद्या प्राप्तिके लिये भ्रमण।

अमदाबादसे स्वामीजी बम्बई, पूना, सितारा, और नासिक आदि स्थानोंमें भ्रमण करते हुए काशी पंहुचे यहां आपने अनेक पंडितोंसे भिन्न २ संस्कृत ग्रन्थोंका अध्ययन किया।

यहीं आप ब्रह्मचारी गोपालगिरिजी नामक सन्यासीसे मिले। ये सन्यासी महर्षि दयानन्दजीके परिचित थे और उनकी मृत्यु समय पर अजमेरमें थे। इन्हींके समागम द्वारा ही स्वामीजीके विचार आर्य्य समाजकी ओर प्रथम आकर्षित हुए।

आर्य्यसमाज परिचय

काशीसे चलकर ब्रह्मचारीजी युक्त प्रान्तके कई जिलों (यथा कानपुर, कन्नौज, शहाजहांपुर, बरेली आदि) में गङ्गाके तट पर ब्रह्मचर्य्यावस्थामें पूर्ण विरक्तकी भांति भ्रमण करते रहे। उस समय आप सिर पर जटाजूट और पांवमें खड़ाऊं धारण किया करते थे। आपकी मनोहर मूर्तिके दर्शनोंके लिये अनेक लोगोंकी भीड़ एकीत्रित होती थी। आपकी भाषणशैली ऐसी चित्ताकर्षक थी कि अनेक मनुष्य आपके शिष्य बननेकी उत्सुकता प्रकट किया करते थे। परन्तु आपने किसीको भी शिष्य नहीं बनाया। इस प्रकार ब्रह्मचारी वेषमें तुलसीकृत रामायणका पाठ करते हुए आप २, ३, वर्षोंतक, नैमिषारण्यमें भ्रमण करते रहे. आपके कथा करनेकी शैलीसे प्रभावित होकर सहस्रों श्रोताओंकी भीड़ एक सम्मतिसे गुरुमंत्र और दीक्षा देनेकी प्रार्थना किया करती थी।

संयुक्त प्रान्तके अनेक स्थानोंमें रामायणकी कथा करना.

इसी अवसरमें जब ब्रह्मचारीजी भ्रमण करते हुए बरेली पहुंचे तो वहां आपने आर्य्य सामाजिक पंडित यज्ञदत्तजीको वेदान्त पढाना आरम्भ किया। उक्त पंडितजीके साथ ब्रह्मचारीजी आर्यसमाजके विषयमें वार्तालाप किया करते थे। और इसी अवसर पर ब्रह्मचारीजीने सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका आदि, आर्य्य समाजके साहित्यको पढा।

सत्यार्थप्रकाश ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका आदिका पढना

एक आर्य्यकी आशा.

तिलहर निवासी श्रीयुत चिम्मनलालजी वैश्य एक प्रसिद्ध आर्य्य हैं । आप अपने एक पत्रमें लिखते हैं कि " सं० १८३९ वि० (१८८२ ई०) में स्वामीजी शाहजहां पुरकी तरफसे विचरतेहुए तिलहमें आकर सनातनधर्मावलम्बी पंडित हेमनाथजीकी हनुमानगढीमें ठहरे । दो दिन पीछे मुझे आपके आनेकी सूचना मिली. मैं तुरंतही अपने मित्र स्वर्गवासी पंडित बलदेवप्रसादजीके साथ वहां गया । कुछ समयतक वार्तालाप होता रहा । पश्चात् इसी प्रकार मैं नित्यप्रति श्रीमान्जीकी सेवामें उपस्थित होता और वार्तालाप कर संतोषित होता था । आपकी विद्वत्ता देख यह विचार होता था कि यदि आपसे महात्मा आर्य्यसमाजको मिलजावें तो उसका बृहदुपकार हो, मैं इन्हीं विचारोंको पूर्ण करनेके लिये उनसे अधिक मिला करता था । ईशानुकम्पासे मेरी आशा अंकुरित हुई । श्रीमान्ने मेरे घरको स्वचरणकमलोंसे पवित्र किया और निरन्तर छः माह रहे । इस अवसरपर आपने गीताकी कथा सुनाई और १५०) का एक बृहद् हवनभी कराया । पश्चात् १०) की एक महाभाष्यकी पोथी मंगा यहांसे चले गये । चलते समय आपने मेरी विशेष प्रार्थना पर कहा कि मैं अवश्य और जल्दीही आर्य्यसमाजका कार्य्य करूंगा । ब्रह्मचारीजीका शरीर छुरछुरा, चहरा गोल, रंग गोरा, आंखें बड़ी, शिरपर बालोंका जूड़ा था । वाणी अतिही मधुर थी, वार्तालाप करते समय मानों फूल झड़ रहे हैं । "

आर्य्यसमाजोंमें उपदेश करना.

संवत् १९४१ वि० के लगभग स्वामीजी जीवब्रह्मकी एकताको छोड़कर अन्य सब आर्य्य सामाजिक सिद्धान्त मानते थे । इसके पश्चात् आपने आर्य्यसमाजोंमें उपदेश करना प्रारम्भ कर दिया । यद्यपि इस समय आपकी बुद्धि अधिक प्रौढ नहीं थी, न विचारही अधिक गम्भीर थे तोभी आपके भाषणका प्रभाव गहरा पड़ता था और जनता उसे बड़ी रुचिसे सुनती थी ।

ब्रह्मचारीजीका पहला शास्त्रार्थ.

इसी प्रकार भिन्न २ स्थानोंमें प्रचार करतेहुए ब्रह्मचारीजी आर्य्यसमाज पचरांवमें आए । और श्रीयुत पंडित रामशरण त्रिपाठी संस्थापक आर्य्य समाज पंचरांवके प्रबन्धसे पाखंडमत खंडनपर व्याख्यान दिया। तदुपरान्त जिन २ महाशयोंने शंका की उनका सन्तोष जनक समाधान किया । दूसरे दिन निकटवर्ती ग्रामसीखड़में नागरी और उर्दूमें विज्ञापन लिखवाकर चिपकवा दिये और घोषणा करवा दी कि पुराणी, किरानी, कुरानी, जैनी आदि वेदविरुद्ध मतवादियोंमेंसे जिस किसीको शास्त्रार्थ करना हो वे आकर शास्त्रार्थ करलें । परन्तु कोई मनुष्य सामने नहीं आया । परन्तु लक्ष्मीपति तिवाड़ी नामक एक अक्षरज्ञानशून्य ब्राह्मणके नामसे एक विज्ञापन कुछ प्रश्नों सहित भिजवा दिया । प्रश्न ये थे (१) वेद किसको कहते हैं (२) वेद किसका बनाया है । इसके उत्तरमें ब्रह्मचारीजीने सीखड़ग्रामके प्रसिद्ध पौराणिक

पंडित गोपाल नारायण, कृष्णानन्द और माधवराम आदिके नाम संस्कृत और भाषामें पृथक् २ पत्र लिख कर भेजे और उन्हें विदित किया कि वेद मंत्रसंहिताओंका नाम है। वे ईश्वरीय अनादि विद्या हैं। सृष्टिके आदिमें परमात्माने चार ऋषियोंके द्वारा उन्हें प्रकट किया। इसपरभी ये लोग शान्त रहे। परन्तु पांच दिन पीछे जब कि ब्रह्मचारीजी काशी जानेको उद्यत हुए तो पंडितोंने एक पत्र भेजा कि हमलोग आपसे वाक्यविलास किया चाहते हैं। ब्रह्मचारीजीने काशीयात्रा रोक करके उनकी इच्छानुसार उन्हींकी सभामें उपस्थित होकर कथन किया। ब्रह्मचारीजीने जो नियम शास्त्रार्थके लिये लिखकर दिये उनपर सनातन धर्मावलम्वी पंडितोंने हस्ताक्षर किये और कहा कि पंडित माधवरामजीके हारनेसे हम सब हार जाँयगे। तत्पश्चात् शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ और अनेक विषयोंपर जब ब्रह्मचारीजीने पंडितजीको निरुत्तर कर दिया तो वृथाही टालमटोल करने लगे। परन्तु जब इससेभी अपना पक्ष सिद्ध होता नहीं देखा तो पंडित गोपाल नारायणजी व कृष्णानंदजी आदि ब्रह्मचारीजीके प्रति अंडवंड असभ्य शब्दावलिका प्रयोग करने लगे। परन्तु जब इतनेपरभी ब्रह्मचारीजीको अन्यमनस्क नहीं पाया तो कोलाहल करतेहुए सभास्थान छोड़कर चले गये। स्मरण रहे कि यह सभास्थान इन्हींके प्रवन्धमें था। ब्रह्मचारीजीके पक्षकी सत्यता सबने स्वीकार की और ग्राम निवासियोंने पंडितोंके अनुचित वार्तावपर खेद प्रकाशित किया।

महात्मा स्वामीश्री विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वतीसे भेट.

इसी भ्रमणअवस्थामें ब्रह्मचारीजी आगरा आदिमें प्रचार करते हुए एकबार गाजियाबाद स्टेशनपर दहली जानेके लिये टहल रहे थे। गाड़ीके आनेपर एक संन्यासी महात्माको कुछ पुस्तकों सहित एक डिब्बेमें बैठे देखा। यह संन्यासी महात्मा स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराज थे और आप इस समय मथुरासे दहली पधार रहे थे। ब्रह्मचारीजीने इनको पढा लिखा संन्यासी जानकर अपना आसन भी इन्हींके समीप जमा दिया। मार्गमें आर्य्यसमाजके विषयमें वार्तालाप करते हुए दहली आ पंहुचे। यहां ब्रह्मचारीजीने आर्य्यसमाजमें ठहरनेके लिये कहा परन्तु स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराजके अस्वीकार करनेपर श्रीयुत अयोध्याप्रसाद खत्री वरफवालेके यहां ठहरे।

मेरठ आर्य्यसमाजके उत्सवमें सम्मिलितहोना.

यहांपर चार पांच दिन निवास किया और परस्परमें अनेक शास्त्रीय विषयों और आर्य्यसमाजके सिद्धान्तोंपर विचार करते रहे। इसी समय मेरठ आर्य्यसमाजका उत्सव था। और ब्रह्मचारीजीको वहां पधारनेके निमित्त विशेष आग्रह सहित निमंत्रण पत्रके अतिरिक्त एक प्रतिष्ठित सभासद भी आये थे। इस लिये दोनोंही महात्मा मेरठ समाजके इस उत्सवपर पधारे। मेरठ समाजके इस वार्षिकोत्सवपरही (१९४२ वि०) संयुक्तप्रान्तकी आर्य्यप्रतिनिधि सभाके

संगठनपर विचार था और नियम उपनियम आदिका निश्चय इसी अवसरपर होकर नियमबद्ध प्रतिनिधिसभाकी कार्य्यवाहीका आरम्भभी इसी उत्सवपर कर दिया गया। इस अवसरपर स्वर्गवासी श्रीपंडित गुरुदत्तजी M. A. व लाला लाजपतिरायजी आदि लाहोरसे पधारेथे।

ब्रह्मचारीजीके व्याख्यान इस अवसरपर ऐसे प्रभावशाली हुए कि वहांकी जनताने उनको उत्सवके समाप्त होनेके उपरान्तभी प्रचार करनेके लिये बड़ाही आग्रह करके ठहरा लिया। और अनुमानसे १५।२० दिनतक निरन्तर उपदेशामृत पान करते रहे। इसी बीचमें स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराज किसी कार्य्यवश अमृतसर जाकर पीछे आगये।

उत्सवके समाप्त होनेपर मेरठमें प्रचार.

मेरठसे दोनों महानुभाव दहली आये और कायस्थ सभाके अधिकारियोंके आग्रहसे धर्मोपदेश दिया आर्य्यसमाज दहलीकी दशा उन दिनों अच्छी नहीं थी और व्याख्यान आदिका प्रवन्धभी सहज साध्य नहीं था।

दहलीकी कायस्थ सभामें व्याख्यान.

इस अल्प समयके सहवासमें दोनों महात्मा परस्परमें संस्कृतमें बोला करते थे। और पूर्ण विचारके पश्चात् अन्तमें इस निश्चयपर पहुंचे, कि दोनों एक साथही रहें। संस्कृतमें बोला करें। और परस्पर शास्त्रीय विषयोंपर खूब ऊहापोह करें। इसी निश्चयानुसार दोनों महात्मा साथ रहने लगे, प्रायः भ्रमणमेंभी यह साथ नहीं छूटता था।

दोनों महात्माओंके सहवासका परिणाम.

दहलीसे ब्रह्मचारीजी आगरा आये और श्रीयुत गिरधारीलालजी वकीलके यहां ठहरे। आर्य्यसमाजके अधिवेशन इन दिनों इन वकील महोदयके घरपरही होते थे। यहांसे कानपुर ब्रह्मावर्त आदि स्थानोंमें भ्रमण करते हुए बिठूर पहुंचे।

आगरा कानपुर ब्रह्मावर्त आदिकी यात्रा.

उस समय सिसेंडीके राजा साहव श्रीमान् चंद्रशेखर बिठूरमेंही रहते थे। अतः उन्होंने बड़े आग्रह और समुचित प्रबन्धके साथ स्वामीजीको डेढ महीनेसे अधिकतक बिठूरमें ठहराया और उपदेशामृत पान किया। इस अवसरपर कितनेही मनुष्य स्वामीजीके भक्त बन गये। और वे अन्तसमयतक एक वार और पधारनेका आग्रह करते रहे परन्तु अनवकाशवश फिर कभी पधारना नहीं हुआ।

सिसेंडीके राजा श्रीमान् चन्द्रशेखरजीसे भेट.

बिठूरसे स्वामीजी लखनऊ आये । और कमसरियट के गुमाश्ते श्रीयुत लाला मुरली मनोहरजीके यहां ठहरे । व्याख्यानोंका प्रबन्ध आर्य्यसमाजमें हुआ था । यहांसे बाराबंकी गये और श्रीयुत परमेश्वरी प्रसादजी वकील (ये थियोसाफिस्ट थे) के यहां ठहरे । यहां धर्मचर्चा बहुत हुई और वकील महोदयसेभी वाद विवाद होता रहा । इन्होंने हरप्रकारसे उद्योग किया कि दोनों महात्मा थियोसाफिस्ट बन जावें परन्तु असफल प्रयत्न रहे ।

श्रीयुत परमेश्वरीप्रसादजी वकील बाराबंकीका स्वामीजीको थियोसाफिस्ट बनानेका निष्फल उद्योग.

१९४३ वि० कीराम नवमी पर अयोध्यामें प्रचार.

बाराबंकीसे स्वामीजी फैजाबाद और अयोध्या होकर गोंडाके ब्राह्मण राजाके निमंत्रणपर गोंडा गये और उन्हें प्रजासहित धर्मोपदेश देकर रामनवमीके अवसर, पर अयोध्या आगये । और बड़े उत्साहसे धर्मोपदेश दिया ।

ग्वालियर, दतिया, करौली आदि स्थानोंमें प्रचार.

अयोध्यासे स्वामीजी आगरा होते हुए ग्वालियर गये । उन दिनों ग्वालियर समाजके संचालनका भार श्रीयुत जमनाप्रसाद सिपाही (ये कनौजिया ब्राह्मण थे) पर था । स्वामीजीभी उन्हींके यहां ठहरे और धर्मोपदेश देकर दतिया चले गये । यहांपर स्वामीजी राजा साहबसे मिले और उनके आग्रहसे एक महीनेसे अधिक निवास किया और धर्मोपदेश करते रहे ।

दतियासे स्वामीजी ग्वालियर और धौलपुर होतेहुए श्रीमथुरा (जिला धौलपुर चले गये । वहां एक धनी बोहरेने बहुतही सत्कार किया और चातुर्मास वहीं रहनेकी प्रार्थना की । अतएव उसके आग्रहसे एक महीनेके अनुमान वहीं ठहरे । यहां जयपुर महाराजके गुरु ब्रह्मचारीका एक शिष्य (यह भागवतका पाठ किया करता था) मिला जिसने उस ब्रह्मचारीके बहुतसे गुप्त रहस्य सुनाये । स्वामीजी श्रीमथुरासे करौली गये और डाक्टर भवानीसिंहजीसे मिले । डाक्टर साहबने ठहरनेका प्रवन्ध राज्यसे करवा दिया । यहांपर स्वामीजी डेढ या दो महिनोंके अनुमान ठहरे और धर्मचर्चा करते रहे। बीच २ में पंडितोंसे शंका समाधान और शास्त्रार्थभी होता रहा । एक मन्दिरके गोस्वामीने न्याय और वेदान्त मुक्तावलिका अध्ययनभी प्रारम्भ किया ।

एक ब्राह्मण परिवार का स्वामीजीके विषयमें भ्रम.

एक ब्राह्मण अपने घरवालीसे रुष्ट होकर चला गया था । उस ब्राह्मणकी स्त्री, यजमान तथा अन्य पड़ोसी स्वामीजीकोही उक्त ब्राह्मण कहने लगे । नगरके बाहर राजकी छतरियोंमें जहां स्वामीजी ठहरे हुए थे अनेक मनुष्य आकर उक्त ब्राह्मणके भ्रमवश इन्हें मनाने लगे । इस ब्राह्मणकी स्त्री और यजमान सेठाणीने मन्दिर, धरती, और धनका लाभभी देना प्रारम्भ किया ।

नगरमें बड़ी हलचल मचगई । स्वामीजी समझाते समझाते थक गये । अन्तमें जब भीड़ किसी प्रकारसेभी कम न होने लगी तब राजाकी तरफसे तिलङ्गोंका पहरा नियत किया गया। यहां फुरसतके अवसरपर संस्कृत ग्रन्थोंका अध्ययन और परस्परमें संस्कृत भाषणका अभ्यास विशेषरूपसे बढाते रहे ।

जयपुरमें प्रचार.

*करौलीसे स्वामीजी जयपुर आये और दादूपंथी साधु रतीरामजीके बगीचेमें ठहरे । यह बगीचा रामनिवास बागके पीछे है । एक दिन सायंकालको जयपुरसमाजके वृद्ध सभासद व वर्तमान कोषाध्यक्ष पंडित भैरवप्रसादजी शुक्ल मास्टर जयपुरकालेज, वायुसेवनार्थ रामनिवासबागमें गये । तब एक बेंचपर खड़ाऊं पहिने गेरुआ वस्त्र धारे स्वामीजीको बैठा देख उनके समीप उपस्थित हो नमस्ते कर उसी बेंचपर बैठ गये । स्वामीजीने सबसे पूर्व यही पूछा कि "यहां समाज है?"। शुक्लजीने उत्तरमें हां कहा। बहुतसी वार्तालाप परस्पर होती रही । जिससे शुक्लजी बड़े प्रसन्न हुए। श्रीयुत रामलालजी प्रधान आर्य्यसमाज जयपुर अपने एक पत्रमें लिखते हैं कि " उस समय स्वामीजीके सिद्धान्तपक्षमें नवीन वेदान्तियोंकेसे विचार थे । परन्तु समाजसे प्रेम अधिक था। " स्वामीजी, (स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराज सहित) समाजके साप्ताहिक अधिवेशनमें पधारे और व्याख्यान दिया। प्रभाव अति उत्तम रहा । इसका प्रमाण इतनाही पर्य्याप्त है कि व्याख्यान समाप्त होनेपर उपस्थित सज्जन दोनों महात्माओंको बागतक पंहुचाने गये ।

इसके पश्चात् अनेक सामाजिक पुरुष जिनमें श्रीयुत डा. कृष्णलालजी, जगन्नाथ प्रसादजी, ठाकुर नन्दकीशोरसिंहजी मेम्बर council जयपुर और डाक्टर भैरोंप्रसादसिंह जी मुख्य थे। स्वामीजीसे मिलनेके लिये आते रहे । और अनेक स्थानोंपर व्याख्यान कराये । इसबार जयपुरमें नवीन वेदान्तपर अधिक चर्चा रही।

हाडोती मालवा और मध्यभारतकी यात्रा.

जयपुरसे स्वामीजी अजमेर आये और नगरके बाहर दौलतबागके पास दूधिया नामक स्थानपर ठहरे। उन दिनों (१९४४ वि०) आर्य्यसमाजके मन्दिरकी नीवें खुद रही थीं। अजमेरसे नसीराबाद गये। मार्गमें आर्य्यसमाज अजमेरके प्रधान मुंशी पद्मचंदजी मिले और सामाजिक विषयोंपर वार्तालाप होता रहा । नसीराबादमें मुंशीजीकी बगीचीमें विश्राम किया और ठाकुर हीरासिंहजी, पण्डित करुणानन्दजी आदि आर्य्यसामाजिक पुरुषोंसे मिलते रहे ।

नसीराबादसे इक्केमें केकड़ी गये और ब्राह्मणोंकी बगीचीमें एक रात ठहरकर कोटा चले गये। कोटेमें कई पंडितोंसे बातचीत हुई विशेष कर गोस्वामी कन्हैयालालजीसे जो संस्कृतके अच्छे विद्वान् थे। कोटेमें एक दो दिन रहकर झालावाड़की ओर प्रस्थान

* ग्वालियरसे दतिया, दतियासे पुनः ग्वालियर व धौलपुरसे श्रीमथुरा, श्रीमथुरासे करोली, और करौलीसे मण्डावर स्टेशन तककी यात्रा विना रेलके खुसकीके रस्तेसे की थी।

किया । वहां नगरके बाहर ब्राह्मणोंके बगीचेमें ठहरे और काउन्सिलके प्रतिष्ठित मेम्बर धाभाई शिवबक्षजी, महाराजा बलभद्रसिंहजी और राजराणा भवानीसिंहजी आदिसे मिलते रहे ।

स्वामीजीकी धाभाई शिवबक्षजीसे गाढ़ मित्रता होगई और उन्हींके आग्रहसे वहां अधिक दिनोंतक ठहरना पडा । झालावाडसे स्वामीजी ऊंटकी सवारीपर खिलची पुर गये और दो-तीन दिन रहकर राजगढ होतेहुए ऊंटकी गाडीमें इन्दोर चले गये । खिलचीपुरमें स्वामीजी पंडित यमुनादासजीसे (यह बल्लभसंप्रदायके बड़े पंडित थे और एक भ्रमपूर्ण पुस्तकके, जिसका नाम महताब दिवाकर है, कर्ता हैं) मिलेथे ।

इन्दोरमें प्रवेश करते समय जो रामद्वारा सर्व प्रथम मिला वहांपर स्वामीजीकी **मुंबईके सुप्रसिद्ध मरचेन्ट बँकके मॅनेजिंग डायरेक्टर** सेठ जयनारायणजी दानीसे भेट हुई । और श्रीसेठ दानीजीने स्वामीजीको एक महेश्वरी परिवारके गृहपर ठहराया और श्रीयुत डाक्टर गोविन्दराव चास्करसेभी सर्व प्रथम परिचय करवाया । डाक्टर साहबने स्वामीजीके रहनेका प्रबन्ध शफाखानेमेंही किया । प्रारम्भमें स्वामीजीके चार पांच व्याख्यान कृष्णपुरामें दक्षिणी पंडितोंके राममंदिरमें हुए ।

इन्दोरमें आर्य्य-समाज स्थापित करना.

व्याख्यान इतने प्रभावशाली हुए कि परिणाममें सेठ जयनारायणजी दानी व डाक्टर साहबके विशेष उद्योगसे वहां आर्य्यसमाज स्थापित होगया और इन्दोरके सामयिक दीवान आर. रघुनाथराव साहबसे भेट होनेपर व्याख्यानोंका प्रबन्ध सरकारी लाइब्रेरीमें हुआ । दीवानसाहबपर स्वामीजीकी योग्यताका प्रभाव इतना पड़ा कि उन्होंने स्वामीजीके उपदेशोंसे लाभ उठानेके लिये अपने बाहरके मित्रोंकोभी बुलवा भेजा । स्वामीजीके व्याख्यानोंकी धूम बहुत मची । आसपासकी छोटी २ रियासतोंके अनेक मनुष्य आने लगे । जिनमें देवासकी बड़ी पांतिके दीवान मिस्टर कुन्टे, छोटी पांतिके मिस्टर नीलकण्ठ जनार्दन कीर्तने, देवासके सर्जन जनरल, हेडमाष्टर आदि मुख्य थे । देवासके सज्जन इतने प्रभावित हुए कि उनके अत्यन्त आग्रह करनेपर स्वामीजीको पूरे एक महीनेतक देवास जाकर धर्मोपदेश करना पड़ा । इस अवसरपर देवास छोटी पांतीके राजा श्रीमान् नारायणराव साहब निरंतर पधारते थे । नगरके अन्य प्रतिष्ठित तथा साधारण गृहस्थ तो नियत समयसे पूर्वही आजाते थे । इस प्रकार देवासराज्यमें वैदिक धर्मका प्रचार करके स्वामीजी पीछे इन्दोर आगये । यहांसे ओंकारनाथ गये और वहांकी लीला देखकर जावद होते हुए खंडवा पंहुचे । उन दीनों खंडवामें डाक्टर सुखदेवप्रसादजी रहते थे । डाक्टर साहब बड़ेही उत्साही दृढ और सच्चे आर्य्य थे । आपने स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रबन्ध अनेक स्थानोंपर (यथा सरकारी हाइस्कूल) किया । यहांसे स्वामीजी फिर इन्दोर आगये । और वहांसे येवला आर्य्यसमाजके निमंत्रणपर वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होनेको चले गये ।

स्वामीजीके जानेके पूर्व येवला समाजका संक्षिप्त वृत्तान्त.

साधु ब्रह्मानन्दजीके उपदेशोंसे येवलेमें आर्य्यसमाज स्थापित हुआ था। ये महात्मा वहां अनुमान ६ महीनोंतक ठहरे थे। और सत्यार्थप्रकाशकी कथा करते रहते थे। लोगोंने पण्डित दुर्गाप्रसादजीसे सत्यार्थ प्रकाश मंगवा और स्वयं प्रचार करने लगे। परिणाममें श्रावण सुदी ४ संवत् १९४३ वि० को येवलेमें आर्य्यसमाज स्थापित होगया। इसके पश्चात् स्वामी भास्करानन्दजीकेभी उपदेश हुए जिनसे आर्य्यसमाजके सभासदोंने तो लाभ उठाया परन्तु सनातन धर्मियोंपर उनका प्रभाव अच्छा नहीं पड़ा। स्वामीजी श्री० विश्वेश्वरानन्दजी महाराज सहित चैत्र कृष्णा १ सं. १९४४ को येवले पधारे और सेठ नथुभाईके यहां विश्राम किया।

महात्मा जस्टिस माधव गोविन्द रानडे महोदयसे भेट.

दूसरे दिन प्रसिद्ध देशभक्त महात्मा जस्टिस माधव गोविन्द रानडे महाराजभी पधारे और उक्त महोदयसे स्वामीजीका प्रथम परिचय यहींपर हुआ। इसके उपरान्त यह परिचय उत्तरोत्तर दृढ होता गया। येवला समाजके इस उत्सव पर रा० गंगाधर नरसिंह केतकर वकील व खंडु बालाजी खरडे आदि अनेक सज्जन आये थे। येवलानिवासियोंकी ओरसे चैत्र कृ. ३ सं. १९४४ को एक स्वागतसभा आर्यसमाजके कोषाध्यक्ष सेठ नथुभाई गुजरातीके घरके सन्मुख एक सुन्दर मण्डप बनाकर कीगई। उपस्थिति चार हजारसे अधिक थी।

येवलेमें स्वागत.

आर्यसमाजके उपप्रधान श्रीयुत पुरुषोत्तम दामोदरने ईश्वरप्रार्थनाके पश्चात् श्रीमान् रानडे महोदयसे अध्यक्षस्थान ग्रहण करनेकी प्रार्थना की। इसपर श्रीमान् रानडे महोदयने अत्यन्त आग्रह करके स्वामीजीसे प्रधानपद स्वीकार कराया।

तत्पश्चात् रानडे महोदयके यह पूछनेपर कि यहां समाज कैसे स्थापित हुआ ? महाशय गिरजाशंकर और समाजके मंत्री श्रीयुत एकनाथ शामलालने समाजका संक्षिप्त वृत्तान्त सुनाया। तदनन्तर रानडे महोदयने आर्य और अनार्य इस विषयपर अति उत्तम भाषण अनुमानसे डेढ घंटातक किया। प्रसंगवश आपने आर्य्यसमाजका उपकार मानतेहुए कहा कि स्वामीजी (महर्षि दयानन्दजी) का मेरेपर अत्यन्त प्रेम था और मैंभी उन्हें आदरकी दृष्टिसे देखता था। मैं परोपकारिणी सभाका मेम्बर हूं उस महात्माके श्रमके फल पंजाबमें अछे आये हैं। मुझे यहांपर समाजको देखकर अत्यन्त आनन्द हुआ, इसके पश्चात् श्रीमान् बलवंत खंडु पारखने " एक अद्वितीय ईश्वरही उपासनीय है " इस विषयपर थोड़ासा भाषण किया। तब श्रीमान् स्वामीजी महाराजने अपने भाषणमें अत्यन्त उत्साह और गम्भीरतासे आर्य्यत्व और अनार्यत्वका भेद बतलातेहुए आर्यसमाजके उद्देशोंको विस्तृत

रूपसे जनताके समक्षमें वर्णन किया । और अन्तमें आर्य्यसमाजके द्वाराही आर्य्यावर्तकी उन्नति होगी इसका विश्वास दिलाते हुए अपना भाषण समाप्त किया। व्याख्यानके समाप्त होनेके कई मिनटों पश्चात् जनता मुग्धसी बैठी रही। समय अधिक हो गया था इसलिये श्रीयुत पुरुषोत्तमजी उपप्रधान महोदयने सबको धन्यवाद दिया और अन्तमें पानसुपारी आदिसे सत्कार करके सभा विसर्जन की गई। दूसरे

शास्त्रार्थकी चर्चा.

दिन प्रातःकाल ८ बजे म्यूनिसिपलकमेटीके सेक्रेटरी बालाप्रसादजी व कृष्णारावजी वकील स्वामीजीके पास आये और बोले, कि, आप शास्त्रार्थ करें तो हम अपने पंडितोंको बुलावें। स्वामीजीने अत्यन्त हर्षसे स्वीकार किया। चैत्र कृ० ६ को स्वामीजी समाजके साप्ताहिक अधिवेशनमें सम्मिलित हुए । श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजने ईश्वरस्तुति की। और उसके पश्चात् स्वामीजीने वैदिकधर्मकी उत्तमतापर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया । इसी प्रकार चैत्र कृ० ७ और ९ सोम तथा बुधवारको वैदिक उपासना तथा देशोन्नतिपर दो व्याख्यान महाजनवाडेमें हुए । इसी बीचमें सनातन धर्मावलम्बी पंडितभी बाहरसे शास्त्रार्थके लिये आगये। नियम आदि निश्चित होनेके उपरान्त निम्न पांच विषयोंपर शास्त्रार्थ होना निश्चय हुआ।

(१) वेदमें भौतिक सूर्यकी उपासना है या सूर्यके नामसे ईश्वर की ?

(२) वेदमें जड़ मूर्तिकी पूजा है या नहीं ?

(३) यज्ञमें हिंसा है वा नहीं ?

(४) वेदाध्ययनका सबको अधिकार है या नहीं ?

(५) हवनसे पवनकी शुद्धि होती है या स्वर्गकी प्राप्ति ?

सनातन धर्मावलम्बियोंकी ओरसे दीक्षित कल्याणकर, यादवशास्त्री पुणतांबेकर, काशीनाथ कलवर्राकर तथा यशवंतराव पैठणकर थे।

सभाका अध्यक्षस्थान रावसाहब पांडुरंग धोंडदेव गाडगीलको दिया गया था।

आरम्भमें सनातन धर्मावलम्बियोंकी ओरसे दीक्षितजीने प्रश्न किया। नीचे प्रश्नोत्त-

शास्त्रार्थका आरम्भ.

रोंका सार दियाजाता है। शास्त्रार्थ संस्कृत और भाषामें लिखित हुआ था।

प्रश्न—यह भौतिकसूर्य्य उपासनीय है या नहीं ?

उत्तर—भौतिक सूर्य्यकी उपासना वेदविरुद्ध है।

प्रश्न—कृष्णयजुर्वेदमें "असावादित्यो ब्रह्म" इस ऋचासे भौतिकसूर्य्यकी उपासना सिद्ध होती है ?

उत्तर—कृष्णयजुर्वेद प्रमाणभूत नहीं, किन्तु यजुर्वेद एकही है। इसके अनन्तर स्वामीजीने वेदमंत्रका वास्तविक तात्पर्य्य बतलाकर पंडितोंके भ्रमका निराकरण किया।

और जनताको स्वामीजीके पक्षकी सत्यता स्पष्ट प्रतीत होगई । तब पंडितजी ग्रन्थोंके प्रामाण्य अप्रमाण्यके झगड़ेको ले दौड़े और अनुमान एक घंटेतक इस विषयपर वार्तालाप होता रहा । अध्यक्ष महोदयने आजके शास्त्रार्थकी लिखित प्रतिलिपिपर हस्ताक्षर करनेके लिये पंडितजीसे कहा परन्तु उन्होंने हस्ताक्षर नहीं किये और सभा विसर्जन हुई । दूसरे दिन (चैत्र कृ० १२ सं. १९४४) को फिर सभा एकत्रित हुई और " किन ग्रन्थोंको प्रमाण मानना चाहिये " इस विषयपर शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ, परन्तु अन्तमें सनातनियोंकी ओरसे स्वामीजीको शास्त्रार्थ अपूर्ण रखनेकी विनंति की गई । स्वामीजीने अध्यक्षसे शास्त्रार्थ पूर्ण करानेके लिये कहा परन्तु कल पूरा करेंगे ऐसा कहके सभा विसर्जन की गई और आजकी कार्य्यवाहीपर हस्ताक्षरभी नहीं किये । इसके पीछे थोड़े दिन शास्त्रार्थ बन्द रहा, सनातन धर्मावलम्बियोंने नासिकसे श्रीयुत हरिशास्त्री गर्गे, और कल्याणसे मलारराव दीक्षितको शास्त्रार्थके लिये बुलाया । स्वामीजीके व्याख्यान " आर्य्यसमाजके नियम, " " उन्नति " आदि विषयोंपर होते रहे । इसी बीचमें मुम्बई आर्य्यसमाजके मंत्री श्रीयुत सेवकलाल कृष्णदासजीभी आगये अब येवलासमाज आर्य्यप्रतिनिधि सभा मुम्बईमें सम्मिलित होगया ।

अन्तिम शास्त्रार्थ. चैत्रशुक्ला ५ सं० १९४५ वि० को म्यूनिसिपल हालमें फिर ग्रन्थोंके प्रामाण्य अप्रामाण्य विषयपर शास्त्रार्थ हुआ । सनातन धर्मावलम्बियोंकी ओरसे नासिक और कल्याणसे पंडित हरिशास्त्री गर्गे और मलारराव दीक्षित आये थे । मध्यस्थ रा. रा. यशवंत बाळकृष्ण बर्वे मामलतदार और बालाप्रसाद भगवान्‌जी थे । पंडित हरिशास्त्री गर्गेने प्रश्न किया कि " **किं नाम वेदाः** " उत्तरमें स्वामीजीने " मंत्रभागसंहितेति " कहा । गर्गे महोदय थोड़ी देर पीछे विषयान्तर करके व्याकरणके प्रश्न करने लगे । अन्तमें मध्यस्थोंने सनातन धर्मके पक्षकी निर्बलता जानकर शास्त्रार्थ बन्द कर दिया और कल करेंगे ऐसा बहाना करके चले गये । दूसरे दिन आर्य्यसमाजके सभ्य सेठ जगजीवन खेमचंद आदि रा. रा. बालाप्रसादजीसे पूछने गये कि शास्त्रार्थ कब होगा तो उन्होंने उत्तर दिया कि अब शास्त्रार्थ होना कठिन है । तब स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रबन्ध किया गया और वे चैत्रशुक्ला ६ से वैशाख वदी ३ सं. १९४५ तक " चित्तकी स्थिरता " वैदिक धर्मकी उत्तमता आदि विषयोंपर हुए । स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजने एक व्याख्यान वैशाख कृ० २ की संस्कृतमें कर्तव्याकर्तव्यपर दिया और इसी दिन स्वामीजीका सत्कारसमारम्भ सेठ नथुभाई कोषाध्यक्ष आर्य्यसमाजके यहां हुआ । दूसरे दिन अर्थात् वैशाख कृष्ण ३ सं. १९४५ वि० को स्वामीजीने येवलेसे प्रस्थान किया । ३०० से अधिक प्रतिष्ठित सज्जन स्टेशनतक पहुंचाने आये । वहांभी पानसुपारीसे सत्कार हुआ और रा. रा. पुरुषोत्तम दामोदरजी स्वामीजीको मनमाडतक पहुंचाने आये ।

स्वामीजीके इस प्रवाससे आर्य्योंकी स्थिति दृढ हुई। सनातनी भाइयोंमें अपूर्व प्रेमका स्रोत उद्वाहित हो चला। जातिवाले जो कष्ट सामाजिकोंको दिया करते थे वे अब बन्द हो गये। येवलानिवासी स्वामीजीके ज्ञान और वक्तृत्वशक्तिकी अबतक प्रशंसा करते हैं। आर्य्यसमाजस्थोंको स्वामीजी सदा धैर्य और उत्साहसे कार्य्य करते रहनेका उपदेश देते थे। येवलेमें कर्तव्यपरायण सामाजिकोंका प्रादुर्भाव होने लगा। आजकल येवलाके ९ बालक और ४ बालिकाएँ गुरुकुल कांगडी, महाविद्यालय ज्वालापुर, और कन्यामहाविद्यालय जालंधरमें शिक्षा पा रहे हैं।

येवलामें स्वामीजीके प्रवासका प्रभाव.

येवलेसे स्वामीजी इन्दोर आये और मऊमें धर्मोपदेश करके समाज स्थापित किया। फिर खंडवे होकर हरदा पहुंचे और श्रीयुत सदाशिव पटवर्धन वकीलके यहां ठहरे। और इन्हींके प्रबन्धसे गवर्नमेन्ट हाइस्कूलमें ४।५ व्याख्यान दिये। होशंगाबादमें श्रीयुत गुलाबचंद और ठाकुर गदाधरसिंहजी बैरिस्टर एटलाके प्रबन्धसे कई व्याख्यान दिये। भोपालमें हाईस्कूलमें धर्मचर्चा की। इन दिनों भोपाल बीना रेलवे बन रही थी। इस लिये जब स्वामीजी बीना गये तो मार्गमें रेलवेके ठेकेदार स्थान स्थानपर ठहरा लेते और उपदेश सुनते। स्वामीजी बीना होतेहुए सागर पहुंचे और वहांके न्यायाधीशके प्रबन्धसे ४।५ व्याख्यान हाईस्कूलमें देकर पीछे बीना और भोपाल होतेहुए सीहोर गये और यहांके हाईस्कूलमें व्याख्यान दिये।

मध्य प्रदेशमें प्रचार.

सीहोरसे स्वामीजी नरसिंहगढ आये और नगरके बाहर महादेवके मन्दिरमें ठहरे। नगरमें जब स्वामीजीके आगमनके समाचार फैले तो बहुत लोग आने लगे। स्वामीजीकी विद्वत्ताकी ख्याति नगर भरमें फैल गई। राजपंडित आये और वार्तालापके पश्चात् संस्कृत पढ़ना आरंभ कर दिया। स्वामीजीके नरसिंहगढ आनेके समाचार नरसिंहगढाधीश महाराजा प्रतापसिंहजीतक पहुंचे और वे स्वामीजीसे मिलनेके लिये पधारे। एक घंटेसे अधिक ठहरे और वार्तालाप करते रहे। राजा साहब स्वामीजीके वार्तालापसे अति प्रसन्न हुए और आपने अपने प्रतिष्ठित मित्र ठाकुर मोड़सिंहजीको आज्ञा दी कि स्वामीजी महाराजको किलेमें लाकर चातुर्मासतक ठहरावें। ठाकुरसाहबके विचार सामाजिक थे। और ये महाराजा साहबके हार्दिक मित्र थे। अतः स्वामीजी महाराजको बड़े आदरसत्कार और समारोहसे किलेमें ले गये और सवारीके लिये हाथी भेजा गया। यहां स्वामीजी अनुमान ४ महिनोंतक ठहरे। और महाराजा साहबसे नित्य दोनों समय आर्यधर्मपर वार्तालाप होता रहा। महाराजा और महाराणी साहब वल्लभसंप्रदायके शिष्य थे। इन्होंने जब स्वामीजीकी बातें सुनी तो खिलचीपुर-निवासी पण्डित यमुनाप्रसादजीको बुलवाया और शास्त्रार्थका प्रबन्ध किया।

नरसिंहगढका प्रवास.

महाराजा साहबने एक दरबार किया और उभयपक्षोंसे निम्न आठ प्रश्नोंके उत्तर देनेकी जिज्ञासा प्रकट की, प्रारम्भमें महाराजाने कहा–

शास्त्रार्थ नरसिंहगढ.

"वर्तमान समयमें हम आंख उठाकर देखते हैं तो इस संसारमें बहुतसे मत देखनेमें आते हैं। और प्रत्येक मतवाला अपने मतको सत्य और अन्यमतको मिथ्या बतलाता है इन सब मतोंमें वेदका मत (जिसको माननेवाले सर्व आर्य्य यानी सब हिन्दू हैं) भी एक मत है, इन हिन्दुओंमें भी बहुतसे मत हैं। जैसे कोई शैव, कोई शाक्त, कोई वैष्णवादि हैं। इनमेंभी ये लोग आपसमें ईश्वरका रूप अलग अलग वर्णन करते हैं। कोई शिव, कोई विष्णु, कोई गणेश, कोई शक्ति, कोई सूर्य्य, आदि पृथक् पृथक् बतलाते हैं। और इनका स्थानभी पृथक् २ कथन करते हैं। अर्थात् कोई गोलोक, कोई वैकुंठ, कोई क्षीरसमुद्र, कैलासादिमें बतलाते हैं। अब इन सर्व मतावलम्बियोंसे कौनकी बात सत्य समझें ? हम इस विचारमें थे कि दैवयोगसे इसी समयमें श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी और नित्यानन्दजी महाराज, और श्रीमान् पंडित जमुनादासजी ये विद्वान् उपस्थित हुए। अतएव हम इन विद्वोंसे ईश्वरका स्वरूप तथा ईश्वरका स्थान निर्णय किया चाहते हैं। हम इन आठ प्रश्नोंसे सत्य और असत्यको ठीक २ जान लेवें। वे आठ प्रश्न यह हैं:—

(१) गुरुमंत्र एक है वा अनेक ? यदि अनेक हैं तो उनमेंसे सत्य कौन सा है ?

(२) ईश्वर क्या पदार्थ है और कहां रहता है ? साकार है वा निराकार ? यदि साकार है तो चतुर्भुज वा त्रिनेत्र, वा वक्रतुंडादिमेंसे किस प्रकारका है ?

(३) चार संप्रदाय दादूपंथी, कबीरपंथी आदि मतमेंसे कौनसा मत सत्य है ?

(४) ईश्वरके अवतार १० वा २४ हैं ? और वेदमें कितने लिखे हैं ?

(५) हमको नित्य क्या क्या कर्म करने चाहियें ?

(६) संसारका कर्ता कौन है और उसने किस प्रकारसे संसारको बनाया ?

(७) मुक्ति क्या पदार्थ है ? कोई स्थान विशेष है वा क्या ? और किन कर्मोंसे प्राप्त होती है ?

(८) ईश्वरकी उपासनाका प्रकार क्या है ?

यह शास्त्रार्थ श्रावण शुक्ल ५ सं. १९४५ वि० को प्रारम्भ हुआ था और ८ तक रहा।

प्रथम दिनका * शास्त्रार्थ.

महाराजाके पहले प्रश्नपर पंडित यमुनादासजीका कथन "ब्रह्मगायत्री मंत्रका जप करना आपको उचित है, और जो गुरु आपको मंत्र देगा गायत्रीमंत्र देगा (मनुस्मृतिके प्रमाणसे)। स्वामीजीकी समीक्षा– "आप कहते हैं कि ब्रह्मगायत्रीका उपदेश होना चाहिये ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यके वास्ते और आप तो 'क्लीं कृष्णाय गोपीजन-

* यहशास्त्रार्थ छप भी गया था।

वल्लभाय स्वाहा ' इत्यादि वेदविरुद्ध गुरुमंत्रका उपदेश क्यों करते है ? यदि ' श्रीकृष्णः शरणं मम ' इत्यादि मंत्र वेदोंके अनुकूल हैं तो हम आपसे पूछते हैं कि ये मंत्र कौनसे वेदके कौनसे अध्यायके कौनसे मंत्रमें लिखे हैं । और ऐसेही और संप्रदायोंके मंत्र भी आपको वेदोंमें लिखलाने होंगे । क्योंकि आपने नियमपत्रमें शंकरमतके सहित चारों संप्रदायोंके सब ग्रन्थोंका प्रमाण मानना स्वीकार किया है । "

पंडितजीका उत्तर " वेद और मनुके अनुकूल समयमें जो क्षत्रिय जातकर्मादिक संस्कारयुक्त होकर श्रद्धापूर्वक उपनयन करते हैं उनको उपनयनसमयमें वेदोक्त मंत्रोपदेश किया जाता है । और उपदेशयोग्य यावत् कर्ममें वेदोक्त मंत्र संपूर्ण वेदाध्ययन और वेदका अर्थ विचार क्षत्रियसंबंधी प्रजा पालनादि कर्ममें उपयोगी सब सद्ग्रन्थ अध्ययन करना चाहिये । और जो क्षत्रियादिक जाति वेद मनुके उक्त समयमें उक्त-संस्काररहित होगये और जिनके कुलमें अपना क्षत्रियादिक कर्म परंपरासे छूट गया । उनको मनुस्मृतिमें सावित्रीपतित कहते हैं उनमें दो भेद हैं । जो सावित्रीपतित होकर पीछे परिताप करें और उनको यह अभिलाषा होवे कि हम पीछा क्षत्रियधर्म अङ्गीकार करेंगे उनको स्मृतिके अनुकूल प्रायश्चित्त देकर शुद्ध क्षत्रियादिका सब संस्कारादि किया जावे । और वेदाध्ययन आदिका उनको अधिकार होगा और कितनेक क्षत्रियादिकको दववशमें ऐसा कुव्यवहार पडा है, कि शुद्धधर्म सर्वथा छूट गया । उनसे पीछा शुद्धधर्म सिद्ध होना अतिकठिन संभावित है । उनके वास्ते साधारण ईश्वरनामका उपदेश करते हैं । इसमें प्रमाण महाभारत शांकरभाष्य आदिमें प्रमाण ' हरिर्नामैव नामैव ' यह प्रमाण महाभारत शांकरभाष्यमें है । "

शास्त्रार्थका दूसरा दिन.

स्वामीजीका कथन " प्रथम तो जो कुछ हमने खंडन किया था उसका उत्तर पंडितजीने नहिं दिया, क्यूंकि हमारा कहना यह था कि चारों वेदोंमें आप ऐसा बतलावें कि सांप्रदायिक मंत्रोंका उपदेश क्षत्रियादिकको होना चाहिये । सो वेदोंमें तो आपने कहीं बताया नहीं । हमारे कहनेके विरुद्ध आपका उत्तर है । दूसरा जो कि क्षत्रिय धर्मसे पतित होगये हैं। उनके वास्ते प्रायश्चित्त कराके गायत्रीमंत्रही देना चाहिये। और पंडितजी कहते हैं कि जो क्षत्रिय धर्मपर नहीं आसक्ता उनके वास्ते साधारण ईश्वर-नामादिक देना चाहिये । इसपर हम यह पूछते हैं कि जो क्षत्रियादिक सुधर्मपर नहीं आसक्ता है उसके लिये संप्रदायी मंत्रका उपदेश किया जावे यह किस वेदमें या किस स्मृतिमें लिखा है ? तीसरे जो श्लोक पण्डितजीने लिखाया है यह वेदविरुद्ध है । क्योंकि इस श्लोकका आशय यह है कि हरिके केवल नामहीसे मुक्ति होती है । परंतु वेदमें लिखा है कि " नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय " अर्थ यह है कि ज्ञान विना मुक्ति नहीं होती । इस लिये महाभारतका प्रमाण वेदविरुद्ध होनेसे माना नहीं जासक्ता । जैसा मनुस्मृतिमें लिखा है कि " या वेदबाह्याः स्मृतयो " वेदसे विरुद्ध कोई ग्रन्थ नहीं मानना

चाहिये । चौथे क्या गायत्री ईश्वरका नाम नहीं है ? जो पतित क्षत्रियको गायत्रीका उदेश न करना । पंडितजी कहते हैं सो ये बात कौनसे वेदमें या कौनसी स्मृतिमें लिखी है कि पतित क्षत्रियको गायत्रीमंत्रका उपदेश न करके सांप्रदायिक मंत्रका उपदेश करना चाहिए " पंडित यमुनादासजीकी मीमांसा । " स्वामीजीने कहा ईश्वरका नामसेवन क्षत्रियको करना इसमें बेदका प्रमाण चाहिये (सोऽमृता अमृतस्येति भूरि नाम मनामहे) यह वचन मनुष्यमात्रको ईश्वरके नामके सेवनका अधिकार सिद्ध करता है । यह उत्सर्ग-वचन है । और तीन वर्णको वेदमंत्रद्वारा ईश्वरनाम सेवनादि करना यह अपवा-दवचन है । अब शुद्ध तीन वर्णसे बाकी यावत् मनुष्यको साधारण नामका सेवनादिकम अधिकार है "

स्वामीजीका निरीक्षण—"पंडितजी कहते हैं सावित्री पतित क्षत्रियादिकको ईश्वर नामका अधिकार है और वेदस्मृतिके अनुकूल संस्कारके सहित क्षत्रियादिकको गायत्री मंत्रका अधिकार है इसमें पंडितजी कहते हैं कि एक उत्सर्ग होता है और एक अपवाद होता है यह पंडितजीका कहना ठीक नहीं है । क्यूंकि जहां अपवाद प्रवृत्त होता है वहां उत्सर्ग प्रवृत्त नहीं होता । और हम देखते हैं कि बहुतसे ब्राह्मणादिक गायत्रीका उपदेश लेकर पीछेसे कृष्णमंत्र लेते हैं और गुसांईजी वगैरे ब्राह्मणादिको कृष्णादिक मंत्रका उपदेश करते हैं । यह पंडितजीके कहनेसे विरुद्ध है । और शास्त्रका यह नियम है कि जहां अपवाद प्रवृत्त होय वहां उत्सर्ग प्रवृत्त नहीं होता । "

उत्तर-पंडित यमुनादासजीका—" जिन ब्राह्मणादिकनको वेदके कर्मका पुर्ण अधिकार है, यानी स्नानसंध्या ब्रह्मयज्ञादिकका पूर्ण अधिकार है उसको महात्मा पुरुष गायत्रीके जपका और गायत्रीके अर्थ संधानका ही दृढ उपदेश करेंगे । और किसी संप्रदायिक मंत्रका उपदेश नहीं करेंगे । "

तीसरे दिनका शास्त्रार्थ.

स्वामीजीका उत्तरः— " अब पण्डितजीने इस बातको तो अंगीकार कर लिया कि जिन ब्राह्मण क्षत्रियादिकको उपनयन संस्कार यानी ब्रह्मगायत्रीक उपदेश किया गया है उन ब्राह्मण क्षत्रियादिकको वल्लभादि जो मंत्र हैं उन मंत्रोंको लेना न चाहिये । अब रहा यह कि जो पतित ब्राह्मण क्षत्रियादिक हैं उनको प्रायश्चित्त कराके पुनः उपनयनसंस्कार कराना चाहिये, यह मनुस्मृतिमें मनुमहाराजने कहा है (११ अध्यायमें,) अब यह कहींपर विधि नहीं पाई जाती है कि जो पतित क्षत्रियादिक हैं उनको प्रायश्चित्त न कराके और उपनयन संस्कार न कराके संप्रदायी मंत्रोंका उपदेश लेना चाहिये । यदि पंडितजी ऐसा कहें कि जो पतित क्षत्रिया-दिक हैं वे किसी प्रकारसे स्वधर्मपर नहीं आसक्त हैं । सो यह बात सर्वथा झूठ है । क्योंकि तीन कृच्छ्र व्रत हरएक मनुष्य कर सकता है उसमें कुछ खर्च भी नहीं होता है । अब किसी मनुष्यसे पूछा जाय कि तुम तीन कृच्छ्र व्रत करनेसे असली वर्णपर आ जाओगे और यदि न करोगे तो पतित (यानी पापी) बने रहोगे ।

और तुम्हारा किसी जातवालेसे कुछ सम्बन्ध नहीं रहेगा ऐसा मनुजीने दूसरे अध्यायमें लिखा है। तुमको कौनसी वात अंगीकार है ? तो वह मनुष्य यही कहेगा कि मैं तीन व्रत करके अपने पूर्ववर्ण पर आरूढ़ होजाऊं। और ऐसा वह कभी नहीं कहेगा कि मैं संप्रदायी मंत्रवालोंके मंत्रको लेकर पतित बना रहूंगा। और अपने इस लोक और परलोकके अर्थ धर्म काम और मोक्षरूपी फलसे रहित होकर मनुष्यजन्मको नष्ट भ्रष्ट करूं। क्योंकि गीतामें भी लिखा है "स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः" यानी अपने २ वर्णाश्रमोंके कर्मोंको जो करते हैं उनकाही कल्याण होता है अन्यथा नहीं। और हमने पहिले जो कुछ पण्डितजीके कथनका खंडन किया है उसका पण्डितजीने एकभी उत्तर नहीं दिया है। अब पण्डितजीको उचित है कि उन सबका पतेवार उत्तर दें।"

पंडित यमुनादासजीकी मीमांसाः- "स्वामीजीने जैसा लिखा है वैसा मैंने मंजूर नहीं किया, स्वामीजी लिखते हैं जिसने ब्रह्मगायत्री उपदेश लिया उसको संप्रदायी मंत्र नहीं लेना चाहिये। पीछे देखा जाय, मैंने यह नहीं लिखा। मैंने यह लिखा है कि जो ब्राह्मणादिक वर्ण जातकर्मसंस्कारयुक्त होवे और वेदोक्त मंत्रादिपूर्वक सर्व धर्मका जिसको अधिकार होवे और सकल ब्रह्मकर्मादि आचरण करते होवें उन ब्राह्मणादिको महात्मा पुरुष गायत्रीके अर्थानुसंधान उपदेश करते हैं। मैंने यही लिखा है। स्वामीजी लिखवाते हैं कि पंडितजी कहते हैं कि जो सावित्रीपतित क्षत्रियादिक होते हैं उनको प्रायश्चित्तपूर्वक उपनयन कराके संप्रदायीमंत्र लेना चाहिये। जो सावित्रीपतित क्षत्रियादिक किसी प्रकार सुधर्मपर नहीं आ सक्के उनको संप्रदायीमंत्र लेना। और स्वामी लिखते हैं कि यह झूंठ है। तीन कृच्छ्र व्रत हरेक मनुष्य कर सकता है। और कृच्छ्रका नाम स्वामी लिखवाते हैं। अब इसमें मेरा यह कहना है कि अपने धर्मको सर्वथा पूर्ण साधनेका निश्चय जिस क्षत्रियादिकको है उनको हम कभी नहीं रोक सकते। तीन कृच्छ्र व्रत कौनसे हैं इसमें हमको बड़ी शंका है। मनुजीने कृच्छ्र कई तरहके लिखे हैं ? उसमें तीन कृच्छ्रव्रतका कौन कृच्छ्र है ? मनुस्मृतिमें बताना चाहिये। और सावित्रीपतितको तीन व्रतसे प्रायश्चित्त होनेसे सुशुद्ध होते हैं यह भी मनुवाक्य बताना चाहिये। जैसा आप कहते हैं वैसा मनु नहीं लिखते हैं। और लिखा कि पतितको संप्रदायी मंत्र विधान है सो इसका जबाब उत्सर्गवाक्य प्रथम कह दिया और यह काम तीन व्रतसे नहीं होता, कुछ औरभी करना पड़ता है, और प्रायश्चित्त करके पीछेभी सर्व धर्म करना पड़ता है तब क्षत्रियादिक वर्ण होता है। अब किसी क्षत्रियको साफ २ अपना धर्म सुनाके प्रायश्चित्त सुनाके सन्मुख करिये कि इस ग्राममें कितने मंजूर होते हैं और आजन्म कौन साधेगा देखिये प्रत्यक्ष प्रमाण है। स्वामी लिखते हैं हमारे प्रश्नका उत्तर नहीं दिया इस पर कहता हूं कि मैंने सबका उत्तर दिया। आप हठ करते हैं या समझते नहीं हैं मिसल बुद्धिमानोंको बताई जाय"। इति। यह (तीसरे दिनका शास्त्रार्थ पुरा हुआ।)

उपरि उद्धृत कथन पंडितजीका अन्तिम कथन था । इसके पश्चात् स्वामीजीने उनके कथनका पूर्वापर विरोध दिखाया और यह लेख सभाको सम्बोधित करतेहुए पंडितजीके पास भेजा।" अब बुद्धिमान् लोगो! पंडितजीकी विद्या और बुद्धिको देख लीजिये कि इनके कथनमें कितना पूर्वापर विरोध है । प्रथम तो पंडितजी लिखते हैं कि क्षत्रियादिको ब्रह्मगायत्री मंत्रहीका उपदेश होना चाहिये । और फिर लिखते हैं कि जो क्षत्रिय जातकर्म-संस्कारयुक्त होकर श्रद्धापूर्वक उपनयन करते हैं उनको वेदोक्त मंत्रका उपदेश किया जाता है । फिर लिखा है कि जो क्षत्रिय अपने धर्मपर नहीं आसकते उनके वास्ते हम ईश्वरका नाम अर्थात् सांप्रदायिक मंत्रका उपदेश करते हैं । तो इस बातसे साफ जाना गया कि अधर्मियोंके वास्ते सांप्रदायिक मंत्रका उपदेश है । यह पंडितजीने खुद लिख-दिया है । और पंडितजीने लिखवाया है, कि, पतित क्षत्रियके वास्ते ईश्वरके नामका उपदेश करना चाहिये यह महाभारत और शांकरभाष्यमें लिखा है । अब इस बातसे साफ मालूम होता है कि पंडितजीने महाभारत व शांकरभाष्यका दर्शन भी नहीं किया है; क्योंकि महाभारत शांकरभाष्यमें ये बातें कहीं भी नहीं लिखीं कि पतित क्षत्रियको संप्रदायी मंत्र देना चाहिये और यहभी देखिये कि पंडितजीसे पूछते कुछ और हैं और पंडितजी कहते कुछ और हैं। जैसे पूछा गया था कि 'पतित क्षत्रियादिको संप्रदायी मंत्रका उपदेश करना यह कौनसे वेदमें या स्मृतिमें लिखा है' इसका उत्तर पंडितजी देते हैं कि स्वामीजीने कहा कि क्षत्रियादिकको ईश्वर नाम सेवन करना इसमें वेदप्रमाण चाहिये । अब देखिये पंडितजीसे क्या पूछा था क्या उत्तर दिया है ? और यह पंडितजीकी उलटी समझ देखिये कि पंडितजीने लिखवाया कि जिन ब्राह्मणादिको स्नान संध्या ब्रह्मयागादिका अधिकार है उनको महात्मा गायत्री-मंत्रका उपदेश करेंगे । अब विचारिये टुक ध्यान देकर कि ऐसा कौन मनुष्य है कि जिसे स्नानका अधिकार न होगा ? और यह देखिये कि शास्त्रकी तो यह आज्ञा है कि पहले गायत्रीमंत्रका उपदेश करके फिर उसको संध्या ब्रह्मयज्ञका अधिकार होता है और पंडितजीका उलटा कहना यह है कि संध्या ब्रह्मयज्ञका अधिकारी होजावे तब उसको गायत्रीमंत्र देना चाहिये । धन्य है पंडितजीकी विद्या और बुद्धिको अब एक यहभी पंडितजीका झूंठ देखिये कि साफ तो पंडितजीने लिखवाया है कि संप्रदायी मंत्र लेना चाहिये और पंडितजी कहते हैं कि मैंने यह नहीं कहा । तो उत्सर्ग अपवादसे क्या बात सिद्ध हुई ? वाहजी पंडितजी ! आपकी मिथ्या लीलाको देख बुद्धिमान् लोग हसेंगे । और पंडितजीने लिखवाया है कि तीन कृच्छ्र व्रत कौनसे हैं और पतित तीन कृच्छ्र व्रत करनेसे शुद्ध होता है यह मनुस्मृतिमें कहीं नहीं लिखा यह पंडितजीका कहना है । अब पंडितजीके इन प्रश्नोंके उत्तर देते हैं, परन्तु इन प्रश्नोंसे बिलकुल मालुम होता है कि पंडितजीने मनुस्मृतिकोभी नहीं पढ़ा है। अब प्रमाण देत हैं–

शास्त्रार्थकी समाप्ति.

" येषां द्विजानां सावित्री, नानूच्येत यथा विधि। तांश्चारयित्वा त्रीन् कृच्छ्रान् यथा विध्युपनाययेत् " (मनुस्मृति अ० ११ श्लो० १९१)

अर्थ–जिन ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यको अपने २ नियत समयपर अर्थात् ब्राह्मणको ८ से १६ वर्षतक गायत्रीमंत्र व यज्ञोपवीत न दिया जावे उसको ३ कृच्छ्र व्रत करा पुनः गायत्रीमंत्र देना चाहिये । और क्षत्रियको ११ वेंसे बाईस वर्षतक और वैश्यको १२ वर्षसे २४ वर्षतक गायत्री व यज्ञोपवीत न दिया जावे तो उनको ३ कृच्छ्र व्रत कराके यज्ञोपवीत देना चाहिये । अब जो पूछा कि कौनसा कृच्छ्र कराना चाहिये सो मनुजीने तो इसका नियम नहीं किया कि वोही कृच्छ्र कराना चाहिये परन्तु टीकाकार मेधातिथि आदिने तीन प्रजापति कृच्छ्र लिखे हैं । अब पंडितजीका एक कहना यह है कि किसी क्षत्रियको अपना धर्म सुनाकर धर्मपर चलाना मंजूर कराइये । इस नगरमें कितने क्षत्रिय अपने धर्मपर चलना मंजूर करते हैं इसका उत्तर यह है कि बहुतसे क्षत्रिय अपने धर्मपर चलना मंजूर करेंगे । अब पंडितजीका कहना यह है कि सब धर्म क्षत्रिय पाल सकें तब उनको जनेऊ और गायत्रीमंत्र देना चाहिये । इसका जबाब यह है कि ब्राह्मणादिभी सब धर्म पालन कर सकें तब उनकोभी जनेऊ गायत्रीमंत्र लेना चाहिये । जैसे ब्राह्मणके ये कर्म हैं " शमो दमस्तपः शौचं क्षांतिरार्जवमेव च । ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् " (भगवद्गीता) मनको जीतना, इंद्रियोंको जीतना, सर्व तप करना, शुद्ध रहना, नम्रता रखना, बाह्यज्ञान होना, शिल्पविद्या कलाकौशलका ज्ञान और आस्तिक्य होना ये कर्म ब्राह्मणके हैं। अब पंडितजीके कथनानुसार ये कर्म जिन ब्राह्मणोमें न होवें उन ब्राह्मणोंकोभी जनेऊ और गायत्रीका उपदेश न देना चाहिये। सो यही हाल पंडित यमुनादास जीकाभी है । क्योंकि पंडितजी ब्राह्मणके धर्मपर आरूढ होते तो गोकलिये गुसाँईके चेले क्यों होते ? क्योंकि पंडितजीने प्रथम लिखवाया है कि पतित ३ वर्णोंको संप्रदायीमंत्र लेना चाहिये । अब पंडितजी संप्रदायी मंत्र लेकर आपभी पतित हुए औरोंकोभी पतित करते हैं यह बड़े शोककी बात है । अब बुद्धिमान् लोग सत्यासत्यका विचार आपही कर लेंगे । और बुद्धिमानोंको यह बातभी ध्यानमें रखनी चाहिये कि शास्त्रार्थके नियमोंमें एक यह नियम है कि जिस विषयका शास्त्रार्थ होवे उस विषयके समाप्त होनेपर दूसरा विषय छेड़ना चाहिये । इस नियमसे विरुद्ध चलकर पंडितजीने अपनी प्रतिज्ञा की हानि करली । " इस प्रकार पूर्णतया निरुत्तर होनेपर पंडितजी बोले कि वेदमें राजाओंकी कथा है और स्वामीजी कहते हैं कि वेदमें तो किसी मनुष्यका नाम नहीं है इस लिये स्वामीजी वेदको नहीं जानते । तब श्रीहजूर महाराजा साहबने फरमाया कि जो शास्त्रार्थ होरहा है उसके पूरा हो जानेके बाद यह शास्त्रार्थ करना कि वेदमें किसी आदमीका नाम है या नहीं ? तिसपरभी पंडितजी निरर्थक वाक्यविलास करते रहे । तब ठाकुर मोहरसिंहजी बोले कि अब पंडितजी स्वमुखसे वेदोंके मंत्रसहित अर्थको लिखवावें।

और स्वामीजीभी लिखवावें जो लिखवाता लिखवाता हार जावेगा वोही वेद नहीं पढ़ा है. इस बातकोभी पंडितजीने सुनी अनसुनी करली, तब स्वामीजीने पंडितजीसे कहा कि न तो आप व्याकरण पढे, न छः शास्त्रोंमेंसे कोई शास्त्र आपने पढा और वेदकोभी आप नहीं पढे। जो आप वेद पढे हो तो हम एक वेदका मंत्र बोलते हैं सो बताओ यह कौनसे वेदका है? वो मंत्र यह था (वेनस्तत् पश्यन्) यजुर्वेदके ३२ वें अध्यायका मंत्र ८ है। यह मंत्र स्वामीजीने पूछा तो बोले कि यह तो वेदका मंत्र नहीं है, उपनिषद्का वचन है। तब स्वामीजीने कहा कि तुम लिख दो कि यह वेदका मंत्र नहीं है। तब पंडितजीने कहा कि आपभी लिख दें कि वेदमें राजाओंकी कथा नहीं है। तब स्वामीजीने लिख दिया कि वेदमें किसी राजाकी कथा नहीं है। किंतु वेद अनादि हैं। फिर स्वामीजीने पंडितजीसे कहा कि आपभी लिख दो कि यह वेदका मंत्र नहीं है। परन्तु पंडितजीने नहीं लिखा और कहने लगे कि वेदमेंभी यह मंत्र है और उपनिषद्मेंभी है। इसप्रकार महाराजा साहबके कियेहुए प्रथम प्रश्नके समाधान करनेमेंही पंडित यमुनादासजीने तीन दिन बिताकर अपने पक्षकी निर्बलताका पूरा प्रमाण देदिया और आगेके ७ प्रश्नोंका समाधान करनेसे इनकार कर दिया। अन्तमें स्वामीजीने प्रत्येक

शास्त्रार्थका परिणाम.

प्रश्नपर व्याख्यानोंद्वारा दरबारमें उपस्थित सब सज्जनोंकी संतुष्टि की और परिणाममें महाराजा और उसकी श्रद्धालु प्रजाको वैदिकधर्मकी सत्यतापर निश्चय होगया। और अनुमान ५०० क्षत्रियोंके सहित (जिनमें जागीरदार विशेष थे) श्रावणी पूर्णिमाको महाराजाने पातालपानी नामक रमणीक स्थानपर बडी भक्ति और प्रेमसे तीन दिन व्रत रखकर बृहत्यज्ञके उपरान्त यज्ञोपवीत धारण किया। नरसिंहगढमें आर्य्यसमाजकी स्थापना बडी धूमधाम और समारोहसे हुई। अन्तमें महाराजाने बडे प्रेमसे स्वामीजीको दुबारा शीघ्र पधारनेका आग्रह करतेहुए बडे

मालवेमें प्रचार.

सन्मान और भक्तिसे बिदा किया। नरसिंहगढसे स्वामीजी भोपाल होतेहुए होशंगाबाद आये। यहां टाउनहालमें व्याख्यानोंका प्रबंध हुआ। स्वामीजीके व्याख्यानोंको जनताने बडे प्रेम और भक्तिसे सुना। अन्तमें यहांभी आर्य्यसमाज स्थापित होगया। विपक्षियोंने आर्य्यसमाजकी स्थापनाके समाचार जानकर बडा कोलाहल मचाया। स्वामीजीके निवासस्थानपर इकठे हो हो कर आने लगे। पत्थरोंकी वर्षा की जिससे स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराज और स्वामीजीके चोटभी लगी, वस्त्रादिकभी ले गये, परन्तु अन्तमें सब शान्त होगये और अपने कियेपर बहुत समयतक पछताते रहे। स्वामीजी होशंगाबादसे चलकर हरदा आए। यहां हाइस्कूलमें व्याख्यान दिये और आर्य्यसमाज स्थापित किया। यहांसे खंडवा और इन्दोर आदि स्थानोंमें प्रचार करतेहुए उज्जैन चलेगये। यहांपर क्षिप्रानदीके तटपर एक रमणीक स्थानमें ठहरे और लाला मथुरादासजी खंडेलवालके

प्रबंधसे ३।४ व्याख्यानभी दिये। अपनी निर्बलताका उद्घाटन होते देखकर विपक्षी चिढ़ उठे और यहां बड़ाभारी झगड़ा होगया। उज्जैनसे स्वामीजी दुबारा इन्दोर और जावरा आदिस्थानोंमें प्रचार करने चलेगये और वहांसे नीमचकी ओर प्रस्थान किया। **नीमचमें स्वामीजीके व्याख्यान बड़ी धूमधामसे हुए और अति समारोहके साथ आर्य्यसमाज स्थापित होगया।**

मेवाडमें प्रचार. नीमचसे स्वामीजी चित्तौड आगये और ठाकुर जगन्नाथसिंहजीके प्रबन्धसे व्याख्यान देते रहे। ठाकुरसाहब सरलचित्त आर्य्य हैं और महाराणा साहब उदयपुरके प्रतिष्ठित कृपापात्रोंमेंसे हैं। यहांसे स्वामीजी भीलवाड़ा गये। उन दिनों श्रीयुत डाक्टर लक्ष्मणदासजी (जिन्होंने महर्षि दयानन्दजीकी अन्तिम समयमें आबूपर्वतपर चिकित्सा की थी और स्वामीजीके अजमेर पधारनेपर अपने वहां जानेका और कोई उपाय न देखकर त्यागपत्रतक दे दिया था) भीलवाड़ेमें थे। डाक्टरसाहबने स्वामी-जीका आतिथ्य सत्कार बड़े प्रेमसे किया और कई व्याख्यान कराये। स्वामीजी यहांसे बनेड़ा गये। और दिसम्बर १८८८ में शाहपुरा पहुंचे। यहां पंडित हमीरमलजी शर्माको जब मालूम हुआ कि दो आर्य्यसमाजी संन्यासी आये हुए हैं, तो ये स्वामीजीसे मिले और निवेदन किया कि आप श्रीजीके मंदिरमें पधारें। उन दिनों वहांपर प्रज्ञाचक्षु स्वामी विशुद्धानन्दजीभी ठहरे हुए थे। पंडितजी स्वामीजीके मन्दिरमें जानेकी स्वीकृति प्राप्त करके स्वयं तो राजाधिराज शाहपुराधीशको सूचना देनेके लिये चलेगये और स्वामीजीके साथ एक मास्टरको कर दिया। पंडितजीने राजाधिराजको स्वामीजीके आगमनकी सूचना कराई। इसपर राजाधराजने यथोचित प्रबंध करनेकी आज्ञा दी। आज्ञा प्राप्त करके पंडितजी मन्दिरमें गये तो स्वामीजी वहां नहीं मिले। पूछताछ करनेपर पता चला कि प्रज्ञाचक्षुजीने उन्हें यहां नहीं टिकने दिया। कारण पूछनेपर प्रज्ञाचक्षुजीने पण्डितजीसे कहा कि तुम लड़ाना चाहते हो। मुझेभी यहां लाये हो और उन्हेंभी बुलवाया है। यह सुनकर पण्डितजी महाराजास्कूलमें गये और स्वामीजीसे मिले। पंडितजी लिखते हैं कि स्वामीजी उस समयतक केवल ब्राह्मणहीके हाथका बनाया हुआ भोजन किया करते थे। और चौकेके बाहरभी भोजन नहीं करते थे। परन्तु उन्होंने (पण्डितजीने) स्वामीजीको वैश्यके हाथका भोजन कराया और खडाऊंके साथ २ बूटभी पहनाये। इन दिनों दिसम्बरका महिना था, अतः सर्दी अधिक पड़ती थी, परन्तु स्वामीजी प्रातःकाल ४ बजे तालावमें स्नान करते थे। शाहपुरा पधारनेके दूसरे दिन स्वामीजीने ईश्वरके अस्तित्वपर एक व्याख्यान दिया। श्रोताओंमें सर्वसाधारणके अतिरिक्त राजाधिराज और दोनों महाराजकुमारभी थे। राजाधिराजपर स्वामीजीके व्याख्यानका विशेष प्रभाव पड़ा। दिसम्बरके बड़े दिनोंमें परोपकारिणी सभाका अधिवेशन था। इसी निमित्त पंडित हमीरमलजी राजाधिराजके प्रतिनिधि

जनकर अजमेर जानेवाले थे। राजाधिराज शाहपुराधीशजीने स्वामीजीकी विद्वत्ता और योग्यता जानकर पण्डितजीको आज्ञा दी कि स्वामीजीको अजमेर ले जाओ और परोपकारिणी सभाके अन्य सभासदोंसे परिचय कराओ। अतएव स्वामीजी पंडितजीके साथ अजमेर आये। पण्डितजीने सभाके कार्य्य कर्ताओंको स्वामीजीके व्याख्यानके लिये समय नियत करनेकी सूचना दी। इसपर आर्य्यसमाजके कुछ पंडितोंने स्वामीजीके व्याख्यान देनेका विरोध किया और पंडित हमीरमलजीसे कहा कि तुम अजान आदमीको प्लेटफारमपर खड़ा करनेको कहते हो, यह अच्छा नहीं करते। इसपर पण्डित हमीरमलजीने उत्तर दिया कि **क्या गोकलिया गुसांइयोंकी तरह महर्षि दयानन्दजीने किन्हीं विशेष पुरुषोंहीके कानमें मंत्र फूंका है जो अन्य विद्वानोंको बोलनेका अधिकार नहीं?** इसपर वे क्रोधित हुए। वास्तवमें विरोध करनेका कारण तो यह था कि कुछ स्वार्थप्रिय पंडितोंको स्वामीजीके समान विद्वानोंका समाजमें आना अच्छा नहीं मालूम हुआ। क्योंकि इससे उन्हें अपने यश और प्राप्तिमें धक्का पहुंचनेका भय था। परन्तु जहां कुछ पंडितोंकी ओरसे विरोध किया जा रहा था वहां स्वामीजीकी योग्यता, विद्वत्ता, और उत्साहका यथोचित आदर करनेवालोंकीभी कमी नहीं थी। अतः स्वामीजीके व्याख्यानके लिये समय नियत हुआ और स्वामीजीने दो व्याख्यान दिये, जिन्हें सुनकर श्रोतागण मंत्रमुग्ध होगये। स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजकाभी व्याख्यान हुआ था। यहां स्वामीजीने आर्य्यसमाजके प्रचारका काम पूर्णतया करनेकी प्रतिज्ञा की, जिसे सुनकर श्रोतागणोंके आनन्दका पार नहीं रहा।

परोपकारिणी सभाके अधिवेशनोंमें व्याख्यान और पंडितोंका विरोध.

परोपकारिणी सभाका अधिवेशन समाप्त होनेपर मसूदारावजीने स्वामीजीको मसूदा पधारनेका आग्रह किया। अजमेरसे स्वामीजी मसूदा गये। यहां रावसाहबके व्यय और प्रबन्धसे एक बृहत्यज्ञ हुआ जिसके दर्शनोंके लिये अनेक मनुष्य दूर २ से आये थे। यज्ञके अनन्तर मनुस्मृतिकी कथा हुई। रावसाहब नित्य कथा सुननेके लिये उपस्थित होते थे। मसूदासे स्वामीजी शाहपुरा आये। यहां सायंकालके समय नित्य राजाधिराजसे धार्मिक विषयोंपर वार्तालाप होता रहा जिसके श्रवण करनेके लिये राज्यके अन्य सरदारभी उपस्थित होते थे। राजाधिराज महर्षि दयानन्दजीके मन्तव्योंके अनुयायी और प्रेमी हैं। महर्षिके जीवनकालमें आप वेद प्रचार फंडमें रु० ३०) मासिक देते थे। महर्षिकी मृत्युके उपरान्त यह रकम किसीने नहीं मांगी। राजाधिराजने स्वामीजीसे इस धनके उचित उपयोगकी व्यवस्थाके लिये परामर्श किया और अन्तमें पंडित हमीरमलजीकी सम्मति लेकर यह निश्चय हुआ कि राजाधिराजकी ओरसे एक उपदेशक वैदिकधर्म प्रचारके लिये सदा नियत रहे। शाहपुरासे

मसूदेमें बृहत् यज्ञ और मनुस्मृतिकी कथा.

स्वामीजी अजमेर, केकड़ी, भिणाया और सावरमें प्रचार करते हुए जहाजपुर गये। इन दिनों ठाकुर जगन्नाथसिंहजी चित्तौड़से बदलकर यहीं हाकिम होकर आये थे। आपने स्वामीजीको बड़े मान और भक्तिसे अपने यहां ठहराया और जब स्वामीजी वहांसे प्रस्थान करने लगे तो बूंदीतक स्वामीजीके साथ कई सवार और रथ कर दिये।

बूंदीकी धार्मिक स्थिति.

उस समय बून्दीका शासन महाराज रामसिंहजी करते थे। आप रामानुजसंप्रदायके अनुयायी थे। महाराजाकी पुरोहित मंडलीभी अपने विचारोंमें बड़ीही संकीर्ण थी। और यदि महाराजा कभी विचार पूर्वक धार्मिक आन्दोलनमें जिज्ञासा प्रगट करते तो यह अपने प्रभावसे उन्हें उल्टा करनेको बाध्य करती।

स्वामीजीका बून्दीमें आगमन.

स्वामीजी माघकृष्ण ५ सं० १९४५ को सायंकालके समय बून्दी पहुंचे। जब आप बाजारमें जा रहे थे तो इन्दोरके परिचित राजवैद्य पण्डित सूर्यनारायणजी मार्गमें मिलगये। आरम्भमें वैद्यजीने स्वामीजीसे कहा कि "यहां आप अपनेको हम आर्य्य हैं, ऐसा मत विदित कीजिये और शीघ्र चले जाइये। क्योंकि बून्दी नरेशकी आज्ञा है कि मेरे राजमें कोईभी आर्य्यसमाजस्थ पुरुष न आने पावे।" इसपर स्वामीजीने जब यह उत्तर दिया कि हम कुछ दिन यहां ठहरेंगे और हमसे जो कोई पूछेगा उसे यथार्थही कहेंगे। तब पंडितजी बोले कि आप अच्छे अवसरपर आये, क्योंकि कलही महारावजीने यहां निजपंडितोंकी "आर्य्यमतखंडिनी" नामक सभा स्थापित करनेका प्रबंध किया है अतः आपभी उस सभामें जो कुछ कहना हो कहें। मैं अभी महारावजीके पास खबर करके आपके निवास आदिका प्रबन्ध कराये देता हूं। स्वामीजीके स्वीकार करनेपर वैद्यजीने स्वामीजीके आगमनके समाचार राजपुरोहित पंडित गङ्गासहायजीको दिये। और गंगासहायजीने महारावसाहबसे अपनी निजसम्मति सहित स्वामीजीके आगमनकी अरज कराई। इसपर महारावजीने स्वामीजीके निवास और भोजनादिका प्रबन्ध करनेकी आज्ञा दी। और तदनुकूल राज्यके कर्मचारियोंने स्वामीजीके निवास आदिका प्रबंध कर दिया।

शंका समाधान.

दूसरे दिन "आर्य्यमतखडिनी" सभाका स्थापित होना रुक गया। और जिस स्थानपर स्वामीजीको ठहराया था वहां अनेक पंडित व अन्य जिज्ञासु जाने लगे। और अपने सन्देहोंकी निवृत्ति करने लगे। यह क्रम ५ दिनोंतक रहा। स्वामीजी अपने उत्तरोंमें प्रसंगानुसार शैव वैष्णवादिकोंके वेदविरुद्ध सिद्धान्तोंका निर्भयतासे खंडन करते थे। इसप्रकार लोगोंकी रुचि आर्य्यसमाजकी ओर होने लगी। पंडितों और राजपुरोहितोंसे यह नहीं देखा गया। अतः महारावजीके निकट मनमाने समाचार भेजने

लगे और वारम्वार कहलाया कि स्वामीजीके उपदेशोंसे प्रजा नास्तिक होती जारही है। धर्मकी उपेक्षा करनेको तत्पर है।

शास्त्रार्थका आयोजन.

इसपर महारावजीने आज्ञा दी कि स्वामीजीके पास कोईभी मनुष्य न जावे और न मिले परन्तु लोग आतेही रहे। इसपर पुनः महारावजीने कोतवालको आज्ञा दी कि। स्वामीजीके व्याख्यान न होने देवें।

जिस दिन स्वामीजी बून्दीमें आये थे उसके दूसरेही दिनसे राजवैद्य पंडित सूर्य-नारायणजी द्वारा महारावजीको राजपुरोहितोंको शास्त्रार्थके करनेकी आज्ञा देनेके लिये कहाते रहते थे। अन्तमें शास्त्रार्थके नियम आदि निश्चित हो गये। और 'यह शास्त्रार्थ बून्दीराज्य और स्वामी नित्यानन्दजी और विश्वेश्वरानन्दजीमें होगा' ऐसी घोषणा की गई। बून्दीराज्यकी ओरसे पंडित नवनन्दाचार्यजी, पंडित गङ्गासहायजी, पण्डित हरि-दासजी व्यास और पंडित ताताचार्यजी थे। बूंदी नरेशकी उपस्थितिमें शास्त्रार्थका आरम्भ पंडित गङ्गासहायजीने माघ शुक्ल ११ को निम्न पांच प्रश्नोंद्वारा किया।

(प्र० १) भवतां किं मतम् ?

(प्र० २) वेदशब्देन किं गृह्यते ?

(प्र० ३) ईश्वरेण ब्राह्मणभाग उक्तो वा संहिताभाग उक्तः ?

(प्र० ४) संहितामात्रग्रहणे मानं किम् ? यतो व्यवहारेण शास्त्रेण च उभयं गृह्यते तत्र प्रमाणं वक्तव्यम्।

(प्र० ५) एवं चेन्मंत्रभाग ईश्वरेणोक्त इत्यत्र किं मानम् ?

* शास्त्रार्थ फाल्गुन कृष्ण ५ तक होता रहा। परस्परमें ५ बार लेखोंका परिवर्तन हुआ। प्रत्येक बार पंडित अप्रासंगिक उत्तर देते रहे। परन्तु अन्तमें जब स्वामीजीके धैर्य्यके सन्मुख कुछ न चली और बारम्बार निग्रहस्थानमें आनेकी सम्भावना दिखाई दी तो विद्वानोंके अयोग्य एक पत्र लिखकर शास्त्रार्थसे अपना पिण्ड छुडाया।

इस शास्त्रार्थकी समाप्तिपर बूंदीराज्यने एक अपमानजनक विज्ञापन छपवाया जिसका सभ्यतानुमोदित उत्तर मंत्री राजस्थान आर्यप्रतिनिधि सभाने दे दिया।

बूंदीराज्यके विज्ञापनके अनौचित्य और बूंदीसे स्वामीजी महाराजके निष्कासनपर देशके समाचार पत्रोंने बूंदीराज्यकी कार्य्यप्रणालीपर तीव्र समालोचनाएं प्रकाशित कीं

अजमेरसे प्रकाशित होनेवाले राजस्थान समाचारकी आलोचनाकी प्रतिलिपि यहां

---

* यह शास्त्रार्थ अक्षरशः पृथक् छपचुका है और पुस्तकाध्यक्ष आर्य्यसमाज अजमेरमेंसे मिलता है। प्रत्येक जिज्ञासुके पढने योग्य है।

प्रकाशित की जाती हैं । यह पत्र सदा राजस्थानके नरेशोंका पक्ष लिया करता था परंन्तु इस अवसरपर इसनेभी बूंदीनरेशके कार्य्यसे असन्तोष प्रकट किया ।

राजस्थान समाचारकी टिप्पणी ।

चैतबदी ४ सं० १९४५:-

" आर्य्यसमाजके उपदेशक स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी तथा ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी घूमते २ बून्दी राज्यमें गये । बून्दीनरेशजीने वहांके पंडितोंसे शास्त्रार्थ कराया, कुछ शास्त्रार्थ करवाकर एक असभ्य शब्दोंसे युक्त पत्र उनके पास भेजा और १५ सिपाही तथा कोतवालको संग करवाके उनको राज्यसे बाहर करवा दिया । पीछेसे एक विज्ञापन प्रकट किया है उसमेंभी ऐसीही बातें लिखी हैं । आगेके लिये प्रकट किया है कि आर्य्यसमाजका कोई मनुष्य आवेगा तो काला मुंह करके गधेपर चढाकर जूतोंसे पिटवाकर निकाला जायगा ! ! ! एक देशी राजाकी ओरसे आर्य्यसमाज जैसी बलवान् और प्रतिष्ठित सभाके उपदेशकोंके विषयमें ऐसा प्रकट करना बडा शोक उत्पन्न करता है। यह बर्ताव नीतिविरुद्ध और बड़ा कठोर है । हमको इसका पूरा २ वृत्तान्त मिला है। उसपर आगामी अंकमें लिखेंगे । "

चैत्र सुदी ४ सं० १९४६:-

आर्य्यसमाज और बून्दी नरेश ।

" बून्दीके महाराज रामसिंहजीकी हम सदा प्रशंसा सुनते आये हैं कि वे बड़े नीतिज्ञ और संस्कृतके विद्वान् हैं, और अपने राज्यका प्रबन्धभी बहुत उत्तम करते हैं । यद्यपि बून्दी नरेशजीके विषयमें हमारा अभीतक विचार उत्तमही है, परन्तु एक कार्य्य उनसे अभी ऐसा बना है, जो एक वृद्ध नीतिज्ञ और विद्वान् राजासे कभी नहीं बनना चाहिये। अपने पहले अंकमें हम लिख चुके हैं कि आर्य्यसमाजके उपदेशक स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी बून्दीमें जा निकले, वहां महाराज रामसिंहजीने ठहराये, शास्त्रार्थ करवाया और शास्त्रार्थ पूर्ण होनेसे पहलेही उनके पास पत्र भेजा उसमें उनके लिये असभ्य शब्द लिखे, और यहभी लिख भेजा कि " तुम चले जाओ । यदि कोई आर्य्यसमाजका मनुष्य आवेगा तो उसे काला मुख करवाके गधेपर चढा और जूतोंसे पिटवाकर निकलवा देंगे "। दोनों साधुओंको एक कोतवाल १५ सिपाहियोंसहित बून्दी राज्यकी सीमातक साथ आकर सीमासे बाहर कर गया । पीछेसे एक विज्ञापन छपाकर राजाजीने बाहर भेजा है उसमेंभी ऐसीही बातें लिखी हैं ।

हमारी समझमें नहीं आया कि आर्य्यसमाज जैसी प्रतिष्ठित और बलवान सभाके साथ जिसने भारतवर्षभरको अपने प्रबल और दृढ उपदेशोंसे बहुत लाभ पहुंचाया है ऐसा बर्ताव करते समय राजपूतानेके सबसे वृद्ध महाराजा बून्दीकी नीति विद्वत्ता और बड़ी उमरका अनुभव कहां गया था ? हम सत्य कहते हैं कि महाराजा रामसिंहजीने

आजतककी निज प्रशंसामें बट्टा लगा दिया । आर्य्यसमाजके और राजके इतिहासमें यह बात लिखी जायगी और सदाके लिये विद्यमान रहेगी, कि एक राजाने अपने सांप्रदायिक पक्षपातके वश होकर दो साधुओंके साथ ऐसा वर्ताव किया।

जिस समयमें एक परदेशी और अन्य धर्मावलम्बी राजा हम सबको अपने २ धर्मके लिए सब प्रकारकी स्वतंत्रता दे उस समयमें एक स्वदेशी क्षत्रिय राजाका वर्ताव एक धर्मका फैलाव करनेवाली सभाके साथ ऐसा हो यह क्या बड़े भारी शोककी बात नहीं है ? इस विचित्र समयमें भारतकी प्रजा चाहती है कि हमारे देशी राजा ऐसे वर्ताव करें जिसमें किसीको कुछ बोलनेकाभी अवसर न मिले । परन्तु कहीं कहीं इसके विपरीत बर्ताव पाया जाता है यह बड़े शोककी बात है । जिस राज्यमें जैनी मुसलमान और दूसरे सब संप्रदायोंके मनुष्य जो महाराजके रामानुज संप्रदाय और समस्त हिन्दुओंके विरुद्ध हैं बहुत बसते हैं उस राज्यमें आर्य्यसमाजके उपदेशकोंके लिये यह प्रगट करना बड़ा अन्याय है । हमको दृढ समाचार मिला है कि पादरी लोग जब तब वहां जाते और ईसाईमतका उपदेश करते हैं परन्तु महाराजने उनके लिये कभी ऐसी आज्ञा नहीं दी । फिर आर्य्यसमाजपरही ऐसी चढ़ाई करनेका क्या कारण है ? हमारी समझमें यही कारण आता है कि महाराज अपने सम्प्रदायके दृढ भक्त हैं, इससे ऐसी भूल हुई । आशा है भविष्यत्में ऐसी भूल न करेंगे ।

हमारे पाठकोंको अच्छी प्रकार ज्ञातही है कि फरवरी मासमें वाल्टरकृत राजपूत हितकारिणी सभामें सब राजाओंके प्रतिनिधि आये थे, उनमें बून्दीराज्यकेभी थे, उन्होंने उक्त सभामें यह प्रस्ताव किया था । कि हमारे महाराजाने यह कहला भेजा है कि दयानन्दी आर्यसमाजवाले सब लोगोंका धर्म भ्रष्ट करते हैं । सो कमेटीमें इसका प्रबन्ध हो कि ये किसी राज्यमें न घुसने पावें । यह बात सुनके महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदासजीने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता; क्योंकि आपके महाराज रामानुज संप्रदायमें हैं, हमारे यहां एकलिङ्गजीकी पूजा होती है, जयपुरमें गोविन्ददेवजीकी पूजा है । इसी प्रकार औरोंकेभी एक न एक पूजा है; फिर प्रजाको सब राजा अपने २ मतमें लाना चाहें तो प्रजा किसके मतमें होगी ?। धर्मके मामलेमें कोई किसीको नहीं रोक सकता, आपके महाराज तो बुद्धिमान् हैं, उन्होंने ऐसा प्रस्ताव कैसे किया ? इसके पीछे जयपुरराज्यके प्रतिनिधि राववहादुर गोविन्दसिंहजीने कहा, यह मजहबी बात है, कोई किसीको रोक नहीं सकता, और न यह बात कमेटीमें पेश होनेके लायक है । जब यह बात बूंदीके प्रतिनिधिने सुनी तो चुप हो गये । इस प्रस्तावके उठने और चरचा होनेके समाचार किसीने मान्यवर करनल वाल्टर साहब एजेंट गवर्नर जनरलको दे दिया तो फिर सर्दार लोग उनसे मिले तो उन्होंने कहा इस कमेटीमें मजहबी बात बूंदीकी ओरसे छेडी गई थी सो अच्छा नहीं किया । यहां मजहबी बातका क्या काम ? इस अयुक्त बातके लिये मान्यवर वाल्टरसाहबभी अप्रसन्न हुए ।

पाठकवर उक्त वृत्तान्तके सिवाय एक औरभी सुनिये। हमें समाचार मिला है कि बूंदी नरेशजीने जो विज्ञापन आर्य्यसमाजके विरुद्ध छापा है वह उन्होंने पहले वहांके पोलिटिकल एजन्टको दिखलाया और पूछा कि 'हम ऐसा छपा दें?' साहबने कहा 'हम इस मजहबी मामलेमें कुछ नहीं कह सकते, जबतक आपके राजमें आर्यसमाजके लोग नहीं बसते हैं तवतक तो कोई बात नहीं है पर जब दश मनुष्यभी वस गये तो आप उनके धर्मके उपदेशोंको नहीं रोक सकते।'

हम नहीं समझते कि बूंदी नरेशोंको आर्यसमाजसे इतना द्वेष क्यों हुआ? यह बड़े शोककी बात है कि ऐसी २ बातोंको आप एजन्टोंसे पूछें और फिर अपना बल दिखलावें। धर्मकी रीतिसे देखें तव तो महाराजका यह कार्य हलकेपनका हैही, परन्तु राजनीतिकी दृष्टिसेभी बड़ा हानिकारक है। इसी कारणसे महाराजकी शुभचिंतकताके कारणसे हमको इतना लिखना पड़ा।

महाराजासे निवेदन करते हैं कि अब पीछे ऐसा काम कभी न कीजियेगा। आप अपना मत चाहे सो रक्खें परन्तु प्रजाकी धर्मसम्बन्धी बातोंमें कभी किसी प्रकारसे हस्तक्षेप न करें। यदि कीजियेगा तो फल बहुतही बुरा होगा।

आर्य्यसमाजोंको हमारी सम्मति है कि इसमें कोई संशय नहीं, बूंदी नरेशजीका बर्ताव आपके साथ बहुत कठोर हुआ, परन्तु आप लोगोंको किसी प्रकारसे हटना न चाहिये। यह अपमान तो बूंदी नरेशजीने कथन मात्र किया है। यदि ऐसा करभी दिखाते तो क्या भय था?

धर्मके फैलावके लिये आगे २ अपमान बड़े २ महात्माओंने सहे हैं। और अभी सहें तो क्या अनुचित है? ऐसे राजाभी तो हुए हैं जिन्होंने **महात्माओंके** प्राण लिये हैं। परोपकार तभी होगा जब लोग प्राणोंकोभी उसके सामने तुच्छ समझेंगे।"

इस शास्त्रार्थमें पुस्तकों आदिके भेजनेके लिये श्रीमान् राजाधिराज शाहपुराधीशजीने विशेष प्रवन्ध किया था। शास्त्रार्थके मध्यमें स्वामीजीको एक चौबे द्वारा यहभी लोभ दिया गया कि यदि दोनों महात्मा "आर्य्यधर्म झूंठा है" ऐसा लिख दें तो राज्यकी ओरसे बड़ी भारी जागीर भेट की जायगी। शास्त्रार्थके समाचार दूर २ तक फैलगये थे अतः इसमें योग देनेके लिये स्वर्गवासी धर्मवीर आर्य्यपथिक पंडित लेखरामजीभी आये। परन्तु जिस दिन वे शाहपुरेसे पुस्तकें आदि लेकर चले थे उसी दिन बून्दी राज्यके अनुचित बर्तावके कारण स्वामीजी बून्दी छोड़ चुके थे। अतः आर्य्यपथिकसे समागम न होसका।

शास्त्रार्थकी जांच और प्रकाशन.

बूंदीसे स्वामीजी जहाज़पुर होतेहुए शाहपुरा आगये और राजाधिराज शाहपुराधीशजीसे मिलकर बून्दीके शास्त्रार्थका वृत्तांत सुनाया। शास्त्रार्थ सुननेके पश्चात् राजाधिराज शाहपुराधीशजीकी श्रद्धा स्वामीजीमें औरभी बढ गई और आग्रहपूर्वक कई दिनोंतक राजधानीमें ठहराकर वैदिकधर्मका प्रचार कराया।

बून्दीके शास्त्रार्थको स्वामीजीसे स्वयं श्रवण करके राजाधिराजने उसे राजपंडितोंको अपनी सम्मति देनेके लिये दिया और उन्होंने उसे पढकर स्वामीजीके पक्षकी सत्यता प्रबलताबोधक सम्मति दी। तब शास्त्रार्थके समस्त कागज़ मंत्री आर्य्यसमाज अजमेरके पास शीघ्रही छपवाकर प्रकाशित करनेके लिये भेज दिये और साथही छपाईका व्ययभी भेज दिया। अजमेरसे आर्य्यसमाजके मंत्री महोदयने यह सब कागजात प्रबंधकर्त्ता वैदिक यंत्रालयके पास शीघ्र छापनेके लिये भेज दिये। उन दिनों वैदिक यंत्रालय प्रयागमें था। और पंडित भीमसेनजीभी वहीं थे। और जैसा कि हम पूर्व कह चुके हैं उन पंडितोंमेंसे थे, जिनको स्वामीजीका आर्य्यसमाजमें आना रुचिकर नहीं प्रतीत हुआ। इस अवसरपरभी उन्होंने स्वामीजीकी हेटी दिखलानेके विचारसे मंत्री आर्य्यसमाज अजमेरको शास्त्रार्थके कागज़ पीछे लौटादिये और लिखा कि 'यह शास्त्रार्थ आर्य्यसिद्धान्तोंके प्रतिकूल है, तुम श्रीमान् राजाधिराज शाहपुराजीको लिखकर आर्य्य पंडितोंद्वारा दुबारा बूंदीराज्यसे शास्त्रार्थ हो, ऐसा प्रवन्ध करो'। * पंडित भीमसेनके ऐसा लिखनेपर अजमेर आर्य्यसमाजके सभासदभी सन्देहसागरमें गोते खाने लगे। और शास्त्रार्थके पत्रोंकी कई नकलें करवाकर योग्य आर्य्य पुरुषोंके व स्थानिक पंडितोंके पास सम्मतिप्रकाशनार्थ भेजी। अजमेर गवर्नमेन्ट कालेजके संस्कृत प्रोफेसर पंडित शालिग्रामजी शास्त्रीने सनातनधर्मावलम्बी होनेपरभी बून्दीके पंडितोंका पक्ष असत्य और निर्बल बतलाया। प्रातःस्मरणीय **महात्मा पण्डित गुरुदत्तजी विद्यार्थी M. A. (लाहौरकी) सम्मतिमें महर्षिकी मृत्युके पश्चात् ऐसा महत्त्वपूर्ण कोई शास्त्रार्थ आर्य्यसमाजने नहीं किया था।** और अजमेरसमाजके सभासदोंसे ताकीद की थी कि शास्त्रार्थ विना किसी प्रकारकी ढीलढाल और सन्देहके फौरन मुद्रित करा दिया जावे। श्रीमान् लाला साईदासजी प्रधान आर्य्य-समाज लाहोरने लिखा कि शास्त्रार्थ छपानेसे समाजोंका फायदा है। शास्त्रार्थका छपाना बहुत जरूरी है, स्वामियोंने इसमें बड़ी काबलियतके साथ कार्रवाई की है। पंडित यज्ञदत्तजीनेभी शास्त्रार्थमें कोई त्रुटि न पाई। तब यह शास्त्रार्थ फिर प्रयाग छपनेके लिये भेजा। श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजका कथन है, कि पंडित भीमसेनजीने फिरभी उसे अस्तव्यस्त करके छापा, और इस प्रकार यथावसर अपनी ईर्षा प्रकट करनेसे विश्राम नहीं लिया। श्रीमान् लाला साईदासजीके पत्रसे एक बात औरभी प्रकट होती है, कि अजमेरसमाजके सभासद या तो स्वामीजीकी योग्यतासे दग्ध पंडितोंके प्रभावमें आगये थे वा कोई और प्रकारका दवाव पड़ा जिससे कि वे शास्त्रार्थको आर्य-समाज अजमेर अथवा किसी और आर्य्य पुरुषके नामसे प्रकाशित करनेमें संकोच करतेथे

* यह पत्र आर्य्यसमाज अजमेरके पत्रसंग्रहमें उपस्थित है।

और लालाजीसे आर्य्यपथिक पण्डित लेखरामजीके नामसे उसे (शास्त्रार्थको) प्रकाशित करनेके विषयमें सम्मति मांगी । लालाजीने इस प्रस्तावका विरोध किया और इस बातपर बल दिया कि शास्त्रार्थ राजस्थान-समाजोंमें किसी प्रभावशाली पुरुषद्वारा प्रकाशित होना चाहिये । इस लिये आर्य्यसमाज शाहपुराकी ओरसे प्रकाशित हुआ ।

शाहपुरामें स्वामी विशुद्धानन्दजीकी मिथ्या धमकी.

शाहपुरामें स्वामीजीको वृन्दावन पधारनेके लिये कई पत्र मिले। इस वर्ष (१९४६ में) भारत-धर्ममहामंडलका प्रथम संगठन वृन्दावनमें होनेवाला था। सनातनधर्मके प्रतिष्ठाप्राप्त कई विद्वानोंके आनेके समाचार थे । आर्य्यसमाज मथुरानेभी वैदिकधर्मका प्रचार बडी धूमधाम और सफलताके साथ करनेके लिये उद्योग प्रारम्भ किया और इसी निमित्त स्वामीजीको शीघ्र पधारनेके लिये बारम्बार लिख रहे थे । अतः राजाधिराजको वृन्दावनकी आवश्यकताओंको लक्ष्यमें रखकर वहां पधारनेके लिये स्वामीजीकी विदाई स्वीकार करना पडी और आप अपने राजकार्य्यके निरीक्षणार्थ दौरेमें चले गये । यह समाचार जब प्रज्ञाचक्षु स्वामी विशुद्धानन्दजीको मिले तो उन्होंने निरर्थक वाद करनेके लिये स्वामीजीसे कहला भेजा कि मुझसे शास्त्रार्थ किये विना आप यहांसे न जावें, आपको गौकी सौगन्द है । स्वामीजी महाराजने अपना प्रस्थान रोक दिया और यह समाचार राजाधिराजके पास दौरेमें भेज दिया । राजाधिराज तत्कालही पीछे लौट आये और ५ बजे स्वामीजीसे मिलकर सायंकालके ७ बजे स्वामी विशुद्धानन्दजीके पास गये और उनसे शास्त्रार्थका विषय पूछा और कहा कि **लेखबद्ध शास्त्रार्थ** शीघ्रही प्रारम्भ होना चाहिये । प्रज्ञाचक्षुजीने शास्त्रार्थके लेखबद्ध होनेसे सर्वथा असम्मति प्रकट की । इसपर राजाधिराजने उनपर अपनी अप्रसन्नता प्रकट की और कहा कि यदि ऐसीही मिथ्या धमकी देनी थी तो स्वामीजीको व्यर्थ क्यों रोका ? और पीछे आकर स्वामीजीसे निवेदन किया कि आप वृन्दावन पधारें ।

वृन्दावनमें प्रचार.

शाहपुरासे स्वामीजी वृन्दावन गये । स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजका कथन है कि उस समयके **आर्य्यपुरुषोंका प्रेम, और उत्साह वर्णन नहीं किया जा सकता** । आसपासके आर्य्यपुरुषोंको जब यह विदित हुआ कि आर्य्यसमाज मथुराकी ओरसे भारत-धर्म-महामंडलके अधिवेशनके अवसरपर वैदिक-धर्म-प्रचारके लिये विशेष उद्योग हो रहा है तो मथुरासमाजके अधिकारियोंसे बिना किसी प्रकारका निमंत्रण या सूचना पायेही समाजकी सहायताके लिये आ पहुंचे जिसमें महाशय दामोदरदासजी **जो अब रायबहादुर हैं और लाहोरमें** additional judge है मंत्री आर्य्यसमाज दिल्लीका नाम विशेष उल्लेखयोग्य है, इन सज्जनने प्रचारके निमित्त प्रबंध करनेमें अपने शारीरिक

कष्टका किंचित्मात्र ध्यान नहीं किया और रात्रिन्दिवा अपनी धुनमें कार्य्य करते रहते थे। उपदेशकोंमें स्वामीजीके अतिरिक्त पंडित आर्य्यमुनिजी, पंडित यज्ञदत्तजी और पंडित रुद्रदत्तजी आये थे। प्रचारका कार्य्य बडी धूमधामसे हुआ और जनताने स्वामीजीके व्याख्यानोंको विशेष सराहा। इसी अवसरपर स्वामीजी सर्व प्रथम पंडित मदनमोहनजी मालवीयसे मिले। और आपसे आर्य्यधर्मके प्रचारमें परस्पर सहायता किस प्रकार हो सक्ती है इसपर विचार होता रहा।

माननीय पंडित मदनमोहन मालवीयजीसे परिचय.

बृन्दावनसे स्वामीजी जयपुर आये और मुक्ति, वैदिकधर्म, और जीव ब्रह्म भिन्न २ हैं इन विषयोंपर तीन व्याख्यान दिये। यहांसे स्वामीजी अजमेर आये और मसूदाराव श्रीबहादुरसिंहजी वर्माके निमंत्रण पर मसूदा गये। यहां रावसाहबने कई दिनोंतक स्वामीजीके व्याख्यान गढमें करवाये और अन्तमें ज्येष्ठ बदी १ सं० १९४६ वि०के राजस्थान समाचारमें निम्न समाचार प्रकाशित हुए.

मसूदामें आर्य्यसमाज स्थापित होना.

"स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी आजकल मसूदा जिला अजमेरमें ठहरे हैं। **वहांपर आर्य्यसमाज स्थापित हो गया।** प्रधान श्रीयुत रावसाहब बहादुरसिंहजी वर्मा और मंत्री कोठारी सुजाणमलजी हैं। मसूदेसे स्वामीजी नीमच गये।

उज्जैनमें शास्त्रार्थकी चर्चा और दंगा.

और नीमचसे उज्जैन आये। यहांके समाचार २७ जून १८८९ के राजस्थान समाचारमें मंत्री आर्यसमाज उज्जैनने इस प्रकार प्रकाशित कराये।

"विदित हो कि श्री १०८ श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती व ब्रह्मचारीजी श्री १०८ श्रीनित्यानन्दजीने ता. ७ जून १८८९ को उज्जैननगरमें सुशोभित होकर सपराके चतरी घाटपर वैदिकधर्मपर व्याख्यान दिया। व्याख्यानान्तर सबने स्वामीजीकी जयध्वनि की। पुनः ता. ८ को हलवाईकी धर्मशालामें ईश्वरोपासना विषयपर व्याख्यान दिया। पंडित जानकीबल्लभजीको प्रधान आर्य्यसमाज उज्जैन व्याख्यानमें बुलानेको गये। तब पंडितजीने उत्तर दिया कि दक्षिणा क्या दोगे? प्रधान बोले कि, महाराज! यह तो व्याख्यान है, किसीके घरका काम नहीं। शास्त्रीजी बोले विना दक्षिणा तो हम नहीं जावेंगे। प्रधान लाचार होकर सभालयको आये। सभामें विश्वनाथशास्त्री आदिकने शंका की, यथावत् उत्तर पानेसे प्रसन्न हुए, परन्तु अतीव कोलाहल किया। उज्जैनमें फी सैकड़ा ४ वर्णके आदमियोंमें एक भंगड़ न होगा, शेष निन्नाणवें भंगड़ हैं। किसी समयमें यह अवन्तिका नगरी थी, परन्तु इस समयमें तो यह अविद्या नगरी है। पुनः विश्वनाथ शास्त्रीजीने प्रश्न किया कि मूर्तिपूजा ज्ञानका साधन है। ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीने उत्तर दिया कि मूर्तिपूजा ज्ञानका साधन नहीं है। देखिये २ लड़के ८ बरसके हों, उनमेंसे

एकको विद्या पढाइये, दूसरेसे मूर्तिपूजा कराइये । ३० वर्षकी अवस्था होनेपर, दोनों बालकोंकी परीक्षा कीजिये, ज्ञान किसको होता है । शास्त्रीजीने सत्य कह दिया कि विद्या पढनेवालेको ज्ञान होगा, मूर्तिपूजकको नहीं । इस बातको सुनकर भंगड़ लोग कोलाहल करतेहुए विसर्ज्जन हुए । सभाभी विसर्ज्जन हुई । पुनः ता. १० जून १८८९ को एक विज्ञापन रजिस्टरी कराकर पंडित जानकीवल्लभजीको दिया । शेष नगरमें लगवाये गये । उस विज्ञापनका आशय यह है, कि श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी पाषाणादि मूर्तिपूजनको वेदविरुद्ध होनेसे निषेध करते हैं, जिस किसीको इस विषयमें सन्देह हो, वह जिज्ञासु बनकर स्वसंदेह निवृत्त करले । यदि कोई पांडित्यके घमंडसे जिज्ञासु न बनना चाहे, तो निम्नलिखित नियमानुसार हमसे शास्त्रार्थ करलेवें । नियम ये हैं:—(१) पाषाणादि मूर्तिपूजा चारों मूलसंहिताओंमें इस प्रकारसे बतलानी होगी कि मूर्ति पाषाणकी बनानी चाहिये किंवा काष्ठादिकी ? तथा मूर्ति पशु पक्षी मनुष्यादिमेंसे किस आकरकी बनानी चाहिये ? तथा मूर्तिके हस्त पादादि अवयव कितने बनाने चाहिये ? तथा मूर्ति कितनी लम्बी चौड़ी बनानी चाहिये ? ये सब वेदोंमें बतलायेगा । (२) सभा राजकीय प्रतिष्ठित पुरुषोंकी मारफत होनी चाहिये । (३) सभामें जो हारेगा उसे जीतनेवालेके मतको अंगीकार करना होगा । (४) शास्त्रार्थकी सूचनाकी अवधि कल सायंकालतक दनी चाहिये। यदि उक्त समयतक सूचना न देकर पुनः कोई कोलाहल करेगा वह मिथ्या वादी समझा जायगा । इत्यादि दश नियम उक्त विज्ञापनमें हैं। इसका उत्तर किसीने कुछ भी न दिया । ता. १५ जूनको कुछ लोगोंने मिलकर एक पत्र स्वामीजीके पास भेजा, उसका आशय यह कि महाकालके मंदिरमें अथवा हरसिद्धीके मंदिरमें सभा होगी, आप आइयेगा, सभाका प्रबन्ध हम नहीं कर सकते, आप अपना करलो । इसका उत्तर स्वामी-जीने दिया कि शास्त्रार्थ तीन प्रकारसे हो सकता है, या तो आप सभाका प्रबन्ध कीजिये; हमारे लेखानुसार हम सभामें आवेंगे । या हम सभाका प्रबन्ध करें, आप सभामें आवें या वादी प्रतिवादी स्वस्वस्थानसे लेखद्वारा शास्त्रार्थ करें । इन तीनोंमेंसे उन्होंने एकभी अंगीकार न किया । और जूनकी १५ तारीखके ४ बजे दस हजार साधारण लोगोंको लेकर लकड़ी, डंडा, तलवार बांधकर स्वामीजीपर चढ आये । जब स्वामीजीभी उनकी सभामें जानेको उद्यत हुए, तब कोतवाल साहब व थानेदार साहबने स्वामीजीको रोक दिया कि हम आपको न जाने देंगे । दो चार खून अभी हो जायंगे । उस समयमें लोग कहते थे कि महाकाल हमारी पालना ७ पीढीसे करते हैं। और तुम स्वामी होकर हमारी पूजाका खंडन करते हो ? । कोई २ गालिप्रदानभी करते थे, हाहा हूहू शब्द कर रहे थे, कोई एक लोटाभी उड़ा लेगया, थानेदार साहबने उसी वक्त दस हज़ार आदमियोंको निकाल दिया। स्वामीजीको थानेदार साहबने सरकारी आज्ञाद्वारा सभामें जानेसे रोका । तब विपक्षियोंके दूतने आकर कहा कि महाराज ! सभामें पधारनेके बारेमें क्या राय है ? स्वामीजीने लिख

भेजा कि राजकीय बंदोबस्तसे पूर्वोक्त नियमानुसार सभा करो, अथवा जिन मंत्रोंमें पाषाणादि मूर्ति बनानी लिखी है वे मंत्र हमारे पास लिखभेजो, हम उत्तर देंगे। तब शास्त्री-जीने जबाब लिख भेजा कि जैसा कर्ण और अर्जुनका युद्ध हुआ था वैसा होना चाहिये। इस लेखको देखतेही थानेदारजीने लोगोंको भगा दिया। स्वामीजी यहांके प्रतिष्ठित लोगोंसे शास्त्रार्थके लिये कहते हैं परन्तु विपक्षी शास्त्रार्थ करना नहीं चाहते हैं। किन्तु शस्त्रार्थ करना चाहते हैं। इस लिए यहांके सर सूवाने हुकुम देदिया है कि दोनों पक्षवाले एक सभामें एकत्रित न होने पावें। और लेखबद्ध शास्त्रार्थ करनेसे ये लोग इन्कार करते हैं। यद्यपि नगरके लोग इनको लेखद्वारा शास्त्रार्थ करनेके लिये कहते हैं परन्तु पोल खुलजावे इस सबबसे नटते हैं, इत्यादि।

इन्दोरमें प्रचार और महाराजासे भेट.

ऊज्जैनसे स्वामीजी इन्दोर गये, और आर्य्यसमाजमें ठहरे। श्रीमान् डाक्टर गोविन्दराव सदाशिव चास्करजी (ये स्वर्गवासी महाराज शिवाजीराव हुल्करके बडे कृपापात्र थे) ने स्वामीजीके भोजन आदिका सब प्रबन्ध किया था। स्वामीजीके प्रथम दो व्याख्यान मल्हारगंज डिस्पेन्सरीमें (१) आर्य्यावर्त क्या था और क्या होगया, (२) धर्मविषयक, विषयोंपर हुए, और पिछले दो (१) अपौरुषेय वेद, (२) पुनर्जन्म, इन्दोरकी स्कूलके खुले मैदानमें हुए। प्रतिदिन हजारों मनुष्य एकत्रित होते थे। परन्तु सिवाय सुजनताके अनार्योंकेसे व्यवहारोंका लेशमात्रभी प्रतीत न होता था। डाक्टरसाहबने स्वामीजीके इन्दोर आगमनके समाचार स्वर्गवासी श्रीमान् महाराजा शिवाजीराव हुल्करके समक्ष निवेदन किया। और स्वामीजीकी विद्वत्ता ज्ञान और स्वभावकी प्रशंसा की। महाराजाने स्वामीजीसे भेट करनेका निश्चय किया। और डाक्टरसाहबको आज्ञा की कि पथावसर स्वामीजीसे हवा महलमें पधारनेके लिये निवेदन करें। स्वामीजी महाराजा साहेबसे मिले। महाराजासाहबने कई विषयोंपर विद्वत्तापूर्ण तात्विक प्रश्न किये और स्वामीजीप्रदत्त उत्तरोंसे प्रसन्न होकर कहा कि वर्तमान साधुसमुदायकी चरित्रभ्रष्टता तो प्रसिद्ध है, और वे लोगोंके बिगाड़नेमें प्रवीणभी होते हैं। **हमने यह पहलेही साधु देखे जो लोगोंको सुधारते हैं।** तदनन्तर महाराजाने यह इच्छा प्रकट की कि स्वामीजी इन्दोरराज्यमेंही रहें और उपदेश किया करें। राज्यमें प्रत्येक स्थानपर आपके भोजन निवास आदिका प्रबन्ध करनेकी आज्ञा प्रकाशित कर दी जायगी। इसके अतिरिक्त आप दोनोंको १०००) एक सहस्र रुपये मासिक व्ययके लिये मिला करेंगे। परन्तु आपको इन्दोरराज्यमेंही रहना पड़ेगा। राज्यके बाहर नहीं जासकेंगे। उत्तरमें स्वामीजीने निवेदन किया कि हम इन्दोरराज्यमें उपदेश करनेको तो तैयार हैं परन्तु स्वतन्त्रतामें बाधा पड़नेके कारण यह प्रतिज्ञा करनेको तैयार नहीं कि राज्यसे बाहर नहीं जावेंगे। अन्तमें महाराजने कुछ समयके लिये राज्यमें उपदेश करनेकी प्रार्थना की और सर्वथा

निषेध करनेपरभी मासिक सहायताका प्रबन्ध कर दिया। स्वामीजी इन्दोरसे हुल्कर-राज्यमें, भ्रमण करतेहुए खंडवा, होशंगाबाद, सिहोर, हरदा आदि स्थानोंमें गये। और फिर महाराजा नरसिंहगढके निमंत्रणपर नरसिंहगढ पंहुचे। यहांपर महाराजाने स्वामीजीको अत्यन्त आग्रहपूर्वक ४।५ महीने ठहराया और फिर अपने विवाहोत्सवमें जोधपुर चलनेका निवेदन किया। तदनुसार राजा साहबके साथही भोपाल और आगरा होतेहुए जोधपुर पंहुचे। मार्गमें १२-११-१८८९ को एक दिन अजमेरमेंभी ठहरे। उस समय स्टेशनपर आर्य्यसमाजके सभापति बाबू हरविलासजी तथा और बहुतसे आर्य्यबन्धु महाराजकी अगुआनीके लिये गये और रेलसे उतरनेके समय सभाकी ओरसे पुष्पमाला श्रीमानोंको पहनाई गई तथा सभापति बाबू हरविलासजीने २१) मुद्रा श्रीमानोंको नज़र की। महाराजने अपने करकमलसे उनको सभापति महाशयके हाथसेही छूकर पवित्र किया। तदनन्तर अत्यन्त प्रेम और स्नेह सहित आर्य्य लोगोंसे ऐसे मिले जैसे कोई अपने बराबरवालोंसे मिलता है। और पीछे आते समय एक दिन ठहरकर आर्य्यसमाज देखनेकी इच्छा प्रकट की, जोधपुरमें स्वामीजी महाराजा यशवन्तसिंहजी और कर्नल सर प्रतापसिंहजीसे मिले। स्वामीजीके दो व्याख्यानभी इस अवसरपर हुए जिसमें दोनों महोदय पधारे थे। जोधपुरमें आर्य्यसमाजका कार्य्य उस समय पंडित ठाकुरप्रसादजी व्याकरणाचार्य्यके हाथमें था। और ये उसे पूरे उत्साहसे सम्पन्न करते थे।

महाराजा नरसिंहगढका अजमेर आर्य्य समाजका संरक्षक सभापति बनाना.

जोधपुरसे महाराजा साहब अजमेर आये और पूर्वनिश्चयानुसार एक दिन ठहरे, आर्य्यसमाजकी ओरसे आपका स्वागत बड़ी धूमधामसे हुआ, महाराजाकी सवारी दौलतबागके पाससे दिल्लीदरवाजेसे नगरमें पधारी। यहांसे दरगाह बाज़ार, घसीटी कैसरगंज होती हुई मेओकालेजमें गई। वहां आप राजकुमार शाहपुरा मिले और पीछे लोटते समय समाजमन्दिरमें पधारे, उन दिनों आर्य्यसमाजका मन्दिर बन रहा था, परन्तु मुख्य भवन तैय्यार हो रहा था। वही उत्तम रंगवाकर भली प्रकार सज्जित किया गया और वहींपर महाराजाके स्वागतका प्रबन्ध किया गया। महाराजाके सिंहासनपर विराजनेके पश्चात मंत्रीसमाजने ईश्वरप्रार्थना की, तदनन्तर समाजके प्रधान बाबू हरविलासजी B. A. ने मानपत्रका पाठ किया और एक उत्तम रेशमी रुमालमें लपेटकर मान्यवरके अर्पण किया। महाराजासाहबने उत्तरमें कहा "आर्य्यसमाज संसारका उपकार करनेको खड़ा हुआ है, इससे बहुत उन्नति होती है, इससे मैं बहुत प्रसन्न हूं। मैं भी आर्य्य हूं। ईश्वरकी कृपासे आर्यसमाजकी उन्नति हो जिससे संसारभरका यह भला कर सके।" उस समय समाजके प्रधान महोदयने महाराजासे यह निवेदन किया कि वे समाजका संरक्षक सभापति होना स्वीकार करें। इसपर महाराजने स्वामीजिसे

सम्मति लेकर उन्हीं द्वारा यह कहलवा दिया कि आप इस पदको सहर्ष स्वीकृत करते हैं और समाजमन्दिरके निर्माणकार्य्यमें १०००) रुपयोंकी सहायता दी । इसके पश्चात् स्वामीजीने संक्षिप्तमें महाराजा साहबके गुणोंका परिचय जनताको दिया और अन्तमें पुष्पवृष्टि हुई और सभा विसर्जन की गई । स्वामीजीका विचार अजमेरही ठहरनेका था । परन्तु महाराजा साहब अपने साथही अत्यन्त आग्रह करके नरसिंहगढ ले गये । नरसिंहगढमें यद्यपि पंडित यमुनादासजीसे

नरसिंहगढ़ आर्य्य-समाजको दृढ करना.

शास्त्रार्थ करनेके पश्चात् कितनेही महानुभावोंने आर्य्य-समाजसे अपना प्रेम प्रकट करना आरम्भ कर दिया था । और कितनोंहीने वैदिक धर्मानुकूल द्विजाति बननेके निमित्त बड़े समारोहसे यज्ञोपवीत धारण कर अपना आचरण पवित्र करनेका उद्योग किया था । तथापि कुछ अल्पबुद्धि फिरभी समाजका विरोधही करते थे और छिपे छिपे यही कहा करते थे कि राजाश्रय पाकरही आर्य्यसमाज यहां स्थापित हुआ है । अन्यथा जन-साधारणकी यहां इससे कोई सहानुभूति नहीं । इसबारके प्रवासमें स्वामीजीने ऐसे लोगोंकेभी मुंह बन्द करनेके लिये प्रत्येक व्यक्तिको अपनी शंका (चाहे वह कैसीही ऊट पटांग हो) समाधान करनेके लिये घोषणा करवाई और जो कोई आया संतोषित होकर गया । शंकाएँ किस प्रकारकी होती थीं उसका एकही उदाहरण अलम् होगा ।

स्वामीजीका नरसिंहगढमें आगमन सुनकर राज्यके अनुमान ५० और जागीरदारोंने अपने यज्ञोपवीतसंस्कार करानेकी इच्छा प्रकट की और स्वामीजीकी स्वीकृति मिलनेपर एक बृहत्यज्ञद्वारा यह संस्कार सम्पन्न हुआ । इसी अवसरपर मदनलाल ब्राह्मणने मूर्तिपूजाके पक्षमें कुछ वेदमंत्रोंका उच्चारण करके कहा कि स्वामीजी इनका खंडन करें । स्वामीजीने उसके कहेहुए मंत्रोंका वास्तविक अर्थ जनताको समझा दिया और मदन-लालको अपना तात्पर्य्य स्पष्ट करके कहनेका आग्रह किया, परन्तु वह यही कहता रहा कि "ईश्वर साकार है"। इसपर स्वामीजीने कहा कि संसारमें साकार पदार्थ छः हैं, वे सबके दृष्टिगोचर होते हैं । यथा (१) पृथ्वी (२) जल (३) अग्नि (४) सूर्य्य (५) चन्द्रमा और (६) इन पांच पदार्थोंसे जो पदार्थ उत्पन्न हुआ है वहभी दृष्टिगोचर होता है । यथा घट पटादि । अब इन छै साकार पदार्थोंमेंसे आप किसको ईश्वर मानते हैं ? इसपर मदनलालजीने उत्तर दिया कि जलको । स्वामीजीने कहा आपका ईश्वर अपवित्र होता है या नहीं ? उसने कहा नहीं । तब स्वामीजीने कहा शौचक्रिया करनेसे शेष जल रहे उसको आप पानकर सकते हैं ? तब पं० मदनलालजी बोले नहीं । इसपर ब्रह्मचारीजीने कहा तो तुह्मारा ईश्वर अपवित्र होगया । इसपर महाराजा सहित सब सभा हसने लगी । और महाराजानेभी कहा कि जरा सोचो तो ईश्वर तो अविनाशी है, और साकार पदार्थ नाशमान् है, फिर ईश्वर साकार कैसे हो सकता है ? । इसपर सब पौराणिक पंडितभी

सहमत हुए और मदनलालजी कुछ न बोल सके। यहां इस घटनाका विस्तारसे देनेका यही प्रयोजन है कि पाठकोंको विदित होजाय कि स्वामीजी किसप्रकार प्रेम और सत्यके बलपर आर्य्यसमाजके गौरवकी वृद्धि करते थे और छोटे और बड़े सबकी सुन करके उनकी शंका समाधान करते थे ?। इसके अतिरिक्त स्वामीजीने कई व्याख्यान आर्य्यसमाज, आर्य्यसमाजके नियम, आर्य्यसमाजके कार्य्य, आर्य्यसमाजके मन्तव्य आदि विषयोंपर दिये जिससे आबालवृद्ध सबको आर्य्यसमाजका परिचय भलीभांति हो गया। और अन्यमतावलम्बीभी आर्य्यसमाजके अधिवेशनोंमें बड़ी श्रद्धा और भक्तिसे आने लगे। स्वामीजीके इस प्रवासमें आर्य्यसमाजने जनसाधारणके हृदयमन्दिरमें स्थान पाया। और अपनी जड़ दृढ की। अधिकारियोंका निर्वाचन इस प्रकार हुआः—

प्रधान— श्रीमान् आर्य्यकुलकमलदिवाकर धीर वीर चिरप्रतापी श्री १०८ श्रीप्रतापसिंहजी साहब बहादुर वर्मा डी. सी. एल. श्रीनरसिंहगढाधीश।

उपप्रधान—श्रीमहाराज श्री १०५ श्रीगोवर्धनसिंहजी साहब।

मंत्री— श्रीयुत ठाकुर मोडसिंहजी साहब।

उपमंत्री— पंडित श्यामलाल हेडमास्टर नरसिंहगढ स्कूल आदि।

नरसिंहगढसे स्वामीजी भोपाल, खंडवा आदि स्थानोंमें प्रचार करतेहुए इन्दोर आये और थोड़े दिनोंतक इन्दोरराज्यमें प्रचार किया।

संजीवनी इतिहासकी खोज.

यहांसे श्रीयुत नीलकण्ठ जनार्दन कीर्तने दीवान देवास राज्यके आग्रहसे वहां गये और बड़े समारोहसे व्याख्यानोंका प्रबन्ध हुआ। इसी समयमें सत्यप्रकाशमें संजीवनी इतिहासकी चर्चा चल रही थी। स्वामीजीने इसका वर्णन दीवानसाहबसे किया तो उन्होंने स्वामीजीसेही उसके खोज निकालनेकी प्रार्थना की, अतः दीवानसाहबकेही व्ययसे स्वामीजी ग्रन्थकी खोजमें ग्वालियर गये। यहां कतिपय दाक्षिणात्य पंडितोंके प्रबन्धसे दो तीन व्याख्यानभी दिये। ग्वालियरसे भिंडभदावर गये और जिस कुटुम्बमें उक्त पुस्तकके होनेके समाचार थे उसकी सर्वत्र खोज की, और वहांका सम्पूर्ण ग्रन्थ संग्रह देख डाला परन्तु पुस्तक नहीं मिली। अन्तमें निराश होकर झांसी चले गये।

ता० ३१ जनवरी १८९० ई० को स्वामीजीका एक व्याख्यान "ब्रह्म और जीव" विषयपर लाला नारायणदासजी ओवरसियर प्रधान आर्य्यसमाजके मकानपर हुआ। दूसरे दिन स्वामीजीके व्याख्यानका प्रबंध नझायी बाजारमें एक विस्तृत शामियानेके नीचे हुआ। श्रोतागणोंमें आर्य, हिन्दू, मुसलमान, पारसी, वकील, नगरके रईस आदि सब श्रेणीके पुरुष थे। आरम्भमें आर्यसमाजके उपसभापति बाबू शङ्करसहायजीने स्वामीजीकी परिचय दिया। अनन्तर व्याख्यान आरम्भ हुआ। स्वामीजीने पहले कुछ वेदमंत्रोंका उच्चारण किया। फिर पुराण, कुरान, इंजील तौरेतका खंडन करके वेद शास्त्र और प्रमाणोंसहित सिद्ध कर दिया कि वेद सबसे पुराने हैं। फिर धर्मके दश लक्ष-

णोंकी विस्तृत व्याख्या की। बीच २ में एकता, गोरक्षा, और बुरे कामोंसे बचनेकी तदबीर वगैरहभी बताई गई। कुछ आर्य्यावर्तके ब्राह्मणोंकी दशाकाभी वर्णन किया गया। यह व्याख्यान पूरे तीन घंटोंतक हुआ। मंत्री आर्य्यसमाज झांसी लिखते हैं, कि 'यहां यद्यपि आर्य्यसमाज बहुत पहिलेसे स्थापित हो चुका था, परन्तु यह पहला दिन था जब कि सर्वसाधारण यह समझे कि आर्य्यसमाजका आधार वेद और शास्त्र हैं और यह वो धर्म है कि जिसके अनुयायी महाराज रामचन्द्र और श्रीकृष्ण थे। अस्तु। झांसीसे स्वामीजी आगरा चले आये और यहां लाला गिरधारीलालजी वकीलके यहां ठहरे और उनकेही अहातेमें व्याख्यानोंका प्रवन्ध हुआ। आगरेसे स्वामीजी जयपुर आये और यहांके पुस्तकालयमें पुस्तकावलोकन करते रहे। प्रसंगानुसार व्याख्यानोंका क्रमभी जारी रहा। श्रीयुत रामलालजी प्रधान आर्य्यसमाज जयपुर लिखते हैं कि "इसबार स्वामीजीमें व्याख्यान-शक्तिकी अभूतपूर्व मात्रा पाई गई। आपकी मूर्ति शान्त और प्रतिभाशालिनी थी। प्रथम तो इसीका प्रभाव अधिक पड़ता था; परन्तु सुगन्धमय स्वर्णकी जनश्रुतिको चरितार्थ करनेवाली वक्तृता तो जनताको किंकर्तव्यमूढ बनाये देती थी। आपने अपनी शब्दावलीमें मधुरता, वक्तव्य विषयमें अनेक विषयोंसे परिपूर्णता तथा विद्वानोंके हृदयपटलपर खचित करनेके निमित्त पाश्चिमात्य साइन्स व फिलासफीके गूढ तत्वोंको वेद तथा आर्षग्रन्थोंके साधारणवचनोंसे सरल व सुगमतया वर्णन करनेकी विचित्र शक्ति सम्पादन की थी। श्रीमान् राजमान्य ठाकुर नन्दकिशोरसिंहजी वर्मा Revenue मेम्बर काउन्सिल जयपुर व अन्यान्य प्रतिष्ठित तथा सर्व साधारणपर आपके व्याख्यानोंने उत्तम प्रभाव डाला।"

जयपुरसे स्वामीजी अजमेर आये।

खेतड़ीनरेशसे भेट.

इन्हीं दिनों यहां श्री वाल्टर-कृत-राजपुत्र-हितकारिणी सभाका अधिवेशन था। इस कारण राजस्थानके अनेक राजा और सरदार पधारे थे। स्वामीजीने आतेही व्याख्यानोंका क्रम आरम्भ कर दिया। इन व्याख्यानोंको सुनकर लोग चकित होगये। एक व्याख्यानको सुनकर तो यहांतक कह डाला कि मोक्षवासी महर्षि दयानन्दजीके पीछे हमने ऐसा व्याख्यान नहीं सुना। आर्य्यसमाज अजमेरने अपने नगरमें अनेक राजाओंकी उपस्थितिसे लाभ उठाकर उनके प्रति वैदिकधर्मका संदेश पहुंचानेके निमित्त स्वामीजीके अतिरिक्त औरभी कई उपदेशकोंको बुलाया था। जोधपुरराज्यके उपदेशक पण्डित ठाकुरप्रसादजी शर्मा आचार्यभी आये थे। श्रीमान् खेतड़ीनरेश श्रीयुत राजाजी श्रीअजीतसिंहजी बहादुरने स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती, स्वामी श्रीनित्यानन्दजी सरस्वती, और पंडित ठाकुरप्रसादशर्मा आचार्यको आर्य्यसमाजके सभ्योंसहित अपने निवासस्थानपर बुलाया और "* सद्धर्मामृतवर्षिणी" सभामें ठहरेहुए साधु उपदेशक विशुद्धानन्द-

---

* इस सभाके बारेमें ८-८-१८८९ का राजस्थान-समाचार लिखता है कि "यहांके कई बाबू लोगोंने उक्त नामकी सभा स्थापित कर रक्खी है। इसका कोई परोपकारका काम तो देखनेमें नहीं आया परन्तु आर्य्यसमाजको भलाबुरा कहनेमें न्यूनता नहीं करती।

जीको उक्त सभाके मुख्य लोगोंसहित बुलाया था । राजाजीसाहबने स्वयं मध्यस्थ होकर दोनों ओरकी बातें सुनीं । अपने तारीख ६ मार्च १८९० के पत्रमें सम्पादक राजस्थान समाचार लिखते हैं कि " उससमय हमभी उपस्थित थे । जो कुछ वादविवाद दोनों ओरका हुआ था, हम उसके नोंट लेते जाते थे सो केवल इसी प्रयोजनसे कि सबपर प्रगट होनेके लिए हम छाप दें, परन्तु अन्तमें 'सद्धर्मामृतवर्षिणी' सभाके पंडितोंने खेतडी-नरेशोंसे निवेदन किया कि जो वार्तालाप यहां हुआ है सो छपने न पावे। उसपर राजाजी साहबने हमको आज्ञा दी कि इसको मत छापना । हमने निवेदनभी छापनेके लिये किया, परन्तु उक्त सभाके पण्डितोंकी प्रार्थनाके अनुकूल श्रीमानोंने हमको छापनेसे निषेधही किया। इससे हम लाचार हैं कि छाप नहीं सकते"। तारीख १ मार्च १८९० को श्रीमान् खेतडीनरेश श्रीमान् रावबहादुरसिंहजी मसूदाधीशके साथ आर्य्यसमाज-भवनमें पधारे ।

इसी अवसरपर महामहोपाध्याय कविराजा मुरारिदानजीभी पधारे थे । और स्वामीजीसे एक घंटेसेभी अधिक कालतक बातें करते रहे ।

इन्दोरमें प्रचार. अजमेरसे स्वामीजी निमच होतेहुए इन्दोर पहुंचे । यहांपर कुछ पौराणिकोंने एक **सद्धर्मप्रकाशिका** नामकी सभा स्थापित करके आर्य्यसमाजसे विरोध करना प्रारम्भ किया था । इधर आर्य्यसमाजके साप्ताहिक अधिवेशनोंमें इनकी बातोंका उत्तर दे दिया जाता था। स्वामीजीके पधारने और व्याख्यानमाला आरम्भ करनेपर सर्व साधारणकी रुचि "सद्धर्मप्रकाशिका" सभाके सभासदोंकी ओरसे हटने लगी । "समाज" विषयपर व्याख्यान देतेहुए स्वामीजीने अपने कथनकी पुष्टिमें कहा कि पूर्वकालमें **कर्म करके ब्राह्मण होते** थे, न कि अबके समान उनकी जात मानी जाती थी । इसपर उक्त सभाके वेदशास्त्रसम्पन्न पौराणिक पंडित गोपालजीने श्रोतागणोंके सामने प्रतिज्ञापूर्वक इस आशय का वेदका प्रमाण कह सुनाया कि ब्राह्मण और ब्राह्मणीसे उत्पन्न हुआही ब्राह्मण कहा जा सकता है । इसपर अनेक पौराणिकोंने उन्हें वेदका मंत्र उपस्थित करनेको कहा । इसपर पंडितजीने जोशमें आकर निम्नलिखित संस्कृत वेदमंत्र कहके श्रोतागणोंको सुनादी:- " ब्राह्मणात् ब्राह्मण्यां जातः स ब्राह्मणः " श्रुति यजुः । इसे सुनकर सब हस पड़े और पंडितजीसे इस वाक्यको लेखबद्ध करनेका निवेदन किया । पंडितजीने झटपट कागज कलम मंगाके इसे लिख दिया और अपने हस्ताक्षर कर दिये तब पंडितजीको यजुर्वेद दिया गया और उक्त वाक्य दिखलानेको कहा । बहुत देरतक पत्रे उलट पलट कर पंडितजी हारगये, तो कहा कि मेरी पुस्तकमें है, मैं अभी घरसे लाताहूं, सभासे कोई सभासद उठकर न जावे । स्वामीजी और अन्य श्रोता सभास्थानमें अति कालतक ठहरे रहे, परन्तु पंडितजी नहीं पधारे । घरपर आदमी बुलाने गये तो वहां नहीं मिले इसी घटनाके पश्चात् "सद्धर्मप्रकाशिका" सभाकाभी कोई अधिवेशन सुननेमें नहीं आया । इन्दोरमें स्वामीजीका स्वास्थ्य कुछ बिगड़ गया था । अतः उक्त घटनाके पीछे आप एकही व्याख्यान और दे सके ।
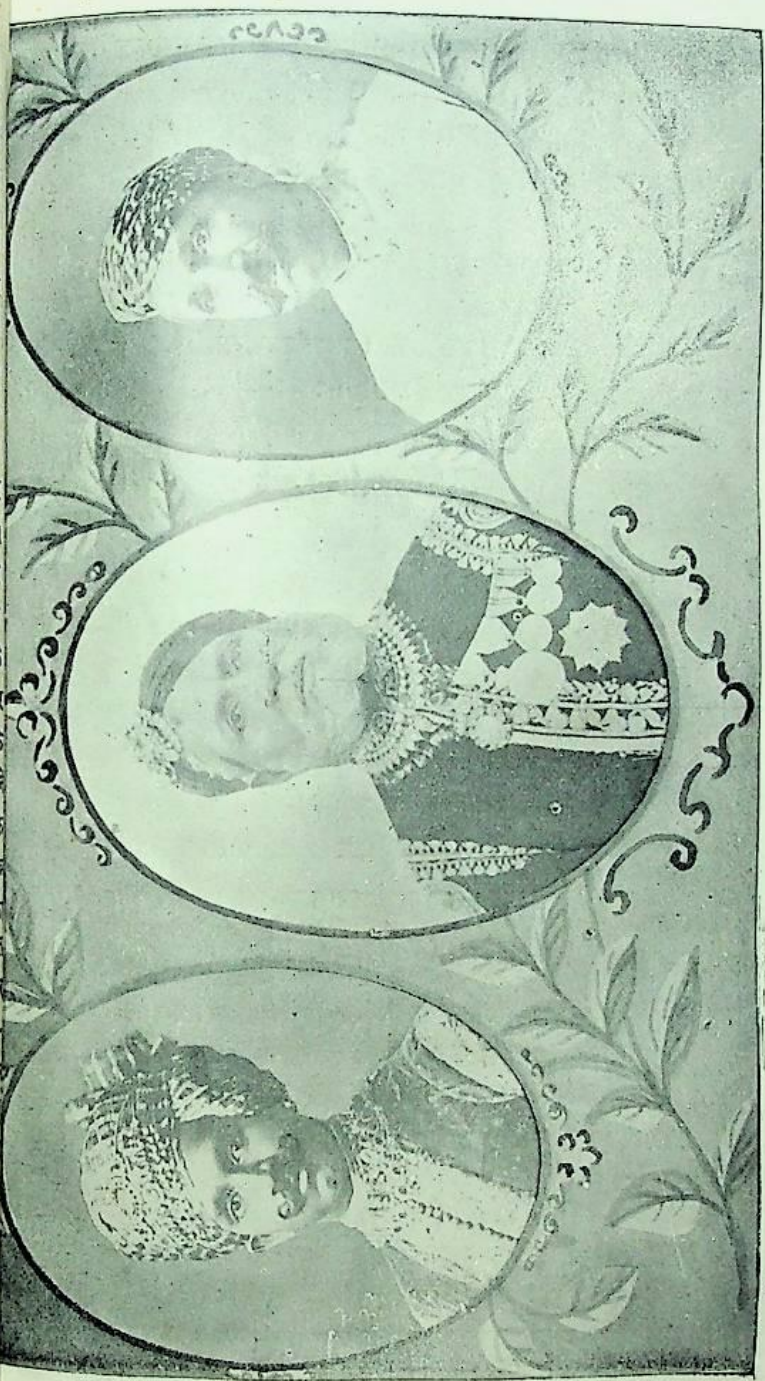
श्री कुमार सरदारसिंहजी.　　श्री राजाधिराज शाहापुराधीश नाहरसिंहजी के. सी. ऐस. आई.　　श्री कुमार उमेदसिंहजी.

इसके पश्चात् शाहपुराधीशके निमंत्रणपर शाहपुरा पधारे। इसी अवसरपर शाहपुराके राजकुमार श्रीमान् उमेदसिंहजी और सरदारसिंहजीका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। राजके वृत्ति भोगी पौराणिक पंडितोंने गणेशपूजा व नवग्रहपूजाके लिये उद्योग किया, परन्तु जब उनसे कहा गया कि ऐसा करनेकी आज्ञा वेदोंमें बतलाओ तो सब चुप हो रहे। कुल कर्म वेदोक्तरीतिसे सम्पन्न हुआ। इस अवसरपर महाराजाकी आज्ञानुसार उनके प्राइवेट सेक्रेटरीने निम्न लिखित दानकी सूचना समाचारपत्रोंमें प्रकाशित कराई—

शाहपुरा राजकुमारोंका यज्ञोपवीतसंस्कार और आर्य्यसमाजको ४०००) वार्षिक आयका काई नामका ग्राम दान॰

"संवत् १९४४ से श्रीजी हुजूरका इरादा था कि आर्य्यसमाजके वैदिकोपदेशक व वैदिकधर्मकी तालीम व अनाथालयके खर्चके वास्ते **गांव काई**की आमदनी खर्च की जावे और आजतक काईकी आमदनी परोपकारमें खर्च होती रही। लेकिन यह बात जाहिरमें न थी। अब आज ऐसे बडे मौकेपर सबको जाहिर किया जाता है कि गांव काईकी आमदनी परोपकारके वास्ते मुकर्रर की गई है, और गाम काईकी आमदनी करीब चार हजारके है सो इस कुल आमदनीसे अव्वल तो मकान बनाये जावेंगे जिसमें वैदिक धर्मकी पढाई श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामीजी १०८ श्रीदयानन्दसरस्वतीजी महाराजके सिद्धान्तके माफिक होगी और इसी जगह आठवें रोज आर्य्यसमाजभी होगा। और मकान बननेके बाद इस गांवकी आमदनीके चार हिस्से होकर इसतरह पर खर्च होंगे। एक हिस्सा वैदिकधर्मकी पढाईमें, व दूसरा वैदिक उपदेशकोंमें व तीसरा अनाथालयमें खर्च होगा। और चौथा हिस्सा बचतमें रक्खा जावेगा। यह हिस्सा इन तीनों कामोंमेंसे जिसमें जरूरत होगी खर्च किया जावेगा। और इसको पत्थरपर खुदाकर इस मकानमें लगा दिया जावेगा ताकि यह काम कभी बन्द न होगा।"

लाला सूर्य्यनारायण
प्रायवेट सेक्रेटरी
श्रीमहाराजाधिराज
शाहपुरा.

संस्कारकी समाप्तिपर राजाधिराजने स्वामीजीसे निवेदन किया कि "उपनयनसंस्कारका मुख्य प्रयोजन यही है कि बालक ब्रह्मचर्य्यव्रतको धारण करके सृष्टिक्रमानुसार समस्त वेदादि सद्विद्याओंके अध्ययनद्वारा, पृथ्वीसे लेकर परमेश्वरपर्य्यन्त सम्पूर्ण पदार्थोंको, यथायोग्य जानके निजकर्तव्य कर्मोंको करता हुआ धर्म, अर्थ काम और मोक्षरूप परम सुखको प्राप्त होकर अपने मनुष्यजन्मको सफल करे। परन्तु वर्तमान समयमें पठन पाठनकी शैली प्राचीन आर्य्य ऋषि मुनि व अर्वाचीन फिलासफरोंके तथा

सृष्टिक्रमके विरुद्ध होनेसे विद्यार्थियोंको निजपूर्वजोंके धर्म और अपने कर्तव्य कर्मोंका यथावत् बोध नहीं होता इसलिये वे स्वकर्तव्योंसे अपरिचित रहकर मनुष्यजन्मके पूर्वोक्त फलचतुष्टयसे सर्वथा बंचित रहते हैं अतएव मैं चाहता हूं कि आप एक एसा ग्रन्थ बनावें कि जिससे संसारका उपकार मेरे बालकोंका सुधार, यथार्थ पठन-पाठन-क्रमका निर्धार, सदसद्विषयका विचार, मनुष्योंमें सदाचारका संचार और पुरुषार्थका प्रचार हो।" राजाधिराजकी इस सूचनाके अनुसार स्वामीजीने बड़े परिश्रम और विचारके पश्चात् **पुरुषार्थप्रकाश** नामक ग्रन्थ रचा जिससे आर्य्य जगत्ने असीम लाभ उठाया और अबभी उठारहा है।

नीमचमें अन्त्य-जोंको उपदेश.

शाहपुरासे स्वामीजी अजमेर आये और थोडे दिन विश्राम करके मालवेमें प्रचारार्थ प्रस्थान किया। नीमचमें स्वामीजीने देशोन्नति और वैदिक धर्मपर दो व्याख्यान दिये। जब स्वामीजी नीमचसे जानेकी तय्यारी कर रहे थे तो श्रीयुत करोड़ीमलजी मालूने राजस्थान मालवा गोरक्षिणीसभाकी ओरसे प्रार्थना की कि आप थोड़े दिन और ठहरकर (१) भंगी, (२) कंजर, (३) और महाड़ जातियोंमें गोरक्षणपर व्याख्यान दें तो बड़ा उपकार हो। स्वामीजीने मालूजीकी प्रार्थना सहर्ष स्वीकार की और श्रीराजस्थान मालवा गोरक्षिणी सभाके प्रबन्धसे उक्त जातियोंकी पंचायतोंमें जा जाकर उन्हें अपने हिन्दुत्वपर अभिमान करनेकी इच्छा उत्पन्न करतेहुए गोमांसभक्षण परित्याग करनेके लिये बड़ेही मर्मस्पर्शी शब्दोंमें अपील की। स्वामीजीके अतिरिक्त इन पंचायतोंमें नीमचके अन्य १०।१५ भद्रपुरुषभी जाते थे। स्वामीजीके उपदेशसे प्रभावित होकर उक्त जातियोंने गोरक्षिणी सभाकी इच्छानुसार दस्तावेज लिखदी और सदैवके लिये गोमांस भक्षण करना छोड़ दिया। केवल नीमच छावनी और नगरमें इन जातियोंके कारण ८।१० गौ नित्य वध होती थी वे सदाके लिये रुकगई और इनके प्रभावसे इनके अन्यदेशस्थ भंगियोंनेभी गोमांस भक्षण परित्याग कर दिया। गोरक्षिणी सभाने वर्षके अन्तमें प्रकाशित किया, कि श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराजके उपदेशके प्रभावसे केवल नीमच नगर और छावनीमें २५५५ गउओंकी प्राणरक्षा हुई। स्वामीजीके **इस प्रकार अन्त्यजोंमें प्रचार करनेका** बहुत सज्जनोंने विरोधभी किया यहांतक कि कतिपय आर्य्यसमाजके सभासदभी विरोध करने लगे; परन्तु स्वामीजीने इस विरोधपर किंचित् ध्यान नहीं दिया और जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है भंगी, कंजर और महाडोंकी पंचायतमें जाजाकर कई व्याख्यान दिये और परिणाम यह हुआ कि प्रतिवर्ष २५५५ गउओंकी प्राणरक्षाका चिरप्रबंध केवल नीमचमेंही होगया। नीमचसे स्वामीजी इन्दोर गये और यहांसे देवास, देवासमें दीवान महोदयसे संजीवनी इतिहासकी खोज और उसके न मिलनेका

वृत्तान्त कहा। यहांसे इन्दोर होकर मऊ और* धार आदि स्थानोंमें प्रचार किया। **धारमें आर्य्यसमाज स्थापित होगया।** यहांपर स्वामीजीको येवले पधारनेका निमंत्रण पत्र मिला अतः वहां पधारे। और बहुतसे व्याख्यान दिये। येवलासे स्वामीजी नासीक पधारे। नासिकमें स्वामीजीका आतिथ्य सत्कार **प्रार्थनासमाजके** सभासद श्रीयुत केतकर वकील महोदयने किया। इन दिनों रावबहादुर लालशङ्कर उमियाशंकर नासिकके जज थे। आपने स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रवन्ध यशवन्तहाईस्कूलमें किया। यहांपर स्वामीजीके १५ व्याख्यान हुए। यह सब मरहठीके भिन्न २ पत्रोंमें मुद्रित हुए, विशेष कर नासिकवृत्तमें।

पंडिता रमाबाईसे सर्व प्रथम भेट.

यहां स्वामीजी रमाबाईसे सर्व प्रथम मिले। ये उन दीनों अमेरिकासे आईही थीं, और पादरियोंका रङ्ग गहरा चढा हुआ था; अतः धार्मिक सम्बन्धमें कईवार आग्रह करनेपरभी वार्तालाप करना न चाहा।

पूनाकी यात्रा.

स्वामीजी जब पहली वार येवले आये थे तब जस्टिस महात्मा माधव गोविन्द रानडेने इन्हें पूना पधारनेके लिये निमंत्रण दिया था। अतः येवलेसे स्वामीजी पुना गये, महात्मा रानडेने आपको अपने परममित्र श्रीयुत विष्णु मोरेश्वर भिड़े जज पूनाके स्थानपर ठहराया और इन्हीं सज्जनके उद्योगसे व्याख्यान आदिका प्रवन्ध किया। स्वामीजी २० अगस्त १८९० को पूना पहुंचे और २३, २५, २७, ३० और ३१ अगस्तको (१) ईश्वरी विद्या वेद है वा अन्य अर्थात् वेदही ईश्वरोक्त है (२) वैदिकधर्म (३) ईश्वरोपासना (४) देशोन्नति (५) आर्य्यसमाज क्या है? इन पांच विषयोंपर व्याख्यान दिये। यह और अन्य सब व्याख्यान इतने जनप्रिय हुए कि सम्पादक "ज्ञानचक्षु" को उनको दूसरे दिन पृथक् लघु पुस्तकके स्वरूपमें (Tract) मुद्रित कर सभास्थानमें बांट देना पडता था। इन व्याख्यानोंका परिणाम यह हुआ कि पूना ऐसे महान् पौराणिक **नगरमें ता. ३१ आगस्तको आर्य्यसमाज स्थापित होगया।** और निम्नलिखित अधिकारी चुने गये।

प्रधान—आनरेबिल राय बहादुर गोपालराव हरि देशमुख फर्स्टक्लास सरदार, पेन्शनर जाइन्ट जज्ज पूना।

उपप्रधान—रायबहादुर विष्णु मोरेश्वर भिडे पेन्शनर फर्स्टक्लास सब जज पूना।

मंत्री—रा. रा. वामनराव बाळकृष्ण शास्त्री रानडे, संपादक ज्ञानचक्षु पूना।

उपमंत्री—रा. रा. विष्णु नारायण आपटे हेडक्लार्क री पेपरमिल और व्यापारी पूना।

अन्यान्य सब सभासद १०० के अनुमान हुए। स्वामीजीके व्याख्यानोंकी रिपोर्ट केसरी,

---

* यहांपर पूर्व नाम त्र्यंबकराव पीछेसे स्वामी ॐकारसच्चिदानन्दजी अपने गृहमें रहते थे। और स्वामीजीका सत्संग होनेसे आर्यसमाजके पुस्तक पढने और आर्यसमाजकी सेवा करनेका भाव उत्पन्न हुआ और सम्प्रति वे तन-मन-धनसे सभाजकी सेवा कर रहे हैं।

ज्ञानचक्षु आदि मरहठी पत्रोंमें विस्तृतरूपसे प्रकाशित होती रहती थी । पूनामें आर्य्य-समाज स्थापित होनेके पश्चात् पौराणिक पंडितोंसे शास्त्रार्थ होनेका चर्चा चलता रहा, परन्तु साधारण शंका-समाधानके अतिरिक्त औरविशेष कार्य्य नहीं हुआ । महात्मा रानडे स्वामीजीके व्याख्यानोंमें आदिसे अन्ततक उपस्थित रहकर आगत सज्जनोंका स्वागत किया करते थे । औरभी सब प्रकारकी सुविधाका आपने प्रबन्ध किया ।

जब पूनामें समाज स्थापित हुआ तो स्वामीजीने आपसे सभासद बननेके लिए कहा, इसपर आपने उत्तर दिया कि " मैं प्रार्थनासमाजका सभासद हूं अतः आर्य्यसमाजके सभासद होनेकी इच्छा नहीं है, मेरे विचार ऋषि दयानन्दजीके मन्तव्योंके अनुकूल हैं और भारत उक्त महर्षिका सदैव ऋणी रहेगा " जब स्वामीजी पूनासे चलने लगे तो वहांकी पाठशाला और कालेजके विद्यार्थियोंने आपको निम्नलिखित अभिनन्दन पत्र एक बृहत्सभा करके भेट कियाः—

॥ ओ३म् ॥

सत्यमेव जयते, नानृतम् ।

स्वस्ति । श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य-समस्तार्यजनपूजितपादारविंदेभ्यः शान्त्यौदार्यादिसकलगुणमण्डनखण्डितदुर्वासनावृन्देभ्यः, आर्योन्नतिहेतुक्रियमाणानवरतश्रमक्लान्तेभ्यः, छन्दोमित्रमरीचिचयोपरोधभूततमोघनपाटनपटुमरुद्भ्यः, " **विश्वेश्वरानन्दनित्यानन्द** " प्रभृतिभ्यः जनस्थाननिवासिनामेषु दिवसेषु पुण्यपत्तनमध्ययनेनाधिवसतां विद्यार्थिनां विनयपुरःसराः शतशः प्रणामाः ।

भवद्भिर्दत्तव्याख्यानचतुष्टयानुबोधितानां तस्मिन्नेव जातशंकानिवृत्तौ अस्माकं निवासस्थानं स्वपूज्यपादरजोभिः पवित्रं कृतम् । तथा च स्वसंस्थापितार्यसमाजस्यानुयायिनः कृता वयं भवद्भिरनुगृहीताः स्मः ।

एवंविधास्मादृशानां बालिशोक्त्या कृतज्ञतामाविष्कुर्वतामप्रबुद्धानां जिज्ञासा पूरयितव्येत्येवाभ्यर्थना ।

पुण्यपत्तने
भाद्रपद (अधिक)
वदि २ संवत्सरे १८९२

माधव विठ्ठल खरे.
सदाशिव सखाराम जोशी.
वामन रामचन्द्र खांडेकर.
लक्ष्मण खंडेराव कुळकर्णी.

पूनेसे स्वामीजी मुम्बई आये और सेठ रामजी भगवान्, जेठाभाई प्रेमजी, लक्ष्मीदास खेमजी J. P. आदि प्रतिष्ठित पुरुषोंके प्रबन्धसे कुम्भारटुकड़ा दामोदर माधवजीके मकान नं. २१ में ठहरे । जब स्वामीजी बम्बई आगये, तो पीछेसे पूनेके एक ब्राह्मणने जगद्धितेच्छु

पत्रमें छपवाया कि हम शास्त्रार्थ करनेको उद्यत थे परन्तु स्वामीजी पूनेसे चले गये । जब उक्त पत्र स्वामीजीने पढा तो (१) नेटिव ओपिनियन, (२) इन्दुप्रकाश, (३) सुबोधपत्रिका, (४) ज्ञानचक्षु, (५) ज्ञानप्रकाश, (प्रथम तीन पत्र मुम्बईसे और पिछले २ पूनेसे प्रकाशित होते थे) समाचारपत्रमें अपनी ओरसे निम्न विज्ञापन प्रकाशित करा दिया ।

" सब महाशयोंको ज्ञात किया जाता है कि पूनेके जगद्धितेच्छु पत्रमें किसीने मिथ्या लेख लिखकर लोगोंको धोखा दिया है । सो हम सब पूना आदिके विद्वानोंको सूचना करते हैं कि वेदोंमें जो २ मूर्तिपूजाके मंत्र हों वे २ नीचे लिखें नियमोंके अनुसार रजिस्टरीपत्र कराके हमारे समीप भेजिये, उसका उत्तर हम देंगे । नियम १–मूर्तिपूजा वेदोंकी मूल संहितामें दिखाना चाहिये । और मंत्रके पदच्छेद करके मंत्रका अर्थ व्याकरण निरुक्तादि वेदांगोंसे करना होगा । २–मूर्ति काष्ठ पाषाणादिमेंसे किसकी वनानी चाहिये और मनुष्य पशु पक्षी मृगादिमें किसके आकारकी वनानी चाहिये, और मूर्तिके हस्तपादादि अवयव कितने वनाने चाहिये ? और मूर्ति कितनी लम्वी चौडी वनानी चाहिये ? यह सब वेदसे सिद्ध करना होगा । इसका उत्तर आनेपर हम सब नियम प्रकाशित करेंगे ।

ह०–विश्वेश्वरानन्द.
ब्र०–नित्यानन्द.

प्रतीत होता है कि अजमेरके जिन आर्य्यपण्डितोंको स्वामीजीका आर्य्यसमाजमें आना सह्य नहीं हुआ था वे स्वामीजीके बारेमें यथावसर मिथ्यासमाचार फैलाते रहते थे । जगद्धितेच्छुके प्रकाशित नोटके आधारपर किसीने एक लेख आर्य्यावर्त कलकतामें इस आशयका प्रकाशित कराया कि पूनामें पौराणिकोंने बडा जोर बांधा है । और स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी पूना छोडकर चले गये । आर्य्यपंडितोंको वहां शीघ्र पंहुचना चाहिये ।

इसका खंडन स्वामीजीने तत्काल कर दिया । वम्बईमें स्वामीजीके व्याख्यान फ्रामजी कावसजी इन्स्टिटयूट आदि अनेक स्थानोंमें प्रसिद्ध २ सज्जनोंके सभापतित्वमें होते थे । पौराणिक पंडितोंने शास्त्रार्थ करनेका स्वांग रचा । उन्होंने एक सभा ठाकुरद्वारमें की, जहां पंडित शंकरलाल और पं० घमंडीराम स्वामीने आर्यो और आर्य्यसमाजको गालिप्रदानरूप व्याख्यान दिये । इसका प्रभाव उनके हितकी दृष्टिसेभी उलटाही पड़ा । क्योंकि उन्हें इस प्रकार अंडवंड कहते सुनकर जो थोड़ेसे मनुष्य एकत्रित हुए, उठ उठ कर जाने लगे । इसी समय भारतवर्षमें Consnt bill (सहवास योग्य आयु निर्धारण सम्बन्धी कानूनकी) चर्चा हो रही थी । मुम्बईमें आ० **गोकलदास कहानदास पारख, पुनर्विवाहके प्रवर्तक रघुनाथदास**

माधवदास, मिस्टर एम्. बी. मलबारी आदि इसके निमित्त विशेष आन्दोलन कर रहे थे। ये सब सज्जन इसी निमित्त स्वामीजीसेभी मिलते रहते थे। और उनके विचार अपने कार्य्यके अनुकूल पाकर अपना पक्ष औरभी दृढ बना लिया। श्रीयुत पारख महोदयने इसी विषयपर विचार प्रकट करनेके लिये स्वामीजीकी भेट **श्रीमान् जस्टिस काशीनाथ त्र्यम्बक तैलंग महोदय जज हाईकोर्ट बम्बईसे कराई,** और इन्हींके सभापतित्वमें एक व्याख्यानभी बिलके समर्थनमें कराया। मिस्टर मलबारीने स्वामीजीके समर्थन पत्रसहित अपना गश्ती पत्र सब आर्य्य-समाजोंके पास भेजा। बम्बईसे स्वामीजी बड़ौदा आये और एक दो दिन ठहरकर अहमदाबाद चले गये। यहां **रायबहादुर श्रीयुत रणछोड़दास छोटेलाल** आदि सज्जनोंके प्रबन्धसे कई व्याख्यान दिये। भावनगर, लीमड़ी, रानपुर आदि स्थानोंसे स्वामीजीको कई निमंत्रण वहां पधारनेके लिये मिले। परन्तु इन्हीं दिनों अजमेरमें श्रीमती परोपकारिणी सभाका अधिवेशन था। अतः स्वामीजी अजमेर आये।

परोपकारिणीके सभासदोंमेंसे राय मूलराजजी एम. ए. महामहोपाध्याय कविराजाजी श्रीश्यामलदासजी, पण्डित श्यामजी कृष्णवर्मा बैरिस्टर और पण्ड्या विष्णुलालजी सभाके मंत्री आये थे। पंडित श्यामजी कृष्णवर्माके प्रस्तावपर लाला हंसराजजी B. A. लाला ईश्वरदासजी M. A. और बाबू हरविलासजी सारड़ा B. A. रिक्तस्थानोंकी पूर्त्यर्थ इसी वर्ष परोपकारिणी सभामें सम्मिलित हुए। परोपकारिणी सभाके यहां अधिवेशन २८ और २९ दिसम्बर १८९० ई० को हुए थे। इसके साथही आर्य्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान और आर्य्यसमाज अजमेरकेभी उत्सव थे। उत्सवसम्बन्धी व्याख्या-नोंमें स्वामीजी और लाला हंसराजजी आदिके व्याख्यान अति प्रभावशाली हुए। प्रति-निधि और परोपकारिणी सभाके कार्य्यकर्ताओंने स्वामीजीकी सम्मतिसे विशेष लाभ उठाया। अजमेरसे स्वामीजी गुजरात काठियावाडकी ओर गये जहां लीमडी, रानपुर, भावनगर, आदि कई स्थानोंमें बडी सफलताके साथ वैदिकधर्मका सन्देशा पंहुचाया। लीमडीमें महाराजा यशवंतसिंहजीके सभापतित्वमें "शूद्रोंको वेद पढाना चाहिये या नहीं" इस विषयपर विचार हुआ।

जब स्वामीजी भावनगरमें थे तब रा. रा. त्रिभुवनदास भूलाभाई तलाजाके वहिवट-दार साहबने अपने पुत्र चुनीलाल और भतीजे रतिलालका यज्ञोपवीतसंस्कार करानेकी प्रार्थना की। स्वामीजीने मुम्बईसे पंडित कृष्णारामजी इच्छारामजीको बुलवा दिया और यज्ञोपवीतसंस्कार २५$\frac{1}{1}$ को वैदिक रीत्यनुसार बडे समारोहसे सम्पन्न हुआ। इस संस्कारमें **महाराजा साहब भावनगरके भ्राता और राज्यकी सेनाके सेनापति ठाकुर हरिसिंहजी साहब तथा** हाईस्कूलके मास्टर पारसी गृहस्थ सेठ **जमशेटजी ऊनवाला M. A.** आदि प्रतिष्ठित और राजकीय सज्जनभी दर्शकरूपसे पधारे थे। उक्त महोदयोंने संस्कारकी सब क्रिया

बड़ेही ध्यानसे देखी और अपनी प्रसन्नता प्रकट की। संस्कारके समाप्त होनेपर स्वामीजीका एक व्याख्यान संस्कारोंके महत्त्वपर हुआ जिसको सुनकर श्रोता मंत्र-मुग्ध हो गये। एक श्रोताके पुत्रका विवाह २७ १/९ को निश्चित था उसने स्वामीजीसे निवेदन किया कि वह वैदिकविधिसे करानेका प्रवन्ध करदें। स्वामीजीकी प्रेरणासे पंडित कृष्णारामजीने उक्त विवाहभी बड़ी सफलतासे सम्पन्न कराया। गुजरातदेशमें स्वामीजीके व्याख्यान प्रायः हाईस्कूलोंमें हुआ करते थे। स्वामीजीसे मिलनेके लिये रियासतोंके दीवानआदि सदा आया करते थे जिसमेंसे **भावनगरके दीवान श्रीयुत गौरीशंकरजी ओझाका** स्वामीजीसे वहुत परिचय हो गया था। इस प्रकार दो महीनोंके अनुमान काठियावाड गुजरातमें प्रचार करके स्वामीजी पीछे अहम-दाबाद आगये। महर्षि दयानन्दजीकी मृत्युके पीछे वैशाख सं० १९४८ में हरिद्वारका कुम्भमेला पहली बार भरनेवाला था। उक्त मेलेमें आर्य्यसमाजकी ओरसे प्रचारके प्रबन्धका भार आर्य्यप्रतिनिधि सभा पंजावने लिया था। आर्य्यपथिक पंडित लेख-रामजी, लाला मुंशीरामजी, कुंवर जनमेजयजी, लाला गंगारामजी मुजफ्फरगढ आदि महानुभावोंने इसके लिये अत्यन्त परिश्रम किया था। उपदेशकोंमें स्वामीजीके अति-रिक्त पंडित पूर्णानन्दजी और आर्य्यमुनिजीके नाम उल्लेखयोग्य हैं। कुम्भके मेलेमें जिस संख्यामें अनेक सम्प्रदाय और अखाड़ोंके साधु संन्यासी आते हैं वह विश्वविदित है। स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रभाव इन लोगोंपर विचित्र पड़ता, ये लोग केवल स्वामीजीकाही व्याख्यान सुननेके लिये आर्य्य कैम्पमें निरन्तर डटे रहते थे। और किसी दूसरे वक्ताका भाषण सुननेकी इच्छा नहीं करते थे। यहाँतक कि एकबार जब एक अन्य वक्ता व्याख्यान देने खड़े हुए तो ये लोग उठकर जाने लगे और कहा कि हम ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीका व्याख्यान सुनने आये हैं। तुम्हारा नहीं। एक संन्यासी तो स्वामीजीके भाषणपर इतना मुग्ध हुवा कि उसने अपनी सारी सम्पत्ति स्वामीजीके सामने रखदी परन्तु स्वामीजीने समझा बुझाकर उसे पीछी लौटादी। थोड़े दिनों पीछे यही संन्यासी स्वामीजीको कश्मीरमेंभी मिला था और वहांभी अपनी सम्पत्ति देना चाहता था परन्तु फिर समझानेसे मान गया। कुम्भके प्रचारमें स्वामी-जीकोही अधिक व्याख्यान देने पड़ते थे। हरिद्वारमें लाला मुंशीरामजी और लाला देवराजजीने स्वामीजीसे जालन्धर चलनेके लिये अत्यन्त आग्रह किया अतः कुम्भके प्रचारके पीछे स्वामीजी इन्हींके साथ जालन्धर चले गये और लाला देवराजजीके यहां ठहरे। यहांभी स्वामीजीने समाजमन्दिरमें कई व्याख्यान दिये।

कश्मीरयात्रा.

स्वामीजीने जम्मूमहाराजकी लाइब्ररीके संस्कृत ग्रन्थोंकी प्रशंसा कई दिनोंसे सुन रक्खी थी, और वहांके हस्तलिखित ग्रन्थ देखनाभी चाहते थे। इस लिये इसबार जम्मू जानेका दृढ निश्चय कर लिया और जालं-धरसे सीधे जम्मूको रवाना हो गये। केवल एक दिन लाहोरमें

लाला ईश्वरदासजी advocate के यहां ठहरे। यद्यपि लाहोरकी जनताने लाहोरमें ठहर कर प्रचार करनेका अत्यन्त आग्रह किया और कहने लगे कि लाहोरमें महर्षि दयानन्दजीकी मृत्युके पश्चात् कोईभी संन्यासी विद्वान् यहां नहीं आये हैं; परन्तु स्वामीजीने जम्मूके ग्रन्थभण्डारको देखनेका विचार शिथिल करना उचित न समझा और सीधे जम्मू चले गये। जम्मूमें स्वामीजी डा. जगन्नाथजीके यहां ठहरे। इन दिनों कश्मीर-राज्यके पब्लिक इन्स्ट्रक्शनके डाइरेक्टर मिस्टर महेशचन्द्र विस्वास थे। इन महाशयने पुस्तकभण्डार देखनेके लिये स्वामीजीको बहुत सहायता दी, और प्रत्येक प्रकारके सुभीतेका प्रबन्ध कर दिया। यहां स्वामीजी कई दिनोंतक ठहरे और पुस्तकालयके छपे और हस्तलिखित सब ग्रन्थ देख डाले।

इन दिनों काश्मीरराज्यका प्रबन्ध एक काउन्सिल (Council) द्वारा होताथा जिसके प्रधान राजा सर अमरसिंहजी और सभासद * राय भागरामजी आदि थे। स्वामीजी जम्मूके गवर्नर पंडित राधाकृष्णजी कौलसे मिले और इन्हींके द्वारा स्वामीजीकी भेट सर अमरसिंहजीसे हुई। राजासाहब और राय भागरामजी स्वामीसे मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। राजासाहबने स्वामीजीको भेट देनेकाभी प्रयत्न किया था। जो ११००) रुपये और शाल दुशाले आदि थीं। परन्तु स्वामीजीने स्वीकार नहीं किया। राजाने स्वामीजीके कश्मीर जानेकाभी प्रबन्ध कर दिया। स्वामीजी जम्मूसे रावलपिंडी आये। और लाला हरिरामजी राधाकृष्णजी सेठीके यहां ठहरे। ये सज्जन स्वामीजीके अत्यन्त प्रेमी हैं। यहां स्वामीजी राय नारायणदासजी, लाला हंसराजजी साहनी, रावबहादुर मय्यादासजी, बाबू कुंजबिहारी लालजी, लाला मुर्लीधरजी रेलवे सुपरवाइजर, लाला काशीरामजी और लाला रलारामजी आदि सज्जनोंसे मिले और उक्त महाशयोंके प्रबन्धसे रावलपिण्डीमें भिन्न २ स्थानोंमें कई व्याख्यान दिये।

यहां स्वामीजीका × फोटो लिया गया। रावलपिंडीसे स्वामीजी मरीपर्वतपर गये और लाला कृपारामजी आर्य्यके प्रबन्धसे समाजस्थानमें ठहरे। रावलपिंडीमेंही श्रीयुत धनजीभाई पारसी ठेकेदारने एक तांगा स्वामीजीके उपयोगके लिये कश्मीर तक विना कुछ लियेही दे दिया था। मरीपर्वतसे बारामूला होतेहुए स्वामीजी श्रीनगर गये। श्रीनगरमें राज्यके प्रबन्धसे स्वामीजी राज्यके बगीचे हजुरीबागमें ठहरे और यथावसर कथा और व्याख्यानद्वारा धर्मोपदेश करते रहे। काश्मीरके वजीर सोभारामजी स्वामीजीके पास आकर बहुत समयतक वार्तालाप किया करते थे। और स्वामीजीसे निवेदन करते थे कि आप राजासाहब अमरसिंहजीसे अधिक मिला करें। वजीर साहबने स्वामीजीको कहा कि राजासाहबके विचार यवनमतकी ओर झुक रहे हैं

---

*महर्षि दयानन्दके जीवनकालमें ये महाशय अजमेरमें जज थे और स्वामीके भक्तोंमेंसे थे।

×यह फोटो तृतीयावृत्ति पुरुषार्थप्रकाशके आरम्भमें मुद्रित किया गया है।

इसी लिये विशेष आग्रहसे राजा साहवसे मिलनेके लिये कहा करते थे । स्वामीजीनेभी इस विषयमें जाँच की तो पता लगा कि वजीर साहवका कहना सत्य है। मिरजा कादियानीका प्रवीण शिष्य हकीम नुरूद्दीन सदा राजासाहवके साथ रहकर उन्हें अपने रंगमें रंगनेके लिये अनथक परिश्रम कर रहा था अतः स्वामीजीको एक आर्य्यराजाका इसप्रकार स्वधर्मसे उपराम देखना सह्य नहीं हुआ और आप राजासाहवसे अधिक समयतक वार्तालाप करने लगे और यवनमतकी आलोचना आरम्भ की। परिणाममें नूरुद्दीनका चढाया हुआ नकली मुलम्मा थोड़ेही दिनोंमें बिलकुल उतर गया । और राजासाहब वैदिकधर्ममें पूर्ण श्रद्धा रखने लगे । एक दिन सायंकालके ५ बजे जब स्वामीजी राजासाहवसे मिलने गये तो अन्यलोगोंके अतिरिक्त एक मोलवीसाहवभी बैठे थे । स्वामीजीके पधारतेही धार्मिक चर्चा चल पड़ी और प्रसंगानुसार मोलवी साहबके संकेतसे राजा साहवने पूछा कि ' वेदमें मूर्तिपूजा है या नहीं ? ' स्वामीजीने कहा कि नहीं । साक्षीके लिये एक दो पंडितोंने भी कहा कि वेशक वेदमें मूर्तिपूजा नहीं है, मगर पुराणोमें है । इसपर मोलवी साहब कुछ कहना चाहते थे परन्तु उन्हें रोक कर राजासाहबने कहा कि खास किताब तो वेद है पुराण पीछे बने हैं। मोलवी साहबको अपने मनकी हवस निकालनेका अवसर देनेके लिये स्वामीजीने सबको सम्बोधन करके कहा, कि आर्य्यवैदिक धर्मके माफिक कोई धर्म नहीं है, चाहे सो हमसे शास्त्रार्थ करले या कराले । इसपर कोई कुछभी नहीं बोला । तब राजा साहब अत्यन्त प्रसन्न होकर बोले " **हमारे मिशनरी तो आप हैं। अगर १०० ऐसे साधु होयँ तो इस देशके धर्मकी जल्द तरक्की हो जाय** "। स्वामीजीके उपदेशोंका प्रभाव राजा साहबपर इतना पडा कि वे स्वामीजीसे सत्यार्थप्रकाश और राजनीति पढनेके लिये उनके निवासस्थानपर आते थे और आपने अपने पुत्रका मुण्डनसंस्कार वैदिकरीतिसे कराया । कश्मीरमें स्वामीजी अनुमान ७ महीनोंतक रहे । जब कभी राजा राज्यकार्यवश दौरेमें जाते थे तो स्वामीजीभी श्रीनगरके आसपासके दृश्य देखनेके लिये चले जाते थे । इसप्रकार स्वामीजीने कश्मीरके आस पासके स्थान यथा खीरभवानी, मानसबल, गन्धर्वबल, इसलामाबाद, मटन, इच्छाबल, शिवपुर, पांवपुर, पहलगांव, अमरनाथ आदि स्थान देखे । स्वामीजीका मेलजोल राज्यके प्रतिष्ठित अधिकारियोंसेभी अधिक होगया जिनमें कर्नल अनन्तरामजी, मेजर ईश्वरदासजीके नाम उल्लेख योग्य है ।

अमरनाथकी यात्रा.

अमरनाथकी यात्रा वर्षमें केवल एकही बार होती है । परन्तु जब स्वामीजीका विचार अमरनाथ जानेका हुआ तो राज्यकी ओरसे सब प्रबन्ध कर दिया गया । इस लिये यात्रा साधारण समयसे कुछ पूर्व ही आरम्भ कर दी गई । मार्ग अत्यन्त कठिनतासे समाप्त किया । मार्गमें हत्यारा नामक तालाब पड़ता है जिसका दृ

बड़ाही विचित्र है, सारा तालाव बर्फमय है, और समुद्रकी तहसे अनुमान १५००० फीट ऊंचा है। जनश्रुति है कि इस तालावमें यात्री कई बार दबकर मर चुके हैं। इसी लिये इसका नाम हत्यारा है । यह तालाव बड़ी कठिनतासे पार किया गया। यहाँसे चलकर नकारा नामक गुफामें विश्राम किया, यह गुफा अमरनाथसे ५ मील इस ओर है। यहाँसे प्रातःकाल उठकर पंचतरणी नदी पार की और अमरनाथ पहुंचे। जिस समय स्वामीजी वहां गये तो महादेवकी पिंडी आदि कोई मूर्ति नहीं मिली। परन्तु गुफासे जो जल निकलता था वह बाहर आकर शीताधिक्यसे बर्फ बनकर पिंडीके रूपमें जम जाता था । अमरनाथसे पीछे लौटते समय बर्फ गिरना आरम्भ होगया था। मार्ग सब बन्द हो गये और पहचाननेमें नहीं आने लगे। ऐसे अवसरपर मनुष्यका जीवन संकटमें पड़ जाता है, स्वामीजीके साथ जो कश्मीरी मज़दूर थे वे बर्फ गिरते देख २ कर रोने लगे और सर्दीके कारण सबके हाथ पांव ठिठुर गये। स्वामीजीकी ओर देख देखकर यह कहने लगे कि आप तो फकीर हैं, दुआ के बलसे बच जाँयगे। इस लिये हमारे घरवालोंसे कहला देना कि "वे सब मर गये"। स्वामीजीने कई प्रकारसे उन्हें धैर्य्य दिया परन्तु उन्हें अपने जीवनकी कोई आशा नहीं रही। और निराश होकर अपना रहासहा साहसभी खो बैठे। तब स्वामीने युक्तिसे काम लिया और कहा कि हमें भगवान्ने हुकुम दिया है कि "अगर तुम लोग इसी वक्त हमारे पीछे २ दौडोगे तो बच जाओगे।" स्वामीजीके इन शब्दोंने उनमें विद्युत्का संचार किया और वे निर्भय और साहसी होकर स्वामीजीके पीछे २ दौडने लगे। यह दौड़भाग तीन मीलसे अधिक दूरतक हुई और भयंकर स्थान सब पार हो गये । एकाग्र चित्तसे दौड़नेके कारण शरीरमें रुधिरका संचालन होने लगा और गर्मी व्याप गई। इस समय रात्रिके ८ बज गये थे। स्वामीजी एक गहन जंगलमें पंहुचे जहां कुछ भेड़ चरानेवाले रोटी बना रहे थे । स्वामीजीनेभी अपने तम्बू वहीं गड़वा दिये और लक्कड़ आदि जलवा कर शीतकी निवृत्ति की । भोजनभी यहीं बनवाया । जब सब खा पी चुके तो सारेके सारे मजदूर स्वामीजीके चरणोंमें गिर पड़े और कहने लगे कि "हमें आज आपनेही जीवदान दिया। अन्यथा हम तो मरचुके थे। आपके पास ऐसी क्या करमात है ?" इत्यादि। प्रातःकाल स्वामीजी इसलामाबाद आगये और यहांसे नावमें बैठ कश्मीर चले गये। कश्मीरमें भ्रमण आदिके लिये स्वामीजीने एक नाव भाडे लेली। प्रायः उसीमें बैठकर घूमा करते थे । उन दिनों तीनचार माझियों सहित एक शिकारी किस्ती १४) १५) रुपयोंमें मिलती थी । अक्टूबर १८९१ में भारतवर्षके तत्कालीन वाइसराय लार्ड लैन्सडाउन महोदय कश्मीर पधारे थे । लाटसाहबका स्वागत बडी धूमधामसे कियागया और रोशनी आतिशबाजी, और अन्य आमोद प्रमोदमें राजाओंकी उदारताके अनुसारही व्यय हुआ। इस समयतक स्वामीजी कश्मीरही थे। और लाटसाहबके साथही साथ कश्मीरसे रावलपिंडी आगये। इन ७ महीनोंके प्रवासमें

उपरोक्त कार्य्योंके अतिरिक्त स्वामीजी " पुरुषार्थप्रकाश " भी लिखा करते थे। जब स्वामीजी रावलपिंडी आये तो ज्ञात हुआ कि एकही दो दिन पीछे वहांकी आर्य्यसमाजका वार्षिकोत्सव है इस लिये स्वामीजी थोडे दिन रावलपिंडीमेंही ठहर गये। जब स्वामीजी कश्मीर गये तो रावलपिंडीमें कई व्याख्यान दिये थे। नगरनिवासियोंको जब मालूम हुआ कि ब्रह्मचारी नित्यानंदजी इस उत्सवमें आये हैं। तो सहस्रोंकी संख्यामें स्वामीजीके समीप अपने भ्रम निवारण करनेके लिये आये। और व्याख्यानके समय तो पंडालमें तिल रखनेकोभी स्थान नहीं रहता था। सारांश रावलपिंडी समाजका यह उत्सव अभूतपूर्व सफलताके साथ समाप्त हुआ। विशेष कर नगर कीर्तन। क्योंकि इस अवसरपर स्वामीजीके दर्शनोंके लिये आबाल वृद्ध उमड़ पड़ते थे। लाहोरसमाजका उत्सवभी निकट आ रहा था। जब लाहोरकी जनता और समाजके अधिकारियोंको स्वामीजीके रावलपिंडी पधारनेके समाचार मिले तो तार पर तार स्वामीजीके शीघ्र पधारनेके लिये आने लगे। इन तार भेजनेवाले सज्जनोंमें राय नारायणदासजीका आग्रह विशेष था। रावलपिंडीसमाजका उत्सव समाप्त होनेके पीछे स्वामीजी लाहोर आ गये। पंजाबकी आर्य्यसमाजोंके जितने उत्सव होते हैं उनमें लाहोर आर्य्यसमाजका उत्सव विशेष समारोहसे होता है। इस उत्सवमें जितने आर्य्य बाहरसे लाहोर आते हैं उतने और किसी स्थानमें नहीं। लाहोरसमाजमें स्वामीजीके व्याख्यानोंकी विशेष चर्चा रही। और बाहरसे आयेहुए प्रत्येक आर्य्यने अपने २ नगर और ग्राममें पधारनेकी इच्छा प्रगट की और स्वामीजीको हरसमय घेरे रहते। अवसर पातेही निज २ नगरमें पधारनेके लिये निवेदन करते। इन श्रद्धालु पुरुषोंका आग्रह स्वामीजीको मानना पड़ा और आपने ३ महीनेतक पंजाबप्रान्तमें प्रचार करनेके लिये भिन्न २ स्थानोंमें जानेका प्रोग्राम बनाकर सबको सूचित कर दिया, जिसे सुन कर सब परम प्रसन्न हुए। लाहोरका उत्सव समाप्त होनेके पश्चात् स्वामीजी (प्रोग्राम) कार्य्यक्रमानुसार मुलतान, गुरुदासपुर, अमृतसर, जालंधर, होशियारपुर आदि नगरों और इनके आसपासके कसबोंमें प्रचार करते रहे। प्रत्येक नगरके निवासी ज्यों ज्यों स्वामीजीके उनके नगरमें पधारनेकी तिथि निकट आतीथी बड़ी उत्सकता और प्रेमसे उनके आगमनकी चर्चा और उनके चले जानेपर उनकी भाषणशैली, तेजस्वी आकृति और सौम्य बर्तावकी प्रशंसा किया करते थे। फाल्गुन सं० १९४८ (मार्च १८९२) तक स्वामीजी पंजाबमें प्रचार करते रहे। होशियारपुरमें स्वामीजी एक महीनेसे अधिक ठहरे और महाशय रामचन्द्रजी, चौधरी रामचन्द्रजी, वकील ठाकुरदासजी और मास्टर मुर्लीधरजीके प्रबन्धसे कई स्थानोंपर व्याख्यान दिये। जिनका प्रभाव जनतापर बड़ाही गहरा पड़ा। वकील ठाकुरप्रसादजीने अपना यज्ञोपवीत संस्कार बड़ी धूमधाम और श्रद्धासे कराया। और आर्यसमाज हुशारपुरका उत्सव

बड़े समारोहके साथ समाप्त करके पंजाबसे स्वामीजी जयपुर आगये। और लाइब्रेरीमेंसे संस्कृत ग्रन्थ देखना प्रारम्भ किया। यथावसर जयपुरसमाजमें व्याख्यान आदिभी दिया करते थे। कश्मीरसे आनेके पीछे कुछ तो जलवायुके परिवर्तनके कारण और कुछ पंजाबप्रान्तमें विशेष परिश्रमसे प्रचार करनेके कारण स्वामीजीका स्वास्थ्य बिगडगया और जयपुर आनेपर तो श्वासरोगने अत्यन्त पीडित किया। स्वामीजीके बीमार होनेके समाचार जब समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुए तो आगरेसे डाक्टर रणजीतसिंहजी (ये महाशय स्वामीजीके बडे भक्त थे) आगये और जबतक स्वामीजीको पूर्णतया आरोग्यलाभ न होगया जयपुरमें रहकर अत्यन्त परिश्रमसे चिकित्सा करते रहे। इन महोदयने अपने आने जाने और निवास भोजन आदिमें जो कुछ व्यय हुआ वह स्वयंही किया। जयपुरसे स्वामीजी अजमेर आगये और वहांके समाजमन्दिरमें ठहरे। यहांसे १७ मार्च १८९२ को **श्रीमान् रावजी साहब श्रीबहादुरसिंहजी** मसुदाधीशके निमंत्रण आनेपर मसूदा पधारे। यहां एक बृहत् हवन हुआ। और कई दिनोंतक साधारण उपदेश देते रहे। **रावसाहबने स्वामीजीके आदर सत्कारमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं रक्खी।** मसूदेसे स्वामीजी अजमेर आगये। इस समय स्वामीजी यद्यपि श्वासरोगसे तो मुक्त होगये थे परन्तु कुछ कुछ निर्बलता बाकी थी, अतः समाजके साप्ताहिक अधिवेशनोंके अतिरिक्त और व्याख्यान नहीं देते थे। अजमेरसे २७ अप्रेल १८९२ को स्वामीजी गुजरानवाला समाजके उत्सवमें सम्मिलित होनेको चले गये। इस अवसरपर लाला लाजपतरायजी आयेथे और वहांसे सिमला पंहुचे। इस वर्षसे गर्मीमें स्वामीजी प्रायः शिमलेमें रहा करतेथे। इसबार रायबहादुर रलारामजी चीफइन्जीनियरकी कोठीमें ठहरे। बीच २ में आवश्यकतानुसार समाजोंके उत्सवोंमेंभी सम्मिलित होते रहे। जुलाई १८९२ में स्वामीजी केटासमाजके उत्सवमें गये थे। शिमलेमें नियमित स्वाध्याय और ग्रन्थरचनाके अतिरिक्त आसपासकी रियासतोंमेंभी प्रचार करते रहे। तथा शिमलासमाज मन्दिरके लिये सहायता प्राप्त करनेका उद्योग करते रहे। इसबार धामी और भज्जी रियासतोंमें विशेष प्रचार हुआ, जिसका वृत्तान्त २७ अक्टूबर १८९२ के राजस्थान समाचारसे नीचे उद्धृत किया जाता है:- "कुछ दिन हुए श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती शिमला समाज की ओरसे कुछ एक सभासदों सहित रियासत धामीमें पहुंचे। श्रीराणासाहेब धामीने अपने पंडित रामलालजी रायपुरवालोंकोभी बुलवाया। और आर्यधर्मपर बातचीत होना शुरू हुई। प्रबन्ध अच्छा नहीं था परंतु सत्यकी जय हुवाही करती है, संस्कृतमेंभी बातचीत होती रही और भाषामेंभी। तात्पर्य यह कि राणासाहबने पण्डित रामलालजीसे स्वीकार करालिया कि आर्य्यधर्म उत्तम है। आगे रामलालजीने कहा जबतक बिरादरीका डर है तबतक आर्य्यधर्मका प्रचार होकर अधिक लोग एकधर्म नहीं होते. ठीक

ठीक आर्य्यधर्मपर आरूढ होना कठिन है । श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजीका उपदेश रियासतधामीमें हुआ और श्रीराणासाहबने आर्य्यसमाज शिमलामन्दिरकी सहायतामें ७ दरख्तभी दिये । कुछ रोज बाद श्रीराणा साहब भज्जी शिमलामें सुशोभित हुए । श्रीराणासाहबका नाम श्रीदुर्गासिंहजी है, आप बहुतही बुद्धिमान् हैं, श्रीराणासाहबसे इस समाजके सभापति राय रलाराम व मंत्री परमानन्द वाजपेयी मिले और बहुत अच्छी तरहसे बातचीत होती रही, राणासाहबने आर्यउपदेशकोंसेभी बातचीत करनेकी इच्छा प्रकट की, अतएव श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी खास रियासत भज्जीमें पहुँचे । **इन महात्माओंके लिये सवारी** पालकी आदिका प्रबन्ध राणासाहबकी तरफसे किया गया था । उक्त स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी ७ दिनतक राणासाहबके वहां रहे, श्रीब्रह्मचारीजीके धर्मसम्बन्धी व्याख्यान वहां बराबर होते रहे । रियासतके पंडितलोगोंकोभी राणासाहबने बुलवा लिया था । और सबसे भले प्रकार कह दिया था कि सबको दरबारमें आनेकी आज्ञा है, बिला रोक टोक सब आवें और धर्मका निर्णय करें । रियासतके पंडितोंसे बातचीत होती रही, राणासाहब श्रवण करते रहे, जब श्रीराणासाहबने देखा कि पंडितलोग स्वपक्ष बिलकुल नहीं स्थापन कर सके, तो राणासाहबने उक्त पंडितोंको आज्ञा दी कि तुम लोग अपने बडे २ पंडितोंको बुलवाओ, जो कुछ उनका खरच होगा रियासतके खजानेसे दिया जायगा । श्रीराणासाहबने यहभी कहा कि न मुझे धर्मसभाका पक्ष है, और न आर्य्यसमाजका, मैं निष्पक्ष होकर जो कुछ यथार्थ होगा वह न्यायपूर्वक फैसला दूंगा । परन्तु आप जानते हैं कि जहां राणासाहब जैसे विद्वान् न्यायपरायण निष्पक्ष फैसला देनेको हों वहां आर्य्यसमाजके उपदेशकोंके सन्मुख धर्मसभाके पण्डित किस तरह मुकाबिला करनेको आसकते हैं ?

क्योंकि पंडित कहला कर जरूर विद्या पढनी पड़ेगी, आर्य्यविद्वानोंकाभी यज्ञ होगा आर्य्यधर्मका प्रचार होते २ अब कुछ २ लोगोंको मालुम होने लगा है । प्रत्यक्षके लिये उदाहरण देखिये कि श्रीराणासाहब व उनके लघुभ्राता पहले आर्य्यधर्मपर विचार नहीं करते थे परन्तु अब सब आर्य्य हैं. जो कुछ (सरदार आदि) शंकित थे, वेभी इस ओर रुचि दरसाने लगे हैं। श्री. राणासाहब पहले कुछ नवीन बेदान्तकी तरफ थे, अब असली वेदान्तपक्षपर हैं अर्थात् वेदोक्त धर्म मानते हैं। और आर्य्यधर्मकी वृद्धिके लिये सहायता देनेको उद्यत हैं । यहांतक कि श्रीराणासाहबने जब स्वामी व ब्रह्मचारीजीको बिदा किया उस समय एकसौ रुपया नकद भेट किया। उपदेशक महाशय लेना नहीं चाहते थे, परन्तु राणासाहबने जरूर दिया और कहा कि समाजकी अलग सहायता की जावेगी । और डी. ए. बी. कालिजके लिये अलग बन्धान कर दिया जावेगा.........इत्यादि ”

शिमलेसे स्वामीजी अम्बाला, दिल्ली, जयपुर आदि स्थानोंमें प्रचार करतेहुए अजमेर आये, और नगरके भिन्न २ स्थानोंमें व्याख्यान देते रहे। मार्गशीर्षशुक्ला २ सं० १९४९ वि० को उदयपुर महाराणाजीकी बड़ी बाईसाहबाका विवाह श्रीमान् कोटा महाराव उमेदसिंहजी साहबसे होना निश्चित हुआ था। इस अवसरपर उदयपुरमें राजस्थानके अनेक सरदार आनेवाले थे। इसलिये उदयपुर समाजके मंत्री श्रीयुत रामनारायणजी दूगड़ने स्वामीजीको उदयपुर पधारनेका निमंत्रणपत्र शिमलाही भेज दिया था। वैदिक संदेशके पंहुचानेका लाभदायक अवसर जानकर स्वामीजी विवाहके कुछ दिन पूर्वही उदयपुर पधार गये। श्रीमन्मेदपाटेश्वरोंके प्रथम श्रेणीके उमरावोंमेंसे स्वर्गवासी सरदारगढके ठाकुर मनोहरसिंहजी डोडिया एक बुद्धिमान् धर्मज्ञ, विचाररसिक और परम स्वामिभक्त सरदार थे। आपने स्वामीजीका आतिथ्य-सत्कार भले प्रकार किया। स्वामीजीके उपदेशोंका ठाकुरसाहबपर ऐसा उत्तम प्रभाव पड़ा कि परमवेदान्ती होनेपरभी वैदिकधर्मकी ओर पूर्ण सहानुभूति होगई। और समाजमंदिरके बननेमें आपने अग्रणी होकर ५००) रुपयेकी रकम प्रदान की, जिसके देखादेखी दूसरे सरदारोंसेभी बड़ी २ रकमोंका दान मिल जानेसे उदयपुर समाजमंदिर बनगया। स्वामीजीके व्याख्यानोंमें विवाहके अवसरपर निमंत्रित प्रायः बहुतसे सरदार आते थे। ता. १० दिसम्बर १८९२ ई. को सायंकालके समय श्रीमन्मेदपाटेश्वरोंनेभी दोनों महात्माओंको सादर राज्यमहलमें बुला निज अमात्य व प्रतिष्ठित पार्श्ववर्ती सभ्योंसहित अनुमान १। घण्टेतक धर्मविषयपर श्रीस्वामीजी महाराजका उपदेश एकाग्र चित्तसे सुना। यहांपर कुछ पौराणिकोंने कतिपय शंकाएँ कीं जिनका समाधान कर दिया गया। काशीनाथ दाहिमा नामक प्राज्ञ परीक्षा पास ब्राह्मणने महर्षि दयानन्दजीकृत वर्णोच्चारण शिक्षापर कुछ आक्षेप रजिस्ट्री करके भेजे थे। उनकाभी उत्तर दे दिया। ता० २८ से २९ और ३० दिसम्बर १८९२ को आर्य्यसमाज अजमेरका उत्सव था अतः उदयपुरसे स्वामीजी अजमेर आगये, श्रीयुत आर्य्यपथिक पंडित लेखरामजीभी इस अवसरपर आये थे। स्वामीजीका व्याख्यान मनुष्यकर्तव्यपर हुआ। स्वामीजीका स्वास्थ्य उदयपुरमेंही बिगड़ गया था। ज्वर और खांसी आदिकी शिकायत थी। श्रीमन्मेदपाटेश्वरोंके निज वैद्य डाक्टर अकबर अलीजीकी चिकित्सासे आरोग्यभी शीघ्रही लाभ कर लिया था। परन्तु निर्बलता थी। अतः अजमेर थोड़े दिन ठहरकर विश्राम किया। बीच २ में समाजके साप्ताहिक अधिवेशनोंपर उपदेश किया करते थे। ता० २६-२-९३ को बेदलारावसाहब श्रीकर्णसिंहजी आर्य्यसमाजमन्दिर अजमेरमें पधारे। आप उदयपुरमें स्वामीजीसे परिचित होचुके थे। इससमय समाजका साप्ताहिक अधिवेशन हो रहा था, स्वामीजीने "आर्य्यसमाजने क्या क्या किया" इस विषयपर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया, जिसे सुनकर रावसाहबकी श्रद्धा

उदयपुरमें प्रचार.

स्वामीजीमें औरभी बढगई, जबतक स्वामीजीका व्याख्यान होता रहा, आप बड़े ध्यानसे सुनते रहे । जाते समय दयानन्द-आश्रम-पाठशालाके एक छात्रको जिसने संध्या उत्तम रीतिसे स्पष्ट सुनाई १०) रुपये पारितोषिक देगये। और पाठशालाके लिए अच्छी सहायता देनेकी आशा बंधाई । ता०२३।२।९३ को जब कर्नल बिसट साहब एजन्ट B. B. & C. I. Ry. पाठशालाका निरीक्षण करने आये तो श्रीयुत बाबू हरविलासजी शारदा B. A. और स्वामीजीने उन्हें पाठशालाके उद्देश्य और लाभोंसे परिचित कराकर रेल्वेसे पाठशालाके लिए स्थिर सहायता प्राप्त की। यह सहायता वर्तमानमें ७५) मासिक है । इसप्रकार इस विश्रामकालमेंभी स्वामीजी यथावसर अजमेरके सामाजिक कार्य्योंमें सहायता देते रहते और उन्हें उन्नत करनेका उद्योग किया करते थे । जब स्वामीजी पूर्णतया आरोग्य होगये तो श्रीयुत रामबिलासजी शारदा मंत्री आर्य्यप्रतिनिधि सभा राजस्थानने आपसे राजपुतानेमें प्रचार करनेकी प्रार्थना की ।जिसे स्वामीजीने स्वीकार किया । ता०२५।२६ मार्च १८९३ ईसवीको जयपुरआर्य्यसमाजका उत्सव था, अतः स्वामीजी जयपुर गये । इस अवसरपर स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराजने प्राचीन पुस्तकोंमें वैदिकधर्मके साधारण नियम, श्रीपंडित लेखरामजीने वैदिक धर्म और प्राचीन आर्य्यावर्त, और स्वामीजीने धर्म और योगविषयपर व्याख्यान दिये थे। यहां दयानन्द-आश्रम-पाठशालाके लियेभी चंदा लिखा गया, जिसमें १८४ रु० प्राप्त हुए । यहांसे स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी तो पुरुषार्थप्रकाशकी छपाईका निरीक्षण करने अजमेर आगये और स्वामीजी दांता, मीडा, खाचर्यावास, जोबनेर आदि स्थानोंमें प्रचार करने चले गये, साथही अजमेरकी दयानन्द-आश्रम-पाठशालाके लिए धनसंग्रह किया। स्वामीजीके उपदेशोंसे प्रभावित होकर आश्रमकी पाठशालाकी सहायताके लिये २००४) रु० उपरोक्त ४ ठिकानोंके ठाकुरसाहबोंने दिये जिसका विवरण यह है ।

५०१) श्रीयुत ठाकुर साहब उदयसिंहजी दांता ।
५०१) श्रीयुत ठाकुर साहब सुलतानसिंहजी मीडा ।
५०१) श्रीयुत ठाकुर साहब गोविंदसिंहजी खाचर्यावास ।
५०१) श्रीयुत ठाकुर साहब कर्णसिंहजी जोबनेर ।

जब स्वामीजी इन ठिकानोंमें भ्रमण कर रहे थे तो इन्हें आगरेसे तार मिले कि यहां शारदा पीठके शंकराचार्य महाराजने आर्यसमाजके प्रति विरुद्ध कहना प्रारम्भ कर दिया है। और उनके इन व्याख्यानोंके कारण सनातनधर्मी विशेष कर अनपढ समूह आर्य्यसमाज और उसके सभासदोंको हरप्रकारसे हानि पंहुचानेके प्रयत्नमें हैं, यह समाचार पाकर स्वामीजी जयपुर आगये और यहांसे आगरे चले गये। जयपुरप्रवाससें स्वामीजीके उपदेशसे बाबू सूरजमलजी प्रधान आर्य्यसमाज जयपुरने अतिउदारतापूर्वक अजमेरनगरमें अपनी एक भूमि

और उसमें बने मकान जो पुतलीघरके पास नसीराबादकी सड़कपर हैं और जिसकी आय उस समय ४०) मासिक थी श्रीमद्दयानन्द आश्रम एंग्लों वैदिक पाठशालाके लिये दान करदिये। आगरे पंहुचनेपर स्वामीजीने देखा कि यहां हिन्दुसमाज बहुतही उत्तेजित हो रहा है। आपनेभी व्याख्यानोंका नियमबद्ध क्रम जारी कर दिया और श्रीशंकराचार्यजी जो अनर्गल विचार आर्य्यसमाजके प्रति प्रकाशित करते थे उन सबका खंडन करना आरम्भ कर दिया। श्रीशंकराचार्यजी संस्कृतके विद्वान् थे। अतः स्वामीजीने उनसे शास्त्रार्थ करनेका विचार किया। १८ मई १८९३ ई० को मंत्री आर्य्यसमाज आगराकी ओरसे यह विज्ञापन छपवाकर वितीर्ण कर दिया और उसकी एक प्रति श्रीमच्छङ्कराचार्य्यजीके पासभी भेज दी।

ओ३म्।

"विज्ञापनम्:"

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः॥ हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तन्निबोधत॥ १॥ अवैदिकानां मतमर्दनाय,मायाकुवादस्य विसर्जनाय नियमेन सुज्ञैः शास्त्रार्थं कर्तुं सदोद्यतोऽस्त्यार्य्यसमाजसिंहः॥ २॥ भो शङ्कराचार्य्य विचार्य्य नियमान् कुरु सुशास्त्रार्थमभीप्सितं चेत्॥ माऽतोऽन्यथा हानिवहाङ्कशिक्षामवैदिकीं कार्य्यवशात् तनोतु॥ ३। अन्यान् जनान् सभ्यतमान् ब्रवीमि व्याख्यानश्रवणार्थमुपस्थिताः स्युः॥ अर्गलपुरस्यार्यसमाजभवनमागत्य शङ्का यदि स्यात् करोतु॥ ४॥

विदित हो कि श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्री १०८ श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी तथा ब्रह्मचारीजी श्रीनित्यानन्दजी महाराज आर्य्यसमाज आगरे पधारे हैं। उक्त महात्मा श्रीशङ्कराचार्य्य शङ्कराश्रम स्वामीजीसे वेदविरुद्ध जड़-मूर्ति पूजनादि विषयोंपर शास्त्रार्थ करनेको उपस्थित हैं। इस लिये यदि शंकराचार्यजीकी इच्छा हो तो नियम स्थिर करके आर्योपदेशकोंसे शास्त्रार्थ करलें। तथा शंकराचार्यजी व अन्य सर्व महाशयोंसे यहभी निवेदन है, कि आर्य्यसमाजकी ओरसे 'मोती कटहींगकी मंडी' आर्य्यसमाज-भवनमें प्रतिदिन साढे छः बजेसे सद्वैदिक धर्ममण्डन और तद्विरुद्ध पाखण्डमत खण्डनपर व्याख्यान होंगे तथा व्याख्यानान्तर धर्मजिज्ञासुओंके धर्मविषयक शंकाओंका समाधानभी किया जायगा, अतएव सर्व सज्जनोंसे सविनय निवेदन है कि पूर्वोक्त समयपर नियत स्थानमें पधार कर सभाको सुशोभित करें।

आपका दर्शनाभिलाषी,

१८-५-९३.

दौलतराम शर्मा, मंत्री

आर्यसमाज आगरा.

परन्तु स्वामी शंकराचार्य्यजी शास्त्रार्थसे बिलकुल इनकार कर गये। अतः स्वामीजीने व्याख्यानोंद्वाराही लोगोंका भ्रम निवारण किया। इस अवसरपर स्वामी आत्मानन्दजी पंडित तुलसीरामजी स्वामीभी आगरे आये थे। अन्तमें जब शंकराचार्यजी आगरा छोडकर अन्यत्र चले गये तो उसके पीछे ३।४ व्याख्यान और देकर स्वामीजीभी अजमेर आगये। १८९३ से १८९७ के वर्ष आर्य्यसमाजके गृहकलहके लिये प्रसिद्ध हैं। पंजाबप्रान्तमें मांसभक्षणके नामसे यह रगड़ा आरम्भ हुआ था और इसका प्रभाव भारतवर्षभरकी समाजोंपर थोड़ा और अधिक अवश्य पड़ा था।

अजमेरसे स्वामीजी २४ जून १८९३ को काश्मीर पहुंचे, और निरन्तर आर्य्य-समाजके साप्ताहिक अधिवेशनोंमें उपदेश आदि देते रहे।

श्रीनगर-आर्य्यसमाजकी दैनिकव्यवस्थाका सार यहां दिया जाता है।

(१) ता० १ जुलाई १८९३ साप्ताहिक अधिवेशनमें ब्रह्मचारी श्रीनित्यानन्दजीने परमेश्वरकी हस्तीपर व्याख्यान दिया। व्याख्यान बड़ा दिलचस्प और प्रभावशाली था।

(२) ९ जुलाई १८९३ के अधिवेशनमें स्वामीजीने प्रार्थना कराई और प्राचीन ऋषियों और वर्तमान सन्तानका मुकाबला किया। श्रोताओंके हृदय हिल गये।

(३) १६ जुलाई १८९३ को चार आश्रमोंपर व्याख्यान दिया, जिसका सारांश भी नोट किया गया है।

(४) २३ जुलाईके अधिवेशनमें जड़ और चेतन पदार्थोंकी अवस्थापर व्याख्यान हुआ।

(५) ३० जुलाईकोभी स्वामीजीका व्याख्यान हुआ। विषय अंकित नहीं।

(६) ३ अगस्तके व्याख्यानका विषय "मनुष्यका कर्तव्य" था, इसकाभी सार डायरीमें है।

(७) २३ अगस्तको "संसार" इस विषयपर व्याख्यान दिया।

स्वामीजीके पधारनेसे श्रीनगर-आर्य्यसमाजने बल प्राप्त किया और साप्ताहिक अधिवेशनोंकी उपस्थिति बढने लगी। २ जुलाईके अधिवेशनमें उपस्थिति केवल २५ थी, परन्तु होते होते ५० तक पहुंच गई।

इसबार काश्मीरमें बड़ाभारी जलप्रवाह आया जिससे स्वामीजीकेभी प्राण संकटमें पड़ गये परन्तु परमात्माकी कृपासे बच गये।

स्वामीजीको यहींपर आर्य्यसमाजके गृहकलहके समाचार मिले थे।

काश्मीरसे लौटकर इस गृहकलहको शान्त करनेके लिये स्वामीजीने अम्बालासे लेकर रावलपिंडितक कई चक्कर लगाये। आर्य्यसमाजके सभासदोंको कईप्रकारसे समझाया

परन्तु कोई परिणाम नहीं हुआ। रावलपिंडीमें आर्य्यसमाजकी नैमित्तिक सभाके अधिवेशन लगातार दो दिनतक होते रहे। रातके दो २ बज गये और अन्तमें सब सभासद 'मांसभक्षण वेदविरुद्ध है' इस सत्यको स्वीकारभी करनेको तत्पर हो गये; परन्तु एक सभ्यने अपनी हठ नहीं छोड़ी और रावलपिंडीमें दो समाजें करकेही शान्ति प्राप्त की। जब स्वामीजी पंजाबमें इसप्रकार शान्तिके लिये परिश्रम कर रहे थे तब श्रीशारदापीठके शङ्कराचार्य्यभी आगरेसे घूमतेहुए जलंधर आगये और आर्य्यसमाजके विरोधमें व्याख्यान देना आरम्भ कर दिया। जलन्धरके आर्य्यसमाजसे तार पाकर स्वामीजीभी वहां पहुंच गये और एकवार उन्हें और शास्त्रार्थके लिये आह्वान किया परन्तु वे सन्मुख नहीं हुए। तब व्याख्यानोंद्वारा उनके पक्षकी निर्बलता जनताके सामने रखदी गई। शंकराचार्यजी महाराज यहांसेभी चले गये। स्वामीजी होशियारपुर गये और वहांभी गृहकलहके निवारणके लिये उपाय करने लगे, इतनेहीमें राजस्थान प्रतिनिधि सभाके मंत्री श्रीयुत रामविलासजी शारदाका तार मिला कि आप अजमेर शीघ्र पधारें। घटना यह थी कि पंजावकी अग्नि राजपुतानामेंभी फैलनी आरम्भ हो गई थी। इस प्रान्तमेंभी आर्य्यसमाजकी स्थिति बहुत सन्दिग्ध होती जा रही थी। समाचार अत्यन्त भयङ्कर थे। कार्य्यकर्ताओंमें सीमातीत निराशा फैल चुकी थी। समाजें सिद्धान्त विरुद्ध प्रस्ताव करने लगी थीं। ऐसे अवसरपर जिस अपूर्व धैर्य्य, अदम्य उत्साह, अनथक परिश्रम, और निर्भीक साहससे आर्य्यसमाजको इस संकटसे उबारनेका उद्योग **श्रीयुत बाबू रामविलासजी शारदा** मंत्री आर्य्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान और आपके सहयोगमें महाशय वजीरचन्द्रजी आर्य्योपदेशक कर रहे थे। परन्तु इस समय एक वेदज्ञ धर्मपरायण वक्ताकी आवश्यकता थी जो जनताके अतिरिक्त सरदारों और महाराजोंपर प्रभाव डाल सके और वह आवश्यकता श्रीस्वामी नित्यानंदजीके पधारनेसे पूरी हुई। इसके अनन्तर स्वामीजी युक्तप्रदेशकी समाजोंमें इसी अग्निकी शान्तिके निमित्त दौरा करने चले गये और कृतकार्य्य हुए।

युक्तप्रदेशसे स्वामीजी पीछे अजमेर आगये।

इन्हीं दिनों गतवर्षके उद्योगका फलस्वरूप उदयपुर-समाजमन्दिर बनकर तय्यार होगया था, उसके प्रवेशोत्सवपर पधारनेके लिये स्वामीजीसे आग्रहपूर्वक निवेदन किया गया। इस लिये स्वामीजी अजमेरसे उदयपुर गये और एक व्याख्यान सनातन-धर्मपर ठाकुरसाहब श्रीमनोहरसिंहजीकी हवेलीमें दिया। ता० ३ दिसम्बर १८९३ को सायंकालके समय दोनों महात्माओं (स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराज और स्वामी नित्यानन्दजी) को श्रीमन्मेदपाटेश्वरोंने सादर बुलवाया। कुछ काल वार्तालाप होनेके पश्चात् स्वामीजीने करीब पौन घण्टेतक वर्णाश्रमधर्मपर एक अति उत्तम चित्ताकर्षक वक्तृता दी। श्रीमान् यादवार्यकुलकमलदिवाकरने निज अमात्यवर्ग व

प्रतिष्ठित सभ्योंसहित पूर्ण ध्यानके साथ इस सदुपदेशको सुनकर परम प्रसन्नता प्रगट की और स्वामीजीका निवास, भोजनआदिका प्रबन्ध राजकी ओरसे करनेकी आज्ञा-प्रदान की । ता० ८ दिसम्बर सोमवारको आर्य्यसमाज-भवन खुलनेका उत्सव हुआ। विधिवत् हवन होनेके उपरान्त श्रीमान् राव कर्णसिंहजी रावबहादुर बेदलाने (जो उदयपुरके प्रथमवर्गके उमरावोंमें अद्वितीय थे । भवनको निजकरकमलोंसे खोला । उस समय उदयपुरके निम्न प्रतिष्ठित पुरुषभी पधारे थेः–ठाकुरसाहब श्रीमनोहरसिंहजी, सरदारगढ । ठाकुरसाहब उदयसिंहजी, मामाजसिाहब अमानसिंहजी, पंडित श्यामजी कृष्णवर्म्मा एम. ए. बी. एल. कुंवर फतहलालजी साहब महता, महाराजासाहिब कर्णसिंहजी आदि । मन्दिरके खोलते समय रावसाहबने यह वक्तृता दीः–

" मैं अपनी प्रसन्नता जाहिर करता हूं कि सत्य वेदोक्तधर्मोपदेशक स्वर्गवासी स्वामी दयानन्दसरस्वतीजी महाराजने वेद जो हमारी अनादि धर्मपुस्तक है, उसके उसूलोंको कायम कर इस आर्य्यभूमिपर समाजें स्थापित कीं, जिसकी एक शाखा हमारी वीरभूमि मेवाड़की राजधानी उदयपुरमें स्थापित हुई, जिसको खोलनेके लिये आप सज्जन मुझको फरमाते हैं । मैं इस कार्य करनेमें अपना गौरव समझता हूं। और गरूरके साथ कहता हूं यदि ऐसी समाजें सब जगह कायम होकर वेदधर्मका पूरा २ प्रचार होगा तो भारतभूमिकी उन्नतिके दिन बेशक नजदीक समझना चाहिये । ज्यादातर खुशीमें यह मानता हूं कि **स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी व ब्रह्मचारी श्रीनित्यानन्दजी महाराज जैसे सुज्ञ महापंडितोंके सत्य** उपदेश हजारों अज्ञानी लोगोंको देशविदेशमें **परधर्म** अंगीकार करनेसे बाज रखकर वेदधर्मकी श्रेष्ठताको समझाते हैं । मेरे पूज्य पिता राव-बहादुर तख्तसिंहजीने इस समाजमन्दिर बननेमें सहायता दी, और जैसे वे समाजोंकी उन्नतिमें खुशी मानते थे वैसेही मैंभी समाजोन्नतिमें कोशिश करूंगा। प्रियवरो ! मैं सर्व-शक्तिमान् ईश्वरसे प्रार्थना करता हूं कि यह समाजमन्दिर जिसको मैं आप सज्जनोंके रूबरू खोलता हूं दिन ब दिन तरक्की पावे और हमारे देश मेवाड़को उससे फैज़ पँहुचे।" आनन्द-ध्वनिमें भवन खोला गया । स्वामीजीने वेदमंत्रोंसे ईश्वरआराधना की, मंत्रीसमाजने समाजके जन्मसे उस समयतकका वृत्तान्त सुनाया । फिर स्वामीजीने आर्य्यसमाजके उद्देश्यों पर एक सरस व्याख्यान दिया, जिसको श्रोतागणोंने एकचित्त होकर सुना । तत्पश्चात् पंडित श्यामजी कृष्णवर्मा M. A., ने एक छोटीसी सरस वक्तृता सामाजिक उद्देशोंपर दी । इसके अनन्तर मंत्रीजीने उपस्थित सभ्योंको धन्यवाद देकर उत्सवकी समाप्तिकी सूचना दी । इस उत्सवके पूर्व बेदले रावसाहबने स्वामीजीको बेदले बुलवाकर कई दिनोंतक धर्मोपदेश श्रवण किया था । उदयपुरसे स्वामीजी श्रीयुत मोहनलाल विष्णुलालजी पंड्याका निमंत्रण पाकर परताप गढ़ चले गये । पंड्याजी उन दिनों परतापगढ़के दीवान थे । स्वामीजीने यहां कई व्याख्यान दिये । बहुधा महाराजाभी पधारा करते थे । पंड्याजीसे स्वामीजीने ' परोपकारिणी ' सभाके संगठनपरभी विचार

किया। क्योंकि उक्त सभाका अधिवेशन २८-२९-३० दिसम्बरको अजमेरमें होने-वाला था। परतापगढसे स्वामीजी इन्दोर, देवास, धार खंडवा और बुरहानपुरमें प्रचार करने चल दिये। और फिर वापिस लौटते इन्दोर और उदयपुरमें एक २ दो २ व्याख्यान देकर परोपकारिणीके अधिवेशनपर अजमेर आगये। बुरहानपुरमें सनातन धर्मावलम्बियोंसे कुछ वादविवादभी हुआ था। विशेष कर श्रीयुत अम्बालाल B. A. नामक ब्राह्मणने बहुत शंकाएँ कीं और समाधान सुनकर संतोष प्रकट किया। अजमेरमें परोपकारिणी सभाके अधिवेशनका परिणाम यह हुआ कि श्रीमान् राजाधिराज शाहपुराधीशजी प्रधान, श्रीमान् रावबहादुर प्रतापगढाधीशजी उपसंरक्षक और बाबू हरबिलासजी सारडा, B. A. सहकारी मंत्री नियत किये गये। इसी अवसरपर आर्य्यसमाज अजमेरका १३ वां वार्षिकोत्सव था जिसमें स्वामीजीके दो व्याख्यान धर्म और विद्या विषयपर हुए। विद्यापर व्याख्यान देतेहुए स्वामीजीने अचानक श्रीमद्दयानन्दाश्रम-पाठशालाके वास्ते अपील की जिसमें चारसौके अनुमान रुपया प्राप्त होगया। इसप्रकार राजस्थानप्रान्तमें कलहकी अग्निको शान्त करके और परोपकारिणी सभाको यथासम्भव सुसंगठित करवाके स्वामीजी युक्तप्रान्तकी समाजोंमें दौरा लगाने चले गये। और मथुरा, आगरा, कानपुर आदि स्थानोंमें भ्रमण करतेहुए लखनऊ पहुंचे। इस अवसरपर लखनऊमें संयुक्तप्रान्तकी आर्य्यप्रतिनिधि-सभाका एक असाधारण अधिवेशन पंजाबकी फैलाईहुई अग्निको शान्त करनेके निमित्त होनेवाला था। स्वामीजीभी विशेषरूपसे इस अधिवेशनमें सम्मिलित हुए और मांसभक्षणके विरुद्ध बहुतसे वेदमंत्र बतलाकर आर्य्यसमाजकी स्थितिपर प्रकाश डाला। अन्तमें युक्तप्रान्तकी प्रतिनिधिसभासे "मांसभक्षण वेदविरुद्ध है" यह प्रस्ताव पास कराया।

लखनऊसे आगरा, उन्नाव, कानपुर आदि स्थानोंमें प्रचार करतेहुए स्वामीजी जयपुर पहुंचे और थोडे दिन यहांकी लाइब्रेरीमें ग्रन्थावलोकन करके अजमेर आगये। अजमेरसे स्वामीजी अहमदाबाद गये। यहां **प्रार्थनासमाजके मन्दिर** और कई अन्य स्थानोंपर व्याख्यान दिये। **श्रीयुत लालशंकर उमियाशंकरजी** उन दिनों अहमदाबादमें सेशनजज्ज थे। आपकी स्वामीजीमें अत्यन्त भक्ति थी। प्रसंगवश आपने स्वामीजीसे अहमदाबादमें "ब्रह्मचारीकी बाडी" (जो अनुमान सवा लाखकी सम्पत्ति है) को अपने प्रबन्धमें लेनेके लिये कहा। परन्तु स्वामीजीने अस्वीकार किया। अहमदाबादसे स्वामीजी बडोदा गये। यहां स्वामीजी बाबू गणपतिसिंहजी हेड ड्राफ्स मैनके यहां ठहरे। वैदिक धर्म, ईश्वर, मानवी कर्तव्य, पुनर्जन्म, और 'वेदोंमें क्या है' इन पांच विषयोंपर व्याख्यान दिये। व्याख्यानोंमें दीवानबहादुर दीवानसाहब राज्य बड़ोदा, रावबहादुर सर न्यायाधीश साहेब, रावबहादुर बड़ोदा प्रान्त सूबा साहिब, व रावबहादुर असिस्टेन्ट सर सूबा आदि प्रतिष्ठित सभ्य निरन्तर आते थे।

ता० ३१ मई १८९४ ई० को सायंकालके समय उक्त सज्जनोंकी उपस्थितिमें बड़ोदामें आर्य्यसमाज स्थापित होगया। जिसके सर्व प्रथम अधिकारियोंका निर्वाचन इसप्रकार हुआः—

(१) पंडित हरगोविन्द गिरजाशंकरजी	संरक्षक.
(२) रा. रा. किशनलाल निहालचन्दजी बाबू गणपतिसिंहजी.	सभापति.
रा. रा. मन्छाशंकर जयशंकरजी	उपसभापति.
बाबू पंचमसिंहजी वर्मा	मंत्री और कोषाध्यक्ष.
रा. रा. महादेवसिंह रामसिंहजी	उपमंत्री.
पंडित लक्ष्मणराव रामचन्द्र	पुस्तकाध्यक्ष.

स्वामीजीके व्याख्यानोंके प्रभावका अनुमान पाठक इसीसे कर सकते हैं कि सम्पादक बड़ौदावत्सलने उस समय लिखा था कि "श्रीमंत महाराजासाहबका लाखों रुपया जो दानमें व्यय होता है उस सबसे अधिक लाभ इन व्याख्यानोंसे जनताको हुआ है। जब पौराणिकोंने देखा कि स्वामीजीके व्याख्यानोंका फलस्वरूप आर्य्यसमाज बड़ोदेमें दृढ रूपसे स्थापित होगया, तो वे मनमें घबराये और ३ जूनको एक विराट्सभा करके स्वामीजीके व्याख्यानोंका साद्यन्त खंडन करनेकी घोषणा प्रकाशित की। उपस्थिति अधिक हो इस लिये विज्ञापनमें यहभी प्रकाशित किया कि श्रीयुत पटवर्धन कम्पनी मैजिक लैन्टर्न द्वारा अनेक देवताओंके चित्रोंका प्रदर्शन उपस्थित जनताको मुफ्तमें करायगी। परिणाम यह हुआ कि नियत समयपर तमाशगीर मंडली जिनमें बालकोंकी संख्या विशेष थी सभास्थानमें जा पहुंची। आरम्भमें श्रीयुत रा. सा. गोविन्दराव विष्णुदेवजीने स्वामीजीके व्याख्यानोंको निस्सार और मिथ्या बतलातेहुए पटवर्धन कम्पनीकी मैजिकलैन्टर्नका तमाशा दिखलाया। इसके अनन्तर श्रीयुत इंदारकर कृष्णशास्त्री व रामचन्द्रशास्त्री व्यवस्थापक वीरक्षेत्र सनातन वैदिकधर्म मंडलीने ता० ९ जून १८९४ के सयाजीविजयमें प्रकाशित समाचारोंके अनुसार सप्रमाण, सोपपत्तिक, साधार, सशास्त्र व सयुक्तिक गालिप्रदान द्वारा उभय स्वामियोंके भाषणोंका खंडन किया। अन्तमें बालकमंडली करतलध्वनि करती हुई अपने घर सिधारी। इसके अतिरिक्त श्रीयुत गोविन्द विष्णुदेवजीने ४५ प्रश्न छपवाकर सर्वसाधारणमें बांटे जिनका उत्तर स्वामीजीने निम्नउद्धृत भूमिकासहित सयाजीविजयके दो तीन अंकोंमें प्रकाशित करा दियेः—

"विदित हो कि गोविन्द विष्णुदेव नामक पुरुषने अपनी विलक्षणबुद्धिका परिचय देनेके लिये ४५ प्रश्न छपाकर लोगोंमें बांटे, और हमकोभी उसकी प्रति दी। यद्यपि

एक विद्वान्के कथनानुसार इन प्रश्नोंका उत्तर न देनाही उत्तर है परन्तु कितनेक साधारण बुद्धिके भोले लोगोंको कोई पुरुष वहका सकता है, कि इन प्रश्नोंका उत्तर कोई नहीं दे सकता है, इस लिये जो कुछ हम कहते हैं वही सत्य है इत्यादि बातोंके मिथ्या भ्रमजालमें पड़कर सद्वैदिकधर्मसे विमुख न हो जावें, एवं प्रश्नकर्ताकोभी उत्तर न मिलनेसे कहीं वेदोंके विषयमें अधिक संदेह होकर, वेदसिद्धान्तका परित्याग करके "नास्तिको वेदनिन्दकः" नास्तिकताके नरकमें न चढ जावे; क्योंकि कोईभी वैदिक धर्मानुयायी वेदमतको मानकर वेदोंके विषयमें ऐसे प्रश्न नहीं कर सकता। परन्तु आश्चर्य तो इस बातका है कि प्रश्नकर्ताने वेदशास्त्र पढा नहीं व सनातन आर्य्यधर्मका निश्चय किया नहीं। और अपने आपको सनातनआर्य्यधर्मी लिख मारा। इतनाही नहीं किन्तु सबसे अधिक खेद तो इस बातका है कि प्रश्नकर्ता सनातन आर्यधर्मके ऊपर सन्देहभी करता जांय। आर्यधर्मके विरोधीभी बनता जाय और अपने आपको सनातनआर्यधर्मीभी लिखते जाय। क्या खूब! इसकाही नाम वकालत और बुद्धिमत्ता है! अस्तु। इन सब प्रश्नोंका समावेश केवल पांचसात प्रश्नोंमें होसकता है परन्तु पुनरुक्ति दूषणादि अनेक दोषदूषित प्रश्न करनेकी ऐसी विचित्र शैली है कि जिसको देखकर विद्वानोंको आश्चर्य हो। इसमें तो सन्देहही क्या परन्तु पाठशालाओंके विज्ञ विद्यार्थियोंकोभी विस्मय होता है, हम प्रश्नकर्ताको सचेत करते हैं कि प्रथम प्रश्न करनेकी रीति किसी बुद्धिमान् विद्वान्से सीखकर ऐसे कार्यमें प्रवृत्त होनेका श्रम करे। क्योंकि इससे विपरीत करनेसे प्रश्नकर्ताकी हानि होती है, सो हम यहांपर यह वार्ता प्रश्नकर्ताको सूचित कर देते हैं कि प्रश्न दो प्रकारसे किये जाते हैं। एक तो जिज्ञासु अर्थात् शिष्य बनकर और दूसरे प्रतिपक्षी बन कर। इन दोनोंमेंसे जो प्रश्न किये गये हैं वे जिज्ञासुपनके तो नहीं हैं, किन्तु पूर्वपक्षीपनेके हैं। जब पूर्वपक्षी बन कर आपने प्रश्न किये हैं तो प्रश्न करनेके पूर्व आपको समुचित था कि आप अपना स्वमत स्थिर करके स्वमतपोषक प्रमाणादिकोंका उल्लेख करते; क्योंकि न्यायशास्त्रमें गौतम महर्षिने प्रतिपादन किया है कि "स्वपक्षस्थापनाहीनो वितण्डा" अर्थात् अपने मतको स्थिर न करके बाद करनेको वितण्डा कहते हैं। और वितण्डावाद मूर्खोंका होता है न कि धार्मिक विद्वानोंका। यदि प्रश्नकर्ता कहे कि मैंने अपनी सही–हस्ताक्षरों–में सनातनआर्य्यधर्मी लिखी है अतएव मेरे सिद्धान्तको तुम जान सकते हो, तो इसका उत्तर यह है कि शैव, शाक्त, गाणपत्य, वैष्णव, अद्वैत, द्वैताद्वैत, विशिष्टअद्वैत, शुद्धाद्वैतादि मतावलम्बी सभी अपने आपको सनातन आर्य्यधर्मी कहते हैं। इस लिये उक्त मतोंमेंसे वा अन्यान्य हिन्दुमतोंमेंसे किस मतको मानते हो! जिस मतको मानते हो उसका नाम, 'स्वतः परतः प्रमाण' भेदसे स्वाभिमत सब ग्रन्थों व आचार्य्योंका नाम लिखो। जिसका नाम न लिखोगे वे सब अप्रमाणिक समझे जायंगे। हमारे मतका ज्ञान तो आपको प्रथमसेही है, जिसका हवाला आपने प्रश्न

४५ में दिया है । लेखविस्तारभयसे प्रश्नोंके उत्तर बहुत संक्षेपरूपसे दिये हैं तथा जो २ विषय यहांपर लिखना अति आवश्यक था वहभी लेखविस्तारभयसे नहीं लिखा जा सकता । हम अपने प्रिय प्रश्नकर्तासे अन्तिम यह निवेदन करते हैं कि आप फिर प्रश्नादि करनेमें प्रवृत्त होवें तो शास्त्ररीत्यानुसार नियमपूर्वक प्रश्न करें । अन्यथा जैसे आपने ऊटपटांग प्रश्न लिख मारे हैं वैसेहीको जैसा देव वैसा पूजारी उत्तर देवेगा। इत्यलम् किं ब्रह्मता ब्रह्महेषु ।

ह:— विश्वेश्वरानन्द.
नित्यानन्द.

पाठकोंके विनोद और प्रश्नोंका स्वरूप जाननेके लिये हम केवल प्रश्न उत्तरोंसहित यहां उद्धृत करते हैं ।

(प्र० १) चारों वेद कौनसे कालमें प्रकट हुए ? वेदोंका काल निर्णयके लिये जितने आधार होवें वे सब नमूद किये जाँय। और बरसोंकी संख्या कही जाय ?

(उ० १) वेद अपौरुषेय अनाद्यनन्त हैं । इनका प्रादुर्भाव सृष्टिके आदिमें हुआ। इसके यथार्थ ज्ञान संपादनके लिये श्रीस्वामी दयानंदसरस्वतीकृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पूर्वमीमांसा अध्याय १ मनुस्मृति आदि आर्य ग्रन्थोंको देखो ।

(प्र० २) प्रथम वेद प्रकट हुए वे कौनसी भाषामें ?

(उ० २) जिस भाषामें अब हैं उस भाषामें वेदोंका प्रादुर्भाव हुआ ।

(प्र० ३) प्रथम ध्वनिरूप याने मुखपाठसे वेदोंकी प्रवृत्ति हुई; अगर तो चिह्नरूप या लिपि (लेखन) पद्धतिसे प्रवृत्ति हुई ?

(उ० ३) वर्णात्मक शब्दरूपसे ।

(प्र० ४) लेखनपद्धति कौनसे कालमें प्रचलित हुई ?

(उ० ४) सतयुगमें ।

(प्र० ५) इतिहासदृष्टिसे या अन्यप्रमाणोंसे; ध्वनिरूप भाषाकी प्रवृत्ति प्राथमिक है या चिह्नरूप लिपिकी ?

(उ० ५) प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे देखो, प्रथम ध्वनिरूप शब्दकी प्रवृत्ति होती है ।

(प्र० ६) दस अवतारोंका इतिहास अर्थात् पुराणोंको आप मानते हैं या नहीं ?

(उ० ६) मिथ्यापुराणोंको नहीं ।

(प्र० ७) पुराणकालकी मर्यादा और वर्षसंख्या कह सकोगे ?
(उ० ७) हां।

इन ४५ प्रश्नोंके उत्तर प्रकाशित होनेपर पौराणिकमण्डलमें शान्ति हो गई । फिर कोई सन्मुख आनेका साहस नहीं कर सका । बडौदेसे स्वामीजी बम्बई आगये। और अनुमान दो ढाई महीनोंतक ठहरे। स्वामीजीने इसवार जिस उत्साहसे मुम्बई नगरमें प्रचार किया उसका वृत्तान्त हम अपनी ओरसे कुछ न लिखकर बम्बई प्रान्तके प्रसिद्ध पौराणिक पत्र गुजरातीमें जो स्वामीजीके विषयमें प्रकाशित हुआ उसका भावार्थ यहां देते हैं। अपने ५ अगस्ट १८९४ के अंकमें गुजराती सम्पादकने " स्वामी नित्यानन्दजीके व्याख्यान " शीर्षक लेखमें यह विचार प्रकट किये।

" वर्तमान समयमें मुम्बई नगरी गरज रही है, उत्तर हिन्दुस्थानसे यहां पधारेहुए स्वामी नित्यानन्दजीके भाषणोंसे क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या पारसी, सब आजकाल आश्चर्य्यान्वित हो रहे हैं। और इन स्वामीजीके भाषणको सुननेके लिये मनुष्योंके समूहके समूह आया करते हैं। जिस स्थानपर व्याख्यान होनेकी सूचना होती है वहां समयसे पूर्वही जनसमूह एकत्रित होजाता है। समयपर आनेवाले श्रोताओंको बैठनेके लिये स्थानभी बड़ी कठिनाईसे मिलता है। जनसाधारणकी धार्मिक भाषण सुननेकी ओर इतनी निस्सीम प्रवृत्ति होती देखकर आश्चर्य्य होता है। बहुतसे तो यों कहते हैं कि दस बीस वर्ष पूर्व यदि ऐसे भाषण होते तो कोईभी सुनने नहीं आता परन्तु हँसकर उड़ा देते । यह वृत्ति आज पलटी हुई मालूम पड़ती है जिसका प्रमाण यह है कि धार्मिक व्याख्यान एकपर एक (उपरा चढीसे) होरहे हैं और प्रत्येक भाषणमें लोगोंके ठट्ठके ठठ्ठ आते रहते हैं। धर्मविषयमें लोगोंकी यह रुचि अत्यन्त आनन्द देती है। जनसमाजमें जो यह वेग आया है इसका मुख्य कारण यह है कि धर्मकी ओर लोकरुचि उत्पन्न होगई है। आर्य्यसनातन धर्मके सिद्धान्त क्या हैं, उसमें क्या रहस्य है, बहुतसे आदमी जो यह कहा करते हैं कि ' आर्योंके धर्ममें कुछ नहीं, पोलही पोल है ' यह कथन सत्य है या असत्य? वेद, उपनिषद्, स्मृति, पुराण आदिमें लिखेहुए लेखोंका कितना अंश सत्य है? कितना अंश मानने योग्य है? स्वधर्म हितावह है या परधर्म? इन सब विषयोंमें जनताकी इतनी अभिरुचि हुई है, कि जहांसे उन्हें इस विषयमें कुछभी जानकारी प्राप्त होनेके समाचार मिलते हैं वहां झट दौड़े जाते हैं । यदि ऐसीकी ऐसी रुचि लोगोंकी रही, तो पिछले दिनोंसे जो अनार्य आचार और विचार लोगोंके होगये हैं उनका अन्त हो जायगा। "

इसके आगे सहयोगी स्वामीजीका परिचय देतेहुए लिखता है कि "स्वामीजी यहां अनुमान डेढ माससे पधारेहुए हैं और १५ दिनके अनुमान और ठहरनेका विचार है। इन्होंने स्वतंत्र रीतिसे ८ वीं जुलाईसे व्याख्यान देना आरम्भ किया है । आजतक नीचे लिखे मुजब व्याख्यान हुए हैं:—

संख्या	तारीख.	विषय.	प्रधान.
१	८-७-९४	जीवात्मा	सेठ लक्ष्मीदास खेमजी J. P.
२	१५-७-९४	मनुष्यजन्मकी सफलता	आनरेबल महात्मा जस्टिस महादेव गोविन्द रानडे।
३	२२-७-९४	मानवज्ञान-स्रोत	आन० जवेरीलाल उमियाशंकर याज्ञिक।
४	२८-७-९४	बुद्धिवृद्धि	रा. रा. मनसुखराम सूर्यराम।
५	२९-७-९४	ईश्वरोपासना	सेठ लक्ष्मीदास खेमजी J. P.
६	१-८-९४	एकता	"
७	१-८-९४	खेतीवाडी की उन्नति	सेठ ठाकरसी गंगाराम अगरवाला.

इनके अतिरिक्त आज (५-८-९४) एक * सभामें प्रधानका आसन ग्रहण करके आर्य्यवैद्यकके विषयमें अपने विचार प्रगट करनेवाले हैं। स्वामीजीके चार व्याख्यान फ्रामजी कावसजी इन्स्टीटयूट हालमें, दो श्रीयुत गोकुलदास तेजपाल हाईस्कूलके हालमें और एक भाटिया महाजन हालमें हुए हैं। इनमें चार स्वतंत्र रीतिसे, एक बुद्धिवर्धक सभाकी ओरसे, एक गोपालनसभाकी ओरसे और एक बालखिल्य वंशज्ञानवर्धक सभाकी ओरसे हुआ है। इनके प्रत्येक व्याख्यानमें मुम्बईनगरके अग्रणी पुरुषोंने प्रधानका स्थान स्वीकार किया इससे जानना चाहिये कि स्वामीजीके भाषण साधारण नहीं हैं। परन्तु माननीय हैं। स्वामीजी आर्य-समाजी हैं और उसके उपदेशकोंके समान व्याख्यान देते हैं। इनके विचार परिपक्व हो चुके हैं। कितनीही बातोंमें ये स्वामी स्वामी दयानन्दजीसे मेल खाते हैं और उन्हींके नियमोंके अनुसार बोलते हैं। स्वामीजीके सब भाषण हमने सुने नहीं। परन्तु दो तीन भाषण सुननेका लाभ उठाया है। उससे हमें यह जान पडा कि उपनिषदोंमें सिद्ध कियेहुए, और गीताआदिमें प्रमाणस्वरूप मानेहुए नियमोंसे स्वामीजीके विचार किन्हीं अंशोंमें भिन्न हैं। परन्तु सामान्य बोध मान्य और आदर-णीय है, यह सामान्य बोध वर्तमानमें विह्वल हुए मनुष्यको ग्रहण करने योग्य है।" मुम्बईके दैनिक पत्र प्रभाकर, जामेजमशेद, मुम्बईसमाचार, मुम्बईवैभव और साप्ता-हिक भीमसेन आदि अनेक पत्रोंने स्वामीजीके सचित्र जीवनचरित्र प्रकाशित किये

* यह सभा फ्रामजी कावसजी इन्स्टीटयूटमें हुई और वैद्य मणिशंकर गोविन्दजी व्याख्याता थे।

और उनके व्याख्यानोंका पूर्ण विवरण अपने पत्रोंमें प्रकाशित करते रहे। मुम्बईमें स्वामीजी अगस्तके अन्ततक रहे और उपरि लिखित व्याख्यानोंके अतिरिक्त निम्न व्याख्यान और दिये।

संख्या	तारीख.	विषय.	प्रबंधकर्ता.	स्थान.	प्रधान.
१	९-८-९४	वैश्यके धर्म	वाँवे पीस गुड्स Association	सेठ मूलजी जेठा, कापड मार्केट हाल.	सेठ धर्मसी सुन्दरदासजी
२	१०-८-९४	देशाटन	स्वतंत्र	...	... ...
३	१२-८-९४	वैदिकधर्म	हितेच्छु विद्यार्थी मंडळी	फ्रामजी कावसजी इन्स्टीट्यूट	डाक्टर मोरेश्वर जी. देशमुख,
४	२६-८-९४	संसारसुख साधन	बुद्धिवर्धक सभा	...	सेठ मनसुखराम सूर्य्यरामजी.
५	२५ ८-९४	कृषिकी शिक्षा	...	...	... ...

स्वामीजीके व्याख्यानोंमें मुम्बई नगरके विद्वान् और प्रतिष्ठित मनुष्य बहुत आते थे। मुम्बईसे स्वामीजी हैदराबाद (दक्षिण) की समाजके निमंत्रणपर वहां चले गये।

दक्षिण हैदराबादमें वैदिक धर्मका प्रचार.

हैदराबादमें महर्षि दयानन्दजीके शिष्य प्रज्ञाचक्षु स्वामी गिरानन्दजीके उपदेशोंसे मार्च १८९२ में आर्य्यसमाज स्थापित हुई थी। इस प्रकार जब स्वामीजी वहां गये तो समाजका तीसरा वर्ष चल रहा था। पौराणिक पंडित हरिकेशव पंचपक्षीने "पुरुषोत्तमसमाज" नामक एक सभा आर्य्यसमाजके विरोधमें बना रक्खी थी, जिसका उद्देश्य आर्य्यसमाजरूपी बालकको उसके बालकपनमेंही नाशमें मिला देनेका था। आर्य्यसमाजकी ओरसे पंडित बालकृष्णजी शर्मा अपनी शक्तिअनुसार इसको दृढ बनानेमें प्रयत्नशील थे। एक शास्त्रार्थ भी (१) अद्वैतसिद्धान्त, (२) मृतक श्राद्ध (३) मूर्तिपूजा इन तीन विषयोंपर हो चुका था। यह शास्त्रार्थ अनुमान एक मासतक लेखबद्ध हुआ। आर्य्यसमाजकी ओरसे पंडित बालकृष्णजी शर्मा और पौराणिकोंकी ओरसे ज्योतिषी हरिकेशवजी पंचपक्षी थे। श्रीमान् म० रघुनाथगिरीजी तथा श्रीमान् म० कोलाचलम् नरसिंहरावजी अध्यक्ष थे। शास्त्रार्थ होनेके पश्चात् दोनों अध्यक्षोंने एकमतसे आर्य्यसमाजका विजय सब लोगोंको विदित किया। इसप्रकार आर्य्यसमाजके साथ शास्त्रार्थमें पराजित होकर ज्योतिषी पंचपक्षीजीको अत्यन्त क्रोध आया और उन्होंने उत्तरभारतसे पंडित गोकुलप्रसाद हसजवां नामक पौराणिक पंडितको बुलाया

और उनसे आर्य्यसमाजके सिद्धान्तके विरुद्ध व्याख्यान कराना प्रारम्भ किया । जिस दिन पंडित गोकुलप्रसादजी हैदराबादमें आकर आर्यसमाजके विरुद्ध व्याख्यान देने लगे, उसी दिन आर्य्यसमाजने रजिस्टर्ड पोष्टद्वारा शास्त्रार्थके लिये आह्वान-पत्र उनको भेज दिया; परन्तु उन्होंने उसको नहीं स्वीकारा । इसके पश्चात् राजा शिवराज बहादुरने अपनी डेवढीमें अपनी अध्यक्षतामें "मूर्तिपूजा" इस विषयपर आर्य्यसमाजके पंडित बालकृष्णशर्मा और पौराणिक पंडित गोकुलप्रसाद इन दोनोंमें शास्त्रार्थ करानेके लिये दोनों ओरके पंडितोंको बुलवाके बडी सभा की जिसमें राजासाहबने कहा कि हरएक पंडितको अपना भाषण हरएक बार केवल तीस मिनट कहना होगा । इसपर आर्यसमाजके पंडित बालकृष्णशर्माजीने कहा कि "हमारा सिद्धान्त कहनेके लिये हमको तीस मिनटोंकी आवश्यकता नहीं है; क्योंकि हमारा मन्तव्य यह है कि चारों मूलवेदोंके मंत्रोंमें कहीं भी मूर्तिपूजाका विधान नहीं है, मूर्तिपूजा करना वैदिकधर्मके विरुद्ध है, अतएव प्रतिपक्षीको यह सिद्ध करना होगा कि वेदमें मूर्तिपूजाका विधान है, अर्थात् मूर्तिपूजाविधायक वेदमंत्रोंका प्रमाण प्रतिपक्षीको देना होगा, तदर्थ हम उनको आह्वान करते हैं कि वे अपने मंत्र सभाके सामने रक्खें । इसके अनन्तर पंडित गोकुलप्रसादजी पौराणिक प्रमाणोंको उद्धृत करतेहुए दो घंटोंतक व्याख्यान देते रहे । अध्यक्षकी तीस मिनिटोंकी आज्ञाका उलंघन करके दो घंटोंतक व्याख्यान देकरभी एक वेदमंत्रका मूर्तिपूजा समर्थक प्रमाण न दे सके । इससे सर्व सभाजनोंको विदित हुआ कि आर्य्यसमाजका पक्ष सत्य है । परन्तु पंडित गोकुलप्रसादजीके पास मूर्तिपूजाविधायक एकभी वैदिक प्रमाण नहीं है । इस त्रुटिको देखकर ज्योतिषी पंचपक्षीजीके लोगोंने करतलध्वनिका प्रारम्भ किया और "शेषं कोपेन पूरयेत्" इस वाक्यानुसार आर्य्यसमाजके पंडितको उत्तर देनेके लिये पांच मिनिटभी न दिये, अर्थात् अध्यक्ष महाराजकी आज्ञाकी परवाह न करतेहुए अन्तमें पौराणिकपक्षी लोगोंने गड़बड़ की, और इस प्रकार सभा विसर्जन होगई । इस दुबारा पराजयके कारण पंचपक्षीजी अपने आपेमें नहीं रहे । ज्योतिषी होनेके कारण उनका समागम प्रायः रियासतके अधिकारियोंमेंभी होता रहता था इसका उन्होंने अनुचित लाभ उठाया और आर्य्यसमाजके विरुद्ध यथाशक्ति उत्तेजना फैलाते रहते । इसी अवसरमें स्वामीजी यहां पधारे और ३० से अधिक व्याख्यान दिये ।

(१) ता० ११-९-९४ मंगलवारको श्रीमान् राय बन्सीलाल साहबकी डेवढीमें "मोक्षसाधन" विषयपर अध्यक्षस्थानपर श्रीमान् सरिश्तेदार बिशनलालजी साहब थे । व्याख्यानके अन्तमें बहुतसे लोग कहने लगे कि हम तो सुनते थे कि आर्य्यसमाज-धर्म डुबा रहा है और आर्य्यसमाजके व्याख्यान सुननेसेही मनुष्यका धर्म चला जाता है, परन्तु आर्य्यसमाज तो केवल हमारे धर्मकी स्थापना कर रहा है । हम अभी तक उलटाही सुनते थे, इस व्याख्यानमें प्रायः सब अच्छे २ विद्वान् उपस्थित थे ।

(२) दूसरा व्याख्यान ता० १२--९--९४ बुधवारको " ब्रह्मविद्या " विषयपर सिकन्द्राबादमें वहांके प्रसिद्ध वकील श्रीमान् रामचन्द्र पिल्लेने सार्वजनिक हालमें करवाया। उक्त वकील साहब आर्य्यसमाजी थे । स्वामीजीके इस व्याख्यानमें प्रायः सब सरकारी अधिकारी आये थे। अध्यक्षस्थान श्रीकृष्ण अयंग्गार वकील मद्रास हाईकोर्टने भूषित किया था । व्याख्यानके अन्तमें अध्यक्षसाहबने बडे आवेशसे कहा कि जिन लोगोंने अविद्यावश होकर वैदिक आलंकारिक विद्याको न जाकर वैदिक शब्दोंके गलत मायने किये हैं, उन सब गलत मायनोंको दिखाकर वेदोंका सच्चा अर्थ आजकल आर्य्य समाज मात्र दिखा रहा है। इस कथनपर सब सभासदोंने बडी धूमके साथ तालियोंकी गरजसे अपनी सम्मति प्रकट की। विशेषता एक यह थी कि सभापतिजी पौराणिक पक्षके थे, अन्तमें इन्होंने कहा कि " मैं सुनता था कि हजारोंमें एक पण्डित होता है परन्तु **ब्रह्मचारीजी महाराज सरीखे तो लाखोंमें एक होते हैं**। अब मैं अपने और सब सभासदोंकी ओरसे श्री० ब्रह्मचारीजीसे प्रार्थना करता हूं कि आप यहां जबतक रहें तबतक हम सब लोगोंको वैदिक धर्मोपदेशसे कृतार्थ करते रहें" अध्यक्ष महोदयकी इस प्रार्थनाके अनुसार एक व्याख्यान शनिवार २२-९-९४ को इसी स्थानपर होना निश्चय हुआ ।

(३) तीसरे व्याख्यानका विषय " ऋषियोंका उपदेश " था। यह व्याख्यान बृहस्पतिवार ता० १३-९-९४ को श्रीमान् पापामल चुन्नीलाल सेठके हालमें हुआ। सभापति श्रीमान् पंडित तीर्थरामजी वकील थे। इन्हींके यहां स्वामीजी ठहरे थे ।

(४) ता० १४-९-९४ शुक्रवारको सन्मार्गदर्शक क्लबमें मेडिकल कालेजके विद्यार्थियोंने स्वामीजीका " मनुष्यजन्मकी सार्थकता " इस विषयपर व्याख्यान करवाया । अध्यक्षस्थान श्रीमान् डाक्टर * अघोरनाथ चट्टोपाध्याय साहबने भूषित किया था । व्याख्यानके अन्तमें अध्यक्ष महोदयने कहा कि " आजके व्याख्यानमें श्री० ब्रह्मचारीजी महाराजका ऐसा सारगर्भित कथन था कि जिसको अच्छे प्रकारसे वर्णन करना मुझसे दुस्तर है "। सभा विसर्जन होने पश्चात् कालेजके विद्यार्थियोंने अपने क्लबमें बड़े आदर सत्कारके साथ श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी और स्वामीजीको भोजन करवाके निम्न लिखित मानपत्र दिया:—

श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य आर्यधर्मप्रचारक श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी व श्रीब्रह्मचारी नित्यानन्दजी संप्रति वास्तव्य भागानगर (हैदराबाद) प्रान्त तैलंगण इनकी सेवामें, हम हैदराबाद मैडिकल कालेजके दाक्षिणात्य विद्यार्थी और उनके स्नेही विनती करते हैं कि आपके विषयमें हमारे मनमें स्थित जो पूज्य बुद्धि है, उसके

---

* वे महादेय वर्तमान समयकी कवयित्री यूरोप व आर्यावर्तमें प्रसिद्ध श्रीमती सौ. सरोजिनी बाईके पिता थे ।

व्यक्त करनेका यह सुयोग आया है, तदनुसार हम अत्यन्त नम्रतासे उस पूज्य बुद्धिको प्रकट कर आपको यह मानपत्र समर्पण करते हैं कि—

१ यहां आर्यसमाजकी स्थापना होनेसे आपके दर्शनकी सबको इच्छा थी, वह आपके आगमनसे पूर्ण हुई और इतर प्रान्तोंकी अपेक्षा यद्यपि आपके दर्शनका लाभ हमको पीछेसे हुआ, तथापि आपने अभेददृष्टिसे हमको अन्योंके समानही अपने ज्ञानभंडारका लाभ करा दिया, इस विषयमें हम आपके बहुतही ऋणी हैं।

२ आपकी कृतिसे भारतपुत्रोंकी आध्यात्मिक और आधिभौतिक उन्नतिका उत्कर्ष हो रहा है, यह हम अच्छेप्रकार समझते हैं। और उसके बारेमें हम आपके अत्यन्त कृतज्ञतापूर्वक ऋणी हैं।

३ आर्य्यसमाजकी स्थापना होनेके पश्चात् पंजाब और राजपुताना इनमें कितना प्रगमन हुआ है, यह सब लोग जानते हैं और आगे जब कोई आर्य्यावर्तका इतिहास लिखेगा तब आपकी कृतिका उल्लेख उसमें हुए बिना नहीं रहेगा ऐसी हम सबोंकी पूरी समझ हुई है।

४ हम महाराष्ट्रीय दाक्षिणात्य यद्यपि विशिष्टनामसे आर्य्यसमाजमें दाखिल नहीं हैं, तथापि हम आर्य्यसमाजके होकरके आपकी कृति समझते हैं, और हमारा बर्तावभी आपके कृत्यनुसार होकर किसी प्रकारसे विरोधी नहीं है, और न प्रतिक्रियाभी करता है।

५ हमारी ऐसी पूरी आशा और समझ हुई है कि कालावधिसे सब आर्य्यावर्त आर्य्यसमाजरूपी शान्त और पल्लवयुक्त वृक्षके नीचे राष्ट्रैक्यरूपी मिष्ट फलका स्वाद लेता रहेगा।

६ परन्तु राष्ट्रैक्य होनेके लिये एक लिपि यह अनेक साधनोंमें एक प्रधान साधन है, व बालबोधलिपि स्वच्छ व सुन्दर होनेके कारण आर्य्यसमाजमें प्रचार करनेका आपकी ओरसे प्रयत्न होगा ऐसी हमको पूरी आशा है।

अन्तमें हमलोगोंकी प्रार्थनाको आपने मान देकर सुना, हमारा स्थान और मन पवित्र किया इसलिये हम सब आपके नम्रतापूर्वक ऋणी हैं।

(१) ह० नरहर शिवराम परांजपे.
(२) ह० नरसो रामचन्द्र वैद्य.
(३) ह० प्रह्लाद एकनाथ बाव्रेकर.
(४) ह० लक्ष्मण गोविन्द जोशी.
(५) ह० माधव रामकृष्ण शनवारकर.
(६) ह० चिन्तामन हरी गोखले.
(७) ह० यशवन्त गोविन्द जोशी.
(८) ह० कल्याणराव.
(९) ह० व्यंकटराव.
(१०) ह० रामचन्द्र विष्णु गोरे.
(११) ह० अंबादास गणेश मुशरीफ.
(१२) ह० गंगाधर सखाराम पारखी.

(५) ता० १८-९-९४ मंगलवारको स्वामीजीका पांचवां व्याख्यान " जीवात्मा विषयपर यंगमैन सोसायटीकी ओरसे हुआ। सभापतिके आसनपर बाबू निशिकान्त डाक्टर आफ् फिलासफी भूत पूर्व प्रिन्सिपल गवर्नमेन्ट कालेज हैदराबाद विराजमान थे। इस व्याख्यानमें स्वामीजीने इंग्रेजी तथा संस्कृत साइन्स और फिलासफीसे यह अच्छे प्रकार सिद्ध कर दिखाया कि प्रकृतिजनित जितने पदार्थ हैं उनसे भिन्न जीवात्मा एक नित्य पदार्थ है, और वह एकही अनेक प्रकारके शरीर धारण करके अपने कर्मानुसार सुख दुःख भोगता है.

(६) ता० १९-९-९४ बुधवारको फिर यंगमैन सोसायटी हालमें उक्त सोसाइटीकी ओरसे "मानवकृत्य" विषयपर व्याख्यान हुआ श्रीमान् विष्णु भास्कर बी. ए. एल. एल. बी. वकील हाईकोर्ट आजके दिन सभापति थे। आजके दिन यहांके बडे २ वकील अन्य भी सरकारी बडे २ अधिकारी सभामें विराजमान थे। स्वामीजीकी प्रासंगिक वक्तृतासे लोग बहुत प्रसन्न हुए, इस व्याख्यानमें इतनी भीड़ थी कि बहुतसे अच्छे २ बी. ए. एम्, ए. सरकारी लोग स्थानाभावसे खडे होकरही सुनते थे.

(७) ता० २०-९-९४को सिकंदराबादमें "वर्णाश्रमधर्म" विषयपर व्याख्यान एक बड़े हालमें यहांकी एक सोसाइटीकी ओरसे हुआ। अध्यक्षस्थानको श्रीमान् कृष्ण अयंगार वकील मद्रास हाईकोर्टने सुशोभित किया। आजके दिनभी स्वामीजीने ऐसा युक्तिप्रमाण विभूषित व्याख्यान दिया, कि किसीकोभी बुरा मालूम न हुआ। प्रायः सबोंको, कर्मानुसार वर्णव्यवस्थाकी प्रथाको सराहनाही पड़ा। उक्त व्याख्यानमें एक यूरोपियन लीडर मिस्टर वाटनबर्गभी आये थे, ये हिन्दीभी जानते थे, इन्होंने व्याख्यानके अन्तमें अत्यन्त हर्षित होकर कहा कि " आज जो स्वामीजी महाराजने लेक्चरमें दलीलों और इल्मी किताबोंसे बयान किया है उसपर कोई मज़हबवाला ऐतराज नहीं कर सकता, इसलिये हम सबोंको लेक्चरारसाहबका बड़ी खुशीके साथ शुक्रिया अदा करना चाहिये। "

(८) ता० २१-९-९४ शुक्रवारको आर्य्यसमाजमें " धर्मरक्षा " विषयपर व्याख्यान हुआ। अध्यक्षस्थानपर श्रीमान् डाक्टर श्रीनिवासरावजी विराजमान थे।

(९) ता० २२-९-९४ शनिवारको फिर सिकंदराबाद पीपल्सहालमें " ईश्वर और जगत्से हमारा क्या सम्बन्ध है, " इस विषयपर व्याख्यान हुआ। प्रबन्धकर्ता श्रीमान् रामचन्द्र पिल्ले वकील हाईकोर्ट थे। अध्यक्षपदवीको श्रीमान् कावसजी पारसी वकीलने स्वीकृत किया था। आजके व्याख्यानमें अच्छे २ विद्वान् थे। व्याख्यानके अन्तमें यहांके एक बडे मुसलमान सौदागर सैय्यद जैनुल आबद्दीनने कहा कि स्वामीजीका लेक्चर ऐसा है कि इससे सब मजहबवालोंको इत्तिफाक है और ऐसे लेक्चर सुननेमें कम आते हैं, स्वामीजीका लेकचर इस तरहका है कि इसका सबोंको पाबन्द होना पडेगा और हम सबको स्वामीजीका शुकर अदा करना चाहिये।

(१०) ता० २३--९--९४ को बुलारममें "वेदशास्त्रोंकी हमारे लिये क्या शिक्षा है" इस विषयपर हुआ। आजके दिन श्रीमान् सोहनलालजी सभापति थे।

स्वामीजी हैदराबादमें २--९--९४ को आगये थे। ऊपर विस्तारभय केवल दस व्याख्यानोंकाही संक्षिप्त विवरण दिया गया है, इसी प्रकार शेष २० से अधिक व्याख्यान हैदराबादके भिन्न २ स्थानोंमें प्रतिष्ठित पुरुषोंकी अध्यक्षतामें (जिनमें नवाब जफरजंग बहादुर, नवाब इमदादुल मुल्क, श्रीमान् कृष्णमाचार्य्य वकील, नवाब सैय्यद हुसैन बिलग्रामी अध्यक्ष शिक्षाविभाग आदि गण्यमान पुरुष थे) हुए। इधर पौराणिक पंडितोंकी दशा विचित्र थी, वे दुःखी हृदयसे देखते थे कि उनका फैलाया हुआ जाल छिन्न भिन्न होता जा रहा है, जनता (वह मूर्ख जनता भी जो कि उनके झांसेमें आकर उत्तर भारतके पंडित गोकुलप्रसादजीसे शास्त्रार्थ करते समय 'हा हू' करके आर्य्यसमाजके पंडित बालकृष्णजी शर्माको बोलनेका अवसर दिये बिनाही "सनातनधर्मकी जय" के नारे करती सभास्थानसे उठ खडी हुई थी और थोडा बहुत इन्हें ढाढस बंधाती थी) प्रतिष्ठा नहीं करती। सारांश, उनकी आजीविकामेंभी घुन लगता दिखाई पड़ा। तब वे इस आपत्तिसे छुटकारा पानेके लिये निराश होकर उपाय सोचने लगे। उन्हें और सर्वसाधारणको यह निश्चय होगया कि शास्त्रार्थ करके विजय नहीं पासकते। तब इसके अतिरिक्त कि सीधे मार्गको छोड़कर टेढ़े मार्गसे चलना चाहिये और दूसरा क्या उपाय कर सकते थे, इस प्रकार ज्योतिषी पंचपक्षी आदि लोगोंने शास्त्रार्थ करनेका सीधा मार्ग छोडकर शहरके कोतवाल साहबके पास हस्ताक्षररहित गुप्त पत्र भेजनेका दुस्साहस किया। साथही स्थान २ में "सत्यार्थप्रकाश" लेकर मुसलमानोंको दिखाते फिरते कि इस पुस्तकमें तुम्हारे विरुद्ध लिखा है। पुलिस कमिश्नरने स्वामीजीसे पूछा कि सत्यार्थप्रकाशमें जो कुछ इसलाम और मुहम्मद साहबके विरुद्ध लिखा है, उसके विषयमें आप क्या कहते हैं? स्वामीजीने कहा यदि वह आपको असत्य प्रतीत हो तो आपको अपने मौलवियों द्वारा उसका खंडन करानेका अधिकार है। उस समय हैदराबादके कोतवाल नवाब अकबरजंग बहादुर थे, उन्हें आर्य्य समाजियोंका कुछभी परिचय नहीं था, उनके पास जब विपक्षियोंके पत्र गये जिनमें यह लिखा था कि, "आर्य्यसमाजके व्याख्यानोंसे हिन्दू तथा मुसलमानोंका बहुत अपमान हो रहा है, इसका कुछ प्रतिबंध शीघ्र किया जाय, नहीं तो लोग बहुत बिगड़ेंगे, इ०" कोतवाल साहबने प्रथम म० कामताप्रसादजी और पं० बालकृष्णजी शर्माको और पश्चात् स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी और स्वामीजीको अपने बंगलेपर बुलवाकर सब वृत्तान्त पूछा। इसी अवसरमें आर्य्यसमाजने श्रीमान् रामचन्द्र पिल्ले वकील सिकंदराबाद द्वारा अपना आशय कोतवालसाहबको विदित किया, उनसे सब वृत्तान्त सुनकर कोतवालसाहबको पौराणिकोंकी अर्जियोंकी पोल विदित होगई। अन्तमें कोतवाल

साहबने अपना अभिप्राय प्रकट किया कि " हैदराबादके लोग निरे जाहिल हैं, इस लिये आप रेजीडेन्सीमें रहकर सब जगह व्याख्यान देसकते हैं । इस सम्मतिके अनुसार स्वामीजी रेजीडेन्सीमें आकर रहे, पं० बालकृष्ण शर्मीजी पूर्ववत् सिदियंबर बाजारमें रहते थे । ये तीनों उपदेशक पूर्ववत् वैदिक धर्मका उपदेश करते रहे । जब इस सम्मतिके समाचार श्रीमान् रामचन्द्रम् पिल्ले साहबको मिले तो इन्होंने कोतवाल साहबके उपदेशको धर्मोपदेशकोंके लिये अपमानास्पद समझकर यंग मैन्‌ इम्प्रुवमैन्ट सोसायटीके हालमें एक बड़ी सभा करके अपने व्याख्यानमें " स्वामीजी इच्छानुसार जिधर चाहें उधर रह सकते हैं और प्रचार कर सकते हैं " इत्यादि कहकर कोतवाल साहबके उपदेशका निषेध किया । उन्होंने उस समय यह स्पष्टतापूर्वक कहा कि "लोगोंके स्वास्थ्य और शरीर आदि सम्पत्तिका रक्षण करना पुलिसका काम है न कि अन्यस्थान पर निवास करो ऐसा उपदेश करना" यह सब १३६४ तक हो चुका था । इसके पश्चात् भी स्वामीजीके व्याख्यान पूर्ववत् होते रहे जिनकी साधारण झलक पाठकोंको इसके पूर्व दिखला चुके हैं । हां, पौराणिक गण इस बातमें तो सफल हो गये कि एक दिन जब पं० बालकृष्णजी शहरमें " मूर्तिपूजा " पर व्याख्यान दे चुके थे और श्रोतागण उससे प्रभावित होकर और दो तीन व्याख्यान करानेके विषयमें प्रबन्ध करने पर विचार कर रहे थे कि निज़ाम राज्यकी पुलिसने बिना कोई कारण बतलाये अकस्मात् उन्हें रेलमें बिठाकर नगरके बाहर कर दिया । यह वृत्तान्त सब शहरमें एकदम फैल गया और लोग पुलिसके इस व्यवहारसे चकित हो गये । आर्य्य समाजकी ओरसे इस विषयपर बहुत कुछ आन्दोलन किया गया परन्तु पुलिसकी इस कार्य्यवाहीका लेखबद्ध कारण निज़ामकी सरकारने नहीं दिया । पंडितजीके साथ ऐसा बर्ताव होनेके कारण लोगोंको यह भी शंका हुई कि कहीं स्वामीजीके साथ भी यही बर्ताव न किया जावे परन्तु उनके व्याख्यानोंमें किसी प्रकारकी रोक टोक नहीं हुई और जैसा कि पाठक पढ़ चुके हैं स्वामीजी अपना मिशन अदम्य उत्साह और गम्भीरतासे पूरा करते रहे । पंडित बालकृष्णजीके इस अन्यायपूर्ण निष्कासनके २ दिन पीछे तक स्वामीजीके व्याख्यान होते रहे और अन्तमें आप १७ अक्टूबर १८९४ को सब लोगोंका धन्यवाद लेते हुए बंगलोरकी ओर चले गये । स्वामीजीको पहुंचानेके लिये स्टेशन पर एक हजारसे अधिक आदमी उपस्थित थे जिनमें वे सज्जन भी थे जिन्होंने स्वामीजीके व्याख्यानोंमें अध्यक्षपद ग्रहण किया था ।

स्वामीजीके आनेके पूर्व जो हैदराबाद आर्य्य-समाज, ज्यो० पंचपक्षी और पं० गोकुल प्रसादके व्याख्यानोंसे कुछ दबसा गया प्रतीत होता था वह स्वामीजीके पधारते समय इतना बल पकड़ गया कि जनता **आर्य्यसमाजके प्रचारकको विदा करनेके लिये एक हज़ारसे अधिक संख्यामें आई** । हैदराबादसे प्रस्थान करनेके पूर्व स्वामीजीने महात्मा रानडे महोदयको एक पत्र लिखा

जिसमें उन्होंने अपना विचार मद्रास प्रान्तमें भ्रमण करनेका प्रकट किया । स्वामीजी मद्रास प्रान्तमें किसीसे परिचित नहीं थे अतः रानडे महोदयसे यह भी इच्छा प्रकट की कि वे अपने मित्रोंके नाम स्वामाजीके विषयमें परिचयपत्र भेज दें। हैदराबादसे प्रस्थान करनेके पीछे लाहोरके मित्रविलास आदि पौराणिक पत्रोंने स्वामीजीके विषयमें यह सम्वाद प्रकाशित किया कि निजामराज्यकी पुलिसने उन्हें राजद्रोही समझकर हैदराबाद राज्यसे निकाल दिया है, जिसका खण्डन आर्य्यवर्तादि आर्य्यसमाजिक पत्रोंने यथोचित रीतिसे करादिया । ता. २०-१०-९४ को स्वामीजी बंगलोर पहुंचे और धर्मशालामें ठहरे, स्वामीजीका यहांपर किसीसे परिचय नहीं था अतः श्रीमान् रानडे महोदयके परिचय पत्रोंकी प्रतीक्षा कररहे थे । इसी बीचमें स्वामीजीको पता लगा कि यहां पर कुछ सज्जन आर्य्य सामाजिक विचारोंके हैं । यहां स्वामीजीका परिचय मिस्टर गणेश सिंहजी रिटायर्ड डिपटी कलेक्टरसे होगया । और उन्होंने स्वामीजीको अपने निवासस्थान बंगलोर छावनी में ठहराया । स्वामीजीका पत्र पढ़कर श्रीमान् रानडे महोदयने अपने बंगलोर निवासी मित्रोंको स्वामीजीके आतिथ्य और व्याख्यानोंका प्रबन्ध करनेके लिये लिखा । और स्वामीजीसे इच्छा प्रकट की कि अब आप मद्रास प्रान्तमें पंहुच गये हैं अतः वहांसे लौटनेकी जल्दी नहीं करें । इस अवसरपर रानडे महोदयने जो उत्तर स्वामीजीके पत्रका दिया था उसकी एक प्रति लिपि यहां दी जाती है:—

Cumbala Hill, Bombay.
16th October, 1894.

Reverend Sirs,

As desired in your letter received today, I send herewith a general letter of introduction which you may show to the gentlemen named below whom you should make a point of seeing as you proceed place to place now that you are in the Madras presidency do not be in a hurry to return soon, but try to see as many places on that side as you can conveniently visit. A general introduction of the sort appeared to me to be more convenient than particular letters to the gentlemen named whom you may or may not find when you visit their places.

The names of the gentlemen whom I wish you to see are:—

(1) T. Ramchandra Iyre, Second Judge chief Court, Bangalore.
(2) T. Narsingh Iyangar Darbar Bakshi Mysore.
(3) Devan Bahadur R. Raghunath Rao, Kumbhkonum.
(4) The Honourable Rai Bahadur Sabhapati Mudliar, Belari.
(5) Mr. G. Subhramani Iyre, Editor "Hindu."
(6) The Honourable Subrahmanya Iyre, pleader, High Court Madras.

(7) The Honourable Shanker Nair, Pleader High Court, Madras.
(8) Mr. Balwant Rao Sahasrabudhe, Military Finance Superintendent, Triplicane.
(9) Mr. Vijayaragho Charloo, Pleader District Court, Salum.

The other names you can pick up from the gentelemen named above.

Yours Truly,
Sd. M. G. Ranade.

सारांश.

कम्बालाहिल बम्बई १६ अक्टूबर १८९४.

पूज्य महानुभावो,

जैसी कि आजके मिले हुए आपके पत्रमें इच्छा प्रकट की गई है, मैं इस पत्रके साथ एक सार्वजनिक परिचयपत्र भेजता हूं। इस पत्रको आप ज्यों ज्यों एक स्थानसे दूसरे स्थानको पधारें निम्नलिखित सज्जनोंको दिखला दें। अब जब कि आप मद्रास प्रान्तमें पहुंच गये हैं अतः वहांसे लौटनेकी जल्दी न करें। परन्तु जितने स्थानोंमें आप सुभीते से जा सकें जानेका उद्योग करें। विशेष पत्र लिखनेके स्थानमें एक सार्वजनिक परिचय पत्र (जैसा कि भेजा जाता है) मुझे सुविधाजनक प्रतीत हुआ, क्यों कि जिन सज्जनोंके नाम पत्र लिखा जावे वे जब आप उनके स्थान पर पधारें मिलें या न मिलें।

उन सज्जनोंके नाम जिनसे मेरी इच्छा है कि आप मिलें ये हैं:—

इन सज्जनोंसे और भी सज्जनोंके नाम आप पूछलें परिचय पत्रकी नकल यह है:—

भवदीय,
माधव गोविन्द रानडे

Cumbala Hill, Bombay.
16th October, 1894.

Dear Sir,

I have a great pleasure in introducing Brahmachari Nityanand and swami Veshveshavaranand who are gifted preachers of the Doctrines of Arya samaj. This movement as you know was founded by Pandit Dayanand Sarasvati about twenty years ago and it has secured a very respectable footing in Northern India especially in the Punjab where the Arya Samajes number hundred and fifty and have the followers of very earnest men numbering a thousand. Unfortunately Dayanand Sarasvati died too early about ten years ago, before his work was completed. A number of his disciples have taken upon themselves to

complete the work he had commenced and among these Brahmachari Nityanand and Swami Vishveshavaranand are certainly most gifted. They are both good Sanskrit Scholars and Nityanand knows English also.

As the Madras Presidency has not been visited by the Arya Samaj preachers I suggested to them that they should visit those parts and I am glad to see that they have been able to find time to visit Banglore. They proposed to go to Mysore and further on to Madras. They can only speak Hindi to large audiences but their Hindi eloquence is of a very high order. I am quite sure they will make themselves intelligible to the educated classes and you will find in them very effective preachers of the true Aryan religion. As they are unacquainted with friends there, I have ventured to furnish them with the general introduction. I hope that their mission will be, with your help, successful.

Yours Truly,

Sd. M. G. Ranade.

अनुवाद.

कम्बालाहिल, बम्बई.

१६ अक्टूबर, १८९४.

प्रिय महाशय,

ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी और स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी का (जो आर्य्य समाजके सिद्धान्तोंके प्रशंसनीय उपदेशक हैं) आपको परिचय देते हुए बड़ी प्रसन्नता होती है। यह संस्था (अर्थात् आर्य्य समाज) सम्भवतया आपको विदित होगा, पंडित दयानन्द सरस्वतीजी द्वारा अनुमान २० वर्ष पहिले स्थापित की गई थी । और उत्तर भारतमें (विशेष कर पंजाबमें जहां आर्य्य समाजोंकी संख्या डेढ़ सौ है और एक हजार उत्साही अनुयायी हो गये हैं) इस संस्थाने प्रतिष्ठित दृढ़ स्थान प्राप्त कर लिया है । दुर्भाग्यसे अनुमानतः दश वर्ष पहले दयानन्द सरस्वती अपना कार्य्य पूर्ण किये बिनाही परलोकको प्रयाण कर गये । उनके कुछ शिष्य और अनुयायियोंने उनके प्रारम्भ किये हुए कार्य्यको पूरा करनेका भार अपने ऊपर लिया है, और उनमें ब्रह्मचारी नित्यानन्द और स्वामी विश्वेश्वरानन्द निश्चय ही सबसे अधिक योग्य हैं। वे दोनोंही संस्कृतके अच्छे विद्वान् हैं और नित्यानन्द अंग्रेजी भी जानते हैं, क्योंकि मद्रास प्रान्तमें आर्य्य समाजके उपदेशकोंका दौरा नहीं हुआ है। मैंने उनसे प्रस्ताव किया कि वे इस प्रान्तमें भ्रमण करें और मुझे प्रसन्नता है कि उन्होंने बंगलोर जानेके लिये समय निकाला। उनका विचार माईसोर और उससे

आगे मद्रास जानेका है, अधिक जनताके सम्मुख वे केवल हिन्दीमें बोल सकते हैं परन्तु उनकी भाषणशक्ति बहुत ऊँची श्रेणीकी है, मुझे पूर्ण निश्चय है कि वे अपना आशय शिक्षित समुदायको समझा सकेंगे और आप उन्हें सच्चे आर्य्यधर्मके अत्यन्त प्रभावशाली उपदेशक जानेंगे। उनकी मित्रमंडली उधर नहीं है, इस लिये मैंने यह सार्वजनिक परिचयपत्र देनेका साहस किया है, मैं आशा करता हूं कि आपकी सहायतासे उनका उद्देश्य सफल होगा।

भवदीय,

माधव गोविन्द रानडे.

रानडे महोदयका पत्र आनेके पश्चात् स्वामीजी जस्टिस रामचन्द्र अय्यर द्वितीय न्यायाधीश चीफ कोर्ट बंगलोर और टी. नरसिंह आयङ्गर दरबारबक्षी माइसोर आदि सज्जनोंसे मिले। इन सज्जनोंकी सम्मतिमें इन प्रान्तोंमें हिन्दी समझनेवाली जनताका अभाव था। अतः उन्हें स्वामीजीके उद्देश्यकी सफलतामें भी सन्देह था। इसी धारणासे इन्होंने स्वामीजीकी सहायता करनेका विशेष उद्योग नहीं किया। परन्तु मिस्टर गणेश सिंह रिटायर्ड डिप्टी केलक्टरके प्रबन्धसे स्वामीजीने बंगलोरके **टाउन हालमें** व्याख्यान देना आरम्भ किया। जनता उन्हें भली प्रकार समझने लगी और परिणाम यह हुआ कि ता० १०-११-८४ को बंगलोरमें **आर्य्यसमाज स्थापित हो गया।**

बंगलोरसे स्वामीजी क्लासपेट गये। यहांका विवरण ता० २२ नवम्बर १८९४ के ईवनिङ्ग मेलसे उद्धृत किया जाता है:—

Dear Sir,

Please vouchsafe a small space in your valuable journal to the following few lines which must assuredly be gratifying to your large number of readers particularly to the lovers of true religion and the true God. The Arya missionaries, Swami Vishveshvaranand saraswati and Sriman Nityanand Brahmachary broke their journey from here (Bangalore) to Mysore at Closepet in compliance with an invitation they had already received from certain gentlemen of that place and delivered a lecture in the evening of the 16th instant. The adience was so much charmed with the lecture that they prayed for another lecture being given the next evening and this was done on the 17th. The popular notion is that the people of this country do not understand the Hindi language but it has been tried and proved that when they were once addressed in that language by the Reverend Brahmcharee they invariably expressed their desire to hear him again and again. The Honourable Justice Ranade of the Bombay High Court, calls these swami

the "gifted preachers" of the vedic religion. It is but too true that they are such for the peculiar eloquence with which they impress their ideas on the minds of their hearers, who professedly feel diffident of their own capacity, to comprehend the oration is really admirable. Their preaching is of such a high order, being fraught with philosophical and scientific investigations and supported by authorities from the eminent workers of the vedic period, that every impartial person blessed with sufficient intellectual power to distinguish good from bad, ought to be convinioed of the propriety of what they say. Bigotry and irreligiousness may gainsay them, but this will only be an outcome of a suppressed conviction. The advent of the swamis to this part of the country appears to be very auspicious in the interest of its people, the gloom encompassiug the latter's conduct in all spiritual, physical and social matters will rapidly vanish under the fusion of Aryan principles which they disseminate broad cast over all the human race; a few of their lectures in the civil and military station, Bangalore had the effect of an Arya Samaj being founded on the 10th instant, as is already known to you and the two lectures delivered in Blosepet as stated above resulted in the establishment of a Samaj on the 17th in that place. I dare say some more samajes will soon spring up in this province if the swamis only take the ttrouble to preach the vedic doctrines by visiting the different Centres of the population. This of course will depend on the inclination of the people to hear them.

Perhaps most of your readers are probably not thoroughly conversant with what is an Arya Samaj and what is the duty enjoined in the Samajist members. For the satisfaction of such of your readers I briefly state that an Arya Samaj is an institution where its members meet to preach Vedic doctrines and discuss them for the mutual benefit, and reciprocally inculcate to one another the practice of virtue in all its phases in order to preserve peace and harmony between man and man during life, and secure salvation for the soul after death. The obligation imposed on the samajists consists in due observation of the 10 Rules.

P. S. Sheshagiri Rao,
Asst. Secy,
Arya Samaj, Bangalore.

19th Nov,. 1894.

भावार्थ ।

प्रिय महाशय,

कृपाकर निम्नलिखित पंक्तियोंको, जो निश्चयही आपके अनेक पाठकोंको (विशेष कर उनको जो सच्चे धर्म और सच्चे ईश्वरके प्रेमी हैं) आनन्ददायक होंगे, स्थान दें। कतिपय सज्जनोंके निमंत्रणानुसार आर्य्यसमाजके उपदेशक स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती और श्रीमान् नित्यानन्दजी ब्रह्मचारी बंगलोरसे महीशूर जाते समय क्लासपेटमें उतरे । और १६-११-९४ को सायंकालके समय एक व्याख्यान दिया। श्रोतागण इतने मोहित हुए कि उन्होंने दूसरे दिन एक व्याख्यान और देनेके लिये प्रार्थना की। अतः १७-११-९४ के सायंकालको स्वामीजीका दूसरा व्याख्यान हुआ। सर्व साधारणका विचार है कि इस देशके मनुष्य हिन्दी भाषा नहीं समझते, परन्तु प्रयोग करनेपर यह सफलतापूर्वक प्रमाणित हो चुका है, कि एक बार जहां ब्रह्मचारीजीने उनके सन्मुख उसी भाषामें (हिन्दी) व्यख्यान दिया कि उन्होंने बारम्बार श्रवण करनेकी उत्कट इच्छा प्रकट की। बम्बई हाईकोर्टके जज माननीय रानडे महोदय की सम्मतिमें ये वैदिक धर्मके "दैव निर्मित उपदेशक" हैं यह अक्षरशः सत्य है। क्यों कि वे अपनी विशेष भाषणशक्तिसे अपने विचार उन श्रोताओंके हृदयमें भी (जो अपनी समझनेकी शक्तिमें अविश्वास प्रकट करते हैं) पूर्णतया बिठा देते हैं। और इस प्रकारसे समझानेकी शक्ति वास्तवमें प्रशंसनीय है। उनके उपदेश तात्विक और वैज्ञानिक अनुसन्धानोंके उदाहरणोंसे पूर्ण होते हैं। और उनके समर्थनमें वैदिक कालके माननीय ग्रन्थोंके प्रमाण दिये जाते हैं। इस लिये वे अत्यन्त उच्च श्रेणीके होते हैं और प्रत्येक निष्पक्ष व्यक्ति जिसमें कि भले और बुरेमें भेद करने योग्य पर्य्याप्त बुद्धि है उनके कथनको पूर्णतया हृदयमें धारण कर लेते हैं। कट्टरपन और अधार्मिकताके विचारवाले पुरुष चाहे विरोध करें। परन्तु यह केवल संकीर्ण विश्वासवालोंकेही मस्तिष्ककी उपज़ होगी। स्वामीजीका देशके इस भागमें पधारना यहां की जनताके लिये बड़ा लाभकारी सिद्ध होगा। इसके (सर्व साधारणके) आत्मिक शारीरिक और सामाजिक जीवनमें जो अन्धकार छाया हुआ है वह आर्य्यधर्मकी शिक्षाके कारण (जो मनुष्यमात्रके लिये देते हैं) नाश होजायगा । बंगलोरमें उनके थोड़ेसे व्याख्यानोंके प्रभावसे गत १२ नवम्बर १८९४ को आर्य्यसमाज स्थापित होगया और क्लासपेटमें केवल दोही व्याख्यानोंसे (जिनका वर्णन ऊपर आ चुका है) १७-११-९४ को आर्य्यसमाज खुल गया। यदि स्वामीजी इस प्रान्तके भिन्न भिन्न स्थानोंमें भ्रमण करनेका कष्ट स्वीकार करें तो मैं साहसपूर्वक कह सकता हूं कि शीघ्रही और भी बहुतसी आर्य्यसमाजें स्थापित हो जायँगी। अवश्यही जनताकी रुचि इस ओर होना आवश्यक है। सम्भवतया आपके बहुतसे पाठक आर्य्यसमाज और उसके सभासदोंके कर्तव्योंसे परिचित नहीं होंगे उनके सन्तोषके लिये संक्षेपमें यह बतला देना चाहता हूं कि आर्य्यसमाज वह संस्थ

है जहां उसके सभासद वैदिक सिद्धान्तोंका प्रचार करते हैं, अपना ज्ञान बढानेके लिये वैदिक सिद्धान्तोंपर विचार और वादानुवाद करते हैं, और इस जीवनमें मनुष्यमात्रमें शान्ति ओर सुखका राज्य हो, और मृत्युके पश्चात् मुक्ति मिले इस उद्देश्यसे एक दूसरे की सहायता करते हुए सदाचारका जीवन व्यतीत करते हैं । प्रत्येक समाजीको प्रतिज्ञा करनी पड़ती है कि वह दश नियमोंका पालन करेगा
१९-११-१८९४ पी. एस. शेषगिरिराव उपमंत्री आर्य्यसमाज, बंगलोर. क्रास-पेटसे स्वामीजी १८-११-९४ को माईसोर पहुँच गये । और श्रीयुत वेंकट कृष्ण ऐय्या हैडमास्टर मरीमल अप्पा हाईस्कूलके प्रवन्धसे एक बड़ी उत्तम धर्मशालामें नगरके बाहर ठहरे । इसी धर्मशालामें एक असिस्टेण्ट इन्जीनियर साहब भी रहते थे। आपने अत्यन्त आग्रह करके स्वामीजीके भोजनका प्रबन्ध अपने ऊपर लिया । **माई-सोरमें** स्वामीजीका पहला व्याख्यान श्रीमान् वेंकटकृष्णऐय्याजीके ही प्रबन्धसे उन्हींके **हाईस्कूल**में हुआ; उसको सुनकर उपस्थित जनताकी सम्मति हुई कि स्वामी-जीके व्याख्यानोंका प्रवन्ध यहां के सुप्रसिद्ध रंगाचार्लू टाउन हालमें होना चाहिये। इसी प्रबन्धके अनुसार दूसरे दिनसे स्वामीजीके व्याख्यान उक्त हालमें होने लगे । इन व्याख्यानोंके बारेमें ता. २६ नवम्बरका माईसोर हेरल्ड लिखता है " The Arya samaj priests who arrived on the 18th have had a very successful " compaign " in Mysore. Sri Swamy Nityanand delivered a series of public lectures in the town hall in all of which, except perhaps in the first, the huge hall was fully packed from end to end a thing quite unprecedented in Mysore " अर्थात् आर्यसमाज के पुरोहित जो यहां १८ नवम्बरको पधारे अपने उद्देशमें बहुत सफल हो चुके हैं। श्रीस्वामी नित्यानन्दजीने यहांके टाउनहालमें व्याख्यानोंका क्रम जारी कर दिया है, व्याख्यानके समय यह सुविशाल " हाल " (सम्भवतया पहले व्याख्यानेको छोड़कर) एक छोरसे दूसरे छोर तक पूरा भर जाता था। यह घटना माईसोरमें अभूतपूर्व है। मद्रासके हिन्दूपत्रके ३०$\frac{११}{४}$ के अंकमें स्वामीजीके व्याख्यानों ओर माईसोरमें पधारनेके बारेमें एक बड़ा लम्वा नोट निकला जिसका सारांश नीचे दिया जाता है:—

" स्वामी नित्यानंद और स्वामी विश्वेश्वरानन्द आजकल माईसोरमें हैं, दोनों स्वामी हिन्दूधर्मग्रन्थोंमें पूर्णतया योग्य हैं । वेदवेदांग और स्मृतियां इनको पूर्णतया विदित हैं। दर्शन, पुराण और इतिहास ग्रन्थोंका उन्हें असाधारण ज्ञान है, रंगाचार्लू स्मारक भवनमें उनका व्याख्यान " मनुष्यके कर्तव्य " विषयपर हुआ, उनका एक व्याख्यान ईश्वराराधन विषयपर हुआ । "मनुष्यके कतर्व्य विषयवाला व्याख्यान अत्यन्त प्रभावशाली हुआ, साधारण विद्यार्थीभी उसकी प्रशंसा करतेथे। यह व्याख्यान दो घंटोंसे अधिक समयतक होता रहा, और बीच२में हर्ष और करतलध्वनि होती रहती थी

व्याख्यानकी समाप्तिपर श्रीयुत शामराव M. A. ने (जो इस सभाके सभापति थे) व्याख्याताको धन्यवाद दिया और दूसरे दिनके व्याख्यानमें समयसे पूर्व आनेकी इच्छा करती हुई श्रोतृमंडली अपने २ घर गई।"

माईसोरमें स्वामीजीके व्याख्यानोंमें इतनी उपस्थिति होती थी कि हालके ऊपरके बरामदे और खिड़कियों तकमें आदमी जा बैठते थे फिर भी सैकड़ोंको निराश होकर लौट जाना पड़ताथा। अभी स्वामीजीको व्याख्यान देते हुए पूरा एक सप्ताह भी नहीं होने पाया था कि माइसोर नगरमें इस बातका आन्दोलन होने लगा, कि, ऐसे विद्वान्, उदार, और Reasonable संन्यासियोंके व्याख्यानोंसे राज्यके सर्वस्व महाराजाको अवश्य लाभ उठाना चाहिये। क्यों कि माइसोर राज्यमें केवल महाराजाही थे जो स्वामीजीके व्याख्यानोंमें उपस्थित नहीं हुएथे। अन्यथा दीवान, जज, और राज्यके अधिकारियोंसे लेकर व्यापारी, वकील, जागीरदार और साधारण श्रेणीके सब मनुष्य स्वामीजीके व्याख्यानोंमें अत्यन्त उत्साह और प्रीतिसे पधारतेथे। व्याख्यानोंके समय अध्यक्षका स्थान दीवान, एडवेकिट, हेडमास्टर, न्यायाधीश आदि प्रसिद्ध व्यक्ति ग्रहण करते थे। प्रजाके आन्दोलनने बल पाया अन्तमें राज्यके advocate और नगरके प्रतिष्ठित सज्जनोंने मिलकर उक्त आशयका एक सम्मिलित प्रार्थनापत्र महाराजाकी सेवामें भेजा। जिसमें स्वामीजीके गुणोंका विशेष रूपसे वर्णन किया गया था, और महाराजा साहबसे प्रार्थना की गई थी कि आप इन दोनों आर्य्य संन्यासियोंसे अवश्य मिलें। इस प्रार्थनापत्रके पहुंचतेही महाराजा साहबने स्वामीजीको बुलवा भेजा। इस प्रकार ता. २८ नवम्बर १८९४ को स्वामीजी महाराजासाहब (माइसोरसे मिलनेके लिये गये। महाराजासाहबसे स्वामीजीकी इस प्रथम भेटका वृत्तान्त अत्यन्त संक्षिप्त रूपमें ता. ५ दिसम्बर १८९४ के हिन्दूपत्रमें प्रकाशित हुआथा। वह नीचे दिया जाता है:—

"Swamy Nityanand Brahmcharee has for the last two weeks been delivering a course of lectures on different subjects of religious and social intterest. The Dewan and almost all the high officers of the state together with all the leading citizens, showed a great appreciation of the lectures delivered. The Swamy possesses a rare and charming eloquence together with a fund of inexhaustible information. These gifts have made the Swamy an object of great esteem and veneration in Mysore. He had an interview with H. H. the Maharaja. The Swamy when ushered into the presence of H. H. the Maharaja, told him that it gave him the greatest pleasure to have the honour of an interview with His Highness. He told him that while he was in Northern India he used to hear of the enlightened, constitutional and progressive rule of Mysore. He very much wished to pay a visit to this province. He was glad that he not only

had the object fulfilled but was glad to find that all that he hap heard of the administration of Mysore was founded on truth. He congratulated the Maharaja upon the progress and spirit of reform that characterised his rule all round. His Highness the Maharaja thanked the Swamies for their appreciation and for their kindly paying a visit to Mysore. His Highness told the Swamies that so far as administrative matters were concerned he had nothing to regret. He was however sorry, that in matters spiritual he could not with confidence say that everything was quite satisfactory. He was of opinion that a few preachers of the stamp of the Swamy would contribute greatly to the social and moral elevation of his people. His Highness added that he would extend any encouragement if an attempt was made to teach the general principles of all religions on an unsectarian basis. The Swamy thereupon proposed the establishment of a Darma Vardhini Samaj in Mysore and asked the Maharaja to become its patron. The Maharaja not only readily agreed to comply with the request, but also promised to render him any help necessary to the advancement of the Samaj."

अर्थात् स्वामी नित्यानन्द ब्रह्मचारी गत दो सप्ताहसे धार्मिक और सामाजिक भिन्न २ विषयोंपर व्याख्यान दे रहे हैं। राज्यके दीवान और अन्य बडे २ अधिकारी नगरके नेता और सर्व साधारणने इनकी अत्यन्त प्रशंसा की है। स्वामीजीकी भाषण-शक्ति चमत्कारिक और असाधारण है, और उनके ज्ञानका विस्तार अनन्त है। इन गुणोंसे स्वामीजीने माइसोरमें महान् प्रतिष्ठा और गौरव प्राप्त किया है। उनकी महाराजासाहबसे भी भेट हुई। जब स्वामीजी महाराजा साहबसे मिले तो उन्होंने महाराजा साहबसे भेट होनेके कारण बडी प्रसन्नता प्रकट की और कहा कि जब वे (स्वामीजी) उत्तरभारतमें थे तो माइसोर राज्यकी उन्नत, उच्च और नियमबद्ध शासन प्रणालीकी चर्चा सुना करते थे। इस प्रान्तमें आनेकी उनकी बडी इच्छी थी। उन्हें इस बातसे अत्यन्त प्रसन्नता है कि यहाँ आनेसे उनकी केवल इच्छाही पूर्ण नहीं हुई परन्तु जो कुछ उन्होंने माइसोरकी शासनप्रणालीके बारेमें सुना था उसे अक्षरशः सत्य पाया। आपने महाराजासाहबको उनके उन्नति और सुधारके विचारोंके लिये जो उनके राज्यमें प्रत्येक स्थानमें दृष्टिगोचर होते थे बधाई दी। महाराजासाहबने स्वामीजीको उनकी इस प्रशंसा और कृपा करके माइसोरमें पधारनेके लिये धन्यवाद दिया। महाराजा साहबने कहा कि "जहांतक शासन सम्बन्धी प्रबन्धका सम्बन्ध है उन्हें किसी प्रकारका शोक प्रकट करनेका कारण नहीं दिखाई पड़ता परन्तु उन्हें दुःख है कि धार्मिक विषयोंके सम्बन्धमें वे विश्वासके साथ यह नहीं कह सकते कि प्रत्येक वस्तु संतोषजनक है" महाराजासाहबने यह भी प्रकट किया कि स्वामीजीकी योग्यताके थोडेसे प्रचारक प्रजाकी

सामाजिक और नैतिक उन्नति करनेमें बड़ी सहायता कर सकते हैं। श्रीमान्ने यह भी कहा कि यदि सर्वसाधारणको मत मतान्तरोंका विचार छोड़ करके सब धर्मोंके साधारण सिद्धान्त सिखानेका उद्योग किया जावे तो वे जो कुछ उत्साह दे सकते हैं देंगे। इसपर स्वामीजीने माईसोरमें एक वैदिकधर्मवर्द्धिनी सभा स्थापित करनेका प्रस्ताव किया और महाराजासाहबसे उसके संरक्षक बननेकी इच्छा प्रकट की। महाराजासाहबने न केवल तत्परतासे उक्त प्रार्थनाको ही स्वीकार किया किन्तु स्वामीजीसे कहा कि इस समाजकी उन्नतिके लिये जो कुछ सहायता वे दे सकते हैं अवश्य देंगे" इस प्रकार प्रथम ही भेटमें महाराजासाहब स्वामीजीसे मिल और वार्तालाप करके अत्यन्त प्रसन्न हुए। इधर रंगाचार्लू स्मारक भवनमें व्याख्यानोंका क्रम निरन्तर जारी था जिनमें महाराजासाहब भी यथावसर पधारा करते थे। जिस वैदिकधर्मवर्धिनी सभाके स्थापित करनेका विचार महाराजासाहबके सन्मुख निश्चय हुआ था उसके संगठन पर विचार करनेके लिये एक विशेष सभा श्रीमान् पंडित अन्नायाजी के यहां संगठित हुई जिसमें श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी और स्वामीजीके अतिरिक्त रावबहादुर ए० नरसिंह अय्यर, सी. बी. शेषगिरि राव, एम. शामराव M.A. एस. मल्हारीराव B. A. ए० महादेव शास्त्री B. A. एस. वेंकटरावशास्त्री B. A. और अनेक सज्जन थे। सर्व सम्मतिसे सायंकालको होनेवाली सभामें उपस्थित करनेके लिए यह कार्य्यक्रम निश्चित किया गया।

"एक सभा जिसका नाम वैदिकधर्मवर्द्धिनी सभा हो स्थापित की जावे, और श्रीमान् महाराजासाहब उसके संरक्षक बनाये जावें। शेष अधिकारी इस प्रकार निश्चित किये गये:—

श्रीमान् सर शेषान्द्रि अय्यर दीवान साहिब महीशूर राज्य-प्रधान.

(१) श्रीमान् रा. राकचन्द्र अय्यर जजचीफ कोर्ट (२) रावबहादुर रा. श्रीनिवास चार्लू अधिष्ठाता मुजरा (३) श्रीमान् रा. नरसिंह ऐअंगार R. A दरबारबक्षी	उपप्रधान
(१) श्रीमान् अनय्या पंडित (२) ,, एम. शामराव M. A.	मंत्री
श्रीमान् अनय्या पंडित	कोषाध्यक्ष
श्रीमान् महादेव शास्त्री B. A.	पुस्तकाध्यक्ष
श्रीमान् वेंकटशास्त्री आदि- अन्य सभामें उपस्थित लौकिक (गृहस्थ) और वैदिक (वेदोंके ज्ञाता) सज्जन जो सभामें सम्मिलित होना स्वीकार करें	सभासद.

सभाका उद्देश्य वेद और शास्त्रपारंगत विद्वानोंकी समिति द्वारा अनुमोदित वैदिक सदाचार का प्रचार और उन्नति करना रक्खा गया ।

निश्चयानुसार यह सब सायंकालको होनेवाली सभामें सुनाया गया और अत्यन्त उत्साह और हर्षसे उक्त सभाकी स्थापना हो गई. सभासदोंकी संख्या सैंकड़ोंसे अधिक हो गई सभाके अधिवेशनोंके लिये महाराजासाहबने निजके उपयोगका स्थान दे दिया था। व्याख्यानोंके अतिरिक्त स्वामीजी प्रथम भेट होनेके पश्चात् प्रायः महाराजा साहब से नित्यही मिला करते थे । स्वामीजीके व्याख्यानोंपर महाराजा साहब इतने मुग्ध हुए कि एक व्याख्यान तो उन्होंने यथावसर सदा सुननेके लिये **फोनोग्राफकी चूड़ीमें भरवा लिया था** । वैदिकधर्म और आर्य्यसमाजकी ओर भी महाराजासाहबकी श्रद्धा अत्यन्त बढ गई । और आपने अपनी उत्तर भारतकी यात्रामें प्रसिद्ध स्थानोंकी आर्य्य-समाजोंके देखनेका विचार स्वामीजीसे प्रकट किया और यथोचित प्रबन्धके लिये स्वामी-जीको कह दिया * । जिससे आर्य जगत्‌की प्रसन्नताका पार न रहा । महाराजासाहबने अपनी यात्रामें प्रयाग और दानापुरकी समाजोंको देखा और उक्त समाजोंसे अभिनन्दन पत्र ग्रहण किये । परन्तु भारत और विशेष कर माईसोरके दुर्भाग्यसे महाराजासाहब जब कलकत्ते पहुंचे तो उन्हें गलरोगने सताया और अन्तमें इसी रोगसे २८–१२–९४ को कलकत्ते हीमें देहत्याग दिया । आर्य्यजगत्‌में जो आशाएं महाराजाके राज्यमें वैदिक धर्मके प्रचार होनेकी लहलहा रही थीं सब पर तुषार पड़ गया । स्वामीजीको भी महाराजाके मृत्युसम्वाद सुनकर अत्यन्त दुःख हुआ परन्तु परमात्माकी इच्छाके आगे किसीका चारा नहीं यह जानकर धैर्य्य धारण कर अपने मिशनकी पूर्तिमें लगे रहे स्वामीजीके भाषण, विद्वत्ता, उदार और सरल स्वभावका महाराजा साहब पर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने अपने महलके प्रबन्धकर्ता (House controller) को आज्ञादी कि "स्वामीजीके सामने सब खजाना खोलदो और जो कुछ वस्तु लेनेकी वे इच्छा प्रकट करें या आज्ञा दें वह उनके स्थानपर भिजवादो ।" प्रबन्धकर्ता स्वामीजीके पास गये और महाराजकी आज्ञा निवेदन की। स्वामीजी महलोंमें आये और महाराजाको उनकी इस असाधारण उदारताके लिये धन्यवाद देकर स्पष्ट शब्दोंमें निवेदन किया कि हम संन्यासी हैं हमें धन नहीं चाहिये **आपने जो वैदिक धर्म स्वीकार किया है हमारा परिश्रम एक इसी कार्य्यसे सफल हुआ** । स्वामीजीके व्याख्यानों-की ख्याति दूर दूर तक फैलगई और श्रीरंगपट्टन आदि आसपासके स्थानोंके अनेक-विद्वान् केवल स्वामीजीके व्याख्यान श्रवण करने माइसोरमें आगये । स्वामीजीके व्याख्यानोंकी रिपोर्ट, उनके जीवनकी विशेष घटनाएं, माइसोर राज्यके प्रतिष्ठित व्यक्तियोंकी भेट, आदि अनेक रूपसे स्वामीजीके बारेमें सामयिक समाचारपत्र

---

* महाराजाके प्रोग्रामके अनुसार स्वामीजीने आर्य्यसमाजोंमें पत्र भी भेज दिये.

यथा माईसोर हेरड, ईवनिङ्ग, मेल, हिन्दू, इंडियन सोशल रिफार्मर आदि पत्रोंमें निकला करतेथे। इंडियन सोशल रिफार्मरने अपनी एक टिप्पणीमें लिखाथा—

"There are Swamies and Swamies, Two gentlemen of that denomination have recently been lecturing in Mysore and so far as we have been able to understand them from the report published in the papers, we think they have one or two things to teach to some other Swamies whom we have heard of."

अर्थात् संन्यासी हैं और सन्यासी हैं। इस संज्ञाके दो सज्जन इस समय माईसोरमें व्याख्यान दे रहे हैं। और जहांतक समाचार पत्रोंमें प्रकाशित समाचरोंसे हम समझ सके हैं हमारा विचार है कि इनके स्वामी नित्यानन्दजी और विश्वेश्वरानन्दजीके पास और स्वामियोंको जिनके बारेमें हम सुनते रहते हैं एक या दो बात लिखानेको है।" स्वामीजीके व्यक्तित्व (Personality) की ओर लक्ष्य करके उक्त पत्र लिखता है:—

"A cowl does not make a monk, nor the Kashaya a Sannyasi Of late we are glad to find, some emminent and learned sannyasis have risen up to justify their state to the world. Although we object to celibacy being preached as the highest ideal of life, we readily grant that provided a man or woman feels drawn to a cause or great principle or work, it is their duty to devote themselves to it soul and body. In their cases complete life lies in a union with their highest yearnings."

अर्थात् लम्बा कुरता पहननेसे कोई, साधु और काषाय पहिननेसे कोई संन्यासी नहीं होता। हमें इस बातकी प्रसन्नता है कि संसारमें अपनी स्थितिको न्याय संगत सिद्ध करनेके लिये कुछ विद्वान् और प्रसिद्ध संन्यासी प्रकट होने लगे हैं। यद्यपि हम "ब्रह्मचर्य व्रतके जीवनका सबसे उच्च उद्देश्य रखना चाहिये" ऐसे उपदेशोंके विरोधी हैं तथापि यदि कोई पुरुष वा स्त्री अपने आपको किसी महान् सिद्धान्त वा कार्य्यकी ओर खिंचता हुवा पावे तो उसका कर्तव्य है कि वह अपना शरीर और आत्मा उस उद्देश्यकी सिद्धिके अर्थ समर्पित करदे। ऐसी दशामें सम्पूर्ण जीवन उस उच्च उद्देशके साथ एक रस होता है" इसी विषय पर अपने अन्य विचार प्रकट करता हुआ उक्त पत्र फिर स्वामीजीके बारेमें लिखता है:—

"Swami Nityanand is not one of those who will shut their eyes to the greatness of other nations and races or to the faults of our own. "No where in the world" he said "do differences of opinion breed such atred of beach other as in India. This is a sign of uncultivated and barbarous age and it is to be deplored that we who have been noted for a spirit of toleration and resignation should

display a spirit of aggressive hostility to one another when nations who some times ago were out and out inferior to us have become our masters, and have begun to set an example of not only emulating but also beating us on our own ground viz., that of pursuing truth by a calm and a dispassionate spirit of inquiry and never hating their opponents and flying away from them, but of mixing with them and learning as much as possible from them. I hope " Continued the Swami " you will cultivate this noble spirit, originally taught by our Rishis, a spirit practically carried out by the founders of different Schools of our philosophy. It is with their spirit that I want every fallen Hindu Aryan to approach the question of marriage in as much as this is the key-stone either of our future greatness or of our extermination." We are happy to be in agreement with every one of the above statements and we should like that some institution should invite the Swamy to lecture in Madras."

अर्थात् स्वामी नित्यानन्द उनमेंसे नहीं है जो कि और जातियोंके महत्वकी ओरसे अपने नेत्र बन्द करलें या अपने दोष न देखें । अपने एक व्याख्यानमें स्वामीजीने कहा " संसार भरमें मतभेदके कारण परस्परमें कहीं भी इतनी घृणा उत्पन्न नहीं होती जितनी भारतवर्षमें । यह असभ्य और बर्वर समयके चिन्ह हैं और यह शोकका विषय है कि जो त्याग और सहनशीलताके लिये प्रसिद्ध हो चुके हैं, वे अब परस्पर इस प्रकार वैरसे वर्तें । विशेष कर जब वे जातियाँ जो कुछ काल पूर्व हमसे अत्यन्त ही नीच थीं हमारी स्वामी बन चुकी हैं । और हमको न केवल प्रतिस्पर्धी बननेकी ही शिक्षा देती हैं किन्तु हमको हमारेही स्थानमें पराजित कर रही हैं । अर्थात् वे सत्यके पीछे शान्तिसे चलती हैं । और खोजके कार्य्यमें इतनी शान्त रहती हैं कि अपने विरोधीसे कभी घृणा और परहेज नहीं करतीं, किन्तु उनमें मिल जाती हैं, और उनसे जितना ज्ञान सम्पादन कर सकती हैं कर लेती हैं । " स्वामीजीने कहा " मुझे आशा है कि तुम भी अपनेमें इस उच्च भावकी वृद्धि करोगे । जिसकी शिक्षा वास्तवमें हमारेही ऋषियोंने दी थी और जिस भावको वर्तावमें भी हमारेही दर्शनकार लाये थे । उन्हींके भाव हैं जिनको मैं चाहता हूं कि प्रत्येक पतित आर्य्य या हिन्दू विवाहके प्रश्नपर विचार करते समय अपने हृदयमें रखे, क्यों कि यह भाव ही वह कुंजी है, जिसके पालनसे हमारी भविष्यत्‌में वृद्धि होगी, और उपेक्षा करनेपर नाश हो जायगा* " हम स्वामीजीके इस कथनसे पूर्णतया सहमत हैं और आशा करते हैं कि मद्रासकी कोई संस्था स्वामीजीको उपदेश देनेके लिये बुलायगी । "

* ये भाव स्वामीजीने अपने " गृहस्थाश्रम " विषयके व्याख्यानके अन्तिम अंशमें प्रकट किये थे ।

इस वर्ष इन्डियन नेशनल कांग्रेसका अधिवेशन मद्रासमें होनेवाला था अतः कांग्रेसके साथ होनेवाली इंडस्ट्रियल कान्फ्रेन्स, सोशल कान्फ्रेन्स आदि सभाएँ भी वहीं थीं। ता० २ दिसम्बर १८९४ को स्वामीजीके व्याख्यानके पीछे श्रीमान् वेंकट कृष्ण अइ-य्याने सामाजिक सभा (Social conference) के उद्देश्योंका वर्णन किया और यह प्रस्ताव किया कि श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी सामाजिक विषयोंमें असाधारण गति रखनेके कारण इस कान्फ्रेन्सके प्रतिनिधि बन कर जानेके लिये विशेष रूपसे योग्य हैं और जनतासे प्रार्थना की कि वे स्वामीजीको अपना प्रतिनिधि चुनें। सबने एक मत होकर इसका समर्थन किया और यह निश्चय हो गया कि स्वामीजी सोशल कान्फ्रेन्समें सारे माईसोर प्रान्तके प्रतिनिधि होकर पधारेंगे। बम्बई आर्य्यसमाजने भी इसके कुछ दिनों पहले अपने नैमित्तिक अधिवेशनमें स्वामीजीकोही प्रतिनिधि चुना था। एक दिन जब स्वामीजी व्याख्यान देकर अपने स्थानको जारहे थे तो एक सद्गृहस्थ पंडितने स्वामीजीकी गाड़ी मार्गमेंही रोकदी और उन्हें अपने घर ले जाकर आतिथ्य सत्कार किया। इनकी स्त्री संस्कृतकी विदुषी थी। उन्होंने स्वामीजीकी प्रशंसामें तत्काल ही निम्न लिखित श्लोक कहेः—

अष्टांगयोगनिरतो यतिसार्वभौमः।
दुर्वादखण्डनविधौ चतुरोयमद्य ॥
यस्मात्समस्तजनदृष्टिपथं जगाम ।
गायन्ति तद्यतिपतेरवदानपद्यं ॥
विमले कमलवनयुते परमो हंसो निवसति हि मानसे।
संप्रति तद्विपरीतं मानसमस्मिन्निवसति तत् "॥
महीशूरपुरे राज्ञी कलाशाला कलार्थिनी।
नृसिंहार्य्यकटाक्षेण जानकीति नमस्यति "॥

इस प्रकार १८ नवम्बर १८९४ से ६ दिसम्बर ९४ तक माइसोरमें राजासे लेकर रङ्क तकके हृदयमें वैदिक धर्मका सन्देश पहुंचाकर स्वामीजीने प्रस्थान किया। स्टेशनपर नगरकी जनता पहुंचानेके लिये आई। उस समय एक अद्भुत दृश्य था। समस्त नगरनिवासी स्वामीजीके प्रस्थानका समय निकट आया जान दुःखी प्रतीत होते थे। नगरके प्रतिष्ठित गृहस्थोंने अनेक प्रकारकी वस्तुएं भेट स्वरूप स्वीकार करनेके लिये स्वामीजीके सम्मुख प्रस्तुत की। परन्तु स्वामीजीने उनके प्रेमका आभार मानते हुए समयोचित उपदेश देकर उन सबको लेना अस्वीकार किया। स्वामीजीके उपदेशसे निरुत्तर होकर अन्तमें सबने प्रार्थनाकी कि " महाराज कुछ रेशमी धोतियां तो आप अवश्य ग्रहण करें और उन्हें ही धारण कियां करें, क्योंकि आप संन्यासी हैं। यदि आप इस प्रान्तमें रेशमी वस्त्र नहीं पहनेंगे तो यहांकी

जनता आपका आदर नहीं करेगी, प्रचारमें बाधा पड़ेगी, और जिस उद्देशकी पूर्तिके लिये आप इतना श्रम उठा रहे, हैं वह पूरा नहीं होगा; सूती वस्त्र पहने हुए आपको जो कोई देखेगा, वह आपको शूद्र समझेगा। विशेषकर ब्राह्मणसमुदाय तो आपको स्पर्श करनेमें भी संकोच करेगा। और इन प्रान्तोंमें ब्राह्मणोंका बल अधिक है। इस लिये अधिक नहीं तो कमसे कम ४ रेशमी धोतियां तो आप अपनेपास अवश्य रक्खें।" स्वामीजीने अपनी स्वभावजन्य सरलतापूर्वक यह कहा कि हमारा उद्देश्यही इस प्रकारकी निस्सार और आडम्बरपूर्ण पोपलीलाके नाश करनेकेका है, इस लिये हमें इन धोतियोंकी आवश्यकता नहीं और धोतियाँ लौट दीं। राजा और प्रजा दोनोंसे सम्मानित होकर स्वामीजी माइसोरसे पधारे। मार्गमें श्रीरङ्गपट्टनमें-ही वहांके डिप्टी कमिश्नर और अन्य सद्गृहस्थोंने इन्हें आग्रहसहित उतार लिया और स्वामीजीको अत्यन्त सत्कारपूर्वक निवासस्थानपर ठहराया। यहाँ भी स्वामीजीके ४ व्याख्यान हुए और परिणाममें समाज स्थापित हो गया। श्रीरङ्गपट्टन ऐतिहासिक स्थान है। हैदर अली और टिपू सुलतान जब मैसूरका शासन करते थे, तब यह उनकी राजधानी था। इसका किला और महल आदि अनेक प्राचीन स्मारक अपनी वर्तमान दशामेंभी दर्शनीय हैं। प्रत्येक यात्री जो दक्षिण भारतकी यात्रा करता है, श्रीरङ्गपट्टन अवश्य आता है और इन स्थानोंको अवश्य देखता है। स्वामीजीने भी इन सब स्थानोंको देखा और भारतके अतीत शिल्पका महत्त्व देखकर जो कुछ विचार उनके हृदयमें उत्पन्न हुए होंगे उनको पाठक स्वयं अनुभव कर सकते हैं। श्रीरङ्ग-पटनसे स्वामीजी बंगलोर आये। यहां बंगलोर नगरके राजकर्मचारियोंने स्वामी-जीको नगरमें निवास करनेके लिये अत्यन्त आग्रह किया; स्वामीजी यद्यपि अपने पूर्वपरिचित मिस्टर गणेशसिंहजी रिटायर्ड डिप्टी कलेक्टरके यहां बंगलोर छावनीमें ठहरनेकी स्वीकृति दे चुके थे, परन्तु नगरनिवासियोंके आग्रहसे नगरमें ठहरे। नगरमें स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रबन्ध एक विशाल स्थानमें किया गया। नगरकी जनता स्वामीजीके दर्शन करने और व्याख्यान सुननेके लिये उमड़ी आती थी और व्याख्यान देनेके विशाल स्थानमें थोड़ी सी भी जगह खाली नहीं रहती थी। श्रीमान् रानडे महोदयके जो मित्र स्वामीजीको हिन्दीमें भाषण करनेके कारण सहायता देनेमें शिथिल थे अब क्लासपेट, माईसोर और श्रीरंगपट्टन आदि स्थानोंमें स्वामीजीकी सफलताके समाचार जानकर स्वामीजीके पूर्ण प्रेमी हो गये। और उनके हृदयपर यह दृढ़तासे अंकित हो गया कि—हिन्दीही एक भाषा है जो भारतभरमें चाहे कोई प्रान्त हो, सरलतापूर्वक सबसे अधिक बोली और समझी जा सकती है। केवल तामिल और कनाड़ी जाननेवाले भी यह कहते सुने गये कि हम स्वामीजीके व्याख्यानोंके सुनने और उनका आशय हृदयङ्गम करनेमें कोई

अड़चन प्रतीत नहीं होती। बहुतसे सज्जन (जो स्वामीजीके प्रथम आगमन समय यह जानकर कि स्वामीजीके व्याख्यान हिन्दीमें होंगे और हम हिन्दी नहीं समझ सकेंगे व्याख्यान सुनने नहीं आये थे) यह कहते थे कि हम नहीं जानते थे कि स्वामीजीकी हिन्दी इतनी सरल है और उसमें संस्कृत शब्दोंका पूर्ण आश्रय लिया जाता है। स्वामीजीके व्याख्यान बड़े प्रभावशाली हुए, और आर्य्यसमाजने अच्छी शक्ति प्राप्त की। यह प्रसिद्ध सत्य है कि ईसाई मिशनरियोंको जितनी सफलता मद्रास प्रान्तमें हुई, उतनी भारतके और किसी प्रान्तमें नहीं हुई है; इसका कारण वहांकी ब्राह्मण जातिका इतर वर्णोंसे कुव्यवहार है। मद्रास प्रान्तमें वैदिक धर्मके प्रचारके लिये आर्य्य जनताका ध्यान आकर्षित करनेके लिये जो लेख स्वामीजीने आषाढ और श्रावण १९६७ वि०के भारतोदयमें प्रकाशित कराया था उसमें मद्रास प्रान्तकी धार्मिक अवस्थाका वर्णन इस प्रकार किया है।

" मद्रास प्रेसीडेन्सीके भिन्न २ प्रान्तोंमें ५ भाषाएं बोली जाती हैं—यथा हैदराबाद राज्यमें व उसके आसपासके बृटिश राज्यमें तिलगु भाषा बोली जाती है, मद्रासके आसपाससे लेकर रामेश्वरतक द्राविडी भाषा [जिसे अरवी (अरबी नहीं) तथा टामिल भी कहते हैं] बोली जाती है, मैसूर प्रान्तमें व उसके निकटवर्ती देशोंमें " कर्णाटक" उर्फ " कनेटी " भाषा बोली जाती है, कुर्ग देशमें " तुलू " कालीकट, कोचीन कन्याकुमारी व ट्रावनकोरके राज्यमें " मलयालम भाषा बोली जाती है। मद्रास प्रेसीडेन्सीकी ये ५ भाषाएं हिन्दी भाषा आदिसे तो सर्वथा पृथक् हैं हीं, परन्तु इन ५ भाषाओंमें परस्पर भी बहुतही भिन्नता है, और इनकी लिपिके अक्षर भी सर्वथाही इन भाषाओंके भिन्न २ हैं। जितना हिन्दीका बंगाला भाषासे, किम्वा पंजाबीसे भेद है उतनाही इन भाषाओंका परस्पर भेद है। अस्तु। इस प्रान्तमें ब्राह्मणही मुख्य हैं, ब्राह्मणेतर वर्ण शूद्र व अतिशूद्रही समझे जाते हैं। क्षत्रिय वैश्य तो नाममात्रकेही माने जाते हैं। इन ब्राह्मणोंमें इतना स्पर्शास्पर्शका रगड़ा चलता है कि इनके भोजन (पाक) को यदि कोई दूसरी जातिका ब्राह्मण वा ब्राह्मणेतर देख लेवे तो बस वह पाक नापाक (अपवित्र) होगया। ऐसा मानकर उस अन्नको फेंक देते हैं। इस मदरासप्रान्तमें तीन प्रकारके ब्राह्मण होते हैं स्मार्त, श्रीवैष्णव, तथा वैष्णव, जो शंकरमतानुयायी हैं उनको स्मार्त कहते हैं और रामानुजमतानुयायीको श्रीवैष्णवतथा मध्वमतावलम्बीको वैष्णव कहते हैं। अनुमानसे इनकी संख्या इस प्रकार है। ६० स्मार्त, ४० श्रीवैष्णव, व २५ वैष्णव। इन तीनों ब्राह्मणोंका परस्पर भोजनव्यवहार भी एक नहीं है, पुनः कन्याव्यवहार तो होनाही क्या था। अस्तु। मलाबार देशके कोचीनके राज्यमें कालडी एक ग्राम है, उसी ग्राममें श्रीआद्य शंकराचार्य उत्पन्न हुए थे, जिस ब्राह्मण वर्णमें श्री शंकराचार्य्य उत्पन्न हुए थे उस जातके ब्राह्मणोंको नम्बूदी ब्राह्मण कहते हैं। ये लोग अब भी संस्कृतके अच्छे पंडित होते हैं। ये ब्राह्मण मलाबार ट्रावनकोर राज्यमेंही रहते हैं। मलाबार देशमें

ब्राह्मण, और कुछ थोड़ेसे महाराजा ट्रावनकोरकी जातिके क्षत्रिय हैं, बाकी नायड़, शूद्र, पिल्ले तथा जो उनसे भी नीच पदके शूद्र समझे जाते हैं वे रहते हैं। नम्बूद्री ब्राह्मणका जो ज्येष्ठ पुत्र होता है, वही अपनी सजातीय ब्राह्मणकुमारीसे विवाह कर सकता है, बाकीके कनिष्ठ ब्राह्मण कुमार अपनी सवर्णासे विवाह नहीं कर सकते; हां ज्येष्ठ ब्राह्मण-कुमार अपनी अनेक सवर्णा कन्याओंसे एकही समयमें विवाह कर सकता है। एक एक नम्बूद्री ब्राह्मणके ज्येष्ठ पुत्रके दस २ बीस २ तक भी स्त्रियां होती हैं, किन्तु प्रथम पुत्रातिरिक्त अन्य सब कनिष्ठ पुत्र शूद्र कन्याओंसेही विवाह कर सकते हैं। शूद्रकन्यासे विवाहकी रीति यह है कि एक ओढनेका वस्त्र शूद्रा कन्याको ब्राह्मणकुमार देकर उसका हाथ पकड लेता है, बस विवाह हो गया। इन नम्बूद्री ब्राह्मणोंकी बड़ी भारी दुर्दशा है, सहस्रावधि ब्राह्मणकुमारिकाएं आजन्म अविवाहितही रहती हैं, और वे बडे यत्नसे परदेमें रक्खी जाती हैं, पर्दा बडा सख्त होता है। इस देशके ब्राह्मण इंग्लिश बहुतही कम पढते हैं, परन्तु संस्कृत पढते हैं। इस देशमें स्त्री केवल गुह्य अङ्गको एक छोटेसे अंगोछे (उपवस्त्र) से ढांक लेती है, बाकी नाभिप्रदेशके ऊपरका सब अङ्ग सब स्त्रियां उघडा खुलाही रखती हैं। इस देशमें एक और विचित्रता है, यदि कोई भी पुरुष किसी भी स्त्री के स्कन्धोंको छोड़कर अन्य किसी भी अस्पर्श्य अंगको स्पर्श करे तो बुरा नहीं माना जाता, परन्तु उसके स्कन्धको सिवाय उसके पतिके और कोई भी नहीं छू सकता, यदि कोई भूलसे भी स्कन्धका स्पर्श कर ले तो लड़ाई हो जाती है। इस मलवार किम्वा मलाबार देशको संस्कृतमें केरल देश कहते हैं। श्री १०८ शङ्कराचार्य्यका जन्म इसी देशमें हुआ था। इस समय श्रीशङ्कराचार्य्यके जन्मस्थानमें वर्तमान शृङ्गेरी मठाधिपति शङ्कराचार्य्यने श्री आद्य शङ्कराचार्य्यकी बड़ी धूमधामसे प्रतिमा स्थापन की है। ५०,००० ब्राह्मण एकत्र हुए थे। १०,००,००० दशलक्ष रुपये भोजनादिमें व्यय हुए थे। इधर पौराणिक व सम्प्रदायी मत-मतान्तरोंका बड़ा जोर है, इसी कारणसे यहां ईसाई बहुत होते हैं। जितने सम्पूर्ण भारतवर्षमें ईसाई हैं करीबन आधे मद्रास प्रान्तमें हैं। भारतके कुल ईसाइयोंका चतुर्थ भाग मलवार देशमेंही है, इसका कारण पौराणिक धर्मही है। इस देशमें अर्थोडाक्सी (orthodoxy) पोपलीलाने ऐसा जबरदस्त कबजाहासिल किया है कि बगैर ईसाई होनेके इससे छुटकारा या मुक्ति नहीं मिल सकती! मारे पोपलीलाके हिन्दू धड़ाधड़ ईसाई होते चले जाते हैं। क्या किसी आर्यधर्माभिमानीका इस ओर ध्यान आकर्षित होगा? आः जिस श्रीशंकराचार्य्यने अखिल भारतवर्षको बौद्ध धर्मसे बचाया, उसी शंकरस्वामीके देशवासी लोग सहस्रावधि प्रतिमास ईसाई होते चले जाते हैं।" इत्यादि, मद्रासहीकी दशाको लक्ष्यमे रखकर स्वामी विवेकानन्दजीने भी अपने एक व्याख्यानमें ये शब्द कहे थे— "उन पुराने विवादोंको, उन पुरानी लडाइयोंको जो व्यर्थ की हैं छोड़ दो, छसौ अथवा सातसौ वर्षोंकी अवनतिके विषयमें खयाल

करो कि वर्षों बड़े आदमी इस बातका ही विवाद करते रहे कि हमको बांये हाथसे जल पीना चाहिये अथवा दाहिने हाथसे हाथ चार बार धोना चाहिये अथवा पांच बार, और हमको पांच बार कुल्ला करना चाहिये अथवा छ बार। उन आदमियोंसे तुम क्या आशा कर सकते हो, जो ऐसे व्यर्थके प्रश्नोंके विचार करनेमें अपना जीवन व्यतीत करते हैं और ऐस प्रश्नों पर विद्वत्तापूर्ण दार्शनिक विचार लिखते हैं हमारे धर्मका रसोईगृहमें परिणत हो जानेका भय है, अब हममेंसे न तो कोई वेदान्ती है, न पौराणिक है, न तान्त्रिक है; हम ठीक (Dont Tonchist) मत छुओ अस्पर्श्य हैं, हमारा धर्म रसोईगृह है। हमारा परमेश्वर रसोईका वर्तन है, और हमारा धर्म "मुझे मत छूओ" "मैं पवित्र हूं" है। यदि यह दशा एक शताब्दितक और रही तो, हममेंसे सब पागलखानेमें होंगें" इत्यादि।

स्वामीजी जब बंगलोर थे तब बहुतसे परियाह (यह मद्रास प्रान्तकी एक अस्पर्श अन्त्यज जाति है। उनके पास आये और कहने लगे कि हम हिन्दू हैं, परन्तु इतर हिन्दू हमसे घृणा करते हैं) इस लिये आप यहां अपने उपदेशोंद्वारा इतर हिन्दुओंको हमारे साथ मनुष्यताका व्यवहार करनेको उद्यत करें, वरना हम ईसाई हो जायंगे। स्वामीजीने इसपर दो तीन व्याख्यान तो जनताको परियाह लोगोंके साथ अच्छा व्यवहार करनेके लिये दिये, जिन्हें सुननेको परियाह लोग भी बराबर आते थे। और चलते समय उन्हीं लोगोंकी एक बड़ी भारी सभा करके उन्हें वैदिक धर्मके सिद्धान्त समझाकर उन्हे बतलाया कि आज कलका हिन्दू समाज भूलमें है। समाजकी भूल धर्मके मथ्थे नहीं मढनी चाहिये। और उन्हें वैदिक-धर्मानुयायी रहनेका उपदेश देते हुए कितनाही संकट पड़े निराश और धैर्यहीन न होनेकी प्रार्थना की। साथही प्रतिज्ञा की कि मद्रासमें सोशल कान्फ्रेन्सके अवसरपर (जहां कि वे मुंबई-समाज और माइसोर राज्यकी ओरसे प्रतिनिधि बनकर जा रहे थे) उनके बारेमें विशेष आन्दोलन करेंगे। स्वामीजीके व्याख्यानका प्रभाव उन लोगोंपर इतना पड़ा कि व्याख्यानकी समाप्तिपर उन सबने यह प्रतिज्ञा की कि वे शरीरमें प्राण रहते कभी भी किसी दशामें हिन्दू जातिरूपी महाशरीरसे पृथक् होकर उसका अङ्गभङ्ग नहीं करेंगें और प्रसन्न चित्त होकर अपने २ परिवारोंमें भी इस निश्चयका प्रचार करते रहेंगे। इस प्रकार १२-१२-९४ से १७-१२-९४ तक बंगलोरमें दुबारा प्रचार करके स्वामीजी मद्रास चले गये। यद्यपि श्रीमान् महात्मा रानडेके परामर्श और माइसोरके अन्य प्रतिष्ठित पुरुषोंके आग्रह और निजके विचारसे भी स्वामीजीकी इच्छा मदुरा, कोचीन, ट्रावनकोर, कुम्भकोनम, त्रिचुनापली, तंजोर आदि स्थानोंमें जाकर प्रचार करनेकी थी और अपने माइसोरनिवासी मित्रोंसे स्वामीजीके आनेके समाचार पाकर उक्त स्थानोंके प्रतिष्ठित पुरुष स्वामीजीको आनेके लिये नित्य आग्रहपूर्ण निमंत्रणपत्र भेजकर प्रार्थनापत्र भेजते रहते थे, परन्तु मद्रासमें सोशल कान्फ्रेन्सका समय निकट देखकर स्वामीजी मद्रासही गये।

और मिस्टर जी० सुब्रह्मण्य अय्यर सम्पादक "हिन्दू" मद्रासके यहां ठहरे। सोशल कानफरेन्सके अधिवेशन होनेतक स्वामीजीने मद्रासमें भिन्न २ स्थानोंपर व्याख्यान देना आरम्भ किया, जिसमें मद्रासके सभी श्रेणीके पुरुष आते रहते थे। जितनी सरलतासे बंगलोर और माइसोरनिवासी हिन्दी समझते थे, मद्रासी उतनी सरलतासे नहीं समझे। नियत तिथियोंपर सामाजिक परिषद्‌के अधिवेशन आरम्भ हुए, जिसमें स्वामीजीके भाषणोंको लोगोंने अत्यन्त प्रेम और ध्यानसे सुना। न्यायमूर्ति रानडे उन दिनों सामाजिक परिषद्‌के मंत्री थे, उन्होंने स्वामीजीके प्रतिनिधि चुने जानेपर अपनी प्रसन्नता प्रकट की। अपनी प्रतिज्ञानुसार स्वामीजीने परियाह लोगोंसे समान व्यवहार करनेके लिए एक प्रस्ताव हृदयग्राही भाषणद्वारा उपस्थित किया और वह सर्व सम्मतिसे स्वीकृत हुआ। उक्त प्रस्तावके अतिरिक्त स्वामीजीने निम्नलिखित प्रस्तावभी उपस्थित किया था; जिसका अंगरेजी अनुवाद उक्त कान्फ्रेन्सकी रिपोर्टसे यहां उद्धृत किया जाता है:—

"The conference congratulates the Government of Mysore upon the decided step, it has taken this year after consultation with the representative leaders of the province to check by legislation the evil coustoms of infant and ill assorted marriages and it hopes that it is only a first instalment of marriage reform which will encourage that state and the other leading native states to restore the old purity of our family life. Till such legislation or executive action can be undertaken in British India the conference recommends that every effort will be made by societies for social reform to pledge their members to increase the minimum marriageable age of girls up to 12 years at least according to circumstances of each caste and that in the case of boys parents will as far as possible obey the injunctions of the Shastras by putting off their marriages till their education is completed and they are able to earn their own livelihood." In proposing the above resolution Brahmcharee Nityanand quoted several texts, permitting marriages of children at advanced ages after they are educated and become able to earn their livelihood and enjoining house holders to give the same treatment to girls as is given to boys. He said that marriage was optional and not compulsory in the case of both boys and girls."

अर्थात् यह परिषद् मैसूर राज्यको, उसके उस निर्णयपूर्ण निश्चयके लिये, जो कि उसने प्रान्तके प्रतिनिधि नेताओंके परामर्शके पश्चात् अनमेल और बालविवाहकी हानिकारक कुरीतिको राजनियमसे वर्जित प्रकट करनेमें, प्रकाशित किया है धन्यवाद देती है। और आशा करती है कि प्राचीन पवित्र गार्हस्थ्य जीवनके स्थापित करनेके लिये

विवाहसम्बन्धी सुधारोंके सम्बन्धमें यह प्रथम उद्योग होगा और अन्य प्रधान देशी राज्य भी इस उदाहरणसे लाभ उठानेका साहस करेंगे। जबतक ब्रिटिश भारतमें इस प्रकारका कोई राजनियम या दंड निश्चय नहीं होता, तबतक यह परिषद् प्रत्येक समाजसुधारक सभाको सम्मति देती है कि वे अपने सभासदोंसे अपनी अपनी व्यक्तिगत जातिकी सुविधाके अनुसार कन्याके विवाह समयकी आयु न्यूनसे न्यून १२ वर्षकी नियत करनेकी प्रतिज्ञा करावें। बालकोंके विषयमें उनके मातापिता जहांतक सम्भव हो उनका विवाह उस समयतक रोक रक्खें जबतक वे अपनी शिक्षा समाप्त कर अपनी आजीविकाके साधन उपस्थित न करें।"

इस प्रस्तावको उपस्थित करते हुए ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीने अति गम्भीर और प्रभावशाली व्याख्यान दिया और सैकडों ऐसे प्रमाण उपस्थित किये, जिनमें सन्तानका विवाह उनकी शिक्षाके समाप्त होने और आजीविका प्राप्त करनेके योग्य होनेके पश्चात् करनेकी आज्ञा थी। और प्रत्येक गृहस्थके लिये यह आवश्यक बतलाया गया था कि बालक और बालिका दोनोंके साथ एकसा बर्ताव किया जाय। स्वामीजीने यह भी कहा कि विवाहका करना या न करना बालक या कन्याकी इच्छाके अधीन है। इसमें लज्जा करना उचित नहीं। उचित शब्दोंमें समर्थन और अनुमोदन होनेके पश्चात् यह प्रस्ताव भी सर्व सम्मतिसे करतलध्वनिके मध्यमें पास हुआ।

सोशल कान्फ्रन्सके पश्चात् भी स्वामीजीके व्याख्यान मद्रासमें होते रहे और स्वामीजी अन्य स्थानोंमें जानेका विचार करही रहे थे, कि उन्हें शाहपुरा-राजाधिराजका एक तार शीघ्रही पधारनेके लिये। मिला क्योंकि शाहपुरा युवराजका विवाह श्रीमान् अजीत सिंहजी खेतड़ी नरेशकी कन्यासे होना निश्चित हुआ था और इस विवाहमें राजस्थानके अनेक राजा और जागीरदार सम्मिलित होनेवाले थे। अतः राजाधिराज इस अवसरपर स्वामीजीद्वारा वैदिक धर्मका प्रचार करानेके इच्छुक थे, इसी निमित्त आपने स्वामीजीको लगातार ३, ४ तार दिये। अतः स्वामीजीको राजाधिराजके आग्रहसे मद्रास प्रान्तमें भ्रमण करनेका अपना विचार उस समय रोक देना पड़ा और ७ जनवरी १८९५ को आप मद्राससे सीधे अजमेरके लिए रवाना हो गये। अजमेरमें पंडित हमीरमलजी स्वामीजीको खेतड़ी ले जानेके लिये ठहरे थे। स्वामीजीके आनेपर उसी दिन जयपुरके लिए प्रस्थान किया, जयपुरसे खुश्की मार्गसे एक बैलगाड़ीद्वारा तीसरे दिन खेतड़ी गए. मार्गमें एक गांवके समीप चोरोंने बड़ा दुःख दिया। खेतड़ीमें स्वामीजी ५-७ दिन ठहरे। खेतड़ी नरेश श्रीमान् अजीत सिंहजीने स्वामीजीके सत्कारका विशेष प्रबन्ध किया था। वर और वधू पक्षकी ओरसे जितने सरदार इस विवाहके अवसरपर सम्मिलित हुए थे, उन सबकी उपस्थितिमें स्वामीजीके व्याख्यान नित्य होते थे। विवाहकी समाप्तिपर स्वामीजी खेतड़ीसे रिवाड़ीकी ओर प्रचारार्थ गये, और रिवाड़ी

बांदीकुई, जयपुर, खाचरियावास, दांता आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए अजमेर पहुंचे। १२ फरवरी १८९५ को स्वामीजी अजमेरसे श्रीमान् मास्टर कन्हैयालालजी B. A. L. L. और श्रीमान् मास्टर रावलमलजीके साथ श्रीमद्दयानन्द आश्रम-पाठशालाके लिये सहायता प्राप्त करनेको डेपुटेशन लेकर खैरागढ़ गये। यहां खैरागढ़नरेशने स्वामीजी तथा उक्त महाशयोंका अच्छा सत्कार किया और सदाके लिए एक अच्छी रकम प्रतिवर्ष सहायतामें देनेकी प्रतिज्ञा की। खैरागढ़से स्वामीजी अजमेर आ गये और यहांसे आबू, अहमदाबाद और बड़ोदा आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए बम्बई पधारे। बम्बईमें स्वामीजी सेठ लक्ष्मीदास खेमजी J. P. के यहां तथा माथेरान, ननोली आदि ग्रीष्मनिवासस्थानोंमें ठहरे। न्यायमूर्ति रानडेके साथ प्रायः समागम होता रहता था। जिससे स्वामीजीको अनेक प्रकारके विचारोंमें बड़ी सहायता मिलती थी। रानडे महोदयके साथ प्रायः देशकी सामाजिक और धार्मिक दशाके सुधारके भिन्न भिन्न अङ्गोंपर विचार होता रहता था, और दोनोंही विचार-परिवर्तनसे लाभ उठाते थे। इस बार रानडे महोदयने स्वामीजीको बड़ोदा-नरेशसे मिलनेके लिये अनुरोध किया, और महाराजसाहबके नामके परिचय-पत्रके अतिरिक्त अपने बड़ोदानिवासी मित्रोंको महाराजासाहबसे भेंट करनेके लिये स्वामीजीको सहायता और सुविधा उपस्थित करनेके लिये लिखा। जबतक स्वामीजी बम्बइमें रहे, प्रायः नित्यही यथावसर व्याख्यान देते रहते थे, जिन्हें सुनकर कई सज्जन स्वामीजीको सदा मुंबईमेंहि रहनेके लिये प्रार्थना किया करते थे। बम्बईसे स्वामीजी १६ मार्च १८९५ को बड़ोदा आ गये और आर्य्यसमाज बड़ोदाके प्रबन्धसे व्याख्यान देते रहे। महाराजासाहब उस समय राजधानीमें नहीं थे, अतः थोडे दिन ठहरकर स्वामीजी पीछे बम्बई आ गये। यहांसे स्वामीजी सूरत, भरोच, अहमदाबाद और पालनपुर आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए आबूरोड चले गये। पालनपुरमें बाबू लालारामजी परमैनेन्टवे-इन्स्पेक्टरने स्वामीजीका बहुत सत्कार किया और उन्हींके प्रबन्धसे पालनपुरकी हाईस्कूलमें स्वामीजीने दो तीन व्याख्यान दिये, जिनमें इस राज्यके दीवानसाहबसे लेकर सब श्रेणीके लोग आते रहे। आबूरोड आकर स्वामीजीने श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीसे मातृदर्शन करनेकी इच्छा प्रकट की। और कहा कि "जबसे घर छोड़ा है, मातापिताके दर्शन नहीं हुए; इस समय सुभीता है, अतः माताजीके दर्शन करता चलूं"। अतः ऊंटकी सवारी करके दोनों महात्मा एरनपुरासे सिरोही राज्यके गांव मणादरामें आये। यहां स्वामीजीके बड़े भाई पंडित शिवरामजी रहते थे। स्वामीजीकी माता और अन्य कुटुम्बी भी यहीं बुलवा लिये गये। और सब प्रेमपूर्वक मिले। स्वामीजीकी प्रबल इच्छा तो केवल मातृदर्शनकी थी। धर्मपरायण और सांसारिक बन्धनोंसे अलिप्त माताने अपने पुत्रको बद्धकवेषमें देखकर, अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की। मोहका लेश मात्र भी उस साध्वीके हृदयमें स्थान नहीं प्राप्त कर सका; फिर मोहसम्बन्धी चर्चा कहां ?।

वास्तविक पुत्रप्रेम प्रदर्शित करती हुई माताजीनें स्वामीजीको सम्बोधन करके कहा "बेटा अच्छा किया, तुमने अपना जन्म सुधार लिया, तुम धर्मका शुभ काम करते हो, मैं बड़ी प्रसन्न हूं। इसमें तुम्हारा भी भला है, हमारा भी भला है"। स्वामीजीके भ्राता आदि अन्य कुटुम्बी तो मोहके प्रवाहमें बह गये और अनेक प्रकारके सांसारिक प्रलोभन देकर घरमें रहनेके लिये आग्रह करने लगे और विवाहकी चर्चा चलाई। गांवके ठाकुर ठकुरानीने भी कहा कि-'तुम घरमें रहो; हम तुम्हारी जीविकाके लिये कुछ जागीर देते हैं।' ३ दिन ठहरकर और माताजीका आशीर्वाद लेकर स्वामीजी ऐरनपुरा होते हुए अजमेर आ गये। अजमेरमें इन दिनों स्वामी शकुनाचार्य्यके उद्योगसे पंडित श्री शालिग्रामजी शास्त्री प्रोफेसर ऑफ् संस्कृत गवर्मेन्ट कॉलेज अजमेरके प्रधानत्वमें और महता फतहचंदजी बैरिस्टर और पंडित विठ्ठलनाथजी-मिश्रके मंत्रित्वमें एक धर्मसम्मेलन होना निश्चय हुआ था। इस सम्मेलनमें भिन्न २ धर्मानुयायी अपने २ मत प्रकाशित करने आये थे। स्वामीजीने आर्य्यसमाजके मन्तव्योंपर अपने विचार प्रकट किये। जिनका प्रभाव अन्य वक्ताओंसे अत्यधिक पड़ा। इस सम्मेलनमें और वक्ताओंको जहां एक २ बार भाषण करनेका अवसर दिया गया, वहां स्वामीजीको कतिपय आगन्तुकोंके अनुपस्थित होनेके कारण तीन बार व्याख्यान देना पड़ा। यह सम्मेलन २७,२८, और २९ सितम्बर १८९५ को हुआ था। अजमेरसे स्वामीजी अहमदाबाद और ईडर होते हुए बड़ोदे गये और अपने आनेकी सूचना महात्मा रानडेको दी। इस समय महाराजसाहब राजधानीमें ही थे। रानडे महोदयने स्वामीजीसे भेंट करा देनेके लिये निम्नलिखित पत्र वहांके दीवानको लिखा था।

My dear Dewan Bahadur, 16-8-95.

I have great pleasure in recommending to your kind notice Brahmchari Nityanand and Swamy Visheswaranand of the Arya-samaj, who are proceeding to Baroda, in the course of their mission work. Both are good Sanskrit Scholars and one of them knows English also and can speak in Hindi with some effect. Last year I sent them with recommendation to Mysore and Sir Sheshadri Aiyar and the late Maharaja were much pleased with their view and method of work. They were sent by the Maharaja even as Mysore delegates to the social conference held in Madras. This year they propose to visit Guzerat. They are anxious to secure an interview with His Highness the Maharaja saheb and to recieve encouragement from him in their work. Of the late Pandit Dayanand Saraswatee's disciples the two seem to be most likely to carry on his work if

श्रीमंत महाराजा सयाजीराव गायकवाड-वदोदरा.

properly supported. They are swamies and need no money but they naturally desire the support of such an enlightened ruler as H. H. the Maharaja. I hope you will find them very disposed to help us all in the work of social reform.

Yours sincerly,

(Sd.) M. G. Ranade.

(भाषानुवाद)

१६-८-९५

प्रियवर दीवान बहादुर,

मुझे आपको आर्य्यसमाजके ब्रह्मचारी नित्यानन्द और स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी-(जो अपनी संस्थाके कार्य्यके लिये बड़ोदे आ रहे हैं) का परिचय कराते हुए बड़ी प्रसन्नता होती है। दोनोंही संस्कृतके पंडित हैं और हिंदीमें प्रभावशाली व्याख्यान देते हैं। गतवर्ष मैंने इन्हें अपने परिचय-पत्रोंसहित माइसोर भेजा था। वहां सर शेषाद्रि अइय्यर (दीवान) और पूर्व महाराजा, इनके विचार और कार्य्यप्रणालीसे अत्यन्त प्रसन्न हुए। महाराजासाहबने इन्हें मद्रासकी सामाजिक परिषद्में माइसोरके प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। इस वर्ष इनका विचार गुजराथमें घूमनेका है। इन्हें महाराजासाहबसे मिलने और अपने कार्य्यमें उत्साह प्राप्त करनेकी इच्छा है। स्वर्गवासी पंडित दयानन्द-सरस्वतीके शिष्योंमेंसे ये दो (यदि उचित सहायता मिले) उनके कार्य्यको जारी रखनेमें समर्थ हैं। ये संन्यासी हैं और धन नहीं चाहते, परन्तु स्वाभाविक रीतिसे उनकी इच्छा महाराजासाहबके समान शिक्षित नरेशसे सहायता और सहानुभूति प्राप्त करनेकी है। मुझे आशा है कि आप इन्हें हम सबके समाजसुधारके कार्य्यमें सहायता करनेको तत्पर पायेंगे।

आपका,

माधव गोविन्द रानडे.

सन् १८९० में जब स्वामीजी रानडे महोदयसे पूनामें मिले थे, तब भी रानडे महोदय-ने स्वामीजीको महाराजासाहब बड़ोदासे मिलनेके लिये कहा था और उस समय भी परिचयपत्र आदि दिये थे (जैसा कि उनके १२ फरवरी १८९१ के पत्रसे जिसकी प्रतिलिपि नीचे दी जाती है, प्रतीत होगा) परन्तु स्वामीजीके बड़ोदा जानेके कुछ दिन पूर्वही महाराजसाहब विलायत चले गये थे, अतः उस समय यह विचार पूर्ण न हो सका।

न्यायमूर्ति **रानडे महोदयके** पत्रकी नकल

Shevgaum, 12-2-91.

Revered Swamiji,

I replied to your letter addressed from Baroda to the address therein given. I fear you left the place before my letter reached you. Kindly make enquiries at the place and you will possibly get the letter if it has not been sent to the dead letter office on the same day that I wrote to you my last letter I wrote also to Rao Bahadur Janardan S. Gopal and Rao Bahadur Yashwantrao Wasudeorao Athley and asked these gentlemen to help you in every way you can. When you go to Baroda see both these gentlemen and ask them to help you in arranging for your public lectures. You can show this letter to these gentlemen by way of confirmation. I am sorry my last letter did not reach you in time. I hope that you are well recieved by Ahmedabad friends.

Yours truly,

(Sd.) M. G. Ranade.

भाषानुवाद

शेगांव १२-२-९१

पूज्य स्वामीजी,

मैंने आपके बड़ोदेसे, भेजे हुए पत्रका उत्तर उसमें दिये हुए पतेके अनुसार दे दिया था। मुझे प्रतीत होता है कि मेरा पत्र पहुंचनेके पूर्वही आपने वह स्थान छोड़ दिया। कृपा करके वहां जांच करें और सम्भव है कि यदि वह पत्र डेडलेटर ऑफिसमें न भेजा गया हो तो आपको मिल जावे। जिस दिन मैंने उक्त पत्र आपको लिखा था, उसी दिन रावबहादुर जनार्दन एस्. गोपाल, और रावबहादुर यशवन्तराव वासुदेवराव आठले साहबको आपको हर प्रकारकी सहायता देनेके लिये पृथक् पृथक् पत्र लिखे थे। आप अब बड़ोदा जावें तो इनसे मिलकर अपने व्याख्यानोंका प्रबन्ध करनेमें सहायता करने को कहें और यह पत्र पुष्टि करनेके निमित्त उन्हें बतलादें। मुझे दुःख है कि मेरा पहिला पत्र आपको समयपर नहीं मिला। मैं आशा करता हूं कि अहमदाबादके मित्रोंनें आपका स्वागत अच्छा किया होगा।

आपका,

माधव गोविन्द रानडे.

इन पत्रोंकी नकल यहाँ देनेका आशय यह है कि पाठकोंको प्रतीत हो जाय कि रानडे महोदयको स्वामीजीकी योग्यतासे लाभ उठानेकी पूरी इच्छा थी, और उनकी यथाशक्य सहायताके लिये वे सदा तत्पर रहते थे। अस्तु। बडोदाआकर स्वामीजीने महात्मा रानडेका परिचयपत्र महाराजासाहबके पास भिजवाया, जिसे पढकर महाराजासाहबने स्वामीजीको बुलवाया और बडे आदरसहितभेंटकी। महाराजासाहब स्वामीजीसे अतिकालतक वार्तालाप करते रहे और अत्यन्त प्रसन्न हुए। इसके अनन्तर महाराजा साहबने स्वामीजीके कई व्याख्यान अपने निज निवासस्थान लक्ष्मीविलास महल और मकरपुरामें कराये।

महाराजासाहबने व्याख्यानोंकी अत्यंत प्रशंसा की और स्वामीजीसे यह इच्छा प्रकट की, कि प्रत्येक वर्ष जब हम बडोदेमें उपस्थित हों तब अवश्यही आप पधारा करें। और एक राजाज्ञाद्वारा अपने कर्मचारियोंको प्रेरणा की कि तुम सबको स्वामीजीके व्याख्यानोंमें उपस्थित रहना चाहिये। क्योंकि इनके व्याख्यान सुनकर जितनी ज्ञानवृद्धि हो सकती है उतनी कई वर्षतक पढनेसे नहीं हो सकती। स्वामीजी भी महाराजासाहबसे मिलकर प्रसन्न हुए।

बड़ोदेसे स्वामीजी अजमेर, जयपुर और बांदीकुई आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए लाहोर समाजके वार्षिकोत्सवपर लाहोर पहुँचे। यहांसे जालंधर और अमृतसर आदि स्थानोंमें व्याख्यान देकर संयुक्त प्रान्तके अनेक स्थानोंमें व्याख्यान दिये। और संयुक्त प्रान्तकी प्रतिनिधिसभाके वार्षिकोत्सवमें, जो उस वर्ष बरेलीमें था सम्मिलित हुए।

बरेलीसे १ जनवरी १८९६ को अजमेर आ गये और यहांसे ३ दिन ठहरकर उदयपुर चले गये। उदयपुरमें स्वामीजी इस बार अनुमान एक मासके ठहरे और यथावसर राज्यके सरदारोंको धर्म-उपदेश करते रहे। श्रीमान् महाराणाजी भी यदा-कदा स्वामीजीके उपदेश अपने महलोंमें कराया करते थे।

उदयपुरसे चलकर स्वामीजीने फरवरी और मार्च १८९६ में नीमच, अजमेर, जयपुर, बांदीकुई, मथुरा, आगरा, कानपुर, प्रयाग, दानापुर, पटना और कलकत्ता आदि स्थानोंमें प्रचार किया।

इन्हीं अवसरोंपर दानापूर और आगरा आर्य्यसामाजोंके वार्षिकोत्सव थे।

अन्तमें कलकत्ते पहुँचे।

मुम्बई और माईसोरके समान, कलकत्तेमें भी स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रभाव बहुत पड़ा। यहां स्वामीजी १० मार्च ९६ से २१-४-९६तक ठहरे। स्वामीजीके व्याख्यानोंकी रिपोर्ट और विस्तृत आलोचना इंडियन मिरर, हिन्दूपेट्रियाट, और आर्य्यावर्त आदि पत्रोंमें निकलती रहती थी।

१३मार्च ९६ के इंडियन मिररम स्वामीजीके विषयमें निम्न उद्धृत नोट प्रकाशित हुआ।

"Swami Visheswara Nand and Brahmcharee Nityanand the two "gifted preachers" of the Vedic religion as Justice Ranade of the Bombay High court rightly styles them have arrived here and are staying at the new Dhurumshala on the Harrisson Road Burra Bazar. These sannyasees intend delivering a series of public lectures of which timely notices will be issued. Their advent in this city "the intellectual centre of all India" is surely a matter of great joy and public welcome and specially in the present age of general sceptecism and religious decrepitude. It is well to mention that the swamies are very eminent Sanscrit scholars, and their lectures are remarking for their Charming eloquence, irresistible logic and an entire absence of begotry and sectarianism. Their lectures in Madras, Bombay, Mysore, Rajputanas, Central India, N. W. P. Punjab have had very striking effects in creating religious yearning every where and it is hoped that Bengal will not fail to have its fully share and give them a fair and patient hearing.

"अर्थात् वैदिक धर्मके 'तेजस्वी प्रचारक' (जैसा कि बम्बई हाईकोर्टके न्यायमूर्ति श्रीमान् रानडेने उनको उचितही लिखा है) स्वामी विश्वेश्वरानन्द और ब्रह्मचारी नित्यानन्द यहां आये हुए हैं और बड़ा बाजार हेरीसन रोडकी नई धर्मशालामें ठहरे हुए हैं। इन संन्यासियोंका विचार एक व्याख्यानमाला आरम्भ करनेका है, जिसकी सूचना विज्ञापनद्वारा दी जायगी। इस नगर अर्थात् समस्त भारतवर्षकी विद्याके केन्द्रमें, विशेषकर इस सन्देहवाद और धार्मिक पतनके अवसरपर, इनका पधारना वास्तवमें अत्यन्त प्रसन्नता और सर्व साधारणके सौभाग्यका विषय है। यह बतलाना उचित है कि स्वामीजी संस्कृतके उत्कृष्ट विद्वान् हैं और उनके व्याख्यान आकर्षक भाषणशक्ति, अकाट्य तर्क, और कट्टरपन और मतवादसे शून्य होनेके कारण प्रसिद्ध हैं। मद्रास, बम्बई, माईसोर, राजपुताना, मध्यभारत, युक्त प्रान्त और पंजाबमें धार्मिक जिज्ञासा उत्पन्न करनेके लिये उनके व्याख्यानोंका बड़ा प्रभाव हुआ है और आशा है कि बङ्गाल भी अपना भाग लेनेमें नहीं चूकेगा और उनके व्याख्यानोंको संतोष और ध्यानसे सुनेगा।"

उपरोक्त सूचनाके अनुसार स्वामीजीके व्याख्यानोंका क्रम आरम्भ हो गया और कई स्थानोंपर कई संस्थाओंकी ओरसे व्याख्यान बड़ी सफलतासे हुए। जिसमें सब श्रेणीके श्रोता आते थे। उदाहरण के लिये २२ मार्च ९६ में के इंडियन मिररका नोट उद्धृत किया जाता है।

"As announced in the local papers a public meeting of the Calcutta literary society was held at the Emerald theatre Beden square Yesterday at 5-30 P. M. under the presidency of Babu Norendra Nath Sen. Among those present we noticed the Hon'ble Rai P. Ananda charlu. Rai Bahadur Rai Baikuntha nath Bose, Bahadur, Rai Sahib Rala Ram and other. After the proceedings of the last meeting had been read by the Secratary, the president introduced the lecturer of the evening, Swami Brahmacharee Nityanandji of the Punjab as a distinguished preacher of the "Arya-Samaj" The lecturer spoke for more than an hour, he pointed out how the present system of education was defective, and how it was necessary for us to conduct a system of teaching in a thoroughly national way. He concluded by exhorting the audience to live the pious lives of their forefathers and to follow the teachings inculcated in the Vedas."

"अर्थात् जैसी कि स्थानिक पत्रोंमें सूचना प्रकाशित हो चुकी थी, कल सायंकालके इमेरल्ड थियेटर बीडन स्कायरमें कलकत्ता-साहित्यसमितिकी एक सार्वजनिक सभा श्रीयुत बाबू नरेन्द्रनाथ सेनके सभापतित्वमें हुई। उपस्थित गणोंमें माननीय राय पी॰ आनन्द चार्लू बहादुर, राय वैकुण्ठनाथ सेन बहादुर, राय साहिब रलारामजी आदि सज्जन थे। पूर्व सभाकी कार्यवाही पढके सुनानेके पश्चात् सभापतिनें सायंकालके व्याख्याता पंजाबके स्वामी ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीका परिचय आर्य्यसमाजके प्रसिद्ध व्याख्याता रूपमें दिया। व्याख्याता एक घंटेसे अधिक समयतक बोले और वर्तमान शिक्षा प्रणाली-की त्रुटियां बतलाईं और यह भी कहा कि पूर्ण जातीय ढंगपर शिक्षा देना अत्यन्त आव-श्यक है। आपने जनताको पवित्र जीवन व्यतीत करनेका उपदेश देते हुए अपना भाषण समाप्त किया।"

इसी प्रकार ता. २९ मार्चको स्वामीजीने एक व्याख्यान आदि ब्राह्मसमाज-भवनमें 'ब्रह्म-उपासनाकी आवश्यकता विषयपर' दिया। इस व्याख्यानपर अपनी सम्मति प्रकट करते हुए श्रीयुत बाबू वृन्दावनचन्द्र दत्तने निम्नलिखित विचार प्रकट किये।

The subject was full of Philosophic thoughts and was treated in a most attractive and masterly way. Several Sanscrit quotations were put forward in support of the argument and that showed the profound scholarship of the venerable speaker. Every one was highly pleased with the lecture. The hall was crowded with all classes of the Hindu community. The lecture, though it was delivered in Hindi, was untelligible to every Bengaly gentleman present, the language used being very easy."

"अर्थात् व्याख्यान तात्त्विक विचारोंसे परिपूर्ण था और अत्यन्त आकर्षक और विद्वत्तापूर्ण ढंगसे दिया गया था। युक्तियोंकी पुष्टिमें अनेक संस्कृतके प्रमाण दिये गये थे जिससे पूज्य वक्ताके स्वाध्यायका पता चलता था। प्रत्येक पुरुष व्याख्यानसे अत्यन्त प्रसन्न था। भवन प्रत्येक विचारके हिन्दुओंसे भरा था। और **व्याख्यान यद्यपि हिन्दीमें था प्रत्येक उपस्थित बंगाली सज्जनकी समझमें आया;** क्यों कि भाषा बडी सरल थी"।

आदि ब्राह्म समाजमें व्याख्यान देनेके लिये स्वामीजीको महर्षि देवेन्द्रनाथ टगोरके पौत्र बाबू क्षितीन्द्रनाथ टगोरने निमंत्रित किया था।

स्वामीजी महर्षि देवेन्द्रनाथ टगोरसे भी मिले थे, और परस्परमें आर्य्य समाजके और ब्राह्मसमाजके एक होकर कार्य करनेपर विचार होता रहा।

स्वामीजीके व्याख्यानोंके प्रबन्ध करनेके लिये आर्य्यसमाजके अधिकारियोंके अतिरिक्त श्रीयुत नरेन्द्रनाथ, सम्पादक इंडियन मिरर, विशेष परिश्रम किया करते थे।

व्याख्यानोंके अतिरिक्त स्वामीजीने कलकत्तेमें आर्य्यसमाजका मन्दिर बनवानेके लियेभी उद्योग किया; जिसमें **सर्वप्रथम सहायता महर्षि देवेन्द्रनाथ टगोरने १०००) एक हजार** रुपये देकर की।

कलकत्तेसे स्वामीजी आरा गये और वहांसे झंग मघियाना (पञ्जाब) समाजके उत्सवपर पहुँचे। यहां आर्य्यपथिक लेखरामजी भी इस अवसरपर आये थे। उनसे सामाजिक दशापर विचार किया। झंगसे चलकर स्वामीजी जालंधर और होशियारपुर आदि स्थानोंमें व्याख्यान देते हुए १८ मई १८९६ को शिमला पहुंचे और ११ जून ९६ तक सिमलेमें निवास किया।

श्रीमान् महाराजासाहब गायकवाड़ बड़ोदा, इस वर्ष ग्रीष्मऋतुमें मसूरी गये थे। अतः आपने स्वामीजीको भी वहाँ आनेके लिये पत्र भेजा। महाराजा साहबका पत्र पाकर स्वामीजी १६ जून ९६ को मसूरी पहुंचे और २८ जून ९६ तक महाराजा साहबसे व्याख्यान और वार्तालापद्वारा धार्मिक और सामाजिक विषयोंपर विचार करते रहे। इसके अतिरिक्त श्रीमान् बाबू ज्योतिःस्वरूपजी और रायबहादुरलाला रलारामजी चीफ् इन्जीनियर (रायसाहब इस अवसरपर कलकत्तेसे मसूरी आ गये थे) के प्रबन्धसे **मसूरीके टाउनहालमें** भी व्याख्यान होते रहते थे।

ता॰ २९ जूनको स्वामीजी मसूरीसे उतरकर देहरादून आ गये, और यहां भी आर्य्यसमाजके विशाल मन्दिरमें कई व्याख्यान दिये। सर्व साधारणपर स्वामीजीके व्याख्यानोंका बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा और वे नित्य स्वामीजीके व्याख्यानोंको सुननेके लिये आतुर रहते थे।

ता. २ जुलाईको स्वामीजी देहरादूनसे अम्बाला आ गये और यहांसे चलकर जालंधर, होशियारपुर, अमृतसर, पठानकोट, धर्मशाला आदि स्थानोंमें खूब धूमधाम और समारो-

हुसे प्रचार किया । धर्मशालामें स्वामीजी ४ अगस्त ९६ से १६ अगस्त ९६ तक ठहरे थे। यहांसे जब वापिस पठानकोट आ रहे थे तो मार्गमें जल मूसलधार बरसने लगा, नदियां बड़े बेगसे चलने लगीं, तांगाके घोडे आगे, नहीं चलते थे अतः पठानकोटतक तांगेसे उतरकर पैदल आना पडा । पठानकोटसे चलकर दीनानगर और गुरदासपुर आदि स्थानोंमें प्रचार किया ।

गुरदासपुरके व्याख्यानोंमें भागोवालाके सरदारसाहब भी उपस्थित थे । आप स्वामीजीके व्याख्यानोंको सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए । जब स्वामीजी गुरुदासपुरसे जाने लगे तो आप स्वयं, बटाला स्टेशनपरसे स्वामीजीको अपने गांवमें ले जाकर प्रचार करानेके लिये, गाड़ी लेकर आये । और स्वामीजीको जबर्दस्ती रेलसे उतार अपने गांव ले गये और एक २ दिनमें ४, ४, व्याख्यान कराये ।

यहांसे स्वामीजी अमृतसर आये । इन दिनों पंजाब आर्य्य-प्रतिनिधि-सभाके मंत्री श्रीमान् मास्टर आत्मारामजी वर्तमान एज्युकेशनल इन्स्पेक्टर बड़ोदा राज्य थे । आपने स्वामीजीसे अत्यन्त आग्रह किया कि वे कुछ दिन पंजाब प्रान्तमें विशेषरूपसे प्रचार करें । स्वामीजीने मास्टर साहबके आग्रहको स्वीकार किया । और उनके दिये हुए प्रोग्रामके अनुसार पंजाबके अनेक स्थानोंमें प्रचार किया । उनमेंसे मुख्य २ ये हैं ।

अमृतसर, लाहोर, गुजरानवाला, रावलपिंडी, पिशावर, कोहाट, बन्नू, डेरा इस्माईलखां, मुजफ्फरगढ, डेरागाजीखां, मुलतान, कसूर, जालंधर, होशियारपुर, नाभा आदि ।

आर्य्य-प्रतिनिधि-सभा पंजाबकी ओरसे स्वामीजीकी प्रत्येक प्रकारकी सुविधा और सेवा शुश्रूषा आदिका प्रबन्ध करनेके लिये पंडित पूर्णानन्दजी नियत किये गये थे और वे बराबर इस प्रवासमें स्वामीजीके साथ रहे ।

नाभामें इन्हीं दिनों स्वामी ईश्वरानन्द आर्य्यसमाजके विरुद्ध व्याख्यान दे रहे थे। वहांके स्टेशनमास्टर और असिस्टेंट स्टेशनमास्टरने (जो समाजी थे) स्वामीजीको नाभा पधारनेका अत्यंत आग्रह किया । स्वामीजी नाभा गये । स्वामीके पधारनेकी सूचना पाकर नाभा-नरेश महाराज हीरासिंहजीने स्वामीजीको लानेके लिये स्टेशनपर सवारी भिजवा दी और नगरके बाहर एक रम्य बगीचेमें ठहराया । खान पान आदिका सब प्रबन्ध राज्यकी ओरसेही था । स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रबन्ध हाईस्कूलमें किया गया और महाराजा हीरासिंहजीसाहब सदा आया करते थे । स्वामी ईश्वरानन्दजीको महाराजसाहबने शास्त्रार्थके लिये बुलवाया, परन्तु वह आनेमें तो कुछ टालमटोल करते रहे । अन्तमें जब वे कहीं बाहर घूमनेके लिये जा रहे थे तो जबरदस्ती गाड़ीमें बिठाकर लाये गये । सभामें आनेपर आरम्भमें तो कुछ समयतक इधर उधरकी बातें करते रहे; परन्तु अन्तमें भरी सभामें स्पष्ट कह दिया कि–"मैं तो लिखना भी नहीं जानता, शास्त्रार्थ करनेको तो नितान्तही अयोग्य हूं" । इसपर महाराज साहबने उनसे कहा कि–" तब तू शेखी क्यों मारता था ? " और स्वामीजीसे अत्यन्त प्रसन्न हुए और विशेष सत्कार

किया। इसके पीछे स्वामीजीके ५,६ व्याख्यान और हुए, जिनमें हिन्दू और मुसलमान सब आते थे और अत्यन्त प्रसन्न होकर जाते थे। स्वयं महाराजासाहब तो स्वामीजीके पूरे प्रेमी बन गये। यहीं स्वामीजीको बम्बई नगरमें प्लेगकी प्रबलताके समाचार मिले थे।

नाभासे स्वामीजी अम्बाला आये और छावनीकी हाईस्कूलमें ५, ६, व्याख्यान दिये, जिसमें हिन्दू और मुसलमान सबही मतोंके मनुष्य आते थे।

अम्बालेसे स्वामीजी लाहोर गये और वहांसे जालंधर, देहली, जयपुर आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए १२ अक्टूबर १८९६ को अजमेर पहुँचे। अजमेरसे स्वामीजी शाहपुरा गये और वहांसे वापिस अजमेर होते हुए बड़ोदामें गये।

बड़ोदामें स्वामीजी ३० अक्टूबरसे ९ दिसम्बरतक ठहरे। महाराजा साहबके साथ अनेक अवसरोंपर धर्मविषयमें वातचीत करते रहे। स्वामीजीके व्याख्यान नगरके भिन्न२ स्थानोंके अतिरिक्त महलोंमें भी होते थे। इस वर्ष महाराजासाहेबने एक विद्यार्थी-स्वामीजीके सिपुर्द वैदिक कर्मकाण्ड और आर्यसिद्धान्त सिखलानेके लिये किया। यह विद्यार्थी मैट्रिक पास था। महाराजासाहेब कभी २ स्वामीजीको अपने साथ भोजन करनेभी बुलाते थे।

बडोदेसे स्वामीजी विद्यार्थिसहित अहमदाबाद आये और प्रार्थनासमाजके मन्दिरमें दो तीन व्याख्यान देकर अजमेर चले गये। अजमेरमें स्वामीजी १८ दिसम्बर ९६ से ३० दिसम्बर ९६ तक ठहरे और फिर उदयपुर गये।

उदयपुरमें स्वामीजी श्रीमान् महाराणाजीके प्रबन्धसे कविराज श्यामलदानजीकी बाड़ीमें ठहरे और जनवरी ९७ से २० फरवरी ९७ तक आर्य्यसमाज मन्दिर और महाराणासाहबके महलोंमें यथावसर धर्मोपदेश करते रहे। स्वामीजीके आतिथ्यका प्रबंध राज्यकी ओरसे था।

उदयपुरसे स्वामीजी अजमेर आये और ४, ५, दिन ठहरकर जयपुर होते हुए आर्य्यसमाज आगराके वार्षिकोत्सवपर पहुंचे। उत्सव बड़ी सफलतासे हुआ। स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रभाव विशेष था। आगरेसे स्वामीजी कानपुर प्रयाग और काशी आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए दानापुर पहुंचे। अप्रेल ९६ जबमें स्वामीजी कलकत्तेसे वापिस आये, तभीसे स्वामीजीको नेपाल पधारनेके विषयमें कई आर्य्यपुरुष आग्रह कर रहे थे। विशेषकर नेपालके प्रिन्स कर्नल नरसिंहराना स्वामीजीको इस ओर प्रचार करनेके लिये अत्यन्त प्रेरणा कर रहे थे। अतः दानापुरसे स्वामीजीने नेपालकी ओर जानेका विचार किया, और वीरगंजतक पंहुच भी गये। परन्तु इससे आगे कई अचिन्त्य और आकस्मिक अडचनोंके कारण जिसमें विशेष अडचन नेपाल राज्यमें प्रवेश करनेके लिये पासका न मिलना था, वापसि लौट आना पड़ा

और नैपालयात्रा न हो सकी। वीरगंजसे स्वामीजी रांची लौट आये और ३१ मार्च ९७ से २६ अप्रैल ९७ तक आनरेबिल बाबू बालकृष्ण सहायजीके यहां ठहरे और आर्य्यसमाजमें व्याख्यान देते रहे। रांचीसे स्वामीजी कलकत्ते गये और आर्य्यसमाज मन्दिरके निर्माणार्थ उद्योग करते रहे। कलकत्तेसे स्वामीजी दार्जिलिङ्ग गये और श्रीयुत महेन्द्रनाथ बनर्जी गवन्मेंण्ट प्लीडरके यहां ठहरे और उन्हींके प्रबन्धसे तारीख ३ मई ९७ से २ जून ९७ तक **पूरे एक महिना टाउनहालमें व्याख्यान** दिये। दार्जिलिङ्गसे स्वामीजी करसियंग गये और दो तीन व्याख्यान देकर पीछे कलकत्ता आ गये।

कलकत्तेमें इस बार स्वामीजी फिर महर्षि देवेन्द्रनाथ टगोरसे मिले और आर्य्यसमाज और आदि ब्राह्मसमाजके सम्मिलनपर विचार होता रहा। महर्षिके आग्रहपर स्वामीजीने बोलपुरके शान्तिनिकेतनका भी निरीक्षण किया। और थोड़े दिन ठहरकर रांची चले गये।

यहां आनरेबिल बाबू बालकृष्ण सहायजीसे आर्य्यावर्त साप्ताहिक समाचारपत्रके सुचारु रूपसे संचालन करनेके विषयमें विचार हुआ और फिर प्रचारार्थ लोहारदगा और पटना आदि स्थानोंमें गये। **पटनेमें** स्वामीजी १०-६-९७ से १४-६ तक नगरके बाहर गङ्गाके तटपर एक स्वतंत्र मंदिरमें ठहरे और अनेक व्याख्यान देकर **समाज स्थापित किया**। और फिर बनारसकी ओर पधारे।

बनारसमें स्वामीजी अनुमान ३ मासतक डाक्टर छन्नूलालजीके बागमें ठहरे। यहीं १९५६के भीषण अकालके दृश्य देखकर स्वामीजीने **अनाथोंकी सहायता** करनेका संकल्प किया, जिसका वर्णन यथास्थान आवेगा।

महाराजा साहब गायकवाड बडोदाका विद्यार्थी * स्वामीजीके साथही था। यहां स्वामीजीने उसे एक योग्य पंडितके निरीक्षणमें रक्खा, जिससे उसने वैदिक कर्मकाण्डकी सब कार्य्यवाही सीखी और प्रयोगमें लाकर अपनी शिक्षाको यहीं समाप्त किया।

स्वामीजीने उसकी परीक्षा ली और सब प्रकारसे योग्य पाकर योग्यतासूचक प्रमाणपत्र देकर महाराजाके पास बडोदा भेज दिया।

काशीमें स्वामीजीके व्याख्यान पबलिक लाईब्रेरी आदि कई स्थानोंमें हुए।

---

* इस विद्यार्थीका नाम श्रीयुत जी. जी. राणे है। जबतक यह स्वामीजीके साथ वैदिक सिद्धान्त और कर्मकाण्डकी शिक्षा प्राप्त करता रहा, महाराजा गायकवाड इसे स्वामीजीके द्वारा ८०) प्रतिमासकी छात्रवृत्ति देते थे. स्वामीजीके पास अपनी शिक्षा पूर्ण करके जब यह बडोदा गये, तो महाराजा साहबने इसकी परीक्षा ली और उसमें उत्तीर्ण होनेपर इससे अत्यन्त प्रसन्न हुए और ईसाई मिशनरियोंके प्रचारका ढंग सीखनेके लिये इसे छात्र वृत्ति देकर इंगलैंड भेज दिया। वहां इसने ईसाई धर्मके प्रचारके ढंग सीखनेके अतिरिक्त oxford, युनिवर्सिटी से B. A. भी पास कर लिया।

१५+१६

स्वर्गवासिनी महारानी विक्टोरियाकी हीरक जुबिलीके उपलक्ष्यमें आर्य्य-समाज मन्दिर काशीमें स्वामीजीने ब्रिटिश राज्यके लाभोंपर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। और राजभक्तिप्रदर्शक एक तारभी आर्य्यसमाज काशीकी ओरसे वाइसराय-महोदयकी सेवामें भिजवाया।

काशीसे स्वामीजी कानपुर होते हुए आगरे गये और वहां २८ आगस्त ९७ से ९ सितम्बरतक व्याख्यान देकर भरतपुर होते हुए अजमेर चले गये। जहांसे शाहपुरा, जहाजपुर और बूंदी आदि स्थानोंमें होते हुए कोटे पहुंचे।

कोटेमें श्रीयुत विजयसिंहजी कुनाड़ी राजने स्वामीजीके निवास और भोजन आदिका समुचित प्रबन्ध किया था, अतः इसी प्रबन्धके अनुसार स्वामीजी कोटा नगरके बाहर एक ब्राह्मणकी कोठीमें राज्यके अतिथि रूपसे ठहरे।

यहां स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रबन्ध हुआ और राज्यके सरदार, कोटा महारावजीके प्राइवेट सेक्रेटरी, दीवान, शिक्षाविभागके संचालक (Director) आदि प्रतिष्ठित सज्जन बड़ी रुचिसे वहां पधारकर स्वामीजीकी विद्वत्तापूर्ण वक्तृताओंसे लाभ उठाने लगे।

जिन सज्जनोंको आर्य्यसमाज और सनातन धर्म दोनों संस्थाओंके उपदेशकोंकी नामावलीसे थोड़ा बहुत भी परिचय है, उन्हें सनातन धर्मके साधु आलाराम सागरका परिचय देनेकी अधिक आवश्यकता नहीं है।

यही साधु आलारामजी इस समय कोटेमें उपस्थित थे। श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज और स्वामीजीका कोटे पधारकर इस प्रकार प्रभावशाली व्याख्यान देना उन्हें सह्य नहीं हुआ। अतः आपने भी अपने व्याख्यानोंकी घोषणा कराई और दोचार मुफती इकट्ठे करके आर्य्यसमाजको पुष्पांजलि देना आरम्भ किया। परन्तु लाख उद्योग करनेपर भी श्रोताओंका अभाव बना रहा।

इस निष्फलतासे खिजकर आप एक अनर्थ कर बैठे। जिसका परिणाम इन्हींके लिये अन्तमें बदनामीका कारण सिद्ध हुआ।

आपने परिणामकी चिन्ता कियेबिना एक प्रार्थनापत्र श्रीमान् पोलिटिकल एजण्ट कोटाके नाम लिख मारा। जिसमें आपने लिखा कि-"श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्द और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी गवर्नमेण्टके बागी हैं, इसी कारणसे निजाम हैदराबादके राज्यसे भी इन्हें देश निकाला दिया गया है। आप यदि कोटा महाराव साहबको संकेत कर दें तो इन्हें राज्यसे तत्काल निकाल दिया जावे; क्योंकि इनका यहां रहना राज्यके लिये लाभदायक नहीं है। इत्यादि साथही सत्यार्थप्रकाश और आर्य्याभिविनयमेंसे कई अवतरण उद्धृत किये और अन्तमें यह भी बतलाया कि वर्तमानमें जो युद्ध सीमा प्रान्तपर हो रहा है उसका कारण भी यही लोग हैं"।

पोलिटिकल एजण्ट महोदयने इस पत्रके प्राप्त करनेपर श्रीमान् विजयसिंहजी कुनाड़ी राज और स्वामीजीको बुलवाया और वास्तविक वृत्तान्त जानकर स्वामीजीको सम्मति

कि आप इस प्रार्थनापत्रकी प्रतिलिपि लेकर आलारामपर मिथ्या दोषारोपण करनेका मुकदमा अवश्य चलावें । राज्यके न्यायालयमें मुकदमा चलानेकी स्वीकृति मैं देता हूं।

एजण्टमहोदयके इच्छानुसार स्वामीजीने आलारामपर मुकदमा दायर कर दिया।

स्वामीजीको जो पत्र उन दिनों अजमेरसे मिले, उनसे पता चलता है कि वहांकी सद्धर्मामृतवर्षिणी सभाके अधिकारियोंनें आलारामको सहायता करनेमें कोई भी कसर नहीं छोड़ी थी और प्रत्यक्ष रूपमें उनकी सहायताके लिये समाचारपत्रोंमें अपील करी थी, परन्तु कोटा राज्यके फौजदारसाहवने न्यायकी रक्षाके लिये आलाराम पर१००) रुपया जुर्माना और राज्यसे निकल जानेका दंड देनेकी अपनी सम्मति न्यायाधीशके पास लिख भेजी। साथही यह भी लिखा कि यदि आलाराम जुर्माना न दे सके तो तीन महीनोंकी कठोर कैदका दण्ड भुगते। परन्तु धर्मात्मा सनातनी न्यायाधीशने फौजदार साहवकी न्यायोचित सम्मतिको रद्द कर दिया। और आलारामको साफ छोड़ दिया। इसपर यह मुकदमा श्रीमान् महारावसाहब कोटाके दर्बारमें अपीलद्वारा उपस्थित किया गया और अन्तमें महाराव साहवने आलारामके संन्यासी वेषपर दया करके केवल १०) रुपये जुर्माना करके कोटा राज्यकी सीमासे बिदा किया।

इस मुकदमेमें राजस्थान आर्य्य प्रतिनिधि सभाकी ओरसे स्वामीजीकी सहायतार्थ पंडित सूर्यनारायणजी उपदेशक कोटा भेजे गये थे।

जिस समय राजस्थानकी समाजोंनें सनातनी न्यायाधीशके निश्चयानुसार आलाराम संन्यासीके छुटकारेके समाचार सुने तो वड़े बेचैन हुए और किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये; परन्तु स्वामीजीको इससे कुछ भी दुःख नहीं हुआ। क्योंकि उन्हें महारावजीकी न्यायपरतापर विश्वास था। अस्तु।

इस मुकदमेकी झंझटके कारण स्वामीजीको कोटेमें अनुमान ३ मासतक अटक जाना पड़ा। और इस समयमें स्वामीजीके व्याख्यान निरन्तर होते रहे, जिससे कोटा समाजने बहुत बल प्राप्त किया और आर्य्यसमाजके प्रचारके मार्गमें भविष्यत्के लिये कोई बाधा न रही। और यही कारण है कि राजस्थानकी समाजोंमें कोटा-समाज अब भी एक प्रसिद्ध और बलवान् समाज है, जो अपने वार्षिक उत्सव प्रतिवर्ष किया करता है। अन्यथा रियासतोंमें आर्य्यसमाजके प्रचारमें जो बाधाएं उपस्थित होती हैं, उनसे पाठक अविदित नहीं हैं। क्योंकि वहां लिपिबद्ध कोई कानून नहीं होता।

इस प्रकार २ अक्टूबर १८९७ से २८ दिसम्बर १८९७ तक कोटेमें ठहरकर स्वामीजी ३१-१२-९७ को झालावाड़ पहुंचे और यहाँसे नीमच होते हुए ३ जनवरी ९८ को उदयपुर गये। १४ जनवरी ९८ तक उदयपुरमें ठहरकर और यथावसर महाराणाजीको धर्मोपदेश देकर मालवा प्रदेशमें प्रचारके लिये चले गये। और नीमच, इन्दोर आदि स्थानोंमें प्रचार करके महाराणाजीके निमंत्रणानुसार फिर उदयपुर गये और यहांसे अजमेर आ गये।

इस वर्ष संयुक्त प्रान्तकी आर्य्यप्रतिनिधि सभाका अधिवेसन फरवरी ९८ में बुलन्द‌ शहरमें था । स्वामीजी इस अधिवेशनमें पधारे और फिर व्याख्यान देकर पीछे अजमेर आ गये । मार्च १८९८ में स्वामीजीने जयपुर, डांता, खाचरियावास, बीकानेर आदि स्थानोंमें प्रचार किया । और फिर अजमेर होते हुए नीमच, इन्दौर, देवास और धार आदि स्थानोंमें वैदिक धर्मका संदेशा जा सुनाया । इधरसे फिर वापिस लौटकर स्वामीजी जयपुर, आगरा, कानपुर, उन्नाव, लखनऊ, फैजाबाद, बनारस, दानापुर आदि स्थानोंमें घूमते हुए मई १८९८ में कलकत्ते पहुँचे ।

इस बार कलकत्तेमें स्वामीजीकी भेट बा. बरूहा नामक सज्जनसे हुई और उनसे मित्रभावका सम्बन्ध हो गया । इन्ही सज्जनके विशेष आग्रहसे स्वामीजीने इन्हींके यहां निवास किया । आर्य्यसमाज मन्दिरके निर्माणके लिये इस बार स्वामीजीने बाबू महावीर प्रसाद, शंकरनाथ, गोकुलचन्द्र, जयनारायण पोद्दार, लाला रलाराम, बा. छाजूराम आदिके साथ विशेष उद्योग किया । इन सज्जनोंमेंसे कई सज्जनोंका परिचय तो स्वामीजीसे प्रथम वारही हुआ था ।

पाठक देख चुके हैं कि स्वामीजी अबतक यथावसर बङ्गालको छोड़कर भारतके प्रत्येक प्रान्त यथा मद्रास, बम्बई, मध्यभारत, गुजरात, राजपुताना, संयुक्त प्रान्त, पंजाब, और विहारमें थोडा बहुत घूम कर प्रचार कर चुके थे । परन्तु बङ्गालमें केवल दार्जिलिङ्ग, कलकत्ता और करसियांगको छोडकर कहीं जानेका अवकाश नहीं पा सके थे । जिन सज्जनोंने आर्य्यसमाजमें व्याख्यानद्वारा सेवा करनेका व्रत धारण किया है उन्हें अवकाश मिलना असम्भव है । नित्य एक दो समाजके वार्षिकोत्सवपर पधारनेके निमंत्रण मिला करते हैं । फिर स्वामीजीकी स्थितिका विचार पाठक स्वयं कर सकते हैं । हमारे लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं । इस बार स्वामीजीने बङ्गाल प्रान्तमें प्रचार करनेका निश्चय कर लिया और इसके निमित्त तत्कालही तत्पर हो गये ।

मई १८९८ इस्वीसे मई १८९९ तक पुरा एक वर्ष स्वामीजीने बंगाल प्रान्तके प्रचारको अर्पण कर दिया और इस बीचमें निम्नलिखित स्थानोंमें विशेष प्रचार किया:—

जगन्नाथपुरी, दार्जीलिङ्ग, करसियांग, * मैमनसिंह, लोहारदग्गा, रांची, मुंगेर, आमदा, जलपाइगाड़ी, विलासपुर, पुरुल्या, रायपुर, भाटपाड़ा, जमालपुर, कुष्टिया, आसनसोल और रानीगंज ।

बीच २ में सुविधानुसार कलकत्ते भी आते रहते थे ।

मई १८९९ के अन्तमें जब स्वामीजी रांचीमें थे, तो महाराजा नाहरसिंहजी शाह[illegible]

*मैमनसिंहमें स्वामीजीके व्याख्यानोंका जनतापर बहुतही उत्तम प्रभाव पडा, वहांके [illegible] समके मेम्बर स्वामीजीको पुनः मैमनसिंह पधारनेके लिए बहुत पत्र लिखते रहे.

राधीशकी आज्ञानुसार पंडित इमीरमलजीने स्वामीजीको शाहपुरा पधारकर प्रचार करनेका अति आग्रहपूर्ण निमंत्रणपत्र भेजा था। इस समय शाहपुरामें स्वामी भास्करानन्दजी (जो जोधपुर राज्यकी ओरसे इङ्गलैण्ड आदि देशोंमें वैदिक धर्मका प्रचार करते गये थे और वहांसे पीछे भारतवर्षमें आ गये थे) भी आये थे, और व्याख्यान दे रहे थे।

राजाधिराज शाहपुराकी इच्छानुसार स्वामीजी भी जून १८९९ में शाहपुरा पंहुच गये। इस बार स्वामीजीके साथ एक मद्रासी और बंगाली संन्यासी और थे।

स्वामीजीके व्याख्यान होने लगे, जिनको श्रवण करनेके लिये राजाधिराज नित्य पधारा करते थे। जनसाधारण भी स्वामीजीके व्याख्यानोंको अत्यन्त भक्तिसे श्रवण करते थे। और स्वामीजीकी प्रशंसा करते नहीं थकते थे। यद्यपि स्वामीजीका विचार शाहपुरामें अधिक ठहरनेका नहीं था, तथापि राजाधिराजने अत्यन्त आग्रह करके उन्हें ३ महीनेंतक ठहराया।

राजाधिराजने स्वामीजीसे अनेक बार इच्छा प्रकट की कि आप शाहपुराको अपना केन्द्र स्थान (Head Quarter) नियत कर दें तो बड़ा अच्छा हो। साथही यह भी निवेदन किया कि यदि आप यहां ठहरें तो आपकी भेट एक २००० रुपयोंकी वार्षिक आयका गांव (जो एक नागा स्वामीके अधिकारमें था उनसे खरीदकर) कर दिया जावे।

पाठक सोच सकते हैं कि जब स्वामीजीने महाराजा माइसोरके रत्नभंडारको देखा-तक नहीं, जब कि महाराजाकी इच्छा थी कि स्वामीजी अपनी इच्छानुसार जो चाहें उसमेंसे ले लें। श्रीमान् शिवाजीराव होलकर महाराजा इन्दौरद्वारा प्रतिज्ञात १०००) मासिककी आयपर ध्यान नहीं दिया और अहमदाबादकी सवा लाखकी सम्पत्तिवाली ब्रह्मचारीकी बाड़ीका प्रबन्ध नहीं लिया वे राजाधिराजकी इस प्रकारकी इच्छा कब पूर्ण कर सकते थे? अतः स्वामीजीने राजाधिराजकी इस कृपाका अत्यन्त धन्यवाद मानते हुए इसे अस्वीकार किया।

अगस्तके अन्तमें स्वामीजी शाहपुरेसे अजमेर चले गये और थोड़े दिन ठहरकर भरतपुर गये।

इन दिनों स्वामीजीके नेत्रोंमें कुछ कष्ट था, इस लिये कुछ दिनोंके लिये नेत्रोंकी चिकित्सा करनेको भरतपुरमें श्रीयुत डाक्टर सुखदेवजी बर्माके यहां ठहरे। इसी अवसरमें स्वामीजी भरतपुरनरेश श्रीमान् ब्रजेन्द्र सवाई रामसिंह बहादुर से मिले और उनकी इच्छानुसार उन्हींके सन्मुख राजपंडित पंडित मूलचंद्रजी शर्मासे धर्मविषयपर वार्तालाप किया, जिसे सुनकर महाराजा अत्यन्त प्रसन्न हुए और दोनों महात्माओं-(स्वामीजी और श्रीमान् विश्वेश्वरानन्दजी महाराज) को सौ सौ रुपये भेट दिये।

महाराजासे मिलनेके पश्चात् स्वामीजीके पांडित्यपूर्ण वार्तालाप की चर्चा, तथा अन्य व्याख्यानोंका प्रभाव सर्व साधारणपर इतना पड़ा कि ता. १ अक्टूबर १८९९ ई. में भरतपुर राज्यमें आर्य्य समाज स्थापित हो गया।

भरतपुरसे स्वामीजी आगरा गये और वहांसे कानपुर जाकर प्रचार किया।

कानपुरमें स्वामीजी पंडित पृथ्वीनाथजी वकीलके यहां ठहरे थे और उन्हींके प्रबन्धसे व्याख्यान आदि होते रहे।

ता० २ नवम्बर १८९९ को स्वामीजी कलकत्ता पहुँच गये। और फरवरी १९०० तक बंगाल प्रान्तमें प्रचार करते रहे।

जिन स्थानोंमें स्वामीजी मई ९९ के अन्ततक प्रचार कर चुके थे, उनमें भी एक दौरा किया और सर्वसाधारणकी धार्मिक श्रद्धामें वृद्धि की।

इस बार दार्जिलिङ्ग, साहबगंज, भागलपुर, पुर्निया, दानापुर, रांची और लक्खीसराय आदि स्थानोंमें स्वामीजीका स्वागत और सत्कार बडी धूमधामसे हुआ।

लक्खीसरायमें स्वामीजी स्वामी सहजानन्दजीसे मिले। महर्षि दयानन्दजीके समयमें ये अपनेको महर्षि दयानन्दजीका शिष्य कहते थे, परन्तु पीछे विरोधी बन गये थे। इन दिनो ये एक कुटी बनाकर संन्यासी भेषमें रहते थे और आर्य्यसमाजसे भी अधिक विरोध नहीं रखते थे। इनके विचार प्रायः नवीन वेदान्तसे मिलते थे। इस बार भी कलकत्तेमें स्वामीजी महर्षि देवेन्द्रनाथ टगोरसे कई बार मिले और उनके आग्रहसे शान्ति-निकेतन बोलपुरके उत्सवमें गये। आदि ब्राह्मसमाज और आर्य्यसमाजको एक करनेके विषयमें इस बार और विचार हुआ और अन्य आर्य्यनेताओंके साथ इस विषयमें परामर्शके लिये नवम्बर १९०० में लाहोर आर्य्यसमाजके उत्सवपर महर्षिके पौत्र श्रीयुत बलेन्द्रनाथ *टागोरका भेजा जाना निश्चय हुआ। महर्षिने स्वामीजीसे यह भी निवेदन किया कि यदि आप यहां कुछ दिन स्थिररूपसे रहें तो बोलपुरका विद्यालय आपके सिपुर्द कर दिया जावे और आप यहां वैदिक सिद्धान्तोंका प्रचार करें। परन्तु स्वामीजीने कई कारणोंसे इसे स्वीकार नहीं किया।

श्रीयुत बी. बरुहा साहबके सहयोगसे स्वामीजीने चक्रधरपुर, झारसुगडा, विलासपुर, पिंडवाडा, और कटनी मुडवारा आदि स्थानोंमें प्रचार किया। पिंडवाडा बरुहा महोदयके व्यवसायका केन्द्र था।

कटनी मुड्वारेमें स्वामीजी पंडित बालाप्रसादजी लेट पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट इन्दौर राज्यके भाईसे (जो स्वयं इन्दौरमें जैलर थे, मिले। उन्होंने स्वामीजी और स्वर्गवासी श्री. पंडित गणपतिजी शर्मासे (जो इन दिनों प्रचार करते हुए इधर आ निकले थे) कई व्याख्यान यहां कराये।

---

*इस निश्चयके अनुसार बलेन्द्रबाबू लाहोर गये थे और अपने उद्देश्यमें बहुत कुछ सफलता प्राप्तकी, परन्तु थोडे दिन पीछे उनकी मृत्यु हो गई और यह बात जहां की तहां ठंढी पड गई।

श्रीमान् बल्हा महोदयके साथही स्वामीजी इस वर्ष कलकत्तेसे प्रयाग और सतना होते हुए **रीवां गये** और वहांके हाईस्कूलके हैडमास्तरके प्रबन्धसे कई व्याख्यान दिये। स्वामीजी यहां महाराजा साहब रीवांसेभी मिले और उन्हें धर्मोपदेश दिया।

पीछे लोटते हुए स्वामीजीने सतनामेंभी एक दो व्याख्यान दिये और फिर अर्धकुम्भीके अवसरपर प्रयागमें प्रचार किया। प्रयागसे कानपुर और आगरा आदि स्थानोंमें व्याख्यान देकर स्वामीजी फिर कलकत्ते चले गये और रामकृष्ण सरावगीकी धर्मशाला हैरिसन रोडमें ठहरे। यहां स्वामीजीके व्याख्यान भवानीपुर आदि अनेक स्थानोंमें होते रहे। समाजका निजूस्थान अभीतक नहीं बन पाया था।

श्रीयुत धर नामक एक सद्गृहस्थ स्वामीजीके बड़े भक्त हो गये और उन्होंने कलकत्तेके मारवाड़ीसमुदायमें वैदिक धर्मका सन्देशा पहुंचानेके निमित्त अपना एक विशाल गृह जो बड़े बाजारमें था, आर्य्यसमाजके व्याख्यान आदि प्रचारसम्बन्धी कार्य्यके लिये दे दिया। इस निकट स्थानको प्राप्त करके मारवाड़ीसमाज प्रायः स्वामीजीके व्याख्यान बड़ी रुचिसे सुनने आता था और आर्य्यसमाजको इस प्रकार इनकी सहानुभूति प्राप्त होने लगी।

इसी वर्ष श्रीमान् महाराजासाहब गायकवाड़ बड़ोदेकी प्रेरणासे स्वामीजीने एक पुस्तक वैदिक व्यवहारोंपर लिखकर महाराजाके पास भेजी थी।

श्रीयुत पंडित गणपतिजी शर्माके साथ कटनी मुड़वारामें प्रचारकरके स्वामीजीने जबलपुर, हरदा, इन्दौर, धार, देवास, नीमच, अजमेर, जयपुर, दांता, और जोबनेर आदिस्थानोंमें प्रचार किया।

जयपुरसे श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज तो सिमले चले गये और स्वामीजी कलकत्ते गये।

अगस्त १९०० में भारतधर्ममहामंडलका एक बृहत् अधिवेशन दिल्लीमें हुआ था। इस अधिवेशनकी सफलताके लिये महाराजा दरभंगाने १४००० रुपयोंकी सहायता श्रीयुत पंडित दीनदयालजी महामंत्री भारतधर्म महामंडलको दी थी। महामंडलका यह अधिवेशन बडीही सजधजसे हुआ। आर्य्यसमाजकी ओरसे भी एक बडा भारी पंडाल जुम्मामसजिदके पास बनाया गया। अन्य आर्य्य उपदेशकोंके अतिरिक्त श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजभी इस अवसरपर दिल्ली पधारे थे। यहां आपके व्याख्यान बडे प्रभावशाली हुए। सारांश आर्य्य-समाजका प्रचार वडी सफलतासे स्थिरप्रभावोत्पादक हुआ। महामंडलके विद्वानोंसे शास्त्रार्थकी चर्चाभी चली थी, परन्तु केवल बातेंही होकर रह गई; शास्त्रार्थ नहीं हुआ।

दिल्लीसे स्वामी श्री विश्वेश्वरानन्दजी सिमला चले गये और थोडे दिन ठहरकर स्वामीजीसे कलकत्तेमें जा मिले। कलकत्तेसे स्वामीजीने श्रीमद्दयानन्द-अनाथालय अजमेरकी सहायताके लिये कपडे और रुपया भिजवाया था। जनवरी १९०१

में स्वामीजी कलकत्तेसे चलकर रांची, भागलपुर, मुंगेर, पटना, दानापूर, आरा, इलाहाबाद, कानपुर, आगरा, जयपुर, भरतपुर, अजमेर आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए १६ फरवरीको इन्दौर पहुँचे और यहांसे देवास, धार, और नीमचमें उपदेश करके तांगेकी सवारी करके झालावाड गये। झालावाडमें स्वामीजी राजराणा भवानीसिंहजी और दीवान पंडित परमानन्दजी चौबेसे मिले। राजराणा और दीवानसाहब स्वामीजीकी विद्वत्तासे अत्यन्त प्रसन्न हुए और स्वामीजीको राजके अतिथिरूपमें ठहराकर कई दिनोंतक धर्मोपदेश श्रवण किया।

झालावाडसे स्वामीजी अपने स्थापित किये समाजमें और भी उन्नति करनेके लिये कोटा गये। और श्रीमान् विजयसिंहजी कुनाडी राजसे मिलकर आर्य्यसमाजकी उन्नतिके विषयमें उचित संमति दी कोटासे नीमच होकर स्वामीजी उपयपुर गये और महाराणाजीके अतिथि होकर ठहरे। इस वार उदयपुरमें ठाकुर मनोहरसिंहजीके आग्रह और प्रबन्धसे स्वामीजीने एकलिंग, नाथद्वारा, कांकरोली, लावा आदि स्थान देखे। लावामें ठाकुर मनोहरसिंहजीके भ्राता ठाकुर शार्दूलसिंहजीने स्वामीजीका स्वागतसत्कार बड़े प्रेम और उत्साहसे किया और अपने ग्रामनिवासियोंको स्वामीजीका उपदेश श्रवण कराया। लावासे गंगापुर, भीलवाडा, और शाहपुरा आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए स्वामीजी अजमेर आ गये। इधर दो तीन वर्षोंसे अजमेर आर्य्यसमाजके सभासदोंमें आपसमें वैमनस्य फैल रहा था और भी कई प्रकारके सामाजिक विवाद उठ खडे हुए थे। अतः इन्हें शान्त करनेके लिये भी स्वामीजीको बारम्वार अजमेर आना पडता था। अजमेरसे स्वामीजी अहमदाबाद गये और २२ फरवरीसे ६ मार्चतक गूजरात प्रान्तमें प्रचार करके अजमेर होते हुए जयपुर गये। इस समय ठाकुरसाहब दांता जयपुरमेंही थे, अतः आपने स्वामीजीको अपने स्थानपरही ठहराया और कई दिनोंतक धर्मविषयपर चर्चा होती रही। कई मुसलमान सज्जन भी जिज्ञासाभावसे अपनी शंकाएं निवारण करते रहते थे। जयपुरसे स्वामीजी सिमला चले गये। अभी सिमला गये स्वामीजीको थोडेही दिन हुए थे कि आपको श्रीमान् महाराजा साहब गायकवाड़ बड़ोदाका नैनीताल पधारनेके लिये तार मिला। महाराजासाहब बड़ोदा इस बार ग्रीष्मनिवासहित नैनीताल पधारे थे, अतः स्वामीजीसे धर्मोपदेश श्रवण करनेके लिये आपने उन्हें नैनीताल बुलवाया। स्वामीजी सिमलेसे नैनीताल गये और राजा जयकृष्णदास C. I. E. के यहां ठहरे। यहां स्वामीजीने महाराजासाहब और महाराणीसाहब गायकवाड़के सन्मुख कई व्याख्यानोंके अतिरिक्त कई पबलिक व्याख्यान भी दिये, जिनमें सब श्रेणीकी जनता आती रहती थी।

राजा जयकृष्णदासजीने स्वामीजीसे प्रार्थना की कि आप नैनीतालसे आगरे पधारें और हमारे 'चौबे बोर्डिङ्ग हाउस' का निरीक्षण करके उसकी उत्कृष्ट रचनाके लिये अपनी सम्मति देनेकी कृपा करें इस लिये जब स्वामीजी नैनीतालसे चले तो मुरादाबादमें व्याख्यान देकर,

आगरे पहुंचे और राजा जयकृष्णदासजीकी कोठीमें ठहरे और उनके बो.डिंगका निरीक्षण करके उसके प्रबन्धके बारेमें उचित सम्मति दी। इसके अतिरिक्त आगरा समाजके प्रबन्धसे व्याख्यान भी दिये। आगरेसे स्वामीजी मथुरा, फर्रुखाबाद, कानपुर, उन्नाव और लखनऊकी आर्य्यसमाजोंमें व्याख्यान देते हुए काशी पहुंचे। काशीमें स्वामीजीने एक संस्कृत पाठशाला खोलनेका विचार किया और उसके लिये उद्योग करना आरम्भ कर दिया। अयोध्यापुरी नामक संन्यासीने राजमन्दिर शीतलाघाट पर 'ऋद्धनाथका' मठ इस निमित्त दे दिया। फैजाबादके कमीशन एजन्ट श्रीयुत राजकरणजीने १०००० रुपया इस पाठशालाके निमित्त देनेकी प्रतिज्ञा की। इस सहायताको प्राप्त करके स्वामीजीने उक्त मठमें पाठशाला खोल दी और एक पंडित तिवाड़ीनामकको ३०) रुपये मासिकपर पढानेके लिये नियत कर दिया। आरम्भमें पाठशालाका समस्त व्यय श्रीयुत राजकरण कमीशन एजन्ट देते रहे और १००००) का एक ट्रस्ट भी तीन सज्जनोंके नाम कर दिया, जिसमें स्वामीजी भी सम्मिलित थे। स्वामीजीने इस पाठशालाके लिये काशी और कलकत्तानिवासी कई सज्जनोंसे सहायता प्राप्त की और कितनाही मासिक चंदा लिखवाया। यह पाठशाला दो तीन वर्षोंतक चलती रही। पीछे श्रीयुत राजकरणने अज्ञात कारणोंसे सहायता देना बन्द कर दिया और स्वामीजी भी उसके निरीक्षणके लिये अधिक समय नहीं दे सके। अतः थोड़े दिन पीछे पाठशालाको बन्द कर देना पड़ा। २९ अगस्त १९०१ को स्वामीजीसे बम्बईके सुप्रसिद्ध व्यापारी श्रीयुत जेठाजी प्रेमजी मिलने आये और स्वामीजीसे धर्मोपदेश श्रवण करके अत्यन्त प्रसन्न हुए।

काशीसे स्वामीजी सिमला चले गये। सिमलामें पंडित हमीरमलजी किसी कार्य्यवश आये थे, अतः ९ नवम्बर १९०१ को स्वामीजी और पंडित हमीरमलजी साथ २ ही लखनऊ आये। इस समय लखनऊमें क्षत्रिय महासभाका अधिवेशन था। इस महासभाके अनेक प्रतिनिधियोंने स्वामीजीके व्याख्यानोंका लाभ उठाया। लखनऊसे कानपुर होते हुए स्वामीजी प्रयाग पहुंचे। दिसम्बर १९०१ में आर्य्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्तका वार्षिक अधिवेशन प्रयागमें होना निश्चित हुआ था। इस अधिवेशनका प्रबन्ध श्रीयुत मेवालालजी कलवार रईस प्रयागने किया था। प्रतिनिधिके अधिवेशन और उपदेशोंके लिये एक विशाल मण्डप बनवाया गया अधिवेशन बड़ी धूमधाम और सफलतासे हुए। और इसी अवसरपर श्रीयुत मेवालालजीने स्वामीजीसे यज्ञोपवीत लिया था और काशीकी पाठशालाके लिये अपना एक स्थान स्वामीजीको दे दिया। यह स्थान स्वामीजीके प्रयागसे चले जानेके पश्चात् प्रतिनिधि सभाके उपदेशकोंने मेवालालजीको कह सुनकर आर्य्यसमाज काशीका मंदिर बनवानेके लिये ले लिया। स्वामीजीने कोई आपत्ति नहीं की। आज कल आर्यसमाज काशीका मंदिर इसी स्थानपर बना हुआ है। प्रयागसे स्वामीजी काशी होते हुए कलकत्ता गये। और श्रीयुत B. बरुहाके साथ चक्रधरपुर, झारसूगढ़ा, बिलासपुर, कटनी मुड़वारा, और सतना आदि स्थानोंमें प्रचार किया।

सतनासे स्वामीजीने बरूहा महोदयका साथ छोड़ दिया और प्रयाग, कानपुर, काशी, आगरा, मथुरा, दिल्ली, अम्बाला और लाहोर आदि स्थानोंमें १५ मई १९०२ तक प्रचार किया।

फाल्गुन वदी १२, १३, व १४ सं. १९५८ तदनुसार ता. ७, ८ व ९ मार्च १९०२ को मछली शहर जि. जौनपुर आर्य्य समाजका उत्सव था। स्वामीजी भी इस उत्सवमें पधारे थे। इसका वृत्तान्त श्रीयुत दुर्गाप्रसादजी शर्मा सब रजिस्ट्रार वृन्दावनके शब्दोंमें पाठकोंके ज्ञातार्थ दिया जाता है।

रजिस्ट्रार साहब अपने एक पत्रमें लिखते हैं—

"सन १९०२ ई० का वाकयाहै कि जब यह दास जिला जौनपुरमें मुलाजिम था और श्री पूज्य १०८ ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी स्वर्गवासी उन दिनों काशीजीमें राजा माधोलालजीके बाग बालापुरमें विराजमान थे, तो कस्बा मछली शहर जो एक प्रसिद्ध मुसलमानोंकी आबादी है और जौनपुर रेलवेस्टेशनसे मीलके फासलेपर है, वहांके आर्य्य-समाजने मुंशी भगवतीप्रसाद मंत्रीके उद्योगसे द्वितीय वार्षिकोत्सव फाल्गुन वदी १२, १३, व १४ को करना निश्चय किया। इस नवीन व अति निर्बल समाजको हानि पहुँचानेके लिये मछली शहर व इसके इर्दगिर्दके प्रतिष्ठित व धनवान् पुरुषोंने एक सनातन धर्मसभा मछली शहरमें कायम की। और बहुत काफी मिकदारमें चंदा एकत्रित किया कि आर्य्यसमाजसे शास्त्रार्थ करके उसको पराजित किया जावे। चुनांचे उत्सवसे एक दिन पूर्व जौनपुर जिलेमें जिस कदर पंडित विद्यमान थे वह सब और काशीके कई पंडित जिनकी तादाद ५० थी पहुंच गये। और समाजसे श्रीमान् पंडित रुद्रदत्त सम्पादकाचार्य्य और गोकुलचन्द विद्यार्थी और महाशय सत्यदेवजी जो इन दिनों काशीमें पढते थे और अब संन्यासी हैं उपस्थित थे। चूंकि मछली शहर मुसलमानी कसबा है और जुलाहोंकी अच्छी आबादी है। मुसलमान लोग भी शास्त्रार्थ करने व विघ्न डालनेको उद्यत थे। इधर इन सब विरोधोंका सामना करनेको मछली शहर समाजके आठ नौ मेम्बर थे। उस वक्त समाजने स्वामीजीको तारद्वारा शास्त्रार्थमें पधारनेके लिये निवेदन किया। आप उसी समय धर्मकी डूबती हुई नावको बचानेके लिए चल दिये। यह दास जौनपुर स्टेशनपर किराये की गाड़ी लिये खडा था और रेलकी इन्तजारी कर रहा था कि गाडी आतेही श्रीमानूके दर्शन हुए। धर्मका सूखा खेत हरा हो गया। बावजू दे कि राजा माधोलालजीने स्वामीजीको मछली शहर पधारनेसे रोका, वहांकी त्रुटियां व रास्तेकी तकलीफोंको बतलाया और कहा कि आपके विद्वत्तापूर्ण उपदेश व गहन फिलासफी को समझनेवाला वहां कौन है? लेकिन धर्मकी शान्तमूर्तिने उत्तर दिया कि मछली शहर समाजपर आक्रमण हो रहा है और वह संकटमें पडी है; उसका उद्धार करना मेरा परम धर्म है, मै अवश्य जाऊँगा; जो हो। स्टेशनसे २० मीलका सफर था और किरायेकी गाडीके घोडे कमजोर थे।

शास्त्रार्थके लिये समयसे पहले पहुंचना लाज मी था। रास्तेमें जब मछली शहर ६ मीलपर रह गया तो घोडेका पुराना साज टूट गया; बांधनेके लिये रस्सीकी कमी थी। स्वामीजीने आज्ञा दी कि मेरा अंचला जो कीमती था जोड दिया जाय। घोडे कमजोर हैं, थक गये हैं; धीरे २ आंय। हम पैदल चलते हैं, ताकि वक्तपे पहुंच जावें। सेवकके व गाडीवानके विशेष प्रार्थना करनेसे कि हम जल्द पहुंचा देगें, ब्रह्मचारीजी गाडीपर सवार हो गये और शास्त्रार्थसे पहले पंहुच गये। आर्य्यसमाजके सभासदोंकी जानमें जान आ गई।

शास्त्रार्थ।

पहले मुसलमानोंका एक बड़ा समुदाय मुबाहिसा करनेको पंडालमें आया। मछली शहर व गुलजारगंजके थानोंके सब इन्सपेक्टर मय अपने मातहतोंके प्रबन्धके लिये उपस्थित थे। मुसलमानोंके वकीलसे ब्रह्मचारीजीने कुरानकी एक आयत पढके एतराज किया और उनसे उत्तर मांगा। उस समय उनका उत्तर और स्वामीजीका एतराज देखने व सुनने योग्य था। वकील इसलाम बहुतही परेशानीमें पड़ा हुआ माकुल उत्तर न देकर समय गंवा रहा था कि उसी समय घडी घंटा बजाते और जय मनाते हुए धर्मसभाकी मंडली जिसके साथ दोढाई हजारसे कमका समुदाय नहीं था, आ विराजी। इस शोर व गुलके कारण वकील इसलामके जानमें जान आई और बहाना पेश किया कि हम बादमें उत्तर देंगे।

चुनाचे पण्डालमें सनातन धर्मसभाके पंडित और प्रतिष्ठित पुरुष आदरसत्कारसे बिठलाये गये और पुलिसने सब जगह शान्तिका प्रबन्ध कर दिया। उस वक्तकी हाजिरी किसी हालतमें ५००० से कम न थी। जब शास्त्रार्थ शुरू हुआ। इधर ब्रह्मचारीजीव पंडित रुद्रदत्तजी थे और उधर ५००० विपक्षी जिनमें ५० के लगभग काशी व इर्दगिर्दके विद्वान् पंडित और प्रतिष्ठित पुरुष थे। सेवकने सनातन धर्मसभाके पंडितसे प्रार्थना की कि-'शास्त्रार्थ किस विषयपर होगा?' इसपर काशीके पंडितजीने जिन्हें महामहोपाध्याय पं० शिवकुमारजी शास्त्रीने भेजा था, जोशमें आकर कहा कि सब विषयोंपर शास्त्रार्थ करनेको उद्यत हूं। इसपर दासने निवेदन किया कि दिनके दो बज गये हैं, सब विषयोंका निर्णय होनेका समय नहीं है; इस लिये मूर्तिपूजा जो प्रधान विषय है इसीपर शास्त्रार्थ आरम्भ किया जावे। इसपर सनातन धर्मके पंडितोंने सहर्ष स्वीकार करके "त्र्यम्बकं यजामहे" यह मंत्र मूर्तिपूजाके समर्थनमें पेश किया और इसकी व्याख्या की। इसके उत्तरमें ब्रह्मचारीजीने इस मंत्रकी व्याख्या प्रमाणोंसे की और यह भी कहा कि महाभारतमें लिखा है कि-महादेवजीने तप किया, उससे तीसरा नेत्र उनके हुआ। वेद अनादि व सनातन है। उसमें यह इतिहास नहीं हो सकता। "त्र्यम्बकम्" के अर्थ तीन नेत्रके नहीं, बल्कि तीन लोकोंके ज्ञाताके हैं।

स्वामीजीके अखण्ड प्रमाणका उत्तर न देकर सनातन धर्म सभाके पंडितने " सहस्र शीर्षा " यह मंत्र मूर्तिपूजाकी सिद्धिमें पेश किया। इसके उत्तरमें ब्रह्मचारीजीने कहा कि इसका अर्थ केवल हजार सिरही नहीं है, बल्कि यहां सहस्र शब्द बहुसंख्यावाचक है अर्थात् हजारों सिर हैं ऐसा अर्थ करना चाहिये। इसके आगे युक्ति और प्रमाणोंसे वेदमंत्रोंकी व्याख्या करते हुए मंत्रका वास्तविक तात्पर्य्य समझाया; जिसे सुनकर श्रोतागण चकित होकर चित्रवत् बैठे रहे। इसके अनन्तर सनातन धर्मावलम्बी पंडितोंने " ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् " इस मंत्रका उच्चारण करके अपने पक्षकी पुष्टि करनेका उद्योग किया जिसका उत्तर पंडित रुद्रदत्तजीने दे दिया। पंडितजीके उत्तरके पीछे जब सनातनधर्मियोंने अपना पक्ष गिरता देखा तो पंडितजीको गालियाँ देने लगे और घडीघंटा बजाते हुए और कोलाहल करते हुए पण्डालसे प्रस्थान कर गये। इस शास्त्रार्थसे समाजकी सचाई और विजयका बड़ा भारी प्रभाव पड़ा और सर्वसाधारण पंडालमें बैठे रहे। इसके पश्चात् स्वामीजीने ईश्वरके अस्तित्वपर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया जिसमें 'ईश्वर निराकार है, उसकी मूर्ति नहीं बन सकती' आदि भली प्रकार सिद्ध किया। जिसे सुनकर कट्टरसे कट्टर विरोधी मुसल्मान प्रफुल्लित हो गये और स्वामीजीकी प्रशंसा करते हुए अपने २ घर गये।

काशीसे स्वामी सिमला गये और यहाँ मई १९०२ के अन्ततक ठहरे और जूनके आरम्भमें बम्बई चले गये।

इस बार स्वामीजीका बम्बई आनेका कारण वेदधर्म प्रचारिणी सभाका निमंत्रण था। इस सभामें धार्मिक चर्चाके लिये बडे समारोहसे उत्सवकी तयारियाँ की थीं। और माधवबागके समीप बडा भारी मंडप बनवाया था। स्वामीजी भी वहीं ठहरे थे। व भोजनादिका सब प्रबन्ध श्री सेट जमनादास नारायणदासजी, तथा श्रीसेठ भवानीदास नारायणदासजी मोतीवालाने किया था। ये दोनों बन्धु मुम्बईमें प्रसिद्ध नागरिक हैं। इनमें सेठ भवानीदासजी आनरेरि मजिट्रेट हैं। फिर कुछ मासके बाद स्वामीजी श्रीसेठ जयनारायणजी दानीके वालकेश्वरवाले बंगलेमें ठहरे और भोजनादिका सब प्रबन्ध उक्त सेठजीने ही किया।

स्वामीजीका यह प्रवास बडेही महत्त्वका था। जितना धर्मिक आन्दोलन बम्बईमें इस बार हुआ उतना सम्भवतया बहुत कम होनेकी सम्भावना है।

स्वामीजीके बम्बई आनेके पूर्व धर्मसभा अपने प्लेटफार्मद्वारा आर्य्यसमाजके विचार और मन्तव्योंका प्रचार नहीं करने देती थी।

इस सभाके संस्थापक ब्रह्मचारी रामेश्वरानन्दजी नामक एक उद्योगी और उत्साही सज्जन थे। आपने इस सभाका प्रथम वार्षिकोत्सव मनानेके लिये बहुतसे रुपये एकत्रित कर लिये थे।

इस सभाके प्रधान श्रीयुत डाक्टर सर भालकृष्ण भाटवडेकर थे। और मंत्री डाक्टर केवटराम प्रभुराम L. M. S. और रावबहादुर त्र्यम्बक नारायण वैद्य थे।

इस सभाने २६ प्रश्न छपवाकर समस्त भारतवर्षमें विद्वान् पंडितोंके पास उत्तर देनेके लिये भेजे थे।

वे प्रश्न यह हैं:—

(१) वेदोंके स्वतःप्रमाण और अपौरुषेयसम्बन्धी विचार।
(२) मंत्र और ब्राह्मण दोनों अपौरुषेय हैं, या केवल मंत्र?
(३) ये समकालीन हैं, या विषमकालीन?
(४) मूर्त सृष्टिके पहले वेदोंका होना सम्भव है इसपर विचार।
(५) वेदोंके निर्माणकर्ता विग्रहवान् थे, वा विग्रहरहित?
(६) ऋषि मंत्रद्रष्टा क्यों कहे जायं और उनमें मंत्रद्रष्टृत्व क्या है?
(७) वेदोंमें कहे हुए मधुष छंद भारद्वाज आदि शब्दार्थका विचार।
(८) यज्ञमें द्रव्यदेवताओंका विचार; उसमें पशुहिंसासम्बन्धी कर्तव्याकर्तव्यका विचार.
(९) वेदके छ अंङ्गोंके समयका विचार।
(१०) दर्शनोंके आपसमें विरोधका परिहार तथा समयका विचार।
(११) यज्ञदेवता विग्रहयुक्त हैं वा विग्रहरहित?
(१२) बौद्ध और जैनियोंके दर्शन षड्दर्शनोंसे पीछे बने हैं, वा आगे?
(१३) स्मृतियोंके लिये कर्तृत्वादिविचार।
(१४) स्मृतियां प्रथम या व्यवहार?
(१५) कलियुगमें क्षत्रियवैश्योंके लिये सद्भाव और उपनयनविचार।
(१६) कन्याका विवाह और वयसम्बन्धी विचार।
(१७) चातुर्वर्ण्यविभाग गुण-कर्मसे है, या जन्मसे?
(१८) द्विजोंके लिये द्वीपान्तरमें जाना उचित है, या नहीं?
(१९) अपनी अपनी जातिमें सामान्य भोजन करने और भोजनव्यवहारवालोंके साथ कन्याव्यवहारसम्बन्धी विचार।
(२०) स्त्रीशिक्षा और गृहकार्य्यमें स्त्रियोंका स्थान।
(२१) क्षत्रियोंकी धर्मोन्नतिसम्बन्धी विचार।
(२२) चौदह विद्याओंके पठनपाठनसम्बन्धी विचार।
(२३) पुराण, इतिहास और उनमेंके संदिग्ध विषय।
(२४) विधवाविवाह शास्त्रविरुद्ध है या नहीं?
(२५) आश्रमधर्मोंके लिए कलियुगमें विशेष विचार।
(२६) पतितोंको पवित्र करने सम्बन्धी विचार।

इन प्रश्नोंको भारतवर्षभरके विद्वानोंके पास उत्तरके लिये भेजनेके अतिरिक्त बम्बईमें भी एक महाधर्मसम्मेलनका आयोजन किया गया। जिसमें काशीके अन्य विद्वान् पंडितोंके अतिरिक्त महामहोपाध्याय पंडित शिवकुमार शास्त्रीजी भी पधारे थे।

आर्य्यसमाजकी ओरसे इस सम्मेलनमें पंडित विद्वद्वर बालकृष्णजी प्रतिनिधि नियत किये गये। धर्मसभाके सभासदोंके विचारोंकी व्यापकतासे उन्हें अपने विचार प्रकट करनेका अवसर दिया गया।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, स्वामीजी मुम्बईमें जून १९०२ के आरम्भमें आ गये थे और दिसम्बर १९०२ के अन्ततक ठहरे। बीचमें अवकाशानुसार जुलाई मासके थोडेसे दिन भरूंच और बीजलपुर आदि स्थानोंमें प्रचारार्थ गये थे। और इसी अवसर-पर बीजलपुरमेंसे समाज भी स्थापित किया।

इस बार मुम्बईमें स्वामीजीने क्या क्या कार्य किया, और उसका प्रभाव कैसा रहा यह सब हम अपनी ओरसे न लिखकर उस समयके मुम्बईसमाचारके अंकोंसे उद्धृत कर देते हैं।

मुम्बई समाचार ता० २ जुलाई १९०२ स्वामी श्री हंसस्वरूप और वेदधर्म प्रचारिणी सभा

"सुप्रसिद्ध स्वामी श्री हंसस्वरूप कुछ दिन हुए इस नगरमें पधारे थे। उस समयका लाभ लेकर यहांकी वेदधर्मप्रचारिणी सभाने सविनय स्वामीजीको मूर्तिपुजा, ईश्वरके प्राकृतिक अवतार, मृतकश्राद्ध और जन्मसे वर्णाश्रमकी प्रथा वेदानुमोदित हो तो सिद्ध कर देनेके लिये वदर्धमप्रचारिणी सभाके आमंत्रणसे यहां पधारे हुए सुप्रसिद्ध स्वामी श्री विश्वेश्वरानन्दजी और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीके साथ शास्त्रार्थ करनेके लिये निवेदन किया था। ब्रम्हचारी नित्यानन्दजीने आजसे आठ वर्ष पहले फ्रामुजी कावसजी हालमें मिस्टर जस्टिस् रानडे, आनरेब्बिल मिस्टर झवेरीलाल याज्ञिक, महामहोपाध्याय झलकीकर आदिके प्रधानत्वमें अनेक व्याख्यान दिये थे। और उनके व्याख्यान श्रवण करनेके लिये लोगोंकी इतनी उत्कंठा थी कि उस समय हालमें खडे रहनेके लिये भी जगह नहीं मिलती थी। उनके व्याख्यानोंमें अंग्रेजी पढे लिखे संस्कारयुक्त गृहस्थ भी जितने एनीबिसेंटके व्याख्यानमें जमा होते थे, उतनेही उस समय देखनेमें आते थे। उनकी विद्वत्ता और उच्च वक्तृत्वशक्तिकी सब मुक्त कंठसे प्रशंसा करते थे। अभी भी वेदधर्मप्रचारिणी सभाका जो महोत्सव माधवबागमें हुआ, उसमें भी स्वामीजीने तीन व्याख्यान दिये थे। उस समय भी लोगोंकी भीड, उनकी विद्वत्ता और वक्तृत्वशक्तिका परिचय देती थी। यदि इन दोनों समाजोंमें (आर्य्यसमाज और वेदधर्मप्रचारिणी सभा, जिनका उद्देश एकही है, ऐक्य होजाय तो आर्यमंडलको कितना लाभ हो। शास्त्रार्थके लिये स्वामी हंसस्वरूप और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी जैसे महात्माओंका संयोग मुंबई जैसे नगरमें होना कोई सामान्य भाग्यका विषय नहीं है। उपरोक्त चार विषय विवादास्पद हैं। और यह दो

महात्माही उनका निर्णय करनेको अति योग्य हैं। परन्तु शोकका विषय है कि स्वामी हंसस्वरूपजी अपनी आगेसे की हुई व्यवस्थाके अनुसार नासिक गये हैं, तो भी "शास्त्री छगनलाल और शास्त्री विष्णवाचार्य्य, ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीसे शास्त्रार्थ करनेको तैयार हैं।" ऐसा मुम्बईसमाचारके चर्चापत्रमें अन्यत्र प्रकाशित समाचारोंसे प्रकट होगा। आर्य्य सामाजिक जगत्में शास्त्रार्थके लिये ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीसे कोई अधिक योग्य नहीं है, दूसरी ओर हिन्दूधर्मके प्रतिपादनकर्ता स्वामी श्रीहंसस्वरूपसे अधिक दूसरा मिलना कठिन है धर्म महामंडल जिसका उद्देश्य सनातन हिन्दूधर्मका उद्धार करना है उसके वह शोभा रूप हैं। उनकी आल्हादित वाणीने मुम्बईवासी हिन्दुओंके मन आकर्षित कर लिये हैं। उनकी वाणीमें कुछ न्यूनता नहीं है। आर्य्यसमाज और हिन्दूसमाज दोनों वेदको ईश्वरप्रणीत मानते हैं। उनमें केवल अर्थोंमें-ही भेद है। अर्थभेदका निर्णय व्याकरणरके मननसे होगा ऐसी हमे आशा है। उन विषयोंपर दोनों पक्षोंकी ओरसे व्याख्यान देनेकी अपेक्षा हिन्दू समाज और वेदप्रचारिणी सभा (जो वास्तवमें आर्य्यसमाज है) अपने अपने उत्तम विद्वानोंको शास्त्रार्थमें आनेके लिये सारे भारतवर्षमेंसे निमंत्रित करे; ताकि कोई उत्तम सर्वहितकारक लेखबद्ध शास्त्रार्थ हो और मिस्टर शामराव विट्ठल वा डाक्टर भांडारकर, वा प्रोफेसर कायवटे जैसे उत्तम संस्कृत विद्वानोंको इस समय मध्यस्थ नियत करें तो आर्यावर्तकी धार्मिक उन्नतिका प्रारम्भ होनेमें देर नहीं लगेगी। मध्यस्थका आन्तिम अभिप्राय सबको मान्य होगा। दोनों दलोंसे विवादास्पद विषयोंको एकसिद्ध करनेकी हमारी प्रार्थना है"

इस लम्बे उद्धरणसे पाठकोंको यह स्पष्ट विदित हो गया होगा कि वही धर्मसभा जो आरम्भमें आर्य्यसमाजके विचारोंके प्रचारकी विरोधिनी थी और आर्य्य समाजके प्रतिनिधिको अपने प्लेटफार्मसे भाषण करनेका अवसर नहीं देती थी, स्वामीजीके व्याख्यानोंसे प्रभावित होकर सत्य मार्गकी ओर चल पडी और उस धर्मसभाने अपनेही प्रबन्ध व अपने व्ययसे २६ प्रश्नोंपर स्वामीजीके १५-२० व्याख्यान करवाए। और २ जुलाई १९०२ को वे. प्र. सभाके सामयिक प्रधान श्रीयुत प्राणजीवन विट्ठलदासजीने अपने हस्ताक्षरोंसे स्वामी हंसस्वरूपजीको स्वामीजीके साथ उपरोक्त चार विषयोंपर शास्त्रार्थ करनेका चैलेंज भेज दिया! इसके बाद भरूचसमाजका निमंत्रण पाकर स्वामीजी दो दिनके लिए वहां गये, जिसका वृत्तान्त १६ आगस्त १९०२ की आर्य्यपत्रिकामें इस प्रकार मुद्रित हुआ* भरोंचसे लौटते समय स्वामीजी नौसारी गये। वहां ता० १८ जुलाई

* Mr. Hira, Lal M, Vaishya, Secretary, Arya Samaj, Broach, writes:—

Brahmchari Shree Nityanandji reached here on the 8th July 1902. Though his health was not good he delivered, at the Loke Hitechu Sabha Hall, two lectures on the 10th and 11th instant on 'Ishwar Nidarsan' under the Presidentship of Mr. Mani Lal, M. Vaishya, Pleader, and R. B. Moti Lal Chuni Lal, late District Deputy

की "नवसारी ज्ञानप्रसारक सभा" की ओरसे गोवर्धनदास एजुकेशनल इन्सपेक्टरके प्रधानत्वमें 'मनुष्य जीवनका उद्देश्य' इस विषयपर व्याख्यान हुआ। उसके अनन्तर स्वामीजी बंबईमें आये और नीचे लिखे अनुसार उनके क्रमशः व्याख्यान हुए। ता० १९ जुलाईको वेदधर्म प्रचारिणी सभाकी ओरसे आनरेबिल भालचन्द्र कृष्णके प्रधानत्वमें 'ईश्वर क्या है' इस विषयपर उक्त व्याख्यानोंके बीचमें निम्नलिखित उत्तरभी स्वामीजीने दिये हैं। ता० २२ जुलाईको श्रीयुत देवकृष्णजी महामंडलद्वारा किये हुए २० प्रश्नोंके उत्तर स्वामीजीकी ओरसे प्रकाशित किये गये। वे ये हैं:—

(१) वेद अनादि, अपौरुषेय और ईश्वरीय ज्ञान हैं। ईश्वर जब २ सृष्टि बनाता है तब २ वेद प्रगट करता है।

(२) ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनों अनादि हैं।

(३) ईश्वरके साथ जीवका व्याप्य-व्यापक, आधार-आधेय आदि सम्बन्ध है।

(४) जीव अनेक हैं।

(५) जीवको ईश्वरकी पहिचान करानेवाले सत्कर्मानुष्ठान, ब्रह्मजिज्ञासा, वेदादि सत् शास्त्र और सदुपदेशादि साधन हैं।

(६ और ७) वेदमें मूर्तिपूजा नहीं है; इसका निषेध वेदनेही प्रथम किया है। श्रीमद्भागवतमें मूर्तिपूजाका खंडन कर दिखलाया है। ता. २३ जुलाईको स्वामीजी और

Collector, now a pensioner, respectively. People of the town were already aware of the learning and the oratory of the Brahmachariji and consequently the hall, on both the days, was overcrowded. Almost all the Pleaders, officers and other gentlemen were present to hear his able and most instructive lectures. The audience numbered about 500 souls. The learned orator dealt with the subject in so eloquent and masterly a manner, giving authorities from the Vedas, Shastras, Upanishads, Gita &c., and witty and instructive examples suited to the subject at intervals, that all present were spell-bound and stuck to their places till the lectures were over. Calmness prevailed throughout both the lectures and, though the lectures exposed fallacies of other religious creeds of Hindus, Mohammedans Christians, &c., all heard him patiently, were greatly pleased with the style of his delivery of lectures, and praised the lecturer with one voice. Not only this but they and the President requested him to favour them with some more lectures; but, as his presence was urgently needed at Bombay, he could not comply with their request and left the place for Bomby on the 12th. The Samaj is highly obliged both to the Brahmchariji and the Veda Dharm Pracharini Sabha for this act.

स्वामी हंसस्वरूपजीका लेखद्वारा मुकाबला हुआ। इस दिन हंसस्वरूपजी केवल एकताका राग जाकर पधार गये। किसी शास्त्रीय अथवा पूर्वलिखित विवादास्पदविषयपर चर्चा करनेको तत्पर नहीं हुए।

ता० २४ जुलाईको वेदान्त फिलासफीपर श्रीयुत आनरेबल कोलदास कानदास पारिख महोदयके प्रधानत्वमें व्याख्यान हुआ।

ता० २९ जुलाईको देशाटनपर श्रीयुत ना. ग. चंदावरकरके प्रधानत्वमें व्याख्यान हुआ।

ता० १ अगस्त स्वामी गिरानन्दजीके व्याख्यानमें स्वामीजी उपस्थित थे।

ता० ४ अगस्तको क्षत्रियधर्मपर क्षत्रियपंचकी वाडीमें श्रीयुत रावसाहब दलपतरामजी J. P. के प्रधानत्वमें व्याख्यान हुआ।

ता. ८ अगस्त—स्वामीजीसे निर्णयके लिये निश्चित २६ प्रश्न हिन्दू सभामें उपस्थित किये गये इसी दिन १ प्रश्न. वेदोंके स्वतः प्रमाण अपौरुषेयत्वपर व्याख्यान।

ता० १३ अगस्त यज्ञमेपशु हिंसावेदानुकुल है या नहीं इस पर व्याख्यान।

ता० १४ अगस्त—२६ प्रश्नोंमेंसे १ और ६ प्रश्नपर व्याख्यान।

ता० १५ अगस्त—वर कन्याके विवाहका समय।

ता० १९ अगस्त—वर्णजन्मसे वा गुणकर्मसे ?

ता० २० अगस्त—विधवाविवाह शास्त्रसम्मत है या नहीं ?

ता० २२ अगस्त—स्त्रीशिक्षण।

ता० २८ अगस्तको समाप्तिमें स्वामीजीको धर्मसभाकी ओरसे निम्न लेख अर्पण किया गया।

लेखकी नकल।

परम पूज्य स्वामी श्रीनित्यानन्दजी महात्मन्! आपने धर्मसभाकी ओरसे आर्यधर्मविषयक भिन्न २ व्याख्यान देकर जो श्रम किया है, इस लिये हम धर्मसभाकी ओरसे अन्तःकरणसे आपका उपकार मानते हैं। और परमात्मासे प्रार्थना करते हैं कि जनसमाजको वेदधर्मका उपदेश देकर उन लोगोंका इस विषयका अज्ञान दूर करके ज्ञानको प्रकाशित करनेका आपके स्वार्थरहित प्रयत्नका परमात्मा योग्य फल देवे।

हस्ताक्षर

भालचन्द्र कृष्ण।

नारायण त्र्यम्बक वैद्य।

पोपटराम प्रभूराम वैद्य।

उपरोक्त प्रशंसापत्र सर भालचन्द्रने स्वामीजीको अर्पण किया था और पुष्पोंकी एक चद्दर ओढाई थी।

स्वामीजीके इन व्याख्यानोंका मुम्बईकी जनतापर जैसा प्रभाव पडा वह पाठकोंको मुम्बई प्रान्तके सुप्रसिद्ध गुजराती पत्र हिन्दी पंचके विनोदपूर्ण लेखके निम्न अनुवादसे विदित हो जायगा।

हिन्दु भाईयोंके धर्मबाजरकी रुख (प्रवृत्ति)

"हमारे हिन्दू भाईयोंके धर्मबाजारमें अभी एक दो माससे बहुत तेजी (गरमी) आई है। मुख्य मुकाबला मेसर्स हंसस्वरूप और नित्यानंदजीकी कंपनीका हो रहा है परन्तु बाजारकी प्रवृत्ति देखकर कहना पडता है कि ग्राहकोंकी रुचि मेसर्स नित्यानन्दकी कम्पनीकी ओर ज्यादह है। ग्राहकोंकी रुचि मंहगी होनेसे कम्पनीके शेअर आजकल मंहगे हुए हैं और उसमें तरक्की होती जाती है। मुझे मिली हुई खबरके अनुसार मेसर्स नित्यानन्दकी कंपनीके डाइरेक्टरोंका विचार ऐसा था कि-"दृढतासे मुकाबला करके यहां हिन्दू भाईयोंका सारा धर्मबाझार एक हाथमें करले और उसके लिये एक धर्म ट्रस्ट बनावें। परन्तु मेसर्स हंसस्वरूप और मेसर्स मंगलगिरिकी कंपनीने अन्तमें कुछ परिश्रम करके उस कंपनीको अपने उद्देशकी पूर्ति नहीं करने दी है। तो भी बाजारकी रुचि बहुधा नित्यानंदजीकी कंपनीकी ओर है। यदि कुछ समय ऐसाही रहा और उस कंपनीके ऊपर विश्वास हो गया और अभी जो विश्वास है उसमें कोई बाधा न पडी तो वह कंपनी अपने हरीफोंपर विजय पाजायगी ऐसा बाजारकी रुचि और स्वरूप देखकर ज्ञात होता है। इस धर्मबाजारमें तेजी कहांतक रहेगी इसपर तत्सम्बन्धी अनुभवी व्यापारियोंमे मतभेद है। कई ऐसा मानते हैं कि वर्तमानमें जो धर्मकी जरूरत ज्ञात हुई है वह कुछ समयके लिये है, वह कुछ दृढ नहीं है; उसमें पोल अधिक है परन्तु मुमुक्षु ग्राहकोंकी तो बडी भीड इकट्ठी होती है। उससे कई लोग अनुमान करते हैं कि बाजारमें आई हुई तेजी तो जानेवाली नहीं है, वह कुछ समयतक रहेगी। मेरे मतके अनुसार बाजारमें जो तेजी दिखती है वह कुदरती नहीं है; वह कृत्रिम है, बाहरी है। क्योंकि लोगोंमें मुझे कुछ भी आत्मिक बल और दृढ उत्साह नहीं दीखता है। मेसर्स नित्यानन्दजीकी कंपनीके बड़े डाइरेक्टरने यहां आकर धूम मचादी है इससे लोग कंपनीकी ओर आ रहे हैं परन्तु उनके यहांसे जानेके पश्चात् हमारे भाइयोंकी रीतिके अनुसार धार्मिक असरका बाजार कम हो जानेका भय अधिक है, और बाजारमें तेजी रखनेवाले भी गूदड़े ओढ़कर सोजांयगे ऐसा अनुमान भी सकारण है।" २४ सितम्बर १९०२ के मुम्बईसमाचारमें स्वामीजीके व्याख्यानोंपर नीचे उध्दृत सम्पादकीय टिप्पणी प्रकाशित हुई थी।

स्वामी श्री नित्यानन्दजीके व्याख्यानोंका प्रभाव

"स्वामी श्री नित्यान्दजी गत जून मासमें यहांकी 'वेंदधर्मप्रचारिणी' सभाके उत्सवमें केवल तीन दिनके लिये ही पधारेथे, पर अब उनको तीन माससे अधिक

रना पडा है। उन्होंने 'वेदधर्मप्रचारिणी' सभाकी ओरसे ७, हिन्दू सभाकी ओरसे ७, और अन्य मंडलोंकी ओरसे कितनेही व्याख्यान मुम्बई शहरमें दिये हैं। व्याख्यानोंमें प्रदर्शित विद्वत्ता, वाक्‌चातुरी और विशेषकर निष्पक्षताने यहांके पुराने विचारोंके पौराणिक पंडितोंमें अधिक हलचल और कुछ विरोध भी फैला दिया है। एक ओर स्वामीजी, समाज और विशेषकर अंग्रेजी पढे लिखे विद्वानोंकी प्रशंसाके पात्र हुए हैं। बम्बई नगर और बाहरके सभी समाचारपत्र उनकी विद्वत्ता, वक्तृत्व और साधुताकी प्रशंसा करनेमें एकमत हुए हैं; परन्तु दूसरी ओर जो इनसे सहमत नहीं हुए हैं वे भी मौन धारण किये हुए नहीं हैं। वे विरुद्ध दिशामेंही प्रयाण कर स्वामीजीके विरुद्ध लिखने लिखवानेमें लगे हैं। किसके लेख योग्य वा अयोग्य हैं उसका विचार यदि न करें तो भी इतना तो अवश्य माननाही पडेगा कि ३५ वर्ष हुए स्वामी दयानन्दने अपने तीव्र व्याख्यानोंसे मुम्बईकी प्रजा और पंडितोंमें जैसी हलचल फैला दी थी वैसीही हलचल आज कल स्वामी नित्यानन्दजीनें फैला दी है। स्वामी हंसस्वरूपजीने अपने मनोहर व्याख्यानोंसे लोगोंको और विशेषकरके दृढ वैष्णवोंको अत्यन्त जागृत व मुग्ध कर दिया है; परन्तु पंडितों और संसारसुधारकोंके पक्षमें वे कुछ जागृति नहीं प्रकट कर सके हैं; क्योंकि उनके व्याख्यान सांसारिक व शास्त्रीय विषयोंपर न थे। केवल भक्तिसम्बन्धीही थे। इससे केवल भक्तोंके विना औरोंको उसमें आनन्दका न मिलना स्वाभाविकही है।

स्वामी नित्यानन्दजीने अपने व्याख्यान सांसारिक, शास्त्रीय और धार्मिक सब तरहके दिये थे। उनके कई व्याख्यानोंमें तत्त्वविद्याकाप्राधान्य था; जैसे कि जीवका स्वरूप, सृष्टि-उत्पत्ति आदि।

कई व्याख्यान जैसे कि वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ इत्यादि तर्क प्रधान थे।

परदेशगमन, विधवाविवाह, स्त्रीशिक्षा, और वर्ण गुणकर्मसे है वा जन्मसे इत्यादि व्याख्यानोंमें शास्त्रोंका प्राधान्य था; और ये विषय संसारसुधारसम्बन्धी थे।

इससे प्रत्येक पक्षमें स्वामीजीके व्याख्यानोंका प्रभाव होना स्वाभाविकही है।

स्वामीजीने 'शास्त्रोंमें क्या मानना और क्या न मानना' इसका निर्णय उत्तमतासे कर दिखलाया था कि कोई स्मृति शास्त्र ईश्वरकृत नहीं है; इससे वे जितने अंशमें वेदानुकूल, बुद्धिपूर्वक और न्यायपूर्वकहों उतनेहीका ग्रहण करना चाहिये। इसी तरह शास्त्रवचनोंके अर्थ भी उपरोक्त मर्यादा लक्षमें रखके करना।

स्वामीजीके इन वचनोंसेही पुराने विचारके पंडितोंमें हलचल मच गई है। क्योंकि शास्त्रोंको स्वामीजीके कथनानुसार माननेसे ब्राह्मणों ओर पंडितोंकी लीलायें मिथ्या ठहरती हैं।

तोभी लोगोंकी प्रीति उनकी (स्वामीजीकी) ओर असामान्य है, धर्म सभाकी ओर से उनके अन्तिम व्याख्यानमें जो आनन्दकी गर्जनाएँ मिनिट २ पर होती थीं, यही उस प्रीतिका प्रत्यक्ष प्रमाण था। जिससे अन्य प्रमाण देनेकी जरूरत नहीं दिखती।

यदि स्वामीजीने संस्कृत पंडितोंको खुश करनेके लियेही व्याख्यान दिये होते तो वे उनके साथ कैसा बर्ताव करते यह खयाल इससे सहजहीमें आसकता है; परन्तु स्वामीजीने स्वार्थियोंकी प्रशंसा वा विरोधकी कुछ भी परवाह कियेबिना और जनताके कुछ अंशको अपने विचारोंके विरुद्धपाकर भी अपने व्याख्यानोंद्वारा उनसे भी जो प्रीति और प्रशंसा प्राप्त की है, वह अद्भुतही हैं। इससे लोग और स्वामीजी अवश्य धन्यवादके पात्र हैं। "

इस प्रकार स्वामीजीने बम्बई नगरमें धार्मिक हलचल मचाई, उधर स्वामी हंसस्वरूप केवल एक दिनकेही समागममें मनमें परास्त होकर अपनी राग पृथक्ही अलापतेरहे और सन्मुख होकर शास्त्रार्थ करनेका साहस न किया । अन्य विरोधियोंने गुजराती पत्रका आश्रय लिया और सोमाजी वीन गोमाजी नामक कल्पित नामसे अंडबंड लिखते रहे। परन्तु बम्बई और बाहरकी जनतापर इसका किंचित भी प्रभाव नहीं पड़ा। इस अवसरपर मिस्टर हीरालाल सर्राफ, B. A., ने नवीन वेदान्तका पक्ष लेकर महर्षि दयानन्द और स्वामीजीपर कई कटाक्षयुत लेख लिखे थे। सारांश पौराणिक दल उन दिनों पूरी घबराहटमें पेड गया और स्वामी हंसस्वरूपने जो मुम्बईमें इनके त्राणकर्ता बन कर आये थे जब अपनीही रक्षा करनेमें अपने आपको असमर्थ पाया, तो अन्य सहायकोंको अंडबंड लिखते रहनेका आदेश देकर बम्बईसे प्रयाण किया।

धर्मसभाने जिस दिन स्वामीजीको प्रशंसापत्र अर्पण किया था, उस दिन बड़ीही तैयारियां की थी। प्रवन्धकर्ताओंका विचार और प्रवन्ध था कि स्वामीजीको चार घोड़ोंकी बगीमें बिठाकर नगरके मुख्य २ स्थानोंमें घुमावें, परन्तु स्वामीजीने अस्वीकार किया। सभानें स्वामीजीको सत्कारार्थ कुछ धन भी देना चाहा, परन्तु उसे भी स्वामीजीने नहीं लिया । स्वामीजीके व्याख्यान मुम्बई समाचार, जामे जमशेद, और केसरी आदि प्रसिद्ध पत्रोंमें निकलते रहे।

'ऋषिविद्या'नामक मासिक पत्रने तो स्वामीजीका देशाटनसम्बधी व्याख्यानके मुद्रित करनेमें अपना एक पूरा अंक अर्पण कर दिया।

स्वामीजीके विषयमें कई प्रकारके कारटून प्रकाशित हुए । ता. १४ सितम्बरके हिन्दी पञ्चमें स्वामीजीका एक चतुर्भुज कारटून प्रकाशित किया गया । मुखके चारों ओर सूर्य्यकिरण फैलाई गई थीं । एक हाथमें वेद, दूसरेमें मनुस्मृति, तीसरेमें तर्कशास्त्र आदि ग्रन्थ दिये थे। इन्हीं ग्रन्थोंके समीप ज्ञान ज्योति, मान, कीर्ति आदि शब्द बेलबूटोंके मध्यमें शोभा पा रहे थे । नीचे लिखा हुआ था। " स्वामी श्री नित्यानन्दजी मुम्बईके आर्य्योंकी पूजाकी मूर्ति " । स्वामीजीकी ख्याति सारे मुम्बई और दक्षिणप्रान्तमें फेल गई, स्थानस्थानसे निमंत्रण आने लगे, जिनमें काठियावाड़, गुजरात, दक्षिण प्रान्त आदिके अनेक स्थानोंपर स्वामीजीके दर्शनोंकी उत्कट इच्छा प्रगट की गई।

इन्हीं दिनों भारतवर्षमें **जापानमें** सर्व धर्मावलम्बियोंकी एक धार्मिक सभा (Religious Conference) होनेकी चर्चा चली। कलकत्तेके सुप्रसिद्ध श्रीयुत नरेन्द्रनाथ सेन, सम्पादक 'इंडियन मिरर' इसके लिये भारतसे प्रतिनिधि आदि निर्वाचन करनेके निमित्त जनरल सेक्रेटरी निर्वाचित किये गये थे। श्रीयुत नरेन्दनाथ सेन महोदयने मुम्बई प्रान्तके प्रतिष्ठित विद्वानोंसे उक्त सम्मेलनमें मुम्बईकी ओरसे भेजे जानेवाले प्रतिनिधिका नामोलेख करनेके लिये लिखा।

श्रीयुक्त डाक्टर सर भालचन्द्रके यहां बम्बई नगरके विद्वानोंकी एक सभा इस लिये हुई। और सर्वसम्मतिसे निश्चय हुआ कि बम्बई प्रान्तकी ओरसे हिन्दू धर्मके सिद्धान्त प्रकट करनेके लिये स्वामी श्रीनित्यानन्दजीको प्रतिनिधि बनकर जानेके लिये प्रार्थना की जावे। ओर उनकी सहायताके लिये उनके साथ एक आंग्ल भाषाके विद्वान् भी हों। श्रीयुत राजारामजी बोडस B. A. के सुपुत्र जो स्वयं B. A. L. L. B. थे, इस कार्य्यके लिये चुने गये। स्वामीजीने धर्मप्रचारके निमित्त **जापानयात्रा** स्वीकार कर ली।

महाराजा कोल्हापुरकी ओरसे स्वामीजीको कोल्हापुर पधारकर धर्मोपदेश करनेके लिये कई पत्र आ चुके थे और स्वामीजी अभीतक वहां गये नहीं थे; अतः २६ सितम्बर १९०२ के मुम्बईसमाचारके सम्पादकीय लेखानुसार सम्पादकहीके शब्दोंमें।

" स्वामी श्रीवित्यानन्दजी और स्वामी श्रीनिश्वेश्वरानन्दजी कल (२५-१९०२ को) दो बजेकी गाड़ीसे कोल्हापुर गये। स्टेशनपर वेदधर्मप्रचारिणी सभा, आर्यसमाज तथा अन्य सज्जनोंकी ओरसे वहां उनका पुष्पहार आदिसे सत्कार किया गया।

कोल्हापुरमें स्वामीजी नामदार छत्रपति शाहु महाराजाके अतिथि रहेंगे। महाराजाकी ओरसे वहांके कमिश्नर रावबहादुर शिरगांवकरने उनको आमंत्रण दिया था।

कोल्हापुरमें रहकर वे धारवाड़, बेलगांव, त्रावणकोर, और रामेश्वरतक व्याख्यान देते हुए प्रवास करनेका और फिर काठियावाड़में भ्रमण करनेका विचार रखते हैं।

इस यात्राको सम्पूर्ण करके अगले मार्चमें वे यहां पधारेंगे और फिर यहांसे जापानमें होनेवाली पूर्वके धर्मोंकी कानफ्रेन्समें जांयगे। "

कोल्हापुर स्टेशनपर बाबासाहब सर सूबा श्रीगांवकर, रावसाहब जादोराव जज आदि राज्यके सब प्रतिष्ठित सज्जन स्वामीजीके स्वागतके लिये आये। और पुष्पहार आदिसे सत्कार करके बडे आदरसे नगरके बाहर एक सुन्दर बगीचेमें ठहराया।

महाराजा साहब स्वामीजीसे मिलनेको स्वयं पधारे और वार्तालाप करके अत्यन्त प्रसन्न हुए। व्याख्यानोंका प्रबन्ध एक बडे विस्तीर्ण मैदानमें किया गया और जनता बड़े प्रेमसे उन्हें सुननेको आती थी, और अपने को धन्य कहती थी। यहां इस बातपर बहुत आन्दोलन हुआ कि मरहठोंको वेद पढनेका अधिकार है या नहीं ?

स्वामीजीने "परमात्माकी वाणीके पढने और सुननेका अधिकार मनुष्यमात्रको

है" इस सत्य सिद्धान्तकी घोषणा कर दी। इसपर अनेक पंडित शंका करने लगे और स्वामीजी उनका समाधान करते रहे। धीरे २ इस वादविवादने शास्त्रार्थका स्वरूप धारण किया। अन्तमें सबने स्वामीजीके पक्षकी सत्यता स्वीकार कर ली और मरहेट्टा जातिमें वेदोक्त संस्कारोंका खूब प्रचार होने लगा।

स्वामीजीके व्याख्यान "वेदोंके पढनेका अधिकार, अनधिकार" इस विषयको लेकर भिन्न २ प्रकारसे व्याख्यान मंडप, थियेटरहाल, और राजमहल आदि स्थानोंमें बड़े समारोहसे होते रहे। राजमहलमें जितने व्याख्यान हुए उन सबमें पोलिटिकल एजन्ट, सेनाके कमांडिंग आफिसर, और प्रतिष्ठित सरदार सदा आते थे। यहां भी स्वामीजीके पास कई निमंत्रणपत्र आये और बीजापुर आदि कई स्थानोंपर तो जनताने प्रकाश्य रूपसे सर्वसाधारण सभा करके नगरभरकी ओरसे स्वामीजीको बुलानेका प्रस्ताव पास करके मुख्य २ पुरुषोंके हस्ताक्षरोंसहित छपे हुए निमंत्रणपत्र भेजे थे।

परन्तु स्वामीजीको मुम्बईसे अति आवश्यक तार पाकर पीछा लौटना पड़ा।

बम्बई आनेके दो कारण थे; एक तो हीरालाल सर्राफ बी. ए. महोदयने मुफ्तकी डींग हांककर स्वामीजीको शास्त्रार्थके लिये आह्वान किया था। दूसरे स्वामीजीके परम भक्त श्रीयुत जेठाजी प्रेमजीका देहान्त हो गया। और उन्होंने अपने स्वीकारपत्रमें अपने उत्तराधिकारियोंको यह आज्ञा की थी कि मेरी मृत्युके पीछे बम्बईमें श्री स्वामी नित्यानंदजीके ५,७ व्याख्यान कराये जावें और उनका खर्चा मेरी इस्टेटसे दिया जावे। (श्रीयुत जेठाजी प्रेमजीने यह स्वीकारपत्र स्वामीजीकी सूचनासे लिखा था। आज कल इस धनसे गुजराती भाषामें धार्मिक पुस्तकें छापी जाती हैं।)

इन कारणोंसे स्वामीजीको बेलगांव आदि जानेका अपना विचार त्याग देना पड़ा और वे बम्बई आ गये।

स्वामीजीके बम्बई आनेपर बम्बईसमाचारने २ नवम्बर १९०२ को यह टिप्पणी प्रकाशित की।

"स्वामी श्री नित्यानन्दजी कोल्हापुरमें शास्त्रार्थ कर, आज फिरसे बम्बईमें पधारे हैं। वे पबलिक मानआदरके साथ दक्षिणमें गये थे। परन्तु पीछेसे अनेक बातें बनाई थीं। धर्मजिज्ञासुओंके लिये स्वामीजीका इस समयपर आगमन अति लाभदायी होगा। यहां सोशल कान्फ्रेन्स और नेशनल कांग्रेसका समय भी पास आ गया है। इस समय धर्मचर्चा कर उससे लाभ लेना जरूरी है। विदेशगमन और विधवाविवाहके प्रश्नोंपर अभीविचार करना अत्यावश्यक है। स्त्रीशिक्षा, बालविवाह, जहां भोजनव्यवहार वहां बेटीव्यवहार, इन विषयोंपर अब सब सहमत हुए हैं। अन्य दूसरे प्रश्नोंपर अभी विचार करनेका समय नहीं है, जातिबन्धन टूटने कठिन हैं और वेदपर चर्चा करने का समय नहीं है। इस लिये अभी तीन विषयोंपर ही विद्वान गृहस्थोंकी एक सभाद्वारा निर्णय किया जाय तो उभयपक्षने देशकी वास्तविक सेवा की है, ऐसा माना जायगा। और

ऐसे कार्य्यके लिये सुप्रसिद्ध स्वामी रामेश्वरानन्दजी भी सहमत हो उदारतासे सहायता देवें तो उनके किये हुए पुण्य कृत्योंमें वृद्धि होगी।

यदि दोनों पक्ष अहमदाबादमें होनेवाली सामाजिक परिषद (Social conference) में अपना २ मत न्यायपूर्वक प्रतिपादन करेंगे तो अवश्य कुछ आशाजनक फल हो। परन्तु दूर दूर खड़े रहकर कुत्सित शब्द फेकनेसे परिणाम कुछ भी न होगा और संसारका सुधार भी न होगा। शास्त्रियोंको धर्मके आवेशमें न आना चाहिये; परन्तु शान्त और सभ्यगृहस्थोंद्वारा स्वामी श्री नित्यानन्दजीसे मिलना चाहिये। अन्य यहां पधारे हुए स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी, स्वामी पूर्णानन्दजी, स्वामी मंगलगिरिजी, महाराज गोस्वामी श्री देवकीनन्दनाचार्य्यजी इत्यादिको भी केवल धर्मसंशोधनभावनासे इकट्ठे होकर उपरोक्त विषयोंपर देशकालका विचार करके और शास्त्रमर्यादाकी रक्षा करके अपने अधिकारका गौरव और श्रद्धालुप्रजाको आवश्यक स्पष्टीकारण करके रक्षा करनेको आगे कदम बढाना चाहिये।"

बम्बईसमाचारके उपरोक्त लेखमें जिन विरोधी सज्जनोंका उल्लेख किया गया है, स्वामीजीके बम्बईमें आतेही उन सबने चुप साधी, और शास्त्रार्थ करनेका साहस न किया।

तब स्वामीजीने व्याख्यानोंद्वारा पौराणिकोंके आक्षेपोंका खंडन आरम्भ किया परन्तु उधरसे फिर कुछ उत्तर न मिला। श्री हीरालाल सर्राफ महोदयकी लेखनी भी शान्त हो गई।

इसी अवसरमें श्रीमद्दयानन्द अनाथालय अजमेरके निमित्त सहायता प्राप्त करनेके लिये एक डेपुटेशन आया था। जिसमें श्रीयुत पंडित वंशीधरजी M. A. L. L. B., मास्टर कन्हैयालाल जी B. A. L. L., और पंडित केशव देवजी शास्त्री M. d. सम्मिलित थे।

स्वामीजीने इस डेपुटेशनको पूरी सहायता दी। आपहीके आग्रहसे गुजराती नाटक कम्पनीने गेयटी थियेटर हालमें जयराज नामक प्रसिद्ध नाटक अनाथालयकी सहायताके लिये खेला था।

खेलका प्रथम भाग पूर्ण हो जानेके पश्चात् एक सभा की गई, आरम्भमें अनाथालयके आनरेरी सेक्रेटरी पंडित वंशीधरजी M. A .L. L. B. वकीलने रावबहादुर बसनजी खीमजीको सभापतिका आसन ग्रहण करनेकी प्रार्थना करनेका प्रस्ताव किया और सेठ रणछोड़जी भवान्के अनुमोदन करनेपर उक्त महोदयने प्रधानका आसन ग्रहण किया। पश्चात् अनाथालयके आनरेरी गवर्नर श्रीयुत केशवदेवजी शास्त्री अनाथालयका वृत्तान्त कहते हुए कहा कि यह आश्रम १८९७के दुष्कालके पश्चात् खोल गया है। इसमें अभी ३०० अनाथ हैं, उनके लिए दो बडे हाल तैय्यार करवाये गये हैं। उनके लिये सहायताकी जरूरत है इत्यादि। तत्पश्चात् स्वामी नित्यानंदजीने भी अनाथालयकी सहायता करनेके लिये प्रार्थना की। उन्होंने कहा कि "तुम नाटक देखने आये हो, परन्तु हम जिस संसारमें रहते हैं, वह भी एक नाटकही है; तुम उसमें जो पुण्य करोगे वही साथ ले जाओगे। यहां आनेसे आपको डबल लाभ हुआ है, आप यहां तमाशा देखनेके लिये आयेहो इससे मैं

आपका अधिक समय न लेऊंगा परन्तु मैं यदि यहां आया हूं तो आपको कुछ व्याख्यान भी सुनाऊंगा। अन्तमें स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजीने मिशनरी अपने अनाथलयोंके लिये कितना काम करते हैं सो दिखलाते हुए कहा कि हमको भी उसी तरहसे काम करना चाहिये जिससे स्वधर्मका रक्षण हो। प्रधानने दोनों स्वामीयोंको पुष्पहार पहनाये। नाटकके इस अभिनयसे अनाथालयको ८००) रुपयोंकी सहायता मिली और मिस्टर माणकलाल घनश्यामदास झवेरीने उसी स्थानपर २०० रुपये दिये। स्वर्गवासी श्रीयुत जेठाजी प्रेमजीने अपनी इस्टेटमेंसे ३०००० रुपये धर्मप्रचारनिमित्त व्यय करनेकी व्यवस्था करने के लिये अपने उत्तराधिकारियोंको अपने स्वीकारपत्रमें आदेश किया था। और स्वामीजीके व्याख्यान करानेकी विशेष प्रेरण की थी।

इस सम्बन्धमें स्वामीजीके ५ व्याख्यान १५ दिसम्बर १९०२ से आरम्भ होकर आर्य्यसमाज भवन और गेइटी थियेटर हालमें (१) संसारकी विचित्रगति, (२) आर्य्यसमाज क्या है, (३) ईश्वरके अवतार, (४) योग फिलॉसफी और (५) मरनेके पश्चात् जीवकी गति, इन विषयोंपर हुए।

इन व्याख्यानोंके प्रभावके विषयमें अधिक न लिखकर, गुजरातकी प्रसिद्ध सौभाग्यवती माणकबाई कानजीने जो सम्मति आन्तिम व्याख्यानके अवसरपर दी थी उसका सारांश यहां दिया जाता है।

आर्य्यसमाजके प्रधानकी सूचनासे सौभाग्यवती माणकबाईने स्वामीजीके भाषणपर विवेचन करते हुए कहा।

"मैं खडी हुई हूं केवल इसी बातसे स्वामीजी जैसे समर्थ विद्वान्‌के व्याख्यानपर मैं विवेचन करना चाहती हूं ऐसा आप मत मानें। यह काम पंडितोंका है। मैं अपने सामान्य भाव प्रकट करूंगी। स्वामीजीके व्याख्यानोंसे लोगोंपर अति उत्तम असर होता है और मुझे तो कई शंकायें भी हुई हैं। दूसरे इस विषयमें क्या कहते हैं वो भी मैंने सुन लिया। विद्वान् शास्त्री तथा पंडितोंकी परीक्षा करना मेरी शक्तिमें नहीं है। परन्तु कमसे कम ५० विद्वान् पंडितोंको पूछनेसे मुझे ज्ञात हुआ है कि स्वामी नित्यानन्दजीके कथन सत्य हैं, परन्तु पबलिकके सामने हिम्मतसे उसको ग्रहण कर तदनुसार वर्ताव करनेवालोंकी कमी है। स्वामीजीमें एक असाधारण गुण मैंने यह देखा है कि वे निष्पक्षपात और निरभिमानतासे अपने विचार प्रकट करते हैं। वे केवल स्वतंत्रही नहीं, परन्तु शास्त्रोक्त विचार श्रोताओंको देते हैं। प्रथम जब एक गृहस्थके यहां हम स्वामीजीसे मिले, तब वहां बहुत मनुष्योंकी मंडली इकट्ठी हुई थी। उस समय एक विचित्र स्वभावके मनुष्यने अपनी कटु भाषामें विवाद प्रारम्भ किया। इससे दूसरे मनुष्य यद्यपि नाराज हुए, परन्तु स्वामीजी शान्तिसे उसकी बातें सुनते थे। दूसरोंने उस महाशयसे कहा कि अब आपकी रामकथा बन्द करो; हम स्वामीजीसे कुछ सुनना चाहते हैं। तब हंसकर स्वामीजीने अपनी बात आगे शुरू की। क्या यह

कम शान्ति थी? स्वामीजीकी जगहपर यदि दूसरा मनुष्य होता तो क्या फल होता सो मैं नहीं कह सकती। इससे स्पष्ट ज्ञात होसकता है कि सत्यनिष्ठपुरुषही क्षमा कर सकते हैं। आजतक किसी प्रकारकी इच्छा व लालच स्वामीजीकी देखने, सुननेमें आई नहीं है। वे जो कुछ निर्मल भावसे बोध कराते हैं उसपर धैर्य्यसे ध्यान देना उचित है। फिर भी स्वामीजी ये नहीं कहते हैं कि मैं जैसा कहता हूं वैसाही करो; परन्तु वे कहते हैं कि तुमको सत्य लगे तो करो। अब हमारा यह कर्तव्य है कि हम सत्यअसत्यको देखकर चलें। स्वामीजी जैसे आत्मभोगी परोपकारी वक्ताके वचनोंमें हमको श्रद्धा रहे और परम कृपालु परमात्मामें हमारी निरन्तर भक्ति रहे यही मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है।"

स्वामीजीका यह ६ महिनेका प्रवास कितना परिश्रमपूर्ण था यह लिखनेकी आवश्यक्ता नहीं। प्रायः नित्यही विरोधियोंके उत्तर देनेके लिये समाचारपत्रोंमें लेख देने पड़ते थे और व्याख्यान भी देतेही थे। परिणाम यह हुआ कि अति परिश्रमके कारण स्वामीजीका स्वास्थ्य बिगडने लगा और वे बीमार होकर बोरिवली चले गये। और थोडे दिन विश्राम करके आरोग्यलाभ किया। बोरिवलीसे स्वामीजी सिमले चले गये।

दिसम्बर १९०२ के अन्तमें और जनवरी १९०३ के आरम्भमें लार्ड कर्जनके शासनकालका सुप्रसिद्ध दिल्लीदरबार था।

आर्य्यप्रतिनिधिसभा पंजाबनें आर्य्य समाजके प्रचारका प्रबन्ध किया था। और इस अवसरपर स्वामीजीको प्रचार करनेके निमित्त कई पत्र और तार बोरिवली और सिमला दोनों स्थानोंपर भेजे थे। स्वामीजी सिमलासे लाहोर गये और वहांसे दरबारके अवसरपर देहली पंहुच गये। साधारण प्रचारके अतिरिक्त आर्य्य समाजके प्रायः सभी नेताओंका एक डेपुटेशन अनेक राजाओंसे मिला और सामाजिक पुस्तकें भेट कीं। डेपुटेशनमें स्वामीजीके अतिरिक्त ये सज्जन थे। श्रीयुत चौधरी रामभज दत्तजी B.A. प्लीडर, डाक्टर परमानन्दजी, महात्मा मुंशीरामजी, लाला गंगारामजी B. A. प्लीडर सियाल कोट, राय ठाकुरदत्तजी धवन, श्रीयुत रलारामजी, स्वर्गवासी पंडित भगवान् दीनजी, बाबू ज्योतिस्वरूपजी देहरादून, बाबू गंगाप्रसादजी M. A. डिप्टी कलेक्टर, बाबू ज्वालाप्रसादजी डिप्टी कलेक्टर, बाबू श्यामसुंदरदासजी B. A. मुंशी नारायण प्रसादजी, बाबू रामविलासजी शारदा अजमेर, पंडित बंशीधरजी शर्मा M. A. L. L. B. आदि।

यह डेपुटेशन करीब २ सब राजाओंसे उनके स्थानपर मिला था, जिनमेंसे कुछके नाम ये हैं।

महाराजा कोल्हापुर, ईडर, भावनगर, कोटा, बडोदा, नाभा, कश्मीर, इन्दोर, प्रतापगढ, टीहीरी, खैरागढ आदि मध्यभारत और राजपुतानाके समस्त नरेश और कर्नल सर प्रतापसिंहजी आदि इसके अतिरिक्त और भी कई प्रतिष्ठित पुरुषोंसे स्वामीजी मिलते रहे। प्रतिनिधिसभाकी ओरसे गुरुकुलकी सहायताके लिये अपील छपवाकर बांटी गई थी। स्वामीजी देहलीमें प्रायः एकमासतक ठहरे और प्रचार करते रहे। परन्तु यहां इस

अवसरपर खेल तमाशों, आतिशबाजी आदि अनेक प्रकारके आमोद प्रमोदोंकी बहुतायत थी, अतः प्रचारका काम वांछित सफलताके साथ नहीं हो सका।

मार्चमें स्वामीजीको जापानकी धार्मिक सभामें प्रचार करनेके लिये जापान जाना था, इस लिये दिल्लीसे स्वामीजी फिर बम्बई चले गये जिससे कि यात्राका प्रवन्ध सुभीतेसे हो जाय। परन्तु मुम्बई पहुंचनेपर धर्मसम्मेलनके भारतीय मंत्री श्रीयुत नरेन्द्रनाथ सेन सम्पादक इंडियन मिररने सूचना दी कि कइ कारणोंसे सम्मेलन इस अवसर पर नही हो सकेगा। अतः जापानयात्राका विचार छोड़ देना पड़ा।

बम्बईसे स्वामीजी बड़ोदा चले गये और महाराजा साहबसे धार्मिक और सामाजिक विषयोंपर विचार करते रहे। इसके अतिरिक्त नगरमें भी धर्मोपदेश देते थे।

इस प्रवासमें महाराजा साहबने स्वामीजीको बड़ोदा राज्यकी भील आदि जंगली जातियोंकी पाठशालाका निरीक्षण करनेके लिये सोनगढ बारा भेजा। यहांके बालकोंको साधारण शिक्षाके साथ २ कृषिकी शिक्षा भी दी जाती है। स्वामीजीने इस पाठशालाका निरीक्षण किया और अपनी रिपोर्ट राज्यके शिक्षाधिकारीके पास भेज दी।

बडौदासे चलकर १७ मार्च १९०३ को स्वामीजी इन्दोर पहुंचे और अप्रेलके अन्ततक वहीं प्रचार करते रहे।

इन्दोरसे चलकर खंडवा, हौशंगाबाद, हरदा आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए संवत् १९६० के कुम्भके पर्वपर हरिद्वार पहुंचे और अति उत्साहसे प्रचार किया।

हरिद्वारसे स्वामीजी सिमला चले गये। सिमला प्रवासमें स्वामीजीने इस बाद कुल्लू प्रदेशमें प्रचार किया। इस प्रदेशकी यात्रा और मार्ग आदिका वृत्तान्त स्वामीजीने एक पत्रद्वारा स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजीको लिखा था। उसीकी नकल नीचे दी जाती है।

॥ ओ३म् ॥

२२-५-०३

कुमारसेन स्टेट।

श्रीमन्नमस्ते—

कुमारसेन सिमलासे ४७ माइल है, भज्जीका सहीस यहांसे अगाड़ी जानेको इन्कारी हुआ, अतः यहांके मैनेजरसाहबकी प्रेरणा और महाराणासाहबकी उदारता व सौजन्यसे कुल्लूतकके लिये एक घोडेका प्रबन्ध हो गया है। कुल्लू यहांसे ७० माईल है, कल या परसों तो पत्र आपको लिखूंगा; बीचमें पोष्ट आफिस नहीं है, अब आप पत्र कुल्लूकोही भेजें।

(मार्गका वृत्तान्त)

सिमलेसे फागू १२ माइल, फागूसे १२ मील ठियोग, ठियोगसे १२ मील मतिआना, मतिआनासे १२ मील नारकंडा, कुमारसेन नारकंडेसे ६ मीलपर। कुमारसेनसे ६ मीलपर सेव (सतलजका पुल), सेवसे १२ मील दिलास, दिलासमें पोस्ट आफिस

है, परन्तु कल वहां पहुंच जाऊंगा, दिलासे १० मील चौआई, चौआई से १० मील कोट, कोटसे १० मील जीभी, जीभीसे ६ मील बंजार, बंजार तहसील भी है और पोस्ट आफिस भी है, बंजारसे ४ मील मंगलेर, मंगलेरसे १० मील लारजी, लारजीसे ५ मीलपर बंजोरा, बंजोरामें पोस्ट आफिस है, बंजोरसे ५ मील कुल्लू। कुल्लू मुल्कका नाम है, शहर सुलतानपुर है, परन्तु कुल्लूके पतेपर भी पत्र पहुंचता है। आप पत्र कुल्लूकोही भेजें, वा बंजार वा बंजारोको, हेल्थ ठीक है, साधु दो साथ हैं, और जो कुछ होगा सो फिर लिखूंगा। ह. नित्यस्य।

कुल्लूसे स्वामीजी कांगड़ा गये, और ज्वालामुखीका मंदिर देखा। स्वामी श्री विश्वेश्वरानन्दजी भी सिमलासे भज्जी आदि रियासतोंमें चले जाया करते थे।

इस वर्ष श्रीमन्त महाराजासाहब गायकवाड़ ग्रीष्मनिवासहित काश्मीर आये थे। आपने स्वामीजीको भी वहीं पधारनेके लिये **तार भेजा**। स्वामीजी इस समय कुल्लूकी यात्रामें थे। अतः स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दने उन्हें तार द्वारा कश्मीर आनेकी सूचना दी। और आप कश्मीर चले गये। कश्मीरमें राय नारायणदासजी मेम्बर काउन्सिलने स्वामीजीको अपने यहां ठराया था। श्रीमन्त महाराजासाहब गायकवाड इस समय गुलमर्गमें थे, अतः स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी उनसे वहीं जाकर मिले। यहीं पर स्वामीजीभी महाराजा साहबके निमंत्रणका समाचार पाकर बारामुला होते हुए आमिले। मार्गमें लम्बी यात्राके कारण कुछ स्वास्थ्य बिगड गया था। स्वामीजीके आनेपर श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सिमले चले गये।

महाराजाको श्रीनगर जाना था, अतः स्वामीजी भी उन्हीके साथ श्रीनगर गये। स्वामीजीकी प्रेरणासे श्रीनगरमें महाराजसाहबने कश्मीरके सब प्रतिष्ठित पंडितोंकी सभा कराई, जिसमें अनेक विषयोंपर वादविवादसहित विचार हुआ। महाराजासाहबकी ओरसे पंडितोंका यथोचित सत्कार हुआ।

इस अवसरपर स्वामीजीने वैदिक कोशकी रचनाके विचार महाराजासाहबके सन्मुख रक्खे। इस विषयमें संकेत तो गुलमर्गमेंही कर दिया था, जिसपर महाराजासाहबने अपने प्राईवेट सेक्रेटरीद्वारा कोशकी रचनाके बारेमें खुलासा सूचना मांगी थी। इस निमित्त महाराजासाहबके प्राइवेट सेक्रेटरीने यह पत्र लिखा था।

Gulmurg.
Aug 20, 1903.

My dear Sir

His highness wishes to give liberal help to your scheme of a Vedic Kosh, and in order to form some idea of the extent to which he should bestow his assistance he wishes to know the lines and the spirit in which you propose to carry out the work. If you could submit a scheme of the work giving the main principle which will guide you

and the scope of how far this will be mainly etymological, or philo. sophical, how far the history and social, material and religious condition of Vedic India will be pointed out in it, whether you propose to give consideration to interpretations of words and phrases differing from your own etc etc.

His Highness would like to submit it to a few persons on whom he can rely so as to get some idea what people of different opinions have to say on the subject.

In order to be of highest value to the country, the tone of the work would, His Highness, supposes, have to be very liberal and catholic.

Yours sincerely,

Private Secretary.

To H. H. The Maharaja Gaekwar of Baroda.

भावार्थ ।

गुलमर्ग ।
२० अगस्त १९०३

प्रियवर महाशय !

श्रीमन्त महाराजासाहब आपके वैदिक कोशकी रचनाके प्रस्तावको उदार सहायता देनेके इच्छुक हैं । यह सहायता कितनी हो, इसका कुछ अनुमान बांधनेके लिये वे यह जाननेके इच्छुक हैं कि आप किस प्रणाली और भावसे इस कार्य्यको करेंगें । यदि आप इस कार्य्यके मुख्य उद्देश्य जिससे इसके विस्तार आदिका पता चले अर्थात् इसमें वैदिक भारतवर्षकी भाषासम्बन्धी, तत्त्वज्ञानसम्बन्धी, ऐतिहासिक, प्राकृतिक और धार्मिक स्थितिका कहांतक पता चलेगा, और आप शब्दों और वाक्योंके अर्थोंमें उन अर्थोंपर भी जो आपके अर्थोंसे भिन्न वा विरोधी हैं विचार करेंगें या नहीं आदि बातोंका विवरण उपस्थित करें तो महाराजासाहब उसे कुछ सज्जनोंको जिनपर वे विश्वास करेंगे दिखलायगें जिससे कि उनको इस विषयमें लोगोंकी भिन्न २ सम्मतियां क्या हैं इसका ध्यान हो जाय । देशके लिये यह ग्रन्थ सबसे अधिक मूल्यका हो, इस लिये महाराजा साहब अनुमान करते हैं कि ग्रन्थ की ध्वनि उदार और सार्वजनिक होगी ।

आपका हितैषी ।
निजू मन्त्री ।
महाराजा बडोदा ।

इस पत्रके उत्तरमें स्वामीजीने कोशकी रचनासम्बन्धी विचार महाराजासाहबके पास लिखकर भिजवा दिये, जिन्हें जानकर महाराजासाहबने निजू मंत्रीको आज्ञा दी वह मंत्रीके निम्न उद्धृत पत्रसे प्रकट हो जायगी ।

Srinagar.
14-9-03.

My dear Sir

His Highness has considered your letter with regard to the Vedic Kosh. He thinks he can not undertake to spend more than Rs. 15000. out of the Rs. 48,000 the required and he suggests the remainder may be secured by application to other princes and zemindars.

The maharajas of Cashmere & Mysore would no doubt contribute liberally if appealed to and there are many wealthy and educated landlords in Bengal such as the Maharaja of Darbhanga who might help. Their orthodoxy would His Highness believe be no far to sympathy, as your Kosh is to be edited in a catholic spirit, and give all shades of school and opinion. When you have secured subscriptions amounting to the required Rs. 33000. His Highness would complete the sum with Rs. 15000. or if this cannot be done, he would contribute, a proportionate monthly sum out of the Rs. 500, required (is related Rs. 500 as Rs. 15,000 to 48000) if you can secure the rest as monthly subscription from other princes and zemindars.

His Highness is laying the question before a committee of officers and scholars will be given subject to their advice and suggestions. This letter is meant only to throw out preliminary suggestions and clear the ground a little, so that it has not been thought necessary to deal with all the points in your letter.

His Highness further suggests that the letter you have sent to him may with the necessary modifications be circulated to different princes, land-holders, and men of wealth as an appeal.

His Highness would like the work to be done under his patronage but if there should prove to be any difficulty in the matter, he would not press his wish, as he cares more about the work itself than about the name.

If His Highness can be of any service in this work of national importance he will always be glad to assist.

Yours sincerely,
Private secretary
To H. H. the Maharaja
Gaekwar.

भावार्थ.

श्रीमन्त महाराजा साहबने वैदिक कोशके विषयमें आपके पत्रपर विचार कर लिया है। उन्हेंने निश्चय किया है कि वांछित ४८००० रुपयोंकेव्ययमें वे १५००० से अधिक

की सहायता नहीं कर सकते। और वे सम्मति देते हैं कि शेष धन और राजाओं औ जमीनदारोंसे प्राप्त किया जावे।

निस्सन्देह यदि प्रार्थना की जावे तो महाराजासाहब काश्मीर और माइसोर उदा रतापूर्वक सहायता देंगे।

बंगालमें भी महाराजा दरभंगाके समान कई धनवान् और शिक्षित भूस्वाधिपति जो सहायता कर सकते हैं। महाराजा साहब विश्वास करते हैं कि उनका कट्टरपन उ इस कार्य्यमें सहानुभूतिप्रदर्शन करनेसे नहीं रोकेगा; क्योंकि कोश सार्वजनिक भा सम्पादित होगा और प्रत्येक प्रकारकी सम्मति उसमें दर्शाई जायगी।

जब आप ३३००० का आवश्यक चंदा प्राप्त कर सकें, तब श्रीमन्त इसे १५०० देकर पूर्ण कर देंगें। यदि ऐसा न हो सके तो ५०० मासिक व्ययके आंशिक भाग (अर्थात् ४८००० के १५००० के हिसाबसे ५००) की रकमपर) प्रतिमास रहेंगें। यदि आप और राजाओं और जमीनदारोंसे मासिक चंदा प्राप्त कर सकें श्रीमन्त महाराजासाहब इस प्रश्नको बडोदेमें अधिकारियों और विद्वानोंके सम्मु रखनेवाले हैं। और श्रीमन्तोंकी अन्तिम आज्ञा इन सज्जनोंकी दी हुई सम्मति निर्भर होगी।

यह पत्र केवल प्रारम्भिक विचार और कार्यक्षेत्रको कुछ स्पष्ट कर देनेके लिये लि गया है; इस लिये आपके पत्रमें वर्णित विषयोंपर विचार करना यहां आवश्यक नहीं है श्रीमान् यह भी सम्मति देते हैं कि वह पत्र जो आपने श्रीमानोंके पास भेजा है आ श्यक परिवर्तन करके देशके अन्य राजा, जमीनदार और धनवानोंके पास अपीलके रू भेज दिया जावे। श्रीमानोंकी इच्छा है कि यह कार्य्य उनकी संरक्षामें हो, परन्तु य इस में कोई कठिनाई हो तो वे अपनी इस इच्छाके लिये कोई विशेष दबाव नहीं डालें क्यों कि उनको नामके समक्षमें कामकी अधिक चिन्ता है। यदि इस जातीय गौरव कार्य्यमें श्रीमान् किसी प्रकारकी सेवा कर सकें तो वे बड़ी प्रसन्नतासे सहायता देंगे।

आपका हितैषी हस्ताक्षर निजू मंत्री,

श्रीमन्त महाराजा साहब गायकवाड, बडोदा.

पंजाब प्रान्तकी कई समाजोंकी प्रार्थनापर स्वामीजीनें महाराजासाहबसे काश्मीर पीछे लोटते हुए उक्त समाजोंसे अभिनन्दनपत्र लेनेकी इच्छा प्रकट की जिसे महाराजा साहबने स्वीकार किया। अतः महाराजासाहबकी स्वीकृति पाकर मरी, रावलपिंडी आर्य्यसमाजों, आर्य्यप्रतिनिधि सभा पंजाब, और डी ए. बी. कालेज लाहोरने अभि नन्दनपत्र देनेकी तैयारियां करना आरम्भ किया। श्रीमन्त महाराजासाहबने मरी आर्य समाजका अभिनन्दनपत्र ग्रहणकिया; परन्तु नियत समयपर रावलपिंडीमें प्लेग हो जाने कारण वहां न जा सके। लाहोरमें महाराजा साहबका स्वागत बड़ी धूमधामसे हुआ, और आर्य्यप्रतिनिधि सभा पंजाब और श्रीमद्दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेजके अधिका

रियोंने नगरके टाउन हालमें एक बडी भारी उपस्थितिमें महाराजाकी सेवामें पृथक् २ अभिनन्दनपत्र उपस्थित किये। जिनका उत्तर महाराजासाहबने योग्य शब्दोंमें दिया। लाहोरसे स्वामीजी अम्बालातक महाराजा साहबके साथ आये और यहांसे सिमला चले गये।

नवम्बरके अन्तिम सप्ताहमें लाहोर आर्य्यसमाजोंका उत्सव था, स्वामीजी यहां आये थे; अभी उत्सव होही रहा था कि महाराजा साहब बड़ौदाका एक तार शीघ्र बड़ौदे पधारनेका मिला। इस लिये स्वामीजी लाहोरसे बड़ौदा चले गये। महाराजासे कोशके सम्बन्धमें विचार हुआ और व्याख्यान होते रहे।

१९०३ ई० के दिसम्बरके बड़े दिनोंके अवकाशसमयमें श्रीमद्दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज लाहोरका डेपुटेशन बडोदे आया। इस सम्बन्धमें लाला राधाकृष्णाजी, महात्मा हंसराजजी, लाला लजपतरायजी, बक्षी टेकचंदजी और लाला द्वारिकादासजी आदि आये थे। ये सब स्वामीजीके निवासस्थानपरही ठहरे थे। यथावसार महाराजासाहबसे भेट हुई और कुछ सहायता भी मिली।

महाराजा साहबने इस वर्ष स्वामीजीके लिये यह नियमसा कर दिया कि शरद् ऋतुमें जब वे बडोदामें हुआ करें तो स्वामी अवश्य प्रतिवर्ष पधारा करें। क्योंकि उनके उपदेशोंसे स्वयं महाराज साहब और राज्यके अधिकारी और प्रजाको बडा लाभ होता था।

फरवरी १९०४ में बडोदाके युवराज श्रीमान राजकुमार फतेसिंह रावजीका विवाह-संस्कार था। इस अवसरसे स्वामीजीने पूरा लाभ उठाया और महाराजा साहबने उन्हें प्रचारके लिये हर प्रकारकी सहायता देनेके निमत्त राजाज्ञा प्रकाशित कर दी।

विवाहके अवसर पर निमंत्रित प्रायः सब ही आगत सज्जनोंसे स्वामीजीने भेट की और वैदिक धर्मका सन्देश सुनाया।

इसके अतिरिक्त व्याख्यानोंका भी विशेष प्रबन्धथा। जिन्हें सुनने के लिये वाहरसे पधारे हुए सज्जनोंका विशेष समारोह हुआ करता था।

स्वामीजीने युवराजके विवाह उपलक्ष में एक भावमयी संस्कृत भाषामें मंगल आशीर्वाद की कविता भी की थी, परन्तु विस्तारभयसे उसको नहीं दिया।

इसी प्रवासमें स्वामीजीके परामर्शसे बडौदामें एक शिक्षासभा स्थापित की गई, जिसका विशेष कार्य्य विद्या और धर्मसम्बन्धी पुस्तकें प्रकाशित करना है।

विवाहोत्सवके पश्चात् स्वामीजी बडौदासे ईडर गये। और कई व्याख्यान दिये। कर्नेल सर प्रताप सिंहजी ईडरनरेशभी दो व्याख्यानोंमें अपने राज्यके अधिकारियोंसहित पधारे थे। महाराजाने स्वामीजीसे निजू भेट भी की थी। और परोपकारिणी सभा तथा आर्यसमाजकी साधारण स्थितिपर विचार होता रहा।

ईडरसे स्वामीजी अहमदाबाद आये और भिन्न २ स्थानोंमें व्याख्यान दिये। यहां स्वामीजी को समाचार मिले कि १९०२ ई० में मुम्बई नगरमें वैदिक धर्मकी विजय और स्वामीजीकी प्रतिष्ठासे द्वारिका पीठके श्रीशंकराचार्य्यका आसन हिल उठा है और

वे अपनी मानमर्य्यादा स्थिर रखनेके लिये काठियावाड प्रान्तमें भ्रमण करके आर्य्य समाजके विरुद्ध कार्य्य कर रहे हैं । यह समाचार प्राप्त करके स्वामीजीने इसी प्रान्तमें कुछ समयतक प्रचार करनेका विचार किया । और तदनुसार वीरपुर, लाठी, भावनगर, खम्बात आदि स्थानोंमें भ्रमण किया । श्रीशंकराचार्य्यके फैलाये हुए मिथ्या विचारोंका स्वामीजीने यथोचित खंडन किया । परिणाम यह हुआ कि शंकराचार्य्य महोदयका आर्य्यसमाजके प्रति फैलाया हुआ द्वेष प्रीतिमें परिवर्तित हो गया । खम्बात और भावनगर आदि स्थानोंमें स्वामीजीके व्याख्यानोंके समय राज्यके दीवान आदिअध्यक्षका स्थान ग्रहण करते थे । स्वामीजी जिस समय अमलसाड पंहुचे, तब श्रीशंकराचार्य्य भी वहीं उपस्थित थे और अपने स्वभावानुसार आर्य्यसमाजके विरोधमें बहुत कुछ कह सुन रक्खा था। स्वामीजीने उन्हें शास्त्रार्थके लिये आह्वान किया इसपर श्रीशंकराचार्य्य इधर उधर होने लगे । अन्तमें जब किसी प्रकार भी निस्तार होता न देखा तो कहा कि हम तो शास्त्रार्थ नहीं करेंगें, परन्तु हमारे शास्त्री पंडित शास्त्रार्थके लिये तत्पर हैं ।

इसपर आर्य्यसमाज की ओरसे पंडित बालकृष्णजी नियत किये गये ।

अमलसाडके समीप ४, ५, गावोंके बीचमें एक महादेवका मंदिर है, श्रीशंकराचार्य्य वहीं एक मंडप बनाकर ठहरे थे और धर्मचर्चा करते थे । शास्त्रार्थके लिये वहीं स्थान नियत हुआ । ३,४, दिनतक लेखबद्ध शास्त्रार्थ होता रहा । अन्तमें जब पंडित बालकृष्णजीके प्रबल और अकाट्य युक्ति और प्रमाणोंसे शास्त्रीगण बारम्बार निग्रहस्थानमें आने लगे तो उन्होंने हो हल्ला और टालमटोल करना आरम्भ किया । और उत्तर देनेसे स्पष्ट इनकार कर दिया । अन्तमें शास्त्रार्थ बन्द कर देना पड़ा । साधारण जनताको सत्य और झूठ में भेद मालुम हो गया और आर्य्यसमाजकी विजयका सम्वाद समस्त प्रदेश में फैल गया ।

इस प्रकार अप्रेल और मई १८०४ में काठियावाड व गुजरात प्रान्तमें प्रचार करके स्वामीजी बम्बई चले गये । और अगस्त ०४ तक ठहरे । इस बार मुम्बई प्रान्तमें एक गुरुकुल स्थापित करनेका विचार उठा ।

आर्य्यप्रतिनिधि सभाकी अन्तरंग सभाके कई अधिवेशन इसको कार्य्यरूपमें लानेके लिये हुए परन्तु इस वर्ष यह प्रस्ताव केवल विचारकोटिमें ही रहा; इसके सम्बन्धमें कुछ कार्य्य नहीं होसका । अगस्तमें स्वामीजी सिमला चले गये । प्रायः ऐसा संयोग आ पड़ता था कि स्वामीजी जब जब सिमला आते थे तो महाराजा हीरासिंहजी नाभा नरेशभी वहीं उपस्थित होते थे । जबसे स्वामीजीने नाभामें साधु ईश्वरानन्दकी वास्तविक स्थिति उसीके स्वमुखसे महाराजाको ज्ञात कराई थी, तबहीसे महाराजा स्वामीजीकी विद्वत्तापर मोहित थे और जब २ स्वामीजीसे मिलनेका संयोग होता था तो बड़ेही स्वागत सत्कारसे अपने स्थानपर बुलाकर प्रायः १, २ घंटा धर्मचर्चा करते रहते थे । सिमला प्रवासमें यह अवसर प्रायः बहुधा मिला करता था । नाभा महाराज स्वामीजीको 'वेदान्ती स्वामी' कहा करते थे । सिमला प्रवासमें स्वामीजीको समाचार मिले कि सनातन धमके उपदेशक जगत

प्रसादने अम्बाला आदि स्थानोंमें बड़ी हलचल मचा रक्खी है । अतः स्वामीजीने इसकी वास्तविक स्थितिका दिग्दर्शन करानेके लिए अम्बालाकी यात्रा की, परन्तु स्वामीजीके अम्बाला पहुंचतेही यह वहांसे चल दिया। स्वामीजीने कालका और डेरा बसई आदि स्थानोंमें भी इसकी वास्तविक योग्यता दर्शाई परन्तु यह प्रत्येक स्थानसे स्वामीजीके पंहुचतेही चल देता। अन्तमें सिमला आकर इसे शास्त्रार्थकी स्वीकृति देनीही पड़ी। परन्तु स्वयं इतना योग्य, कहां कि शास्त्रार्थ करता! अतः अपनी सहायताके लिये सिमला सनातन धर्मसभाके सभासदोंको समझा बुझाकर पौराणिकदलके दिग्गज पंडित श्री ज्वालाप्रसादजीमिश्र, विद्यावारिधि मुरादाबादनिवासी, पंडित गरुडध्वज कुरुक्षेत्री आदि अनेक पंडितोंको बुलवा लिया। उक्त पंडितोंसे स्वामीजीने सनातन धर्मसभाकेही स्थानमें ३ दिनतक निरन्तर शास्त्रार्थ किया। अन्तमें ये सब पंडित अत्यन्त आवश्यक और अनिवार्य्य कारण और कार्यका बहाना करके सिमलासे प्रस्थान कर गये! पंडित जगत्प्रसाद तो अपनी बला इनपर पहलेही डाल चुके थे; अतः वे क्या शास्त्रार्थ करते। आप भी मौका पाकर चलते बने!

इस बार सिमलामें स्वामीजीने महाशय जगदम्बाप्रसाद (ये इन दिनों मुसलमान हो गये थे) से भी शास्त्रार्थ किया। अब ये स्वामी ' मंगलानन्द पुरी ' नाम रखके ट्रान्सवाल आदि दक्षिण आफ्रिकाके स्थानोंमें खूब वैदिक धर्मका प्रचार करके भारतमें आ गये हैं। ता० २५ नवम्बर १९०४ को स्वामीजी सिमलासे लाहौर समाजके उत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये रवाना हो गये और उत्सवको पूरी कामयाबीसे समाप्त करवाके अम्बाला दिल्ली आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए बम्बई पहुंच गये।

इस वर्ष भारतवर्षीय जातीय कांग्रेसका अधिवेशन मुम्बईमें था। सामाजिक और औद्योगिक परिषद्के अधिवेशन भी प्रथानुसार इसीके साथ थे। बम्बई प्रान्तकी प्रतिनिधिसभा और नगरकी आर्य्यसमाजने इस अवसरपर वैदिक धर्मका सन्देश पहुंचानेका पूरा पूरा प्रबन्ध किया। बम्बई समाजका वार्षिकोत्सव भी इन्हीं तिथियोंपर करना निश्चित हुआ।

आर्य्यसमाजका पंडाल कांग्रेसके पंडालके अति निकट बनाया गया था।

इस अवसरपर स्वामीजीही प्रचारसम्बन्धी कार्य्यमें अग्रणी थे और आपको दिनमें दोसे लेकर तीन बारतक उपदेश देना पड़ता था। आर्य्यसमाज बम्बईके प्रतिनिधि होकर स्वामीजी सामाजिक परिषद्में भी सम्मिलित हुए थे।

सामाजिक परिषद्के चौथे प्रस्तावका समर्थन भी आपने किया था, जिसका भाव यह था कि यह परिषद् समस्त सामाजिक सुधारके प्रेमियोंको प्रार्थना करती है कि वे परदा-सिष्टम, अनमेल विवाह, बहुविवाह, दहेज और विधवाओंके कष्टके प्रति जनताके विचारोंमें आन्दोलन उत्पन्न करें; जिससे ये और अन्य कुरीतियां जिनसे स्त्रीजातिके गौरवमें

कमी आती है नाशको प्राप्त हों। कांग्रेसके अधिवेशनके पश्चात् मिस्टर डी० ई० वाच्छा आर्य्यसमाजके व्याख्यानोंके लिये कांग्रेसके पंडालका उपयोग करनेकी स्वीकृति दे दी थी, परन्तु कट्टर पौराणिकोंके विरोध करनेपर व्याख्यान नहीं हो सके। कांग्रेसके अधिवेशनके पश्चात् स्वामीजीके कई, व्याख्यान फ्रामजी कावसजी हालमें हुए। जनवरी १९०५ के मध्यमें स्वामीजी बडौदा चले गये और महाराजासे धार्मिक सामाजिक और शिक्षासम्बन्धी विचार करते रहे । यहांसे स्वामीजी कर्नल सर प्रतापसिंहजीसे भेट करनेको ईडर चले गये। महाराजा ईडरने स्वामीजीका बड़ा आदर किया और वैदिक कोशसम्बन्धी चर्चा चलनेपर अच्छी सहायता देनेकी प्रतिज्ञा की। और कुछ अंश उसी समय देते भी थे, परन्तु स्वामीजीने उस समय न लिया। महाराजा प्रतापसिंहजीने स्वयं सहायता देनेके अतिरिक्त महाराजा ग्वालियर, कश्मीर, रीवां, अलवर बिकानेर आदिके नाम पृथक् २ निम्न आशयके परिचयपत्र देकर उक्त महाराजाओंसे भी स्वामीजीकी सहायता करनेकी प्रेरणा की।

Idar, Ahmednagar
3rd Feb. 05.

My dear friend

I introduce to you through this letter, two sanyasi mahatmas Swami Vishweshwaranand & Swami Nityanand.

They are followers of the pure Vedic religion and are also well acquainted with the doctrines of the Christian, the Mohomedan and the Budhist religion and of those of the Hindu religion, they are masters. They know several languages such as English etc. but they are great scholars of Sanscrit in particular. They have also full information on all social, religious and spiritual matters. They are held in esteem by most Indian maharajas, counting amongst them the Gaekawad of Baroda and by the public also.

At present they are preparing a vedic dictionary which will in fact be a great addition to the literature of Hindu religion and is a great desideratum.

I commend them to your sympathy which I hope you will gladly extend to them and without which they can not accomplish their arduous taste.

Yours sincerely.
(Sd) Pratap Singh
Maharaja of Idar

भावार्थ

ईडर अहमदनगर

मेरे प्रियमित्र ! ३ फरवरी १९०५

इस पत्रद्वारा मैं आपको दो महात्मा संन्यासी स्वामी विश्वेश्वरानन्द और स्वामी नित्यानन्दका परिचय कराता हूँ। वे पवित्र वैदिक धर्मके अनुयायी हैं। और ईसाई, मुसलमान, और बौद्ध धर्मके सिद्धान्तोंसे पूरी तरह परिचित हैं। हिन्दू धर्मके तो ये पूर्ण ज्ञाता हैं। वे अंगरेजी आदि अनेक भाषाँए जानते हैं, परन्तु संस्कृतके तो ये विशेषकर महान् विद्वान हैं। इन्हें सामाजिक, धार्मिक और आत्मिक विषयोंका पूरा ज्ञान है। देशके अनेक महाराजा जिनमें गायकवाड़ बड़ौदानरेश भी हैं, तथा सर्व साधारणमें इनकी बड़ी प्रतिष्ठा है। वर्तमानमें ये एक वैदिक कोश जो कि वास्तवमें हिन्दु धर्मके साहित्यको बड़ी भारी सहायता करेगा और जिसकी नितान्त आवश्यक्ता है तय्यार कर रहे हैं। मैं उनके साथ सहानुभूति और सहायताके लिये आपको लिखताहूँ और आशा करता हूं कि आप प्रसन्नतासे ऐसा करेंगे जिसके विना ये इतने बड़े कामको पूरा नहीं कर सकते।

आपका हितैषी,

प्रतापसिंह महाराज, ईडर।

स्वामीजीको ईडरमें रावलपिंडी समाजका तार मिला कि, आप यहां तुरन्त पधारें। इस अवसरपर रावलपिंडी आर्य्यसमाजके नये बनवायेहुए समाजमन्दिरमें प्रवेश-संस्कारसम्बन्धी उत्सव था। यह मन्दिर श्रीयुत लाला कृपारामजीने २००००) की लागत लगाकर स्वयं अपने निरीक्षणामें अपने व्ययसे बनवाया था। और उनकी यह आन्तरिक इच्छा थी कि इस मन्दिरमें सर्वप्रथम स्वामीजीका व्याख्यान हो। अतः ईडरसे अहमदाबाद होते हुए स्वामीजी सीधे रावलपिंडी चले गये। लाहोरसे अन्य सज्जन भी जो इस उत्सवपर रावलपिंडी जा रहे थे, साथ हो गये। यह उत्सव बड़ी सफलतासे हुआ और इस सफलताके लिये रावलपिंडी समाजने स्वामीजीका विशेष आभार माना। रावलपिंडीसे स्वामीजी लाहोर आ गये और मार्च १९०५ में काशी चले गये। काशीमें स्वामीजीने वैदिक कोशकी शब्द सूचि बनानेके कार्य्यका प्रारम्भ किया।

सर्व प्रथम पंडित प्रभुदत्तजी यजर्वेदी, साहित्याचार्य्य पंडित रामावतार शर्मा पांडेयजीके शिष्य पंडित दामोदरजी इस कार्य्यमें सहायता देनेके लिये सम्मिलित किये गये।

अथर्ववेदकी सूची बनानेका कार्य्य साहित्याचार्य्य पं० रामावतारजीके छोटे भाईको दिया गया। अनुमान ३ महीनेतक काशीमें निवास कर शब्दसूची बनानेके प्रकार आदिको निश्चय करके और प्रारम्भिक कार्य्यशैलीका निरीक्षण करके स्वामीजी कानपुर

होते हुए सिमला चले गये। इस बारके सिमला प्रवासमें स्वामीजीने जुनगा राज्यमें १ मासतक प्रचार किया। बीच २ में राजासाहब जुनगाधीशजीभी समाजकी पुष्टिमें व्याख्यान दिया करते थे।

सिमलासे स्वामीजी बड़ोदा आये और धार्मिक प्रचार, महाराजाके साथ विचार और राजपरिवारको धर्मोपदेश देनेके अतिरिक्त धर्म शिक्षण परिषद्की कार्य्यवाहियोंमें अपनी सम्मति और लेखोंद्वारा विशेष स्फूर्ति उत्पन्न की। महाराजासे स्वामीजी प्रायः यथावसर नित्य मिला करते थे। बड़ोदासे स्वामीजी ४ अक्टूबर १९०५ को लश्कर ग्वालियर गये और समाजके उत्सवको पूर्ण सफलताके साथ पूर्ण कराया। यहांसे आगरा, दिल्ली, अम्बाला और जालंधर आदि स्थानोंमें एक २ दो २ व्याख्यान देकर लाहोर समाज के उत्सवपर लाहोर पहुंचे। लाहोर समाजका उत्सव पूरी सफलतासे हुआ।

लाहोरसे स्वामीजी दिसम्बरके प्रारम्भमेंही काशी पहुंच गये। पाठशाला और वैदिक कोशकी शब्द सूचीके कार्य्यका निरीक्षण करना आरम्भ किया। इसी वर्ष काशीमें स्वर्गवासी राजर्षि महात्मा गोखलेके सभापतित्वमें नेशनल कांग्रेसका अधिवेशन था।

बम्बई प्रतिनिधिके समान संयुक्त प्रान्तकी आर्य्यप्रतिनिधि सभाने भी इस अवसरसे पूरा लाभ उठाया और अपना वार्षिक अधिवेशन काशीमेंही करनेका प्रबन्ध किया।

आर्य्यसमाज का पंडाल काशी नागरी प्रचारिणी सभाके भवनके सामनेके मैदानमें बड़ा विस्तृत बनाया गया था। स्वामीजी के व्याख्यान बड़े प्रभावशाली हुए। लोकमान्यलाला लाजपतरायजीका स्वागत और भाषण आर्य्यसमाज और सामाजिक परिषद् दोनों स्थानोंपर अपूर्वही हुआ। सारी काशी आर्य्य समाजके प्रचारसे एकबार फिर गूंज गई।

सामाजिक परिषद्में स्वामीजीने विधवा विवाह विषयक प्रस्तावका समर्थन करते हुए जो भाषण आर्य्य भाषामें किया था, उसका आंग्ल भाषाका अनुवाद उक्त परिषद्की रिपोर्टसे यहां उद्धृत किया जाता है। पाठक देखें कि जब अनुवादमें इतना बल है तो स्वामीजीके शब्दोंने क्या प्रभाव डाला होगा।

I am a Samnyasi and as such I have no girl to marry nor I have the desire myself to marry any girl so it would seem strange to many to see me seconding this resolution, I look on all females as mothers and sisters and as such I can't bear the sight of the suffering inflicted on them by our cruel society. I am prepared to say and prove that widow marriage is sanctioned by the Smriti. Enforced widowhood is not the spirit of Hindu scriptures. There were many females such as Gargee and others who led a celibate life. They were respected as Brahma-wadins. Sixty years old men are allowed to marry a girl of eight years but a child widow of six years is not allowed to marry

I challenge any body to discuss with me this subject and disprove my thesis. I am ready to prove from Shruti & Smriti that widow marriage is not at all opposed to Hindu religion. Have pity on poor widows.

भावार्थ ।

"मैं संन्यासी हूं, मेरे कोई कन्या नहीं है, जिसका मुझे विवाह करना हो । न मेरी इच्छा किसी कन्यासे विवाह करने की है । इस लिये बहुतोंको मेरा इस प्रस्तावका समर्थन करना आश्चर्यजनक होगा । मैं स्त्रीजातिको माता और बहिन समझता हूं । इस लिये निर्दयी समाजद्वारा उनपर किये हुए अत्याचारोंका दृश्य मुझसे नहीं देखा जाता ! । मैं यह कहने और प्रमाणित करनेको तत्पर हूं कि स्मृतियां विधवाविवाहकी स्वीकृति देती हैं । हिन्दू शास्त्रोंका मर्म जबर्दस्ती विधवा रखनेका नहीं है । गार्गीके समान अनेक देवियां हो चुकी हैं, जिन्होंने आजन्म ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण किया । वे प्रतिष्ठित ब्रह्मवादिनीथीं । साठ वर्षके बुड्ढेको आठ वर्षकी कन्यासे विवाह करनेकी आज्ञा दी जाती है परन्तु ६ वर्षकी विधवा कन्याका विवाह नहीं किया जाता ! । मैं इस विषयपर मेरे साथ शास्त्रार्थकरनेको प्रत्येक सज्जनसे घोषणा करता हूं कि वे मेरे इस मन्तव्यको अशुद्ध प्रमाणित करें । मैं श्रुति और स्मृतिसे यह प्रमाणित करनेको तत्पर हूं कि श्रुति और स्मृति विधवाविवाहसे विरोध नहीं रखती । दीन विधवाओंपर दया करो ! ! ! "।

स्वामीजी काशीमें मार्च १९०६ तक कोश सम्बन्धी कार्य्य और पाठशालाका निरीक्षण करते रहे । और फिर कोश की शब्दसूची छपवानेका प्रबन्ध करनेके लिये बम्बई गये और निर्णय सागरप्रेसमें शब्द सूची छपवानेका प्रबन्ध किया ।

बम्बईसे स्वामीजी बड़ौदा और ईडर नरेशोंसे मिलकर और उन्हें कोश सम्बन्धी समाचार बतलाकर सिमला चले गये । और यथावसर समाजके साप्ताहिक अधिवेशन और आसपासकी रियासतोंमें प्रचार करते रहे । सिमलाप्रवास ऋतु समाप्त होनेपर स्वामीजी कानपुर, प्रयाग, और काशी आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए कलकत्ते पंहुचे । कांग्रेसका अधिवेशन इस वर्ष भारतके महान् वृद्ध श्रीमान् दादाभाईके सभापतित्वमें कलकत्तेमें होना था । स्वामीजी कांग्रेसके कुछ पूर्वही कलकत्ता चले गये थे और कलकत्तानिवासी आर्य्यसज्जनोंकी सहायतासे आर्य्यसमाजके प्रचारका प्रबन्ध किया । आर्य्यसमाजके प्रचारनिमित्त कांग्रेसके पण्डालके समीपही बड़ा भारी पण्डाल बनाया गया था । और प्रचार बड़ी धूमधामसे हुआ । सामाजिक परिषद्‌के अधिवेशनोंमें भी स्वामीजीने योग दिया था और आपके भाषणका प्रभाव प्रतिनिधियोंपर चिरस्थायी रूपसे पड़ा । कलकत्तेसे जनवरी १९०७ में स्वामीजी बम्बई चले गये और शब्दसूचीकी छपाईका निरीक्षण किया । इस वर्ष मुम्बई प्रान्तमें वैदिक धर्मका प्रचार विशेष समारोहसे निरन्तर होते रहनेका उद्देश्य लक्ष्यमें रखकर आर्य्यधर्मपरिषद्‌का संगठन किया और उसका प्रथम अधिवेशन बम्बई नगरमें इन्हीं दिनोंमें हुआ । उस समयसे यह परिषद् सफलतापूर्वक वैदिक धर्मका

प्रचार कर रही है; और इसके वार्षिक अधिवेशनबम्बई और गुजरात प्रान्तके भिन्न २ स्थानोंमें प्रतिष्ठित और विद्वान् महानुभावोंके सभापतित्वमें हो रहे हैं, जिनका वर्णन आगे यथास्थान होगा। मुम्बई प्रान्तके लिये एक गुरुकुल खोलनेका विचार दो तीन वर्षोंसे चल रहा था, परन्तु यह कार्य्यरूपमें नहीं आ सका था। इस वर्ष स्वामीजीने उसके लिये विशेष उद्योग किया। और धर्मपरिषद्के प्रथम अधिवेशनपर उसके शीघ्रही खोले जानेका हर्षसमाचार सर्वसाधारणको सुना दिया गया। इसका प्रबन्ध आदि करनेके लिये आर्य्य विद्या सभाका संगठन किया गया, जिससे कि प्रतिनिधिसभा अन्य प्रतिनिधिसभाओंके समान अपना ध्यान वेदप्रचारसे न हटा ले। आर्य्य विद्यासभाने गुरुकुल की स्थापना नासिकमें की और उसका आरम्भोत्सव बड़े समारोहसे हुआ। आर्य्यविद्यासभाके सर्वप्रथम प्रधान स्वामीजी निर्वाचित किये गये और मंत्रीका पद श्रीमान्‌डाक्टर कल्याणदासजीने लिया। अन्य सभासदोंमें, आनरेबिल गोकुलदास कहानदासजी पारख, सर जस्टिस चन्दावरकर, प्रसिद्ध विद्वान् सेठ पुरुषोत्तम विश्राम मावजी, विशनजी खिमजी आदिके शुभ नाम थे। इस प्रकार बम्बई प्रान्तमें वैदिक धर्म प्रचारका चिरस्थायी प्रबन्ध करके स्वामीजी बडोदाचले गये और महाराजासाहबसे मिलते रहे। जब बम्बई प्रान्तमें गुरुकुलकी स्थापनाके समाचार महाराजासाहबको प्रकट हुए तो आपने अति प्रसन्नता प्रकट की ओर गुरुकुलको अच्छी सहायता करनेके विचार प्रकट किये। बडोदासे स्वामीजी पीछे बम्बई आ गये और शब्दसूचीके कार्य्यका निरीक्षण करके हैदराबाद (दक्षिण) समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये चले गए।

जिन सज्जनोंको आर्य्यसमाजके इतिहाससे परिचय है, उन्हें सन् १९०७ ईस्वीके घटनाओंका संकेत मात्र कर देना अलम होगा। इसी वर्ष सुप्रसिद्ध पटियाला अभियोग चला था। लोकमान्य लाला लजपतरायजीको देश निकाला दिया गया था। और न्यायशील ब्रटिश गवर्न्मेंन्टके कतिपय अधिकारी भ्रमवशहो आर्य्यसमाजको सन्देहकी दृष्टिसे देखने लग गये। ऐसी परिस्थितिमें उन भ्रमपूर्ण बृटिश अधिकारियोंका प्रथम आक्रमण श्रीमान् स्वामीजीपर हुआ। इस विषयमें हम अपनी ओरसे कुछ न लिखकर मंत्री आर्य्यसमाज हैदराबाद दक्षिणके लेखका अनुवाद उद्धृत करते हैं, जिससे पाठकोंको हैदराबादके वृत्तान्तोंका परिचय हो जावे।

श्रीयुत ए. सोमनाथ रावजी, मंत्री, आर्य्यसमाज हैदराबाद १९०७ ई० के लेखका भावानुवाद।

आर्य्यसमाज हैदराबाद दक्षिणका वार्षिकोत्सव।

साधारणतया हम समाजमन्दिरमें वार्षिकोत्सवका प्रबंध किया करते थे। इस बार हमारे प्रसिद्ध स्वामी नित्यानंदजी और ठाकुर प्रवीणसिंहजीके पधारनेकी आशाथी इस

लिये यह विचार किया गया कि समाजमन्दिरमें जनताके लिये स्थान नहीं रहेगा। ऐसी दशामें बेंगाल बेंकके सामनेके मैदानमें पंडाल बनाया गया। जब पुलिसके कोतवालको यह मालूम हुआ कि हम पंडालमें अपना वार्षिकोत्सव करनेवाले हैं तो उन्होंने हमें सूचना दी कि यदि मैजिस्ट्रेटकी आज्ञा नहीं प्राप्त की गई तो वे कार्य्यवाहीको रोक देंगे। इसलिये हमने मैजिस्ट्रेटसे आज्ञा देनेके लिये प्रार्थना की। और मैजिस्ट्रेटने श्रीयुत सोमनाथरावजीसे यह लिखवाकर कि 'किसी प्रकारकी राजनैतिक चर्चा या ओर कुछ गडबड नहीं होगी' आज्ञा दे दी। ब्रह्मचारी नित्यानंदजी, और ठाकुरप्रवीण सिंहजी २३ जनवरी १९०७ के सायंकालको हैदराबाद आ गये। २४ जनवरी ०७ के सायंकालको स्वामीजी सिकंदराबाद भारतीय सैंडोका सरकस देखने गये और कतिपय भारतीय व्यापारियोंकी प्रार्थनासे उनकी ओरसे भारतीय सैंडो(राममूर्ती)को एकस्वर्णपदक दिया। और उपस्थित जनताको "ब्रह्मचर्य्य" पर प्रभावशाली उपदेश दिया। २५ जनवरीको १२ बजेसे ४–३० बजेतक नगरकीर्तनथा। भजनमंडलियां और उपदेशकगणोंने सारे रेजिडेन्सी बजारका चक्कर लगाया। हमारे ठाकुर प्रवीणसिंहजीके हृदय हिला देनेवाले भजनों और उपदेशोंको उस समय जनताने बडे उत्साहसे ध्यान पूर्वक सुना। २६ जनवरीके प्रातःकालकी कार्य्यवाही, भजनों और हवनके अनन्तर पंडित वेणीप्रसादजीका हवनके लाभोंपर छोटासा भाषण होकर समाप्त हुई। सायंकालको संध्याके पश्चात् कुछ भजन हुए; फिर श्रीयुत सोमनाथरावजीने स्त्रीशिक्षापर व्याख्यान दिया। इसके पश्चात् इसी विषयपर ठाकुर प्रवीणसिंहजीने भजनोंद्वारा जनताका मनोरंजन किया। ६–३० पर ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी करतलध्वनिके मध्यमें उठे और "विकासवाद" पर अपना ओजस्वी व्याख्यान दिया। अन्तमें ठाकुर प्रवीणसिंहजीने अपने गम्भीर और समयोचित भजनोंद्वारा एकबार और जनताको प्रसन्न किया। इस प्रकार पहले दिनकी कार्य्यवाही शान्तिसहित निर्विघ्नतासे हुई। रात्रिमें श्रीयुत सोमनाथरावजीने तेलगु भाषामें राजा हरिश्चन्द्रके जीवनचरित्रका पाठ किया। २७ जनवरीके प्रातः कालको सदैवके अनुसार श्रीयुत सोमनाथ रावजीने संध्या कराई और ठाकुर प्रवीणसिंहजीके थोड़ेसे मधुर भजनोंके अनन्तर प्रातःकालकी कार्य्यवाही समाप्त हुई।

सायंकालको भजनों और संध्याके अनन्तर श्रीयुत केशवरावजी प्रधान समाजने "आर्य्यसमाजने क्या २ काम किये" इस विषयपर व्याख्यान दिया और ठाकुर प्रवीणसिंहजीके भजनोंके पश्चात् नियमानुसार ठीक ६–३० पर ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीने "जीवात्मा" विषयपर अपना भाषण आरम्भ कर दिया। इस समय सारा पंडाल श्रोताओंसे भरा पड़ा था और उपस्थिति ३००० से अधिक थी। पूरे डेढ घंटेतक व्याख्यान होता रहा। जनता मंत्रमुग्धसी हो गई। अन्तमें ठाकुर प्रवीणसिंहजीने अपने मधुर, ओजस्वी और गम्भीर भजनोंद्वारा जनताका ध्यान वैराग्यकी ओर आकर्षित किया। जिसका सारांश यह था कि "यह संसार नाशमान है। भले और बुरे दोनोंको

इसे छोड़ना पड़ेगा। महमूद गजनी, चंगेजखां और नादिरशाह जिन्होंने परमात्माके अनेक निरपराध जीवोंको मार डाला, योगी और मुनि सब संसारको छोड़कर चले गये! इस लिये परमात्मासे भय करके प्रत्येकको भलाईका जीवन व्यतीत करना चाहिये इस प्रकार दूसरे दिनकी कार्य्यवाही भी शान्ति और निर्विघ्नतासे पूर्ण हुई। तीसरे दिन प्रातःकालकी कार्य्यवाही हो चुकी थी और सायंकालके लिये प्रबन्ध किया जा रहा था, कि आचानकही पुलिस कातवालेने जो कि दिनके दो बजे उधरसे जा रहे थे, श्रीयुत सोमनाथ रावजीको बुलाकर कहा कि उन्हें मैजिस्ट्रेटकी आज्ञा मिली है कि उत्सवकी कार्य्यवाही एकदम रोक दी जावे; इस लिये तुम्हें सूचना दी जाती है कि आगे कोई कार्य्यवाही न होने पावे। इसकी सूचना श्रीयुत प्रधानजीको दी गई और वे एक स्थानिक वकीलके साथ मैजिस्ट्रेटके यहां गये। परन्तु मैजिस्ट्रेट नहीं मिले। तब वे प्रथम सहायक रेजिडेन्टके यहां गये और उनके सामने सत्य घटनाका वर्णन किया। उसने कहा आर्य्यसमाज बदमाशोंका गिरोह है और उसने पंजाबमें बहुत खराबी मचा रक्खी है और उसको हर प्रकारसे (at any cost) हतोत्साह करना चाहिये। और कहा कि मुझे इस मामलेमें कुछ नहीं करना है, तुम मैजिस्ट्रेटके यहां जाओ। वे तब मैजिस्ट्रेटसे मिलने सिकंरबाद गये परन्तु वे वहां भी नहीं मिले। तब डिस्ट्रिक्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट मिस्टर गैलोवेसे मिले और उन्होंने कहा कि इस सबका मैजिस्ट्रेट जिम्मेवार है और वो कुछ नहीं कर सकते। इस समयतक ८ बज गये थे और पंडालके बाहर ३,४ हजारसे अधिक मनुष्य बड़ी उत्सुकतासे परिणाम जाननेके लिये ठहरे हुए थे। अन्तमें मंत्रीने उन्हें सूचना दी कि आज कोई व्याख्यान नहीं होगा और आज्ञा मिलनेपर फिर सूचना दी जायगी। इस प्रकार ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीके "ईश्वर" विषयपर व्याख्यान सुननेको आये हुए ३,४ हजार श्रोताओंका निराश लौटना बडाही शोकोत्पादक दृश्य था। दूसरे दिन ११-३० पर मैजिस्ट्रेटको श्रीयुत सोमनाथ रावजीने उत्सवकी शेष कार्य्यवाहीको समाप्त करनेकी आज्ञा देनेके लिये प्रार्थनापत्र दिया। मैजिस्ट्रेटने कहा कि-"कोई आज्ञा नहीं दी जा सक्ती; क्योंकि ऐसे भजन जिनसे मुसलमानोंके पैगम्बरोंकी अवज्ञा होती है गाये गये थे"। इसपर श्रीयुत सोमनाथरावजीकी ओरसे कहा गया कि ऐसा कोई भजन नहीं गाया गया और न गानेका कोई अवसरही आया। उस दिन स्वामी नित्यानन्दजीका जीवात्मा विषयपर भाषण था और ठाकुर प्रवीणसिंहजीने वैराग्य विषयपर एक भजन गाया था जिसका सार यह था कि "यह संसार नाशमान है; भले और बुरे दोनों अवश्य मरेंगे। महमूद गजनी आदि बडे भारी नरघातकोंको मरना पड़ा था और अनेक योगी और मुनि भी मर चुके हैं। इस लिये मनुष्योंको परमात्माका भय करना चाहिये और शुभ कर्म करना चाहिये"। मैजिस्ट्रेटने इसपर अनुवाद सहित वह भजन पेश करनेको कहा और चेतावणी दी कि उसमें कुछ परिवर्तन न होने पावे। इसपर श्रीयुत सोमनाथरावजीने कहा कि-'भजन छपा हुआ है; उसमें हेरफेर नहीं हो सकता'।

इस आज्ञाके अनुसार अनुवादसहित भजन मैजिस्ट्रेटके बंगले पर ४ बजे पेश किया गया । इसपर मैजिस्ट्रेटने कहलाया कि वे श्रीयुत सोमनाथरावजीको बुलवालेंगे ठहरनेकी कोई आवश्यकता नहीं । यह सोचकर कि विना किसी वकीलके किये शीघ्र आज्ञा मिलनेकी कोई आशा नहीं है, हम तीस तारीखको किसी वकीलकी खोजमें थे । अकस्मात्, हम सबको आश्चर्यमें डालनेके लिये एक बजे, पुलिसके कोतवाल अपनी वर्दी पहने हुए चार साथियों सहित एक दो घोड़ोंकी बग्गी लेकर आये और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीसे (जो कि उसमय एक बागसे जहां उनको भोजन दिया गया था आ रहे थे) कहा कि मिस्टरगैलोवे आपसे कुछ वार्तालाप करना चाहते हैं । ब्रह्मचारीजी तत्काल ही उनकी प्रार्थनापर उनके साथ हो लिये । जब वे गैलोवे साहबके यहां जा रहे थे, तो मार्गमें पुलिस इन्स्पेक्टरने ब्रह्मचारीजीसे कहा कि यदि आज्ञाके लिये दूसरी अर्जी नहीं जाती तो यह कुछ नहीं होता । ब्रह्मचारीजी उसके इस कथनका आशय नहीं समझ सके । ब्रह्मचारीजी मिस्टर गैलोवे सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिसके यहां पंहुचाये गये । मिस्टर गैलोवेने बनावटी खेद प्रकाशित करते हुए कहा कि जो कुछ होगया उसके लिये वे दुःखी हैं और अब सब ठीक हो जायगा । इसके पश्चात् स्वामीजीको एक गाड़ीमें बिठाकर राज्यके मंत्री पोलिटिकल और प्राइवेट सेक्रेटरी मिस्टर फरदूनजीके यहां लेगये । ब्रह्मचारीजीसे कुछ मिनटोंतक प्राइवेट बातचीत करके उन्हें (ब्रह्मचारीजीको) नगरके कोतवालके पास भेज दिया। ज्योंही ब्रह्मचारीजीको नगरकोतवालके सिपुर्द किया गया वह इनके साथ नीचताका वर्ताव करने लगा ब्रह्मचारीजीने एक पारसी सज्जनसे जो कि वहां थे, कोतवालके इस बर्तावके बारेमें मिस्टर मलबारीको तार देनेके लिये कहा । उस पारसी सज्जनने कोतवालको निजू तौरसे बहुत धिकारा और उसे बतलाया कि स्वामीजी जिनके साथ वह ऐसा बर्ताव कर रहा है साधारण व्यक्ति नहीं हैं और उसे अच्छा वर्ताव करना चाहिये । इसपर वह सभ्यतासे बर्ताव करने लगा । लेकिन किसी भी सामाजिक पुरुषको स्वामीजीके पास नहीं आने दिया । उसने कुछ सज्जनोंको जो स्वामीजीको कुछ वस्त्र देना चाहते थे हाजतमें रख दिया । प्रहरीगणभी आपसमें नहीं बोल सकते थे । इसी रात्रिको आर्य्यसमाजकी ओरसे भिन्न २ आर्य्यप्रतिनिधिसभाएं, महाराजा बडौदा, महाराजा शाहपुरा, महाराजा ईडर, लाला लाजपतरायजी, लाला रोशनलालजी बेरिस्टर, लाला मुंशीरामजी आदि सज्जनोंको तार दिये गये । ता. ३१ को ३-३० पर स्वामीजी एक गाड़ीमें एक पुलिस इन्स्पेक्टरके निरीक्षणमें रेलवे स्टेशनपर लाये गये । जब सामाजिक पुरुषोंने स्वामीजीके साथ इस प्रकारका बर्ताव देखा तो उनके हृदय लज्जा और क्रोधके मारे विदीर्ण होगये । नेत्र अश्रुपूरित थे । स्वामीजी बम्बई भेज दिये गये । प्रत्येक स्थानसे तार आ रहे हैं। समाजकी स्थिति भयंकर है । इस प्रकार उत्सव समाप्त हुआ ।

हैदराबादसे प्रस्थान करनेके पीछे कुछ दिन बम्बईमें ठहरकर स्वामीजी बड़ौदा होते

हुए काशी गये और कोशके कार्य्यका निरीक्षण करते रहे । और फिर सिमला चले गये । सिमलासे स्वामीजी बडौदा आये और फिर बम्बई प्रान्तमें प्रचारार्थ भ्रमण किया।

१९०७ ईस्वीमें स्वामीजीने शब्दसूचीका कार्य्य समाप्त किया और कोश सम्पादनके कार्य्यका आरम्भ होगया । सन् ०७ का अधिक भाग इसी कार्य्यमें लग गया और प्रचारका कार्य्य बम्बई प्रान्त और बड़ौदा राज्यके अतिरिक्त और कहीं नहीं हुआ।

१९०८ ईस्वी ।

फरवरी १९०८ सेही स्वामीजी इटोला आर्य्य परिषद्के प्रबन्ध आदिके लिये विशेष उद्योग करने लगे । इस निमित्त बडौदा राज्यसे भी विशेष सहायता प्राप्त की। और परिषद्में सर्व साधारणकी रुचि और उपस्थितिकी वृद्धि करनेके लिये आपने काठियावाड़, गुजरात, और मुम्बई प्रान्तके अनेक स्थानोंका दौरा किया; जिनमें चीखोदरा, सारसा, अडास आदि स्थानोंमें विशेष प्रचार किया और समाजभी स्थापित हुए । अप्रेल मासमें श्रीमान् सम्पतरावजी B. A. L. L. B. गायकवाड (महाराज बडौदाके भाई) के सभापतित्वमें परिषद् बडी सफलतासे हुई; जिसमें सब श्रेणीके मनुष्योंने विशेष उद्योग किया । अपने भ्रमणमें स्वामीजी परिषद्की सफलताके साथ २ गुरुकुलके लिये सहायता और सहानुभूति उत्पन्न करते थे । परिषद्के पश्चात् भी कुछ दिनोंतक स्वामीजी गुजरात प्रान्तमें प्रचार करते रहे और फिर सिमला चले गये। जुलाई० ८ में सिमलासे केट्टा, बिलोचिस्तान समाजके उत्सवमें गये और यहांसे करांची, सकर, मुलतान और लाहोर आदि समाजोंमें प्रचार करते हुए पीछे सिमला लौट आये । यहांसे फिर नवम्बरमें लाहोर समाजके उत्सवपर गये और वहांसे बडौदा चले गये । और साधारण प्रचारके अतिरिक्त महाराजाको धार्मिक शिक्षणसम्बन्धी राजनियम प्रचलित करनेके विषयमें सम्मति दी ।

१९०९ ईस्वी ।

सन्०९ में स्वामीजी कुछ दिन बम्बईमें रहे और फिर दिल्ली समाजके उत्सवपर पहुँचे । इस वर्ष दिल्ली समाजका उत्सव बड़ी धूमधामसे मनाया गया था और शंका समाधानकी विशेष चर्चा थी । इसी उत्सवपर मिस्टर 'डिकी' नामक योरोपियनको शुद्ध किया गया था और उसका नाम 'धर्मदेव' रक्खा गया । स्वामीजी श्रीयुत धर्मदेवको अपने साथ सिमला ले आये और अपने मित्र श्रीयुत बी. बरूहाके यहां नौकर रखा दिया । अब ये महाशय एक यूरोपियन टिम्बर मर्चेन्टके यहां नौकर हैं और एक सभ्य गृहस्थके समान सदाचारसहित शुद्ध जीवन व्यतीत कर रहे हैं ।

सिमलासे स्वामीजी करांची गये । इस बार करांची समाजका उत्सव था और श्रीयुत पंडित रामभजदत्तजी और श्रीमती सरलादेवी चौधरानी भी पधारीं थीं ।

इन दिनों स्वामीजी कुछ अस्वस्थ थे, तो भी आप बडे उत्साहसे प्रचारकार्य्यमें लग-गये और कराचीकी भाषा सिंधी होनेपरभी स्वामीजीके हिन्दी भाषणोंने जनताको मोहित कर लिया। और सर्व साधारण स्वामीजीके व्याख्यानोंको निरन्तर सुनते रहनेकी इच्छा प्रकट करने लगे। करांचीसे स्वामीजी मुलतान, लाहोर, जालंधर, जलालपुर, जट्टावाला, गुजरात (पंजाब) आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए सिमला आ गये और थोडे दिन विश्राम करके दिल्ली, भरतपुर, अजमेर और बडौदामें प्रचार करते हुए मुम्बई आर्य्यसमाजके उत्सवअवसरपर बम्बई पहुंचे। इस वर्ष स्वामीजीके अतिरिक्त पं० तुलसीरामजी सामवेदभाष्यकार और मास्टर आत्मारामजीके भाषण अति प्रभावोत्पादक हुए।

१९१० इसवी।

१९१० ई० केआरम्भमें स्वामीजीने वैदिक कोशके सम्बन्धमें माइसोरकी यात्रा की। स्वामीजीके वहां पधारनेपर United India & Native States नामके पत्रने अपने १६ अप्रेल १९१० के अंकमें स्वामीजीके विषयमें एक लम्बी टिप्पणी प्रकाशित की। स्वामीजीकी राजभक्तिका परिचय देते हुए उक्त लेखमें स्वामीजीके विषयमें लिखा है।

"They are wonderful sannyasis, they are the real sannyasis. The present they accept are only some morsels of food and cheap clothing they wear. If any thing more is presented to them they transfer them in the name of their donors either to their orphanages or to the spread of sacred literature.........They have now arrived in Mysore and it is likely that another intellectual and moral treat will fall to the lot of the people in the capital. They have been moving for the last 16 years with the highest of the Englishmen from the viceroy downwards...........we are glad that they have come to Mysore to give the experience of their 16 years travels to the people who 16 years ago loved and honoured them so well for their high scholarship or higher love of India."

अर्थात् "वे आश्चर्यजनक संन्यासी हैं, वे सच्चे संन्यासी हैं, भेट वे केवल रूखा सूखा भोजन और सादा वस्त्रोंको ग्रहण करते हैं, यदि उनको कुछ अधिक दिया जाता है, तो वे दाताके नामसे उसे किसी अनाथालय या वेदप्रचारके लिये भेज देते हैं।

वे अब माइसोरमें आये हैं और सम्भतया उनके विद्वत्ता और सदाचारपूर्ण व्याख्यानोंसे राजधानीकी जनता फिर लाभ उठावेगी।

गत १६ वर्षोंमें वे वाइसरायसे लेकर बड़े २ अंगरेज़ोंसे मिल चुके हैं।

हमें प्रसन्नता है कि वे अपने १६ वर्षके भ्रमणके अनुभवका फल बतलानेके लिए

यहां आये हैं और आशा है कि सर्व साधारण उनके उच्च विद्या प्रेम और उससे अधिक देशप्रेमका पूरा आदर करेगी ”।

माइसोरमें प्रचार करनेके अतिरिक्त स्वामीजी महाराजासाहबसे भी मिले। और यथोचित उपदेश दिया। माइसोरसे स्वामीजी बम्बई आये और बड़ौदा, अहमदाबाद, आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए सिमला चले गये। सिमलेसे स्वामीजी दिहली चावड़ीबाजार समाजके उत्सवमें पधारे। इस वर्ष यह उत्सव अतिसमारोहसे हुआ। बाराबंकीनवाबगंज, लखनऊ, कानपूर, आदि समाजोंमें भी स्वामीजी गये। बहुधा जहां कहीं वैदिक धर्मके प्रतिपक्षी (जिनमें विशेषता पौराणिकोंकी होती थी) आर्यसमाजके प्रति अपने विरोध भावको प्रकट करते थे, तो सत्यके प्रतिपादनार्थ स्वामीजीको जाना पड़ता था। इसी वर्ष सिमलेसे मसूरी भी पधारे और वहांसे वड़ौदा और बम्बई चले गये। वर्षके अन्तमें सुप्रसिद्ध प्रयागकी प्रदर्शनी थी। आर्यसमाज प्रयागने वैदिक धर्म प्रचारके लिये प्रशंसनीय प्रबन्ध किया था। परोपकारिणी सभा का भी अधिवेशन था। स्वामीजी भी इस अवसरपर प्रयाग पधारे और प्रतिदिन वैदिक धर्मके सन्देशके विस्तारके निमित्त १८,१८ घंटेतक किसी न किसी रूपमें परिश्रम करते रहे। कभी उपदेश देते, कभी जिज्ञासुओंकी शंकाएं निवृत्त करते और कभी आगत प्रतिष्ठित सज्जनोंसे निजू वार्तालाप करके उनको वैदिक धर्मका महत्त्व और वर्तमान आवश्यकताओं की ओर ध्यान दिलाते। स्वामीजीके आतिथ्यका भार राजा पृथ्वीपाल सिंहजीने लियाथा और स्वामीजी इन्हींके कैम्पमें ठहरे थे। इसी अवसरपर एक सार्वजनिक भोज भी किया गया था जिसका प्रबन्ध स्वामीजीकी इच्छानुसार पंडित केशव देवजी शास्त्री M. D. ने किया और यह भोज भी कांग्रेसके कम्पाउन्डमें बड़ी सफलतासे हुआ। प्रयागमें स्वामीजी महाराजा बड़ौदासे भी जो इस अवसरपर यहां पधारे थे मिलते रहे।

१९११ ईस्वी।

प्रयागसे स्वामीजी बम्बई आ गये। इस वर्ष आर्य्यधर्मपरिषद्का अधिवेशन रानोलीमें होना निश्चित हुआ। परिषद्के अधिकारियोंकी इच्छानुसार स्वामीजीने इस परिषद्के सभापतित्वका पद ग्रहण करनेकी महाराजासाहब बड़ौदासे स्वीकृती कराई। और उसकी सफलताके लिये स्वयं भी विशेष उद्योग किया। बम्बईसे स्वामीजीने परिषद्के लिये बड़ौदा, अहमदाबाद, भरूंच आदि प्रान्तोंका दौरा किया। परिषद्का अधिवेशन महाराजासाहबके सभापतित्वमें बड़ी सफलतासे हुआ और हजारों ग्रामनिवासी इस अवसरपर बड़ी दूरदूरसे आये थे। परिषदके अधिवेशनके अनन्तर स्वामीजी अजमेर और भरतपुर आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए सिमला चले गये। और सिमलेसे अनेक समाजोंके उत्सवोंमें सम्मिलित होते हुए बम्बई पहुंचे, जहांके गुरुकुलकी सहायताके लिये उद्योग करते रहे। इस वर्ष भारत साम्राट्‌महाराजापंचम जार्ज भारतमें पधारे थे और

उनके अभिषेकोत्सवसम्बन्धी दर्बार दिल्लीमें था। इस अवसर श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज दिल्ली पधारे थे और बड़े उत्साहसे प्रचार किया। आर्य्यसमाज और भारत-धर्म-महामण्डलकी सम्मिलित मंडली दरबारके धार्मिक जलूसमें निकली थी। इसी वर्ष बड़ौदा राज्यकी ओरसे नवसारीमें प्रदर्शनी हुई थी; और महाराजासाहब गायकवाड़ भी वहां पधारे थे। स्वामीजीने वहां खूब प्रचार किया। इन दिनों महाराजा साहब स्वामीजीसे सत्यार्थप्रकाश और हिन्दी भाषा पढते थे।

१९१२ ई०

इस वर्ष स्वामीजीने गुजरात प्रान्तमें विशेष प्रचार किया और कई आर्य्यसमाज स्थापित किये। सुरत, भरोच, अहमदाबाद और बडौदा प्रान्तमें तो स्वामीजीने वैदिक धर्मप्रचारकी धूम मचा दी। इस वर्ष आर्य्य-धर्मपरिषद्का अधिवेशन अहमदाबादमें था। और सभापतित्व स्वामीजीको चुना गया था। यह अधिवेशनभी पूर्व अधिवेशनकी तरह बडी सफलतासे हुआ। स्वामीजीके सहित, सामवेदभाष्यकार पंडित तुलसीरामजी और पंडित आर्य्य मुनिजी आदि बाहरसे आये हुए सज्जनोंका जलूस स्टेशनसे लेकर नगरमें बडे समारोहसे निकाला गया। और वैदिक धर्मका नाद चारों ओर सुनाई देने लगा। अहमदाबादसे कोशका काम देखनेके लिये स्वामीजी धारवाड गये और फिर सिमला चले गये। सिमलेसे आर्य्य-प्रतिनिधिसभा राजस्थानके अत्यन्त आग्रहसे देवास समाजके उत्सवमें गये। स्वामीजीके पधारनेसे देवासकी दोनों पाँतीके महाराजाओंने स्वामीजीके उपदेश अपने राजमहलोंमें कराये और समाजके उत्सवमें भी स्वयं पधारकर अपनी प्रजाको उत्साहपूर्वक आनेका सुयोग उपस्थित किया। देवास आते हुए स्वामीजी अजमेरमे ठहरे थे और श्रीमान् दामोदरदासजी राठीके प्रधानत्वमें एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया था। देवाससे स्वामीजी इन्दोर गये और आर्य्यसमाजमें कई व्याख्यान दिये। वर्तमान महाराजासाहबसे मिलनेका प्रबन्ध किया, परन्तु महाराजासाहब पूर्व निश्चयानुसार दौरेमें चले गये; अतः इस बार भेट न हो सकी श्रीयुत डाक्टर गोविन्दराव भास्करजी स्वामीजीके बडे प्रेमी थे और आप स्वामीजीकी सहायता और सेवाके लिये सदा तत्पर रहते थे। इन्दोरसे स्वामीजी बम्बई होकर बडौदा गये।

१९१३ ईस्वी।

यहां आपको महाराजा इन्दोरका तार मिला कि आप इन्दोर चले आयें.। इसपर स्वामीजी इन्दोर, आए और एक भव्य लालकोठीनामक राजमहलमें ठहराया और कुछ दिनके बाद लालबाग नामक राजभवनमें स्वामीजीने महाराजासाहबसे भेट की व महाराजा स्वामीजीसे मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। ओर स्वामीजीके कई व्याख्यान इन्दोरके टाउनहालमें अपनी उपस्थितीमें करवाये। और वैदिक कोशके लिये अच्छी सहायता देनेकी प्रतिज्ञा की। इन्दोरमें स्वामाजी जनवरीसे लेकर मई १३ तक ठहरे और

इस बीचमें बम्बई और बडौदा होकर अहमदाबादमें आप धर्म परिषद्के कार्य पुरा करके अजमेर समाजके उत्सवमें पधारे । परन्तु यहां आकर रुग्ण होने कारण उत्सवमें उपदेश आदि न कर सके । यहां पर महाराजा इन्दोरका कोशसम्ब सहायताका पत्र पहुंचा, जिसमें उन्होंने कोशके लिये पांच वर्ष तक ४००) रु प्रतिमास सहायता इन्दोर राज्यकी ओर मिलनेकी आज्ञा दी थी । और यदि को इस अवसरमें समाप्त न हो तो यह सहायता अधिकसे अधिक ८ वर्षतक मिलेगी ऐ विधान किया था । महाराजा यह आज्ञा देकर विलायत चले गये । पीछेसे नायव दीव मिस्टर भागवत और जस्टिस चन्दावरकर आदिने इस आज्ञाके पालनेमें ढिलाई दिखा और दो वर्ष योंही बिता दिये । अब स्वामी विश्वेरानन्दजी महाराज इस सहायत लिये उद्योग कर रहे हैं । स्वामीजी बम्बई गये और धारवाडमें कोशके कार्य्यका निरी करके फिर मुम्बई आ गये । और यहांसे प्रेम महाविद्यालय वृन्दावनके उत्सवमें गये देहली होते हुए सिमला पहुँच गये । सिमलासे स्वामीजी अलवर समाजके उत्सवमें आये, यहांसे भरतपुर, आगरा, ग्वालियर, कानपुर, लखनऊ, बहराईच, फिर मित्रसभाके उ वमें आगरा, प्रयाग, काशी आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए २८नवम्बर १३ को लख पहुंचे । लखनऊसे आगरा कानपुर होते हुए भरतपुर आये और कोशकी सहायताके लि उद्योग करते रहे । भरतपुरसे स्वामीजी बांदीकुई और जैपुर होते हुए अजमेर आये चमत्कारचिन्तामणि इस विषयपर व्याख्यान दिया । अजमेर से स्वामीजी अहमदा आये और २. ३, व्याख्यान दिये । दिसम्बरके अन्तमें बड़े दिनोंकी छुट्टियोंमें आ धर्मपरिषद्का अधिवेशन इस वर्ष भरोंचमें था । स्वामीजी इस परिषद्में सम्मिलित हु और जीव और ब्रह्मके स्वरूपके वर्णन करनेवाले गम्भीर व्याख्यान दिये । य स्वामीजीका स्वास्थ्य जुलाई माससेही बिगड़ रहा था, परन्तु आपने उसकी कुछ चि न करके निरन्तर परिश्रम जारीही रक्खा । इसलिये अब स्वामीजीका विचार था बम्बईमें ठहरकर कुछ दिन विश्राम करेंगे । आगरेसे स्वामी परमानन्दजी आपके सा ही थे । परिषद्के अधिवेशनोंमें ही आपकी प्रकृति ऋतुकोपसे बिगड गई; अतः बम्बई आनेवाले थे, पर इतनेही में गुजरातके आनन्द नामक स्थानसे आपको नि त्रण मिला । इस स्थानमें ईसाई पादरियोंकी बड़ी प्रबलता थी । इनकी ओ वैदिक धर्मपर आघात हो रहे थे । इसलिये वहांके सज्जनोंने स्वामीजीको प्रचा लिये बुलाया था । धर्मप्रचारके काममें स्वामीजी अपने शरीरकी परवा न करते अत एव आप तुरन्त वहां पहुंचे और नवीन आर्यसमाज स्थापित किया । दमेका रो उन्हें तंग कर रहा था परन्तु धर्मसेवाके कारण उन्हें विश्राम नहीं मिला । अत आप बम्बई चले आये और विलापारले नामक स्थानकी अपनी कुटीमें विश्रा न्तिके लिये चले आये । रोग बढताही गया । डॉक्टरोंने बहुत प्रयत्न किये, लाभ न हुआ । ता. ६ जनवरीको बम्बईके प्रसिद्ध डॉक्टर रावभी आये स्वामी परमानन्दजी और अनुभवानन्दजी मनोयोगसे सेवा करते थे । ठा

देवीसिंहजी डॉक्टर कल्याणदासजी देसाई, पं. वालकृष्णजी, गिरजाशंकरजी आदि सज्जन सदा रातदिन स्वामीजीकी सेवाको उपस्थित रहते थे। परन्तु कुटिल कालके आगे किसीका वश न चला और शुक्ला ११ सं० १९७० तदनुसार ८ जनवरी १९१४ की रात्रिको १–२ बजे स्वामीजी महाराजने इस नश्वर संसारको छोड़ दिया। सारे भारतवर्षभरमें शोकसमाचार तारद्वारा पहुंचा दिये गये। अपने गुरु और मित्र श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीसे स्वामीजी २२ अक्टूबरको सिमलासे पृथक् हुए थे, उनसे दुबारा न मिल सके। आर्य्यसमाजोंने अपना मुकुट खो दिया। स्थानस्थानपर शोक और सहानुभूतिसूचक सभाएँ होने लगीं यह सब कुछ हूआ। परन्तु श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजके हृदयपर एक बार तो ऐसा आघात हुआ कि वे अपने आपको न संभाल सके! यद्यपि आप स्वामीजीके वियोगमें अब उस उद्योगसे कार्य्य नहीं कर सक्ते, तथापि आप उनके छोडे हुए वैदिक कोश की पूर्तिके लिये अपनी शक्तिसे अधिक कार्य कर रहे हैं। और उनकी एक मात्र इच्छा यही है कि यह कोश शीघ्र पूर्ण होजाय। पाठक श्रीमान् डाक्टर गोविन्दराव वास्करजीका नाम नहीं भूले होंगे आप स्वामीजीके अनन्य भक्त थे। इन्दोरमें स्वामीजीको आपही की सहायतासे विशेष सफलता हुई थी। जब आपको स्वामीजीकी मृत्युके समाचार मालुम हुए, उसी क्षण आपने अन्नपान छोड दिया-और बिलकुल बेसुध हो गये! अन्तमें तीसरे दिन आप भी इस अनित्य संसारको छोडकर चल दिये! मानों जापानके परलोकगत सम्राट् मुत्सुहितेके अभावमें जनरल नोगीने भी इस संसारमें रहनेकी आवश्यक्ता न समझी।

श्रीस्वामी नित्यानंद विश्वेश्वरानंदकृत

पुस्तकोंका विज्ञापन ।
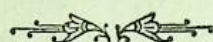
विदित हो की, निम्नलिखित पुस्तकें निचे लिखे पतेपर मिलती हैं ।

१	पुरुषार्थप्रकाश	मू.	रु.	१॥
२	चारों वेदोंके शब्दोंकी अकारादि क्रमसे सूची	,,	रु.	१०
३	सनातनधर्मप्रकाश	,,	आ.	४
४	बूंदीशास्त्रार्थ	,,	आ.	४
५	तथा स्वामी श्रीनित्यानंदजीका जीवनचरित्र सहित व्याख्यान व पत्रव्यवहारोंके	,,	रु.	२॥

पुस्तक मिलनेके पते—

१ **आर्यसमाज,** बुक डिपार्टमेंट गिरगांव—बम्बई ।

२ **पं. रामचन्द्र शर्मा,** हमीरलॉज, अजमेर.

३ **विश्वेश्वरानंद,** शांतकुटी, सिमला W.

४ **दि. नित्यानंद लायब्ररी,** सँढर्स्ट रोड, गिरगाव—बम्बई.

तथा ये पुस्तकें आर्यबुकसेलरोंसे भी मिलेंगी.

पूज्यवर स्वामी श्रीनित्यानंदजी महाराजके स्वर्ग-वासपर जो लेख आर्य प्रकाशमें प्रकाशित हुए हैं उनका सारांश.

स्वामीश्री नित्यानंदजी महाराजनो स्वर्गवास शोकनिमग्न थएली आर्यसमाज.
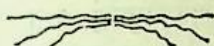
आर्यप्रकाश ता ११-१-१४.

हाय! भारतवर्षना सुप्रसिद्ध विद्वानोमां प्रथम पंक्तिमां मूकाता, अने आर्य-समाजना स्तंभ रूप गणाता भारतभूषण स्वामी श्री नित्यानंदजी महाराज, आ दुनियाने छोडीने चाल्या गया छे. गइ ता. ३० मी डीसेम्बरथी दमनी गंभीर मांदगीनी शरुआत भरूच आर्यधर्म परिषद्मां, सुख रुप हाजरी आप्या पछी, अने शास्त्रीय प्रमाणो तथा प्रभावशाळी दलीलो आपी, पोतानां व्याख्यानोथी श्रोताओने मोहित करीने, तेओ आणंदना आर्यबंधुओना अत्याग्रहथी त्यां पधार्या, अने त्यां पण समाजनी स्थापना करी त्यारथी तेमनी प्रकृतिमां विकार दाखल थयो. भरुचमां पडेला श्रम, तथा आणंदमां करवी पडेली गाडानी मुसाफरी अने थंडीथी, तेमने शरदी लागु पडी दमनो उपद्रव उपडी आव्यो. स्वामीजीने दमनी कंइक असर अगाउथीज हती, परन्तु आ वखते तेणे गंभीर रुप पकडी गया गुरुवार मध्य रात्रीना शुमारमां स्नेही सन्मित्रोने तेमज आखी आर्यसमाजने रडती ककळती छोडी नश्वर देह त्यजी स्वर्गवासी थया ए जणीने अमने अत्यंत खेद थाय छे. गया बुधवार ता. ७ मी जेनेवारीए वीलेपारले अमे जोवा गया हता त्यारे तेमनी तबीयत छेक बगडी गयेली मालम पडी हती. दमनी निरंतर हाफणथी आठआठ दिवस थयां तेओ निद्रा पण लइ शकता नहोता छता के पडखे कोई रीते सुवातुं नहीं एक सरखा बेसातुं पण नहीं शरीरनां दरेक दरेक अवयवो दुःखता तेम अनाज पण लेवातुं नहीं आवी गंभीर दशामां स्वामीजी आवी पड्या हता. श्रीमान डो. कल्याणदासजी स्वामीजी माटे असाधारण परिश्रम करता हता. डोक्टर राव पण गये मंगळवारे आवी गया

हता, श्रीमान पं. बाळकृष्णजी म. देवीदासजी, म. गिरिजाशंकरजी आदि स्वामी-जीनी आ स्थिति जोइने चिंतामां पडी गया स्वामीश्री अनुभवानंदजी, म. देवीसिंहजी श्रीमान डोक्टर साहेब आदि स्वामीजीनी समीपज रहेता घणा खरा आर्य बंधुओने बुधवारे आ वातनी खबर आपवामां आवी हती, अने जेने तेने खबर मळी तेओ सर्वे स्वामीजीने मळवा जवा तत्पर थया हता स्वामीजी दमनी व्याधी थी घणा तकलीफ भोगववी पडती एथी जोनारने पण बहु दुःख उत्पन्न थतुं.

सद्गत स्वामीजीए उत्तम विद्वत्ता प्राप्त करीने आर्यसमाजनी जे सेवा बजावी छे आर्यसमाजना इतिहासमां चिरस्मरणीय रह्या वगर रहे तेम नथी. वक्तृत्व कळामां स्वामीजी एटला बधा निपुण हत के आखा भारतवर्षमां प्रेमपूर्वक लोको तेमनां भाषण सांभाळता अने तेमनां मुखथी उपदेशामृततुं पान करवा माटे अति आतुर रहेता. वेदनो कोष करवानुं महाभारत काम स्वामीजीना आम अणचिंतव्या अचानक स्वर्गवासथी अधुरूं रही गयुं छे. एटलुंज नहि पण तेमनां मृत्युथी आर्यसमाजने भारे खोट गइ छे, जे नजदीकना भविष्यमां पुरावी अशक्य छे. स्वामीजीना जीवन विषे अत्यारे वधु लखवानुं बनी शके तेम न होवाथी, तेमना पवित्र आत्माने दयाळु परमात्मा परमशान्ति आपे एवी आर्यसमाजनी साथे अमे पण अंतःकरणपूर्वक प्रार्थना करीए छीए, इत्योम.

Swami Shri Nityanandji
In Memoriam.
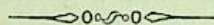
Who will believe that His Holiness Shri Swami Nityanandji is no more in the land of the living! The sad news of the passing away of the great soul has come like a great shock to the arya world and general public. Only a fortnight ago, the Renowned Orator, the Great Sanyasi, unequalled in Vedic and Sanskrit lore was in our midst at the Broach Religious Festival. He appeared in the best of health, not a shadow of ill health could be noticed on his genial majestic inspiring countenance. Full of health and vigour, after an arduous lecturing campaign in the U. P. and the Punjab, the noble worker came among us after a year. Oh! what a joy his presence inspired at Broach! Not a ruffle, not the slightest twitch of the brow ever passed his happy countenance during the three days

of his company at Broach. During the proceedings which lasted often for ten hours at a stretch everyday, he was always present before us. His was the most practical head, his advice was always sought by the Secretary, and the President, and was most easily given. No duty was asked of him which was not accepted. Such a magnetism his presence had, that all acquired zeal for work and worked with a merry heart. A soft word here or a bght joke there always passed his lips, and inspired joy in the heart of the person coming under his influence. Possessing a mind which could recognise its surroundings, he was a philosopher to some, a great vedic scholar to others, a scientist to some, a loving father to children, and a Guru to desciples. While easily accessible to children and while his mind could bend itself to suit the company of babies, it could rise majestic before rajahs, maharajahs who bowed to him prostrate and recognised his unequalled powers. Raj-guru as he was, he could have dispensed with the mass, but his heart was full of love for humanity and always sought the most depressed, and the weakest to raise them. Such was the noble Swami whom we saw at Broach. The speech, alas, the last speech at Broach, the lecture on *Vedant Philosophy*, which we had the great fortune to hear will ever ring in our ears as a master-piece of learning and oratory before a large and choice audiencer. We wondered why we felt it *the best* we heard from his lips. We had the opportunity of hearing his numberless speeches but found this the best. Alas! His death only revealed to us that as it was to be his last speech it was the best. His sweet, silvery, melodious, loud and clear voice is still in our ears. Not a sentence—not a word, aye, not a syllable of the speech was unheard even from the most distant corner. Such was the clear accent of his voice. We have heard the roaring voice of Sir Phirojshah; we are quite familiar with the oratory of Babu Surendra, but to us, all merged into insignificance before the sweet music of Nityanand's speech.

Extracting promise from the revered Swamiji to grace the Bombay anniversary which was to follow four days hereafter, we came back to make preparation for the Bombay Utsav.

In the meanwhile as if His Holiness had not overdone his part at Broach instead of enjoying his well earned rest of three days at Bombay he accepted a call from our brethren at Anand without our knowledge, went there and after delivering two lectures established a fresh

branch of the Arya Samaj there also; our brethren at Anand hardly knew that this visit of Shree Swamiji to Anand in the rigors of a cold winter and the uncomfortable cart journey which tumbled about his delicate frame would bring on a relapse of *asthma* and would insidiously leadon to a terrible enemy *pneumonia* which both relentlessly crushed his majestic physical frame and brought on the tragic end. In a letter from Broach Shree Swamiji informed us that duty had removed him to Anand and he might not get free to come to Bombay. If he did he would go direct to Villa Parla his Country seat and would see us in the lecture-hall the same evening. We wired him to join us directly in the Nagar Kirtan and not go to Villa Parla. Unfortunately the wire did not reach him; he had started in time to join the anniversary at Bombay. True to his word he came but in the grip of this fell disease. He was soon put under proper treatment but as the illness did not seem to yield, Dr. Row's services were requisitioned—His opinion concurred with that of Dr. Kalyandass. We began to realize that we were getting helpless in spite of all that human ingenuity could invent to counteract the course of the disease. Day and night nurses were always in attendence, Dr. Kalyandass saw Swamiji several times in the day and was there for several nights. As Swamiji's heart grew weaker and dyspnœa increased, hypo-dermic injections were given to tone up the heart and oxygen inhalations were regularly given for the last three or four days to relieve the distress; a faint glimmer of hope arose. Swamiji's pulse seemed to improve, he was able to take some nourishment and he could take some real rest, but it was a deception because the same evening there was a sudden undue fall of temperature, cold sweats and failure of circulation and excess of breathing. It was realized that all hopes had vanished and the persons present on the spot realized rather too suddenly that they must face the worst which finally came. An account of this illness will be quite imperfect without reference to Swamiji's own frame of mind during it. It seemed Swamiji Maharaj had realized long ago that his end was near. Since he caught asthma five years ago he had predicted his end. During the last year he had often repeated to Swami Vishweshwaranand that he saw his death looming in the horizon. During the Parishad at Broach he repeated that it was the last Parishad he would see. and soon as he got this attack he repeated before us that he was prepared for the end of his earthly career. The attack of asthma is sufficiently terrible and when accompanied with pneumonia its rigour is unlimi-

ted. From the day of his illness till his death, for eight long days he kept sitting, panting breathless with fever. With tongue almost parched, with pain first in the sides and then in the whole body brought on by ceaseless dyspnœa and continuous sitting; with no rest or a wink of sleep for eight days and nights, and of course without food, his condition could be better imagined than described. An ordinary person would have wept and shrieked and howled with pain and agony and would have been not only himself miserable but would have made those attending on him also miserable. But the state of things here was different. In the midst of this physical storm the soul of Nityanand was quiet and calm. The same serenity, the same spirit of hope still were on his face. His face betrayed no sign of misery, his voice never disclosed a sigh, his eyes never wept. He was as placid as ever. He allowed his medical attendants to do all they wanted, dozens of pinpricks of hypo-dermic needle were lightly borne without murmur. He was prepared to do his duty whether living or dead. This was the courage of the noble Sanyasi during his last illness. Although breathless he conversed with all, his vein of humour was not lost even in this state. On the day before his death when Pandit Balkrishna one evening bade him adieu saying he would return the next morning, he replied "Yes Panditji, do come to-morrow and perform my Antyaesti Sanscar (cremation,) as you can do it well." He was conscious to the last. We had the rare previlege of being at his death-bed. With a heavy and sobbing heart we saw him leave his splendid physical frame as if one were vacating an old house for a new one. He spoke with us even two mantras before his death. At intervals we used to ask him "Swamiji ! how it fares with you." The one unchanging reply to each question was "शान्ति है. ॥ tranquility reigns" aye, two minutes before his death this very same reply "There is shanti !" was given-then the voice grew a bit hoarse and the bird had flown from its mortal cage. The death was quiet in the true sense. It was half past one. In the early hours of the morning of 9th January silence reigned in external nature and silence regned within the physical frame of the worthy soul. The soul quitted the mortal coil speaking the word Shanti. But Oh ! there was a storm in our hearts ! Patience could be kept till there was service to be done to make the journey of the passing soul as comfortable as possible, but after the inevitable had happened, we began to weep over our loss ! The more the mind is set thinking over

the loss, the more the weak emotion of grief conquers us After Dayanand, if India produced any sanyasi who could continue his mission with similar effect, it was Swami Nityanandji. The loss to the Arya Samaj is irreparable. We knew it would shock the world to know that the soul of Nityanand was no more among us and that painful duty of informing the world fell on us. Bombay, the birth place of Arya Samaj, had the sad previlege of seeing the tragic end of one of tis strongest followers-Maharshi Davanand laid the foundation stone of this samaj, his ablest desciple Swami Nityanandji had his rest here. This Samaj had the rare previlege of having the Founder and his shisya shri Swami Nityanandji as its most honoured members. As if seeking his home, Shri Swamiji, cancelling important invitations from the Punjab & U. P. honoured us with his presence; but alas, to this unexpected end. In our wildest dreams we could not conceive of such an end! Oh Brethren of the north! Don't blame us for depriving the Arya Samaj and Arya Varta of Shri Swamiji. We loved him none the less. Our only consolation is that we did our best, we served him but when it is intended otherwise, we submit to the Divine Will.

K. J. Desai.

हा शोक ! हा शोक !! हा शोक !!!

श्रीमान स्वामी नित्यानन्दजी महाराजका परलोकगमन !

ता. २४-२५-२६ दिसंबर १९१३ की बंबई प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभाकी आर्यधर्मपरिषद्-भडोंच के विशाल मण्डपमें, जिस समय कि, श्री. स्वा. नित्यानन्दजी महाराज दो दो तीन तीन हजार मनुष्यों के कानों में मेवगर्जना के समान अपनी वैदिक ध्वनि को पहुंचा रहे थे, उस समय कौन कह सकता था कि, इस बृहस्पति की वाग्देवी हमारे कर्णों को अतृप्त रखती हुई थोडे ही समय में शान्त हो-जायगी ? परिषद् के दूसरे दिन अर्थात् ता. २५ दिसेंबर को उक्त नामशेष परलोकवासी श्रीमानों का 'वेदान्त फिलॉसफी' इस विषयपर व्याख्यान था, उस समय संपूर्ण पंडॉल श्रोताओं से भरा हुवा था सब श्रोता अपना आन्तरिक अद्वैत,

विशुद्धाद्वैत का अज्ञानान्धकार आश्चर्य चकित होकर दूर कर रहेथे, उस समय कौन कह सकताथा कि, यह आर्य दिवाकर शीघ्रही अस्त होनेवाला है? बडी बडी सभाओंमे सहस्रों मनुष्य जिसके मुखारविन्दकी ओर टकटकी लगाये हुये जिसका व्याख्यानामृत चातक पक्षी के समान पान करते थे और जिसके व्याख्यानके आदि, मध्य तथा अन्त में श्रोताओं की करतल ध्वनिसे सभा गूंज उठती थी, उसके विषयमें कौन कह सकता था कि, वह महात्मा हम अभागियों से हमेशा के लिये अकस्मात् अन्तर्धान हो जायगा? परमपदारूढ श्री. १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी के वियोगजन्य दुःखका जिसके अलौकिक वक्तृत्वादि गुणोंसे आर्यपब्लिक अपने आत्मा में समाधान किया करती थी, उस महात्माकोभी विकराल काल बिजली की चमक के समान आर्योंकी दृष्टिको चकाचौंध करता हुवा उठा ले गया! बडे बडे विद्वानोंने भी अन्त में हारकर यही कहा है कि, 'कालाय तस्मै नमः' सब को अपने पंजेमें दबा लेने वाले कालको हमारा नमस्कार है।

ता. २२ अक्टोबर १९१३ को श्री. स्वा. नित्यानन्दजी महाराजने इस लोककी यात्रा समाप्त करने के लिये शिमलेकी अपनी शान्तिकुटी से प्रस्थान किया था। विद्यमान श्री. स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजीसे इसी तारीखको श्री. स्वा. नित्यानन्दजी महाराज शिमले से पृथक् हुये। उक्त दोनो महात्माओं का परस्पर अन्तिम दर्शन यही था। ता. २३ को राजपूताना प्रतिनिधिकी ओर से महाराज अलवर नेरशको मानपत्र देनेके लिये श्री. स्वा. नित्यानन्दजी महाराज उक्त तारीखको अलवर पहुंचे। अवलरसे भरतपुर, भरतपुरसे ग्वालियर, ग्वालियरसे झांसी, झांसीसे आगरा, आगरासे कानपुर, कानपुरसे लखनौ, लखनौसे बहरायच, बहरायचसे आगरा आकर श्रीमानोंने वहांकी मित्रसभाके उत्सवकी शोभा बढाकर वहांसे इलाहाबाद प्रस्थान किया। वहांसे बनारस, फिर लखनौ, फिर आगरा, फिर भरतपुर, बांदीकुई, जयपुर अजमेर, होते हुये ता. २३ दिसंबर १९१३ को बंबई प्रतिनिधि सभाके भडोंच कॉन्फरन्स में पहुंचे। ता. २४–२५ और २६ तीनों तारीखों मे श्रीमानोंने अपने अन्तिम सुललित तथा गम्भीर व्याख्यानों से सभाकी विलक्षण शोभा बढाई।

बंबई प्र. आर्य प्रतिनिधि सभाके मन्त्री श्री. म. गिरिजाशंकरजीसे भडोंच कान्फरन्समेंही श्री. स्वा. नित्यानन्दजी महाराजने यह कह दिया था कि; यह हमारी अंतिम परिषद है अब हमारा बहुत दिन जीवन नहीं है अतः आपको जितना

कार्य हमसे लेना हो उतना ले लीजिये ! तब श्री. मंत्रीजीने कहा कि, महाराज ! यह आप क्या कहते हैं ? श्रीमानोंने उत्तर दिया कि, यह हम ठीक कहते हैं। पश्चात् भडोंचमें ही बंबई स्थानिक समाजके प्रेसिडेंट श्री. म. डॉ. कल्याणदासजीने महाराज को ता. ३१ दिसेंबर और ता. १ जानुआरी इन दो दिनों बंबई स्थानिक समाजका उत्सव था, उसके लिये आमन्त्रण दिया और श्री स्वामीजी महाराजने स्वीकार किया !

चिखोदरा निवासी म. मोतीलालजी तथा म. मरवाभाईके आग्रह से धर्मप्रचार करनेके लिये बी. बी. सी. आई रेल्वेका आनन्द नामका जंगसन है वहां चले गये वहां ता. २८ तथा २९ डिसेंबर तक प्रचार करके अपना अन्तिम स्मारक आर्यसमाज स्थापन किया । ता. ३० को वही आपको ज्वर और श्वासने कुछ घेर लिया था । तथापि वैसीही दशामें आप ता. ३० की रात्रिको आनन्द स्टेशनसे बंबई प्रस्थान करनेके लिये गुजरात मेलपर सवार होकर बिलापारला जो कि बंबईसे बी. बी. लाइपनर पंद्रह माईल दूरी पर है, वहां ता. ३१ दिसंबरको प्रातःकाल पहुंचे । उक्त बिलापारलामें एक संन्यासाश्रम है । उक्त आश्रममें एक संन्यासाश्रम खोलनेका स्वामीजी महाराजका विचार था इसी विचारसे श्रीमानोंने श्री. स्वा. अनुभवानन्दजीको यहां बुला लिया था।

श्री. स्वामीजी आनन्दमें थे तब एक पत्र बंबई समाजके मन्त्री म. मोतीलालजीके पास भेज चुके थे कि "आपके उत्सव पर आनेके लिये मैंने श्री. स्वा. अनुभवानन्दजी तथा श्री. स्वा. परमानन्दजीसे प्रार्थना की है. तदनुसार वे दोनो महात्मा बंबई आजायंगे, अत; कदाचित् मैं बंबई न आसकूं यह संभव है, इतने परभी बम्बई समाजके उत्सव पर आनेके लिये श्री. स्वामीजीको टेलिग्राम श्री. म. मन्त्री आर्यसमाज बम्बईने भेज दिया ।

इधर बम्बईमें नियमानुसार ता. ३१ दिसंबरसे बम्बई समाजका उत्सव धूमधामसे आरम्भ हुवा ता. ३१ को प्रात:कालही श्री. स्वामीजी बिलापारला पहुंच गये पर यह किसीको ज्ञात न हुवा । उत्सवमें सब महाशय यही अनुमान कर रहेथे कि, श्री. स्वा. नित्यानन्दजी महाराज आनन्दमें ही रुक गये हों । बम्बई आर्य समाजके प्रतिष्ठित आर्य सभासद श्री. महाशय देवीदासजी देसाई जो आजकल बिलापारलामेंही रहते हैं, उन्होंने ता. १ जानुआरी के दिन उत्सवमें सूचित किया कि, श्री. स्वामी नित्यानन्दजी महाराज बिलापारला आगये हैं

परंतु शरीर रुग्ण होनेके कारण उत्सवमें संमिलित नहीं हो सकते । यह सुनकर प्रायः सभी महाशय जो कि, उनके व्याख्यानामृतकी पिपासासे बैठे हुये थे, निराश हुये ।

उत्सव समाप्त होनेके अनन्तर श्री. स्वा. अनुभवानन्दजी तथा श्री. स्वा. परमानन्दजी ता. २ जानुआरीके दिन श्री. स्वा. नित्यानन्दजी के दर्शनके लिये बिलापारला पहुंचे । वहां स्वामीजीकी बिगडी हुई शरीरकी दशा देख कर दोनों महात्माओंको बडा दुःख हुवा । उसी दिनसे उक्त दोनों महोदय अपना विस्तरा आदि लेकर श्री. स्वा. नित्यानन्दजी महाराजके समीप बम्बईसे आकर बिलापारलामें रहने लगे । श्री. डाक्टर कल्याणदासजीकी दवा शुरू थी । तथापि ता. ३ जानुआरीके दिन ज्वर ज्योंका त्यों ही रहा, परंतु श्वास इतने वेगसे बढा कि, उनका किसीके साथ बोलनाभी मुष्किल होगया । इस दशाको देख स्वा. अनुभवानन्दजी तथा स्वा. परमानन्दजी बहुतही घबराये और डा. कल्याणदासजीके समीप बम्बई पहुंचकर श्री. स्वामीजीके शरीरका सब वृत्तांत कह सुनाया । सुनतेही डाक्टर कल्याणदासजी स्वयं बिलापारलामें स्वामीजीके पास पहुंचे और देखते हैं तो. श्री. स्वामीजीका श्वास बडेही वेगसे सनसनाता चल रहा है । एक छोटासा तीन चार शब्दोंका वाक्य बोलनेसे भी श्री. स्वामीजीको इतना परिश्रम होता था कि, जितना पर्वतपर चढने वालेको होता है । बांई पसलीमें असह्य शूल हो रहा है और बायें विभागका फेफडाभी अंदर सूझकर किञ्चित् बिगड चुका है । यह दशा देखकर श्री. डाक्टर कल्याणदासजीका धैर्य छूटने लगा और उन्होंने सोचा कि, यह श्वास क्या है मानो सर्व भक्षक कालका अन्तिम आह्वानही है ! इस ता. ३ जानुआरीसे म. डाक्टर साहेब प्रतिदिन श्री. स्वामीजीके दर्शनको जाते रहे और दवाभी परिवर्तन कर देते रहे । बंबईके सामाजिकोंको यह ज्ञात होतेही क्या साधारण और क्या प्रतिष्ठित सभी महाशय श्री. स्वामीजीके दर्शन करनेके लिये बंबईसे बिलापारला दौडने लगे । रेलवेसे बिलापारला आधे घंटेका रस्ता है ।

ता. ३० दिसंबरसे श्रीस्वामीजीकी निद्रा बिलकुल उड गई थी । रात दिनका समय वे बैठकरही बिताते थे । पैरोंसे लेकर सब शरीरमें असह्य पीडा होतीथी और क्षुधाभी बिलकुल उड गईथी । इस प्रकार ता. ६ जानुआरीतक प्रतिदिन शरीरमें पीडा, निर्बलता और श्वास इतने वेगसे बढते गये कि, उनकी यह दशा देखकर देखने वालेके चित्तमेंभी भय तथा ग्लानि होतीथी । इतने परभी विचित्रता यह थी कि, श्री. स्वामीजीने कभी अपने मुखसे हाय नहीं पुकारा ! बराबर दर्शनके लिये आने

वाले महाशयोंसे यथाशक्ति बोलते रहे । इतने दुःखमेंभी वे अपने स्वभावानुसार व किंचित् हास्यवदनसे बोलते थे । ता. ६ को म. डाक्टर कल्याणदासजी म. डाक्टर रावको जो कि, बंबई निवासी बांबे प्रेसीडेन्सीमें एक प्रसिद्ध एम. डी. डाक्टर हैं उन्हे लेकर मध्यान्हके अनन्तर बिलापारलामें स्वामीजीके पास पहुंचे । श्री. स्वामीजीने अपने शरीरका सब वृत्तांत क्रमसे डाक्टर रावको सुनाया। सुनकर कई प्रकारकी दवाइयां उन्होंने लिखदी । डा. राव और डाक्टर कल्याणदासजी इन दोनोंकीभी सम्मति स्वामीजीके रोगके विषयमें अच्छी नथी । दोनोंने बाहर कहा कि, श्री. स्वामीजीको निमोनिया होगया है वह उनकी अत्यन्त दुर्बलताके कारण किस समय उनको दबा लेगा इसका नियम नहीं । उनकी शुश्रूषाके लिये श्रीमान् ठाकुर देवीसिंहजीभी श्री. स्वामीजीकी आज्ञानुसार अहर्निश उसके पासही रहतेथे । दवा आदि बराबर नियमसे देनेके लिये रात दिन वहांही रहने वाली दस रुपये रोजके हिसाबसे एक नर्स (सेवा करनेवाली बाई) भी रखदी गई थी । डा. रावके कथनानुसार श्री. स्वामीजीका शरीर छूटने वहां तक ऑक्सिजन ग्यास (प्राणरक्षक वायु) भी अनुमान दोसो रुपयोंका उन्हें सुंवाया गया. ता. ७ जानुआरीभी इसी प्रकार बीती । ता. ८ जानुआरीको सायंकाल चार बजे श्री. डा. कल्याणदासजी तथा श्री. डा. अमृतलालजी इन दोनोंने श्री. स्वामीजीके स्वास्थ्यकी परीक्षा करके कहा कि, यद्यपि श्री. स्वामीजीमें दुर्बलता अधिक बढी हुई है, तथापि नाडी देखनेसे कुछ स्वास्थ्य अच्छा प्रतीत होता है ।

श्री. स्वामीजीका आज किञ्चित् स्वास्थ्य अच्छा है, इस प्रकार आर्य प्रकाशके एडीटर म. परधुभाईने अन्य ग्रामोंके समाजिक महाशयोंको ज्ञात होनेके लिये कुछवृत्त छपवाने बडोदा भेज दिया । बंबईके सामाजिक तथा अन्य महाशयोंमेंभी यह बात फैल गई कि अब स्वामीजीका स्वास्थ्य अच्छा है । परन्तु 'भवितव्यता बलीयसी' इस सिद्धान्तानुसार होना कुछ अन्यही था ! इसी ता. ८ गुरुवारके रात्रि में ८ बजेसे श्री. स्वामीजीकी निर्बलता इतनी बढी कि, जिससे उनकी आवाजमें मन्दता आ गई । ता. ६ से श्री. डा. कल्याणदासजी प्रतिदिन रात्रिमें बिलापारलाही सोने जाया करतेथे और रात्रिमें कई वार श्री. स्वामीजीका स्वास्थ्य देखा करते थे ! श्री. स्वा. परमानन्दजी, श्री. स्वा. अनुभवानन्दजी और म. ठाकुर देवीसिंहजी ये तो सब अहर्निश स्वामीजीकी सेवामें वहांही रहते थे । रात्रिके बारा बजे डा. कल्याणदासजी श्री. स्वामीजीके समीप पहुंचे । देखते हैं तो स्वामीजीके सब शरीरसे पसीना बह रहा है और हाथ पैर बर्फ के समान ठंडे हो रहे हैं ! शरीरमें गरमी पहुंचाने के

लिये तथा हृदय (हार्ट) को बल पहुंचाने के लिये दो तीन पिचकारियां भी डालीं परन्तु कुछ परिणाम न हुवा। श्री. डा. कल्याणदासजी इस अन्तिम दशाको देखकर बारबार स्वामीजीसे पूँछा करते थे कि, स्वामीजी !-अब कैसा मालूम होता है ? इस प्रश्नका उत्तर वारंवार स्वामीजीसे यही मिलता रहा कि, अब शान्ति है। इस समय बेहोशी बिलकुल न थी। इस प्रकार दो घंटे दशा रही सब आर्यावर्त-वासियोंको अपने वक्तृत्वादि गुणोंसे नित्य आनन्द पहुंचानेवाले श्री. स्वामी नित्यानन्दजी महाराज गुरुवार रात्रिके दो बजे अकस्मात् नित्यके लिये शान्त हो गये !!!

ता. ९ जानुआरी शुक्रवार प्रातःकाल ही आर्योंका हृदय विदीर्ण करनेवाली इस भयंकर वार्ता को लेकर बिलापारलासे श्री. डा. कल्याणदासजी तथा श्री. म. देवीदासजी सोलिसीटर बंबई पहुंचे। उन्होंने आतेही यह दुःखदायिनी वार्ता प्रतिनिधिके मन्त्री म. गिरिजाशंकरजी तथा पं. बालकृष्णशर्माजी को सुनाई ! इस समय अन्यभी १५।२० आर्य महाशय उपस्थित थे। सुनते ही सबोंके हृदयपर वज्रप्रहार के समान आघात हुआ ! दो घंटेतक इस बातपर विचार होता रहा कि, श्री स्वामीजीके शरीरका अन्त्येष्टि संस्कार बिलापारला में किया जावे अथवा बंबईमें ? अन्तमें उपस्थित महाशयों की संमत्यनुसार यही निश्चय हुवा कि, श्री. स्वामी-जीके पांचभौतिक शरीरका अन्तिम दर्शन उनसे प्रेम रखनेवाले बंबई निवासियों-को हो, अतः उनका शरीर बीलापारलासे मोटरगाडीमें डालकर बंबई समाजमें लाया जावे। बंबई समाजसे श्मशानभूमिमें लेजाया जावे। तदनुसार पं. बालकृष्ण शर्मा, म. देवीसिंहजी वर्मा और म. रामजीभाइ पेंटर एक फर्स्टक्लास मोटरकार्ट लेकर बिलापारला रवाना हुये। इधर बंबईमें जहां तक बनसका प्रायः सब सामाजिक महाशयोंको यह सूचना दी गई कि, अन्त्येष्टि संस्कारके लिये श्री. स्वामीजीका शरीर बंबई समाजमें चार बजे लाया जायगा, अतः कोई महाशय बिलापारले न पधारे। ४॥ बजे शामको श्री स्वामीजीका शरीर लाकर बंबई समाजमें रक्खा गया. उस समय कई महाशयोंकी यह संमति हुई कि, एक दो रोज स्वामीजीका शरीर रक्खा जावे, जिससे बंबईसे बाहरके और बंबईनिवासीभी अन्य महाशय स्वामी-जीके शरीरका अन्तिम दर्शन कर सकें। परन्तु बहुसंमतिसे यही निश्चय हुवा कि आजही अन्त्येष्टि करना अच्छा है !

श्री. स्वामीजीके शरीरका सचैल स्नान कराकर शरीरको बैठनेके लिये एक उच्चा-सन और उसके उपर पर्णकुटिका जैसे भगवे वस्त्रका आच्छादन बनाया गया।

शरीरको सुगंधित करनेके लिये चंदनका लेपन और पुष्पमालाओंसे युक्त किया गया और केवल मुख खुला रखकर संपूर्ण शरीर भगवे रंगके शालसे ढांका गया। यह सब विधि होनेके अनन्तर श्री स्वामीजीका शरीर श्मशानयात्राके लिये आर्यों के कंधोंपर आरूढ होकर समाजमंदिरसे निकला। इस समय सामाजिक और अन्य कई प्रतिष्ठित पुरुष स्वामीजीके शरीरकी श्मशानयात्रामें उपस्थित थे। मार्गमें गंभीर नादसे वेदध्वनि हो रही थी। सात बजे स्वामीजीका शरीर श्मशानमें पहुंचाया गया। वहां एक वेदी खुदवा उसमें चंदनादि काष्ठोंकी आधी चिता रचके तयार होनेपर श्री. स्वामी नित्यानन्दजी महाराजका शरीर रक्खा गया। उस समय स्वामीजीका अन्तिम दर्शन लेनेके लिये वेदीके आसपास दर्शकोंकी इतनी भीड़ हुई कि, पीछे खडे हुये मनुष्योंको अंदर घुसकर स्वामीजीका शरीर देखना मुश्किल हो गया। ६ मन चंदन, चार मन घी, अगर, तगर, केशर, कस्तुरी आदि मिलकर सब पदार्थ स्वामीजीके शरीरसे ड्योढे वा दुगुने थे। संपूर्ण शरीर काष्ठमय चितासे ढांककर अग्नि प्रदीप्त करके घृतादिकी आहुतियोंसे अन्त्येष्टि संस्कारका आरंभ हुआ। घीकी आहुतियां देनेके लिये चार कडछे तयार किये गये थे। इस प्रकार विधिपूर्वक संस्कार होनेके अनन्तर बराबर ११ बजे सब महाशय स्वामीजीके नैत्यिक वियोगसे दुःखित होकर उनके गुणानुवाद करते श्मशानसे पीछे लौटे।

पं. बालकृष्ण शर्मा.

महात्मा स्वामी नित्यानन्दजी सरस्वतीका वियोग.

—:o:—

शोक ! शोक !! महा शोक !!!

सुप्रसिद्ध महात्मा पंडित गुरुदत्तजी और धर्मवीर पंडित श्री लेखरामजी के वियोगसे जो महती क्षति भारतवर्षके आर्य समाजोंकी हुई वह किसीसे अज्ञात नहीं है। महात्मा पण्डित भगवानदीनजीसे दूरदर्शी नेताको कभी भारतवर्षके आर्यसमाज भूल नहीं सकते जिन्होंने विद्या, बुद्धि, तन मन और धनसे वर्षों न केवल आर्यसमाज और युक्तप्रांतके गुरुकुलकी सेवा की परंतु युक्त प्रान्तके समाजोंको दो विरोधी भागोंमें बटनेसे बचाकर ऐक्यका अपूर्व महत्व दर्शा दिया। ज्ञानशूर, विद्यारत्न पण्डित

गणपति शर्माजीके अपूर्व धर्मप्रचारको कौन भूल सकता है जिन्होंने काश्मीर राज्यके अन्दर एक अंगरेज पण्डितके शास्त्रों पर किये आक्षेपोंका यथार्थ उत्तर देकर वैदिक धर्ममें शास्त्रोंका अपूर्व महत्व दर्शा दिया था।

त्यागमूर्ति स्वामी दर्शनानन्द सरस्वतीजीसे जिन्होंने अनेक गुरुकुल खोले, अनेक शास्त्रार्थ किये और उपदेशद्वारा सामाजिक सेवा करते हुवे प्राण त्यागे कौन परिचित नहीं? आर्यसमाजके इन सब रत्नोंके वियोगको अभी हम भूले ही न थे कि ९ जनवरी १९१४ को शुक्रवारके दिन बंबईमें कालकी विकरालगतिसे आर्यसमाजका एक सच्चा भूषण, तथा एक अद्भुत महात्मा स्वामी नित्यानन्द हमसे छिन गया.

भारतवर्षका दुर्भाग्य है कि उसका एक संस्कृतका महा विद्वान् चल बसा। सामाजिक सुधारकों को यह जानकर अत्यंत खेद होगा कि एक अपूर्व सोशियल रिफार्मर (सुधारक) जिसने शास्त्रके प्रमाणों और युक्तियुक्त लेखों से सुभाषित पुरुषार्थप्रकाश रचकर, कन्या तथा स्त्रीशिक्षाके विरोधियों और शूद्र, तथा अंत्यज आदि अस्पृश्य उपजातियोंके दमन करनेवालोंके भ्रममय कोटों को छिन्नभिन्न करके शास्त्रोक्त रीतसे सामाजिक सुधार (सोशियल रिफार्म) के काम को आर्य्य मात्रमें बढाया था, वह अपूर्व वीर आज उनके मंडलको सूना कर गया है। भारतवर्षके आर्य्यसमाजों की नायकमंडली का एक अपूर्व संन्यासी नेता सभासद, वेदवक्ता, धुरन्धर महोपदेशक, लेखक, पण्डित और मनुष्य–हितैषी, आर्य्यसमाजों के शास्त्रार्थ करने, आर्य्यगणों के संशय मिटाने, और जनमंडलमें वेदोक्त उपदेश सुनाने के महान् पवित्र काम को करता हुआ ही अपने प्राणों की आहुति उसमें दे गया है।

गत क्रिसमस की छुट्टियों में भरोच में जो बडोदाके निकट नर्मदा नदीके तटपर एक सुन्दर नगर है बंबई प्रांतके आर्य्यसमाजों की धर्मपरिषद का भारी अधिवेशन था, जिसमें महात्मा पण्डित बालकृष्णसे संस्कृत के अनेक समर्थ विद्वान् और महात्मा लाला हंसराजजीसे अनेक कर्मवीर, डाक्तर कल्याणदास तथा शेठ रणछोडदासजी पधारे थे, उस महान् यज्ञ के अवसर पर श्री स्वामी नित्यानन्दजी के पधारनेसे जो प्रसन्नता आर्य्यगण को हुई थी वह कथनसे बाहिर है, उनका जीव ब्रह्मके स्वरूपको वर्णन करनेवाला अपूर्व व्याख्यान अभी तक श्रोतागणों के कानों में गूंज रहा है। भरोच के उत्सवसे निपट कर उन्होंने आनन्द नामी गाममें जो गुजरातमें पादरियों का एक गढ है और जिसमें आजतक समाज नहीं था, समाज स्थापन

किया। दमेका रोग इन दिनों उन्हें तंग कर रहा था, पर सामाजिक सेवामें लगे होनेके कारण वह विश्राम नहीं कर सके। इसके पीछे वह बंबई के विलेपार्ले स्थानमें विश्राम लेनेके लिये विवश हो गये। दमे का रोग बढता गया, महात्मा स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती उनके पास न थे; पर डाक्टर कल्याणदासजीने जिस प्रेम सच्चे धर्मभाव, तन, मन और धनसे औषध देने तथा उनके रोगी शरीर के कष्टको बन्धुवत् न्यून करनेके लिये जो अपूर्व सेवा की है, उसने आर्य्यसमाज के गौरवको बढा दिया है। बंबई के डाक्टर रावसे प्रसिद्ध डाक्टरोंकी औषध मृत्युका सामना न कर सकी और शोकका विषय है कि आर्य्यसमाजका रत्न शिरोमणि कालका कलेवा होगया। मरते समय जब उनसे पूछा गया कि अपनी इच्छाको प्रकट करें तो स्वामीजी कहने लगे कि वैदिक कोश ग्रन्थ जो रचा जा रहा है, पूर्ण किया जावे और एक साधु आश्रम स्थापित किया जावे। अहो ! उनके यह दोनों विचार कैसे उत्तम हैं ! पहिलेसे संस्कृत विद्याकी वृद्धि होगी और दूसरेसे उनके समान साधु संन्यासी महात्मा सुशिक्षा आदि धर्मप्रचारके साधनोंसे युक्त होकर ईश्वर भक्ति और वैदिक धर्मका प्रचार घर घर कर सकेंगे। जगदीश्वर इस पवित्र आत्मा को शांति प्रदान करें यही हमारी प्रार्थना है !!!

भारतभूषण महात्मा स्वामी नित्यानन्दजीके जीवन पर एक दृष्टि.

जहां तक हमें मालूम है, लगभग २६ वर्ष हुए कि ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीके साथ मिलकर मानो राम लक्ष्मणके समान आर्यसमाजमें धर्मका काम करनेके लिये संयुक्त हुए। राजपूतानेकी एक स्टेटमें एक प्रसिद्ध महानुभावके अनुरोधसे इनका शास्त्रार्थ एक हिंदू पंडितसे हुआ, इस शास्त्रार्थमें इन्होंने अतीव पांडित्य तथा सत्यकी जिज्ञासाका ऐसा परिचय दिया कि आर्यसमाजजगतमें इनकी विद्वत्ताकी धूम मच गई। जब इनके शास्त्रार्थका लेख इटावाके पं. भीमसेनने देखा तो उन्होंने आर्यसमाजके एक नेतासे जो राजस्थानमें थे यह कहा कि स्वामी नित्यानन्दजी साधारण विद्वान् हैं। उस नेताने वह लेख लाहौरमें संस्कृतके

भारी विद्वान् महात्मा पंडित गुरुदत्तजी, एम्. ए. के पास भिजवा दिया। गुरुदत्तजीमें धार्मिक जीवन था, उनको सत्य कहना ही अभीष्ट था, उनको वह ईर्षा नथी जो इसवाके विद्वान् के हृदयमें थी। गुरुदत्तजीने जिस समय इनका लेख पढा इनकी विद्वत्ताकी मुक्त कंठसे स्तुति की और इनका पक्ष ठीक है यहभी अनुभव किया, और ऐसाही लिखकर राजस्थानके आर्यनेताको भेज दिया पंडित गुरुदत्तजीका अभी स्वामीनित्यानन्दसे पत्रव्यवहार हुआ न था, न ही वह इनको जानते थे। जब गुरुदत्तजीकी निष्पक्ष सम्मति राजस्थानमें पहुंची फिर क्या था एकदम राजपूताने के उस आर्यनेताके मनमें यह बात दृढ हो गई कि स्वामी नित्यानन्दजी तथा स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी संस्कृतके बडे भारी पंडित, और सत्यप्रिय महात्मा हैं। कुछ कालके पीछे दोनों महात्मा काश्मीर पहुंचे, जहां ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीने धाराप्रवाह संस्कृतमें भाषण करके आर्यसमाजका प्रभाव उस देशके महा विद्वान् पंडितों तथा बडे २ अमलदारोंमें बिठा दिया। जब कश्मीरमें काम कर चुके तो कुछ दिन पीछे ब्रह्मचारी नित्यानंदजी लाहोर पधारे। उन दिनों मैं लाहोरमेंही था और आद्योपांत मैंने इनका व्याख्यान सुना। जिस समय वेदी पर ब्रह्मचारी नित्यानंदजी खडे हुए तो इनका रूप इतना सुंदर और तेजस्वी था कि लोग कह रहे थे कि ब्रह्मचर्यका ऐसाही तेज होना चाहिये। जीवात्माकी सत्ता पर इनका व्याख्यान था। वह न्यायदर्शनके सूत्रोंकी व्याख्याथी, पर उसके साथ २ युक्तिभी देते जाते थे। कहनेकी शैली पंडित गुरुदत्तजीकी जैसी थी जो विद्वान् सुनता था बस मोहित हो जाता था! बीचमें आपने पूरुषके मायावादियों और नास्तिकोंका ऐसा प्रचंड युक्तियुक्त खंडन किया कि लाहौरके विद्वानोंमें इनकी योग्यताकी धाक बैठ गई! उसके पीछे पंजाबके नाना स्थानोंसे यही मांग आती थी कि ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी पधारें जहां सनातन धर्म सभाका बडाही जोर होता था वहां पर इनका जाना अतीव लाभकारी और आवश्यक हो गया था। जब जालंधरके निकट हुशियारपुरमें सनातन धर्म सभाके लोगोंने बहुतही जोर दिया तो हुशियारपुरके उत्सव पर ब्रह्मचारी नित्यानंदजीको सामाजिक भाइयोंने बडेही आग्रहसे बुलवाया।

हुशियारपुरमें आर्यसमाजके विरुद्ध बहुत भारी कोलाहल मचा हुआथा! इस उत्सवमें मैंभी गया था। जब ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी व्याख्यान देनेको खडे हुए तो नगर के बडे २ वकील, रईस, विद्वान्, सेठ तथा पण्डित उपस्थित थे; आपने जिस समय कोकिलकंठसे श्लोक पढे और फिर उनकी व्याख्या की तो लोग चकित हो गये; फिर जब महाभाष्य, निरुक्त, महाभारत, उपषिद, दर्शन और वेदोंके वचनों-

से आर्य समाज के सिद्धान्तों के दर्शन श्रोतागण को कराए तो सब शिर हिलाते हुये दृष्टि पडे मानो मनसे तथास्तु कह रहे हैं ! समय २ पर आपने नास्तिकोंका खंडन किया और जिस समय "अप भक्ष और वायु भक्ष" ऋषियोंका कथन किया कि वह सत्य ज्ञान कोही एक मात्र धर्म मानने वाले थे और युक्तिसेही काम लेते थे तब सनातन धर्मका किला मानो हिल गया। नगरभरमें इनकी अपूर्व योग्यताकी धूम मच गई। रावलपिंडी, पेशावर, लुधिआना, जालंधर, अमृतसर, मंटगुमरी, मुलतान, गुरदासपुर, गुजराँवाला, स्यालकोट, कराची आदि सभी स्थानोंपर इनके व्याख्यान हुए और लोग आर्यसमाजी बने। अमृतसर पंजाबकी काशी है, वहां नमकमंडीमें जो सनातन धर्मका गढ है कभी किसी आर्य उपदेशक वा आर्य नेताका व्याख्यान नहीं हुआ था जब उक्त स्वामीजी वहां पधारे तो नमकमंडीमें इनका व्याख्यान हुआ और अमृतसरमें बडा भारी प्रभाव पडा। इस व्याख्यान के करनेमें श्री चौधरी जयकृष्णजी तथा श्री पण्डित शिवदत्तरामजीने बडाही उद्योग किया था। जिन दिनों जालंधरमें महात्मा लाला देवराजजी तथा महात्मा लाला मुंशीरामजी आदि अनेक सज्जनोंने कन्यामहाविद्यालयकी नींव डाली तो उस समय स्त्रीशिक्षणके विरोधमें बहुत चर्चा हुआ करती थी पर जिन दिनों महात्मा स्वामी नित्यानंदजी और महात्मा स्वामी विश्वेश्वरानंदजीकी ओरसे पुरुषार्थप्रकाश प्रकाशित हुआ तो उस समय कन्याशिक्षणके विरोधी जहां शान्त हुए वहां कन्या महाविद्यालय जालंधरकीभी भारी उन्नति होने लगी। महात्मा राय ठाकुरदत्तजीने अपने अपूर्व पुस्तक "वैदिकधर्मप्रचार" में जो उन्होंने वेद प्रचारकी आवश्यकता पर अति उत्तमतासे लिखी है यह दर्शाया है कि सत्यार्थप्रकाशसे उतर कर आर्यसमाजमें पुरुषार्थप्रकाश ग्रंथ है। इस ग्रंथने शुद्धि (प्रायश्चित) के कामकोभी भारी साहायतादी क्योंकि जन मंडलको इसके पाठसे यहभी निश्चय हो गयाथा कि शूद्र, अंत्यज आदि मनुष्य मात्र वेदको पढने सुननेके अधिकारी हैं। एक संन्यासीउपदेशक विद्वान् होने पर जनमंडळका कितना परिवर्तन कर सकता है वा यों कहो कि एक उपदेशक महात्माकी शक्ति धर्म प्रचारके लिये कितना काम कर सकती है इसका उत्तर रूप प्रमाण स्वामीजी स्वयं थे यही नहीं कि उन्हीं ने राजस्थान और पंजाबमें अपूर्व धर्म प्रचार किया, किंन्तु युक्त प्रान्त, मुंबई, मध्यप्रान्त तथा बंगाल के अन्दरभी वैदिक धर्मका महत्व अपनी अपूर्व योग्यता, विद्वत्ता तथा रसीली वाणीद्वारा दर्शाया। भारतवर्षमें जितनेभी बडे २ आर्यसमाज हैं, उनमें अवश्य इनका प्रचार होचुका है। इनके जीवनमें दूसरा वह समय आता है जब आर्यसमाजके दूरदर्शी नेता श्रीयुत लाला साईदासजी और विद्यासूर्य, धर्ममूर्ति

श्रीयुत पंडित गुरुदत्तजी इसको सूना छोड परलोक गमन करचुके थे। पंजाब आर्य-समाजके इन दो अपूर्व नेताओं की मृत्युसे पंजाब समाज आज तक भी संभल नहीं सका। आर्यसमाज के सिद्धान्त क्या हैं और वेदोंमें मांसभक्षणका विधान है वा नहीं, इन प्रश्नोंने पंजाब के आर्यसमाजोंके जहां दो भाग कर दिये वहां भारतवर्षके समाजों तथा उनके विद्वान् नेताओं कोभी हिलादिया। इस समय स्वामी नित्यानंदजीने अपनी महती दृढताकाही परिचय नहीं दिया किन्तु आर्यसमाजके अनेक भूषणरूप विद्वानों और श्रीमानोंकोभी दृढ किया। यदि इस समय राजस्थानमें ब्रह्मचारी नित्यानंदजी और स्वामी विश्वेरानन्दजीने काम न किया होता तो राजस्थानके समाजों केभी दो विरोधी भाग हो जाते। यद्यपि श्री पंडित गंगाप्रसादजी एम. ए., पंडित भगवानदीनजी, महात्मा मुंशी नारायणप्रसादजी, श्रीयुत शाहु श्यामसुंदरजी, आदि अनेक रत्न युक्तप्रांतकी समाजोंको विभक्त होनेसे बचानेका पूर्ण यत्न करते रहे. पर उनकी सहायता के लिये स्वामी नित्यानंदजीको युक्त प्रांतमें भारी श्रम करना पडा।

इसके पीछे उनके जीवन में वह समय आता है जब कि आर्य समाज विद्यावृद्धिके काममें लगा और स्कूल तथा गुरुकुल खोलनेमें श्रमी बना। आर्यसमाजके इस श्रममेंभी उक्त स्वामीजीने अपने उत्तम व्याख्यानों द्वारा आर्यसमाजकी बडी सेवा की है। गुरुकुल नासिक तो एक मात्र उनके श्रमकाही फल है।

उनके जीवनमें एक वह घटना आती है जब कि निजाम हैद्राबादमें वैदिक धर्म प्रचार करते हुए उनको रोका गया। इस समय जहां उन्होंने अपूर्व धैर्य्यका परिचय दिया वहां भारतवर्षके समस्त आर्य समाजोंने अपने मानवन्त उपदेशक तथा समाजकी रक्षाके लिये एक स्वरसे दयालु सरकार तक अपना निवेदन पहुंचाया।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी जहां जनमंडलमें धर्मप्रचार करतेथे वहां राजे महाराजाओं तक भी अपनी ध्वनि पहुंचाते थे। उनके पीछे आर्य समाज के अनेक उपदेशकों वा अनेक नेताओंने अपना उपदेश साधारण जनमंडल और रईसों वा श्रीमानों तक पहुंचाया पर राजे महाराजाओं तक वैदिक धर्मकी आवाज पहुंचाने वाले आर्यसमाज में स्वामी नित्यानन्द तथा स्वामी विश्वेश्वरानन्द केवल दोही महात्म गिने जा सकते हैं।

राजालोगों तक उपदेश पहुंचानेके लिये बडी भारी योग्यताकी आवश्यकता है। जो उपदेशक उनके अति सूक्ष्म और विचित्र प्रश्नोंके यथार्थ उत्तर वेद आदि

सर्व शास्त्रों तथा संस्कृत साहित्यद्वारा युक्तिपूर्ण नहीं दे सकते वह उनके पास क्षण भर खडेभी रह नहीं सकते । इस भारी योग्यताको धारण करनेके लिये स्वामी नित्यानन्दजी सचमुच नित्य भागीरथ प्रयत्न किया करते थे । प्रातःकाल ४ वा ५ बजे उठ कर किसी न किसी शास्त्र वा संस्कृतके प्राचीन वा नवीन ग्रन्थके अभ्यास में लग जाते थे और कमसे कम तीन घंटे स्वाध्याय करते थे । इसके पश्चात् स्नान, भोजन आदिसे निपट संस्कृत, अंगरेजी, हिंदी, गुजराती और मराठी के अनेक समाचार पत्रोंको वांचते थे ! फिर अनेक आर्यभाईयों वा राजेमहाराजाओंके प्रश्नोंके उत्तर दिया करते । फिर सांझको थोडासा भ्रमण कर किसी न किसी पुस्तकको पढते थे और भोजनसे निपट सोनेसे पहिले एक, दो या तीन घंटे तक पत्र लिखने आदिका काम करते थे । और कभी स्वाध्यायमें अधिक आवश्यकता होनेपर अधिक समयभी दिया करते थे । जहांतक मैने देखा है वह दिनमें पढने लिखने का काम साधारण तौरपर १२ घंटेसे कम नहीं करते थे । उपदेश आदि सब मिलाकर कभी कभी १४ घंटे तक पहुंचतेथे और कभी इससेभी अधिक । हां यह सच है कि सैर करने वा कसरत करनेके लिये जितना समय देना चाहिये उतना समय वह नियमपूर्वक नहीं दे पातेथे और जहांतक मैं सोचता हूं यही मुख्य कारण हुआ कि वह शीघ्रही मृत्युको प्राप्त हो गये ।

कई वर्षोंसे उन्होंने अपने हाथमें वैदिक कोशका कामभी ले रक्खाथा, इस काममें उनका कितना समय लगा, कितनी चिन्ताका सामना करना पडा यह वही जान सकते हैं जिन्होंने उनको बंबई में देखा हो । वैदिककोशका काम श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी तथा उनके अनेक आर्य भाईयोंकी सहानभूतिसे पूरा होना चाहिये। उनकी अन्तिम इच्छा एक यहथी कि यह काम पूर्णहो दूसरी उनकी अन्तिम इच्छा यह थी कि वैदिकसाधु आश्रम देशमें स्थापित हों । बावन लाख साधु माहात्माओं के सुधार के लिये जहां अनेक उपाय हैं वहां सबसे उत्तम उपाय यह है कि एक वैदिक साधु आश्रम आर्य गण स्थापित करें, जिसमें न केवल आर्यसमाज के संन्यासी महात्माही रहें प्रत्युत अन्य साधु भी उपदेशक बनने, योगाभ्यास तथा विद्याभ्यास करने के लिये उसमें रह सकें ।

भारत भूषण माहात्मा श्री स्वामी नित्यानन्दजी की जन्मभूमि यही भारत है धन्य ! भारतजननि ! जिस तूने ऐसे २ अद्भुत विद्यारत्न कर्मवीरोंको जन्म दिया । शमिति ।

परमपदारूढ महात्मा श्रीस्वामी नित्यानंदजी महाराजना जीवनपरथी लेवो जोइतो बोध.

हा भावि ! ! कोण जाणतुं हतुं के, स्वामीश्री दर्शनानंदजी महाराजना हृदय-भेदक अवसान पछी, थोडाज समयमां ते प्रचंड सौम्य मूर्ति, भारत वर्षना दुर्भाग्ये आम अचिंत उठी जशे ? ए कोने खबर हती के ते अद्वितीय वेदवेत्ता—ते अमृत-मय वाणी वेरतुं निरंतर प्रसन्न मुखारविंद—हवे पछी फरीथी जोइ शकाशे नहि ? ए स्वप्ने पण न्होतुं धार्युं के, स्वामी श्री दर्शनानंदजीना देहान्त वखते लखतां अत्रे आर्यबंधुओने आपेली चेतवणी आटली सत्वर खरी पडशे ! ! ! हा दैव ! जीवित विद्वानो अने संन्यासीओथी जेटलो लाभ उठावी शकाय तेटलो उठावी लेवा, अने तेमनी जेटली सेवा अने सत्कार बनी शके, तेटलो करी लेवानी अमे आर्यबन्धुओने ते वखते विनंति करी हती; ते वात याद आवतां अमारुं हृदय शोकथी उभराय छे ! अमे ते वखते जणाव्युं हतुं के 'नहि तो पाछळथी रोवुं पडशे ! ! ' खरेखर ते रोवानोज प्रसंग प्राप्त थयो ! ! स्वामीजी वेदभाष्य पुरुं करवाना हता ! स्वामीजी नाशिक गुरुकुळ माटे जमीन खोळी काढवाना हता ! स्वामीजी तेनुं मकान बंधा-ववा माटे जाते फरीने एक लाख रुपैया पुरा करी आपनार हता ! स्वामीजी साधु आश्रम स्थापनार हता ! स्वामीजी गुजरातमां आर्यसमाजनो मजबुत खीलो ठोक-वाना हता ! स्वामीजी आर्यविद्वत्सभा स्थापी आर्यसमाजना समस्त विद्वानोने एकत्र करी ए द्वारा वैदिक सिद्धान्तोनो अंतिम निर्णय करवा धरता हता ! हाय ! ए स्वामीजी आजे क्यां छे ? ओ भारतवर्षना आर्यबंधुओ ! आ वखते पण अमे दुःखद उच्चस्वरे एज विनवीए छीए के, आर्यसमाजना समर्थ अने वयोवृद्ध विद्वानो तथा कार्य कर्त्ताओनो जेटलो बने तेटलो **अधिक सत्कार** करी ल्यो अने तेमनी पासेथी तेमने वारंवार प्रार्थीने पण उचित अने जरुरी सामाजिक कार्य सत्वर करावी ल्यो ! आर्यसमाजना नेताओए हवे सत्वर चेतवानी जरुर छे, अने समाजमांथी आवा समर्थ विद्वानो अने संन्यासीओ अणधार्या उठी जाय छे. तेमनी खोट पुरे एवा अनेक सत्पुरुषो तैयार करवानी तेमणे संगीन योजना उभी करवी जोइए जेथी भविष्यमां पाछो प्रस्तावानो वखत न आवे !

स्वामी श्रीनित्यानन्दजी महाराजनुं उपर चोटीउं टुंक जीवन, अमे उतावळे एकत्रित करी गतांकमां जेमतेम प्रकट कर्युं छे; ते पवित्र धर्मात्माना संबंधमां, अ-

मारी शुद्ध पण त्यारेज ठेकाणे आवी छे; अने घणा खरा आर्यबन्धुओनी पण एवीज दशा थई हशे ? परमपदारूढ स्वामीश्रीनी असाधारण विद्वत्ता—तेमनी अनुपम वाक्पटुता तथा मधुरता, तेमनी समयसूचकता, तेमनी गुणग्राहकता, तेमनुं निरभिमानपणुं, तेमनुं मायाळुपणुं, तेमनी मोहकता, तेमनुं निडरपणुं, विगेरे गुणोनो घणा खराने अनुभव हशे परन्तु तेमणे पोताना समस्त जीवनमां वैदिक धर्मना प्रचारार्थे आटलुं बधुं अने आवुं महाभारत कार्य कर्युं हतुं ए बधाने भाग्येज मालुम हशे. मोटा मोटा विद्वानो अने राजा महाराजा तेमना आगळ शिर झुकावता हता ए वातनीं अत्यार अगाउ सर्व साधारणने भाग्येज खबर हशे; ज्यारे खेरखर एवा समर्थ महात्माओनी आपणने खोटज पडे छे त्यारेज आपणी आंखो उघडे छे—त्यारेज आपणने तेमनी खरी किंमत मालुम पडे छे. श्रीमान पं. बाळकृष्ण शर्माना शब्दोमां कहीये तो हजु तो ज्यारे कोइ असाधारण महान शास्त्री हशे के ज्यारे संस्कृतना धुरंधर विद्वानोनी सभा हशे त्यारे आपणने स्वामीजीनी खरेखरी खोट मालुम पडशे, एपरथी ए धडो लेवानी जरुर छे के आप गुण पूजक बनो—गुणीनी बहुज कदर करतां शीखो विद्वानोमां अनन्य भक्ति राखो, जेथी पाछळथी पश्चातापनो समय नहि आवे.

स्वामीजीना अनुपम जिवन परथी बीजो खास बोध ए लेवानो छे के, स्वामीजी स्वाध्याय उपर खास लक्ष आपता, पोते स्वतंत्र अने साधन सम्पन्न संन्यासी होवा छतां दिवसमां दश दश बार बार कलाक काम करता, अने वेदमंत्रोथी मांडीने सामान्य वर्तमानपत्रो सुधीनुं एमनुं वांचन, up to date छेक छेल्ली घडी सुधीनुं रहेतुं, ए केवी विरल वात छे ? आर्य समाजना नेताओ तेमज उपदेशकोए आ जीवन परथी केवो सरस बोध लेवो घटे छे. स्वामीजीने अंग्रेजी संस्कारो नहि लागेला छतां तेओ नवीन जीवन अने नवीन प्रोत्साहननी वातो करे एमज नहि परन्तु तेवी पद्धति त्हेमने प्रिय होय ए ओछुं आश्चर्यजनक नथी. भारतवर्षना अनेक विद्वान संन्यासीओमां पण, जगत्नी वर्तमान समस्त घटनाओथी पण well informed सुपरिचित होय एवा संन्यासीओ हजुए क्यां छे ? आर्यसमाजना अनेक माननीय अने विद्वान् पंडितो, जेमनुं ए हमेशनुं कर्तव्य छे के प्रतिदिन श्रोताओने कंइक नवीन फरजीयात आपवुं, त्हेमांना पण थोडानेज, वर्तमानपत्रो सुधीना वांचन तरफ आवा प्रकारनो अनुराग हशे; स्वामीजीनो जेमने परिचय हशे तेओ बहु सारी रीते जाणे छे के, एक साधारण बाळकथी मांडीने समर्थ विद्वान् के महाराजा सुधी सर्वनी तरफ स्वामीजी एकसरखा प्रेम अने यथास्थित मानथी जोता. "तिरस्कार के अहंता" नो तो लेश पण अंश अमे त्हेमनामां जोयो नथी. खरेखर यदि आर्यसमाजना स-

मस्त अग्रगंताओ अने उपदेशको आवा प्रकारना उत्तम गुणो सर्वांशे धारण करे तो समाज केटलुं बधुं काम करी शके ते कही शंकातुं नथी ! अनेक अप्रतिम सद्गुणो अने असाधारण विद्या छतां जेमने लेश पण मद नहि के अभिमान नहि ए विरलता बीजे क्यांथी मळे ?

स्वामीजीनी प्रचार करवानी पद्धति आर्यसमाजना दरेक महान उपदेशकोए ग्रहण करवा योग्य छे. आजे ए अनुपम शक्ति अने पद्धति क्यां छे ? आजे एवा संन्यासीओ अने उपदेशको, के जेओ पोतानी शक्ति अने सत्ता उपर विश्वास राखीने वगर तेड्ये पण गमे ते गाममां चाल्या जाय ? अने त्यां प्रथम जोइए तो धर्मशाळा के मंदिरमां पडी रही पाछळथी पोताना प्रभावथी ठेठ राजा महाराजाओना अंतःपुर सुधी मान पान साथे पहोंची जाय, अने पथरा मारवा अने गाळो मांडवा आवनारा विरोधिओ पण आखरे त्हेमने पगे पडता आवे ?

वाहरे वाह ! केद करवानी धमकी मळ्या पछी—बरोबर केद करी महा मुश्कलीए छोड्या पछी पण तेज राज्यनी सरहद पर निडरपणे अनेक दिवसो पर्यंत असाधारण व्याख्यानोनो अमृतमय धाराप्रवाह निडरपणे वहेवरावे, अने तेज स्थळोना प्रतिष्ठित पुरुषोने प्रमुख स्थाने बेसाडी त्हेमनीज अतुल प्रीति संपादन करे ए शक्ति महात्माओ विना बीजामां क्यांथी होय ? आर्यसमाजना नेताओ अने उपदेशकोनी एमना जेटली नहि तो थोडी पण समाज भक्ति अने दृढता पोतामां दाखल करे तो समाजनुं क्युं कार्य मुश्केल छे ? खरेखर ए पवित्र जीवनमां केवुं आत्मबळ हतुं ! तेतो वाचकोने हवेज मालुम पड्युं हशे.

कोइनी लेश पण खुशामत न करवी, छतां हरकोइ समाज, हरकोइ संस्था, वा हरकोइ व्यक्तिने निडरपणे सत्य उपदेश आपवो, त्हेनी इच्छा अने उद्देश विरुद्ध कहेवुं छतां त्हेने कहेनार माटे प्रीति उत्पन्न थवी ए शक्ति अने पद्धत केवी ग्रहण करवा योग्य छे ? वाचकोने समजाववुं पडे एम नथी.

स्वामीजी जोइए तेटलुं वधारे काम नथी करता एम केटलाकनी भ्रान्ति हती, ते तेमनुं संपूर्ण जीवन जाण्या पछी क्षणभर पण रही शकशे नहि, खरी वात ए हती के तेमने स्वाध्यायनो घणो शोख हतो अने तेओ घणो वखत मनन करवामां गाळता एथी तेमज शारीरिक स्थूलताना कारणे वांचन लेखनना विशेष व्यवसायथी तेमनी शारीरिक स्थिति एवी हती के तेओ दोडादोड करी शकता नहोता परन्तु खरुं जोतां तेमनी योजनाओ—तेमना विचार तथा सर्वत्र रीते तेमनी काम करवानी शक्ति एवी उत्तम अने प्रबळ हती के तेमनुं काम असाधारण हतुं.

संन्यासी होवा छतां तेओ स्वाश्रयी रहेवुं वधारे पसंद करता एथी तेओने राजा महाराजा पासेथी मळेली भेटोनो पोताना निर्वाह तथा पुस्तकादि अने अन्य परोपकारादि कार्योमां उपयोग करता. आथी तेओ निडरपणे जे कंइ कहेवा धारता ते सर्व कोइने कही शकता हता, अने एथी ए स्वाश्रयवाळुं संन्यासी जीवन कंइ विरल प्रकारनुं हतुं. ते परथी जेटलो बोध लेवाय एटलो ओछो छे. अंतमां अमे एटलुंज कहीने विरमीशुं के तेमनी अंतिम सदिच्छाओने पूर्ण करवा माटे आ प्रदेशनी समाजो तथा तेमना अग्रगंताओ खास करीने स्वामीश्री विश्वेश्वरानंदजीनी साथे मळीने खास परिश्रम करशे अने ते इच्छाओ पार पाडे एवी हरेक कोशिश करशे. सौ कोइ आथी धडो लेशे के पवित्र जीवन गाळवामांज पारलौकिक सुखनी प्राप्ति छे; जीवन अनिश्चित छे, माटे जे थाय ते करी लेवुं. परमात्मा आवा महापुरुषो आर्यप्रजामां अनेक प्रकटावे ! इत्योम्.

२५-१-१५
मुंबाई.

परधुभाई वा. शर्मा तंत्री आर्यप्रकाश.

स्वामी श्रीनित्यानन्दजी महाराजना देहान्त निमित्त मळेला शोक दर्शक तारो, पत्रो, सभाओ विगेरे.

From Jwalapur–To Swami Vishweshwaranandji–Mahavidyalaya Sabha Horribly Shocked to hear Swami Nityanand's Sudden death expresses sympathy in this Sad Bereavement. Bheemsen.

भावार्थः—ज्वालापुरथी पं. भीमसेनजी स्वामी विश्वेश्वरानंदजी प्रति महाविद्यालय सभा, स्वामीजीनुं अचिंत्युं मरण सांभळी दुःखथी चमकी उठी छे. आ दुःखद खोट माटे ते पोतानी हार्दिक सहानुभूति प्रकट करे छे. भीमसेन.

From Ludiana–To Swami Vishweshwranandji Bombay–Teacher Students arya school profundest grief deepest sympathy. Head Master

भावार्थः—लुधीयानाना हेडमास्तर स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी प्रति लखे छे के आर्यस्कूलना शिष्य तथा शिक्षको एकत्र थइने पोतानी अत्यंत दुःखनी लागणी तथा अंतःकरणनी सहानुभूति प्रकट करे छे.

From Naserabad—To Swami Vishweshwaranandji—Arya Samaj Naserabad rajsthan express heart felt grief for Swami Nityanandji untimely death.

भावार्थः—नसीराबादथी स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी प्रति—राजस्थान नसीराबाद आर्यसमाज स्वामीजीना अकाळ मृत्यु माटे पोतानी हार्दिक लागणी प्रकट करे छे.

From Sialkot—To swami Vishweshwaranand-special meeting of arya samaj held Yesterday untimely death swami Nityanand Sunday meeting stopped in his honor sympathy expressed swami Bisheshwaranand. Gangaram.

भावार्थः—सीयालकोट गंगाराम स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्द प्रति स्वामीजी नित्यानन्दना अकाळ देहान्त माटे दिलगीरी बतावबा आर्य समाजनी सभा गइ काले मळी हती. त्हेमना मानमां रविवारनी कार्यवाही बन्द राखवामां आवी हती. स्वामी विश्वेश्वरानन्द प्रति सहानुभूति.

From *Meerut*—To Dr. Desai Bombay—Heartily sorry at sudden death of swami Nityanand pray solvation and patience for you and swami Bishweshwaranand Tulsiram.

भावार्थः—मेरठथी स्वामी तुलसीराम डो. देशाइ प्रति—स्वामी श्रीनित्यानन्द एकाएक देहान्त माटे हार्दिक शोक प्रकट करुं छुं. त्हेमना आत्मानी शान्ति माटे प्रार्थना करुं छुं. आपने तथा स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीने आश्वाशन इच्छुं छुं.

From Patiala—To swami Vishweshwaranand—Great sorrow on death of swami Natyanand. Dewasingh.

भावार्थः—पटियाळाथी देवासिंहजी, स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी प्रति स्वामी नित्यानन्दजीना देहान्तथी अनहद शोक थयो.

From Lahore–To Doctor Kalyandass Bombay–Extremely sorry for swami's death, Joint Mourning Meeting holdining to-morrow Hansraj.

भावार्थः—लाहोरथी महात्मा हंसराज डो. कल्याणदास प्रति स्वामीजीना मृत्यु माटे अत्यंत दिलगीर छुं. आवती काले बन्ने विभागना शोक दर्शावनारी एकत्र सभा मळशे.

From Yeola-To secretary Arya Samaj sorry for death of Nityanand and prayed for his souls happiness secretary.

भावार्थः—येवला सेक्रेटरी, मुंबाई समाजना सेक्रेटरी प्रति–येवला समाज स्वामी श्रीनित्यानन्दजीना देहान्तथी दिलगीर छे, अने तेमना आत्मानी परम शान्ति माटे प्रार्थना करे छे.

मुंबाई आर्य स्त्री समाजनी ता. १० मी ने शनिवारनी बेठकमां स्वामीश्रीना अचिंत्या खेदजनक देहान्त माटे हार्दिक शोक प्रकट करवामां आव्यो हतो. स्वामीश्री भूमानंदजी, श्री. पं. बाळकृष्णजी, श्रीयुत चंद्रशंकर पंड्या, म. परधुभाइ, पं. हरीशंकरजी, सौ. इच्छाब्हेन गिरिजाशंकर, सौ. कमळाब्हेन कल्याणदास डोक्टर, ब्हेन डाहीब्हेन विगेरेए गद्गदकंठे स्वामीजीना जीवन अने गुणो उपर विवेचन कर्यां हतां अने तेमना मानमां ते दिवसनी कार्यवाही बंध राखी हती.

मुंबाई आर्य समाजनी ता. १० मीने साप्ताहिक सभामां स्वामीजीनी विद्वत्ता गुणादिथी डो. कल्याणदासजी स्वामी अनुभवानन्दजी स्यामी भूमानंदजी पं. श्री. बाळकृष्णजी, पं. हरिश्चंद्रजी एक पारसी ग्रहस्थ, श्रीयुत भवानीदास मोतीवाला म. गिरिजाशंकरजी विगेरेए विवेचनो करी हार्दिक दिलगीरीनो ठराव पसार कर्यो हतो सभा स्थान शोकथी संपूर्ण छवाइ रह्यं हतुं. सर्वेए उभा थइने उक्त ठराव पसार कर्यो हतो. बीजे रविवारे श्रीमान् मास्तर आत्मारामजी पधार्या हता.

इन्टोला आर्य समाजमांः—श्रीमान स्वामीश्री नीत्यानंदजी महाराज ता. ८–१–१४ ना रोज मुंबई खाते स्वर्गवास थवाना समाचार मुंबई प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभाना मंत्रीजी तरफथी तारथी मळतां तमाम सद्गृहस्थो अती दीलगीर थया हता अने ते माटे शोक जाहेर करवा माटे रवीवार ता. ११–१–१४ ना रोज एक जाहेर सभा मेळववानो सर्व ठराव कर्यो हतो. ते प्रमाणे रवीवारे सभा मळतां शरुआतमां स्वामीजीनुं टुंक वर्णन अने तेमणे जनसमुदाय पर करेला उपकारनुं वर्णन इन्टोला आर्य समाजना सेक्रेटरी मी. मंगळभाइ एच. वैश्य तरफथी करवामां आव्युं हतुं, जेथी स्वामीजीना नीपजेला अकाळ मरणथी आ सभामां वणीज दीलगीर थइ हती; अने आ सभामां नीचे मुजब ठरावो करवामां आव्या हता.

ठराव–१–पूज्यपाद श्रीमान् स्वामीश्री नित्यानन्दजी महाराजना अचानक अने अकाळ नीपजेलां अवसाननी आ सभा अत्यंत शोक अने दीलगीरीनी साथे नोंध ले छे. अने उक्त–स्वामीश्रीना मृत्युथी आ इलाकानी आर्य समाजोने एक उत्तम विद्वान अद्वितीय वक्ता अने श्रेष्ठ सहायकनी जे खोट गइ छे ते हाल तुरतमां पुरावी तद्दन

अशक्यवत् लागवाथी आ सभा तेने माटे घणीज दीलगीर छे. स्वामीश्री नीत्यानंद-जीनो स्वर्गवास एक एवी आफत छे के जे सहन थवी मुश्केल छे पण परमात्मानी गती अकल होवाथी आवी पडेलुं दुःख सहन करवानी आर्य बंधुओने धीरज आपवानी साथे सद्गत स्वामीजीना पवित्र आत्माने परम शांती आपे एवी आ सभानी प्रार्थना छे.

ठराव–२–पूज्यपादश्री–स्वामी नित्यानंदजी महाराजे आर्य समाजनी तेम मुंबई प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभानी घणी श्रेष्ठ सेवा बजावी उपकार कर्या छे तो आ सभा श्रीमती प्रतिनिधि सभाने जाहेर करे छे के सद्गत स्वामी श्री नित्यानंदजी महाराजनुं स्मारक कायम राखवा माटे एक कमीटी नीमी ते द्वारा योग्य तजवीज करवा आग्रहपूर्वक विनंती करे छे. उपर प्रमाणे ठराव करी सभा विसर्जन थइ हती.

—सुरत आर्य समाजमां गइ ता. ११ मी जानेवारी सने १९१४ ने रोजे समाज मंदिरमां एक जाहेर सभा सांजना साडापांच वागे मली हती तेमां नीचे मुजब ठराव थयो छे.

प्रमुख साहेब तरफथी दरखास्त थइ के स्वामी श्रीनित्यानंदजी महाराजना सद्गत थवाथी सुरत आर्य समाज अत्यंत दीलगीरी जाहेर करे छे अने एमना आत्माने शांती आपो एवी ते परम कृपाळु परमात्मानी प्रार्थना करे छे. दरखास्त सर्वानुमते पसार थइ प्रमुख साहेबे दरखास्त करी के स्वामी श्री नित्यानन्दना स्मरणार्थे आर्य प्रतिनिधि सभा कोइ कार्य आरंभे तो तेमां यथाशक्ती भाग लेवो अने दर वर्षे स्वामीश्रीनी निर्वाण तीथीए एवण महात्मानी जयंती उजववी. दरखास्त सर्वानुमते पसार थइ.

—ता. ११–१–१४ रवीवारे सांजे ६ वागे अमदावाद आर्य समाज मंदिरमां स्वामी श्रीनित्यानन्दजी महाराजना देहान्तनी दीलगीरी बताववा सारु जाहेर सभा बोलाववामां आवी हती जे सभानो उद्देश श्रीमान पंडीत धीरजलाल शर्माए कही बतावी जणाव्युं के बन्धुओ, स्वामीजी एक भारत भूषण महान् नर हता अने तेमणे भारत वर्षमां मुख्यत्वे करी आर्य समाज ऊपर घणो उपकार करी गया छे वीगेरे. बाद समाजनुं प्रमुख स्थान डो. प्राणजीवनदासने आपवामां आव्युं हतुं. तेमणे जणाव्युं हतुं के भारतभूषण श्रीमान स्वामी श्रीनित्यानन्दजीना देहान्तथी घणो खेद थाय छे. आवा महात्मानी आपणने भारे खोट गइ छे. वीगेरे कह्या बाद मंत्रीश्री अने अन्य सभासदोए पण स्वामीजीने पगले चालवानी भलामण करी हती. सभाए एवो ठराव पसार कीधो हतो के:—

स्वामी श्रीनित्यानन्दजी महाराजनो देहांत सांभळी आर्यसमाजना सर्व ग्रहस्थो घणा दीलगीर थया छे. अने एक मते तेओ पोतानी दीलगीरी प्रदर्शित करी ईश्वर स्वामीजी महाराजना आत्माने शांती आपो एम प्रार्थना करे छे.

सीमला आर्य समाजना ठरावो–(१) स्वामी नित्यानन्दजी सरस्वती जेओ एक संन्यासी होवा उपरांत एक विद्वान स्कोलर अने आर्य समाजना युक्त मीशनरी हता तेओना नीपजेला एकाएक अकाळ मरण माटे आ सभा पोतानी अंतःकरणनी दीलगीरी जाहेर करे छे.

(२) आ सभा स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी सरस्वती जेवो मरहुम स्वामी नित्यानन्दजी स.थे उपलां उमदा काममां घणी सारी रीते जोडायला हता तेओ तरफ उन्डी दीलसोजीनी लागणी जाहेर करे छे.

(३) मरहुम स्वामीजीए सामान्य रीते वेदिक धर्मनी अने खास करीने सीमला आर्य समाजनी जे उमदा सेवा ओ बजावी छे तेनी मान पूर्वक नोंध ले छे.

तरणोल आर्यसमाज तरफथी ता. १९–१–१४ वार रवीना रोज एक जाहेर सभा बोलाववामां आवी हती. जे वखते श्रीमान स्वामी श्रीनित्यानन्दजी सरस्वतीना स्वर्गवासनी नोंध लेतां अत्रेनी समाजना सभासदो घणाज दीलगीर थया हता बाद आपणा महान पीता तरीके हता तेवो दरेक समाजोनो महान् हीरो आपणे गुमावी बेठा छीए जेथी दरेक समाजोने एक महान स्वामीनी खोट पुरी पाडवी ए महा कठिन छे. विगेरे

—सारसा आर्यसमाजमां स्वामीजीना मृत्यु निमित्ते शोक दर्शक सभा मळी हती. म. शंकरभाइए स्वामीजीना असाधारण गुणोनुं विवेचन कर्युं हतुं.

—प्रयाग आर्यसमाज तरफथी मंत्री शालिग्रामजीए त्यांनी समाजे करेलो हार्दिक शोक दर्शक ठराव मोकली आप्यो छे.

—कच्छ मांडवी आर्यसमाजे जाहेर सभामां स्वामीजीना देहान्त निमित्ते शोक दर्शक ठराव पास कर्यो हतो.

—अमरेलीथी के. टी. मास्तर भारे शोक प्रकट करी जणावे छे के स्वामीजीनी अंतिम इच्छा पूर्ण करवा मुंबईना समाजिस्टोए साधु आश्रम स्थापवो जोइए. जो स्वामीजीनुं एवुं स्मारक थतुं होय तो हुं ह्मारी एक मासनी कमाणी आपवा तत्पर छुं आशा छे के आवां अनेक आर्यबन्धुओ निकळशे.

—पांचाल उन्नति मंडळ मुंबाईए स्वामीजीना देहान्त निमित्ते घोर शोक प्रकट कर्यो हतो.

—नडीयाद आर्यसमाजे म. फुलचंद बापुजीना घरमां एक सभा बोलावी स्वामीजीना अवसान निमित्ते हार्दिक शोक प्रकट करी तेमनुं स्मारक राखवानी इच्छा जणावी हती.

स्वामी नित्यानंद विरहाष्टक.

—:o:—

कुंडळिया.

स्वामी नित्यानन्दको, सुनी स्वर्गमें वास;
 चित्त हमारा होगया, व्याकुल और उदास;
व्याकुल और उदास, दिशा एक नहीं सूझे;
 शोच इसीका होत, बात दुसरी नहि बूझे;
कथेसु **दुर्लभ** श्याम, थावो परमपथ गामी;
 ऐसे **नित्यानन्द**, गये स्वर्गमें स्वामी. १

जाके मुखके शब्द थे, मधुर, शास्त्र अनुसार;
 जिसपर श्रोतावर्गका, था सर्वोत्तम प्यार;
था सर्वोत्तम प्यार, बडा प्रभाव इसीका;
 सबके थे वो मित्र, शत्रु नहिं किन्तु किसीका;
कथे सु **दुर्लभ श्याम**, ताम सम गुन थे वाके;
 मधुर, शास्त्र अनुसार; शब्द मुखके थे जाके. २

जाते थे वो हर्षसे, जहां जहां आर्य समाज;
 करते थे कर्तव्य वो, केवल जनहितकाज,
केवल जनहितकाज, खडे निश्चल रहते थे;
 अपना सब मन्तव्य, निडर बनके कहते थे;
उन्को **दुर्लभ श्याम** विधर्मीभी चहते थे;
 जहां जहां आर्यसमाज, तहां तहां वो जाते थे. ३

जैसा उन्का पक्ष था, वैसे थे वो दक्ष;
शैली उनकी सरल थी, नहि था दुसरा लक्ष;
नाहिं था दुसरा लक्ष, सुखद परिश्रम करते थे;
सूक्ष्म आर्य सिद्धान्त, वाक्यमें उच्चरते थे;
कथे सु **दुर्लभ श्याम**, सुदृढ नहिं देखा ऐसा;
वैसे थे वो दक्ष, पक्ष था उनका जैसा.

राजा महाराजा बहु, थे उन्हींके मित्र;
क्युं कि उन्की भावना, थी अत्यंत पवित्र.
थी अत्यंत पवित्र, नहीं संदेह इसीमें;
कभी अन्यथा ख्याल, भरते थे न किसीमे;
कथे सु दुर्लभ **दुर्लभ श्याम**, पीडित अब सभी समाज;
थे उन्हीके मित्र, बहु महाराजा राजा.

शोचत नित्य वियोगसे, स्वामी श्री विश्वेश;
कहुं कि जोडी बिछर गइ, तारो शोच विशेष;
तारो शोच विशेष, चित्तमें वो धरते हैं;
इतर आर्य नरनार, नेत्रमें जल भरते हैं;
कथे सु **दुर्लभ श्याम**, कालको कौन पहोंचत ?
स्वामी श्री विश्वेश, नित्य वियोगसे शोचत

तेरी गहन बस है गति, बडा छली तू काल;
बडे बडेके कंठमें, डारत है तूं जाल !
डारत है तूं जाल, दया नहीं तुझको आती;
तेरा जैसा कभी, कोउ देखा नहि घाती !
कथेसु **दुर्लभ श्याम**, बात सुन ले यक मेरी,
आप्तजनोंके मले, जाल डार नहीं तेरी.

ऐसे पुलकित बदन हम, देखेंगे किस स्थान ?
कौनहि हमको देंयगे, धर्म कर्म विज्ञान;
धर्म कर्म बिज्ञान, स्नेहसह सरस वजेसे,
सुनायगें अब कौन ? वैदिके मंत्र मजेसे !
कथेसु **दुर्लभ श्याम**, मिले महाराज न ऐसे;
देखेंगे किस स्थान ? वदन हम पुलकित ऐसे.

वैद्य कवि दुर्लभ श्याम ध्रुव.

स्वामी श्रीनित्यानन्दजीनामृत्युनिमित्ते मळेला शोकदर्शक तारो, पत्रो, सभाओ.

आणंद समाजे स्वामीश्रीना अचिन्त्या मृत्यु माटे, ता. ११-१-१४ ने दिवसे म. परसोत्तमभाई बाबरभाईना प्रमुखपणा नीचे एक खास सभा भरी हती जेमां स्वामीजीना जीवन अने उमदा गणोनुं विवेचन करी शोक दर्शक ठराव पसार कर्यो हतो.

कच्छ मांडवी आर्य समाजनी एक शोक दर्शक सभा कच्छ राज्यना एज्युकेशनल इन्स्पेक्टर साहेबना प्रमुखपणा नीचे मळी हती जेमां स्वामीजीना देहान्त माटे अत्यन्त दिलगीरी प्रकट करवामां आवी हती.

वालोड आर्य समाज तरफथी म. हरगोविंददासे स्वामीजीना अवसान निमित्त जाहेर सभा बोलावी हती जेमां नीचे मुजब ठराव करवामां आव्यो हतो.

भारतवर्षना भूषणरूप, आर्य समाजना अग्रगण्य, अने हिन्दु समाजना साचा हितेच्छु श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराजना ता. ९-१-१४ ने रोज परम पद पाम्याना समाचारनी नोंध वालोड आर्य समाज घणीज दिलगीरी साथे ले छे. स्वामीजीए धर्म अने देश प्रत्ये बजावेली सेवा असाधारण हती अने आ सभा माने छे के एमना अवसान काळथी आर्यावर्तने गयेली खोट हाल तरतनी पुरावी अशक्य छे. परमात्मा एमना पवित्र आत्माने शान्ति आपो.

सुरत आर्यसमाजे पोतानी ता. ११-१-१४ मीए मळेली जाहेर सभामां स्वामीश्रीना मृत्यु निमित्ते एवो ठराव पसार कर्यो के "स्वामीजीना सद्गत थवाथी सुरत आर्यसमाज पोतानी अत्यंत दिलगीरी प्रकट करे छे.

भरूच आर्यसमाजे ता. १० जानेवारीए सर शापुरजी भरूचा इन्स्टीटयूटमां मेळवी जाहेर सभामां ठराव कर्यो के आ सभा परमपदारूढ श्री १०८ पूज्यपाद स्वामी श्री नित्यानंदजी सरस्वती महाराजना स्वर्गवास थयाना हृदयद्रावक समाचार सांभळी अत्यंत शोकनी लागणी प्रदर्शित करे छे, स्वामीश्रीना मरणथी आर्यसमाजिस्टोने एक असाधारण विद्वान् वक्तानी भारे खोट गइ छे. एटलुंज नहिं परन्तु समस्त भारत वर्षना लोकोने तेमना स्वर्गवासथी एक मोटी खोट गयेली गणाइ छे, ने तेवोमां भारे दिलगीरी फेलाइ छे एम आ सभा माने छे. अने परम कृपाळु परमात्मा तेना आत्माने शान्ति प्रदान करे एवी खरा अंतःकरणथी प्रार्थना करे छे." आ सभानुं प्रमुखस्थान शेठ खुशरू एच. फरीदुन कापडीयाने आपवामां आव्युं हतुं.

चीखोद्रा समाजे पब्लीक मीटींगमां स्वामीजीना मृत्यु निमित्ते शोक दर्शक ठराव पसार कर्यो हतो. पं. दामोदरजीए स्वामीजीना जीवन संबंधि विवेचन कर्यु हतुं.

अमदाबाद आर्यसमाजना नागरनी वाडीमां स्वामीश्रीना संबंधमां शोकदर्शक ठराव पसार कर्यो हतो के "स्वामीश्री नित्यानंदजी महाराजनो देहान्त सांभळी अहींनीं समाज तथा सर्व गृहस्थो धणा दिलगीर थाय छे विगेरे.

—माणसाथी म. गीरधरलाल जानी जणावे छे के स्वामीजीना मृत्युथी अत्रेना लोकोमां भारे शोक फेलायो छे.

—अमदावादथी साक्षर श्रीयुत रा. बा. रमणभाइ नीलकंठ अमने लखी जणावे छे के "स्वामी नित्यानन्दजीना स्वर्गवासना दुःखदायक समाचार जाणी म्हने अत्यंत दिलगीरी थइ छे. आर्यसमाजने अने संसार सुधारनी प्रवृत्तिने तेमनी विद्वत्तानी अने तेमना बुद्धि प्रभावनी खोट पडशेज परन्तु इश्वरेच्छा बळवान छे. ईश्वर तेमना आत्माने सनातन शान्ति आपो ए प्रार्थना छे.

—अमलसाड लायब्रेरीमां ता. १३ मीने दिवसे स्वामीजीना मृत्युनिमित्ते शोक दर्शक सभा भरवामां आवी हती- म. वल्लभभाइ आदि गामना प्रतिष्ठित सभ्योए सभामां हाजरी आपी दिलगीरीनो ठराव पास कर्यो हतो.

—भावनगर आर्यसमाजे स्वामीजीना असाधारण गुणोनुं विवेचन करी तेमना अचिन्त्या मृत्यु माटे महाशोक प्रकट कर्यो हतो !

—वलसाड आर्य समाजे जाहेर सभा भरी ठराव कर्यो के स्वामीश्री नित्यानदजी सरस्वती कैवल्य थवाना समाचार मल्या. तेनी गयली खोटनी नोंध लेतां मा. गोपालजी खंडुभाइनी दरखास्त अने मी. गोवनजी नीछाभाइना टेकाथी सर्वानुमते ठराव्युं के श्रोत्रिय अने ब्रह्मनिष्ठमहात्मा स्वामीश्री नित्यानन्दजी सरस्वती ता. ९-१-१४ ने रोज कैवल्य थवाथी भरतखंडनी सामाजिक अने धार्मिक उन्नतिनी प्रवृत्तीमां गयली खोटने लीधे तेमज आर्य समाजने एक खरा सलाहकार अने नेतानी गयली खोटने आ वलसाडनी आर्य समाज घणीज दिलगीरी प्रदर्शित करे छे अने परमकृपालु परमात्मा ए खोट पुरी करवाने उत्तम श्रोत्रीय अने ब्रह्मनिष्ठ महात्मा आर्य समाजना नेता तरीके सत्वर आपे एवी प्रार्थना करे छे.

—नाशिक आर्यसमाजे पण जाहेर सभा भरी स्वामीजीना देहान्त निमित्ते पोतानो शोक प्रकट कर्यो हतो.

—पांचाळ उन्नति मंडळे ठराव कर्योके वेद· धर्मना महान् ज्ञाता अने सुधारक स्वामी श्रीनित्यानन्दजीना स्वर्गवास थवाना समाचार जाणी पांचाळ उन्नति मंडळीनी आजे श्रीयुत वनमालीदास नरसीहदासना प्रमुख पणा हेठळ मळेली सभाए एमने माटे दिलगीरीनो ठराव पसार करवामां आव्यो हतो अने शोक प्रदर्शीत कर्यो हतो. ते पछी श्रीपंडित हरिशंकर शर्मा तथा रा. भगवानदास मोरारजीए स्वासीश्रीना जीवनपर केटलुंक विवेचन कर्युं हतुं स्वामीश्रीना मानमां सभाना नियम प्रमाणे थती कार्यवाही बंध राखवामां आवी हती.

जेमना स्वर्गवासथी समस्त भारत वर्षने मोटी खोट गइ छे अने आ प्रतिनिधि सभा तेमज समाजनो एक स्थंभ भाग्यो छे एम अमो मानीए छीए.

—नार आर्य समाजे स्वामीजीना मृत्युने एक भयंकर खोट जणावी पोतानो अंतःकरणनो शोक प्रकट कर्यो हतो.

—कछोलीथी म. भीमभाइ लखे छे के धमडाच्छा स्कुलमां स्वामीजीना मृत्यु निमिते भारे शोक प्रकट करवा माटे एक सभा बोलावी हती. आ समाचारथी सर्वनां हृदय खिन्न देखातां हतां. कछोलीमां पण एवोज शोक मनायो हतो.

विशेष पत्रो तथा तारो स्थळाभावने लीधे हवे पछी प्रगट करवामां आवसे.

परलोकपथिक स्वामी श्रीनित्यानन्दजीने.

नन्दन वन भारत मनहर मोरला !
ओम, ओम, ए टहुकाना करनार जो !—नं०
तें विज्ञान—कलाप धर्या सोहामणा,
अनेक भाषण—कळा करी रमनार जो !
ज्ञानानन्द बधे त्यां छवराइ जतो,
हसते मुख संशय दिलना हरनार जो !
नित्यानन्द कलापी ! तुं उडी गयो !
छोडी आंसुडा स्रवता आ वृन्दने,
अनेक यत्नो कींधां तोय रह्यो नहि,
थयो नित्य आनन्द काज तैयारजो.

विश्वेश्वर आनन्दनेय तुं ना मळ्यो,
कीधुं पंथे एकाएक प्रयाण जो !
शुं उत्कट इच्छा ब्रह्मानन्दे थइ ?
वैदिक कोष तणा श्रमथी लखनारजो !
तेने पण अधवच मूकी चाल्यो गयो ?
धन्य भूमि तूं भारतीना पूजनारजो ?
तारा सर्व सुवासित अणु प्रसरी रह्या,
लइ उडता अणु ते धरशुं संतोष जो;
परमानन्द विशे निवसेला मोरला !
भरत भूमि ले छेल्लो तुं उपकारजो.

रामजी कुबेरदास गणात्रा, अमदावाद.

स्वामी श्रीनित्यानंदजीना देहान्त निमित्ते मळेला शोकदर्शक तारो, पत्रो अने सभाओ.

कच्छ-मुदडाथी म. हरीलाल छबीलदास बुच लखी जणावे छे के स्वामीजीना आकस्मिक मृत्यु निमित्ते अत्रे एक जाहेर सभा भरववामां आवी हती जेमां स्वामी श्री नित्यानंदजीना परमपदारूढ थवाथी, आर्यसमाज तेमज संसार सुधारकोने भारे खोट जवा संबंधि शोक सहानुभुतिनो ठराव करवामां आव्यो हतो.

पंचमहाल सत्य शोधक समाजना अग्रा सभासदो म. केशवलाल तथा प्रल्हादभाई लखी जणावे छे के स्वामी श्रीनित्यानंदजी महाराजना एकाएक देहान्तनी खबरथी अत्रेना बंधुओमा असाधारण शोक फेलाइ रह्यो छे. आर्यसमाज, हिंदुसमाज तथा संसार सुधारकोने भारे खोट गइ छे. मुंबाई प्रदेशे स्वामीजीना स्मारक तरीके कंइक करी बताववुं जोहिए विगेरे.

अमरेलीथी मास्तर हीराचंद लखी जणावे छे के, स्वामी श्रीनित्यानंदजीना स्मारक तरीके साधु आश्रम उपरांत बीजुं कंई थतुं होय तो तेमां हुं म्हारी एक मासनी कमाई आपवा तैयार छुं, एने बदले प्रकासमां के. टी. मास्तरनुं नाम जणाववामां आव्युं हतुं; परंतु हवे तो श्रीयुत के. टी. मास्तरे पण जणाव्युं छे के मारू नाम भले

तेवी रीते छपाई गयुं हुं खुशीथी म्हारी एक मासनी कमाणी स्वामीजीना स्मारकमां अर्पण करवा तैयार छुं. श्रीमती प्रतिनिधिसभा आर्यविद्यासभा के स्वामी श्री विश्वेश्वरानंदजी आ संबंधमां शुं विचार धरावे छे ए अमने खबर नथी परन्तु मुंबई प्रदेशे आ संबंधमां अवश्य कंईक करवुं जोइए एम अमारुं मानवुं छे.

—अमरेलीथी म. वनमाळी भगवानजी शर्मा लखे छे के अत्रे स्वामीजीना मृत्युथी भारे शोक फेलाई रह्यो छे; समस्त भारतने एक महान् विद्वान् वक्तानी खोट पडी छे विगेरे.

—आर्य समाज करांचीए पोतानी १९ मी जनेवारीनी सभामां स्वामीजीना मृत्यु संबंधे एक असाधारण शोकदर्शक ठराव पसार कर्यो हतो.

—होशंगाबाद गुरुकुलमां स्वामीजीना देहान्तनिमित्ते शोकदर्शक सभा मळी हती जेमां धर्मदिवाकर विद्याधरे परोपकारी स्वामी श्रीना शान्त थवा माटे महान् शोक पाळवामां आव्यो हतो.

—विजलपुर आर्यसमाज स्वामीजीना संबंधमां शोकदर्शक सभा मेळवी दिलगिरी अने सहानुभूतिना ठरावो पास कर्या हता जे प्रतिनिधि सभा स्वामीजीनुं स्मारक उभुं करे तो उक्त समाज पोतानो फाळो आपवा खुशी छे एम ठराव्युं हतुं.

—विरमगाम आर्यसमाजे स्वामीजी निमित्तनी शोकदर्शक सभामां हवन प्रार्थना करी हती.

—स्वामीश्री नित्यानंदजी महाराजना अकाल मृत्यु पर, झरीया, सीपरीबजार, अलीगढ, पानीपत, मैनपुरी, अम्बाला, मुजफरगढ, अने गुरुदासपुर आदि समाजोए पण शोक प्रकट कर्यो छे, एम सहयोगी सद्धर्म प्रचारक परथी प्रतीत थाय छे.

—सहयोगी " आर्यमित्र " ना ता, २४ मी जनेवारीना अंकथी पण जणाय छे के, इटावा, लखनौ, कानपुर, जलालपूर, झांसी, मेरठ, भरतपुर आदि समाजोए स्वामी नित्यानंदजीना मृत्युपर हार्दिक शोक प्रकट कर्यो हतो.

—बीलीमोराथी डो. पी एन. एम लखी जणावे छे के स्वामीजीना देहान्तथी अत्रेना विद्वजनोमां भारे खेद थयो छे अमने घणुं दुःख थयुं छे, विगेरे.

—म. प्रेमजी रामजी कच्छ भींसराथी लखे छे के आर्य प्रकाश खोलीने वांचतां स्वामीजीना मृत्यु समाचार जोई निस्तेज थयो. ए महाशोककारक खबर वाचतां मने अत्यंत खेद थयो विगेरे.

—म. हीराभाई दादाभाई देशाइ व्यवस्थापक “ विवेचक ” लखी जणावे छे के भारत भूषण वेदोद्धारक स्वदेश प्रेमी विद्वान् वक्ता महात्मा श्रीनित्यानंदजी महाराजना देहान्तना दुःखद समाचार सांभळी सर्व शोकसागरमां डुबी गया छे. जे विपत्ति आर्यसमाज पर अने आखा भारतवर्ष पर आवी पडी छे. ते तो हवे धैर्य राखी सहन कर्या शिवाय छुटको नथी विगेरे.

—धोलाजंकशनथी म. धीरुभाई वेराभाई गोहेल लखे छे, स्वामी श्री नित्यानंदजी महाराजना परमपदारूढ थयाना दुःखमय समाचार सांभळी अत्यंत दिलगिरी थाय छे. हा! भारत त्हारामांथी आवां रत्नो एक एक गुम थाय छे विगेरे.

—दिगरा ग. स्कू. ना मास्तर म. भगवानजी गोपालजी स्वामीजीना देहान्त माटे अतिशय खेद प्रकट करे छे. अने जणावे छे के मारी साथे परिषदमां आवेलां तमाम माणसो स्वामीजीनो देहान्त जाणी अत्यंत दुःखी थयां छे. आ. खोट पुरी शकाय एवी नथी विगेरे.

—म. मंगळभाई जयसिंहभाई ववासीथी स्वामीजीना खेद जनक स्वर्गवास निमित्ते शोकोद्गारनुं एक लांबु काव्य लखी मोकले छे. त्यांनी समाजे स्वामीजीना मृत्यु माटे भारे शोक प्रकट कर्यो हतो.

—ठाकर शंभुराम जेठाराम सूरतथी स्वामीजीना मृत्यु निमित्ते एक शोकदर्शक काव्य लखी मोकले छे जेमां तेमना अंतरना दिलगीरीना भाव प्रकट थाय छे.

—अमदावादथी म. जमीयतराम जे. एसी. इन्जीनीयर (जमदग्नि) लखी जणावे छे के, पूज्यपाद गुरुवर्य स्वामीश्रीना परमपद पाम्याना समाचार सांजवर्तमानमां वांची जन्मदाता पिताना अवसान वखते जेटलुं दुःख न्होतुं थयुं तेथी विशेष दिलगीरी थई. स्वामीजीना अंतिम दर्शननो लाभ मने न मळ्यो तेथी दिलगीर छुं तमारां अहो भाग्य के तमे सर्वे पासे रही शक्या विगेरे बंधु जमीयतरामजीने स्वामीजीना अवसानथी महान् दुःख थाय ए स्वाभाविक कारण के एओ केटलाक काळ सुधी स्वामीजीनी सेवामां रह्या हता अने स्वामीजीए तेमनुं संस्कारी नाम जमदग्नि पाडी तेमने समाजना उपयोगी सेवक बनाववानी इच्छा राखी हती.

—वलाण आर्य समाजना मंत्री म. दुर्लभभाई भीखा वैश्य लखी जणावे छे के, स्वामीजीना अवसाम निमित्ते दिलगीरी दर्शाववा अत्रेनी समाज मळी हती. जेमां

स्वामीजीना मृत्यु माटे अत्यंत खेद जहेर कर्यो हतो. स्वामीजीना देहान्तथी समाजनो तो शुं परन्तु आखा भारत वर्षने अत्यंत खोट गइ छे.

—श्रीमान् पं. धिरजलाल शर्मा स्वामीजीना अकाल देहान्त निमित्ते एक लंबाण लेख लखी मोकले छे, जे आ विषय माटे बहु जगा रोकाइ जाय ए भयथी प्रकट करी शकता नथी. पंडितजी पोताना उक्त लेखमां जणावे छे के महात्मा श्री नित्यानंदजीना आगमनथी आपणे स्वामीश्री दयानंदनी खोट कंइक अंशे भुली गया हता, परन्तु कृतान्तकाळने ते पण न गम्युं अने अमने पाछा नित्यानंदथी रहित करी मुक्या विगेरे.

—अजमेरथी म. हमीरमल, रामचंद्र अने त्हेमनी माताजी स्वामीश्री विश्वेश्वरानंदजीने लखे छे के आजे हमारी धीरज पण खुटी गई छे, स्वामीजी पाछा फरती वखते मळशे ए बचन हवे क्यांथी सिद्ध थवानुं? हवे रोवाथी शुं? धैर्य शिवाय कोई मार्ग नथी विगेरे.

—वृन्दावन गुरुकुलथी श्रीमान् नारायण प्रसादजी स्वामीश्री विश्वेश्वरानंदजीने तार द्वारा जणावे छे के, स्वामीश्री नित्यानंदजी महाराजना देहान्तना खेदजनक समाचार सांभाळतां गुरुकुल विद्यालय बंध करवामां आव्युं. अमे बधा दुःखी छीए अने तेमना आत्मानी चिर शान्ति अर्थे ईश्वर पासे प्रार्थना करीए छीये.

—आर्य समाज सदर बजार दिल्ली तथा तेनी संवादसभा- स्वामी श्रीनित्यानंदजीना देहान्त माटे, पोतानी ता. १८ मीनी सभामां, अत्यंत शोक प्रकट करे छे, अने स्वामीजीना आत्माने परम शान्ति मळे तेवी परमात्मा प्रति प्रार्थना करे छे, एवो स्वामीश्री विश्वेश्वरानंदजी महाराजने तार मळ्यो हतो.

—स्वामीश्रीना देहान्त विषयमां शिवाय श्रीमान् पं. भोजदत्तजी संपादक आर्यमुसाफर आगरा, श्रीमान् पं. तुलसीरामस्वामी मेरठथी महात्मा मुन्शीरामजी हरद्वार, श्रीमान् मंत्रीजी आर्यसमाजलाहोर, श्रीमतीप्रतिनिधि सभा, संयुक्तप्रांत बुलंदशहर श्रीमती आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब, श्रीमान् पं. रुद्रदत्तजी संपदाक प्रेम वृन्दावन, श्रीमान् मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन आदि तरफथी हृदय भेदक पत्रो मळ्या छे जे बनता सुधी जेमना तेम आगामि अंकमां प्रकट करशुं.

—स्वामीश्रीना संबंधमां म. गजाननदेशाई वालोड, म. साकरलाल विनोदी, म. दामोदरलक्ष्मीदासवालोड, तथा म. कवि अंबाशंकर हरिशंकर याज्ञिक विगेरेनां शोकोद्गारनां काव्यो मळ्यां छे जे अवकाशानुकूल हवे पछी प्रकट करशुं.

—दामोदरदास वालोडथी लखे छे के, आर्य प्रकाशमां प्रकट थएला स्वामीजीना साररूप जीवन चरित्रना हृदय भेदक विस्तीर्ण लेखथी तेमज श्रीमान् पं. बाळकृष्ण शर्मा तथा मास्तर आत्मारामजीना विद्वत्तायुक्त शोकजनक लेखादिथी कोई पण आर्यनुं हृदय द्रव्या विना रह्युं नहि होय. जे महात्माए संसार सुखपर लात मारी पोतानी संपूर्ण जिंदगी देशहित संसार सुधार अने धर्म प्रचारमां अर्पण करी एवा परोपकारी पुरुषार्थी पूज्य महात्मा स्वामी श्रीनित्यानंदजीना स्मारक संबंधमां कंइ विवादास्पद वात रही नथी तो हवे सद्गत स्वामीश्रीना ऋणथी मुक्त थवा आर्योए उत्साहथी कटिबद्ध थई स्वामीजीना स्मारक माटे तन मन धनथी मदद करवानी जरूर छे, स्वामी श्री दयानंद जीवन चरित्रनी माफक स्वामीश्री नित्यानंदजीनुं विस्तृत जीवन तेमनां व्याख्यानो शास्त्रार्थो साथे प्रकट थवानी जरूर छे विगेरे.

ओ३म्

हा ! नित्यानन्द ! !

—:o:—

रे रे भारतवर्षनो शशि खरे ज्योत्स्ना समेटी गयो,
उग्यो तो रवि पाछळे नभ विषे फीका करी तारला;
शांती अमृत ज्ञाननी जग परे रेलावीने आथम्यो,
नित्यानन्द अनित्य फेंकी समतो अच्युत आनन्दमां.

हाके जेनी कंपता थरररर थर सौं पोप;
ए सुतो शांतिमां, शास्त्रार्थ विषे जे शूर.

तुट्यो स्थंभ मोभनो, आर्योनो अवनी परे.
जातां नित्यानन्द, पुरुषार्थ प्रकाशता,

खर्यो तारो शुक्रनो, अमासने अजवाळतो:
लीप्यो नित्यानन्द, कर्ता वेदार्थ मणीका,

जेनी वाणी स्पर्शे, अनार्यो ए आर्यो बने;
गयो ए नित्यानन्द, पारसमणी समाजनो,

मेख उठी समाजनी, अति दृढने मजबूत,
रुवे सर्वे लोक, जातां नित्यानन्दजी.

शत्रुओ पण आज, रुवे ए धा मर्दना,
झीलेला शास्त्रार्थे, नित्यानन्द शर तर्कना,

गुरुकुळ नाशिकनो, धीर वीर रक्षक हतो.
गयो नित्यानन्द, अग्र जे ब्रह्मचारीनो.

अहो ? ईश आते तने शुं गम्युं, उठावी लीधो केम ए आर्य बेली;
हतो ए वक्ता अनुपम अमारो, झुटयुं शीदने ए अण मोल छत्र.
हजु तो अमारे मनु जात माटे, जरूर छे नित्यानन्द अनेकनी तो;
आ खोटथी तो अमारी गती थइ, दुष्काळ मांहे अधिक मास जेवी.

अरे ! आ शुं देखाये ! जुओ, जुओ. ए अमृत आत्मा शुं गेबी उपदेश अंतरिक्षमां आपे छे.

" ऋषि संतानो उठो, शोक तजी वेद प्रचारो;
अधर्मने तोडीने, धर्म ध्वजा वेदनी स्थापो.

गुरुकुळने माटे, तन मन धन सर्वे अर्पो;
सुधारी संतानो, सुप्रजा आर्य जग आपो.

संन्यासाश्रम खोलो, ज्यां वसे संन्यासी शांतिथीः
परमात्माने सेवी, पाये उपदेशामृत जनने. "

बन्धुओ ! आवो आपणे ए अमर आत्मानी आज्ञानुसार कर्तव्यपरायण थइए.

पुरुषार्थ तणो प्रकाश करीने धर्मार्थ सौ दाखव्या,
वेदोना सउ शब्दने अनुक्रमे गुंथ्यां अति यत्नथी;
तारां हे प्रभु, तात, सर्व गुणनां जे गान गातो हतो,
ते हीरा अणमोल तेजोमय नित्यानन्दने शांति दे.

इति शम्

" आर्यसेवक " नानो.

" शोकोद्गार. "
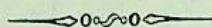
निस्तेज थाशे शुं रवि–रश्मि बधां अवनी महीं ?!
के जळ समुद्र तणुं अहा ! आकाशमां जाशे वही ?!
तरुवर बधां आ सृष्टितां शुं शुष्क थइ जाशे नही ?!
आनन्द अर्पक नित्यना ओ ! स्वामी नित्यानन्दजी ?! १

हा ! हाय ! हाहाकार ! आ ! शो देशमां व्यापी गयो !
आर्यो तणो मन मानतो हीरो (?) अरे खोवै गयो !
आ वृत्तिओ जे मानी आजे बधी निष्फळ थई !
आनन्द अर्पक नित्यना ओ ! स्वामि नित्यानन्दजी !!! २

स्वप्नभ्रम थइ गयो के श्रवण शुं आ सत्य छे !
आ स्वप्नवत् संसारनां स्वप्नां बधां ए व्यर्थ छे !
साक्षर शुभेच्छुक आर्यना चाल्या गया ! सघळुं तजी !
आनन्द अर्पक नित्यना ओ ! स्वामि नित्यानन्दजी ?!! ३

सद्वेदवेत्ताने प्रशंसा नूर कोहीनूर जे !
प्रिय स्वामी नित्यानन्दजीनुं मरण एकाएकरे !
चाल्या गया चाल्या गया खोळ्या हवे जडशे नहि !
आनन्द अर्पक नित्यना ओ ! स्वामि नित्यानन्दजी !!! ४

स्तब्ध भागे शुणता पशु पक्षिने नर नारीओ !
अश्रु थकी दर्शावतां हार्दिक शोकनी वृत्तिओ !
श्रेयवक्ता सत्यने निःस्वार्थ महा वाचस्पति !
आनन्द अर्पक नित्यना ओ ? स्वामी नित्यानन्दजी !!! ५

अश्रु वनस्पतिनां जुओ ? चोधर शोक थकी भरे ! *
निस्तेज थइ कंपी गयां तरुवर तणां सृष्टि (नां) खरे !
तो हाय ? श्रीना शिष्य क्यम काळजां कंपे नहि ?!
आनन्द अर्पक नित्य ओ ! स्वामि नित्यानन्दजी !!! ६

आर्य उद्धारक गुरु आव्या नजीक त्हारी प्रभु !
शांन्ति सदाओ आपजे स्तुति तणी शिष्यो बहु !
हा ! हाय ! निराधार ! स्वामि हवे क्यां पेखशुं ?
ओ स्वामि नित्यानन्दजी ! हा ! हा ! हमे तो झंखशुं !!! ७

पंडोळी ता. २५-१-१४. } **लीलाधर एम. भट्ट. कहानवाकर.**

झाकळबिन्दु.

नाशिक गुरुकुलनो त्रीजो वार्षिक महोत्सव.

ता. १९।४।१४.

प्रातःकालमां हवन तथा भजन बाद श्रीमान् म. रणछोडदास भवानना प्रमुखपणा-नीचे प्रथम दिवसनी कार्यवाही शरू करवामां आवी हती. आरंभमां भारतभूषण महात्मा **स्वामी श्रीनित्यानन्दजी** महाराजना आकस्मिक ब्रह्मभूत थवा माटे श्री. पं. कृष्णशर्माए दिलगिरी बतावनारो ठराव रजू कर्यो हतो. अने गंभीरताथी ते ठराव पसार करवामां आव्यो हतो.

॥ ओ ३ म् ॥

श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराजकी मृत्युपर शोक और सहानुभूति।
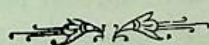
श्रीमान् स्वामीजीकी मृत्युसे भारत और विशेषकर आर्य्यसमाजमें जो शोकसमुद्र उमड़ पढ़ा था उसका पता तत्कालीन समाचार पत्रोंके पाठसे चलता है। अ-टकसे कटक, और बद्रीनाथसे सेतुबन्ध रामेश्वरतक सारे शोकाश्रु बरसाने लगे जिसने सुना वह निस्तब्ध होकर खड़ा रहगया। कितनोंहीको विश्वास नहीं होता था। तार और पत्र देकर पूछते अन्तमें समाचार सत्य पाकर अपना हृदय थामकर बैठ जाते।

स्वामीजीका सौम्य स्वभाव, उदार बर्ताव और हंस मुंख प्रकृतिको याद करके सहृदयोंके हृदय फटने लगे। उनके शरीरोंमें कम्प होने लगा। और इस दुःखसागर से अपने आपको किनारे लगाने के लिये वे अपने में शक्ति का अभाव पाने लगे।

श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजको जो कष्ट इस दुर्घटनासे हुआ उसका अनुमान पाठक स्वयं करलें। हा, उनका बालसखा उनसे आयुमें छोटा होते हुए भी उनका साथ सदाके लिये छोड़ गया, इस में कोई सन्देह नहीं कि संन्यासी महात्माओं को मोह नहीं होता और न होना चाहिये परन्तु पाठक कृपा कर विचारें कि मनुष्य मनुष्यही है और सबके शरीर अस्थि चर्मके बने हैं। स्वामीजी महाराजके निधनके एक वर्ष पीछे जब इन पंक्तियोंका लेखक श्री स्वामीजीकी जीवनयात्राके नोट लेनेके लिये श्रीमान् स्वामी श्री विश्वेश्वरानन्दजी महाराजकी सेवामें उपस्थित होता था तो आप श्रीस्वामीजीकी प्रत्येक वार्ताको स्मरण करके उदास हो जाते थे। तथापि इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्वामीजीके वियोगका शोक आपने जिस अपूर्व धैर्य्यसे सहन किया है वह अवर्णनीय है। आपने पूर्णतया अपने आपको "**परमात्मन् तेरी इच्छा पूर्ण हो**" इस आर्षवचनके अनुसार परमात्माकी इच्छाके आधीन कर दिया है।

श्रीमान् स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराजके पास श्रीस्वामीजी महाराजके मृत्युपर शोक और सहानुभूति प्रदर्शन करनेके लिये इतने अधिक तार और पत्र आये कि उनका पृथक् २ उत्तर देना कठिन हो गया न दिया जा सका, तारोंकी संख्या २०० से अधिक थी जिनमें विशेष कर आर्य्य पुरुषों और आर्य्यसमाजों के तार थे। पत्र भी यदि संख्या ही जाननेकी आवश्यकता है तो एक हजार से किसी प्रकार कम नहीं थे। यहां स्थान नहीं कि हम इन पत्रों और तारोंमें प्रदर्शित मर्मस्पर्शी और हृदयवेधक संदेशोंको जिनमें स्वामीजीके गुणानुवाद और अपने अभाग्यका ही हार्दिक प्रदर्शन था उल्लेख कर सकें। स्थान का संकोच तो हमें नामोल्लेखको भी आज्ञा नहीं देता।

अतः संक्षेपसे हम इतनाही निवेदन करना अलं समझते हैं कि प्रसिद्ध २ पुरुषोंके अतिरिक्त जिनमेंसे कुछके सहानुभूतिसूचक पत्रोंकी नकल यथास्थान पूर्व पृष्ठोंमें आचुकी है। भारतवर्षकी समस्त आर्य्यसमाजों और उनसे सम्बन्ध रखनेवाली अन्य संस्थाओंने अपने असाधारण अधिवेशन करके शोक सभाएं कीं

और अभूतपूर्व शोकसंतप्त जनसमुदायकी उपस्थितिमें श्री स्वामीजीके गुणानुवाद के साथ २ स्वामीजीकी मृत्युपर शोक और श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजके साथ सहानुभूति प्रकट की।

आर्य्य समाचारपत्र यथा आर्य्यपत्रिका, प्रकाश, आर्य्यगजट, सद्धर्मप्रचारक, भारतोदय, आर्य्यमित्र, अनाथरक्षक, आर्य्यप्रकाश, रहबर, वेदप्रकाश, नवजीवन आदिके कालम महीनोंतक इन्हीं प्रस्तावोंके अवतरणोंसे भरे मिलते थे ।

यहींतक नहीं स्वामीजीकी मृत्युका शोक अफ्रीकातकमें व्याप गया जैसे कि नीचे लिखे पत्रके पाठसे विदित होगा ।

\+ + + + जोहांसबर्गके हिन्दुओंकी एक विराट् सभा " व्ययस्पाक हालमें " हुई थी, सभामें हरप्रान्तके हिन्दू सम्मिलित थे । सभापतिका आसन यहांके प्रख्यातनेता श्रीयुत थम्बी नायडूने ग्रहण किया था, श्रीयुत देशाई और पटेलके प्रस्ताव, श्री लालबहादुर सिंह और भवानी दयालुके समर्थन और सर्व सम्मतिसे निम्न प्रस्ताव पास हुआ ।

यह सभा " स्वामी नित्यानन्दजीकी मृत्युपर शोक सन्ताप और खेद प्रकट करती है तथा स्वामीजीकी आत्माकी शान्तिके लिये परमात्मासे प्रार्थना करती है " प्रस्तावकी प्रतिलिपि आर्य्यप्रतिनिधिसभा मुम्बईकी सेवामें भेजी गई ।

× × × × × × × ×

भवदीय
भवानीदयालु
जार्मिस्टन ट्रान्सवाल ।

सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा, प्रान्तीय आर्य्य प्रतिनिधि सभाएँ, कुमार, विद्यार्थी और मित्रसभाएं सबने अपने २ असाधारण अधिवेशन करके शोक और सहानुभूतिसूचक प्रस्ताव पास किये ।

इस अवसर पर प्रधान, प्रस्तावक, समर्थक आदिका कार्य्य देशके गौरव और आर्य्य समाजके रत्नोंने किया था । उदाहरणके लिये हम केवल दो आर्य्यसमाजों और एक अन्य शोक सभाका विवरण जो समाचार पत्रोंमें प्रकाशित हुआ यहां उद्धृत करते हैं ।

बम्बईकी सभाका यह वृत्तान्त गुजराती पत्र "अखबार सौदागर" के १२-१-१४ अंकसे अनुवादित किया जाता है ।

स्वामी नित्यानन्दजीका देहान्त बम्बई आर्य्यसमाजमें प्रदर्शित शोक, अनेक तटस्थ गृहस्थोंके उद्गार ।

बम्बई आर्य्यसमाजकी एक सभा स्थानिक आर्य्य समाज मन्दिर गिरगांव काकड़वाडीमें छ बजे गत सायन्कालको श्रीमान् डाक्टर कल्याणदास जे. देसाईके सभापतित्वमें हुई ।

सभाका कार्य्य आरम्भ करते हुए श्रीमान् डाक्टर साहबने कहा "आप सब के अन्तरात्मा की दशा इस समय कैसी है इसका बोध आपके मुख मण्डलसे स्पष्ट हो रहा है । आजके कर्तव्यके समान कर्तव्य कभी २ करना पड़ता है । आजकी सभा उस महात्माकी मृत्युपर शोक प्रदर्शित करनेके लिये है, जिन्हें महर्षि श्री स्वामी दयानन्दजीका पुत्र कह सकते हैं । जिन्होंने उस महर्षिके बल और ज्ञानको प्राप्त करके, उसके चरणचिन्होंपर चलकर अपने आपको उसके उद्देशकी पूर्तिमें बलिदान कर दिया । मेरा आत्मा इस महान् आत्माके वियोगसे इतना दुःखी है कि मैं अपने उद्गार पूर्णतया व्यवस्थित रीतिसे नहीं प्रकट कर सकता ।

सुप्रसिद्ध डाक्टर राव की सहायता ली गई और यथाशक्ति सेवा भी की गई परन्तु वह सब निष्फल हुई । अन्तिम दिन तो कुछ सुभीता हुआ था और कुछ आशा भी बंधी थी, परन्तु अन्त में स्थिति बदल गई और रात्रि के डेढ बजे उन्होंनें देह त्याग दिया । उस समय मैं उपस्थित था और जो दृश्य मैंने उनकी शान्ति और धैर्य्यका देखा वह कभी नहीं भूल सकता, दुःखका जरा भी चिन्ह उनके चेहरेपर नहीं था, देह त्याग करनेके दो मिनिट पहले तक बातें करते रहे और जो कोई पूछता था तो "शांति है" यही उत्तर देते रहे । इससे मालूम होता है कि जनसमाजकी सेवामें अपना शरीर अर्पण कर देनेके कारण अन्त समय तक उनके हृदयमें किसी प्रकारका दुःख न था ।

स्वामी नित्यान्दजीके समान महात्माओंके पधार जानेसे हमारी स्थिति अत्यन्त शोकग्रस्त हो गई है । उन्होने समाजका काम करते २ अपने जीवनका अन्त कर दिया, अन्तिम समयतक उनके उद्गार यही थे । भरूच की आर्य्य परिषदमें वे छ छ ! घण्टे निरन्तर उपस्थित रहे थे । और अपने उत्तम व्याख्यानोंसे ब्रह्मसम्बन्धी सर्वोत्तमज्ञान दिया था ।

अत्यन्त आग्रह करनेपर उन्होंने बम्बई समाजके उत्सवपर यहाँ आना स्वीकार किया था, परन्तु उत्सवके आरम्भमें दो दिवस बाकी थे इस लिए यहाँ पर अपने अमूल्य जीवनकालको निरर्थक न व्यतीत कर वे आनन्द वासियोंके आग्रहसे वहाँ गये और आर्य्यसमाज स्थापित की। फिर उत्सवके दिन यहां पधार गये। परन्तु रोगके अधिक वेगके कारण उत्सवमें भाग नहीं ले सके। लगभग आठ दस दिन तो उन्होंने आठों प्रहर बैठे २ निकाले। परन्तु वे जरा भी दुःखी कभी नहीं देखे गये।

उनका शव १४ घंटोंसे अधिक समय तक रक्खा गया, परन्तु उसमें से किसी प्रसारकी दुर्गन्ध नहीं निकली यह आपमें से अनेकों ने स्वयं देखा है।

भारतवर्षकी जो दुर्दशा हो रही है इसको सुधारनेके लिये अनेक परोपकारी महात्माओंकी आवश्यकता है, ऐसे अवसरपर स्वामीजीके चोला छोनेसे भारी हानि हुई है यह प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है।

उनके पास नित्यप्रति दस पांच आमंत्रण आते रहते थे और उनके गये विना उत्सव कृतकार्य्य होगा ही नहीं ऐसा प्रतीत होता था। उन्होंने इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी कि छोटे और बड़े सब उनके पधारनेपर आनन्द मनाते थे।

कितनेही राजा महाराजा उनको अपना गुरु मानते थे। माइसोर और बड़ौदा आदि राज्योंमें जो सुधार हुए हैं उनमें उनका गहरा भाग था।

उनकी वक्तृता अत्युत्तम प्रकार की थी।

समस्त भारत वर्ष की आर्य्यसमाजें उनके देहान्तसे लुटसी गई।

इससे इस प्रान्तकी तो विशेष हानि हुई है। यहाँके गुरुकुलके सर्वस्व आपही थे, आपहीके आधारपर उसकी स्थापना की गई थी।

इसके पश्चात् श्रीमान् डाक्टर कल्याणदासजीने स्वामीजीकी मृत्युके सबन्धमें शोकप्रदर्शक पत्रोंको जो बाहरसे प्राप्त हुए थे पढकर सुनाया। जिनमें महात्मा हंसराजजी महात्मा मुंशीरामजी, मास्टर आत्मारामजी, पंजाब प्रतिनिधि सभा गुरुकुल नासिक अजमेर आर्य्यसमाज आदिके तार भी थे।

मिस्टर जय नारायणजी हिन्दूमलजी दानीने कहा—स्वामीजीके साथ मेरा सम्बन्ध २७।२८ वर्षोंसे था, उनकी एक मात्र इच्छा यह थी कि संसारका सुधार हो, इन्दोरमें समाज स्थापित होते समय वहांके ७—८ हजार ब्राह्मण पत्थर फैंकने लगे और लड़नेको तैय्यार हो गये। परन्तु उन्होंने किंचित् मात्र

भयन करके अपना काम जारी रखा, इस प्रकारके महात्मा बहुत थोड़े मिलते हैं। स्वामी दयानन्दजीके दर्शनोंसे मुझे जिस प्रकार अत्यानन्द होता था, उसी प्रकार स्वामी नित्यानन्दजीके दर्शनोंसे बहुत आनन्द होता था।

मिस्टर दीनशा महेरवानजी पारसीने कहा स्वामी श्रीनित्यानन्दजीसे परिचय हुए मुझे थोडासाही समय बीता है, उसमें भी मुझ पर अधिक प्रभाव पड़ा स्वामीजीकी मृत्युके समाचार सुनकर मुझे बड़ा भारी धक्का लगा, परमात्मन् उनकी आत्माको शांति दें। आपका कर्तव्य उनके गुरुकुलको सहायता देना है।

स्वामी श्रीअनुभवानन्दजीने कहा—जो मनुष्य ईश्वरकी आज्ञाका पालन करते २ देह त्यागते हैं उनका जीवन धन्य है। उन्होंने शरीर छोड़ा इसका मुझे शोक नहीं, परन्तु शोक तो इस बातका है कि उन्होंने जिस आशाके साथ इस संसारको छोड़ा है उन्हें पूर्ण करनेवाला भी कोई है या नहीं इस विषयमें मुझे सन्देह है, मैं आपसे आर्यसमाजी कहलानेवाले मनुष्योंसे इतनीही प्रार्थना करूँगा कि यदि आप स्वामी दयानन्दके कार्य्यके हितचिन्तक हैं तो जो मर गये हैं उनके लिए शोक मत करो परन्तु मरनेवालोंके आरम्भ किये कार्य्यको हाथमें लो और जो जीते हैं उनके लिए मरना सीखो। जब पंडित लेखरामजीका देहान्तहुआ तब मैं उनके पास ही था, उन्होंने मरते समय केवल इतना ही कहा, "**मरनेवालोंको रोनेवाले तो बहुत मिलेंगे, परन्तु यदि एक भी उनके कार्य्य की पूर्ति करनेवाला मिले तो बहुत है।**" स्वामी दर्शनानन्दजीने भी अन्तिम समय में कहा "**ईश्वरपर विश्वास रक्खो और काम करो।**" स्वामी नित्यानन्दजीने तीन काम विचारे थे, उसमेंसे एकका आरम्भ उन्होंने कर दिया, पर वह अधूरा है, और यदि आप उसे पूरा नहीं करेंगें तो मुम्बई प्रदेशके माथे एक कलंक रहेगा, उनकी दूसरी आशा साधुआश्रम खोलनेकी थी, और एक स्वामीजीका पूर्ण जीवन चरित्र लिखवाना चाहिए। मुझे आशा है कि बम्बईनिवासी इस काममें मेरी सहायता करेंगें।"

इसके पश्चात् मिस्टर गिरजाशंकर निर्भय रामने कहा, कि स्वामीजीकी मृत्युसे चारो ओर शोक छा रहा है। उनके अंतिम समयमें उनकी सेवा करनेका अवसर आपको मिला यह अहोभाग्य समझिये। धर्मप्रचारके सम्बन्धमें यदि

किसी प्रकारकी अड़चन पड़ती तो सबकी दृष्टि उन्हीं की ओर जाती थी, अधिक न कहकर मैं नीचे लिखा प्रस्ताव करता हूँ आप गंभीरता पूर्वक इसे स्वीकार करेंगे ऐसी आशा है।

" इस समाजके मानाधिकारी सभासद श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजीके नवमी जनवरी शुक्रवारको परलोकगमनके समाचार यह समाज अत्यन्त खेदसे अंकित करती है।

स्वामी नित्यानन्दजीके समान बहुश्रुत, अप्रतिम प्रभावशाली वक्ता, वेद-धर्मके धुरंधर सेवक और सच्चे संन्यासी के, वेद धर्मकी सेवा करते २ अकाल परलोकवाससे सामान्य रीतिसे समस्त भारतवर्षकी समाजोंका विशेष आर्य्य समाजकी संस्थाओं और गुरुकुलोंकी असाधारण और न पूरी होनेवाली हानि हुई है। जिसके लिए यह समाज अपना हार्दिक शोक प्रकट करती है।

बम्बई प्रान्त और विशेष कर बम्बई आर्य्य समाज पर उनकी विशेष कृपा थी, उनकी जीवन डोर टूट जानेसे मुम्बई तथा प्रान्तीय समाजोंकी अत्यन्त हानि हुई है। जिसके लिए हम हार्दिक शोक प्रकट करते हैं। स्वामी नित्यानन्दजीके मानमें आजकी सभाका नियमित कार्य स्थगित किया जाता है।"

इसके अनन्तर मिस्टर भवानीदास नारायणदास मोतीवाला, मिस्टर मंगलदास इच्छाराम आदिके भाषण होकर शांतिपाठके साथ सभा विसर्जित हुई।

लाहोरकी शोक सभाका अत्यन्त संक्षिप्त विवरण आर्य्य पत्रिकासे उध्दृत किया जाता है।

Swami Nityanand's death Public meeting,

The public meeting, convened on 10th evening to mourn the irreparable loss, the Arya Samaj in particular and the Hindus in general, have sustained in the untimely death of Swami Nityanand Saraswati, was well attended. The Quadrangle of the Vachhowali Arya Samaj Mandir was quite full and all who attended the mourning meeting quietly took their seats. Both sections of the Arya Samaj were fully represented. The proceedings were opened with a Bhajan depicting the fleeting nature of the universe. Swami Prakashanand then offered a prayer in which he feelingly referred to the untimely death of Swami Nityanand, and exhorted his hearers to submissively bow before the will of God. Resolutions, (1) deploring the loss the Arya Samaj has sustained and recording the invaluable services of the

late swami (2) expressing sympathy with Swami Vishweshwaranand whose life-long companion, friend & coworker the deceased Swami was and (3) directing the proceedings to be communicated to the press were adopted, in silence and in passing the first of the Resolutions the entire audience stood up.

Rai Thakur Dutta, Principal Sain Dass, Professors Devi Dyal, Dewan Chand, Arya Muni, Lalas Durga Das, Ram Ratan, Roshanlal, Shiv Dayal, Kashiram Vaid, Kedarnath Thapar, Ralla Ram, Dilbag Rai, Master Durga Prasada, Mahashaya Satvalekar & pt. Thakur Dutt Vaidya all well known Arya Samajists spoke in eulogistic terms of the noble qualities of the head and heart of the deceased Swami and bore eloquent testimony to his great worth and the irreparable loss the Arya Samaj had sustained by the deplorable death.

॥ ओ३म् ॥

" गुरुकुल वृन्दावनमें शोकसभा "

शोक ! शोक ! महाशोक !

वृन्दावनीय गुरुकुलके अध्यापक, संरक्षक तथा ब्रह्मचारियों ने ता० १७ जनवरी सन् १९१४ इ० को श्रीयुत मुँशी नारायणप्रसादजी मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावनके सभापतित्वमें, श्री स्वामी नित्यामन्दजी महाराजके असमय मृत्यु हो जानेसे शोक प्रकाशित करनेके लिए सभाकी प्रथम श्रीमान् सभापतिजीने ईश्वरप्रार्थनाके पश्चात्, श्रीस्वामी नित्यानन्दजी सरस्वती महाराजका संक्षिप्त जीवन चरित्र महत्वपूर्ण शब्दोंमें सुनाते हुए प्रकट किया कि आर्य समाजका एक मात्र अद्वितीय, वैदिक कोषके रचयिता, सच्चे संन्यासीकी असामायिक मृत्युसे आर्यसमाजको बड़ा भारी धक्का लगा है; इतने कथनके समाप्त होनेपर ब्रह्मचारी मेधाव्रतने स्वरचित शोकपञ्चविंशी पढकर सुनाई। तत्पश्चात् गुरुकुल विद्यालयके मुख्याध्यापक श्रीयुत बाबू रामचन्द्र प्रसाद वर्मा बी. ए. एल. एल. बीने, स्वामीजीकी मृत्यु पर शोकभरे शब्दोंमें उनके महान् गुण वर्णन करते हुए बतलाया कि ऐसे पुरुषोंकी असमय मृत्युमें कोई ऐसा गूढ भेद है जिसे मनुष्य नहीं जान सकता, आज आर्य्यसमाजकी ही नहीं किन्तु देशभरकी एसी हानि हुई है जो पूर्ण होनी अति दुस्तर है. स्वामीजीने जिस कोषके निर्माणका सङ्कल्प किया था यदि वह पूर्ण हो जाता तो संसारको बडाही लाभ होता। इतने कथनके अनन्तर दो प्रस्ताव उपस्थित किये जिनका अनुमोदन, ब्रह्मचारियोंद्वारा होकर

सर्व सम्मतिसे स्वीकृत हुए और शान्तिपाठ होनेके पश्चात् सभाका विसर्जन हुआ तथा शोकके कारण विद्यालय बन्द रक्खा गया।

(१) गुरुकुल वृन्दावनके मुख्याधिष्ठाता, अध्यापक, संरक्षक तथा ब्रह्मचारी ता. १७ जनवरी १९१४ इ०को एक विशेष शोकसभाद्वाराभी स्वामी नित्यानन्दजी सरस्वतीके असमय मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रकाशित करते हैं, जिनके शरीर त्याग करनेसे आर्य्य समाजके एक महान् विद्वान्, महात्मा, तथा पवित्र वैदिक धर्म्मका दृढ और अनथक, सच्चा भक्त हमसे विदा हो गया है; परमात्मासे, जिनके वह सच्चे पुत्र थे, प्रार्थना करते हैं कि उनके आत्माको नित्यका आनन्द और शान्ति प्रदान करें और उनके सहयोगियोंको शक्ति दें कि उनके पवित्र उद्देशपूर्तिमें और भी अधिक आत्मसमर्पण से लगे रहें और श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी महाराजको धैर्य्य तथा बल प्रदान करें कि इस असह्य वियोगको सहन करें।

(२) इन प्रस्तावोंकी एक १ प्रति श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजकी सेवामें तथा प्रसिद्ध २ समाचारपत्रोंमें मुद्रणार्थ भेजी जावें।

स्वर्गत श्री स्वामि नित्यानन्द शोकपञ्चविंशी.

सत्यं विजेष्यत इहैष्यति वेदधर्मः सौख्यं ह्युदेष्यति भविष्यति मुक्तिरित्थम् ॥
जीवे विचिन्तयति देहगतेऽप्यकाण्डे हा ! हन्त ! हन्त ! वपुषो यम-उज्जहौ तम् ॥ १ ॥

नित्यानन्दो व्रतियतिवरो भूपतेर्वन्दनीयो—योऽभूदस्मिन् द्विजवरकुलोत्तंस आर्यावतंसः ॥
नित्यानन्दं समनुभवितुं नो विहायार्यबन्धून्—नित्यानन्दाखिलजनपते सन्निधिं प्राप सोऽयम् ॥ २ ॥

करुणाम्बुनिधे ! विशांपते ! उचितं किन्नु विधीयतेः त्वया।
भुवि दुर्जनसङ्घवर्द्धनं क्रियते यद्द् दलनं सतां नृणाम् ॥ ३ ॥

इदमेव हि रोचते नु ते विजयो वेदविरोधिनां भवेत्।
न हि चेत्कथमीक्ष्यते त्वया श्रुतिशास्त्रसनृणांलयः प्रभो ! ॥ ४ ॥

अयि ! वज्रसमानमानस ! शतधा त्वं न विदीर्यसे कथम्।
प्रतिवर्षमहो निशम्यते नुमणेर्मृत्युरिहाऽऽगमे पटोः ॥ ५ ॥

अथवात्वदीय दोषकल्पनाऽनुचितैव प्रतिभात्यये सखे ! ।
मृदु यस्तु प्रतीप ताडितं मुहुः कठिनाघातसहं हि जायते ॥ ६ ॥
कविते ! तव भाग्य एव तल्लिखितं रोदनमीश्वरेण किम् ।
त्वमितो व्रज यत्र ते सुखं रुदतीं त्वामलमेव नेक्षितुम् ॥ ७ ॥
यदिदं श्रुतमद्य दारुणं मरणं तस्य महात्मनो यतेः ।
व्रतिमंडलमण्डनस्य तद्धृदये शल्यमिवार्पितं हि नः ॥ ८ ॥
करिणा सुफलद्रुमो यथा मरुता नौर्मरिताम्बुधौ यथा ।
सरितस्तटमम्भसा यथा नृमृगोऽभाजि यमद्विपद्विषा ॥ ९ ॥
अहहार्य समाजमन्दिर ! तव ते स्तम्भसमानमानवाः ।
निपतन्ति शनैः शनैः सखे ! वद कां यास्यसि दुर्दशामये ॥ १० ॥
अयि राजगुरो ! गुरोः कुले समुपेत्योपदिदेश यद् भवान् ।
समये समये मृते त्वयि वद को वक्ष्यति मङ्गलं पुनः ॥ ११ ॥
भवताऽऽरम्भि य आगमस्य भो लिखितुं कोश इह व्रतीश्वर ! ।
असमाप्य तमुत्तमं भवान् गतवान्, हा ! कृतमत्यसाम्प्रतम् ॥ १२ ॥
भवताममृतप्लुतां गिरं नितरां श्रोतुमिहागमान्विताम् ।
नृपमन्दिर एव भूपति–र्भवतामागमनं प्रतीक्षते ॥ १३ ॥
बत मृत्युमयं निशम्यते सहसा विह्वलतां गतो नृपः ।
यतिराट् ! किमिदं कृतं त्वये–ति वदन् दुःखसुमूर्च्छितोऽस्ति भोः ॥१४॥
सकलार्यमनुष्यमण्डलं नृपचक्रञ्च सुदुःखितं यते ! ।
लभते कथमप्यहो न शं त्वहते सान्त्वयिता न विद्यते ॥ १५ ॥
वदनं क्रणुते स्मितान्वितं केन च तेजोयुतमस्ति ते वपुः ।
क्व सुधामधुरं वचोऽखिलं प्रगतं हा सुकथावशेषताम् ॥ १६ ॥
त्वमगा हि यदेश संसदि नृपतिः पीठमपास्य साञ्जलिः ।
कुरुते स्म तवादरं मुने ! समुदुत्थाय गतो हहा क्व नु ॥ १७ ॥
उपदेक्ष्यति कोऽधुना शुभं तमिलेन्द्र विदुषा त्वया विना ।
अभवो गुरुरेव भो नृपतीनां त्वमिहार्यमण्डले ॥ १८ ॥
त्वमभूः सुदयामयाकृतेः सुदयानन्दयतेरनन्तरम् ।
विबुद्धाऽऽमरणं महात्मनः सततं ब्राह्मतपश्चरो यमी ॥ १९ ॥
भवताऽऽर्य समाजभूषण ! भगवन्नार्य समाजजदुर्दशा ।
सुतरां न विचिन्तिता यतः परिहायाऽऽर्य जनान् गतो भवान् ॥ २० ॥

स्मरणं तव जायते यदा मरणं जायत एव नस्तदा ।
व्यथते हृदयं भृशं यथा यमिराट् ! शूलगदेन पीडितम् ॥ २१ ॥
तव साऽऽकृतिरत्र लक्ष्यते रमणीया नयनाग्रतो मुने ! ।
न तु दृश्यस एव हा कथं विधिना जालमिवाभितन्यते ॥ २२ ॥
अयि ! कारुणिकेश्वर प्रभो ! त्वमसत्पूरुषसंघनाशनः ।
असि सज्जन-वृन्दवर्द्धनो विपरीतं किमिति त्वया कृतम् ॥ २३ ॥
अथवा दुरदृष्टतो हिनः प्रभुणाऽकारि वियोग एष भोः ।
नहि दोष इहास्ति कस्यचिद् वचनीया ग्यमेव सर्वथा ॥ २४ ॥
अलं शुचा वर्णिवरा इदानीं बलीयसी भोः परमेश्वरेच्छा ।
तस्योत्तमां यातु गतिं स आत्मे-त्यभ्यर्थनीयस्स च देवदेवः ॥ २५ ॥

वृन्दावनीयगुरुकुलस्य
मेधाव्रतब्रह्मचारिणः ।

आर्य्यसमाजके अतिरिक्त अन्य समाचारपत्रोंने भी स्वामीजीकी मृत्युपर मार्मिक शोक प्रकट किया, स्वामीजीकी मुख्य २ जीवनघटनाएँ प्रकाशित कीं । इस सम्बन्धमें बम्बईके समाचारपत्रोंने विशेष भाग लिया, जिनमेंसे कुछका नामोल्लेख यहां किया जाता है ।

सांज वर्तमान, गुजराती, बम्बई गुजराती, अखबारेसोदागर, कोहनूर, कैसरे वर्तमान आदि ।

अधिक विस्तार न करके हम केवल दो तीन समाचार पत्रोंके लेखोंका अवतरण यहां देते हैं ।

स्वामीजीके शोकमें अनेक कविताएं प्रकट की गईं उनमेंसे एक संस्कृत कविता ऊपर उद्धृतकी जा चुकी है और केवल एकही भाषा कविता यहां उद्धृत की जाती है । यह कविता म० देवकली प्रसादजी सत्संग कैसरगंजने आर्य्य-मित्रमें प्रकाशित कराई थी ।

हा सत्य सिन्धु जगवन्धु, दयानिधि विद्यावारिधि,
शुद्ध प्रकृती मृदु मूर्ति, ब्रह्मचारी वाचस्पती
भ्रमतम प्रखर दिनेश, यती योगी सतधारी
सर्व सुकृत संपन्न सर्व प्रिय संशय हारी
मुनिनायक तप पुंज वेद विद्या पारंगत
प्राणिमात्रके सरल चित्त बुद्ध आत्मवित नित्य
प्रकृतिमें आप छोडी आनन्द गोदको
फिरि आनन्द समाय गये कह छोडी दीनको

सद्धर्म प्रचारक

३ माघ १९७० वि.

स्वामी नित्यानन्दजीका परलोकवास ।

आर्यसमाजमें शोककी घटा ।

श्री स्वामी नित्यानन्द जी का असामायिक देहान्त सुनकर किस आर्य पुरुष को मर्मान्त वेदना न हुई होगी ? श्री स्वामी जी आर्य समाज के अत्यन्त पुराने कार्यकर्ताओंमेंसे थे । हमने अपने वृद्धोंसे वे दिन सुने हैं, जब श्री स्वामी जी के वचनामृत सुनने के लिये मैसूर के परलोकवासी राजा हाथ बांधे खड़े रहते थे। आर्यसमाज में श्री स्वामीजीकी बड़ी भारी प्रतिष्ठा थी । आप की प्रतिष्ठा होती भी क्यों न ? अद्भुत विद्या, सिद्धान्तसे अगाध प्रेम, मनोहर भाषण. शक्ति और सौजन्य यदि किसी व्यक्तिको प्रतिष्ठा का पात्र नहीं बनाते तो कोई भी गुण नहीं बना सकता । श्री स्वामीजी में ये गुण कूट २ कर भरे हुए थे। कई रयासतों में आप का राजगुरुवत् आदर था । गायकवाड़ को तो आप महीनों तक सत्यार्थप्रकाश पढ़ाते रहे । आपकी मृत्युसे आर्य समाज का एक उज्ज्वल भूषण खोगया । आर्यसमाज की वर्तमान पाण्डितमंडली निःसन्देह स्वामिहीन होगई । आप का देहान्त बम्बईमें निमोनियाद्वारा हुआ । क्या आज से एक दो मास पूर्व कोई ऐसी आशंका कर सकता था ? आप गत चार या पाँच महीनोंमें शायद दस बारह वार्षिकोत्सवों में गये और समाज की बढ़ती के लिए यत्नवान् रहे । नए २ कार्यक्रम आपके चित्त में निरन्तर घूमते रहते थे । आज आर्यसमाज ने अपना एक विद्वद्भूषण खो दिया है । न जाने इसकी कमी कैसे पूरी होगी ?

संक्षिप्त चरित्र ।

(लेखक **महाशय चांदकरण शारदा** बी. ए. एल. एल. बी. अजमेर)

श्री स्वामी नित्यानन्दजी का वियोग क्या हुआ, मानो आर्यसमाज का एक स्तम्भ टूट गया । स्वामीजी अभी हाल में अजमेर पधारे थे । यहां आपने " चमत्कार चिन्तामणि " पर एक सुन्दर व्याख्यान दिया था । आप का यह अन्तिम उपदेश अभी तक यहां के श्रोताओं के कानों में गूंज रहा है । स्वामी जी के चरित्रके विषयमें हम कुछ बातें यहां पाठकों की सेवा में निवेदन

करते हैं। आप के जन्मस्थान का मुझे पूर्ण पता नहीं है। कहते हैं कि स्वामी जी सोअत (मारवाड) के श्रीमाली ब्राह्मण थे। महर्षि दयानन्द जी की मृत्युके पश्चात् अजमेर नगरमें पहली परोपकारिणी सभा हुई। उस उत्सव पर श्रीमान् परमपदारूढ स्वामीजी अपने गुरु स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीके साथ यहां पधारे थे। आर्यसमाजमें प्रविष्ट होनेका वह आपका पहला ही मौका था। उस समय आपकी आयु लगभग २५ वर्षकी होगी। दोनों महानुभावोंकी दिव्य मूर्तियां बहुत सुन्दर और प्रभावशाली प्रतीत हुईं, इस लिए आर्यसमाजके कार्यकर्त्ताओंने आपसे वार्तालाप किया। जिससे ज्ञात हुआ कि आपके विचार आर्यसमाजके ही विचार हैं, पर अभी कार्य प्रारम्भ नहीं किया है। अजमेरके उस समयके कार्यकर्त्ताओंके निवेदनपर आपने प्रतिज्ञा की और नियमपूर्वक कार्य प्रारम्भ कर दिया। उस स्वामीकी आत्माको धन्य है कि जिसने आयुपर्यन्त अपनी प्रतिज्ञा निभाई। आपकी लगातार वैदिक धर्मकी सेवा सबको विदित है। आपने पहिलाही पहिला किला बूंदी (राजपूताना) में फतह किया था। आपने बूँदी जैसी कट्टर पौराणिक रियासतमें धार्मिक हलचल मचा दी और बीसों पौराणिक पण्डितोंको शास्त्रार्थमें हराकर उनपर आर्य्यसमाजका सिक्का जमा दिया। आखिर शास्त्रार्थमें पराजित हो निरुत्तर होकर बूँदी महाराज चिड़ने लगे और उन्होंने स्वामीजीको अपनी रियासतसे निकलवा दिया; परन्तु ज्यों २ चन्दन घिसा जाता है त्यों २ उसकी सुगन्धि अधिक फैलती है उसी प्रकार स्वामीजीके इस निरादारसे स्वामीजीका गौरव और भी बढ़ा और स्वामीजीकी विद्वत्ताका नाद सारे भारतमें फैल गया। दूसरी देशी रियासतोंमें आपका मान होने लगा। और आप शाहपुरा, उदयपुर, दक्षिण हैदराबाद, नरसिंहगढ़, इत्यादि रियासतोंमें वैदिक धर्मका प्रचार जोर शोरसे करते रहे। नरसिंहगढ़ महाराज तो आपकी बहुत ही प्रतिष्ठा करते थे यहां तक कि जब महाराज, जोधपुर विवाह करने पधारे तो बहुत ही आग्रहपूर्वक स्वामीजीको अपने साथ लाये और अजमेर ठहर कर धर्मोपदेश कराया और अजमेर- आर्य्यसमाज-भवनके वास्ते एक सहस्र रुपये प्रदान किये। नरसिंहगढ़के पश्चात् स्वामीजी इन्दौर दर्बारमें भी उपदेश देते रहे और यहाँ स्वामीजीके लिये वार्षिक भेट मुकर्रर हो गई। इन्दौरसे आप माइसोर महाराजको वैदिक धर्मका संदेशा पहुँचाने गये। जहां इनकी विद्वत्ता और मधुरभाषिताका इतना प्रभाव पड़ा कि माइसोर महाराजने इनके चार व्याख्यान फोनोग्राफमें

भरवा दिये, जो अभी तक सुरक्षित हैं। फिर महाराजके साथ स्वामी मुख्य २ समाजोंमें दौरा करनेको निकले, परन्तु शोक कि कलकत्ते पहुँच कर माइसोर महाराजका देहान्त हो गया और वैदिकधर्मके शीघ्र प्रचार होनेकी आशायें जहां की तहां रह गईं। माइसोरके पश्चात् स्वामीजी महाराजने बड़ौदा महाराजके प्रति आर्य्य समाजका संदेशा पहुँचाया और एक वैदिककोष बनानेमें सहायता प्राप्त की। इसी प्रकार स्वामीजीने देवास, धार, कोटा, अलवर, भरतपुर आदि अनेक रियासतोंमें वैदिक धर्मका प्रचार किया। कोटा रियासतमें आलाराम सागर जैसे उद्दण्ड पौराणिक संन्यासीको आपने ही मजा चखाया था और कोटा महाराजसे उस पर जुर्माना करवाया था। हालमें ही आपने नवीन इन्दौर महाराजको सदुपदेश दिया था और वैदिककोषके लिए सहायता प्राप्तकी थी। परन्तु शोक कि स्वामीजी महाराज वैदिककोषको अधूरा ही छोड़ कर परलोक सिधार गये। स्वामीजी महाराज अपूर्व वक्ता होनेके सिवाय, संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, मारवाड़ी, आदि भाषाओंके पूर्ण विद्वान् थे और सब ही भाषाओंमें प्रभावशाली व्याख्यान देते थे। स्वामीजीने छोटे मोटे कई ग्रन्थ रचे हैं, उनका रचित " पुरुषार्थ प्रकाश " बहुत ही विद्वत्तासे लिखा गया है और उसमें स्वामीजीकी पूर्ण योग्यता झलकती है। स्वामीजीने बम्बई प्रान्तमें भी विशेष कार्य्य किया, जिसका फल यह हुआ कि उस प्रान्तमें भी अब वैदिकधर्मके प्रति लोगोंका अधिक अनुराग हो रहा है और जागृतिके चिन्ह दृष्टिगोचर हो रहे हैं। आर्य्यसमाजका ऐसा कोई सा बड़ा प्रचारका मौका होता होगा जहां उक्त स्वा० नहीं पहुँचे हों, स्वामीजी पूर्ण ब्रह्मचारी थे और देशहितकार्य्यमें सदा संलग्न रहते थे। सोशल कान्फ्रेन्समें एक आप प्रसिद्ध व्यक्ति थे। आपकी मृत्युसे आर्य्यसमाजको वह क्षति पहुंची है जिसकी पूर्ति होना वर्तमान में कठिन प्रतीत होता है। आजकल ऐसा कोई भी दृष्टिगोचर नहीं होता जो राजा महाराजाओंपर प्रभाव डाल सके और वैदिकधर्मका और सच्चे देशहितका संदेशा पहुंचा सके। अजमेरके आर्य्यपुरुषोंने आपके स्मारक में १००००) की लागतसे " नित्यानन्दपरोपकारभवन " स्थापन करना निश्चय किया है और उसके लिए बहुतसा चन्दा भी इकट्ठा हो गया है। आर्य्यसमाजके दुर्भाग्य हैं कि उसमें से अमूल्य रत्न छिने जा रहे हैं और नये कार्य्यकर्त्ता कम पैदा होते हैं। क्या आर्य्यभ्राता स्वामीजीके रिक्तस्थानकी पूर्त्ति का पूर्ण प्रयत्न करेंगे जिनसे कि वैदिक धर्मका प्रचार हो और वह बुराइयां जिनकी कि स्वामी नित्यानन्दजी को दिन रात चिन्ता रहती थी आर्य्यसमाज से शीघ्र ही दूर हों।

उनका स्वभाव ।

(लेखक उनका " एक शिष्य " बी० ए० एल० डी०)

श्री स्वामी नित्यानन्दजीका स्वभाव, उनकी आकृति, वाणीका माधुर्य, भाषाका लालित्य और तर्कबुद्धि ऐसी थी कि साधारण पुरुषोंके अतिरिक्त बड़े बड़े विद्वानों और तेजस्वी राजाओं पर भी उनके उपर्युक्त गुणोंका अद्भुत प्रभाव पड़ता था । धैर्य्य और साहस तो उनमें अटूट था । एक वार जब आगरेमें स्वामीजीने लगातार १२ व्याख्यान दिये औ जगद् गुरु शंकराचार्य्यके प्रसिद्ध शिष्य से शास्त्रार्थ करना निश्चय हुआ तो दुष्ट लोगोंने ईंट पत्थर बरसानेमें कोई कसर नहीं छोडी, परन्तु धन्य है साहसी और सहनशील साधुको जो निरन्तर अपने कार्यमें कटिबद्ध रहा और जिसने अपने अनुपम उपदेशसे समाजका गौरव और प्रभाव फिरसे विशाल कर दिया । व्याख्यानमें सहस्रों श्रोतागणोंके बीच उनकी अद्भुत वाणी वह जादू फैलाती थी कि दो तीन घंटे तक लोग इधरके उधर नहीं होते थे और एक प्रकारसे जादूके सट्टेमें आ जाते थे ।

स्वामीजीकी मिलनसारी इस प्रकारकी थी कि हरएक जन यह समझता था कि वह मेरे परमसहायक हैं । ऐसा कौन था जो उनसे कभी अप्रसन्न होता, मैंने उनके अपूर्व व्याख्यान बम्बई और आगरेमें उनके साथ रहते हुए सुने हैं और घंटों उनसे वार्तालाप करनेका भी सौभाग्य प्राप्त हुआ । सफर भी बहुधा उनके साथ करनेका मौका मिला है । उन्होंने मुझे आजसे १९ वर्ष पूर्व एकबार खैरा-गढ रियासतमें मेरी जल्दीपर विशेष नाम " पलायन पादचरण " का दिया और वही वाक्य इस वार वह अजमेरमें आये और मैंने मिलकर जानेकी जल्दी की तो फौरन १९ वर्ष पूर्वके कथित शब्दोंको दुहराया । इससे स्वामीजीके विनोदी स्वभावका पाठकगण अनुमान कर सकते हैं । मैं उनके गुणोंकी प्रशंसा कहांतक लिखूं ? एक एक बातको स्मरण करनेसे भी क्लेश होता है । बन्धुवर्गो ! काल वक्त बडा प्रबल है । एक २ करके अद्वितीय नर रत्न समाजसे खिंचे चले जा रहे हैं । ऐसे कठिन समयमें हिम्मत हारने और अधीर होनेसे संसारका उपकार कदापि नहीं हो सकता, बल्कि प्रेम और साहसको स्थान देकर परमात्माका सहारा अवलम्बन करनेसे ही यह मस्तिष्कशून्य समाजरूप नाव अपने इच्छित स्थानपर पहुँच सकेगी ।

शोकसभाएँ ।

निम्न लिखित समाजोंमें स्वामी नित्यानन्दजीके स्वर्गवासपर शोकके प्रस्ताव पास किये गये, उनकी आत्माको शान्ति मिलनेके लिए परमात्मासे प्रार्थना की गई, उनके गुरु श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीके साथ शोक सहानुभूति प्रकट की गई और श्री स्वामीजीके " वैदिक कोश " के पूर्ण होनेकी इच्छा प्रकट की गई। आ० स० इटावा, आ० स० चौक प्रयाग, आ० स० गणेश गंज लख-नऊ, आ० स० ठंडी सडक कानपुर, महाविद्यालय ज्वालापुर, आ० स० सिपरी बाजार झांसी, आ० स० व आर्यकुमार सभा झांसी, आ० स० मवाना कलां मेरठ, आ० स० भरतपुर ।

A brief Biography of the late Shriman Swami Nityanandji.

29-3-14.

Swami Nityanandji was born about the year 1860 A. D. in Jalore a town of the Marwar State, Rajputana. His father Purushottam was a Shrimali Brahmin and his mother's name was Krishnabai who from infancy named him Ramdatt. He also had three brothers and two sisters. Bhatt Purushottam belonged to a respectable family and was reckoned to be a learned man.

After the death of Purushottam, his whole family migrated to Ahmedabad where they settled at Delhi Darwaza. At the age of 17 Ramdatt, adducing intense craving for learning left his parental home and was not heard for a considerable time. However about 18 years ago under the pressure of his life-long colleague and eminent collaborator Shriman Swami Vishveshvaranandji he reappeared in the family circle where his old crippled octogenarian mother embraced him with open arms and shed many a joyful tears at the sudden reappearance of a son considered to be lost for ever. Solacing this disconsolate image of his veneration, by promising to send regularly an annuity for her stipends the Swamiji retraced his steps to his destination at Benares where he owned some property.

After abjuring parental protection, the then youth Ramdatt travelled via Ahmedabad to Poona, Satara, Nasik and other parts of the S. M. Country and thence proceeded to Benares where he studied for about a dozen years under an ascetic named Gopal Giri a staunch follower of the late sage Dayanand Saraswati. It is not known who administered him the vow of chastity and christened him as Brahmachary Nityanandji, but about 33 years ago he came in contact with his aforesaid learned companion Swami Vishveshvaranandji who was then about 26 years of age and since then these two scholars lived like twin brothers, studying together and unitedly spreading their propaganda of true vedic religion until the recent death of the former wrought their permanent separation.

A unique combination of suavity and urbanity Nityanand had access to many "Savants" of various shades of Aryan philosophy at Benares, the seat of Brahmanical learning and from them he not merely imbibed their doctrines but mastered them thoroughly. This attainment gave him a penetrating insight into the very depth of the Vedic lore and endowed him with sufficient command to discuss and argue in any branch of Logic or Philosophy 'extempore.'

After mastering such wonderfully difficult branches of the Sanskrit literature S. Nityanand started on his lecturing campaign in company with his learned colleague S. Vishveshvaranandji who about ten years ago ordained him a "Sanyashi" (an ascetic) and since then he was invariably addressed as "Shriman Swami Nityanand Saraswati."

Swami Nityanandji delivered his first maiden speech in Bareilly in the U. P. which established the foundation of his future glory as a great and matchless orator. This was about 30 years ago and since then he travelled with his colleague throughout the length and breadth of India, particularly at all noteworthy places of religious fame, and through the majority of the Native States (with the exception of the Madras Presidency on account of his want of acquaintance with the languages prevailent there) whose rulers were so much impressed with his fluent delivery and sound ethics that they paid him extraor-

dinary honours and occasionally received him with their full royal paraphernalia and even sometimes expressed a desire for his permanent presence for spreading the Vedic religious culture among the ignorant...masses within the jurisdiction of their respective States.

The cosmopolitan doctrines of Swami Nityanand and his powerful crusade against idolatry created him many enemies among the erudite Pandits who for their orthodoxy enjoyed the patronage of several Native Chiefs. So far so, that sometimes the controversial discussions between them lasted for several days and though the anteparty carried a vigorous compaign with the combined efforts of several cleverest "*litteatures*" Swami Nityanand singlehanded though he acted obviously came out victorious.

In this way Swami Nityanand not only promulgated his creed in various parts of the country but he made his voice heard and felt in the Northern Alpine depths at the foot of the Himalayas where he attracted a large following even among the wild tribes. His domineering personality evoked and commanded admiration from the highest personages to a crowd held down to an illiterate cultivator and chief among the former may safely be mentioned the names of H. H. The Maharaja dhiraj of Shahpura a petty state in Meywar. H. H. the late Maharaja Sir Shivaji rao Holker of Indore, H. H. the late Maharaja of Kishengarh (C.I.) who of course was a devout follower; H. H. the Maharaja Sir Sayajirao of Baroda and the chiefs of various minor and major principalities in India too numerous to be mentioned.

Among the notables of India Swami Nityanand had an extensive circle of friends and admirers primary among them being Raja Munshi Madhavalal of Banares the Hon'ble Pandit Madan Mohan Malaviya and representative men of various creeds such as the late Hon'ble R. B. Gopalrao Hari Deshmukh the late Hon'ble Justice Ranade the late Sheth Laxmidas Khimji and R. B. Vussonji Khimji who one and all loved and respected him for his deep learning and broad hearted philanthropy which he extended to every needy soul without discrimination of caste

or creed. His chief ethics being "Fatherhood of God and Brotherhood of man"

Independent of the air of distinction and dignity that pervaded every inch of his action Swami Nityanand invariably possessed a kind of assertive influence and thereby he was able to organise various philanthropic missions which are scattered over India and the very fact of his being held in the highest estimation by such astute scholar and diplomat of the loftiest order like the late Dr. B. M. Malbari M. A. who frequently hon'oured Swami Nityanand with his visit at the former's olympic hermitage called "Shantkuti" at Simla W. and sometimes spent a few days in company with this pious ascetic under his roof and this is enough to speak volumes in praise of this

Great and noble social reformer.

Though possessed of versatile accomplishments and many sided virtues Swami Nityanand was free from the very shadow of conceit or ambition and the conspicuous absence of pedantry, bigotry and dogmatism and similar kindred defects, had endeared him to every soul whether young or old he came in contact with and had he wished he would by his eloquence and powerful proficiency in all branches of science and philosophy and by means of a religious revolution have eclipsed all the proceeding "Acharyas" of various sects of doctrines and would with ease, have proclaimed himself an "Archshankar" (i. e, an Arch Lord Paramount of the Hindu spiritual World) but no, here his self sacrifice triumphed and he simply contented himself by doing what lay in his power to redeem people from their religious degeneration and O cay.

Swami Nityanand was loyal to the very marrow of his bone and this sacred doctrine of paramount importance he always infused among his followers whom he also exhorted to keep themselves scrupulously free from the trammels of crafty brahmanism and to work constitutionally their way towards higher goal under the blissful regime of the benign British Government.

Lecturing among the masses was an ingrained hobby with Swami Nityanand and he enjoyed equal command over the English (which of course he partially knew) he would at least have ranked, if not surpassed, with the greatest of the Western orators such as Demosthenes, Burke, Sheridan, Pitt etc. whom he however surely vied with in Hindi and Sanskrit as equivocally testified to by his innumerable audience scattered all over India.

To immortalize the Vedic literature was his goal of life and he accordingly undertook about 7 years ago with the aid of his inseparable colleague Swami Vishveshvaranandji the compilation of a vedic Lexicon and since this stupendous work required vast funds Swami Nityanand made appeal for it to the crowned heads in India. The appeal was immediately responded, to liberally by H. H. the Gaikwar of Baroda and the fruit of his noble gift has appeared in the publication of a Concordance of the four Vedas a favourable review whereof has appeared in a Weekly Edition of the Times of India Consequent to the heavy tax upon his mental energy Swami Nityanand laboured under indifferent health for the past few years. His Plethoric constitution was subject to fatty degeneration of the heart and many a time he complained of difficulty and pain in his respiratory organs. Despite this disadvantage he continued body and soul devoted to the compilation of the Lexicon which has been 3/5th completed and the rest was awaiting completion when he was suddenly attacked with acute pneumonia and despite all the best efforts that human skill and medical science could suggest, within the short space of 10 days the frail hand of Tyrant death hurled this glorious life into eternity on the 9th January 1914.

During his illness Swami Nityanand never showed the least mark of pain or struggle within himself though visibly he was subject to the acute tortures of abnormally high respiration. Whenever asked by his medical attendants like Dr. Rao, M. D. and Dr. K. J. Desai B. A. L. M. & S. as to how he felt, his only stereotyped answer was " Shanti hai " i. e. " Peace is reigning in me " and with this word " peace " in his mouth to the last he passed away peaceably into his abode in Eternity at

his cottage at Vila Parla and mournings observed in the various parts of India by a large circle of his friends and admirers as also by his followers who number millions is indicative of warm tribute paid to his holy memory.

To sum up briefly Swami Nityanand was naturally gifted with a wonderfully happy blend of all that is necessary in a saintly Reformer. He was always in his happiest vein while lecturing and therefore was so impressive an orator that he carried the entire audience with him. As a broad minded and of a profoundly philosophical temperament Swami Nityanand borrowed every good syllable from every branch of doctrine. He highly respected and admired occidental philosophers such as Bacon, Carlysle, Spencer, Kant, Mill, etc. whose work he read with the avidity of a student. Swami Nityanand possessed a valuable library and his selections are the prop of the different branches of science and literature which are at his hermitage at Simla.

As a social reformer Swami Nityanand surpassed all his predecessors. His intellectual athletenss has achieved what Raja Ram Mohan Roy and Justice Ranade could not owing to the want of such powerful literary sinews of war at their disposal and there will be no fallacy to presume that it would be difficult to have his equal if not better for at least a century more.

Lastly it would be no exaggeration to say that he was a wonderful prodigy of retentive memory and an embodiment of everything sublime. His utterances were always charming for their inexorable accuracy in arguments and he is honoured as one of the noblest sons of India who died a hero of his fellow country men and as such he not only deserves to be consecrated a real patriot of the highest order.

The completion of the Vedic Lexicon which literally means an authoritative exposition of antiquarian treasures of the Vedic Lore now has fallen to the shoulders of his pre-eminent colleague Swami Vishveshvaranandji who though not less qualified had never indentified himself with his departed colleague either on a pulpit or a platform but had life-long laboured with his noble

associate in all his noble undertakings and though his unexpe-cted death at a comparatively early age of 54 has undoubtedly flung Swami Vishweshveranundji into a state of inconceivable disconsolation and despondence yet taking into consideration the universal sympathy expressed in the overwhelming number of letters and wires of condolence that poured on him he will try to overcome his affliction consequent to his personal irrepara-ble loss with a courage befitting an austere ascetic of his calibre and culture and carry through the completion of the sublime work that was never undertaken by the sages of the past on account of its arduous nature and thus secure tranquility to the hovering but pious soul of the deceased worthy for whose eter-nal rest peace devout prayers of millions have already been offered to the Throne of the Almighty.

By his devout admirer,
Harishchandra Toolaji

सरस्वती फरवरी १९१४

१३—स्वामी नित्यानन्दजीका देहावसान।

जनवरी शुक्रवारको बम्बईके निकट, बिलापारला नामक स्थानमें, आर्य समाजके सुप्रसिद्ध उपदेशक श्रीस्वामी नित्यानन्दजीका देहावसान हो गया। स्वामीजी संस्कृतके अच्छे विद्वान् थे। आपकी वक्तृता प्रभावशालिनी होती थी। पठनपाठनके सिवा आपका समय लोकोपकारी कार्य्योंमें ही व्यतीत हुआ करता था। आप न केवल आर्य्यसमाज ही की सेवा करते थे, किन्तु जहाँ कहीं उन्हें देश-हित करनेका अवसर मिलता उसे वे हाथसे न जाने देते थे। श्रीयुत लक्ष्मणराव नामक एक सज्जन ने, जयाजीप्रतापमें आपका संक्षिप्त चरित इस प्रकार दिया है:—

"आपका जन्म जोधपुर-राज्यान्तर्गत झालोर नामक ग्राममें, संवत १९१७ में हुआ था। आपका पहला नाम रामदत्त था। आपके पिताका नाम पुरुषोत्तम तथा माताका कृष्णाबाई था। आप गुजराती श्रीमाली ब्राह्मण थे। आपके सहोदर भ्राता गोवर्धनरामजी इस समय बम्बईमें वर्तमान हैं। आपने

पिता विकालत करते थे। आप १९ वर्षकी अवस्थामें, विद्याध्ययनके बहाने, १९३४ में, घरसे निकल पड़े। बहुत दिनोंतक आपका पता भी आपके कुटुम्बियोंको न लगा।

संवत् १९५२ में स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीके आग्रहसे आप एक बार अपने घर गये। उससमय आपके ज्येष्ठ भ्राताने आपको गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेके लिए बहुत जोर दिया, परन्तु आपने किसी तरह इस बातको न स्वीकार किया। उस समय आपकी माता जीवित थीं। उनकी उम्र ७० वर्षके करीब थी। उन्होंने आपकी विद्वत्ता और परोपकार-वृत्ति देख प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिया। आपने अपनी माताको जीवन-पर्यन्त धनसे सहायता करनेका वचन दिया, जिसे आपने उनके देहान्त तक बराबर पूरा किया।

दूसरी बार घरसे निकल कर आप अहमदाबाद, बम्बई, पूना, सतारा आदि स्थानोंमें घूमते हुए काशी पहुँचे। यहां पर स्वामी दयानन्द सरस्वतीके शिष्य ज्वालागिरी संन्यासी आदिसे, अनुमान १२ वर्ष पर्यन्त, विद्याध्ययन किया। संवत् १९३७ में स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीसे आपकी भेंट हुई। दोनों साथ साथ पढ़ते रहे। इन दोनों महात्माओंका साथ अन्त समयतक अकृत्रिम बना रहा!"

स्वामीजीका सम्बन्ध श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीसे बहुत घनिष्ठ था। उनके साथ ही उन्होंने बहुत कुछ विद्याभ्यास भी किया और आर्य्यसमाजकी सेवा भी प्रायः इन्हींके साथ की। स्वामीजी कई वर्षोंसे एक बृहत् वैदिक कोश बनानेमें लगे थे। इस कार्य्यमें महाराजा बड़ोदाकी सम्मति और सहायता थी। सुनते हैं, उन्होंने इस कामके लिए स्वामीजीको १५ हजार रुपये दिये थे। पर यह अधूराही रह गया। स्वामीजीने आर्य्यसमाजकी २६ वर्ष निरन्तर सेवा की।

स्वामीजीका बनाया हुआ पुरुषार्थ-प्रकाश नामक ग्रन्थ बड़े महत्त्वका समझा जाता है। सुनते हैं, स्वामीजी कोई एक लाख रुपयेकी स्थावर और जङ्गम सम्पत्ति छोड़ गये हैं। स्वामीजीके उत्तराधिकारी शायद उनके चिर-सहचारी स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी हैं। एक बार, कानपुरमें इस नोटके लेखकको भी स्वामीजीके दर्शनोंका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उस समयके उनके उत्साह-वर्धक और प्रेमपूर्ण वाक्य कभी न भूलेंगे। आप आसनपर बैठे हुए भोजन भी

करते जाते थे और संस्कृतमें वार्तालाप भी करते जाते थे। सरस्वतीपर स्वामीजीकी बड़ी कृपा थी। सरस्वतीके इसी अङ्कमें स्वामीजीका चित्र भी प्रकाशित हुआ था।

आर्य्यभानु-११-१-१४

स्वामी नित्यानन्दजीका देहान्त।

प्राणप्रिय आर्य्यसमाज तेरे गौरवके लिए, परमात्मन् आपकी वेद वाणीके प्रचारके लिए, जिन्होंने अपना तन मन धन अर्पण कर दिया, जो समाजोंके दूसरे स्वामी दयानन्दजी थे, ऐसा आधार स्तम्भ गत शुक्रवार ता. ८-१-१४ को नहीं रहा।

जिसकी अमृतवाणीसे हमने ५ दिन पूर्व लाभ उठाया था, उस भव्य, कर्तव्यनिष्ठ व्यक्तिके उपदेशोंका लाभ हमें अब कहाँ मिलेगा?

असंख्य आर्य्य समाजके स्थापक, अनेक गुरुकुलोंके उत्पादक, सैकड़ों विधर्मियोंको आर्य्यधर्ममें लानेवाले, ऐसे आर्यवीरकी संगति अब कहाँ?

"मेरे आरम्भ किये हुए वैदिक कोषको पूर्ण किया जावे" यही उनकी अन्तिम इच्छा थी। उनका प्रण था कि "प्राण जाँय तो जाँय वेदाज्ञाका पालन हो।"

इसीके अनुसार आपने अपने अन्तिम संस्कारकी आज्ञा दी।

उनका लक्ष्य यही था कि वेदोंकी आज्ञा पालन करनेवाले धर्मसेवकोंकी वृद्धि हो।

सत्यही स्वामीजी अपने नामके अनुसार **नित्य आनन्दमें** ही रहते। अन्तिम आर्यसमाजको उन्होंने "**आनन्द**" नामक ग्राममें स्थापित किया, और फिर **ब्रह्मानन्द** प्राप्तिके लिए इस लोकसे यात्रा की।

स्वामीजी आप जाइये इस आर्यसमाजकी तो आप अन्त पर्यन्त सेवा करते रहे है।

परमात्मा आपको शान्ति दें और आपके स्थानकी पूर्तिके लिए सवाये दयानन्द और नित्यानन्द उत्पन्न हो अनन्य भावसे यही प्रार्थना करते हुए हम इस दुःखमें शान्ति प्राप्तका उद्योग करते हैं।

खेडा वर्तमान १४-१-१४

भारतभूषण स्वामी नित्यानन्दजी महाराजका स्वर्गारोहण ।

हा ईश्वर, हा दैव, तेरे दरबारमें साधु पुरुषोंकी अत्यन्त आवश्यकता मालूम होती है। जिसके प्रतापसे आज हम क्या सुन रहे हैं ? क्या जाना ? वह यह है कि बम्बईके समीप विलापारलामें ता. ८-१-१४ बृहस्पतिवारको अर्ध-रात्रि पीछे आर्यावर्तकी आर्यसमाजोंके दृढ स्तम्भरूप, आर्य समाजके बम्बई प्रदेशका अग्रेसर महानुभाव श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराजका देहान्त हो गया, भरुच परिषद्में अपने वेदान्त विषयक व्याख्यानसे आपने श्राताओंको आनन्दसे पूर दिया था "आनन्द" जैसे कट्टर सनातनी स्थानमें समाज स्थापित कर वहीं पर अस्वस्थ होनेसे आप विलापारला चले गये थे। वहां आपका स्वास्थ्य विशेष बिगड गया और अन्तमें उन्होंने आर्यसमाज और आर्य पुरुषोंका उत्साह भंग कर उन्हें शोकसागरमें निमग्न किया. सहयोगी आर्यप्रकाश और आर्य समाओंके साथ हमारी हार्दिक सहानुभूति है इत्यादि, नासिक गुरुकुलकी रिपोर्टका प्रथम पृष्ट भी स्वामीजीके वियोग विलापसे पूर्ण प्रकाशित हुआ, और बम्बई आर्य्य समाजमें स्वामीजी कि निधन तिथिपर प्रतिवर्ष एक असाधारण अधिवेशन किया जाता है ।

सप्तम आर्यधर्म परिषदमें स्वागत कमिटीके प्रमुख श्री विश्वेश्वरानंद इन्दिरानंद पंडित बी. ए. एल. एल. बी के स्वामी नित्यानन्द संबंधी उद्गार ।

" परन्तु महाशयगण ! इस आनंदके समयमें केवल एक वस्तुही ऐसी है कि जो इस आनन्दको क्षणभरके लिये विस्मृत कराके हमारे हृदयसे शोकके निःश्वास निकलवाती है और आनंदसे प्रफुल्लित चहरेको ग्लानिकी परछिांईसे कलुषित करती है । इस भव्य सम्मेलनमें इन सुप्रसिद्ध वक्ताओं तथा पंडितोंकी पंक्तिमें कहां है वह दिव्य मूर्ति कि जिसके दर्शनसे उपाधि-

जन्य ग्लानि दूर होके आनंद और शान्ति होती थी जिसके व्याख्यानसे सत्य ज्ञानके श्रेष्ठ संस्कार सर्वत्र स्फुरते थे तथा जिसके उपदेशसे सत्यके जिज्ञासुओंको सहजमें सत्य वस्तुकी प्राप्ति होती थी **गुजरातकी आर्य समाजोंके पालक और पोषक और इन परिषदोंकी हलचलके नेता** परमपूज्य स्वा. नित्यानंदजीको इस परिषद्में सत्कार करनेका सौभाग्य हमको प्राप्त न हुआ । मुझे विश्वास है कि उनका आरोग्य यदि अच्छा न होता वा वह कई कोस दूर होते वा अन्य चाहें उतनी उपाधिमें भी ग्रस्त होते तो भी हमारे अल्प स्वागतको स्वीकार कर अपनी विद्या धर्मपरायणता और उच्चाशय का हमको अमूल्य लाभ देनेमें वे कभी पीछा न करते। उनके प्रभावोत्पादक विशालज्ञान विस्तृत दृष्टि और निर्मल उपदेशके त्रुटिकी पूर्ति कभी नहीं होगी । उनका अवसान स्वकर्मपरायण कर्मवीरके योग्य था । आनंदमें आर्य समाजकी स्थापना करके अपने देहके रक्षणकी चिंता न रखके देहकष्ट उठा गावोंमें प्रचारके लिये जाते हुए उनका मृत्यु हुआ उनके मृत देहपर आर्य समाजोंने तथा सज्जनोंने आंसू बहाये। आशा है कि उनके योग्य स्मारकका बंदोबस्त होगा। परन्तु हम जानते हैं कि **जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः** और इससे उनके स्थूल शरीरके अभावसे शोकग्रस्त हो कर्तव्य विमुख होनेकी अपेक्षा उनके सूक्ष्म स्वरूपका ध्यान कर अपना कार्य परिपूर्ण करनेके लिये अधिक उद्यत रहनेकी जरूरत है ।

॥ ओ३म् ॥

स्वामी श्री नित्यानन्दजी सरस्वतीके ग्रन्थ और उन पर विद्वानोंकी सम्मतियाँ ।

न्यायमर्ति रानडे महोदयने श्रीमान् स्वामीजी महाराजको अपने परिचय पत्रमें "Gifted preacher" की उपाधि दी थी, यह सन् १८९४ से पूर्व की बात है, उस समय तक स्वामीजीने किसी ग्रन्थकी रचना नहीं की थी, पीछे जिस प्रकार पुरुषार्थप्रकाश वेदोंकी शब्दसूची और वैदिक कोषके सम्पादनका कार्य्य आरम्भ किया गया उन सबका वर्णन इस पुस्तकके पूर्व पृष्ठोंमें आचुका है।

स्वामीजीके उपदेशोंसे जो लाभ भारतवर्षने उठाया वह चिरस्थायी रहेगा ऐसा कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं परन्तु जो उपदेश उन्होंने पुरुषार्थ प्रकाश में

...व बद्ध कर दिये हैं उनसे भावी सन्तान भी लाभ उठावेगी। यह ग्रन्थ किस ...टिका है इसका उल्लेख तो श्रीमान् मास्टर आत्मारामजीने अपनी भूमिकामें ...या ही है यहां हम केवल एक सम्मति उद्धृत करते हैं जो एक कट्टर सनातनी ...त्र ने दी थी, वह इस प्रकार है।

श्री वेंकटेश्वर समाचार ।
१-११-१९०१

पुरुषार्थप्रकाश ।

आर्यसमाजके प्रसिद्ध उपदेशक स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी और ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीने श्रीमान् शाहपुराधीशकी प्रसन्नताके लिए इस पुस्तककी हिन्दी भाषामें रचना की है। इसमें ब्रह्मचर्य और गृहस्थाश्रम नामक दो भाग हैं। दोनों भागोंमें अनेक आवश्यक २ विषयोंका आर्यसमाजके सिद्धान्तोंसे प्रतिपादन किया गया है। पुस्तक आर्यसमाजियों के बहुत काम की है। इसमें अनेक बातें ऐसी लिखी गई हैं जो सनातनधर्मके प्रतिकूल हैं; परंतु इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं है कि जिस समाजके अनुयायियोंके लिए यह लिखी गई है वह इससे बहुत लाभ उठा सकता है। सनातन धर्मवालोंके जो कुछ सिद्धांत हैं वे धर्मशास्त्रोंमें भली प्रकार लिखे हुए हैं; परंतु हम जहांतक जानते हैं सर्वसाधारणके लिए उनके अनुसार एक ऐसी पुस्तककी आवश्यकता है जिसमें चारों वर्णों और चारों आश्रमोंका कर्त्तव्य, धर्म, वर्त्तमान स्थिति और भविष्यत् में उनके सुधारके उपाय लिखे हों। हमें आशा है कि ऐसी पुस्तक बनाकर सनातन धर्मावलम्बी विद्वान् इस त्रुटिकी पूर्त्ति करेंगे। ३३२ पृष्ठकी पोथी का मूल्य १॥) है। अजमेरके आर्यसमाजमें मिलती है।

सर्वसाधारण और विद्वत्समुदाय स्वामीजीके प्रस्तावित वैदिक कोषकी रचनाको अत्यन्त परिश्रमसाध्य और वैदिकधर्मके ऊहापोह करनेके निमित्त युगान्तर उपस्थित करनेका साधन स्वीकार कर चुके हैं इस सम्बन्धमें भारत और अमरीकातकके समाचारपत्रोंमें बड़ी चर्चा होरही है, कोषके पूर्वभाग शब्दसूचीके विषयमें ही इतनी समालोचनाएँ निकली है कि उन सबका उल्लेख करनेमें हम असमर्थ है तथापि पाठकोंकी सूचनाके लिये कुछ अवतरण यहां दिये जाते हैं।

न्यूयार्कसे प्रकाशित २३ फरवरी १९११ के नेशन नामक साप्ताहिक पत्रके अङ्कमें, Vernacular literature in India नामक लेखमें श्रीमान् सन्त निहालसिंहजी वैदिक शब्द सूचीके विषयमें इस प्रकार लिखते हैं।

My attention has been called to a splendid concordance of the Vedas recently compiled by Swamis Nityanand and Vishweshwaranand and published under the patronage of the Gaikawad of Baroda which is so well done and printed that it might be the work of an Occidental Savant.

माईसोर राज्यकी प्रतिष्ठित साध्वी नामक पत्रिकाके १ जून १९०९ के अङ्कमें इस प्रकार लिखा गया था।

A VEDIC DICTIONARY.

The Sadhvi 1- June 1909.

We have published in another column the Prospectus which shows the proposed compilation of a Vedic Dictionary. Our readers know who the organisers of this movement are. They are no other than Swamis Nityananda and Visweshwarananda who came to Mysore in 1894 and delivered a course of lectures on practical Vedanta in the Rangacharlu Memorial Hall. The lectures were so popular that His Highness the late Maharaja sent for the Swamis and expressed a desire to hear them. Swami Nityananda delivered two lectures to an audience presided over by His Highness the Maharaja on the "Duties of Kings" and His Highness appreciated lectures so much that he wrote to the Swami and asked what *present* would be most acceptable to him. The Swami wrote back in reply to say that he was a Sanyasi, that he would accept no present from anybody unless it was unforbidden food and drink and some clothing. He thanked His Highness for the offer of a present, and he wrote back to say that if His Highness carried out a thousandth part of the advice given by the holy Rishis of yore, advice that he had the honor of giving to His Highness, he would be more than completely rewarded. It is these Swamis that have undertaken the compilation of the Vedic Dictionary. It may be asked what the use of such a Dictionary is, why the Swamis should undertake it, and how India would benefit thereby. The

Swamis hold that religion is the keystone of the existence, rise and fall of all nations. They are of opinion that the Vedas teach a universal religion, a religion that establishes the fatherhood of God and Brotherhood of Man. They are of opinion that Vedic texts have been misinterpreted by different commentators and that the followers of what was intended to be one Divine religion are driven into many antagonistic religious camps. They hold that if a Vedic Dictionary is compiled and the meanings of Vedic terms be settled, a time will come when people will forget the hostile conventions of caste, colour and creed based upon the questionable encrustations upon the Vedas and the Shastras, and that it would pave the way for the dawn of an era in which there will be *only* two religious entities, *viz.*, *Good and bad*, *Just and Unjust*, *Virtue and Vice*, *Merit and Sin*, *Heaven rnd Hell*, *God and Satan* and nothing else. It is for the attainment of a golden age that they are striving. The work that they have taken in hand costs Rs. 50,000 in all. His Highness the Maharaja, the Gaekwar of Baroda, has contributed Rs. 15, 000 towards the undertaking. They mean to approach the Rulers of other Native States, Princes, Zemindars and others to help the movement. They have engaged the services of some Pandits in Mysore for the purpose. We have no doubt that the amount required will be contributed before long and the work will become an accomplished fact. If the whole sum is subscribed for and paid, they mean to make a present of the Dictionaries to all important Institutions in India and to such of the Pandits and others as can use them to advantage. We sincerely hope that the Swamis' efforts in this direction will meet with the success that they deserve and we further hope that all Princes, Zemindars and wealthy men animated by a spirit of universal brotherhood will generously help the movement.

COMPLETE ALPHABETICAL INDEXES OF ALL THE WORDS IN THE RIGVEDA, SAMAVEDA, YAJURVEDA AND ATHARVAVEDA.

Prepared and published by Swamis Vishwesvaranand and Nityanand, Bombay. 4 Vols.

"Hindu religion, the compilers of this volumes believe, is just now in a bad way, and unless the Hindus get "correct ideas of the original Vedic Religion," there will, they think, be no regeneration for them. "A critical, intelligent and systematic study of their scriptures" is, therefore, to them a necessity. As a help towards such study the Swamis have formulated a very ambitious scheme of work dealing with the interpretation of the Vedas. These, they hope, will be useful not only to the Hindus, but also to non-Hindu antiquarians and philologists, who zealously study the Vedas at present. The volumes before us form the mechanical part of the scheme. Their practical usefulness is, however, not to be underestimated because the nature of the work that goes towards the making of such compilations is mechanical. A close comparison of passages in which the same word occurs is one of the principal foundations on which correct Vedic interpretation is based. Such indexes, as those before us, when well done are, therefore of the utmost value for a study of the Vedas. The present volumes are in that respect very satisfactory. The printing is clean and clear. We have tested the volumes in several places and found the references to be correctly and accurately given. Correctness and accuracy are such rare things in Indian publications that both the compilers and the printers are to be congratulated on the production of these indexes. They are cheap and, therefore, within the means of a wider public than other similar indexes already published. The mention of these latter reminds us that the Swamis make no reference to them whatever in either their English or their Saskrit preface. One would think that the present Indexes were the first of their kind.

There are one or two shortcomings, we should like to notice which detract some what from the usefulness of these volumes.

The Sanskrit preface, which explains the system adopted in giving the references should have been given in each of the four volumes and not only in that of the Index to the Rigveda. In the case of the Atharvaveda there is some divergence in the numbering of the divisions in the different editions and the edition followed in the Index should have been specified "Sirshna." for instance, occurs in 11,3,32 in the edition by Roth and Whitney and in 11,4.1 in that by Pandit. The reference in the present Index agrees with the latter. So in regard to the Index to the Samaveda, it is stated that the subdivisions of the two or three main divisions (called 'ardhas'), of which each 'prapathaka' or (the ten divisions of a 'prapathaka' or lesson) consists, are in some editions numbered continuously for the whole 'prapathaka' in others separately for each 'ardha.' The present Index gives the number of the subdivisions in accordance with the latter, but does not specify the number of the 'ardha.' A direction only is given that if the reference is not found in the first 'ardha' it should be looked up in the second, and if not found there even, in the third, which is obviously a very inconvenient procedure. It would have been much more convenient, if the numbering of the other editions has been followed.

Why the Index to the Rigveda is called Vol. I on the title page is not quite clear.

The principal task undertaken by the compilers, to which these volumes are a mere prelude, yet remains to be done. It is that of giving the etymological and grammatical construction of the words, their "grammatical" meanings, their meanings in the Veda, and the meanings assigned to them in the Veda by different European, Indian and other scholars and by the different sects; of comparing the various interpretation and of pointing out, wherever necessary, their religious, social, moral and physical applications and aspects. This is a vast and costly undertaking. If properly carried out, the work would be simply invaluable. That is, however, to be seen. The Swamis hope to finish the work in eight years "with the help of a competent and adequate staff of pandits, copyists, etc."

Two Sadhus who are doing good work.

The Sadhu, as Sadhus go nowadays, typifies in himself the waste of national energy. The old behests which required the Sannyasin to devote his life to the uplift of people at large are obeyed by few who go under that sacred name. In fact, today one finds that the average Sadhu is no more and no less than a man who does not want to work for his living; but has made up his mind to feed and fatten on the labour of others. This is the height of demoralization and it often expresses itself in a so called "Saint" actually playing the role of "Satan" and lowering the tone of the community in which he lives.

However, we thank our stars that there are still some Sadhus left amongst us who are real Sadhus, and are working for the uplift of the people and thus ensuring salvation for themselves as well as for those they help. To this category belong Swamis Vishveshvaranand and Nityanand who are giving up their entire time and energies to make it possible for the present and coming generations of Indians to take the fullest advantage of their heritage of ages, by compiling, strictly on scientific lines, a concordance of the Vedas and a dictionary of Vedic Literature.

The first work has already been completed and now is available from the Swamis, who live at Shant kuti, Simla. Although it consists of four volumes, each one of which is neatly printed on good paper, the entire set is sold for Rs. 10-0-0. When one compares this with the Rs. 36 demanded by the German firm which has published Max Muller's Concordance of the Rig Veda alone, one realizes the cheapness of the work. And without presuming to hurt the dignity of the Western scholar, we may say that the compilation made by our Swamis is in no way inferior to that of the Occidental savant.

The dictionary of the Vedas and Vedic literature is now being pushed ahead. In it the Sannyasins are aiming.—

(a) To arrange all the words used in the Vedas in alphabetical order and give their etymological and grammatical construction.

(b) To give the meanings attached to these words grammatically, in easy Sanskrit, and explain them with quotations wherever possible.

(c) To give the meanings of these words as found in Vedic literature and in books of a similar character.

(d) To give the meanings assigned to Vedic words by European, Indian and other scholars.

(e) To notice the interpretations given by the different sects.

(f) To state meanings according to the terminology applicable to the Vedas, and to compare the various interpretations, basing arguments on catholic and liberal principles and on upnishads and Brahamans.

(g) Wherever necessary to point out the religious, social, moral and physical application and aspects of words.

Such a work no doubt will be very valuable and we commend its preparation to the public as a cause worthy of encouragement and support.

We may add that the completion of the Con-cordance of the Vedas is due to the generosity of that enlightened Prince, The Gaikwar of Baroda, who stood the cost of preparation and printing-the swamis of course, charging nothing for their services.

He has also donated Rs. 15,000 toward the compilation of the Vedic Dictionary now being pushed ahead. However, this work will require much more money than the Gaikavar's allowance. Therefore the Maharaja has directed his Private Secretary to send the following letter to Swamis Visheslwaranand and Nityanand.

"His Highness has considered your letter with regard to the Vedic kosh. He thinks he can not undertake to spend more than Rs. 15,000 out of Rs. 48,000 required, and he suggests that the remainder may be secured by application to other Princes and Zemindars. The Maharajas of Kashmere and

Mysore would no doubt contribute liberally if appealed to and there are many wealthy and educated land holders in Bengal, such as the Maharaja of Durbhanga who might help. Their orthodoxy would, His Highness believes, be no bar to sympathy, as your *kosh* is to be edited: in a catholic spirit and give all shades and schools of Opinion. When you have secured subscriptions amounting to the required Rs. 33,000, His Highness would complete the sum with Rs. 15,000, or if this can not be done, he would contribute a proportionate monthly sum out of the Rs. 500 required, (*i. e.*, related to 500 as Rs. 15,000 to Rs. 48,000) if you can secure the rest as monthly subscriptions from other Princes and Zemindars. His Highness is laying question before a Committee of Officers and Scholars in Baroda and his final order will be given subject to their advice and suggestions. This letter is meant only to throw out prelimary suggestions and clear the ground a little, so that it has not been thought necessary to deal with all the points in your letter. His Highness further suggests that the letter you have sent to him may, with the necessary modifications, be circulated to different princes, landholders, and men of wealth as an appeal.

"His Highness would like the work to be done under his patronage, but if there should prove to be any difficulty in the matter, he would not press his wish, as he cares more about the work itself than about the name.

"If His Highness can be of any service in this work of national importance, he will always be glad to assist."

Opinions of several Scholars of Sanskrit & English.

CALCUTTA,
21st Sept. 1916.

I have for many years used the alphabetical Index to the Vedas prepared by Swami Vishweshwaranand and Swami Nityanand and have learnt to appreciate its value as an indispensable aid to Vedic studies. The works may rightly be

regarded as a monument of accuracy and scholarly labour, and should find a place in the library of every scholar interested in the progress of Vedic studies. I venture to express the hope that the Swamiji will continue his labours in the same field and will meet with encouragement and sppreciation from all enlightened lovers of Sanskrit learning.

(Sd.) ASHUTOSH MOOKERJEE
KNIGHT, C.S.I., M.A., D.L., Sc., PH. D.,
F.R.A.S., F.R.S.E.,
Saraswati, Shastra-Vachaspati,
and Ex-Vice-Chancellor, Calcutta University.

Swami Vishweshwaranand and Swami Nityanand of the Arya Samaj have done to Students of our Vedic literature a service of incalculable value by publishing a complete Alphabetical Index to the four Vedas. Each Veda has a volume to itself, the Rig-Veda alone taking up nearly 500 pages of three columns each. A note in Sanskrit gives a guide to the use of the index, explaining the significance of the various types and stops. The work has been executed by the Nirnayasagara Press of Bombay with the neatness and finish for which it has acquired a name.

The industry and conscientious thoroughness with which the Swamis have performed their great task are deserving of great praise. The value of the Index to scholars has been testified to by men of eminence in the ancient learning of India, and it will be impertinence on my part to put my testimony beside theirs. But high class work compels admiration, I take the liberty of commending the book to the patronage of the various Darbars and wealthy Zamindars whose pride it has been throughout the ages to honour and assist those that are engaged in learning, teaching and writing books of merit. Every library that pays attention to Sanskrit should have a copy of this Index.

The Swamis projected a greater work by far than this Index, which it is now left to the survivor of them to execute alone. It is no less than a Vedic Encyclopaedia, giving under each word its etymology and grammar, various meanings with

quotations from the famous work of different schools, and its application, wherever necessary, from a social and religious standpoint. Scholarship and loving and reverant industry the Swami can gather together but the great sum required for the Publication is beyond the resources of the ordinary men; and wealthy Indians who love Sanskrit can not find better objects on which to bestow their patronage than the bold enterprise on which Swami Vishweshwaranand has, embarked.

(Sd.) V. S SRINIVASA, SHASTRI, B.A., L.L.B.
SHANTKUTI } Servants of India,
Simla 7th Ocotber 1916. } Society.
and Honb'le member to the Viceroy's Council.

OFFICE OF THE PRINCIPAL, SANSKRIT COLLEGE.

CALCUTTA:
20th September 1916.

I have run my eye over the four volumes of Alphabetical Index to the four vedas prepared by Swami Vishweshwaranand and Swami Nityananda. The value of such an idea can not be overrated in the present day, when the ancient literature of India, especially on its historical and linguistic side is rousing the keenest interest among the savants of the civilized world. The volumes are a lasting monument to the industry and scholarship of the authors, and they will, I hope, prove the stepping stone to the yet higher work the authors have in view. By a strange fatality one of the gifted authors has been carried off by the hand of Death. It behaves all persons interested in the cause of Sanskrit learning to assist in the fulfilment of what appears to me to be an undertaking of monumental importance.

(Sd) SATIS CHANDRA VIDYABHUSAN,
MAHAMAHO PADHYA,
M. A. PH. D.
Principal, Sanskrit College.
CALCUTTA.

I have looked ever the Index volumes of the Vedic Dictionary being prepared by Swamis Vishwesharanda and

Nityanand. These volumes are indispensable to Vedic scholars. The indices are accurate. The Dictionary when ready will be a unique book for India.

(Sd.) RAMAUTAR SHARMA M. A.
VEYAKARNA ACHARYA,
SAHITYA ACHARYA
Professor of Sanskrit, Patna College.

NARIKELDAYA, CALCUTTA.
25th September 1916.

MY DEAR DR. MUKERJI,

Please convey to Swami Vishwesharanand my best thanks for his kind present of his Vedic Index which you handed to me the other day.

I have glanced over portions of the work. It purports to be a complete Alphabetical Index of all the words in the four Vedas. The work is in four volumes, each relating to one Veda and the four volumes cover 980 pages of closely printed matter in three columns in each page. This in work of immense labour and judging from the few instances on which I have verified the references, the work appears to have been performed with much care.

This Index will be of great use to students of Vedic literature. It is intended, as I gather from the Preface to be the first part of a comprehensive Vedic Dictionary, giving the meanings of all the words used in the Vedas, according to different schools of interpretation, illustrated by quotations. Swami Vishweshwaranand is entitled to encouragement and support from every one interested in Sanskrit learning as well for his projected great work, as for the portion of it which he has already finished.

Yours sincerely,

(Sd.) GOOROODAS BANERJEE,
K.C.M.A., D.L. PH.D.,
Ex-vice Chancellor, Calcutta University.
DARBHANGA HOUSE,

SIMLA:
9th October 1916.

The alphebetical index of all the words in the four Vedas compiled by Swami Visheshwaranand and his late lamented brother Swami Nityanand is sure to be of great use to Vedic Students as a book of useful reference. It brings together in four volumes information about every word in the Vedas with great accuracy and enables one to see at a glance where any given word is to be found in the Vedas. The get up and the arrangements leave nothing to be desired.

The importance of a critical study of the Vedas to the students of Indian History, Philosophy and religion is self evident, and any work that makes the study easier is to be welcomed. A glance at the index showing the amount of labour study and research brought to bear on the subject, and the gratitude of every cultured Indian is due to the authors.

I surely hope that the Volumes before me are only the first of a series of works which would advance the better study and affection of the Vedas, especially as the index shows how fitted Swami Vishweshwaranand is for the task.

(Sd) C. V. KUMARSWAMI, SHASTRY,
Judge High Court, Madras.

The *Hindustan Review* has the following in its May number:—

"We are glad to learn that under the patronage of His Highness the Maharaja Gaekwar, Swamis Nityanand and Visheshwarananda, who recently printed in four volumes an Index to the Vedas, are preparing a scientific dictionary of the four Vedas and all Vedic literature, which promises to be a work of great importance. The Swamis are aiming to prepare a lexicon in which all words current in the Vedic times are alphabetically arranged, their etymology and grammatical construction explained, their various meanings, with passages in which they are used, are given and authorities, both foreign and Indian, cited for various interpretations. As is easy to see the book will be a valuable addition to Hindu sacred literature,

and we anxiously await its issuance from the press, in a few months' time. The public has cordially endorsed the Index sent out by the Swamis from their home at Shant Kuti, Simla, which despite the fact that it has been declared by scholars to be equal to anything that has come from the pen of any Western savant, is sold for Rs. 10 for the entire set. We hope that those interested in the ancient lore will patronise the new centre."

Alphabetical Index of the Four Vedas, by Swami Vishveshvaranand and Swami Nityanand.

It is the undeniable title of the Arya Samaj to honour and gratitude from the whole of Hindudom that its great Founder Swami Dayanand Sarasvati and subsequent workers guided by his inspiration have rescued the Vedas and Vedic literature from the fatal neglect into which they had fallen in India. Since the days of Swami Dayanand, a great volume of editions, comments, translations, expositions in Sansskrit and in Hindi has been issued in a steady stream by the leaders and the learned men of the Samaj from Ajmere, Lahore, Kangri and other places.

One of the most valuable of these publications is the Alphabetical Index of all the words in the four Vedas, which has been compiled and published by Swami Vishveshvaranand and his brother the late Swami Nityanand, whose early passing away has been a source of great grief to his brother and his many friends, who had founded hopes of much good work to come upon his great learning in Sanskrit and his scholarly habits. This work may indeed be said not only to be one of the most valuable of such publications, but, in a sense, to be the most valuable, from the standpoint of the scholar and student as such; because while there may be disputes, as regards the merits and accuracy of translations and expositions, between exponents wedded to different views, no such contests are possible with regard to the value of a work of reference, pure and simple, such as this is. Its usefulnss to all students of the Vedas whatever their caste or creed or race or religion, is undeniable and perennial. One volume is devoted to each Veda.

It would no doubt have been better from the consulter's standpoint if all the four volumes had been thrown into one, and the places of occurrence, in each of the Vedas, of each word, shown in the same place in the Index. As it is, the consulter has to look into each of the four volumes separately, for each word that he wants to make sure of. But we have to be grateful for what we have got when we remember the vast amount of labour involved, and not to grumble that we have not received more.

The four volumes together comprise about 1000 large super royal octavo pages of clear, close print and good paper (the place of printing, the Nirnaya-Sagrra Press of Bombay, being by itself a guarantee of good work). The Rig Veda volume occupies about half the bulk. The price is extraordinarily low, *viz.*, Rs. 10/-only, for the set of four volumes. In fact it is something like printing-cost-price.

When we rememeber that there is no other similar work in the field, that its utility is constant, and that the price would have been four or five times as much if it had been compiled and publised in the West, we can only be surprised that the first edition, of 1,000 copies, has not been long exhausted. The kind patronage and financial help of H. H. the Maharaja of Baroda, always a liberal helper in the spread of knowledge, has enabled the Swamis to make a present of the work to the public at cost-price, giving their own labour free, as is the traditional custom of the true Indian Sadhus.

The present writer has owned a copy of the work for some years, and found it of great help in study, and the opinions of established repute, *viz.*, Mahamahopadhyaya Pandit Adityaram Bhattacharya, M. A., and Mahamahopadhyaya Pandit Ganganath Jha M. A., D. Litt., are also reproduced below, in the hope of arresting the attention of the public and securing a greater demand and circulation for this most useful work of reference, for its own sake, as well as for the further purpose of thereby helping on the second portion of the project of the Swamis, *viz.*, an encyclopædic dictionary of all these Vedic

words, giving the various meanings assigned to them by the different interpreters, and illustrative quotations as well.

The work can be had direct from Swami Vishveshvaranand, Shantikuti, Simla, or any of the following agents:—

(1) Arya Samaj Book Department, Girgaum, Bombay.

(2) Jyeshtharam Mukundji, Book-sellers, Kalbadevi Road Bombay.

(3) Panini Office, Bahadurganj, Allahabad.

BHAGAVAN DAS.

While at Simla I have found my abode under the roof of Swami Vishveshvarananda's Shanti Kuti. There my host has shown to me "A Complete Alphabetical Index of all the words" in the four Vedas. Each Veda has a separate volume assigned to it. All these four big volumes contain nearly one thousand pages, each page having three columns of closely printed matter. These four large volumes bear evidence of the labour and enterprise of their two compilers, mine host and his late lamented brother Swami Nityanand.

These very useful volumes of index were brought out as precursors of a comprehensive Vedic dictionary, whose scope may be understood from the following extract from the preface of the Rig-Veda Index.

(*a*) To arrange all the words used in the Vedas in an alphabetical order and to give their etymological and grammatical construction.

(*b*) To give the meaning attached to these words grammatically, in easy Sanskrit, and explain them with quotations wherever possible.

(*c*) To give the meaning of these words as found in Vedic literature and in books of a similar character.

(*d*) To give the meaning assigned to vedic words by European, Indian and other scholars.

(*e*) To notice the interpretations given by the different sects.

(*f*) To state meanings according to the terminology applicable to the Vedas and to compare the various interpretations based on arguments, on catholic and liberal principles, and on Upanishads and Brahmans.

(*g*) Wherever necessary to point out the religious, social, moral and physical applications and aspects of words."

A grand scheme it was that was started, and the realisation of it would have supplied the students of the Vedas with a great guide. But man proposes–and it is not in his power to dispose. Only the volumes of the Index have been completed. And the rest is in the womb of the future. The right hand co-worker of Swami Vishveshvaranand has been snatched away by the hand of Death, and the bereaved survivor has not found encouragement enough to proceed in the great work that was planned. Such is the fate of many an Indian enterprise. It is a national loss—this failure of the realisation of this great undertaking.

The public-spirited and enterprising compiler deserves patronage. These laboriously prepared private volumes of the Index deserve place in all private and public Libraries.

ADITYARAM BHATTACHARYA.

I have looked over the four volumes of the Index to the four Vedas, prepared by Swami Vishveshvaranand and Swami Nityanand. These volumes represent the preliminary stage of a greater undertaking, the preparation of a regular Vedic Encyclopædia, wherein every word contained in the Vedas will be explained, having its etymology traced in accordance with such authoritative texts as those of the Nirukta and other similar works. In fact the work that has been designed appears to have a very much more extensive scope than that of Professor Macdonnell's "Index of Vedic names."

The importance of such a work cannot be over-estimated, especially in view of the interest that has been aroused throughout the world of scholarship in the ancient literature of the East. To scholars of Samskrit this work of immense

importance. Even with the assistance of Sayana, several Vedic hymns still remain un-understood, and in some places actually misunderstood, and in more than one place, even Sayana turns out to be but a doubtful guide. Much of this haze surrounding the Vedic hymns would be clarified if the work herein contemplated were completed and made available to scholars.

The enterprising compiler is going on with his work, and will in time bring it to a successful completion. But the *publication* of an encyclopædic work like this is entirely beyond the powers of an Indian scholar. In fact, no new work of this kind can be made available to the public without special patronage. I fully hope and trust that people interested in honest and serious scholarship will extend to it all the patronage that they can, and will thus help the cause of sound scholarship. As to the soundness of the lines on which the work is being carried on, ample assurance is afforded by the four volumes of Index that have already been published. These suffice to show that they, even as they are, deserve to find a place in every library Vedic—school, college or public—where they may be some consulted with advantage by every earnest student than of Samskrit. Patronage extended to these volumes will, I understand, go a great way forward towards the completion of the subsequent volumes that are in the course of preparation.

GANGA NATH JHA,

Professor of Samskrit, Muir Central College, Allahabad.

Concordance of the Vedas.

Swami Vishweshweranand and his lamented brother and co-worker Swami Nityanand have laid the world of Vedic scholarship under a deep debt of gratitude by their laborious compilation of a concordance of all the words to be found in the four Vedas: the Rig, Yaju, Sama and Atharva, which form

the most ancient and the most sacred books of Hindu religion. The work which was commenced more than a decade ago under the distinguished patronage of H. H. the Gaekwar, has but been partly completed, one of the contributory causes of the length of time being the untimely death of Swami Nityanand and the consequent devolving of the whole labour on Swami Vishweshwaranand. Upto now the Swami has been able to publish four volumes of alphabetical index of all words in the four Vedas, one volume for each Veda. An index of this kind which at a glance tells all the places in which even the most obscure word in each Veda is to be found, will no doubt prove most useful to all Vedic students. Vedic etymology being of a very archaic nature students have always to depend on the context to find out the exact meaning of each word. For instance the word "go" in Sanskrit, which ordinarily means a "cow", happens to be used in more than half a dozen senses in different places in the Rig Veda. The context, therefore, is almost everything in the Veda. A concordance, in these circumstances, such as the Swamis have planned out, must be quite an essential thing for all Vedic scholars. Profs. Keith and Macdonnell's two volumes of Vedic Index published a few years back have, no doubt, their use, but they are incomplete and take note of only some prominent words occurring in the Vedas and not all of them as the Index of the Swami's does. In addition to the alphabetical index so far issued, the Swami proposes to publish further volumes of the Concordance, giving the etymological and grammatical construction of each word, the different meanings of each word in different contexts, and the meanings assigned to these words by Western and Indian scholars and by different sects of Hinduism. A concordance of this kind, no doubt involves work of the most laborious type combined with great precision and scholarship but the Swami by his learning and energy has proved himself to be fully competent to undertake this MAGNUM OPUS. We wish him every success in the undertaking.

Indexes to such works as the Sanhitas of the Vedas are very useful, since they enable a scholar to place before him all

the passages in which a certain word occurs and determine its sense by comparision. Such an Index to the Rigveda Sanhita, compiled by the late Prof. Max Muller and given at the end of the fifth and sixth volumes, has long been before the public But it is unavailable and the Swamis have done good service in publishing it in a more handy form. So far as I have been able to ascertain the Swamis' entries tally with those of Max Muller and are correct.

There is an Index of the Atharva Veda Sanhita compiled by the American Scholar Prof. Whitney. I do not know whether the Swamis had a copy of it when they compiled their Index of that Sanhita; but on comparing the two and the original Sanhita itself I find such mistakes as the followings:—

Page	84	under	घृतपृष्ठ	instead of	9.14,1	the entry should be	9.9,1.
,,	85	,,	घृतम्	,,	7.19,2.	,,	7.2.
,,	,,	,,	,,	,,	7.27,3.	,,	7.26,3.
,,	,,	,,	,,	,,	7.30,1.2	,,	7.29,1:2.
,,	,,	,,	,,	,,	7.77,4.	,,	7.73,4.
,,	,,	,,	,,	,,	7.87,6.	,,	7.82,6.
,,	,,	,,	,,	,,	7.114,2.	,,	7.109,2.
,,	,,	,,	,,	,,	11.7,15.	,,	11.5,15.
,,	149	,,	पुराणवत्	,,	7.95,1.	,,	7.90,1.
,,	,,	,,	पुराणवित्	,,	11.10,7.	,,	11.8,7.
,,	,,	,,	पुरीतत्	,,	9.12,11.	,,	9.7,11.
,,	,,	,,	पुरीषिणम्	,,	9.14,12.	,,	9.9,12.
,,	,,	,,	,,	,,	7.22,1.	,,	7.21,1.

I do not know any such Index already published for the Yajurveda Sanhita and the Samveda Sanhita; Still, I could have compared the Swami's Indexes with the originals. But my infirmities and visual difficulties have latterly increased and I am not in a condition to do more work than I have done.

R. G. BHANDARKAR.

Sangam, Poona, 24th July, 1916.

Extract from a letter dated 2nd August 1909 from Rai Thakur Dutt Dhawan Extra Assistant Commissioner Punjab.

The concordance has been beautifully printed and its compilation must have cost an amount of labour: it ought to

be of great use to students of the Vedas though there are few Indians who care such researches just now. When the Vedic Dictionary promised by the authors is published it will mark an era in the study of Vedic literature. It ought to be a very useful publication. Nityanand and Vishveshwaranand deserve praise for the solid work which they have taken in hand.

Copy of a letter dated 20th July 1909 from B. Narain Bhutji Shita Ram Temple Bantwal South Canara.

The four volumes of the Vedic Dictionary were duly received by me on 26th June. I think the Volumes are real gems in the Vedic literature and are worthy of having by all lovers of the Divine language. The other volumes which are under preparation must I think have kept in suspense the mind of the Sanscrit loving world. Please let me know when will the other Volumes be ready. I am very anxious to get them and feast my eyes with the worth and wisdom contained in them.

Bolarum,
dated 5-11-1910.

To

Swamis Visheshwaranand and Nityanand
Shant Kuti Simla.

Rev: and dear Swamijis,

It is with great pleasure that I have read in the October's Modern Review of the good work that you are doing to humanity in general and India in particular by writing a concordance of the Vedas. It will be against the spirit of the sacred books you are compiling to thank you for the noble work and therefore I do not do it.

I shall be glad if the concordance of the Vedas is written in English or in Sanscrit and also I shall feel obliged by your

kindly sending me a catalogue of any other Vedic books (in English) that are issued from your Mission.

I beg to remain,
Rev : and dear Swamijis,
Your most obedient servant,
Sd. D. Dorraj,
Chintal Bazaar Bolarum Deccan.

Review.

I have seen the Alphabetical Indices to all the Vedas prepared and published by Swamis Vishveshwaranand and Nityanand of Simla and am glad to note that these boons are indeed very useful contributions. Each Index relates to all the words found in one Veda: the arrangement is exceedingly nice and the get up of the books have been carried out in such a fine way as should reflect credit on the printers, the Nirnaya Sagar Press of Bombay. The index to the Rig Veda consist of 484 pages and the volume of the other Indices is as follows :—

Atharva Veda	269 pages.
Yajur Veda	115 pages.
Sama Veda	112 pages.

The study of the Vedas has become necessarily important in the present times of academical advancement, and the more so when we see that whatever has so far been explored has gone much way to keep the cause of historical research. For the Hindu public the Vedas are not only the most ancient poems but they should be considered the objects of great worship in asmuchas they contain the fundamental principles of the true religion and philosophy of the Aryans. Besides the study of these sacred books throws much light on the history of the languages which have had their existence in India since the beginning of the past-vedic times, *e. g.*, the Sanskrit, the Prakrits and the several local dialects. Thus the Vedas are a treasure of information which can be obtained by their critical study. But such a study is rather impossible without the aid of proper indices and lexicons. The Indices under review thus become prominently useful and are sure to

help the scholars in making a comparative study of the vedic words. The compilers have put us under a great debt by copying the vedic accents which are essentially necessary for understanding the meanings of the words.

It is hoped that the public would encourage Swami Visvesvaranand in publishing the Vedic Dictionary which he has got in manuscript and which is mainly the outcome of the long labours and profound scholarship of his late lamented colleague Swami Nityanand.

(Sd). JWALA SAHAI, B. A.,
Additional Sessions Judge,
Multan (Punjab).

Simla,
22nd June 1917.

Swamis Vishweshwaranand and Nityanand have compiled and alphabetically arranged list of all the words used in the Vedas giving reference to the texts where each of these words occurs. This is preliminary to the preparation of a comprehensive dictionary of words used in the Vedas which they undertook to compile under the distinguished patronage of his Highness the Maharaja Gaekwar of Baroda. The works cover 484 pages for the Rig Veda, 115 for the Yajur Veda, 112 pages for Sama Veda and 269 for the Atharva Veda, each having a separate volume. The paper used is thick and printing has been done at the Nirnaya Sagar Press of Bombay which leaves little to be said in respect of the get up of the work. The authors held out in the preface a hope that the dictionary would be complete in about eight years. But it is a pity that one of them, the Swami Nityanand has passed away. It is hoped that his learned colleague, Swami Vishweshwaranand would see his way to bring the project to completion. The list of words published would be a great help to the study of the Vedas and it has the honour of having been very favourably reviewed by eminent oriental scholars and other distinguished men in India. No price is printed on the volumes relating to the first three Vedas but that for volume 4 is Rs. 2. They can be had of the Arya Samaj, Girgaon Bombay.

सरस्वती मई १९०९

वैदिक कोश ।

वेदोंकी भाषा बहुत प्राचीन होनेके कारण अत्यन्त जटिल और दुरूह है । उसका व्याकरण ही जुदा है । जिन्होंने उसे अच्छी तरह पढ़ा है और जी लगाकर वेदोंका अध्ययन और मनन किया है वही, बिना भाष्यकी सहायताके वैदिक मन्त्रों और गाथाओंका अर्थ समझने और समझानेमें समर्थ हो सकते हैं । वैदिक शब्दों और पदोंका वास्तविक अर्थ जाननेमें बड़े बड़े धुरंधर पण्डितोंतक की बुद्धि चक्कर खाने लगती है । इस कठिनाईके होते भी वेदोंका मतलब समझानेकी बड़ी आवश्यकता है । इस आवश्यकताको पूर्ण करनेका आजतक कोई उत्तम साधन नहीं । कोई पुस्तक आजतक ऐसी नहीं बनी, जिसकी सहायतासे थोड़ा पढ़े लिखे लोग भी वैदिक शब्दोंका अर्थ जान सकें । बड़े बड़े पुरातत्त्ववेत्ताओं और भाषा-शास्त्र-विशारदोंमें बहुधा विवाद हुआ करता है कि अमुक वैदिक शब्दका यह नहीं, यह अर्थ है; अमुक शब्द वेदोंमें इतनी दफे अमुक अर्थमें आया है; अमुक शब्द अमुक भाष्यकार या निघण्टुकारने अमुक अर्थका बोधक माना है । इस तरहके विवादोंमें बहुत समय नष्ट हो जाता है और बहुत परिश्रम भी पड़ता है । इससे बचनेका एक मात्र उपाय यह है कि वैदिक शब्दोंका बृहत्कोश तैयार किया जाय और उसमें सारे वैदिक शब्दों और पदोंका सोदाहरण अर्थ लिखकर भिन्न भिन्न भाष्यकारोंके किये हुए अर्थोंका भी निदर्शन किया जाय । इससे वेदाध्ययनमें बहुत सहायता हो सकती है और अनेक दुरधिगम्य बातोंका बोध भी हो सकता है ।

खुशीकी बात है, श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्द और नित्यानन्दजीने इस आयाससाध्य और विद्वत्तासापेक्ष कामको हाथमें लिया है । इस कार्यके महत्त्वको अच्छी तरह समझकर महाराजा गायकवाड़ने पूर्वोक्त स्वामिद्वयका सहायक होना स्वीकार किया है । कोशका काम आरम्भ हो गया है । इस कोशके निर्माणमें नीचे लिखी हुई प्रणालीसे काम लिया जायगाः—

(१) वेदरूपी समुद्रको मथ कर आख्यात, नाम, उपसर्ग, निपात आदि सारे शब्दरूपी रत्न अकारादि क्रमसे एकत्र किये जायँगे । साथ ही उनकी व्याकरण -सम्मत उपपत्ति भी दी जायगी ।

(२) वैदिक व्याकरणके अनुसार प्रत्येक शब्दका अर्थ सरल संस्कृतमें देकर यथासम्भव वैदिक वाक्यावतरणद्वारा उसका स्पष्टीकरण भी किया जायगा।

(३) भारतवर्ष, योरप, अमेरिका और अन्यान्य देशोंके विद्वानोंने वैदिक शब्दोंके जो जो अर्थ किये हैं उन सबका भी उल्लेख रहेगा।

(४) भिन्न भिन्न धर्म्मावलम्बियों और भिन्न भिन्न सम्प्रदायवालोंने जो अर्थ किये हैं उन अर्थोंका भी निदर्शन होगा।

(५) भिन्न भिन्न अर्थोंकी योग्यता अथवा अयोग्यताका तारतम्य दिखलाकर जिस अर्थकी पोषकता वैदिक निघण्टु, उपनिषद् और ब्राह्मण आदि ग्रन्थोंसे होती होगी वही अर्थ ठीक समझा जायगा।

(६) इसके सिवा धार्म्मिक, सामाजिक, तथा भौतिक दृष्टिसे शब्दोंका जो अर्थ हो सकता होगा उसका भी उल्लेख किया जायगा।

मतलब यह कि कोश को सब प्रकार उपयोगी और ग्राह्य बनानेमें कोई बात उठा न रक्खी जायगी। यह बहुत बड़ा काम है; बड़े पुण्यका काम है; बड़े परिश्रम, अध्यवसाय और विद्वत्त्वका काम है। पूर्वोल्लिखित स्वामियुगल को इस सदनुष्ठानके लिए धन्यवाद—" शतशोथ सहस्रशः। "

इस वैदिक कोशकी अभी सिर्फ अनुक्रमाणिका प्रकाशित हुई है। इसमें चारों वेदोंके पदोंकी—सविभक्तिक शब्दोंकी—अकारक्रमसे सूची दी गई है। प्रत्येक वेदके पदोंकी सूची अलग अलग पुस्तकाकार छपी है। कुल पुस्तक चार जिल्दोंमें है। पृष्ठसंख्या सबकी कोई एक हजार है। पुस्तक मोटे कागज पर छपी है। छपाई बम्बईके निर्णयसागर प्रेसकी है और बहुत अच्छी है। पुस्तक बड़े साँचेकी है। प्रत्येक पृष्ठमें तीन तीन कालम हैं।

इस अनुक्रमणिकामें आपको वेदोंके सारे शब्द मिलेंगे। जो शब्द आप चाहें निकाल लीजिए। परन्तु इस सूचके प्रकाशनका केवल यही उद्देश न समझिए। शब्दोंको क्रमसे लिखनेके सिवा एक और बहुत बड़ी बात इसके निर्माताओंने की है उन्होंने प्रत्येक शब्दके आगे मण्डल, अध्याय, सूक्त, प्रपाठक आदिके और मन्त्र-निदर्शक अङ्क देकर यह भी बतलाया है कि अमुक शब्द कहाँ कहाँ पर प्रयुक्त हुआ है। उदाहरणके लिए " देवाः " शब्दको लीजिए। यह शब्द ऋग्वेदमें कोई सौ जगह आया है। आपको इन सारी जगहोंका हवाला इस शब्दके आगे मिलेगा। आप उन उन स्थलोंको देखकर जान

लीजिए कि उसका वहाँ पर क्या अर्थ है। अथवा किस भाष्यकार ने किस स्थलपर उसे किस अर्थका द्योतक माना है। यह बड़े महत्त्वकी बात है। इससे वैदिक पण्डितोंको बेहद लाभ हो सकता है। वे लोग अब तक महीनों मेहनत करके यह जाननेके लिये वेदोंके पृष्ठ उलटा करते थे कि अमुक शब्द अमुक वेदमें कितनी दफे आया है और किस किस अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। उनकी वह मेहनत अब सर्वथा बच गई समझिए। हाँ एक बात लिखना हम भूल गये। वह यह कि प्रसिद्ध संस्कृत—विद्वान् मैक्समूलरकी बनाई हुई वैदिक शब्दोंकी एक सूची बहुत पहलेसे विद्यमान है। उसे इस वैदिक—पद—सूचीके निर्म्माताओंने शायद नहीं देखा। क्योंकि देखते तो उसका उल्लेख वे अपनी भूमिकामें अवश्य करते।

इतनी उपयोगी और इतने महत्त्वकी इस सम्पूर्ण पुस्तकका मूल्य सिर्फ १० रुपये रक्खा गया है। पुस्तक बंबईके गिरगाँव—आर्य्यसमाजसे मिल सकती है। आशा है सरस्वतीके विद्याव्यसनी और अर्थ—समर्थ पाठक इसे मँगाकर जरूर लाभ उठावेंगे और एतद्द्वारा इस अनुपम वैदिक कोशके भावी खण्डोंके प्रकाशनमें सहायता करेंगे।

और भी सरस्वती नवम्बर १९१०

१—वैदिक कोष।

हर्षकी बात है कि कुछ दिनोंसे स्वामी विश्वेश्वरानन्द और स्वामी नित्यानन्दजी एक वैदिक कोष बनानेके सदुद्योगमें लगे हुए हैं। इस कोषमें वेदोंमें आये हुए शब्दोंकी व्युत्पत्ति, सरल संस्कृतमें उनके अर्थ और प्रयोग रहेंगे। वैदिक शब्दोंके अर्थ केवल स्वामीजीकेही किये हुए न रहेंगे किन्तु स्वदेशीय और विदेशीय विद्वानों और अनेक सम्प्रदायोंके आचार्योंके किये हुए भी रहेंगे। इस बड़े कामके लिए ४८००० की आवश्यकता है। इसमेंसे महाराज बड़ोदाने १५००० देनेका वचन दिया है। बाकी रुपया अन्यान्य राजा महाराजाओं और रईसोंसे एकत्र करनेकी सम्मति दी है। आशा है कि इस धनके एकत्र होनेमें देर न लगेगी। कार्य्य बड़ेही महत्त्वका है। यदि स्वामीजी कुछ और लोगोंको अपने साथ सम्मिलित कर एक कमेटी बना लेते तो और भी अच्छा होता।

नवजीवन चैत्र १८७२

१५—वैदिक कोष ।

श्री स्वामी नित्यानन्दजीके स्वर्गवाससे जहाँ अनेक हानियाँ हुईं, वहाँ यह भी सन्देह होने लगा था, कि वैदिक कोषका सम्पादन शायद अब न हो सकेगा। सन्तोषका विषय है कि उक्त सन्देहके दूर होनेकी आशा बँध गई है। श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी अपने शिष्य और परम मित्र स्वर्गवासी स्वामीजीकी आन्तरिक इच्छाको पूर्ण करनेके लिए सर्वतोभावेन सन्नद्ध हैं। कोषका कार्य पुनः आरंभ हो गया है। संक्षेपतः हम यह दर्शाते हैं कि यह कोष कैसा होगा।

यह कोष संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेज़ी इन तीन भाषाओंमें होगा। आज कल इसका सम्पादन प्रसिद्ध वेदज्ञ श्री पं. शिवशङ्करजी शर्म्मा काव्यतीर्थ कर रहे हैं। आपकी सहायताके लिए पं. तीर्थराजजी और एक लेखक है। सम्पादनका क्रम निम्न प्रकार है। प्रथम वेदका शब्द, लिङ्ग, व्युत्पत्ति समास प्रत्ययादि व्याकरण संबन्धी सारी बातें लिखी जाती हैं। पुनः शब्दके अर्थ भाष्यकारोंके ग्रन्थों, ब्राह्मण, उपनिषद और व्याकरण आदिसे दिखलाये जाते हैं। प्रत्येक शब्द की जितनी निरुक्तियाँ मिलती हैं वह सब प्राच्य और पाश्चात्य विद्वानोंकी सम्मति और सम्पादक की समालोचनासहित लिखी जातीं हैं। तदनन्तर उदाहरण उद्धृत करके आवश्यकतानुसार संक्षिप्त और विस्तृत समालोचना लिखकर वेदके ही प्रमाणों द्वारा यह निश्चय किया जाता है कि अमुक अर्थ ही ठीक है; अन्तमें एतद्देशीय और पाश्चात्य विद्वानोंके किये हुये अर्थोंपर संक्षिप्त टिप्पणी लिखी जाती है। उदाहरणार्थः—

(१) कथासंबन्धी शब्द—इन शब्दोंका वैदिकांश दिखलाकर ब्राह्मणोंमें अमुक शब्दकी कितनी वृद्धि हुई उसके पश्चात् महाभारत पुराणादिकोंमें कितनी वृद्धि हुई और उसका वास्तविक तात्पर्य क्या है तथा उसके लोप व परिवर्तन होनेसे क्या २ हानियां हुईं, क्या २ विचार परिवर्त्तन हुये और उस शब्दने विदेशोंमें जाकर क्या स्वरूप धारण किया आदि बातें लिखी जाती हैं। (२) याज्ञिक शब्द-इन शब्दोंका वैदिकांश दिखलाकर श्रौत गृह्य आदि सूत्रोंका आश्रय दिखलाते हुये विस्तृत रूपसे वैदिक प्रमाणों द्वारा समालोचना करके वास्तविक तात्पर्य लिखा जाता है। (३) देवता संबन्धी शब्द-वह देव-

कौन है, वेदमें उसका वर्णन कितने प्रकारसे हुआ है। पुनः ब्राह्मणोंमें उसे क्या स्थान दिया गया है। पुराणोंमें उसे कैसा माना गया है। आज कल किस स्वरूपमें उसके पुजा पाठ स्तोत्रादि होते हैं। विदेशोंमें किस प्रकारसे नाम और पूजाका प्रचार हुआ आदि २ विवेचन लिखा जाता है (४) ऋषि संबन्धी शब्द इनका वैदिक तात्पर्य्य दिखलाकर और कितने सूक्त तथा ऋचाओं के ये ऋषि हैं यह बतलाकर ब्राह्मण आदि ग्रन्थोंसे पुराणों तक जहाँ तक कि उनका इतिहास मिलता है सन्निवेश किया जाता है। इसी प्रकार राजा-वाचक शब्दों पर भी। (५) औषध और रोग वाचक शब्द अमुक शब्द किस वस्तुका नाम है, उसके क्या गुण हैं, लोकमें उसका नाम क्या है। अमुक रोगका वेदमें कितना वर्णन है, सुश्रुत-चरक आदिमें उनका वर्णन कहाँ तक किया है, आधुनिक पाश्चात्य विद्वानोंकी उस रोग पर क्या सम्मति है। यह सब लिखा जाता है। (६) आध्यात्मिक मन आदि शब्दोंपर शास्त्रोंकी सम्मति तथा आधुनिक विद्वानोंकी सम्मतिभी समालोचनासहित लिखी जाती है। (७) पशु और पक्षीवाचक शब्दोंके संबन्धमें प्राचीन और आधुनिक अन्वेषणसे उनके जीवन, रहन, सहन, आयु आदिका पूर्ण विवण रहेगा। स्रुवा आदि यज्ञिय पात्र और समय २ के यज्ञकुंडोंके चित्र भी रहेंगे, सारांश यह कि वेदोंके प्रत्येक शब्दका समालोचनात्मक सम्पूर्ण इतिहास इस कोषमें लिखा जायगा। यह कोष यदि वर्तमान गतिसे ही सम्पादित होता रहा तो अनुमान है कि ८ वर्षोंमें पूर्ण होकर प्रकाशित हो जायगा। इसकी शब्दसंख्या ३०००० के लगभग होगी। समस्त शब्दोंका व्याकरण से सम्बद्ध भाग लिखा जा चुका है और अनुमान है कि ३ मासमें अ अक्षरसे आरंभ होनेवाले शब्दोंका हिन्दी और संस्कृत भाग पूर्णतया सम्पादित हो जायगा। अब तक इसके सम्पादनमें २५०००) रु. से कुछ अधिक व्यय हो चुका है और इतना ही व्यय अभी और होगा। कोशका आकार वाचस्पत्य की ८ जिल्दोंसे अधिक होनेकी संभावना है। आर्थिक सहायता अभी तक श्रीमान् गायकवाड बरोदा नरेशसे ही १५०००) रु. की मिली है जिस में से १२५००) रु. प्राप्त भी हो चुके हैं। शेष २५००) रु. कोषके सम्पूर्ण होनेपर प्राप्त होंगे।

ईश्वर करे कि यह Vedic Encyclopedia शीघ्र ही सम्पादित होकर प्रकाशित हो जिससे वेदोंके अध्ययन, मनन और खोज करने वालोंको सहायता मिले।

"आर्य्य विद्यार्थी"

वेदोंकी सूची

बडोदामें प्रशंसनीय उद्योग ।

व्यंकटेश्वर समाचार–७–७–१६.

स्वामी विश्वेश्वरानन्द और उनके स्वनामधन्यभ्राता स्वामी नित्यानन्द इन्होंने संसारके वेद प्रेमियोंको चारों ऋग् यजु साम और अथर्व वेदके सब शब्दोंकी सूची बनाकर अपना ऋणी बना लिया है ये चारों वेद भारतके सर्वस्व जीवन प्राण तथा धर्मस्तम्भ और सनातन ग्रंथ हैं ।

इस महत् एवम् अद्वितीय कार्यके संरक्षक विद्याप्रेमी महाराजा बड़ोदा हैं। श्रीमान् की संरक्षतामें ही एक पुनीत कार्य गत दशवर्षोंसे अधिक कालसे होता रहा है । अभी यह महत् कार्य सम्पूर्णताको नहीं पहुँचा और इसके संपूर्णताको न पहुँचनेका प्रधान कारण स्वामी नित्यानन्दकी शोचनीय मृत्यु है स्वामी नित्यानन्दके स्वर्गारोहण होनेसे इस कार्यका सब भार अकेले स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीपर पड़ा ।

अभीतक स्वामीजीने ४ भाग सूची वर्ण क्रमसे प्रकाशित कर पायी है । इन भागोंमें एक २ वेदके संपूर्ण शब्द एक २ भागमें दिये गये हैं यह सूची दृष्टि डालनेसे प्रत्येक वेदके उन २ शब्दोंके स्थानको बता देती है वेदमें जिनका ढूंढना सरल कार्य नहीं है यह सूची वेद प्रेमियोंके बड़े कार्यकी हुई है । वेदोंके वाक्य ऐसे जटल होते हैं कि उनके अर्थ जाननेके हेतु प्रत्येक वेद ज्ञानार्थी उसका ठीक २ अर्थ जाननेके लिये अवलंबित रहता है । उदाहरणार्थ "गो" शब्दको ही लीजिये । इस शब्दका प्रयोग ऋग्वेदमें प्रायः कई बातोंमें करना पड़ता है और वेदमें उसका भावही सार है । इस दशामें वेदार्थियोंको इस सूचीसे आशातीत लाभ होगा । प्रोफेसर कैथ और मेकडानलने यद्यपि कुछ वर्ष पूर्ण वैदिक सूचीके दो भाग प्रकाशित किये तो जिनसे कुछ सहायता मिलती है पर वे अधूरे हैं; क्योंकि उनमें विशेष २ शब्दोंका ही अर्थ दिया गया है। स्वामीजीके ढंगपर नहीं । इन वर्णमालात्मक भागोंमें स्वामीजीका विचार व्याकरण और वाक्यविन्याससम्बन्धी सूची बनाकर सम्मिलित कर देनेका है इस सूचीमें प्रत्येक शब्दका व्याकरणके नियमानुसार उद्भव एवम् संगठन प्रत्येक शब्दका भिन्न २ अर्थ जो प्राची और प्रतीचीके वेद विद्वान् तथा अनेक भारतवर्षी जन करते हैं दिया जायगा इस भांति सूची संग्रह बनानेमें जो

परिश्रम करना पड़ता है उसका उल्लेख नहीं हो सकता, पर स्वामीजी अपनी योग्यता परिश्रमशीलता एवम् विद्वत्तासे इस कार्यको किनारे लगा देंगे तदर्थ स्वामीजीको हार्दिक धन्यवाद ।

इन महान् ग्रन्थोंकी रचनाके अतिरिक्त स्वामीजी महाराज प्रायः लेख और निबन्धभी यथावसर लिखा करते थे। आर्य्य समाचार पत्र आपके लेखोंको अत्यन्त आदरसे स्थान दिया करते थे । निम्न विषयोंपर अधूरे और पूरे लिखे हुए आपके निबन्ध अब भी प्राप्त हैं जो सुविधानुसार प्रकाशित होगें।

पुरुषार्थ प्रकाशका राज प्रकरण ।

(१) प्रारब्धका लक्षण और स्वरूप,
(२) वर्णव्यवस्था,
(३) आर्य्यों (हिन्दुओं)के वैदिक अवैदिक धर्मोंका विवेचन ।
(४) प्राचीन आर्य्य ऋषि व उनकी वर्तमान सन्ततिके आचार विचार ।
(५) ब्रह्मजिज्ञासा,
(६) ब्रह्मनिर्णय,
(७) संस्कार,
(८) संस्कृत भूगोल आदि ।

पाठकोंके मनोरंजनके लिए एक संस्कारों पर लिखा लेख यहाँ दिया जाता है। इसकी उत्तमताका पता इनके पाठसे पाठकोंको अपने आप हो जायगा । हमें कुछ लिखनेका अधिकार नहीं ।

वैदिक संस्कार ।

मनुष्य जातिके प्रचलित संस्कारोंमें प्रथम हिन्दूजातिके संस्कारोंका वर्णन करते हैं। हिन्दूधर्ममें मुख्य १६ संस्कार माने हैं परन्तु संस्कारभास्करमें ४० है और कहीं २ पर २५ व १० ही मानें हैं, परन्तु १६ मुख्य हैं। अतः इनकाही वर्णन करते हैं। उनके क्रमशः नाम—१ गर्भाधान २ पुंसवन ३ सीमन्तोन्नयन ४ जातकर्म ५ नामकरण ६ निष्क्रमण ७ अन्यप्राशन ८ चूडाकर्म ९ कर्णवेध १० उपनयन ११ वेदारम्भ १२ समावर्त्तन १३ विवाह १४ वानप्रस्थ १५ संन्यास १६ अन्त्येष्टि इन संस्कारोंका वेदोंमें पता तो लगता है। परन्तु प्रचलित रीतिके अनुसार विधिपूर्वक पता नहीं लगता, हां किसी २ संस्कारका

बीजरूपसे व किसी २ का नाममात्र व किसी २ का कुछ विस्तार रूपसे भी वेदोंमें वर्णन पाया जाता है। अस्तु इन संस्कारोंका विधान ब्राह्मण ग्रन्थोंमें और उपनिषदोंमें भी पाया जाता है। परन्तु इनका यथावत् विस्तारपूर्वक प्रतिपादन पारस्कर आश्वलायन गोभिलीयादि गृह्य सूत्रों व मन्वादि स्मृतियोंमें है परन्तु वर्तमान समय जो हिन्दुओंमें संस्कारोंमें आडम्बर किया जाता है वह सब आडम्बर उक्त ग्रंन्थोंमें किसी भी ग्रन्थमें नहीं पाया जाता। परन्तु निबन्ध ग्रन्थ जो कि बहुत नवीन हैं। उनमें ये आडम्बरकी बहुत सी बातें पायी जाती हैं। परन्तु ये ग्रन्थ प्रमाणिक नहीं माने जाते अस्तु ! प्रत्येक संस्कारमें यज्ञ करनेका विधान है। यज्ञ करना शास्त्र दृष्ट्या व युक्तिसे भी आवश्यक प्रतीत होता है। क्योंकि सुगंधित पदार्थोंके होमनेसे दुर्गन्धकी निवृत्ति द्वारा जलवायुकी शुद्धि होने व शुद्धजल वायुके सेवनद्वारा रोगकी निवृत्ति व बल बुद्धि वीर्य्य पराक्रमकी प्राप्ति होती है। इस लिये यज्ञमें होमका करना परम आवश्यक है। परन्तु सम्प्रति दो एक संस्कारोंके शिवाय अन्य संस्कारोंमें होम नहीं होता और जो होता है उसमें उत्तम सुगन्धित पदार्थोंका होम नहीं होता। अतः नहीं होनेके समानही है। अस्तु इन पूर्वोक्त १६ संस्कारोंमेंसे सम्प्रति हिन्दुओंमें और विशेष करके ब्राह्मणोंमें भी केवल १ नामकरण २ अन्नप्राशन ३ चूडाकर्म ४ कर्णवेध ५ उपनयन ६ विद्यारम्भ ७ विवाह और ८ अन्त्येष्टि ये आठ ही संस्कार प्रायः होते हैं। इनमेंसे किसी २ देशमें एक दो कम व किसी २ देश व जातिमें एक दो अधिक होते हैं, परन्तु ये सब संस्कार यथास्थित विधिपूर्वक नहीं होते। इन १६ संस्कारोंमेंसे प्रथम निषेक (गर्भाधान) संस्कार है। इस संस्कारको कोई भी शास्त्रोक्त विधिके अनुसार नहीं करते; किन्तु पशुवत् विषयासक्तिसे इस क्रियामें मनुष्य प्रवृत्त होते हैं। अस्तु ! अब हम थोडेमें इन संस्कारोंकी योग्यता व आवश्यकताका वर्णन करते हैं। इन पूर्वोक्त संस्कारोंमें गर्भाधान संस्कार सबसे प्रथम और महत्त्वका है यह संस्कार केवल धर्मशास्त्रसे ही सम्बन्ध नहीं रखता, किन्तु वैद्यकसे भी पूर्ण सम्बन्ध रखता है। इसका वर्णन जिस प्रकार श्रुति व स्मृतिमें किया है वैसा ही चरक व सुश्रुतादि वैद्यकके ग्रन्थोंमें भी यौक्तिक व सोपपत्तिक रीतिसे किया गया है, यही संस्कार मनुष्यकी मूलमिति (फौंडेशन) है इस लिये इस बातका अवश्यही विचार करना चाहिये कि कैसे स्त्री व पुरुष संतति उत्पन्न करनेके योग्य होते हैं और किस प्रकारसे उत्तम संतति उत्पन्न हो सकती है इसका विचार वैद्यक व धर्मशास्त्र

दोनोंमें ही क्रिया है जो स्त्री पुरुष बल रूप नैरोग्य व शरीर सम्पत्त्यादिसे सम्पन्न होवें और उत्तम सन्तान उत्पन्न करके उनको योग्य बना सकें; उनको ही इस कर्म करनेका अधिकार है । अन्य दम्पतिको नहीं क्योंकि अयोग्य दम्पतिसे अयोग्यही संतति उत्पन्न होती है और अयोग्य संततिसे मानव जातिकी अवनति अर्थात् अधोगति होती है इस लिये योग्य दम्पतिको ही इस कार्यमें प्रवृत्त होना उचित है अस्तु । वेदोंमें गर्भाधानके विधायक अनेक मंत्र पाये जाते हैं जैसे विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टारूपाणि पिंशतु । आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते ॥ ऋग्वेद । मण्डल १० सू ८४ मं. १ एवं **रेतो मूत्रं विजहाति** अ. मं.७६ यजुर्वेदमें और " **पुमानग्निः पुमानिन्द्रः** " सामवेदमें इसी प्रकार अथर्ववेदका सू.२५ में भी इस विषयको प्रतिपादन किया है। गर्भाधानकी आवश्यकता केवल धर्मशास्त्रदृष्ट्या प्रतीत नहीं होती किन्तु सृष्टिक्रम (नेचर) भी इसकी आवश्यकताको जतला रहा है इस क्रियामें प्रवृत्त होनेकी प्राणिमात्रमें स्वाभाविक पाई जाती है, इतनाही नहीं किन्तु वृक्षादिमें भी यह नियम दृष्टिगोचर होता है कि वृक्ष नष्ट होनेसे पूर्व अपनी जातिको संसारमें विद्यमान रखनेके लिये अपना बीज संसारमें छोड़कर फिर आप नष्ट हो जाता है । बस इससे जान सकते हैं कि गर्भाधान संस्कार एक भड़ा भारी महत्त्वका संस्कार है। यदि हमारे पूर्वज ऋषियोंके सदृश यह संस्कार शास्त्रकी रीतिके अनुसार किया जाय तो परमोत्तम संतति उत्पन्न हो सकती है । इस संस्कार रीतिको चरक विमानस्थान सुश्रुत शरीरस्थान और बृहदारण्यकोपनिषत्में देख लीजिये । विस्तारभयसे यहां पर नहीं लिख सकते, किन्तु इतनाही लिखना काफी (अलं) समझते हैं कि गर्भाधान करनेके समयमें दम्पतीकी जैसे वृत्ति होती है इसका फोटो (चित्र) गर्भाधानमें पड़ता है और वैसीही सन्तति उत्पन्न होती है । इस लिये गर्भाधान संस्कारको शास्त्रोंके द्वारा सावधानतापूर्वक करनाही समुचित है । यह संस्कार गर्भ स्थिति पुंसवनके ज्ञान होनेके दूसरे वा तीसरे मासमें इस लिये करते हैं कि योग्य वैद्य व विदुषी स्त्रीको दो तीन मासके बाद ज्ञात हो जाता है कि यह पुत्ररूप गर्भ है वा पुत्रीरूप है। जब गर्भके पुंस्त्वादि लिंगका ज्ञान हो जाता है तब उसको प्रकट करनेको यह संस्कारोत्सव करते हैं। परन्तु पुंसवन शब्दके अर्थसे व वेदके आशयसे ऐसा ज्ञान होता है, कि पुंसवन संस्कार गर्भाधान संस्कारका ही एक भाग विशेष है । क्योंकि पुंसः सवनम् उत्पत्तिरुत्पादनं वा पुंसवनम् अर्थात् पुरुषका उत्पन्न होना वा उत्पन्न करना

इसका नाम पुंसवन है। प्रयोजन यह है कि स्वरोदय शास्त्र उपनिषद् वा डाक्टरोंसे यह सिद्ध है कि यदि गर्भाधानकी विधिको जाननेवाला पुरुष पुत्रको उत्पन्न करना चाहै तो पुत्रोत्पन्न कर सकता है; और पुत्रीको उत्पन्न करना चाहै तो पुत्री उत्पन्न कर सकता है। ब्राह्मणादि ग्रन्थोंमें भी जो पुंसवनका वर्णन हैं उससे भी यही आशय निकलता है। जैसे **पुमानग्निः पुमानिन्द्रः पुमान्-देवो बृहस्पतिः पुमांसं पुत्रं विन्दस्व तंपुमाननुजायताम्** मं. ब्रा. १-४-३ **आग्नि शमीमश्वत्थआरुढस्तत्र पुंसवनं कृतम्। द्वै पुत्रस्य वेदनं तत्स्त्रीष्वाभरामसि ॥ १ ॥** अथर्वकां. ६ सूक्त ११ जैसे अश्वत्थ पीपल शमीके वृक्ष पर बीज द्वारा आरूढ होकर पुंवृक्षको उत्पन्न करता हैं ऐसेही पुरुष भी स्त्रीसे संगत होकर पुंस्त्वाविशिष्ट वीर्य बीज द्वारा पुत्रोत्पन्न करे यह रहस्य की बात है इस लिये खुलासा करके नहीं लिख सकते। सीमन्तोन्नयनम्-सीमन्तोन्नयन संस्कारको गर्भस्थितिके चौथे मासमें करनेका विधान आश्वलायन गृह्यसूत्रमें है। इस संस्कारका प्रयोजन स्त्रीको केशवेशधारण वस्त्राभरणादिसे सत्कृत करके प्रेम प्रीति दिखलाने व प्रेम बढाने व उस गर्भिणी स्त्रीको प्रसन्न रखनेसे तथा पूर्ववत् सर्व साधारणको गर्भस्थितिका ज्ञान करानेका है। इस संस्कारमें होमादि करके पुरुष अपनी धर्मपत्नीका सन्मान करता है जिससे कि गर्भवती स्त्री का चित्त प्रसन्न रहे और गर्भ की रक्षा वृद्धि व पालनादि यथावत् होकर सन्तति उत्तम हो। सीमन्तोन्नयनके प्रमाण भी इसी प्रकार पाये जाते हैं! **ओ३म् येनादितेः सीमानं नयीत प्रजापतिर्महते सौभागाय। तेनाहमस्यै सीमानं नयामि प्रजामस्यै जरदष्टिं कृणोमि** मं. ब्रा. १-५ जैसे परमात्मा प्रकृतिको कारणरूपसे कार्यरूप सीमा (अवधि) नियमको प्राप्त करके सुंदर विचित्र सृष्टिरूप कर देता हैं ऐसेही में भी इस स्त्रीको सुन्दर वस्त्राभरण व लालन पालनादिसे दीर्घ जीवी प्रजा होनेके लिये गर्भरक्षारूप नियम व सुन्दरताको प्राप्त करता हूं।

४ जातकर्म संस्कार इस संस्कारमें प्रसूत बालकका नालच्छेदनादि व बालकको स्नानादि कराना दुग्ध पान व औषध प्राशनादि तथा प्रसूता की सेवा शुश्रूषादिके सिवाय होमादिसब कृत्य करना होता है। बालक व प्रसूतादिकी रक्षाके सिवाय इस संस्कारका प्रयोजन मुख्य यह है कि सर्व साधारणको ज्ञात हो जावे कि अमुक पुरुषके बालक उत्पन्न हुआ है वा बालिका। इससे बारसा आदि अनेक आपत्तियों की निवृत्ति हो जाती है इस संस्कारके भी प्रमाण वेदों-

पाये जाते हैं **एजतु दश मास्यो गर्भो जरायुणा सह यथायं वायु एजति यथा समुद्र एजति एवा यं दश मास्यो अस्रज्जरायुण सह—** यजुर्वेद अ. ८ मं० २५ जैसे वायु चलता है और समुद्रकी लटें चलती हैं ऐसे ही यह दशमासका गर्भ भी सुख पूर्वक गतिमान् हो प्रसवको प्राप्त होवे.

५ **नामकरण संस्कार**—इस विषयमें **कोऽसि कतमोऽसि कस्यासिको नामासि यस्य ते नाम मन्महि यन्त्वासोमेनातीतृपाम भूर्भूवस्वः सुप्रजा प्रजाभिः स्यां सुवीरो वीरैः सुपोषः पौषैः यजुः अ० ७ मं० २८.** इत्यादि वेदमन्त्र हैं। जगत्में नाम विना कोईभी काम नहीं हो सकता; और नाम रखनेके प्रयोजनसे सब लोग अभिज्ञही हैं; अतः इस विषयमें केवल इतनाही लिखते हैं कि, ब्राह्मणके नामके पीछे शर्मा, क्षत्रियके वर्मा, वैश्यके गुप्त और शूद्रके दास लगानेका विधान किया है।

और यह गुणादिसे वर्णकी पहिचानके लिये हैं। **शर्मवद् ब्राह्मणस्यस्यात** इत्यादि मनु. अ. २ श्लो० ३२–६ **निष्क्रमणसंस्कार** इस विषयमें आश्वलायन गृह्यसूत्रमें लिखा है कि चतुर्थेमासि निष्क्रमणिका अर्थात् ४ मासका बालक हो जावे तब घरसे बाहर फिरानेको ले जावे इसमें भी होमादि करके फिर बालकको गृहके बाहिर फिरानेके ले जानेका विधान है। इस संस्कारका मुख्योद्देश बालकको स्वच्छ वायु सेवन कराना आदि हैं।

७ अन्नप्राशनं।

जब ६ मासका बालक हो जावे तब अन्नप्राशन बालकको करानेका विधान है। हवनादि करके "**अन्नपते अन्नस्यनो**" य. अ. ११–८३ आदि वेदमन्त्रोंसे बालकको ओदनादि अन्नप्राशन कराते हैं। भोजन करनेके लाभ व प्रयोजनको प्रायः सभी जानते हैं। अतः लिखनेकी आवश्यकता नहीं है।

८ चूडाकर्म किंवा चौलकर्म संस्कार।

यह प्रथम वर्ष वा तृतीय वर्षमें होता है। चूडाकर्म अर्थात् बालकके केशोंको छेदन करानेको चूडाकर्म व चौलकर्म कहते हैं। इस संस्कारमें हवनादिके पश्चात् बालकका मुंडन कराते हैं। **येनावपत्सविताःक्षुरेण** ॥ ३ ॥ अथर्वकां० ६ सू० ६३ आदि वेदमन्त्रप्रमाण भी हैं। हजामत बनानेका तात्पर्य भी सबको विदित ही है। इस लिये लिखनेकी आवश्यकता नहीं।

कर्णवेध-

तृतीय वा पांचवें वर्षमें कर्णच्छेद संस्कारका विधान आश्वलायन गृह्यसूत्रादिमें हैं। इस संस्कारमें होमादि क्रिया करके कान विंधाये जाते हैं। इस संस्कारका प्रयोजन बालकोंको भूषणादिसे भूषित कराना ही प्रतीत होता है। परन्तु सुश्रुतमें रोग निवृत्ति भी इसका प्रयोजन बनाया है।

१० उपनयन ऊर्फ मुंजीबंधन।

आर्यजातिमें यह बहुत बड़ा संस्कार माना जाता है। इस संस्कारमें पिता आचार्य व बालक (ब्रह्मचारी) की परस्पर प्रतिज्ञायें होती हैं कि आजके दिनसे तू ब्रह्मचर्यव्रतको धारण करता है ऐसे वचन पिता व आचार्य बालकको कहता है, इसके उत्तरमें बालक कहता है; कि मैं **आग्नेव्रतपते** ब्रह्मचर्यव्रतको धारण करता हूं इत्यादि आचार्य व बालक (ब्रह्मचारी) की प्रतिज्ञायें होती हैं, इस संस्कारमें और कईएक विधि होनेके बाद बालकको यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहराते हैं। यह संस्कार बालकके जन्मसे ९–११–१२ वर्षमें करना लिखा है। उसका मंत्र यह है **यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजंपुरस्तात् आयुष्यमग्र्यंप्रतिमुश्वशुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तुतेजः ॥१॥ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्यत्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि** २ पार. का. २ पूर्वकालमें यह संस्कार चारों वर्णके बालक व बालिकाओंके होते थे और अब भी होने चाहिये इस विषयमें हमने अनेक प्रमाण पुरुषार्थप्रकाशमें दिये हैं। इस संस्कारका मुख्य प्रयोजन यही है कि बालक बालिका ब्रह्मचर्यव्रत्त धारण करके बल बुद्धि वीर्य्य पराक्रमादि गुण और विद्या युक्त होवें। बालकको कमसे कम २५ वर्ष और कन्याको न्यूनसे न्यून १६ वर्षतक ब्रह्मचर्य्य अवश्य पालना चाहिये। इस संस्कारमें यज्ञादि क्रिया करके यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहिनाया जाता है। इस यज्ञोपवीतसूत्रमें ३ तागे होते हैं वे कर्म, उपासना, व ज्ञानानुष्ठानके व ब्रह्मचर्य्य गृहस्थ तथा वानप्रस्थ इन तीनों आश्रमोंमें ब्रह्मचारीके कर्त्तव्यके दर्शक हैं। और भी इसमें बहुतसी फिलासफी है, परन्तु विस्तार भयसे नहीं लिख सकते पूर्वकालमें बालक ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण करके गुरुकुलमें निवास करते थे और जब तक उत्तम प्रकारसे विद्याध्ययन न कर लेवें तब तक वहींपर रहते थे स्वगृहमें नहीं आते थे। ब्रह्मचर्यव्रतके अनेक नियम पालने होते हैं उन सबका मुख्य तात्पर्य यही है कि शारीरिक व मानासिक शक्तिकी

वृद्धि व स्थिति होवे इस विषयमें वेदके प्रमाण भी पाये जाते हैं। जैसे **ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते ॥ ४ ॥ ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् ॥ ५ ॥** अथर्वकां० ११ सू० ५-११-**विद्यारम्भ संस्कार**-इस उपनयन संस्कारकी समाप्तिके साथ ही उसी दिन प्रायः विद्यारम्भ संस्कार होता है। विद्यारम्भकी विधि आदि करनेके बाद बालकको गायत्री मन्त्रका उपदेश किया जाता है। वह गायत्रीमन्त्र यह है। **ओम् भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्** ॥ य. अ. ३६ मं. ३ इस मंत्रका उपदेश करके बालकको संध्यावन्दनादि सिखा कर पुनः विद्याभ्यास कराया जाता है। इसको वेदारम्भ संस्कार कहते हैं ॥ **१२ समावर्त्तन संस्कार** जब विद्या पढ़कर (पास होकर) गुरुकी आज्ञा लेकर विद्यार्थी अपने घरको लौट कर आता है। उस समयमा समावर्त्तन संस्कार होता है। इस संस्कारमें हवनादि करके विद्यार्थीका सन्मान किया जाता है। और खुशी मनाई जाती है इसमें वेदका प्रमाण भी है "**तानि कल्पद् ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपो तिष्ठत्तप्यमानः समुद्रे। स स्नातो बभ्रुः पिङ्गलः पृथिव्यां बहुरोचते** ॥ अथर्व०कां०११ सू. ५ मं. २६॥१३-**विवाह संस्कार**-इस संस्कारको व इसके अभिप्रायको प्रायः सभी जानते हैं इस लिए हमको लिखना उचित नहीं है परन्तु जो सम्प्रति मूर्ख पिता माता छोटे २ बच्चोंका विवाह कर देते हैं यह वेदविरुद्ध है इस लिए इस विषयमें वेदोंके प्रमाण देने आवश्यक प्रतीत होनेसे एक दो प्रमाण देते हैं। जैसे "**कियती योषा मर्य्यतो वधूयोः परिप्रीता पन्यसा वर्यिण भद्रावधूर्भवति यत्सुपेशाः स्वयं सामित्रं वनुते जने चित्** ॥ ऋ० १०-२७-१२ प्रशंसनीय श्रेष्ठ गुणोंसे युक्त वधूको चाहने वाले मनुष्यको कैसी स्त्री अच्छी प्रीतिवाली होती है। इसका उत्तर यह है कि जो कल्याणि अर्थात् सुख देनेवाली सुन्दर रूपवती मनुष्योंमें अपने आप प्रिय पतिको स्वीकारती है वही स्त्री पतिको प्यारी होती है। देखिये इस मन्त्रमें कन्याको स्वयम्वर करनेकीही आज्ञा है **एवं इयं नार्य्युपब्रुते पुल्यान्यावपन्तिका दीर्घायुरस्तुमे पतिर्जीवाति शरदः शतम्** अर्थव० का० १४ (पुल्यानि) मजबूत शरीरवाली (अवन्तिका) गर्भ ग्रहण करने योग्य है इयं यह जवान कन्या (उपब्रूते) सब मनुष्योंके समीप परमात्माकी प्रार्थना करे कि मेरा पतिका दीर्घायु होवे और सौ वर्ष पर्य्यन्त जीवे इस वेदाज्ञासे बाललग्नका निषेध

पाया जाता है । तथा **सोमो वधूयः ॥ ९ ॥** ऋट० मं० १०७५ भाष्यमें स्वयं सायणाचार्यने भी स्पष्ट लिखा है कि **सूर्यपत्ये शसन्ति पतिं कामयमानां पर्याप्त यौवना मित्यर्थः सूर्यां मनसा संहिताय सोमाय वराय सविता तत् पिता ददातू प्रादात् दित्सांचकार:** सूर्यकी पुत्री सूर्या-नामकी लडकी जब (युवती) जवान हो गई और अपने आप वह कन्याका पतिकी कामना व खोज करने लगी तव उसके पिता सूर्यने उसे देनेकी इच्छाकी इस मंत्रसे बाललग्नका खण्डन व स्वयंवर विवाहका मण्डन सिद्ध होता है तथा जो गृह्य सूत्रोंमें वर कन्याके परस्पर प्रतिज्ञा वाक्य हैं उनसे भी यह बात सिद्ध होती है कि छोटे २ बच्चे इस प्रकारकी प्रतिज्ञा नहीं कर सकते, प्रतिज्ञा करना तो दूर रहा; प्रतिज्ञा क्या है और इस प्रतिज्ञाका क्या प्रयोजन है। यह भी नहीं जान सकते इस लिए इन वैवाहिक वैदिक प्रतिज्ञा वाक्योंके प्रमाणोंसे भी यही सिद्ध होता है कि बालपनका विवाह वेद विरुद्ध है । एवं **ऊनषोडशवर्षायाम प्राप्तः पञ्चविंशतिं आदि** सुश्रुतादि वैद्यक ग्रंथोके प्रमाणोंसे व सृष्टिक्रमसे भी देखा जाय तो बालके लग्न सर्वथा अयोग्य व महाहानिकारक है । लग्नके विषयमें पूर्णतया विचार करके वैदिक रीतिसे लग्न करना चाहिये ।
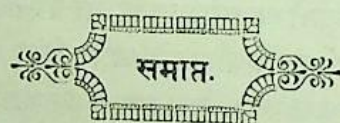
स्वामी श्रीनित्यानन्दजीके व्याख्यानोंका सारांश।

जीवात्मा।

इस व्याख्यानके सभापति श्रीमान स्वर्गवासी सेठ,
लछमीदास खिमजी थे।

बंबई ता. ८ जुलई स. १८९४.

सज्जन गृहस्थो ! आज मेरा विषय "जीवात्मा" है। यह विषय बहुत गहन और सूक्ष्म है। योगी पुरुषोंके लिये भी अगम्य है। तथापि इस विषयमें ज्ञानी पुरुषोंका यथार्थ कथन क्या है, इसे आज मैं संक्षेपमें बतलाना चाहता हूं। कई लोगोंका कथन है कि–'शरीरही आत्मा है। शरीर और आत्मा भिन्न नहीं'। इन्द्रिय-आत्मवादियोंका यह कहना है कि "शरीरकी अपेक्षा इन्द्रिय उत्तम हैं और इसी लिये इन्द्रियाँही आत्मा हैं। इन्द्रियोंसे आत्मा कोई भिन्न नहीं।" मन-आत्मवादियोंका यह कथन है कि "आम्रफलका स्वाद जिह्वाको जान पड़ता है, सुगन्धि नासिकाको, रंग नेत्रोंको, कोमलता त्वक्-इन्द्रियको। परन्तु वह फल 'मिष्ट सुगन्धित, पीला, कोमल, इत्यादि गुणोंसे युक्त है' यह बात एकही समयमें जाननेवाला इन्द्रियोंसे कोई भिन्न है और वह मन है।" इस युक्तिसे मन-आत्मवादी लोग इन्द्रियोंको आत्मा न मानकर मनकोही आत्मा मानते हैं। कुछ अन्य लोगोंका कथन है, कि–"मन आत्मा नहीं है। क्योंकि मनका काम तो संकल्प–विकल्प करना है। परन्तु निश्चयात्मक ज्ञान जिससे प्राप्त होता है वह बुद्धि है।" इस लिये 'मन आत्मा नहीं है। किन्तु बुद्धि ही आत्मा है' ऐसा वे मानते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि "प्राणही आत्मा है। इसके अस्तित्वसे प्राणी जीते हैं और यदि यह न हो तो प्राणी जीवित न र हें, इस लिये प्राण ही आत्मा है।" परन्तु यह कथन भी कितनोंहीके मतसे योग्य नहीं। क्योंकि निद्रामें प्राण रहता है, पर उसमें ज्ञानशक्ति नहीं रहती। प्राण तो एक प्रकारका जड़ वायु है, इस

लिये यह आत्मा नहीं हो सकता। कितनेही लोग शून्यको आत्मा मानते हैं। कुछ एक कहते हैं "शून्यको यदि आत्मा मानते हो तो, हम कहते हैं कि 'जो शून्यको जानता है वही आत्मा है।' क्योंकि पहले तो शून्यको जानही नहीं सकते।" इस प्रकार प्रस्तुत विषयमें बहुतसे मतभेद हैं। वैदिक लोग आत्माका लक्षण इस प्रकार बताते हैं:—" **इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गम्** " इति। अर्थात् जो सुखकी इच्छा करता है, यही नहीं किन्तु उसकी प्राप्तिके लिये प्रयत्न करता है, तथा दुःखकी इच्छा न करते हुए उससे द्वेष करता है और जिससे सारे पदार्थोंका ज्ञान होता है वही आत्मा है। अब हमें यह देखना है कि–'वास्तवमें यह मत कहांतक सच है।' हमारे बड़े बडे ऋषियोंने इस विषयपर बहुतही सूक्ष्म विचार किया है। वे महात्मा आजकलके पुरुषोंकी तरह न थे। वे ४ रों पुरुषार्थोंको अच्छी तरहसे जानते थे। इस क्षणिक संसारमें अहर्निश निमग्न न रहते हुए अरण्यमें रहकर आत्मा और ईश्वरविषयपर सूक्ष्म दृष्टिसे विचार करते थे। उन्होंने इस विषयपर अत्यन्त श्रम करके महान् आविष्कार किया है।

इस लिये 'उनका क्या कथन है' यह आप लोगोंको ध्यानपूर्वक सुनना चाहिये। नास्तिक लोग प्रकृतिवादी हैं। उन्हें चैतन्यका ज्ञान नहीं। वे कहते हैं–" चैतन्य प्रकृतिका एक विकार है।" 'चैतन्य स्वतंत्र नहीं' यह उनका मत है। अब हमें यह सिद्ध करना है कि-'जीव शरीरसे भिन्न है'। जबतक शरीरमें चैतन्यशक्ति है, तबतक ज्ञानशक्ति है। शरीरसे उसका वियोग होतेही शरीर मृतप्राय हो जाता है। ज्ञानशक्ति शरीरका एक अंश अथवा विकार है। अतएव जबतक शरीर है, तबतक ज्ञानशक्ति होनीही चाहिये। पर ऐसा नहीं होता। जैसे, जहां दीपक होता है वहां प्रकाश भी होता है। दीपकसे प्रकाश अलग नहीं हो सकता। इससे यह स्पष्ट है कि–' ज्ञानशक्ति शरीरसे भिन्न है।' यह कैसे कहा जा सकता है कि शरीर और आत्मा एकही हैं। जिसके योगसे ज्ञानोद्भव होता है उसीको जीवात्मा कहते हैं। हाथ, पैर, नाक, कान, इत्यादि अवयवोंमें ज्ञानशक्तिका अभाव है। इसी तरह शरीर स्वयं जीवात्मा नहीं। शरीरके नष्ट होतेहि ज्ञानशक्तिका लोप हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि शरीर और ज्ञानशक्ति यह दोनों भिन्न २ हैं। अब हमें यह विचारना चाहिए कि–"आत्मा शरीरका भाग है या उससे भिन्न है।"

यदि यह मान लिया जाय कि जीव पंचतत्वोंका बना हुआ है' तो पहले यह देखना चाहिये कि पंचतत्वोंमें ज्ञानशक्ति है या नहीं। पृथ्वी, वायु, तेज, जल और आकाश इन पांच तत्वोंमेंसे किसीमें भी जब चैतन्यशक्ति नहीं यह प्रत्यक्ष प्रमाणसे सिद्ध

हुई बात है, तब यह कहना, कि इन पांचतत्त्वोंमें ज्ञानशक्ति है, बिलकुल युक्ति-शून्य है। अच्छा, एक मत यह भी पाया जाता है कि जैसे ऑक्सिजन (प्राण वायु) और हाइड्रोजन वायुके मेलसे जल उत्पन्न होता है, उसी तरह इन पांच तत्त्वोंके संयोगसे जीवशक्तिका प्रादुर्भाव होता है। अच्छा, अब हमें यह जांच करनी चाहिए कि यह सिद्धान्त कहांतक सत्य है। जीवशक्ति प्रारम्भसेही पांच तत्त्वामें अंशतः है या मिश्रणके अनन्तर उत्पन्न होती है। जब प्रारम्भसेही अंशतः पांच तत्त्वोंमें यह शक्ति होगी, तभी मिश्रणके बाद भी उत्पन्न हो सकती है। यह स्वयंसिद्ध है। चैतन्य पृथ्वी में है, अथवा वह पांच तत्त्वोंके मिश्रण होनेके बाद उत्पन्न होता है इन दो बातोंमेंसे एक बात माननीही चाहिए। जीवात्माको यदि पांच तत्त्वोंका एक रूपान्तर माना जाय तो पांच तत्त्वोंमें पहलेहीसे उसका अंशतः होना मानना पड़ेगा। अच्छा, अब इस विषयमें विचार करना चाहिए कि जीव शरीरका एक अंश है, या जीव और शरीर दोनों पृथक् पृथक् हैं। जिस प्रकार सूर्यका प्रकाश सूर्यको नहीं छोड सकता और गुण गुणीको नहीं छोड सकता उसी प्रकार, यदि जीवको शरीरका एक गुण माना जाय, तो वह उसे छोड नहीं सकता। मतलब यह कि शरीरके मृत होनेपर उसे शरीरसे भिन्न न होना चाहिए। परन्तु शरीरके मृत होतेही जीवात्मा उससे विलग हो जाता है। इससे यह कदापि नहीं कह सकते कि वह शरीरका एक अंश है। कैसे शोककी बात है कि आजकल हम लोग अपने कर्त्तव्य कर्मकी ओर ध्यान न दे अज्ञानीकी तरह सिर्फ बकतेही रहते हैं; इसीसे अधिकांशमें हमारी विचारशक्तिका ह्रास हो गया है। अज्ञानताके कारण न हम यह जान सकते और न समझही सकते, कि हमारी स्थिति पहले कैसी थी और अब कैसी है। संस्कृतमें जिसको योग कहते हैं और जिसका ज्ञान हमारे ऋषि–मुनियोंके अनुग्रहसे दूसरोंको होता था वह अब यूरुप, अमेरिकादि देशोंमें "मेस्मरीजम" के नामसे प्रकट हुआ है। महाभारत, शान्तिपर्व में एक कथा है कि—"राजा जनकके दरबारमें सुलभा नामकी एक बाला योगविद्यामें पारंगत होकर आई थी"।

तात्पर्य यह है कि आर्य्यावर्तमें छोटी छोटी बालिकाओंको भी योगविद्याका सम्पूर्ण ज्ञान था। योगविद्याके प्रभावसे आधुनिक विद्वानोंके मतानुसार "मेस्मरीजम" के द्वारा अपने शरीरकी भीतरी रचना जानी जा सकती है और उससे अनेक रोग भी अच्छे होते हैं। इन्द्रियोंके द्वारा जो कार्य नहीं किया जा सकता, वह जिससे किया जाता है वह एक स्वतंत्र शक्ति होती है और वही आत्मा है। जिसे हम आत्मा मानते हैं, आधुनिक डाक्टर उसे "ब्रेन" कहते हैं। वे ब्रेनकोभी अन्य इन्द्रियों-

की तरह शरीरका एक अंश बतलाते हैं। तब तो, आधुनिक डाक्टरोंके कथनानुसार, जो मनुष्य स्थूल शरीरका हो उसकी आत्माभी विशाल होनी चाहिए, पर शरीरकी विशालताके अनुसार आत्मा विशाल नहीं होता। कई लोगोंका कथन है कि "मेस्मरीजम" के योगसे विविध समाचारोंका जानना और इसी तरह पूर्ण योगाभ्यासके साधनसे पुनर्जन्मादि स्थितियोंका जानना असम्भव है। हमारे देशमें सौ दोसौ वर्ष पहले यदि कोई कहता कि यूरुपमें बैल, घोडा इत्यादिसे चलाई जानेवाली गाडी सिर्फ अग्नि और जलके योगसे चलती है। तो लोग उसे मूर्ख और पागल कहते। रेल निकलनेके पूर्व विमानकी बात कोई सच न मानता। यही हाल पुनर्जन्म और आत्माके अस्तित्वका भी समझिये।

हम लोग अपनी प्रगाढ़ अज्ञानताके कारण इस बातको बिलकुल सच नहीं मानते और हमारे बड़े बड़े विद्वान् जो अपने ग्रन्थोंमें ऐसीं बड़ी बड़ी बातें लिख गये हैं उन्हें हम सिर्फ मनोरंजक उपन्यास या अरेबियन नाइट्की कहानियां मानते हैं!। पर वास्तवमें पूर्वकालका यह हाल न था। जैसे सूर्यकी किरणें, जहाँतक जगह मिलती है, वहांतक फैलती जाती हैं, उसी प्रकार योगियोंकी शक्ति योगके प्रभावके अनुसार बढ़तीही जाती है। आत्मा चर्मचक्षुसे नहीं देखा जा सकता। वह सिर्फ ज्ञानचक्षुसेही देखा जा सकता है। शरीर और आत्मा दोनों भिन्न भिन्न हैं। जैसे तप्त लोहकी अग्नि जब उससे अलग हो जाती है तब दिखाई नहीं पड़ती, पर वास्तवमें वह लोहेसे अलग ही है; उसी प्रकार शरीर और आत्मा भी भिन्न २ हैं। अब यह देखना चाहिए कि इन्द्रियोंकी तरह आत्मा क्या एक भिन्न वस्तु है? प्रत्येक अवयवमें आत्मा नहीं होता। वस्तुतः सब अवयवोंमें आत्माकी शक्ति व्यापक रूपसे रहती है। फूल 'लाल, सुगन्धित और कोमल है' यह देखने और जांचनेका काम केवल आत्माका है। इससे स्पष्ट मालूम होता है कि इन्द्रियां आत्मा नहीं। यही हाल मनका है। जैसे अक्षि (आंख) की शक्ति देखना है उसी प्रकार मनकी शक्ति जानना है। मन कुछ साक्षात् जीव नहीं है। सारांश यही है कि–'जीव इन्द्रियोंसे सर्वथा भिन्न है।' ऋग्वेदमें कहा है कि तीन पदार्थोंके अन्दर सारी सृष्टिका समावेश है। "**द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते**" इत्यादि। वे तीन पदार्थ प्रकृति, जीवात्मा और परमात्मा ये हैं। जीव शरीरसे भिन्न है। शरीरका नाश होता है, पर जीवका नाश नहीं होता। वह अनादि अविनाशी है। **नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः** अर्थात् "अग्नि, पानी या शस्त्र उसका नाश नहीं कर सकते।" इससे सिद्ध होता है कि–'जीव अविनाशी है।' चींटीसे हाथीतक सबमें जीव है। "अहम

ऽस्मि " " I am" " मैं हूं " यह प्रत्येक मनुष्य कहता है । अपने २ जीवकी रक्षाके लिये प्रत्येक प्राणी प्रयत्न करता है । इससे भी प्रगट होता है कि जीवका अस्तित्व सर्वमान्य है ।

" Evolution Theory "

(विकासवाद) और " सांख्यशास्त्र " में सृष्टि—उत्पत्तिके विषयमें वर्णन किया गया है । इस विषयमें चार्ल्स, डार्विन, हर्बर्ट स्पेनसर इत्यादि अनेक तत्त्ववेत्ताओंने विचार किया है । सब पदार्थोंका विचार करनेके बाद सांख्यशास्त्रमें आत्माका विषय अत्युत्तम रीतिसे समझाया गया है । जैसे अन्नसे दूध, दूधसे दही, दहीसे माखन, माखनसे घी और घीसे बाष्प इत्यादि अनेक रूपान्तर होते हैं, उसी प्रकार शरीरकी भी दशा है । अन्नसे वीर्य, वीर्यसे गर्भ, गर्भसे शरीरकी उत्पत्ति, बादको बाल्यावस्था, शैशवास्था, किशोरावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था और अन्तमें मृत्यु । इस प्रकार शरीरके अनेक रूपान्तर होते हैं । शरीरकी सारी अवस्थाओंमें आत्मा रहता है । उसके अनस्तित्वका अभाव है । हम सब पदार्थोंको जानते हैं और जानना यह एक चैतन्यशक्तिकाही गुण है, वह चैतन्यशक्ति आत्माके विना हो नहीं सकती । सूर्य है तभी प्रकाश है, रातको सूर्यके न रहनेसे उसका प्रकाश भी नहीं रहता; जब प्रकाश दिखे तब जानना चाहिए कि सूर्य भी है । उसी प्रकार हम जानते हैं—'कि हममें चैतन्यशक्ति है ।' इससे स्पष्ट मालूम होता है कि आत्मा है । चैतन्यशक्ति है इसी लिये शरीरके सारे व्यापार होते हैं । वह यदि न हो तो उसी क्षण सारा मामला बिगड़ जाय । आधुनिक डॉक्टर तो अभी इसी शंकामें पड़े हैं कि—' जीव है या नहीं । ' परन्तु हमारे प्राचीन विद्वान् वैद्य इस विषयमें बहुत अच्छा ज्ञान रखते थे । चरक, सुश्रुत आदि ग्रन्थोंमें जहां अष्ट धातुओंका वर्णन है वहां जीवका भी वर्णन है । आजकलके विद्वद्वर्य लोगोंकी बुद्धि साकार पदार्थोंकोही जान सकती है; निराकार पदार्थोंके जाननेमें वह कुण्ठित हो जाती है।

जिस पदार्थका ज्ञान इन्द्रियोंसे नहीं हो सकता, उसके लिये इन्द्रियोंका ही उपयोग करना कितनी भारी भुल है । हमारे पेटमें यदि दर्द हो तो उसे हमारी आखें कैसे देख सकती हैं ? और कान कैसे सुन सकते हैं ? । उसे जाननेके लिये तो बुद्धिकीही आवश्यकता है । इसी प्रकार इन्द्रियोंसे परे वस्तु ज्ञानद्वाराही जान लेनी चाहिए । वैशेषिक शास्त्रमें कहा है—" **आत्मन्यात्ममनसोः संयोगविशेषादात्मप्रत्यक्षम्** " । अर्थात् मन और आत्माका विशेष सम्बन्ध होनेसे आत्माका यथार्थ ज्ञान होता है । इनका विशेष सम्बन्ध यदि न हो तो वह ज्ञान नहीं होता ।

आत्मा और मनका सम्बन्ध सदैवका है। किन्तु इस सम्बन्धसे आत्मबोध नहीं होता, यही कणाद ऋषिका भी कथन है। प्राचीन पुरुष आज कलके जेंटलमैनोंकी तरह होटलोंमें बैठ बर्फ, सोडा, शरबतादि वस्तुओंका भक्षण कर व्यर्थ गप्पें मारनेवाले न थे। किन्तु उदरपोषणके निमित्त धान्यका एक एक कण निर्जन वनमें रहकर जनसमूहके लिये सर्वोपयोगी परमात्मवादके विचारमें अहर्निश मग्न रह कालक्रमण करते थे। अपनी सारी आयु उन्होंने इसी भांतिके सूक्ष्म विचारोंमें हमारे कल्याणके लिये व्यतीत की। अतएव उन महत्माओंके विचार अत्यन्त मूल्यवान और महत्त्वपूर्ण हैं। हर्बर्ट स्पेन्सरके समान ग्रन्थकारोंके एक दो ग्रन्थ पढ़कर आज कलके नवयुवक विद्वान् अपने प्राचीन ऋषियोंकी निन्दा करने लगते हैं यह कितने शोककी बात है।! हमारे ऋषियोंने जो जो मार्ग और जो जो शिक्षा बतलाई है, उसपर अवलम्बित न रहते हुये जब हम उनके मार्गके देखेविना यह शंका निकालते हैं कि- 'जीवात्मा है या नहीं' तब आपही बताइये इसमें किसका दोष है ?। हमारा वा हमारे गुरुजनोंका ?। हमारे हाथमें एक लकड़ी है और हम वह लकड़ी एक अन्धे पुरुषको बतलाते हैं, तथा उसके विषयमें हम उससे बहुत कुछ वर्णन करते हैं, तथापि उसके ध्यानमें वह बात नहीं आती तो क्या इससे हमको यह मान लेना चाहिए कि 'वास्तवमें लकड़ी नहीं है ?' अन्धेकी दृष्टि नहीं इसमें हमारा क्या दोष ? इसी प्रकार यदि हमें आत्माका ज्ञान न हो तो इससे यह नहीं कह सकते कि—आत्माका अस्तित्वही नहीं।' न समझना अपनाही दोष है। 'हम आत्मसम्बन्धी विषयका यथायोग्य विचार नहीं करते, पर एकदम स्वच्छन्दतासे निश्चय कर बैठते हैं।' यह उत्कृष्ट मार्ग नहीं है। आज कलके डाक्टरोंका मत है कि— "चैतन्यशक्ति ब्रेन (मस्तिष्क) में रहती है। क्रियाजनक और ज्ञानजनक तन्तु ब्रेनसे निकलकर शरीरके सब भागोंमें फैले हुये हैं और उन्हींसे सारा व्यवहार चलता है।" इन भाइयोंसे हमें इतनाही पूछना है कि जब सारे शरीरमें ज्ञानतन्तु फैले हैं तो, कल्पना करो कि हमारे हाथमें महाव्यथाकारक एक व्रण हुआ है; उसकी वेदना जागृतावस्थामें तो होती है परन्तु जब हम गाढ़ निद्रावश होते हैं तब हमें वह नहीं जान पडता इसका क्या कारण है ?। ज्ञानतन्तु उस समय भी तो अपनी अपनी जगहमें रहते हैं परन्तु निद्रामें दुःखका ज्ञान क्यों नहीं होता ?। इससे हमें स्पष्ट मालूम होता है कि—'ज्ञानतन्तु और जीवात्मा दोनो भिन्न भिन्न हैं।' डाक्टरोंका यह कथन कि मस्तिष्कमें ज्ञानशक्ति है, भ्रमसे युक्त है। इनके कथनानुसार शरीरका प्रत्येक परमाणु ४० दिनोंमें अपना स्थान छोडकर दूसरी जगह चला जाता

है; उनकी वह क्रिया बराबर अव्याहत होती रहती है। हाथके परमाणु कितनेही वर्षमें पैरके तलवेमें या शरीरके किसी अन्य मार्गमें चले जाते हैं। इस प्रकार सात वर्षोंमें वे सारे परमाणु निकल जाते और उनके स्थानमें दूसरे नवीन परमाणु उत्पन्न होते हैं। यदि एक पुरुष एक वर्ष अथवा छः मासतक प्रतिदिन दो सेर पेड़ा खाय तो इस क्रमके अनुसार कितने मन पेड़े उसके पेटमें होने चाहिएं और उसका पेट कितना फूल जाना चाहिए? परन्तु ऐसा नहीं होता। जिस प्रकार गंगाका जल आगे बढ़ता है और उसकी जगह नवीन जल आता है उसी प्रकार हमारे शरीरकी भी दशा है। अर्थात् प्रत्येक वस्तुका रूपान्तर होकर अन्तमें वह नाशको प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार सात वर्षोंमें यदि शरीरके सब परमाणु निकल जाकर दूसरे नवीन उत्पन्न होते हैं तो यह देखना चाहिए कि हमारे उपर्युक्त दृष्टान्तके साथ इस बातका मेल कहांतक मिलता है? एक ब्राह्मणका छः वर्षका लडका वेदाध्ययनके लिये काशी गया था। वह वहां रह-कर साठ वर्षकी अवस्थातक अध्ययन करनेके बाद अपने घरको लौटा। बालपनमें जो वस्तुएं उसके देखनेमें आई थीं उन सबका स्मरण उसे अब भी है, इतने दीर्घ समयमें भी उसकी ज्ञानशक्ति और स्मरणशक्तिका नाश नहीं हुआ। ऐसी दशामें डाक्टरोंके उपर्युक्त मतकी वास्तविकता कितनी है सो सहजही मालूम हो सकती है। एक बार दो बार इस प्रकार क्रमशः दस बार जब ज्ञानतन्तु नवीन उत्पन्न होते हैं तब स्मरणशक्ति न रहनी चाहिए पर वास्तवमें यह ठीक नहीं है। यदि परमाणुही ज्ञानजनक तन्तु हों तो ज्ञानका नाश हो जाना चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं होता। ज्ञानतन्तु और आत्मा भिन्न भिन्न हैं, इससे स्पष्ट हो जाता है कि परमाणु शरीरसे निकलते रहते हैं पर आत्मा उस समय बना रहता है, और केवल उसीसे ज्ञान होता है। इसी लिये ज्ञानकी प्राप्ति बड़े श्रमसे होती है। वैदिक लोग मानते हैं–'कि जीवकी उत्पत्ति और नाश नहीं होता।' क्रिश्चियन और मुसलमान जीवको आदि-अन्तयुक्त मानते हैं। उनका कथन सृष्टिनियमके सर्वथा विरुद्ध है; क्योंकि 'जिसकी उत्पत्ति होती है, उसका नाश होना ही चाहिए' यह नियम है। जीवको जो अविनाशी मानते हैं वे पुनर्जन्मको भी मानते हैं; किन्तु कई लोग पुनर्जन्म स्वीकार नहीं करते। यह विषय बहुत ही सूक्ष्म है। संस्कृतमें इस विषयपर जो ग्रन्थ हैं उन्हें आज कलके हमारे बी. ए. एम्. ए. समझ नहीं सकते। ईश्वर, जीवात्मा, पुनर्जन्म इत्यादि न माननेवालोंसे हमारा प्रश्न है, कि तुम्हारी शंकाका मूल हेतु क्या है? प्रश्न करनेमें चार उद्देश्य रहते हैं। पहला जानकारी प्राप्त करनेके लिये, दूसरा अनुमति लेनेके लिये, तीसरा जानकारी करा-

नेके लिये, और चौथा सिर्फ कुत्सित रीतिसे दोष निकालनेके लिये । इन चार प्रकारोंमेंसे तुम्हारा प्रश्न किस प्रकारका है ? सच्चे धर्मजिज्ञासुपनसे पूछनेवाले विरलेही हैं । परन्तु निन्दाका उद्देश रखकर पूछनेवाले असंख्य हैं । इस जगत्में सृष्टिके नियमानुसार प्रत्येक वस्तुका रूपान्तर होता है । उसी प्रकार जीवका रूपान्तर क्यों न होना चाहिए ? सूक्ष्म रीति और शान्तचित्तसे विचार करनेवालेको तत्काल मालुम हो जाता है कि पुनर्जन्म है या नहीं ? जैसे शरीरमें रज, मांस, उत्पत्ति, वृद्धि, नाश, इत्यादि भिन्न भिन्न रूपान्तर होते हैं वैसेहि जीवकी भी दशामें रूपान्तर होना चाहिए । यही पुनर्जन्म है । एक जन्म छोड दूसरा धारण करना जीवका रूपान्तर कहलाता है । पुनर्जन्म न माननेवाले पुरुषोंका यह आक्षेप है कि—" यदि पुनर्जन्मका अस्तित्व है तो हमें पूर्वजन्मका स्मरण क्यों नहीं होता ? चूं कि हमें पुनर्जन्मकी याद नहीं रहती, इस लिये यह मानना चाहिए कि पुनर्जन्म नहीं ।" उनका यह कथन ऊपरसे तो सच्चा भासता है, परन्तु इस शंकाका समाधान क्या है सो देखिये । जीव जिस जगहसे आता है, उस जगहका ज्ञान उसे नहीं रहता । मुसलमान लोग यह मानते हैं कि—" जीवको ईश्वर स्वर्गसे इस संसारमें भेजता है तब वह माताके गर्भमें प्रवेश करता है " परन्तु ' हम कहांसे आये ' इसका ज्ञान उसे नहीं रहता । जीवका ज्ञान यदि जीवको नहीं होता, तो क्या हमें यह मानना उचित है कि—' जीव है ही नहीं ? । ' जब हम छः महीनेके बालक थे, तब हमारी मा कौन, बाप कौन, और बहिन कौन यह न जानते थे । इससे क्या यह मानना योग्य है कि—हमारे मा, बाप, भाई, बहिन इत्यादि कोई नहीं थे ? । ' यही हाल पुनर्जन्मका है । जैसे बीजमें वृक्ष मौजुद है, परन्तु यदि पानी देकर वह जमीनमें बोया न जाय और उसकी योग्य रक्षा न की जाय तो उसका वृक्ष नहीं बन सकता है । यही हाल जीवकाभी समझना चाहिए । जीवकी दो शक्तियां हैं; सामान्यशक्ति और विशेषशक्ति जागृतावस्थामें सामान्यशक्ति और विशेषशक्ति यथास्थित होती हैं । स्वप्नावस्थामें विशेषशक्ति सूक्ष्म स्वरूपमें रहती है और सुषुप्तिमें उसका लय होता है इससे उस अवस्थामें कुछ जाननेकी शक्ति नहीं रहती । जहांतक जीवकी शक्ति ठीक ठीक अपनी जगहपर रहती है वहांतक वह सब जान सकता है । पर जब वह ठीक जगहपर नहीं होती तब वह कुछ भी नहीं जान सकता । बाल्यावस्थामें जो जो बातें होती हैं उनका हमें स्मरण नहीं रहता । इससे यह कैसे मान सकते हैं कि— ' उस समय कुछ थाही नहीं, अथवा जीवही न था ? ' वास्तवमें बात यह है कि

उस समय ज्ञानशक्ति अत्यन्तही सूक्ष्मावस्थामें होती है । पंतजलि ऋषिनें कहा है कि–'योगसे पुनर्जन्म जाना जा सकता है ।' *

महाभारतमें इस विषयके अनेक दृष्टान्त हैं । योगशक्ति खूब बढ़ानी चाहिए । पर हमारे समान मध्यम स्थितिके लोगोंसे यह नहीं हो सकता । कितनेही लोग एकदेशी अँगरेंजी ग्रन्थ पढ़ उनके मनमाने झूठे सांचे विचार लेकर विद्वत्ताका आडम्बर दिखलाकर यह कहा करते हैं कि–'हमारे शास्त्रोंमें कुछ नहीं । वे बिलकुल झूठे हैं ।' पर हम समझते हैं, कि ऐसे लोगोंको अपने शास्त्रोंकाकुछ पताही नहीं है । आज कलके शिक्षित लोगोंके मुखसे जो सदा यह वचन निकला करते हैं कि–'हमारे पूर्वज मूर्ख थे । हमारा धर्म कोरा आडंबरमात्र है; अत एव मिथ्या है । हममें पहले कुछ भी पुरुषार्थ नहीं था'। ऐसे वचन कहना और उनको सुनना क्या थोड़े दुर्भाग्यकी बात है ? जब कि एक आधुनिक प्रामाणिक अँगरेजी ग्रन्थकार हमारे कलाकौशल्यके विषयमें आदर प्रदर्शित करता है और अपने ग्रन्थमें स्पट रीतिसे स्वीकार करता है कि–इसी देशसे सारी विद्या हमारे यहां आई है'। तब हमारे भाई (अल्पज्ञानी) निन्दक ग्रन्थोंको पढकर अपनी निन्दा करहे हैं यह कैसी शोक-जनक बात है ? पहले आर्य्यावर्त सब कलाओंका मुख्य स्थल था । इस विषयमें प्रसिद्ध राजर्षि कवि भर्तृहरि कहते हैं:—

† पुरा विद्वत्ताऽऽसीदुपशमवतां क्लेशहतये ।
गता कालेनासौ विषयसुखसिद्ध्यै विषयिणाम् ।
इदानीं तु प्रेक्ष्य क्षितितलभुजः शास्त्रविमुखान् ।
अहो कष्टं सापि प्रतिदिनमधोऽधः प्रविशति ॥ १ ॥

एक क्रिश्चियन मिशनरी बिशपने अपने व्याख्यानमें कहा था कि "यद्यपि हमारे धर्मशास्त्र (बाईबेल) में पुनर्जन्मके विषयमें कुछ नहीं कहा गया,

---

* महायोगेश्वर भगवान् कृष्णने भी गीतामें अर्जुनसे कहा है:—
बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप ॥ अ० ४-५–

† अहा ! कैसे दुःखकी बात है जो विद्या पहले पंडितोंको चित्तका क्लेश दूर करनेका कारण थी, वही विद्या कालकी गतिसे विषयी लोगोंके विषयसुख सिद्ध होनेका कारण हुई और यह देखकर महान् कष्ट होता है कि आजकल राजाओंके शास्त्रविमुख होनेसे वह रही सही विद्याभी प्रतिदिन अधोगतिकोही प्राप्त होती जा रही है ।

तथापि यह बात नहीं कि पुनर्जन्म माननेवाले हमसे कुछ प्रत्युत्तर न कर सकें " । 'ईश्वर न्यायी है' यह जगत्के सारे शास्त्रोंका सिद्धान्त है । उससे कालत्रयमेंभी अन्याय नहीं हो सकता । तब फिर कोई अन्धा, कोई लंगडा, कोई दरिद्री, इस प्रकार जो अनेक लोग दुःखी देख पडते हैं, इसका क्या कारण है ? परमात्माके न्यायी राज्यमें क्या वास्तवमें ऐसा हो सकता है ? नहीं । सच तो यह है कि अपने शुभाशुभ कर्मोंके अनुसार न्यायरीतिसे सबको दण्ड मिलनाही चाहिए और यदि वह इस जन्मके अनुसार न हो तो अन्य-जन्म कृत कर्मका परिणाम होना चाहिए । अच्छा, पुनर्जन्म न माननेवालोंसे हमारा यह प्रश्न है कि जो पुण्य करता है वह तो स्वर्गको जाता है और और जो पाप करता है वह नरकको प्राप्त होता है । पर जो न पुण्य करता है न पाप करता है, समताका आचरण करता है उसका मरनेके बाद क्या होता है । स्वर्ग-प्राप्ति होनेके योग्य पुण्याचरण न करनेसे जब स्वर्ग नहीं मिलता, और नरक प्राप्त होनेके योग्य पापाचरण न करनेसे जब नरक भी नहीं मिलता तब उसकी क्या गति होती है ? इस प्रश्नका उत्तर कोई नहीं दे सकता । अतएव पुनर्जन्म लेना पड़ता है । इससे भी स्पष्ट है कि—'पुनर्जन्म अवश्य है' अन्य अनेक युक्तियोंसे सिद्ध हो सकता है पर समय बहुत हो गया है, इससे विशेष विवेचन करना मैं ठीक नहीं समझता ।

इति शम् ।

मनुष्यजन्मकी सफलता।

१५ जुलाई सन् १८९४ को फ्रामजी कावसजी इन्स्टीटयूट बम्बईमें रावबहादुर आनरेबिल जस्टिस (महात्मा) महादेव गोविन्द रानडेकी अध्यक्षतामें ब्रह्मचारी (स्वामी) श्री नित्यानंदजी महाराज (सरस्वती) ने " **मनुष्यजन्मकी सफलता** " विषयपर व्याख्यान दिया । वह व्याख्यान इस प्रकारे है—आजका हमारा विषय " मनुष्यजन्मकी सफलता " है । यह सफलता मनुष्यको किस प्रकार प्राप्त हो सकती है, इसी विषयपर आज हमें विवेचन करना है । मनुष्यकी प्रकृति अनेक प्रकारकी है । परन्तु इस जगत्में सारी मनुष्यजातिका दो विभागोंमें समावेश हो सकता है। एक विद्वान् और दूसरे अविद्वान् । अविद्वान् लोग रेलवेके इंजिनकी गतिकी तरह चलनेवाले होते हैं । उनमें सारासार-विचारका अभाव होता है । इंजिन केवल

चलनाही जानता है; 'अमुक स्थलमें कौनसा निश्चित स्थान है ? यह भावनगर या सूरत है' इसका उसे लेशमात्रभी भान नहीं होता । बस, अविचारी लोगोंका आचरण भी ऐसाही होता है । वे गतानुगतिकताके अनुसार केवल खानपानमें निमग्न रहकर अपनी सारी आयु व्यर्थ गंवाते हैं। हमारा कर्त्तव्य क्या है, हमारा जन्म सार्थक कैसे हो, इत्यादि विचारोंकी ओर उनका कुछभी ध्यान नहीं रहता । यह बात मनुष्यमात्रको अवश्यही जाननी चाहिये–'कि हमारा कर्त्तव्य क्या है ?' अथर्ववेदमें कहा है:–"यथा अहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथार्तवऋतुभिर्यान्ति साकम् ।"

अर्थात् "जिस प्रकार रात, दिन तथा ऋतु एकके बाद दूसरी आती है, उसी प्रकार हे मनुष्य ! तू अपना कर्त्तव्य कर"। तुम अपना कर्तव्य रातदिन नियमित समयपर करो। जिस प्रकार पाठशालाका विद्वान् शिक्षक एशियाखंडका भूगोल पढ़ाते समय पहिले अपने शिष्योंको उसका सामान्य ज्ञान कराता है, फिर उसके बाद प्रत्येक देशविशेषका ज्ञान कराता है और इन बातोंका ज्ञान करानेके लिये जिस प्रकार नकशेकी सहायता लेता है, क्योंकि केवल पुस्तकके द्वारा भूगोलका ज्ञान उत्तम नहीं हो सकता, इसी प्रकार परम कृपालु ईश्वरने हम सबको वेदरूपी पुस्तक और सृष्टिरूपी नकशेके आधारसे यह बतलाया है कि–'मनुष्यका कर्त्तव्य क्या है।' वही आज आप सब भाइयोंके समक्ष मैं यथाशक्ति निवेदन करता हूं। जिस पृथिवीके ऊपर हम सब निवास करते हैं, वह अपना कर्तव्य करनेमें कभी नहीं चूकती। प्रतिदिन चौबीस घंटेमें वह अपने आसपास एक बार घूम आती है और वर्षमे एक बार सूर्यकी प्रदक्षिणा करती है। आप्, तेज, वायु, आकाश, सूर्यचक्र इत्यादि भी अपने २ कार्यमें नहीं चूकते । अच्छा, यदि इन जड वस्तुओंकी ओर ध्यान न देकर चेतन प्राणियोंको देखें तो वे भी अपना अपना कर्तव्य योग्य रीतिसे करते रहते हैं। इसी प्रकार हमारी इन्द्रियांभी अपने अपने कर्तव्य यथानियम पालती रहती हैं । इस विस्तीर्ण ब्रम्हांडमें ऐसी एक भी वस्तु दृष्टिपथसे नहीं गुजरती, जो अपना कर्त्तव्य न बजाती हो ।

तब फिर सबसे श्रेष्ठ और ज्ञानी जो मनुष्य प्राणी है, वही यदि अपना कर्त्तव्य भूलकर व्यर्थ भूभाररूप होकर, रहे तो कितने दुःख और सन्तापकी बात है ? कर्त्तव्यका विषय बहुतही व्यापक है। हमारा कर्त्तव्य अनेक भांतिका है। परन्तु आत्मरक्षा, जीविका, सन्तानरक्षा, समाजसंस्था, मनोरंजन और धर्म तथा उपासना इन छ भागोंमें उसका समावेश होता है । इसीका हम अब संक्षिप्त रीतिसे विवेचन करते हैं; क्योंकि आप सब बहुश्रुत और विद्वान् हैं । चरक नामके ग्रन्थमें कहा है—" प्राणैषणा

धनैषणा परलोकैषणेति । आसांतु खल्वेषणानां प्राणैषणा तावत् पूर्वतरमापद्यते । कस्मात् ? प्राणपरित्यागे हि सर्वपरित्यागः" अर्थात् प्रत्येक मनुष्यको प्राणकी, धनकी और परलोककी यह तीन प्रकारकी इच्छा होती हैं । प्राणकी रक्षा करना मनुष्यका पहला कर्त्तव्य है । धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष इन चारोंकी प्राप्ति होना मनुष्यजन्मकी सफलता है, और यह बात अवश्यही प्राणपर अवलम्बित है । यदि शरीरकी आरोग्यता अच्छी न हो तो इनमेंसे किसीकी भी प्राप्ति न होगी । इसीलिये आत्मरक्षण मनुष्यका पहला कर्त्तव्य कर्म है । प्रत्येक मनुष्यको शरीरकी आरोग्यता रखनेके लिये तद्विषयक ज्ञान प्राप्त करना चाहिये ।

परन्तु इस प्रकारका ज्ञान प्राप्त करके तदनुसार अपनी देहकी रक्षा करनेवाले आजकल हमारे देशमें कितने लोग हैं ? गर्मीके दिनोंमें जब प्यास अधिक लगती है, तब उसे मिटानेके लिये विना सोचे समझे गटगट बहुतसा पानी पीकर अपना शरीर बिगाडनेवाले हम लोगोंमें कुछ थोडे नहीं हैं । नियमविरुद्ध चलकर अपना आरोग्य बिगाडनेवालोंके अनेक उदाहरण मिलेंगे । इस देशमें ऐसे लोग कुछ कम नहीं हैं जो मजदूरी करके, गरीबी और अति दुःखसे अपना तथा अपने कुटुम्बका निर्वाह नहीं करते; दिनभर मजदूरी करके दो तीन आने पैदा करनेवाला अपने बालबच्चों-का और अपना पोषण जब अच्छी तरह नहीं कर सकता, तब वह दुःखी जीव—चाहे उसमें अन्नकी गठरी तीन कोस ले जानेकी शक्ति न हो तो भी पेट भरनेके लिये दो मन अनाजकी गठरी छै कोस ले जाकर अपना स्वास्थ्य बिगाडता है और जल्दी मौतके पंजेमें फंस जाता है ।

अब मध्यम श्रेणीके लोगोंकी स्थिति देखिये । उनको प्रातःकाल आठ बजे नौकरीपर उपस्थित होना पड़ता है । बारह बारह घंटा काम करना पड़ता है, तब कहीं निर्वाहभरके लिये दस पन्द्रह रुपये बेतन मिलता है । काम करते करते शिथिल पड़ जाता है पर वह बिचारा करे क्या ? खानेके लिये तो प्रतिदिन सुबहशाम चाहियेही ।

ऐसी मध्यम स्थितिके लोगोंकी दुर्दशा है । अब बड़े बड़े विद्वानोंकी दशा निराली है । बी. ए. ,एम्. ए., एल्. एल्. बी. इत्यादि पदवियां प्राप्त करनेमें बहुत परिश्रम करना पड़ता है तब कहीं उन्हें कोई अच्छी नौकरी या रोजगार मिलता है । पर शरीरसे बिचारे क्षीण हो जाते हैं, इस लिये उनसे विशेष परिश्रम नहीं हो सकता । सिर्फ दिखानेभरके लिये यह लोग गाड़ीघोड़ेमें बैठे हुए फिरा करते हैं । यही उनका आनन्द है । उनको देखकर स्कूलके विद्यार्थी यह लालसा करते हैं कि हमभी

बी. ए. एम. ए. हो जायं तो हमको भी ऐसेहि आनन्द करनेको मिलें इस कारण अत्यन्त परिश्रम करके शरीरके आरोग्यका ध्यान न करते हुए विद्याभ्यास करते हैं। इसके सिवा स्कूल और कालेजोंमें फिलासफी (दर्शनशास्त्र) इत्यादि गहन विषय सीखनेके लिये माथापच्चीभी करनी पड़ती है। फिर घरके कष्ट अलगही हैं। स्वयं तो दुर्बल हैं और घरमें सोलह सत्रह बर्षकी स्त्री भी है, गृहस्थीका काम सम्हालना ही चाहिये, यह भी एक बड़ा दुःख समझिये। बडी कठिनाई और परिश्रमसे कहीं एक आध परीक्षा पास कर ली, अब नौकरीकी चिन्ता लगी। उसमें भी अवसरपर कामयाबी नहीं हुई। अब इसमें शरीरका क्या दोष है? मन खराब रहता है, आंखें अन्दर घुसी जाती हैं, और अन्न भी अच्छी तरह नहीं पचता! अन्तमें वह बेचारा शीघ्रही यमलोककी यात्रा करता है!! मनुष्यगणनासे यह बात जानी गई है, कि— "अन्य लोगोंकी अपेक्षा बेचारा गरीब ग्रेजुएट बहुत जल्दी मर जाता है"। (वर्तमान शिक्षाप्रणालीका यही कुफल है) क्या ईश्वरकी उसके ऊपर कोई ऐसी निर्दयता थोड़ीही है कि वह जल्दी मर जावे। उस परम दयालुने तो कमसे कम सौ वर्षतककी मनुष्यकी आयु, नियत की है। ग्रेजुएटोंके जल्दी मर जानेका कारण यही है कि— 'शिक्षा इत्यादिका बोझ उनके ऊपर बहुत भारी आ पड़ता है।' ऐसे लोग बहुत थोडे हैं, जो अपने शरीरका स्वास्थ्य ठीक रखनेके विषयमें कुछ विचार करते हों। प्रत्येक मनुष्यको वैद्यकसम्बन्धी थोड़ा बहुत ज्ञान होनाही चाहिये। आश्विनमें करेला खानेसे पित्तकी वृद्धि होती है और कार्तिकमें दही खानेसे ज्वरादिक प्राप्त होते हैं। इस लिये इस बातका ज्ञान प्रत्येक मनुष्यको होना चाहिए कि अमुक ऋतुमें अमुक बस्तु सेवन करनेसे प्रकृति ठीक रहती है। विशेष कर आधिव्याधिका मूल कारण हमारा प्रमादही है। व्याधिग्रस्त होनेके बाद औषधोपाय करनेसे कितनी हानि होती है! ऐसे रुग्ण व्यक्तिको पुत्रकलत्र भी जो अत्यन्त प्रिय होते हैं नहीं सुहाते। कार्यकी हानि, उपयोगी समयका नाश, औषधोपचार—सम्बन्धी खर्च, घरके लोगोंकी चिन्तितावस्था, डाक्टरोंका कष्ट इत्यादि अनेकानेक आफतें आ पडती हैं और फिर एक बार जो प्रकृति बिगड जाती है तो फिर वह सुधरकर पूर्ववत् कभी नहीं होती। इसी लिये महर्षि पतंजलिने योगशास्त्रमें लिखा है कि:—**हेयं "दुःखमनागतम्"। अर्थात्** प्रत्येक मनुष्यको यह प्रयत्न करना चाहिये कि भविष्यमें दुःख न आने पावे। सबसे पहला कर्त्तव्य शरीरकी रक्षा करना है। व्याधि होनेके पहलेही सब भाइयोंको सावधान रहना चाहिए। देखिये, यह कितनी लज्जाकी बात है कि हमारे भाइयोंको इस बातका जराभी ज्ञान नहीं रहता कि हमें सदैव किस प्रकारके अन्नका सेवन

करना चाहिये । मनुष्यकी साधारण आयुमर्यादा १०० वर्षकी है। " **जीवेम शरदः शतं** " ऐसा वेदमें वर्णन है । " **आयुषं जमदग्नेः** " इत्यादि इसके प्रमाण हैं। योगाभ्यासके बलसे ३०० वर्ष पर्यन्त मनुष्य जी सकता है। परन्तु आजकल १००० में सिर्फ १० मनुष्य कदाचित् ऐसे निकलेंगे, जो १०० वर्षतक जीवित रह सकते हों । इसका मुख्य कारण यही है कि हम ब्रह्मचर्य्य—आचरण, खान, पान इत्यादि बातोंपर बिलकुल ध्यान नहीं देते । मनुष्य प्राणी यदि यह अच्छी तरह जानता हो कि—'आत्मरक्षण क्या है और शास्त्रके अनुसार वह कैसे किया जाता है ।' इस बातका ज्ञानरखनेवालाही तो सौ वर्ष तक सहजही जीवित रह सकता है । **हमारा दूसरा कर्त्तव्य जीविका** है । शरीरका पोषण करनेके लिये मनुष्यको कोई न कोई उद्यम करनाही चाहिए । उद्योगाके विना किसीका निर्वाह नहीं हो सकता । सारा संसार उद्योग करता है, परन्तु बहुत थोड़े आदमी इस बातपर ध्यान रखते हैं कि—'उद्योग ठीक है या नहीं । अनेक लोग प्रारब्धकेही भरोसे बैठनेवाले होते हैं । हिन्दु और क्रिश्चियन या मुसलमान आदि विजातीय लोगोंके प्रारब्धके माननेमें मतभेद है । हम अपने पूर्वजन्मोपार्जित कर्मको प्रारब्ध समझते हैं और यह लोग खुदा (ईश्वर) की इच्छाको प्रारब्ध मानते हैं । हम समझते हैं कि हमको जिस फलकी प्राप्ति होती है वह सब पूर्वजन्मके कर्मानुसार है । परन्तु यह जानना चाहिए कि विना उद्योग केवल भाग्यके भरोसेही, फलप्राप्ति नहीं होती । महाभारतमें लिखा है:— **यथा क्षेत्रं मृद्भूतं अद्भिराप्लावितं तथा । जनयत्यङ्कुरं कर्म नृणां तद्वत्पुनर्भवम्** ॥ शां० प० अ० ३२१ श्लो० ३२. पूर्वजन्मका कर्म केवल बीजरूप है । वह बीज यदि उद्यमरूपी भूमिमे बोया नहीं गया, किन्तु सन्दूकमें रखकर डाल दिया गया तो उससे फल कैसे मिल सकता है ? यदि वह योग्य स्थलमें बोया गया है, खाद डाली गई है, जल सिंचन किया गया है, तो फलकी आशा रखी जा सकती है । प्रकाश और दृष्टि इन दोनोंके संयोगसे वस्तु दृष्टिगोचर हो सकती है । केवल प्रकाश या केवल दृष्टिसे ईप्सित फलकी प्राप्ति नहीं होती । इसी प्रकार उद्योग और प्रारब्धके संयोगसे फलप्राप्ति समझनी चाहिए । केवल प्रारब्धसे कुछ फल नहीं मिलता । उद्योगको विशेष प्राधान्य दिया गया है । महाभारतमें व्यासमुनिनें बतलाया है:—

यश्च दिष्टपरो लोके यश्चापि हठवादिकः ।
उभावपि शठावेतौ कर्मबुद्धिः प्रशस्यते ॥

योहि दिष्टमुपासीनो निर्विचेष्टः सुखं शयी ।
अवसीदेत्स दुर्बुद्धिरामो घट इवोदके ॥

म० भा० व० प० अ० ३२।

जो पुरुष प्रारब्धपर सारा विश्वास रखकर उद्योग नहीं करता और चुपचाप बैठा रहता है वह नष्ट हो जाता है । संसारमें प्रारब्धका अवलम्बन करके रहनेवाला और "यद्भावि तद्भवति"–"जो होना होगा सो होगा" कहनेवाला मूर्ख है । उद्योगके विना सब व्यर्थ है । उद्योगमें बुद्धि लगानेवाला पुरुष श्रेष्ठ बनता है । इस समय हम सब जिस भवनमें एकत्र हुए हैं वह कुछ आपही आप प्रारब्धसे निर्माण नहीं हुआ । जब अनेक पुरुषोंने अनेक प्रकारका उद्योग किया है, तब यह मन्दिर अस्तित्वमें आया है । 'उद्योगसे क्या कार्य्य होता है और प्रारब्धमें विश्वास रखनेसे मनुष्यकी क्या दशा होती है' यह बात इंगलेंड और हमारे भारतवर्षकी दशा देखनेसे सहज-ही मालूम हो सकती है । शुक्रनीतिमें कहा है–**"धीमन्तो वन्द्यचरिता मन्यन्ते पौरुषं महत् । अशक्ताः पौरुषं कर्तुं क्लीबा दैवमुपासते"** ॥ ये महात्मा, कि जिनका चरित वन्दनीय है उद्योगकोही श्रेष्ठ मानते हैं । पुरुषार्थहीन क्लीब या नपुं-सकही उद्योगको नहीं मानता, और प्रारब्धका शोर मचाता तथा उद्योग नहीं करता है । कवि कहता है–

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति । लक्ष्मी–
दैवेन देयमिति कापुरुषा वदन्ति ।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या
यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः ॥

उद्योगसे लक्ष्मीकी प्राप्ति और सब कार्य्योंकी सिद्धि होती है । इस लिये सब भाइ-योंको सर्वथा सतत उद्योग करना चाहिये । उद्योग करनेके बाद जो "**यदि न सिद्ध्यति कोत्र दोषः**" ऐसा कविका वचन है इसका अर्थ बडे २ पदवीधर विद्वान् करते हैं कि–"यत्न करनेके बाद यदि कार्यसिद्धि न हो तो इसमें हमारा क्या दोष ? हमसे जितना बना उतना हमने किया; अब हमारा कोई दोष नहीं रहा ।" परन्तु यह अर्थ करनेमें ये लोग बडी भूल करते हैं । कविके कहनेका अभिप्राय वास्तवमें ऐसा नहीं है । "कोऽत्र दोषः" अर्थात् "यत्ने को दोषः?" अर्थात् यत्न करनेमें कौनसी त्रुटि रह गई ?

हमारे लिये क्या सर्वशक्तिमान् ईश्वरको उद्योग करना चाहिये ? हमको जो रोटीकी सदैव आवश्यकता रहती है वह क्या ईश्वर कर दिया करे ? ईश्वरका काम पृथ्वी आदि सृष्टिकी सब वस्तुओंकी रचना करना है और वह उसने किया है और करता भी है । जीवका काम जीवको करना चाहिए । 'ईश्वर देगा तो हम खायँगे' ऐसा कहना भ्रमसे भरा है । उद्योग अनेक प्रकारका है, जिसको जो अच्छा लगे उसे वह करना चाहिये । सारांश, शरीरकी रक्षाके लिये उद्योग सबको करनाही चाहिये। प्रत्येक मनुष्यको ब्रह्मचर्य व्रतका आचरण करके कमसे कम २५ वर्षतक विद्याध्ययन करना चाहिये । इसके बाद् धनोपार्जन करके फिर विवाह करना चाहिये । प्राचीन कालमें यही प्रणाली थी । आजकल बहुतसे " जेंटिलमैन " धर्म छोड द्रव्योपार्जन करने लगते हैं । धर्मत्याग करनेपर अधिक धन मिलता हो तो भी उसका त्याग नहीं करना चाहिये। जिस धर्मसे परिणाममें दुःख प्राप्त हो वह सच्चा धर्म नहीं । ऐसे धर्मका त्यागही करना चाहिये । जिस धर्मसे अपना हित है उसीको धर्म कहना चाहिये । और वास्तवमें धर्म है भी वही । इस समय सात सात, आठ आठ वर्षके बच्चोंका, जिन्हें यह भी नहीं मालूम कि विवाह क्या है और उसका क्या उपयोग है, विवाह कर देते हैं यह कितनी खेदजनक बात है ? राजपुतानेमें एक अच्छे गृहस्थके घर विवाहका उत्सव था । उसे मैंने स्वयं देखा । वर पांच छः वर्षकी अवस्थाका था । विवाहका मुहूर्त रातका था । वर कन्या ऊंघने लगे । तब उनको एक तरफ सुला दिया । फेरे फिरनेके पहलेकी सारी विधि पुरोहित महाराजने समाप्त कर ली थी । अब फेरा तो वरराजाकोही फिरना चाहिये । इस लिये उसका बाप उसके पास जाकर उठाने लगा। कहा—भाई ! उठ अब फेरा खानेका समय आ गया; परन्तु वर बेचारेको यह ज्ञान कहां था कि फेरा कैसे खाया जाता है ? उसके मनमें यह आया कि मेरा पिता "फेरा*" अर्थात् " पेड़ा " खानेके लिये मुझे उठाता है । वह बोला— "पिताजी ! मुझे उँवाई आती है । मुझे पेड़ा नहीं खाना है। मुझे भूख नहीं लगी । " वरराजाका एक चार—पांच वर्षका छोटा भाई, जो पासही पड़ा था, बोल उठा— " पिताजी चलो, मैं चलता हूं; मुझे भूख लगी है । " तात्पर्य सिर्फ इतना ही है कि विवाहके समान उत्तम विधियां भी यथायोग्य पालन नहीं की जातीं ॥ " मैं आपके विना कुछ भी नहीं करूंगी । आपको छोड अन्यकी ओर चित्ताकर्षण नहीं होने दूंगीं " इत्यादि प्रतिज्ञा वधूको विवाहके समय करनी पड़ती हैं । उसी प्रकार 'तेरी सम्मतिके विना धर्मे च अर्थे च कामे च नातिचरामि । इत्यादि प्रतिज्ञा वरको

* फेरा उस तरफ पेड़ाको भी कहते हैं ।

करनी पड़ती हैं । अथर्ववेदके १४ वें कांड़में विवाहसम्बन्धी विषयका सम्पूर्ण वर्णन किया गया है । आजकल तो, जो प्रतिज्ञा करनी होती है, उसे सिर्फ पुरोहित मात्र बक जाता है । वर और वधूको उसके विषयमें लेशमात्र भी ज्ञान नहीं होता । क्योंकि उनका विवाह बाल्य-अवस्थामें हो जाता है। इस लिये प्रौढ होनेपर दोनों, यदि विवाहको अस्वीकारें और पुरोहितसे पूछें कि–" हमने ऐसी प्रतिज्ञा कब की थी ? और यदि की हो तो हमें बताओ "। तब पुरोहित महाराज उनको क्या उत्तर देंगे ? प्राचीनकालमें विवाहविधि वधूवरके इच्छानुसार होता था । सुभद्राका अर्जुनके साथ विवाह कैसे हुवा सो सभी जानते हैं । उस समय बलभद्रजी जब अर्जुनपर क्रोधित हुए तब कृष्ण भगवान्‌ने उनका समाधान किया और बोले–"**प्रदानमपि कन्यायाः पशुवत् को नुमन्यते । विक्रयं चाप्यपत्यस्य कः कुर्यात् पुरुषो भुवि** ॥ " उनका विवाह दोनोंकी सम्मतिसे हुआ । कन्याकी इच्छाके विरुद्ध उसे पशुकी तरह बेचना उचित नहीं । इसी प्रकार कुन्ती, सीता, द्रौपदी इत्यादि अनेक राजकन्यायें प्रौढावस्थामें स्वयंवरविधिसे विवाहित हुई थीं। कुछ लोग कहते हैं कि इस विधिसे सिर्फ राजकन्याओंका विवाह होता था पर यह ठीक नहीं । ब्राह्मण लोगोंकी कन्याओं (जैसे शुक्राचार्यकी कन्या देवयानी) का स्वयंवरविधिसे विवाह हुआ था । इच्छानुसार वर न मिलनेपर ब्रह्मचर्यव्रत पालन करके आमरण अविवाहित रही हुई अनेक स्त्रियोंके दृष्टांत मौजूद हैं । गार्गी, सुलभा, इत्यादिके चरित्रोंपरसे आप लोग जान लीजिये । इस विषयकी जानकारी-के लिये हमारा बनाया हुवा " पुरुषार्थप्रकाश " नामक पुस्तक देखनेसे सारी बातें मालूम हो जायगीं। स्त्रियोंकी तरह अनेक पुरुष जैसे भीष्म पितामह, हनुमान्, परशुराम इत्यादि ब्रह्मचर्य व्रत पालन करके अपने पराक्रमका महत्त्व संसारमें प्रसिद्ध कर गये हैं । कहां इन लोगोंका पुरुषार्थ और कहां आजकलके हमारे बाबू लोगोंका पुरुषार्थ ?। कुन्तीके पुत्रोंका पराक्रम कैसा था और आजकलके छोटे २ लडके–लडकियोंके विवाहसे उत्पन्न होनेवाले मनुष्योंका पुरुषार्थ कैसा है ? । छोटीसी डब्बीमें एक बडा हाथी कैसे रह सकता है ?। छोटी उम्रमें विवाह करनेसे अनेक हानियां होती हैं ।

पूर्णवय प्राप्त होनेके बाद विवाह करना चाहिये । ऐसा न करनेवाला पापभागी होता है । पूर्णावस्थामें विवाह न होनेसे भावी प्रजा अत्यन्त निर्बल उत्पन्न होती है । जिसके मा-बाप स्वयंही छोटी अवस्थामें हों उस बालककी रक्षा कैसे की जा सकती है ? । बालकका उनको कैसे भान रह सकता है, और उसे सह्मालनेका काम वे कैसे कर सकते हैं ? वे अप्रौढ माता-पिता लडकोंको खेलनेके लिये भी जाने

नहीं देते; क्योंकि कसरतसे होनेवाले लाभका उन्हें ज्ञान नहीं रहता । अपने बच्चोंके खानेपीनेकी सह्माल भी वे जैसी चाहिये वैसी नहीं रख सकते । इस कारण वे अज्ञान मा बापके लडके बाहरसे चोरी करके खाना सीखते हैं इससे वे अनेक व्याधियोंमें फँस जाते हैं । पेट फूल जाता है, हाथपैर सूखकर लकडीसे हो जाते हैं । घडीभरमें सर्दी, घडीभरमें और कुछ इस प्रकार अनेक व्याधियां लगी रहती हैं । अज्ञानी मा-बाप सिर्फ सन्तान उत्पन्न करना जानते हैं, पर उस उम्रमें उसका पालन करनेकी बुद्धि उनमें नहीं होती । शारीरिक विषयोंको छोडकर जब हम विद्याकी ओर ध्यान देते हैं तब वहां भी यही दुर्दशा दिखाई देती है । इसका कारणभी उपर्युक्तही है । आज कल लोग अपनी गीर्वाण भाषा-संस्कृतका पढना-छोडकर अँगेरजीके पढनेमें लग गये हैं । इतिहास पढातेसमय राम-जनकप्रभृतिके चरित्र न बताकर औरंगजेब जैसोंके जन्मवृत्तान्त पढाये जाते हैं । इनके पढानेसे लडकोंके मनपर बुरा असर पडता है । 'राज्य—प्राप्तिके लोभमें आकर अपने सगे भाईयोंको कैसे मारना ' यह युक्ति उपरोक्त चरित्र पढकर लडके सीख जाते हैं । श्रीरामचन्द्रके समान महात्माओंका इतिहास शिखानेसे बन्धुप्रीति, पूज्यबुद्धि, मातापिताकी आज्ञाका पालन, सत्य बोलना, और सत्यपरही चलना, पतिपत्नी-प्रेम, राजकीय चातुर्य्य, प्रजापालन, एकपत्नीव्रत इत्यादि अनेक सद्गुण शिष्यगण सीखते और पूज्यबुद्धि बनते हैं । यही नहीं, वे स्वयं उनके अनुसार चलना भी सीखते हैं । बड़े २ विद्वान् होते हैं, बी. ए.,एम्.ए. इत्यादि पदवियां प्राप्त करते हैं, तथापि आर्य धर्मके विषयमें कुछ भी ज्ञान प्राप्त नही करते आर्य धर्म क्या है ? उसमें क्या तत्व है ? यह जाननेका वे कुछ भी प्रयत्न नहीं करते और जब वे स्वयंनही जानते तो अपनेको पंडित माननेवाले अपने परिवारको उपर्युक्त बातें कैसे सिखा सकते हैं ? मुसलमान लोग अपने बच्चोंको प्रारम्भसेही कुरान शरीफ सिखाते हैं पर हम आर्य्य लोग अपने बच्चोंको वेदका दर्शन मात्रभी नहीं कराते और आप जानते हैं कि क्रिश्चियन लोगोंका आज ऐसा " अभ्युदय " क्यों हो रहा है ? इसका कारण उनकी एकमात्र धर्मश्रद्धाही है । **ग्लैडस्टेशनके** समान महान विद्वान विना धर्मशिक्षाके उत्पन्न नहीं होसकता । तम्बाकू पीनेसे आयुके पांच वर्ष कम हो जाते हैं इस प्रकार कहनेवाला डाक्टर स्वयं एकके बाद दूसरा चुरुट फूंकता रहता है । ऐसे उपदेशकोंके उपदेशका प्रभाव उनकी सन्तानोंपर कैसा पड़ता है? । 'तम्बा मत पीवो ' यह कहनेमें तो कुशल हैं परन्तु स्वयं पीते हैं इसी लिये बाप जहां बाहर गया कि उसके लड़के इस जिज्ञासासे कि 'इसमें क्या है' तम्बाकूका स्वाद लेने लगते हैं । स्वयं अपना आचरण सुधारेबिना अन्यको उपदेश करना मूर्खता है । बाल-

कोंमें अनुकरण करनेकी शक्ति विशेष होती है इस लिये उनके समक्ष नीतिविरुद्ध कुछ भी बोलना अथवा करना न चाहिये। कुछ दिन हुए; मुझे एक एम्० ए० पास किया हुवा विद्वान् मिला था। उसने एक शंका की कि—"कालेजमें प्रोफेसरोंने हमें बतलाया है कि भूतपिशाच नहीं हैं और हम भी ऐसाही समझते हैं" परन्तु रातके समय जब हम अकेले स्मशानके समान एकान्तस्थानमें जाते हैं, तब हमको भूत पिशाचका डर क्यों लगता है? मैंने उससे पूछा कि "तुम्हारी बाल्यावस्थामें भूतपिशाचोंकी बातें किसीने—"तुम्हारे सामने की थीं? उसने कहा "हाँ, हमारी माता बालपनमें हमसे कहा करती; थीं कि—"रातको बाहर मत जाना वहां भूत प्रेत होंगे वे तुम्हें सतावेंगे" तब मैंनें उससे प्रत्युत्तरमें कहा कि "तुम्हारी माताही एक भूत है और उसीने तुम्हें घेर रक्खा है। **"नास्ति वेदात् परं शास्त्रं नास्ति मातृसमो गुरुः"**—महाभारत। "वेद्से उत्तम कोई शास्त्र नहीं और माताके समान कोई गुरु नहीं"। जब देशका अभ्युदय विद्यासम्पन्न विदुषी स्त्रियोंके ऊपर अवलम्बित है तब स्त्रियोंको अवश्य शिक्षा देनी चाहिए। जिस प्रकार लड़कोंको विद्याभ्यास कराया जाता है उसी प्रकार लड़कियोंकोभी कराना चाहिए। उदाहरण लीजिये। एक लड़का अपने बापके साथ उपवनमें घूमते हुए पूछने लगा "पिताजी यह फूल किसका है?" इस प्रश्नकी ओर ध्यान न देकर बाप आगे चलने लगा। जब जिज्ञासु भावसे बालकने पूछा था तब उसके मनकी शंकाका समाधान पिताको करनाही चाहिए था। बच्चोंको मुख्य शिक्षा मातापिताकीही ओरसे मिलनी चाहिए। हम चार पांच भाई फौजी मनुष्योंकी तरह एकसी चालसे नहीं चल सकते। हमारे पैर एकसमान नहीं पड सकते क्योंकि वह विद्या हमने सीखीही नही। शिक्षाकी जबाबदारी मातापिताके ऊपर है। परन्तु पहले उन्हे अपना आचरण सुधारना चाहिए। पीछे बालकोंको शिक्षा देनी चाहिए, और उनकी रक्षा करनी चाहिए यह तीसरा कर्त्तव्य है। "समाज" यह चौथा कर्त्तव्य है जिसके विषयमें हम आज विशेष विवेचन नहीं करते। पांचवां कर्त्तव्य मनोरंजन है मनको इसप्रकार विश्रान्ति देनी चाहिए कि मनोरंजन करनेमें धर्ममें बाधा न आने पावे। मनोरंजन त्रिविध प्रकारसे किया जा सकता है। इस लिये जो मार्ग उपयुक्त और निर्भ्रान्त हो, उसीका अवलम्बन करना चाहिए। छठा और अन्तका कर्त्तव्य "धर्म और ईश्वरोपासना" है। जब कोई मनुष्य ईश्वरका अस्तित्व नहीं मानता तो यही कहना चाहिए कि उसमें मनुष्यत्वही नहीं है। वर्त्तमानसमयमें आर्य्य रीतिसे ईश्वरका अस्तित्व माननेवाले बहुत कम लोग हैं। ऑफिसमें जोरसे बोलते

समय भय लगता है कि हमारे साहब कहीं नाराज न हो जायँ । परन्तु हमें परमेश्वरका जो साहबसे कहीं बडा और राजामहाराजाओंका भी महाराजा तथा संसारका स्वामी है बिलकुल भय नहीं होता; उसे प्रसन्न रखनेके लिये उसकी आज्ञा के अनुसार चलना मनुष्यमात्रका कर्त्तव्य है । सर्वशक्तिमान् प्रभुका भय रखकर उसकी भक्ति कियेबिना मनुष्य पापाचरणसे बच नहीं सकता और पापमार्गसे परावृत्त हुएबिना यह लोक तथा परलोक सिद्ध नहीं हो सकते । इसी लिये आप सब भाइयोंसे मेरा नम्र निवेदन है कि आप ईश्वरके परम भक्त बनकर इह लोक तथा परलोकका हित कर लीजिये । यही श्रेयस्कर और अभीष्ट है इत्याशास्महे ।

इसके बाद ऑनरेबल जस्टिस महादेव गोविंद रानडे (उस दिनके सभापतिजी) अपना विचार प्रकट करते हुये बोले कि, महाशयो ! श्री. ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी यह स्वर्गवासी श्री स्वामी दयानन्द सरस्वतीजीके शिष्योंमें एक व्यक्तिविशेष हैं । इंनका और मेरा आज पांच छः वर्षोंका परिचय है । श्री स्वामी दयानन्द सरस्वतीजीके स्वर्गवासके अनन्तर उनके जैसा विद्वान् और योग्य वक्ता उनके शिष्योंमें कोई आवश्यकीयथा, इस बातकी न्यूनताको, मुझे कहनेमें अत्यानन्द होता है कि, श्रीब्रह्मचारी नित्यानन्दजी महाराजने दूर किया है । आपकी योग्यता भी वैसी है । आपके भाषणसे कोई ऐसा कहेगा कि, आपने हरबर्ट स्पेन्सरके किसी निबन्धके अनुसार विवेचन किया है । उसमें पांच विषयोंके पांच प्रकार कहे गये हैं । श्री ब्रह्माचारीजीने अपने आर्य्यधर्मके अनुसार ' मनुष्यजन्मकी सफलता ' इस विषयके ऊपर जो विचार दर्शाए हैं, वे आंग्ल पण्डित स्पेन्सरके कथनानुसार हमको सुनाये हैं । इस लिये हमको उनका उपकार मानना चाहिये । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये अपने आर्य्यधर्मानुसार मनुष्यजन्मकी सफलताके मुख्य हेतु हैं । अन्य विद्वानोंने इन चारोंके सिवाय अन्य भी हेतु दर्शाए हैं और उनका उक्त चारोंमेंही समावेश किया है । इत्यादि विचारोंको सविस्तर कहकर आ. रानडेजीने कहा कि, मुंबईके सभ्य गृहस्थोंने श्री. ब्रह्मचारीजीका बहुत सत्कार किया है, करते हैं, और करेंगे; ऐसी मुझे आशा है । ब्रह्मचारीजीका भाषण सुनकर मुझे अत्यन्त आनन्द हुवा है और उससे मैं अपनेको कृतार्थ मानता हूँ ।

इति शम् ।

तीसरा व्याख्यान ।

मानव-ज्ञान-स्रोत ।

तारीख २२ जुलाई, सन १८९४ ।

सज्जनो ! आजका हमारा विषय, जैसा कि पहले निवेदन किया जा चुका है " मानव-ज्ञान-स्रोत " है । इसका अर्थ यह है कि जिस प्रकार जलके उद्भवको स्रोत या झरना कहते हैं उसी प्रकार मनुष्यके ज्ञानके उद्भवको ' मानव-ज्ञान-स्रोत्र ' कहते हैं । अब आज आप यह देखें कि मनुष्यके ज्ञानका उद्भव कहांसे होता है । यह विषय बड़ा गहन है । आस्तिक लोग यह मानते हैं कि " परमेश्वरसे ज्ञानकी उत्पत्ति है " और नास्तिक लोग यह मानते हैं कि-'ज्ञानोत्पत्ति स्वाभाविक है (नैसर्गिक है;) किसीने दी नहीं '।

' ज्ञान नहीं है ' ऐसा अनुभव किसी मनुष्यको नहीं हुआ । प्रत्येक मनुष्य यह जानता है कि-" अमुक वस्तु " बड़ा है, अथवा अमुक वस्तु " अन्य कोई पदार्थ है " । इसीसे स्पष्ट मालूम होता है कि " ज्ञान है " । यह कोई नहीं कह सकता कि ' ज्ञान नहीं है ' । जिस प्रकार आस्तिकको ज्ञानका अस्तित्व स्वीकार है उसी प्रकार नास्तिकको भी है । मतभेद केवल इतनाही है कि एक उसको यदि नैसर्गिक बतलाता है तो दूसरा ईश्वरदत्त मानता है । अब यह देखना है कि आस्तिक व नास्तिकके मतभेदोंमें कौन सच है । उत्तररामचरित्रमें कहा है कि मनुष्यमें जाननेकी शक्ति स्वाभाविक होती है, परन्तु निमित्तके बिना ज्ञान नहीं होता । एक विद्वान् गुरु दो विद्यार्थियोंको बराबर परिश्रमसे पढ़ाता है, पर उनमेंसे एक पढता है और दूसरेको पढना अच्छा नहीं लगता । इससे स्पष्ट मालूम होता है कि ज्ञानशक्ति दोनोंमें है, तथापि पढ़नेकी शक्ति समान नहीं है । ज्ञानका अस्तित्व दो रीतियोंसे माना जा सकता है; एक परमेश्वरदत्त और दूसरा नैसर्गिक; ईश्वरदत्त ज्ञान माननेमें भी दो पक्ष हैं । आर्य्य लोग यह मानते हैं कि ईश्वरने वेदके द्वारा ज्ञान दिया है और मुसलमान तथा क्रिश्चियन यह मानते हैं कि वह " कुरान और बाइबिलके द्वारा मिला है । " परमेश्वरदत्त ज्ञान माननेकी यह पहली रीति हुई । दूसरी रीतिवालोंका कहना है कि परमेश्वरने पुस्तकद्वारा ज्ञान नहीं दिया है,

किंतु प्रत्येकको थोड़ी बहुत ज्ञानशक्ति दी है। दूसरे पक्षका कहना है कि परमेश्वरने ज्ञान नहीं दिया। वह धीरे धीरे बढ़ता जाता है। नास्तिक पक्षवालोंके साथ वादविवाद करनेका आज अवसर नहीं है। उनके साथ वाद करते समय पहले यह विवाद करना पडेगा कि ईश्वर है या नहीं। यह आजका विषय नहीं है। आज हमें इस विषयमें विचार करना है कि जो परमेश्वरको मानते हैं उनका कहना क्या है। माता पिता लड़कोंको जन्म देनेके बाद उनका प्रबन्ध रखनेमें क्या असावधान रह सकते हैं ? हम सब मनुष्यमात्र जिस परम कृपालु दयाघनकी सन्तान हैं, उसको हमारे हितअनहितके विषयमे कितनी चिन्ता होनी चाहिए ! जिसने हम सबको उत्पन्न किया है, वह क्या हमारा कुछ भी प्रबन्ध न करते हुए हमको जंगलमें रोते हुए अकेला छोड़ देगा ? क्या उसे अपनी सन्तानकी कुछ भी चिन्ता नहीं ? जैसे मा-बाप अपने लडकोंको जंगलमें छोडनेका दुष्कर्म नहीं कर सकते, उसी प्रकार परम कृपालु ईश्वरसे भी ऐसा कार्य्य नहीं हो सकता। कदापि किसी अवसरमें भी नहीं हो सकता । पहलेहीसे मनुष्यका सारा प्रबन्ध कियेबिना वह उसे उत्पन्न नहीं करता। पहलेहीसे अपनी प्रजाकी सारी व्यवस्था कर देनेके बाद मनुष्यको उत्पन्न करता है। ऐसाही होना चाहिए। 'मनुष्यके ऊपर दुःख न आवे इसलिये उसने उसकी उत्पत्तिके साथही ज्ञानका भी प्रबन्ध कर रक्खा है। इसलिये यह बात ईश्वरका अस्तित्व मान-नेवालोंको अवश्य स्वीकार करनी चाहिए। इससे यह सिद्ध होतो है कि ज्ञान ईश्वर-प्रणीत है। अच्छा, अब जो लोग यह कहते हैं कि "ज्ञान शनैः शनैः बढता जाता है; वह किसीका दिया हुआ नहीं।" उनका कहना कहांतक सच है यह देखना चाहिए। इस सृष्टिको उत्पन्न हुए करोडों वर्ष हो गये। क्रिश्चियन लोग पृथ्वीकी उत्पत्ति पांच हजार वर्षके अन्दर मानते हैं, परन्तु वे अब समझने लगे हैं कि हमारा यह कथन भ्रमयुक्त है । 'महाभारतके युद्धकोही पांच हजारसे अधिक वर्ष हो गयें' यह बात सप्रमाण सिद्ध हो चुकी है । इससे स्पष्ट है कि युद्धके बहुत पहले वह उत्पन्न हुई होगी । इतने विशाल समयकी अवधिमें 'कोई पुरुष गुरुके बिना ज्ञानी हुआ हो' ऐसे स्वयंसिद्ध ज्ञानीका एकभी दृष्टान्त उप-लब्ध नहीं होता। विद्याप्राप्तिके लिये गुरुकी आवश्यकता होतीही है । गुरुके विना त्रिकालमेंभी विद्या प्राप्त नहीं हो सकती । जब यह बात है तब सृष्टिके प्रारम्भमें गुरुके विना विद्या कैसे प्राप्त हुई ? 'प्राचीन कालमें बड़े बड़े ज्ञानी और विद्यासंपन्न लोग हो गये हैं' यह बात मैं अनेक संस्कृत ग्रन्थोंके आधारपर प्रमाणसहित सिद्ध कर सकता हूं। कोई यह न समझे कि मेरा कहना मेरी निजकी कल्पना है। इस

विषयके हमारे पास अनेक सबल प्रमाण हैं। इस बातको झूठ कहनेवाला अवश्यही झूठी गप्पें मारता है। पर सप्रमाण कुछ नहीं कहता। गुरुके बिना ज्ञान नहीं होता यह स्पष्ट है। इससे यहभी निर्विवाद है कि उन प्राचीन ज्ञानियोंकाभी कोई गुरु होना चाहिए। हमारे प्राचीन ऋषियोंका बर्ताव ऐसा था, कि जिससे वे अपना सारा जीवन एकएकही विषयमें लगाकर उसमें पूर्ण सफलता प्राप्त करते थे। आज कलके लोगोंके मनकी दशा गिरगिटके रंगकी तरह दिनमें तीनबार बदला करती है; दस पंद्रह मिनटतकभी उनका मन स्थिर नहीं रहता। तब फिर बड़े बड़े गहन विषयोंका ज्ञान सम्पादन करके वाद विवाद करनेकी कुशलता हम लोगोंमें कहांसे आवेगी? महर्षि पतंजलिकृत योगशास्त्रमें इस विषयका विवेचन याथातथ्य किया गया है। "**स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्**"। इसमें सर्वव्यापक सर्वान्तरयामी परमात्माको सबका गुरु माना है। इसके पहले किसीको भी ज्ञानकी प्राप्ति नहीं हुई थी। ज्ञानरूपी स्रोतका यह प्रारम्भिक स्थान है। सूर्यका प्रकाश चाहे जैसा तेजस्वी और आंखके लिये असह्य हो, एक जन्मान्ध पुरुषसे उस प्रकाशका स्वरूप और अस्तित्व कहिये; उसपर वह बिलकुल विश्वास नहीं करेगा। बस इसी तरह बिना योग्यताके केवल चर्मचक्षुसे इस विषयका ज्ञान नहीं हो सकता। "गुरु बिना ज्ञान नहीं होता यह स्पष्ट है, और वह गुरु परमेश्वरही है" यह आस्तिक लोगोंको स्वीकार करनाही चाहिए। वेद ज्ञानका भाण्डार है। "परमेश्वरने वेद-द्वारा जनसमूहमें विद्याको फेलाया है" ऐसा एक पक्षका कहना है। अन्य पक्ष कहता है कि "शनैः शनैः मनुष्यकी योग्यताके अनुसार उसे ईश्वरने ज्ञान दिया है" यह उनका मत दोषरहित नहीं है। क्योंकि यह बात हम सहजहीमें जान सकते हैं कि एक पक्षका ज्ञान दूसरे पक्षके ज्ञानसे उल्टा और भिन्न है। ईश्वरदत्त ज्ञानमें भिन्नताकी सम्भावना नहीं होती; क्योंकि सर्व शक्तिमान् न्यायी ईश्वर एकको एक और दूसरेको दूसरा ज्ञान कभी नहीं देता। जब सृष्टिक्रममें सर्वत्र ईश्वरकी समता दृष्टिमें पड़ती है, तब इसी एक विषयमें उसका प्रतिकूल व्यवहार कैसे हो सकता है? इससे स्पष्ट है कि परमेश्वरने योग्यताके अनुसार शनैः शनैः मनुष्यको भिन्न २ ज्ञान नहीं दिया है। प्रत्युत सबको एक समानही ज्ञान दिया है। और वह आर्य लोगोंके मतानुसार वेदद्वाराही दिया हुआ समझना चाहिए। आर्यलोग जिस प्रकार वेदको ईश्वरप्रणीत मानते हैं, उसी तरह मुसलमान कुरानको मानते हैं। क्रिश्चियन लोग बाइबिलको मानते हैं। जब ईश्वर एकही है, तब यह बिलकुल असम्भव है कि उसने तीन पुस्तकें तीन भिन्न भिन्न समयोंमें उत्पन्न की हों। क्रिश्चिनन

और मुसलमानभाई कहते हैं कि " पहलेकी भूलोंको सुधारनेके लिये उसे दूसरी नवीन पुस्तकें बनानेकी आवश्यकता हुई "। पर उनके इस कथनमें कुछ भी सार नहीं । ईश्वरके सर्वोत्तम गुणोंपर विचार करते हुए यह कहना " कि उसके हाथसे ऐसी भूलें होती हैं और पीछेसे वह उनका सुधार करता है । मानो ईश्वरकी अवहेलना करनी है । यह नास्तिकताकीही श्रेणीमें समझना चाहिए । जिसके हाथसे भूल हो वह ईश्वरही कैसा ? यह कहना कैसें सम्भव है कि ईश्वरने तीन पुस्तकें भिन्न भिन्न समयमें बनाईं ? तीन नहीं, किन्तु एक पुस्तक अवश्यही उसकी रची हुई होनी चाहिए । उन तीन पुस्तकोंमेंसे ईश्वरप्रणीत कौनसी पुस्तक है, इसका हमें यहाँ विचार करना है । जबतक मनुष्य पक्षपातकी दृष्टिसे वर्ताव करता है, तबतक उसमें सत्यासत्य निर्णय करनेकी शक्ति नहीं आती । परंतु जिज्ञासु लोग सिर्फ यथार्थको ही ग्रहण करते हैं । राज्याधिकार, व्यापारआदिव्यवहार, रणसंग्राम, जयविजय, इत्यादि सब एकतरफ रख हमें यह देखना चाहिए कि—" सच क्या है, और ईश्वरप्रणीत पुस्तक कौनसी है।" संसारमें जितना कुछ पीला हैं, वह सब सुवर्ण नहीं है। सुवर्णकी तरह पीतलभी पीले रंगका होता है । अग्नि उसे कहना चाहिए, जिसमें दहनशक्ति हो; अन्यलक्षणयुक्त वस्तुको अग्नि नहीं कह सकते । बस इसी तरह अलौकिक ईश्वरतुल्य शक्ति हो, उसीको 'ईश्वर' कहना चाहिए । और सृष्टिके आरम्भमें जो पुस्तक निर्माण हुई हो, उसे ईश्वरप्रणीत मानना चाहिए । सृष्टिकी उत्पत्तिके बाद बहुत समय पीछे निर्मित होनेवाली पुस्तकोंको ईश्वरप्रणीत नहीं कह सकते । बस, जब कोई राजा किसी नवीन राज्यको अपने अधिकारमें लेता है, तब वह उस राज्यमें सर्वत्र शान्ति फैलानेके लिये पिनलकोडके समान एक कानून जारी करता है । इसी प्रकार इस पृथ्वीके समान एक बडे राज्यमें बसनेवाले लोगोंके नियमनके लिये ईश्वरके द्वारा कोई न कोई न्यायपुस्तक अवश्य निर्मित होनी चाहिए । जिस राज्यमें किसी प्रकारकाभी नियम नहीं होता और छोटे बडे सब अपराधियोंको एकही दण्ड दिया जाता है वह राज्य राजाके लिये एक कलंकस्वरूप है, परन्तु ईश्वर सब राजाओंमें एक सच्चा और न्यायी राजा है । उसके हाथसे " अन्धेर राज्य " जैसा व्यवहार त्रिकालमें भी नहीं हो सकता । उसके राज्यमें सर्वत्र न्याय-आचरण होनेके लिये कोई नीतिग्रन्थ अवश्य होना चाहिए । अब नीतिग्रन्थ कौन है यही विचार करना आजका हमारा कर्त्तव्य है । संसारके सारे तत्ववेत्ता वेदका प्राचीनत्व स्वीकार करते हैं । अंगरेज पण्डित प्रोफेसर सर मोक्षमूलर भी इस बातको स्वीकार करते हैं । निदान यह बात सिद्ध हो गई है कि दुनियांकी लायब्रेरी (पुस्त-

कालय) में वेदही सबसे प्रथम अत एव प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। कुरान शरीफको निर्मित हुए अभीसिर्फ १३०० वर्ष मात्र हुए हैं । वह हजरत मुहम्मद पैगम्बर साहबका बनाया हुआ है । बाईबिलको बने कितने वर्ष हुए सो बतानेकी आवश्यकता नहीं; क्योंकि छोटे बच्चे भी इस बातको जानते हैं कि आजकल ईसवीसन १८८४ * चल रहा है । मैंने पारसियोंका गाथा ग्रन्थ देखा है । उसपरसे मैं कह सकता हूं कि पारसी लोगोंके पूज्य साधु जरदोस्त और व्यास मुनिका वादविवाद हुआ है । इससें स्पष्ट जान पड़ता है कि पारसी लोगोंकी पुस्तकसे भी हमारा वेद पुराना है । महाभारत ग्रन्थको बने पांच हजार वर्षसे कुछ अधिक हुए । इससे भी बहुत पहले बाल्मीकीय रामायणका निर्माण हुआ । और बाल्मीकीय रामायणसे भी बहुतकाल पूर्व हमारे वेद उत्पन्न हुए । वेदको हुए बहुत बड़ा काल होगया । इसके पहलेकी कोई भी पुस्तक नहीं पाई जाती । सबसे पहले वेदही ग्रन्थ है । यदि कोई ईश्वरनिर्मित पुस्तक हो सकती है तो वह वेद ही है । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं । सत्य और अखण्ड ज्ञानका लक्षण यह है कि उसमें सृष्टिक्रमके विरुद्ध बात न होनी चाहिए । भूगोलमेंहिन्दुस्थानके पश्चिम अफगानिस्थान लिखा हुआ है । अब उसे यदि कोई नकशेमें पूर्व दिशाकी ओर बतलावे तो यह परस्पर विरोध है । नकशा और भूगोल यदि एकही ग्रन्थकारने बनाये हों तो वह अविद्वान् होना चाहिए । इसी प्रकार वेदमें यदि सृष्टिक्रमके विरुद्ध कोई बात हो तो उसका कर्त्ता भी अविद्वान् होना चाहिए । अथवा उसका कर्त्ता और ईश्वर दोनों भिन्न भिन्न होने चाहिएँ । ईश्वर सर्वज्ञ सर्वविद्याकला प्रवीण है और वह अविद्वान् नहीं है । उसके हाथसे परस्पर विरुद्ध बात कदापि नहीं हो सकती । पुस्तकमें कुछ और ही लिखा हो और सृष्टिक्रम दूसराही हो ऐसा उससे कभी नहीं हो सकता । ईश्वर-कृत पुस्तकमें कोई भी दोष न होना चाहिए । और होना सम्भव भी नहीं । आजक-लके कितनेही विद्वान् प्रश्न करते हैं, कि तुम वेदको तो ईश्वरकृत मानते हो, परन्तु उसमें जो ऊटपटांग बातें लिखी हैं सो क्या है ? उनका यह आक्षेप ऊपरसे देखनेमें तो सत्यभासता है, तथापि इसमें सत्यता कितनी है सो हमें देखनी चाहिए । वेदमें क्या क्या दोष हैं इसका हमें अब विचार करना चाहिए ।

" कर्त्ताके बिना कार्य नहीं होता " यह सृष्टिक्रमका एक मुख्य सिद्धान्त है । " बाप नहीं, पर मैं हूं " यह कहना कितनी मूर्खतासे भरा हुआ है ? जिस पुस्तकमें माबापके बिना किसीके उत्पन्न होनेका वर्णन हो वह पुस्तक ईश्वरप्रणीत कभी

* जिस वर्ष स्वामीजीने व्याख्यान दिया था ।

नहीं हो सकती । वेदमें सृष्टिक्रमके विरुद्ध कुछ नहीं लिखा है । यह बात वेदका मर्म जाननेवालेही जान सकते हैं । हमें यह अभिमान सदैव रखना चाहिए कि " हम आर्य हैं । हमारे पूर्वज सब विद्याओंमें कुशल थे " । पर बड़े खेद और लज्जाकी बात है कि वेदका वास्तविक अर्थ हममेंसे अनेक विद्वान् कहलानेवाले भी नहीं जानते । वेदमें परस्पर विरुद्ध कोई बात भी नहीं मिल सकती । हमें यदि इस प्रकारका परस्पर विरोध वेदमें कहीं भासता हो तो इसका कारण यही है कि–'हम वेदका वास्तविक अर्थ नहीं जानते' । वेदमें पक्षपातयुक्त कोई भी बात लिखी हुई नहीं देखी जाती । हमारे ऋषियोंको " उदार चरितानांतु वसुधैव कुटुम्बकम् " की शिक्षा किससे मिली थी ? केवल वेदही इस शिक्षाका कारण था । वेदमें यह बात नहीं कि एक देश अथवा एक जातिका कल्याण हो और दूसरेका न हो । परमेश्वरके लिये सब प्राणी एकसे हैं । आर्य, शूद्र, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, कसाई इत्यादि भेद उसके पास नहीं । सारी मनुष्यजाति ही नहीं, किन्तु सर्व प्राणीमात्र उसे समान हैं । लड़ाई झगड़ा जो कुछ होता है सो सब हमारे तुम्हारे दुराग्रहसेही । वेदमें पूर्ण न्याय है, परन्तु जो कोई मनुष्य हमें विनाकारण दुःख दे तो कृश्चियन लोगोंके पुस्तकके अनुसार उदारबुद्धिसे " एक थप्पड़ खानेके बाद दूसरा गाल आगे न करते हुए " अपनी रक्षाके लिये न्यायसे उसका प्रतिकार करना चाहिए । (उसका निवारण करना चाहिए) । उसको समझाना चाहिए । ऐसा करना कोई सृष्टि-क्रमके विरुद्ध बात नहीं । इसे सृष्टिक्रमके अनुसारही समझना चाहिए । सब प्राणी ईश्वरनिर्मित हैं । वह एकको प्रिय और दूसरेको अप्रिय कभी नहीं समझता । जब सभी उसकी प्रजा है, तब वह यह कदापि नहीं कह सकता कि अमुकको मार डालों । हिंसा करना जब ईश्वरको अप्रिय है तब वेदमें हिंसा करनेके लिये वह कैसे आज्ञा दे सकता है । कई लोग अपनेको बहुत बुद्धिमान् और चतुर समझते हैं और कहते हैं कि वेदमें हिंसा करनेके लिये सम्मति है । परन्तु यह उनकी भारी भूल है । संस्कृत भाषा ऐसी है, जिसमें शब्दोंके अनेक गर्भित अर्थ होते हैं । एक एक शब्दके भिन्न भिन्न अनेक अर्थ होते हैं । जहां जो शब्द युक्त हो, वहां उसकी योजना और अर्थ करना चाहिए । वेदके शब्दका योग्य अर्थ करते समय बहुत प्रमाद हुआ है, होता है, और भी होगा । " सेंधव " का अर्थ " घोड़ा " और " नमक " है, परन्तु भोजनादिकके समय सेंधव शब्दका प्रयोग आया हो तो वहां इसका अर्थ योग्य और युक्त नमक न कहते हुए यदि कोई कहे कि हमारे पूर्वज " सेंधव अर्थात् घोडेका उपयोग करते थे अर्थात् भोजनमें घोडेका मांस खाते थे " तो इस कुत्सित अर्थको

कौन स्वीकार करेगा ? अर्थ ऐसा करना चाहिए कि जिससे पूर्वापर सम्बन्धके साथ संदर्भ हो। लोगोंको यह बतलानेके लिये कि हमारा कहना सत्य है शब्दोंका मन माना और तोड़ मरोड़ अर्थ करके लोगोंके मनपर झूठी बात न बैठानी चाहिए। अदिति शब्दका मनमाना अर्थ करके हमारे चतुर विद्वान् वेदकी हँसी उड़ाते हैं। जैसे वह कहते हैं कि " अदिति सूर्यकी माता है "। " सूर्य अदितिके उदरमें कैसे समा सका ? इससे जान पड़ता है कि तुम्हारे वेदमें सची बातें बहुत कम हैं। जिसको तुम सच कहते हो वह निरी कल्पना है। " इस प्रकारके असंगत प्रश्न करनेवालोंपर हमें दया आती है। अदिति शब्दका अर्थ प्रकाश, अन्तरिक्ष, माता, पिता इत्यादि है और ऐसेही अर्थका मेलभी मिलता है। सम्प्रदायी लोग अर्थका अनर्थ करके कैसी बड़ी भयंकर भूलें कर डालते हैं। अन्तरिक्षमें सूर्य उत्पन्न हुआ ऐसा यथार्थ अर्थ न करते हुए मनमाना अर्थ करके वेदके समान पूज्य ग्रन्थको दोष लगाने लगे हैं !!! " अहिंसा परमो धर्मः " यह तत्त्व वेदमें सब जगह मिलता है।

ऐसा होते हुए यह कहना कि–' हिंसा करनेमें वेदकी सम्मति है ' कितना असम्भव लगता है। गोमेध, अजामेध, अश्वमेध, इत्यादिके अर्थमें भी तो लोग भयंकर भूलें करते हैं। यह सिद्ध करनेके लिये लोग बद्धपरिकर हो रहे हैं कि प्राचीन कालमें हिन्दुओंमें हिंसा होती थी। अन्नका एक नाम " गो " है और घृतका नाम " मेध " है। तथापि " गोमेध " का अर्थ गौकी हिंसा करते हैं। गायको मातासे भी अधिक मानकर पूजनेवाली केवल हिन्दू जातिही है। ऐसी पूज्य मानी हुई गोमाताको क्या वे कभी मार सकते हैं ? लोग अर्थका अनर्थ करके अनेक कुतर्क करते हैं। यह बडे खेदकी बात है। " वेदमें हिंसा बिलकुल नहीं है " इस विषयपर मैं एक पुस्तक तैयार कर रहा हूं। मैं यह बात अनेक संस्कृत ग्रन्थोंके आधारपर सप्रमाण सिद्ध करनेवाला हूं कि–' हम लोग मांसाहारी न थे '। अश्वमेध, अजामेध इत्यादिके अर्थकाभी अनर्थ हुआ है। " अश्व " का अर्थ ईश्वर होता है तथा " अजा " का अर्थ अजन्मा और बकरी भी होता है; पर इस जगह ऐसा करना अनुचित है। हव्य पदार्थ मांस नहीं हो सकता। कपूर, कसतूरी, चन्दन, अगर इत्यादि सुगन्धित पदार्थोंकाही हवन होता है। हवन करनेका मुख्य उद्देश्य वायु शुद्ध करना है। मांसका हवन करनेसे हवा शुद्ध नहीं होगी, प्रत्युत बिगड़ेगी ! " प्राणियोंकी हत्या करनेसे नरककी प्राप्ति होती है। मान लो कि प्राणियोंकी हत्या करनेसे यदि स्वर्ग प्राप्त हो तो नरककी प्राप्तिके लिये क्या करना चाहिए ? " यह एक कविका कथन है और ठीक है। यह मैं अच्छी तरह सिद्ध कर

दूंगा कि—'वेद्में हिंसा नहीं है'। इसी प्रकार जिस ग्रन्थमें किसीकी निन्दा या स्तुति नहीं, वही ग्रन्थ ईश्वरकृत होना चाहिए, वेद्में यदि कर्त्ताके तौरपर किसीका नाम होता तो उसे मानव-कृत पुस्तक मानते। क्यों कि कर्त्ताकी जगह किसीका नाम आनेसे यह समझना चाहिए कि ग्रन्थके पहले उसका कर्त्ता था। परन्तु वेद्में ऐसा कोई भी नाम नहीं। वह ईश्वरनिर्मितही है। सृष्टिके प्रलयकालमें अन्तर्धान हो जाता है। उसका आदि या अन्त नहीं अर्थात् वह अनादि है। पूर्वमीमांसा में (जिसको कर्ममीमांसा भी कहते हैं) कहा है कि वेद्में सर्वसाधारण पदार्थोंका-ही वर्णन है। "परन्तु श्रुतिसामान्यमात्रम्।" विशेष व्यक्तिका उसमें वर्णन नहीं। इससे भी माल्रूम होता है कि वेद मानवप्रणीत नहीं है। सृष्टिके आदि और अन्तमें जो विद्या रहती है वही परमेश्वरदत्त है। अनेक मतमतान्तर जो देखे जाते हैं वे सब मानवकृत ग्रन्थमेंही होते हैं।

ईश्वरणीत पुस्तकमें पूर्वापर विरोध नहीं होता। कुरान इत्यादि ग्रन्थोंमें लिखा है कि-'ईश्वरने पहलेके सब ग्रन्थोंको रद्द करके यह कुरान शरीफ नवीन पुस्तक रची है'। परन्तु ऐसा कहना मानो ईश्वरको दोषभागी ठहराना है। पहले जो कुछ भूल हुई थी उसे सुधारनेके कि लिये यह नवीन ग्रन्थ बनाना पड़ा। इससे सिद्ध है कि ईश्वरसे पहले भूल हुई थी। मनुष्यकी तरह यदि ईश्वर भी मूल करने लगे तो फिर वह ईश्वर काहेका? उससे त्रिकालमें भी मूल नहीं हो सकती। और जब भूल नहीं तब उसे सुधारनेकी आवश्यकताही क्या? न ईश्वरको पहलेकी पुस्तक रद्द करनेका मौका आया और न भविष्यत्में आयगा। आप विचार सकते हैं, कि-ईश्वरप्रणीत पुस्तक कौनसी है। बाइबिल और अन्य धर्मपुस्कोंका भी यही हाल समझली जिये। ईश्वर-प्रणीत यदि कोई पुस्तक है तो वह वेदही है यह सिद्ध हो चुका है। वे कहते हैं कि "यजुर्वेदके चालीसवें अध्यायके आठवे मंत्रमें कहा है कि ईश्वर निराकार है' 'सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणम्" इत्यादि। और दूसरी जगह कहा है कि ईश्वर "सहस्रशीर्षासहस्राक्ष" इत्यादि है यह क्या पूर्वापर विरोध नहीं है? परन्तु अत्यन्त खेदकी बात है कि यथार्थ ज्ञान न होनेसे अर्थ करनेमें वे भूल करते हैं।

वेदका गभिर्त अर्थ बहुतसा परिश्रम किये विना सहजही समझमें नहा आता। रामकृष्णगोपाल माण्डारकर की एक आध पुस्तक पढ़कर अथवा कोश की सहायतासे वेदका अर्थ समझनेकी योग्याता आजावेसो नही हो सकता। सहस्रशीर्षा इत्यादि मंत्रका अर्थ लोग यों करते हैं कि ईश्वरके हजार मुँह हजार आँखे और हजार हाथ-पैर इत्यादि हैं पर ऐसा नहीं है जैसेकि यह कहें कि "आज सभामें पांचसौ आदमी थे

अर्थात् पांच सौमनुष्यथे इसीप्रकार ईश्वरके हजार मस्तकहैं इस कामतलब यह है कि जिसमे हजारों मनुष्य रहते हैं वह सहस्रशीर्षा ईश्वर है । यह कहना अलंकारिक है । "जहां पंच वहां परमेश्वर" यह कहावत सुप्रसिद्ध है । बस "सहस्रशीर्षा" कागर्भित अर्थ भी ऐसाही है । "जिस सर्व व्यापक परमेश्वरमे यह जगत् समाविष्ट है उसे तूमान ऐसा उसका वास्तविक अर्थ है । इसमें कोई पूर्वापर दोष नहीं आता । प्रत्येक ग्रन्थकार ग्रन्थके आदि और अन्तमें अपना नाम और सम्वत् लिखता है । वेद्में यह कुछ नहीं देखा जाता । वह मनुष्य प्रणीत नहीं है । वेद की उत्पत्ति परमेश्वर सेही हुई है यह उसमें लिखा है ।

"वेद व्यास" का अर्थ है वेदका व्यास । जैसे कि वृत्तमें व्यास एक सिरेसे दूसरे सिरेतक जाता है अर्थात् उसमें निष्णात होता है, उसीको "वेद व्यास" कहते हैं । वेद्के समान गहन फिलासफी का कर्त्ता कितना बडा विद्वान् होना चाहिए? एसा श्रीशंकराचार्य्यनेभी "शास्त्रयोनित्वात् ।" इस सूत्रके भाष्यमें कहा हैं कणादऋषि भी कहते हैं कि—"वेद हमें प्रमाणभूतमानना चाहिए । क्योंकि उसमें सारी बातें बुद्धि पूर्वक हैं । जैसे सूर्य्य स्वयं प्रकाशित होकर अन्यपदार्थों को प्रकाश देता है वैसे ही वेद स्वत: प्रमाण है । सूर्य्यकोढूढने केलिये प्रकाशकी आवश्कता नही होती इसी प्रकार वेद को दूसरे प्रमाणों की आवश्यकता नहीं "बाबा वाक्यं प्रमाणं" के अनुसार मान लेने योग्य यह नहीं है । न्यायशास्त्रसे यह सिद्ध होता है । अपने अनुभवमें जो आवे उसीको सत्य मानना चाहिए । निम्नलिखित वार्त्ताके अनुसार विचारशून्य होकर मूर्खता से यह न मानलेना चाहिए कि शास्त्रमें जो कुछ है वह सब सत्य ही है । एक समय ऐसाहुआ कि किसी अज्ञानी मनुष्यसे एक आदमीने जाकर कहा कि "अरे तूं यहां आनन्दमें बैठा, और तेरी लुगाईका क्या हाल है सो तुझको कुछ भी पता नहीं । उस बिचारी पर बड़ा भारी संकट आ पड़ा है ।

उसका पति मरगया है और वह विचारी विधवा हो गई है । यह दु:खात्मक समाचार सुनकर वह अज्ञान मनुष्य छाती पीट २ कर शोक करने लगा और गदगद कंठ होकर रोने लगा उस मूर्खको यह पता न था कि जीते हुए पतिकी लुगाई विधवा कैसे हो सकती है ? तात्पर्य यह कि हम लोग सारासार विचार न करते हुए केवल काल्पनिक शास्त्रोंपर भरोसा रख व्यर्थ भ्रममें पड़ते हैं शास्त्रमें कहा है यहाँ एक मुख्य कारण नहीं है किन्तु अति स्पष्ट रीतिसे सिद्ध हो सकता है इसीसे हम कह सकते हैं कि वेद ही केवल ईश्वर प्रणीत है ईश्वर के अतिरिक्त वे और किसीसे रचे नहीं गये । इसी तरह वे किसी देश भाषामें भी लिखे नहीं गये । यदि किसी देश

भाषामें होते तो उन्हें मनुष्य प्रणीत कह सकते थे। वेद की भाषा बिलकुल भिन्न और स्वतन्त्र है। जो कोई कहता है कि वेद संस्कृतमें हैं यह उनकी भूल है। वेद-कीभाषा और संस्कृतभाषा अलग अलग हैं। वेद संस्कृतमें नहीं हैं यह सुनते ही कितनेही लोग मारने दौड़ेंगे। वे कहेंगे कि यह कहांका गप्पाष्टक लड़ा रहा है। पर किसीको यह नहीं समझना चाहिए कि मैं ही ऐसा कहता हूं। अंग्रेज महा पण्डित मोक्ष मूळरने कहा है कि संस्कृतमें पाणिनिकी पुस्तक सबसे श्रेष्ट है। और वही पाणिनि कहता है कि वेदकी भाषा और संस्कृत भाषा दोनों भिन्न भिन्न हैं। जैसे आज काल तुह्मारी हमारी भाषा मराठी, गुजराती, हिन्दी इत्यादि हैं। उसी प्रकार प्राचीन कालमें आर्य्य लोगोंकी भाषा संस्कृत थी। परन्तु वह भाषा कहांसे निर्माण हुई! वेदही उसका मूल है। वेदसे जैसे संस्कृत हुई है उसी तरह संस्कृत-से प्राकृत, मराठी, गुजराती, हिन्दी, बँगाला, कानडी, इत्यादि अनेक देशभाषायें बनी हैं। संस्कृतके आधारसे कुछ वेदभाषा नहीं बनी है। वेदभाषा संस्कृत भाषासे बहुत पहलेकी है। 'वेदमें मतमतान्तर बिलकुल नहीं'। इसीसे सिद्ध होता है कि वह एकहीके द्वारा बना हुआ है और वह एक सर्वशक्तिमान् ईश्वरही है। वेदमें पुन-र्जन्म माना गया है। पुनर्जन्म न माननेवालेके प्रति यह प्रश्न है कि एककी आंख फूटी होती है, एक लूला होता है, एक गूंगा होता है और एक बहिरा होता है ऐसे नानाप्रकारके मनुष्य हमारी द्दष्टि पड़ते हैं; ऐसा होनेका क्या कारण है? इसके जबा-बमें प्रतिपक्षी कहेगा कि ईश्वरकी मरजी। तो क्या ईश्वर ऐसा अन्यायी और पक्ष-पाती है कि बिना अपराध किसीको सुख दुःख भोगना पड़े! इससे स्पष्ट है कि पुनर्जन्म है। सब विद्याओंकी, माता जिसमें सब विद्याएँ समाविष्ट हुई हैं, वही परमे-श्वरकृत पुस्तक है। यह बात सप्रमाण सिद्ध करनेके लिये अनेक ऋषिवचन मौजूद हैं। यह सिद्ध करनेमें हम लेशमात्र भी नहीं डरते। जिसके पास खरा रुपया मौजूद है उसको उसे तपाना नहीं पडता। ऐसी कोई भी विद्या अस्तित्वमें नहीं जो वेदमें न प्रकट हुई हो। महामुनि शंकराचार्य्यकाभी यही मत है, कि विना परमात्माके ऐसी पूर्णता नहीं आ सकती। वेदही दोषरहित ग्रन्थ है। वेदनेही ज्ञानकी प्रेरणा की है और क्रमक्रमसे मनुष्यको वह ज्ञान प्राप्त हुआ है। परमेश्वरने सृष्टि निर्माण की, उसके साथही सृष्टिकी सुव्यवस्थाके लिये उसने वेद निर्माण किया। वेदसे ज्ञान प्राप्त करके सब ऋषियोंने उसे दूसरोंको वितरण किया। ज्ञानकी उत्पत्ति परमात्मासे हुई है और वह उसने वेदके द्वारा निर्माण किया है। शनैः शनैः उस ज्ञानकी उन्नति या अवनति होती गई। ब्राह्मण ज्यों ज्यों वेदका पठन छोडते गये, त्यों त्यों वह ज्ञान

धीरे धीरे लोप होता गया। जो लोग अपनेको आर्य मानते हैं और हिन्दु होनेका अभिमान रखते हैं, उन्हें अपनी सन्तानको वेदका कुछ न कुछ ज्ञान अवश्य देना चाहिए। बडे बडे बी०, ए० एम्० ए० हो गये पर धर्मसम्बन्धी ज्ञानमें बिल्कुल नपुंसक ! यह कितने शोककी बात है। धर्मका ज्ञान भान बिल्कुल नहीं होता। वेदकी जानकारी जिसे कुछभी न हो उसे धर्मसम्बन्धी ज्ञान कैसे प्राप्त हो ? बिना धर्मके उन्नतिकी आशा निराशा मात्र हो गई है। यदि हम आर्य होनेका अभिमान रखते हैं तो आप वेद अवश्य पढें। आशा है कि आप लोग अपनी संतानको सत्य-धर्मी बनानेका प्रयत्न करेंगे।

इति शम्।

चौथा व्याख्यान।

ईश्वरोपासना।

तारीख २९ जुलाई, सन १८९४।

प्रिय सज्जनो ! इस सृष्टिमें विविध प्रकारके मनुष्य दृष्टि पड़ते हैं। स्वभाव, आचार, विचार, कर्त्तव्य, आकृति इत्यादि विषयोंमें भिन्नता देखनेमें आती है, प्रत्येक विषयमें प्रत्येकका ज्ञान और समझ भिन्नभिन्न होती है। जैसे इस जगत्में कई ईश्वरके माननेवाले होते हैं, वैसेही कितनेक नास्तिक पंथानुयायी भी होते हैं। कितनेही लोग ईश्वरका अस्तित्व अंतःकरणपूर्वक नहीं मानते, किन्तु सिर्फ संसारके लोक व्यवहारके अनुसार चलनेके लिये मानते हैं। कई लोगोंकी ऐसी द्विधा समझ होती है कि वे लोग न यही मानते हैं कि ईश्वर है और न यही मानते हैं कि ईश्वर नहीं है। कई लोगोंका ऐसा मत होता है कि अंतःकरणसे तो वे ईश्वरको नहीं मानते पर लज्जाके भयसे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार करते हैं। कई लोग कहते हैं कि "ईश्वर है या नहीं, इस विषयमें वादविवाद करके व्यर्थ मनको कष्ट देनेसे क्या लाभ है ?" जब इस विषयमें मनुष्योंके ऐसे विभिन्न मत हैं तब ईश्वरोपासना विषयके ऊपरबोलनेके पहले इसका निर्णय करना चाहिएकि "ईश्वर है या नहीं। क्योंकि यदि ईश्वरही नहीं तो उपासना किसकी की जाय ?

इसलिये पहले यह जांच करनी चाहिए कि इस जगत्में ईश्वर है या नहीं। मुझ जैसे अल्पबुद्धिवाले मनुष्यका इस विषयपर विवेचन करना असम्भव है। क्योंकि यह विषय इतना गहन है कि योगिजनोंके लिये भी अगम्य है। तो फिर हमारी क्या कथा है? तथापि जैसे एक भयंकर तूफानमें फँसे हुए अग्निबोटके बचानेके लिए उसका कप्तान "अब क्या करें? क्या उपाय है?" इत्यादि विचारोंमें न पड़; समय आजानेपर धैर्यच्युत नहीं होता, बल्कि शक्तिके अनुसार जो हो सकता है प्रयत्न करता है, उसी प्रकार मेरी बुद्धिरूपी नाव इस संसारसागरके झपाटे में डोलने लगी है उसे इच्छित स्थलमें ले जानेके लिए शक्तिके अनुसार मैं प्रयत्न करता हूँ। उसमें सफल होना सर्व शक्तिमान ईश्वरके हाथमें है। न्यायालयमें "अमुक बात ऐसी है" यह सिद्ध करनेके लिये प्रमाणकी आवश्यकता है और "अमुक बात ऐसी नहीं है" इसके लिये विशेष प्रमाणकी आवश्यता नहीं होती। चोरीका अभियोग साबित करनेके लिये अपनेपास प्रमाण होना चाहिए। "मैं अमुक समयमें अमुक स्थानपर था।" ऐसा प्रमाण यदि वह लावे तो विरुद्ध पक्षवालेको उसके सम्बन्धमें प्रमाण देना चाहिए। इसी प्रकार ईश्वर न माननेवालेको यद्यपि विशेष प्रयास करनेकी आवश्यकता नहीं, तथापि "वह नहीं है" यह सिद्ध करनेके लिये उसके पास अच्छा प्रमाण होना चाहिए।

"यथा घटादिकार्यं सकर्तृकम्, तथा क्षित्यङ्कुरादिकमपि नहि तत्कर्तृत्वमस्मदादीनाम् सम्भवति तत्कर्तृत्वेनेश्वरसिद्धिः"। हमारे नैयायिक लोग ईश्वरके आस्तित्वके लिये अनेक प्रमाण मानते हैं। कर्त्ताके विना कोई भी वस्तु बनी हुई इस जगत्में नहीं दिखती। कुम्हारके बिना घडा कैसे बन सक्ता है? बिना कर्त्ताके कोई भी कार्य नहीं हो सकता। यह स्पष्ट है। हमें जो इतना तना बड़ा तेजस्वी प्रचंड सूर्य दिखाई देता है, उसका बनानेवाला क्या कोई न होना चाहिए? क्या यह आपही आप हो गया? नास्तिक लोग ऐसा मानते हैं वे ईश्वरका आस्तित्व स्वीकार नहीं करते। उनका कथन है कि जब सूर्य बनाही नहीं वह स्वयंसिद्ध है तब उसके बनानेवालेकी क्या आवश्यकता है?। उनकी यह युक्ति कहांतक सत्य है, इसकी जांच अब हमें करनी चाहिए मनुस्मृतिके बारहवें अध्यायमें लिखा है कि अपने तर्कवितर्कसेही सत्यका निर्णय करो'। "बाबावाक्यं प्रमाणम्" यह सत्य प्रमाण नही है इसके अनुसार चलना छोड दो। इसी प्रकार मैं तुमसे यह आग्रह नहीं करता कि—अमुक एक बात एक अमुक पुस्तकमें लिखी है, उसको तुम सच मानो'। यदि कोई ऐसा करे भी तो यह बात मुझे प्रिय भी नहीं। प्रत्यक्ष प्रमाणसेही जब हमारी पक्की खातिर हो

जाय, तभी उसे सच मानना चाहिए। सिर्फ वेदपरही अपना सारा विश्वास नहीं छोड देना चाहिए! अच्छा इस जगत की उत्पत्तिके विषय पहले हमें विचार करना चाहिए। पदार्थविद्या, सृष्टिक्रमशास्त्र, भूगर्भविद्या इत्यादि शास्त्रोंके देखनेसे मालूम होता है कि इनमें जो कुछ कहा गया है वह सब सप्रमाण है। इन पुस्तकोंमें मतमतान्तर देखनेमें नहीं आते। न्यायशास्त्र सिद्ध करता है कि, "**कारणमन्तरा कार्यम् नोत्पद्यते**" अर्थात् जैसे घट बनानेके लिये कुम्हारकी आवश्यकता है कुम्हारके बिना वह नहीं बनता वैसेही इस पृथ्वीको बनानेके लिए कुम्हारकी तरह कोई कर्त्ता अवश्य होना चाहिए। वह आप ही आप स्वयं नहीं बन सकती। जिस पृथ्वीपर हम निवास करते हैं वह असंख्य परमाणुओं के योगसे बनी है। चाहे कोई पदार्थ हो उसका एकीकरण अनेक परमाणुओंसे बना हुआ है। जैसे फौलाद अनेक परमाणुओंसे बना है। वैसेही हीराभी परमाणुओंके योगसे ही बना है। जगतमें एकभी ऐसी चीज नहीं जो परमाणुओंसे न बनी हो। अर्थात् प्रत्येक वस्तु प्रथमसे परमाणुरूप होती है। पर जब उनका एक जगह संयोग होता है तब वह पूर्ण रूपसे अपना स्वरूप धारण करती है। भिन्न भिन्न रहनेवाले परमाणुओंका एकत्व होना और एकत्व हुए परमाणुओंका अलग होना ये दो स्वतन्त्र क्रियाएं हैं। यदि उनका वियोग न हो तो संयोग भी न होगा, और यदि संयोग न हो तो वियोग नहीं हो सकता यह स्पष्ट है कि किसी विशेष समयमें पृथ्वीके परमाणु अलग अलग थे। और यदि वे ऐसे न होते तो एकत्रभी न हो सकते थे। ऐसी दशामें जिस पृथ्वीवर हम आज निवास कर रहे हैं वह अस्तित्वही न होती। जैसे गेहुंके आटेमें पानी डाल कर जब हम गूंदते हैं तो उसका एक लौंदा बन जाता है और अलग अलग रहनेवाले परमाणुओंका संयोग हो जाता है। बस यही हाल इस पृथ्वीका है। प्रारम्भमें असंख्य परमाणु थे और वे किसी न किसी साधनसे एकत्र हुए। और इस कृतिका (जिसे आज प्रत्यक्ष देखते हैं) कर्त्ता कोई न कोई अवश्य होनाही चाहिए। यह निर्विवाद है। इस विषयमें फिजिकल सायन्स और वेद दोनोंकी सम्मति बहुत बड़ी देखनेमें आती है। परमाणु अनादि हैं ऐसा उनमें कहा है। वे उत्पत्ति और नाशसे रहित हैं, सूर्य भी परमाणुओंसेही बना है। अविद्वान् लोगोंको यह ऊपर्युक्त कथन ठीक न जान पडेगा। तथापि शास्त्र शिक्षित लोगोंको तो अवश्यही स्वीकार करना पडेगा कि अलग अलग रहे हुए परमाणु मिल सकते हैं और संयुक्त हुए परमाणु अलग अलग होते हैं। नास्तिक लोग भी पृथ्वीका अस्तित्व स्वीकार करते हैं। ऐसा कोईभी न मिलेगा जो मानता हो कि

पृथ्वीका अस्तित्व ही नहीं है । जैसे जलतत्वके तीन रूपान्तर, (बर्फ, पानी, और माफ) होते हैं वैसेही सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, तेज, इत्यादि सबके परमाणुओं मे थोडा बहुत रूपान्तर होता ही है । सांख्य शास्त्रकारने कहा है कि यह पृथ्वी प्रारम्भमें प्रकृति स्वरूपमें थी । तदनन्तर वायु रूपमें आई इसके बाद वह गोलाकार हो अण्डाकृति हुई और नारंगीकी तरह गोल मानी गयी पदार्थविज्ञानशास्त्रमें भी ऐसाही वर्णन है, इससे सिद्ध होता है, कि पृथ्वी एकवार नहीं बनी है । विद्वान् नास्तिक लोगभी यह बात स्वीकार करते हैं । आज कलके नास्तिक लोगोंका बड़ा विचित्र हाल है । एकदो अंग्रेजी विद्वानोंके ग्रन्थ पढ़कर यह चतुर लोग अपने पूर्वजोंके इस विषयके ऊपर बनाऐ हुए ग्रन्थोंकी ओर बिलकुल ध्यान न दे यह कहा करते हैं कि यह सृष्टि कुदरतसे ही (नेचरसेही) बनी है । अपने आपही निर्मित हुई है । इसका बनाने वाला कोई भी नहीं और वह किसीसे बनाई भी नहीं गई । बिना कर्ताके संसारमें कोई मी वस्तु नहीं मिलती । " बाप नहीं, मैं हूं " यह कहना जैसे मूर्खता पूर्ण वैसेही उपर्युक्त कथन भी समझना चाहिए । पृथ्वीका बनाने वाला कोई न कोई होनाही चाहिए, यह निर्विवाद है । यह बात मैं मानताहूं कि लोहचुम्बकमे जैसे आकर्षण शक्ति है वैसेही इस पृथ्वीके परमाणुओंमें भी आकर्षण शक्ति है । इसलिये पदार्थोंमें वजन होनेसेही कोई वस्तु पृथ्वीपर नहीं गिरती किन्तु सिर्फ पृथ्वीके आकर्षणसे नीचे आती है इस विषयका अनुभव हमको उत्तर ध्रुव × प्रदेशमें अच्छा मिल सकता है । हवासे, अन्नसे और दूसरे अन्यकारणोंसे हृष्ट पुष्ट और शुष्क होनेवाले मनुष्यका उदाहरण न लेते हुए एक लोह खंडकाही उदाहरण लीजिए, उसके वजनमें किसी प्रकारका फेरफार नहीं हो सकता । जिस लोह खंडका

× यहां पर मुझसे यह कहे बिना नहीं रहा जाता कि सम्प्रति जो लोग कहते हैं कि गुरुत्वाकर्षणका आविष्कार न्यूटनसाहबने किया सो न्यूटनको हुए तो अभी लगमग चारही सौ वर्ष हुए हमारे यहां यह विद्या बहुत प्राचीन कालसे मालूम है अर्थात प्रगट है । वेदकी बात जाने दीजिये, हालकेही ग्रन्थ देखनेसे आपको विश्वास हो जायगा । भास्कराचार्य्यके " सिद्धान्तशिरोमणि " ग्रन्थको बने लगभग ११०० वर्ष हुए । इसके पहले यह विद्या-हमारे लोगोंको अवगत होनी चाहिए । यह सभी विद्वान पुरुष स्वीकार करेंगे, सिद्धान्त शिरोमणिमें लिखा है कि:—

आकृष्टिशक्तिश्च मही तया यत्खस्थं गुरु स्वाभिमुखे स्वशक्त्या ।
आकृष्यते तत्पततीव भाति, समे समन्तात्क पतत्वियं खे ॥

अब कहो कि गुरुत्वाकर्षणका आविष्कार न्यूटनने किया या हमारे पूर्वजोंने ? अपना सोना तो पीतल और दूसरेका पीतल सोना मान बैठने वालोंकी बुद्धिकी बलिहारी ।

वजन यहां एक सेर होता है उसका उत्तर ध्रुवके पास डेढ सेर हो जाता है इसका कारण क्या है ? इसका कारण आकर्षण को छोड अन्य कुछ नहीं. यहां पदार्थका मध्याकर्षण होनेसे उसके वजनमें वृद्धि नहीं होती । पर ध्रुवके पास विशेष आकर्षण होनेके कारण वजनमें वृद्धि होती है । इससे स्पष्ट है कि (१) इससे यह स्पष्ट है कि पृथ्वीके परमाणुओंमें आकर्षणशक्ति है । पदार्थ विद्या जाननेवाले नास्तिक लोग कहते हैं कि "परमाणुओंमें आकर्षणशक्ति होनेके कारण वे एकत्र हुए हैं । इस कथनमें क्या शंका हो सकती है ? एकत्र होनेमें दूसरेकी क्या आवश्यकता है ?" उनका यह कथन बाह्यरूपसे तो सच मालूम होता है ! पर इस विषयमें सूक्ष्म विचार करना चाहिए । जब परमाणु पास पास होते हैं तबही वे आकर्षण कर सकते हैं । यदि वे दूर होते हैं तो आकर्षण नहीं कर सकते और न एकत्र हो सकते हैं । अच्छा यदि वे दूर होते हैं तो आकर्षण कैसे कर सकते । थोड़ी देरके लिये यदि हम यह भी मानलें कि वे दूरदूर नहीं रहते किन्तु पास पास होते हैं तो जिस समय वे परमाणु एकत्र हुए हैं उस समय वे अलग २ अवश्य रहे होंगे क्योंकि अलग रहे बिना एकत्र होना कैसा ? क्योंकि यह विषय हम पहले ही निश्चित कर चुके हैं । तब क्या उनका अलग अलग करनेवाला कोई नहीं होना चाहिए । जैसे उनमें आकर्षणशक्ति है वैसे क्या अलग अलग होनेकी भी शक्ति है ? परन्तु यह शक्ति उनमें नहीं हो सकती । यह अनुभव सिद्ध बात है । इससे सभीको यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उनको अलग अलग करनेके लिये किसी न किसीकी आवश्यकता है । पृथ्वीके परमाणुओंमें आकर्षण शक्ति होनेके कारण ही वे आपही आप कदापि अलग अलग नहीं हो सकते नास्तिक लोग इस जगह यह शंका करते हैं कि "परमाणु अलग अलग करने के लिये किसी की आवश्कता नहीं ।" हवा उनको अगल अलग कर देती है । उनका यह कथन भी कहां तक सच है यह देखनेके लिये पहले यह विचार करना चाहिए कि हवा क्या चीज है । आजकल की सायन्स विद्यासे हमारे देखने में आता है कि हवा कोई स्वतन्त्र वस्तु नहीं है । तथा वह आपही आप नहीं उत्पन्न हो सकती । हवा का घेरा असीम है । यहां तक जाना गया है कि १२ योजन पर्यन्त वायु सघनतासे भरी हुई है । इसके बाद ज्यों ज्यों हम ऊपर जाते हैं त्यों त्यों हवा धीरे धीरे कुछ हलकी होती जाती है । नीचे की जड़ और भारी हवासे जब सूर्य के प्रकाशका सम्बन्ध होता है तब वह तप्त और हलकी होकर धीरे धीरे ऊपरको उठती है ऐसे ही चलनेसे वायु उत्पन्न होती है । इससे हमें स्पष्ट जान पडता है कि

हवा आपही आप उत्पन्न नहीं होती किन्तु उष्णतासे ही उत्पन्न होती है । जब उष्णताही हवा होनेका कारण है तब पहले हमें यह निर्णय करना चाहिए कि उष्णता क्या है ? उसका कारण क्या है। उष्णता अर्थात् अग्निके उत्पन्न होनेके लिये वर्षण की आवश्यकता है। किसी पदार्थके घर्षण बिना अग्नि कदापि उत्पन्न नहीं होती। यह अँग्रेजी शास्त्राकारोंका कथन है, और हममेंसे भी प्रत्येकका ऐसाही अनुभव है । पृथ्वीके परमाणुओंके एकत्र होने के पहले उनको अलग अलग होना चाहिए । और उनको अलग अलग करने के लिये अन्य हवा की आवश्यकता नहीं है यह नास्तिक लोगोंका कथन है । परन्तु हवा के उत्पन्न होने के पहले उष्णता की आवश्यकता है । और घर्षणके बिना उसकी उत्पत्ति हो नहीं सकती तथा घर्षण भी कुछ आप ही आप हो नहीं सकता । उसके होनेके लिये भी किसी की आवश्कता होनी ही चाहिए । घर्षण साधन न हो तो अग्नि अर्थात् उष्णता उत्पन्न हो नहीं सकती । उष्णताके बिना वायु अर्थात् हवा उत्पन्न नहीं हो सकती और जब हवा नहीं तब पृथ्वीकी उत्पत्ति भी असंभव है । इससे स्पष्ट है कि घर्षण साधन अवश्य होना ही चाहिए । गतिके विना ऊष्णता बिलकुल उत्पन्न नहीं हो सकती । इस गतिकी उत्पात्ति कहांसे है, सो अँग्रज शास्त्रकार नहीं कह सकते । यहां उनका साहस छूट जाता है और इसके विषयमें उनकी मति काम नहीं देती । उनको आजतक ६६ तत्वोंका पता लगा है । उनका शास्त्र आजतक बाल्यावस्थामें ही है । ईश्वरके सम्बन्धमें उनको आजतक कुछ भी ज्ञान न था । आजतक वे यह मानते थे कि पृथ्वीके आसपास ४८ मीलतक वायु घिरी हुई है और सूर्यकिरणके आधारसे वह नीचे आती है । इस ४८ मीलके आगे क्या है इसकी उन्हें कल्पना भी न थी। पता लगते लगते उन्हें अब यह ज्ञान हुवा है कि हवा व्यतिरिक्त ईथरके समान कुछ पदार्थ है। परन्तु ईथर विषयक ज्ञान हम लोगोंको बहुत प्राचीन कालसे था । " ईथर " अर्थात् " आकाश " और वाक्युम अर्थात शून्य । हमारे आजकलके लोंगोंको संस्कृतका ज्ञान न होनेके कारण सच्चा अर्थ ठीक ठीक समझमें नहीं आता पर हमारे पूर्वजोंको बहुत प्राचीन कालसे इस विषयका पूर्ण ज्ञान था । अब आजकलके इरोपियन पंडित भी अवश्यही इस विषयमें कुछ समझने लगे हैं ।

हमारे शास्त्रोंमें इस गतीके विषयमें बहुत कुछ कहा गया है । उपनिषदमें नचिकेताने जब अपने गुरु यमाचार्यसे प्रश्न किया कि यह गति किस प्रकार उत्पन्न हुई । तब गुरुजीने उत्तर दिया कि जिस शक्तिसे इस गतिका प्रादुर्भाव हुआ है, उसके प्रकाशित करनेमें सूर्य, चंद्र, या अग्नि इत्यादि कोई भी समर्थ नहीं हैं, उसे

आपही आप स्वयं जानना चाहिये । हमारे शरीरके भीतर एक ऐसी शक्ति है, जिसके योगसे प्राणीका सारा व्यवहार चलता है । उसीके अस्तित्वसे ये सारी इन्द्रियां योग्यस्थितिमें रहती हैं । उसी प्रकार इस संसाररूपी देहमें भी परमात्माकी एक शक्ति बिचर रही है । उसके द्वारा इस दृश्य विश्वमें अखिल व्यापार सरलतासे चलते रहते हैं । ऊपर कही हुई शक्ति यदि शरीरमें नहो तो जिस प्रकार भीतर का सारा व्यापार बंद हो जाय, वैसे ही परमात्मा रूपी शक्तिका यदि अभाव हो जाय तो विश्वका सारा व्यापार उलट पुलट हो जाय, और कोई भी व्यवहार योग्य रीतिसे न चलसके । यह जो विशिष्टशक्ति विद्यमान है वह चर्मचक्षुसे दृष्टिगोचर नहीं होती । उसे देख-नेके लिये दूसरे अर्थात् दिव्य चक्षुकी ही आवश्यकता है । विश्व यह एक बडी भारी घडी है । वह अपने कार्यमें कभी भूल नहीं करती तथापि उसमें चाभी देने वाले की जरूरत तो है ही । जैसे मनुष्यकृत घडी चाभी दिये विना नहीं चलती और यदि चाभी न दी जाय तो बिगड जाती और बन्द हो जाती है । अथवा आनियमिततासे चलती है । यही हाल इस विश्वरूपी घडी का है । एञ्जिन चलानेके लिये ड्राईवर होना ही चाहिए । उसके बिना रेल गाडी नहीं चल सकती । इसी प्रकार इस पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, ग्रह, उपग्रह आदि सबको चलानेके लिये कोई न कोई होना ही चाहिए । मनु महाराजने कहा है कि:—प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि । परमात्मा अत्यन्त सूक्ष्म है । उपनिषद्‌में भी ऐसा ही कहा है:—अणोरणीयान्महतो महीयान् । परमात्मासे सूक्ष्म इस जगत में कोई भी नहीं । इससे किसी को यह न समझना चाहिए कि वह राई अथवा सुईके अग्र भागके समान है । वह सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म और महान्‌से भी महान् है ।

पृथ्वीसे सूक्ष्मजल है । जलसे सूक्ष्म हवा और हवासे सूक्ष्म आकर्षण शक्ति है । वह आकर्षण शक्ति निराकार सूक्ष्म और व्यापक है उसी प्रकार ईश्वर भी निराकार व्यापक और सूक्ष्म है वेदमें भी यही कहा है:—**वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहासद्यत्रविश्वं भवत्येक नीडम् तस्मिन्निदं सञ्च विचैति सर्वम् स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु ॥ ८ ॥ पु.** परमेश्वरको सूक्ष्म शक्तिसे पहचान । वह सूक्ष्मसे सूक्ष्म और सर्व व्यापक है । जैसे ईथर और वाक्यूम् सब जगह है, वैसे ही उसका अस्तित्व सर्वत्र है । भगवद् गीतामें कहा है कि ब्रह्मानन्दसुख अतीन्द्रिय है, अवश्यही इस ब्रह्मानन्दकी प्राप्ति ज्ञानसेही होती है । आत्यान्तिक अतीन्द्रिय ब्रह्मानन्द सुख बुद्धिसे ही जाननेमें आता है । जिस प्रकार तडित विद्युत सर्वत्र है उसी प्रकार ईश्वर सर्वत्र प्रकाशरूप भरा हुआ है ।

मनुमहाराजने उस परमात्माको "स्वप्नाधिगम्यम्" वर्णन किया है समाधिसेही उसे जान सकते हैं। गहन विषयोंका चित्त की एकाग्रता बिना आकलन नहीं हो सकता तब फिर परमात्मा जो सबसे सूक्ष्म है, चित्तकी अत्यन्त शान्तिके बिना कैसे जाना जासकता है? समाधिज्ञान बिना परमात्माका ज्ञान नही हो सकता। भिन्न भिन्न चार प्रकारके लोग प्रकार चतुष्टयसे ही सर्वशक्तिमान ईश्वरको जान सकते हैं। योगी लोग प्रत्यक्ष अनुभवसे परमेश्वरको देखते हैं वही अच्छी तरह देख सकते हैं। तार्किक लोग अनुमानसे यह मानतें हैं कि ईश्वर है। वे कहते हैं:—यत्रयत्र धूमस्तत्र तत्र वह्निः। इस न्यायसे इस जगतका बनानेवाला कोई न कोई होनाही चाहिए। विद्वान लोग शाब्दिक प्रमाणसे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार करते हैं और अबभी स्वीकार करेंगे जिस प्रकार व्याक्यूम् और ईथर सर्वत्र है उसी प्रकार ईश्वर भी सर्वत्र व्यापक है। आकाशकी व्याप्ति सबसे विशेष है। उसी प्रकार ब्रह्म सर्व व्यापक है— ऐसा औपमानिक लोग मानते हैं। जब हम हिमालय पर्वतपर बसते थे तब एक कंद हमारे खानेमें आई थी। उसकी मधुरता इतनी अपूर्व थी कि तुमसे यदि कही जाय तो तुम उसकी कल्पना नहीं कर सकते। मिष्टताके विषयमें तुमको हमारे कहनेसे शाब्दिक ज्ञान हुआ परन्तु कुछ अनुभव नहीं हुआ। इसी तरह केवल शाब्दिक ज्ञानसे ईश्वरका पूर्ण स्वरूप मालूम नही हो सकता। उपनिषदमें भी कहा है:— केवल तर्कसे ईश्वरका सच्चा स्वरूप समझमें नहीं आता। इस सम्बन्धमें जबतक अहर्निश ध्यान न लगाया जाय तबतक उस विषयकी पक्की खोज दुर्लभ है। आज कलके व्यवहारिक तार टेलीग्रामके उदाहरणसे तुम्हारी समझमें आवेगा कि केवल तर्कसे यह विद्या जानी नहीं जा सकती। यह विद्या जाननेके लिये इस विषयका सब प्रकारका ज्ञान पहले सीखना होता है। तभी सच्ची स्थिति अपनी समझमें आ सकती है। बस इसी तरह ईश्वर विषयभी केवल तर्कसे जाननेमें नहीं आता। हमारे ऋषिवर्योंने रात और दिन, क्या जंगल और क्या पर्वतोंकी गुफामें, शीत ताप, वृष्टि आदि दुसह, दुःख सह और कन्दमूल खाकर जो जो अविष्कार अद्यापि अन्य लोगोंने नहीं कर पाये उन्हें कर, जो प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त किया है उसकी ओर हमारे नवयुवकोंका थोड़ा बहुत ध्यान अवश्य जाना चाहिए। यह हमारी उनसे विनती है। उन महर्षियोंके बतलाये हुए मार्गको तुम पकड़ो, इसी मार्गसे तुम्हारा और सबका उस परमात्माके साथ मिलाप होगा। बुद्धिमान् लोगोंने कहा है कि जगतके सब सुख ब्रह्मानन्द सुखके आगे तुच्छ हैं। मनुष्य मात्र इस संसारके सब तुच्छ सुखोंमें आनन्द मानते हैं। और उसके बनकर दास रहते हैं।उन्हें यदि ब्रह्मानन्द पानेका अवसर आवे तो वे इस

आनन्दको कभी न भूलें । हम रातदिन चैतन्य सागरमें निमग्न रहते हैं । तथापि उसके साथ हमारा सम्बन्ध नहीं होता । हम कोरे के कोरेही रहते हैं । परमात्मा किसी एक जगह चुप नहीं बैठा है । वह सर्वत्र व्याप्त है । सूर्यका प्रकाश उसीको दीख पड़ता है जिसकी आखें ठीक होती हैं ।

जैसे अन्धे मनुष्यको वह नहीं देख पड़ता, उसी प्रकार सर्व व्यापक परब्रह्म हमारे समान ज्ञानान्धोंको नहीं दीखपड़ता । परब्रह्म जाननेवालेको जिस ब्रह्मानन्दका लाभ होता है उसकी कल्पना भी हम नहीं कर सकते । परब्रह्मको जाननेके लिये वेदमे सबसे उत्तम मार्ग दर्शाया गया है।उसमें परमेश्वरकी उपासना एक मार्ग है । चित्त स्थिर करनेके लिये उपासना करनी पड़ती है । दूसरा मार्ग उस ज्ञानका है । अज्ञानको दूर करनेके लिये बेदमें ज्ञानकी आवश्यकता बतलाई गई है । इस मार्गसे पहले वेदमें एक मार्ग कर्मकाण्डका दिखलाया गया है । स्मशान वैराग्यका अनुभव यद्यपि प्रत्येक मनुष्यको होता है तथापि खेदकी बात है कि मनुष्य दुष्कृत्य करनेसे पराङ्मुख-नहीं होता । जिसका मन ऐसा है उसका उस पापसे परवृत्त करनेके लिये और धर्माचरणमें चलाकर शुद्ध करनेके लिये वेदमें कर्मकाण्डका विधान किया गया है । पापसे परावृत्त होकर जब मन शुद्ध हो जाता है तब उसे स्थिर करनेके लिये आगे उपासनाका मार्ग बतलाया गया है । मन अति चंचल है । क्षणमें वह यहांसे कलकत्ता पहुंचता है वौर क्षणमें वह सारी पृथ्वीपर भ्रमण करता है । प्रत्येक मनुष्य यही इच्छा रखता है कि हम बड़े भारी बादशाह हो जायँ । तात्पर्य यह कि तृष्णा प्रतिदिन तरुण होती जाती है । कभी शान्त नहीं होती । वस मनकी यही चंचलता दूर करनेके लिये उपासनाका साधन वेदमें बतलाया है । कर्म मार्गसे शुद्ध हुआ मन उपासनासे जब स्थिर हो जाता है तब उसके बाद ज्ञानार्थ ज्ञान मार्ग बतलताा है । इनमार्गोंसे जानेवालोंको परमात्मा की प्राप्ति अवश्य होती है और उसीसे ब्रह्मानन्दका अपूर्व सुख प्राप्त होता है । आजका हमारा विषय " उपासना " है । उपासनाका अर्थ होता है " समीप स्थित होना " । यह चंचल मन जब एक पलभर भी एक जगह स्थिर नहीं रह सकता तब इसको पर ब्रह्मका स्वरूप कैसे समझ पडे ? पातंजलि ऋषिने कहा है कि:—**योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः** । चित्तवृत्तिका स्थिर करना योग है । हालमें जो बहुतसे " योगी " दृष्टि पडते हैं उन्हें योगी न समझना चाहिए । वे ठग योगी हैं । हमारे ऋषिगण बड़े परमार्थी थे । वे हमारे लिये अनेक श्रम सहकर परमात्माकी पहचानका मार्ग बतला गये हैं । उन्होने जो यह श्रम किया है उसमें उनकी स्वार्थबुद्धि

कुछ भी दिखाई नहीं देती। सिर्फ परोपकारके लिये निरपेक्ष बुद्धिसे उन्होंने इतना असह्य कष्ट सहकर हमें सुमार्ग दिखलाया है। इसके लिये हमें उनका कितना उपकार मानना चाहिए ? हमें उनका कितना आभारी होना चाहिए ? और उस मार्गका अवलम्बन करके यदि हम न चलें तो हमारे समान कृतघ्न और कौन होगा ?

महामुनि पातंजलि ऋषिने योगशास्त्रमें कहा है:—**यमनियमासनप्राणायाम प्रत्याहारधारणा ध्यान समाधयोऽष्टावङ्गानि**। अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि ये योग के अष्टाङ्ग हैं। इनमेंसे यम पांच प्रकार का हैं:—हिंसा न करना, चोरी न करना, सत्य बोलना, ब्रह्मचर्य व्रत पालना। अपरिग्रह अर्थात् अन्यायसे दूसरे की वस्तु न लेना। नियम भी पांच प्रकार का हैं:—शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, और ईश्वर प्रणिधान। ईश्वर प्रणिधानका मतलब यह है कि यह सारा वैभव उसी का है हमारा कुछ नहीं। सबका स्वामी परमेश्वर ही है। प्रकृति भी उसी की है, यह शरीर भी अपना नहीं सिर्फ यह थोड़े दिनके लिये हमें मिला है, हमें जो कुछ मिला है सब इसी लिये कि उसका योग्य उपयोग किया जाय। दूसरे की वहन, बेटी को अपने समान जानना। उस के विषयमें पापबुद्धिसे न देखना। इसी प्रकार जो धन हमको मिला है वह व्यभिचार और दुर्व्यसन वासनाओंको तृप्त करनेके लिये नहीं मिला है। किन्तु वह सदुपयोग करनेके लिये ही मिला है। ऐसा सब मनुष्योंको समझना चाहिए। हम तो इस धनके सिर्फ रक्षक हैं। सारे वैभवको ऐसाही समझना चाहिये। इसी का नाम ईश्वर प्रणिधान है।

यम नियमके बाद योगका तीसरा अँग आसन और चौथा अँग प्राणायाम है। प्राणायामका मतलब, श्वासोच्छ्वासगतिका विच्छेद। प्राणायामके विषयमें बहुत लोग योग्य जानकारी नहीं रखते। अनेक लोग हाथपर हाथ ठोंक कर नाक पकड़कर बैठ जाते हैं। इसे कुछ प्राणायाम नहीं कहते। हिन्दुओंके धर्ममें "गतानुगतिकत्व" के अनुसार चलनेवाले लोग बहुत हैं। असली बात तो अलगही रह जाती है और उसकी जगह कृत्रिम और मिथ्या आचार आधमकता है। एक बारका जिक्र है कि एक वैष्णवका गंगादास नामक एक शिष्य था, उसके गुरुने उपदेश दिया था कि "'एक बार जिस वस्तुको अपने हाथमें पकड़ना उसे प्राण जानेपर भी छोड़ नहीं।" कर्म–धर्म संयोगसे एक दिन वर्षा ऋतुमें पैर फिसलनेसे वह कीचड़में गिर पड़ा, दुर्भाग्यवश वहाँ आगे एक गधा खड़ा था उसकी पूँछ इनके हाथमें पड़ गई। गंगादासजी गुरुवचनके पक्के थे, इससे इन्होंने पूँछ नहीं छोड़ी ? गधेने

बहुतसीलातें मारी, पर गुरुवचन भंग कैसे हो बस, यही हाल हमारे आर्य्य देशके लोगोंका हो गया है। सारासार–विचार करना तो ये लोग कभी जानते ही नहीं। सन्ध्या तीन प्रकारकी है वैदिक, साम्प्रदायिक और तान्त्रिक इनमें नाक, कान पकड़नेकी बात किसीमें नहीं पाई जाती। प्राणायाम करके योगी होनेके बदले लोग रोगी होनेकाही लाभ उठाते हैं। योग्यरीतिसे प्राणायाम करनेसे शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का लाभ होता है। पांचवां अंग प्रत्याहार है।

इसका अर्थ यह है कि मन व इन्द्रियोंको विषयोंसे हटाना। छठा अंग धारणा है। अर्थात् मनकी एकाग्रता। सातवां ध्यान, जिस वस्तुमें मन लग गयाहो उसे छोड़ दूसरी तरफ न जाने देना। मन जब स्थिर हो जाता है तब वह परमेश्वरके रूपमें तदाकार हो सकता है। ध्यानके विषय महामुनि कपिलने अपने सांख्यशास्त्रमें कहा है कि:— **ध्यानं निर्विषयं मनः**किसी विषयमें भी मन का न जाने देना ध्यान है। आठवां अंग समाधि है। **तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः** " समाधि साधनसे ही हमें ब्रह्मस्वरूपका अनन्य लाभ होता है। इससे सहजही मालूम हो जायगा कि समाधिकी योग्यता कितनी है। कृष्ण भगवान्ने गीतामें योगी लोगोंका माहात्म्य इस प्रकार वर्णन किया है:—**तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योपि मतोधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन** ॥ मायामोहमे पड़कर मनुष्य स्वकर्तव्यसे परांगमुख हो जाता है। वह मन माना स्वच्छन्द आचरण करके पाप संचय करता है। अनेक कुकर्म करके दूसरोंके लिये भी दुःखरूप बन जाता है। वह समझता है कि हम अजरामर हैं। स्वच्छन्दता से आचरण करनेवाला यह भी विचार नहीं करता कि हमारे सिरके ऊपर कालचक्र घूमता है और वह हमको किसी दिन अचानक उठातो जायगा। उनको यदि इतना भय होता तो वे इस प्रकारका प्रमाद न करते। साधारणतः यह सभी जानते हैं कि हमें मरना है, पर जिसके अन्तःकरणमें यह बात समा जाती है उससे सहसा अनुचित व्यवहार नहीं होते। मृत्युने किसी को नहीं छोड़ा। क्या राजा क्या रंक, सभी इसके पंजेमें फँसते हैं। महाराज भर्तृहरिने कहा है:—

अवश्यं यातारश्चिरतरमुषित्वापि विषयाः।
वियोगे को भेदस्त्यजति न जनो यत्स्वयममून्॥
व्रजन्तः स्वातन्त्र्यादतुलपरितापाय मनसः।
स्वयं त्यक्ता ह्येते शमसुखमनन्तं विदधति॥

अर्थात् बहुत कालपर्यन्त संचित किये हुए विषय अंतमें अवश्य छूटेंगे, फिर उनके वियोग होने में क्या संशय रहा, इस लिये मनुष्य उनको पहले आपहीसे क्यों न छोड़ देवें—क्योंकि यदि विषय आपसे मनुष्यको छोडेंगे तो मनुष्यको बड़ा परिताप होगा और यदि मनुष्य ही अपनी ओर से उन्हें छोड़ देगा तो स्वयं महा सुखशान्ति को प्राप्त करेगा । तात्पर्य इतनाही है कि यह भ्रम पटल दूर करके सम्मार्गवर्ती होने के लिये मनुष्यमात्रको योगज्ञानकी बड़ी भारी आवश्यकता है । योगज्ञानसे उसका आचरण शुद्ध होता है और इह लोक--परलोकमें सुख पाता है । इस लिये योग ज्ञान की इतनी महिमा गाई गई है । अन्तमें सब भाईयोंके प्रति हमारी इतनी ही विनती है कि मनुष्य जन्म सार्थक करनेके लिये वेदाज्ञानुसार चलकर सब कुकर्मों का परित्याग करना चाहिए । शुभ कर्मोंमें निष्ठा रखकर शुद्धभावसे ईश्वर की भक्ति और उपासना करते हुए लोक परलोक सफल कर लेनेसेही हमारा हमारे देशका और हमारी सन्ततिका कल्याण होगा । इत्याशास्महे ।

व्याख्यान ५ वां ।

हमारे सत्य वैदिक धर्मपर पुराणोंका परिणाम ।
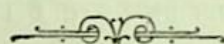
नैनीताल ता. २१ जून सन १९०१.

इस विषयपर श्रीस्वामी नित्यानंदजीका व्याख्यानः—आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढा नड्वा नाशुः सप्तिः पुरन्ध्रिर्योषा जिष्णु रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योग क्षेमो नः कल्पताम् ॥ २२ ॥ द्वाविंशोऽध्यायः यजुः

प्राचीन समयमें संसारकी उत्पत्तिसे महाभारतके कालतक (जिसको पांच हजार वर्ष हुवे) हमारे भारत वर्षमें एक मात्र वैदिक धर्मका साम्राज्य था. भारतीय युद्धोत्तर पौराणिक मत उत्पन्न हुवा. हमारे वैदिक धर्मकी इस मतने असाधारण हानिकी-आजकल जो हमारा धर्म है वह सत्य वैदिकधर्मके प्रतिकूल पौराणीक धर्म हैं. सामाजिक, धार्मिक, नैतिक और आध्यात्मिक (Social, Religious, Moral

& Spiritual) विषयोपर वैदिक धर्मको हटाकर पौराणिक धर्मने अपना अधिकार जमाया हैं. वेदोंमें लिखा है कि ईश्वर निराकार, निर्विकार, अजन्मा, शुद्ध, पवित्र और सृष्टिकर्ता है.

१ सपर्यगात् शुक्रमकाय. शुक्ल यजु: अ. ४० मं. ८.

२ द्यावा भूमी जनयन् देव एक: यजु. अ. १७ मं. १९.

३ नतस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः यजुः अ. ३२ मं. ३

लेकिन पुराणोंने वेदप्रतिपादित १ ईश्वरकी जगह शिव, विष्णु, सूर्य, गणपति शक्ति आदि अनेक ईश्वरोंकी कल्पना की है. और यह कल्पना भारतवर्षीय लोगोंके अं:तकरणोंमें दृढ मूल हो गई है.

पुराणोंमें देवताओंकी आपसमें निंदाभी की है. जैसे शिवपुराणमें विष्णुकी और विष्णुपुराणमें शिवकी. श्रीमद्भागवतकाही उदाहरण लीजिए " भवव्रतधरा येच ये च तान् समनुव्रताः । पाखंडिनस्ते भवंतु सच्छास्त्रपरिपंथिनः ॥ नष्टशौचा मूढधियो जटाभस्मास्थि धारिणः। विशन्तु शिव दीक्षायां यत्रदैवं सुरासवम् ॥ " भागवतस्कन्ध ४ अ. २. श्लो. इसमें शिवकी और शिवभक्तोंकी यहांतक निन्दा की है कि, जो पुरुष शिवभक्ति करेगा वह पाखंडी और सच्छास्त्रोंका विरोध करनेवाला होगा.

इसी तरह पद्म पुराणमें लिखा है " विष्णुदर्शनमात्रेण शिवद्रोहः प्रजायते शिवद्रोहात् न संदेहो नरकं याति दारुणं । तस्मात् च विष्णु नामापि न वक्तव्यं कदाचन ॥" पद्मपुराण, पाताल खंड—

विष्णुका दर्शन करनेसे शिवद्रोह होता है और शिवद्रोह करनेवाला पुरुष दारुण नरकमें जाता है, इस लिये विष्णुके नामका उच्चार भी कभी नहीं करना चाहिये इसी तरह सारे पुराण एक दूसरोंसे विरोध करते हैं. श्रीमद्भागवत और विष्णु पुराणमें लिखा है कि शिव ब्रह्मा, देवी आदि देवताओंको पैदा करनेवाला विष्णु है, वही सब देवताओंका स्वामी है.

देवी भागवतमें लिखा है कि शिव और विष्णु इन दोनोंको देवीनें पैदा किया है. और शिव पुराणमें है कि ब्रह्मा विष्णु आदि देवताओंका उत्पन्न करनेवाला शिव है. और विष्णु आदि देव उसके सेवक हैं. इस तरह आपसमें द्वेषमूलक कलह हैं.

२. अ. २६ नं. २ (यजुर्वेदमें) यथे मां वाचं कल्याणीं मावदानि जनेभ्यः । ब्रह्म राजन्याभ्याम् शूद्राय चार्याय च । ईश्वरनें ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र आदि सारे लोगोंको वेदाध्ययनका अधिकार दिया है उसी तरह ऐतरेय ब्राह्मण पंचिका ८ अध्याय १ शौद्रो वर्ण एक विंशः इस श्रुतिसे शूद्रको २१ यज्ञ करनेका अधिकार

दिया है. उसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण कांड १ प्रपाठ १ ब्राह्मण ४ कंडिका १२ में. आपस्तंब श्रौतसूत्र प्र. १ कं. १९ में. गोभिलीयसूत्र प्र. ४ कं. १० के टीकामें और आपस्तंब प्र. ९ कं १४ तथा सांख्यायन श्रौतसूत्र अ. १४ तथा पुर्व मीमांसा अ. ६ पाद १ सूत्र ४।५। ५१में शूद्रको वेदाध्ययमका अधिकार दिया है. उसी प्रकार " यथामति यथापाठं तथा विद्या फलिष्यति । सर्वस्तरति दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु श्लोक ४८ । श्रावयेच्चतुरोवर्णान्कृत्वाब्राह्मणमग्रतः । वेदस्याध्ययनमिदं तच्च कार्यं महत् स्मृतम् ॥ महाभारत शान्ति पर्व अ. ३२८ श्लोक ४८–४९ इन श्लोकोंमें श्री व्यासजीनें अपने शिष्योंको चारों वर्णोंको वेद सिखानेका उपदेश किया है. उसी प्रकार महाभारत वनपर्व अ. १३४ श्लोक. ११ " चत्वारो वर्णायज्ञ मिमं वहंति ॥ इसके टीकामें नीलकंठनेन्यज्ञं-ज्ञानयज्ञे शूद्रस्याप्यस्त्यधिकारः । शूद्रको ज्ञानयज्ञका अधिकार दिया है. उसी प्रकार शुक्रनीति अ. ४ श्लोक २ में शूद्रको ब्रह्मचर्य धारण करनको अधिकार दिया है. उसी प्रकार पारस्कर गृह्यसूत्रमें " शुद्राणामदुष्टकारिणामुपनयम् " पारस्करगृह्य कांड २ प्र. ६ में शुद्रको मौंजीबंधन बतलाया है ।

उसी प्रकार " ब्रह्मचर्येण कन्यां युवानं विन्दते पतिम् " अथर्व. कांड ११ * अनुवाक ३ सूत्र ५ मंत्र १८ तथा ऋग्वेदं मंडल १ अनुवाक २३ सू. १७९ की प्रचारक स्त्री लोपामुद्रा हो गई.

उसी तरह ऋ. मं. ८ अनु. ९ सूक्त ९१ की प्रचारक अपाला नाम्नी कन्या हुई. उसी प्रकार बृहदारण्यक उपनिषत् अ. ६ में मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी हुई. अध्याय ५ ब्राह्मण ६ में गार्गी बडी ब्रह्मवादिनी बोली गई है । तथा शतपथ ब्राह्मण, आश्वलायन गृह्य, कात्यायन श्रौत सूत्र गोभिलीय गृह्य सूत्र पारस्कर गृह्य सूत्र पाराशर माधव, काट्यायन श्रौत सूत्र, सांख्यायन श्रौत्र सूत्र, आपस्तंबीय श्रौतसूत्र, पूर्वमीमांसा, पातंजल महाभाष्य, महाभारत शांति अ. ३२१ आदि ग्रंथोंमें स्त्रियोंको वेद विद्या सीखनेका पूर्ण अधिकार दिया गया है. परन्तु इस वैदिक मर्यादाको छोडकर श्रीभद्भागवत ग्रंथने " स्त्रीशुद्रद्विज बंधूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा " याने स्त्री, शुद्र, वर्णसंकर, इनकों वेद् श्रवणका अधिकार नहीं है । पुराण ग्रंथोंमें स्त्री शूद्रा-

---

* ब्रह्मचर्य धारण करकें कन्या जवान पतिको प्राप्तकरे । इसीतरह गोभिलीय गृह्यसूत्र में "प्रावृतां यज्ञो पवीतिनीं अभ्युदानयन् जपेत् । सोमोददत्गं धर्वायेति " गोभि. गृ. प्र. २ कं १ सू १९ इस में कन्याको मौजी बंधनकी आज्ञा स्पष्ट तरहसे कीगई हैं ।

दिकोंका वेदाध्ययनका अधिकार हरण कर लिया है। इतना ही नहीं, सांप्रदायिक कालमें याने शंकराचार्य, रामनुजाचार्यके समयमें शुद्रादिकोंपर इतना अन्याय हुआ है "श्रवणे त्रपुजतुभ्यां श्रोत्र परिपूरणं,उच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे हृदय विदारण मित्यादि' वेदान्त सूत्र अ. १ पाद ३ सूत्र ३८. जो शूद्र वेद श्रवण करे तो उसके कानमें सीसा अगर लाख भरनी चाहिये, वेदोच्चार करे तो जिह्वाच्छेद कीजावे और वेद धारण करे तो हृदय विदारण किया जावे। इस प्रकारसे शूद्रोंपर अन्याय हुआ है। इस पौराणिक शिक्षाका हमारे समाजपर ऐसा परिणाम हुआ कि अनेक जातियां हो गई। वैदिक कालमें हमारे समाजमें चार वर्ण और चारही आश्रम थे। और इन चारों वर्णोंमें आपसमें रोटी बेटी व्यवहार होता था। बेटी व्यवहारके विषयमें मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १३ तथा और बहुत जगह लिखा है कि ब्राह्मणको चारों वर्णोंकी कन्याओंसे विवाह करनेका अधिकार है, ब्राह्मणकी कन्या भी उस समय दूसरे वर्णोंके पुरुषसे विवाह कर सकती थी इस विषयमें देवयानीका उदाहरण प्रसिद्ध है। मनुस्मृतिके दूसरे अध्यायमें लिखा है कि " विषादप्यमृतं ग्राह्यं बालादपि सुभाषितं। "

" स्त्रियो रत्नान्यथो विद्या धर्मः शौचं सुभाषितम्
विविधानि च शिल्पानि समादेयानि सर्वतः "

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २ अ. २४ इनमें सारे वर्णोंकी कन्याओंसे विवाह करनेकी मनुजीकी आज्ञा है। ऐसे उदाहरण महाभारत और रामायणमें बहुतसे दिखाई देते हैं। मनुजीने भी नवम अध्यायमें लिखा है कि

" अक्षमाला वसिष्ठेन संयुक्ताधमयोनिजा।
शारंगी मंदपालेन जगामाभ्यर्हणीयताम् ॥ २३ ॥
एताश्चान्याश्च लोकेऽस्मिन्नपकृष्टप्रसूतयः
उत्कर्ष योषितः प्राप्ताः स्वैः स्वैर्भर्तृगुणैः शुभैः "

अध्याय ९ श्लोक ३४ अधमयोनिमें उत्पन्न हुई अक्षमालाका वसिष्ठसे विवाह हुआ और शारंगीका मंदपालसे संयोग होनेके कारण वह पूज्य हुई। ये दो और दूसरी भी बहुतसी हीन जातिमें पैदा हुई महिलाएं पतिके असामान्य पवित्र गुणोंके कारण पूज्य हुई और उनका असाधारण उत्कर्ष हुआ।

प्राचीन समयमें चारों वर्णोंमें आपसमें विवाह होते थे और उनमें परस्पर भोजन व्यवहार भी प्रचलित था। अथर्व वेद कांड ९ और ११ में लिखा है कि अतिथि जहां २ जाय वहाँ वहाँ वह सर्व साधारण लोगोंके हाथका अन्न ग्रहण करे।

इसी तरह तैत्तरीय ब्राह्मणमें लिखा है कि " सर्वासु प्रजासु अन्नमत्ति सः सर्वादिश आभिजयति " अष्टक २ अध्याय ३ अनुवाक ६ सारी प्रजाओंका अन्न जो मनुष्य खाता है वह सारी दिशाओंमें जय प्राप्त करता है । आपस्तंबीय धर्म सूत्रोंमें लिखा है । " आर्याधिष्ठाता वा शूद्राः संस्कर्त्तारः स्युः " प्रपाठ २ पटल २ खंड २ सूत्र ४

भोज्य पदार्थोंके स्वामी आर्य और उन्हें तयार करनेवाले शूद्र होने चाहियें । इसी तरह मनुस्मृति अध्याय १० श्लोक ९९ " जीवेत्कारुककर्मभिः " पौरोगवका काम करके भी शूद्र अपनी उपजीविका कर सकता है । महाभारतमें लिखा है कि " शतं दासीसहस्राणां यस्य नित्यं महानसे । पात्री हस्तं दिवारात्र मतिथीन्भोजयत्युत " विराटपर्व अध्याय १८ श्लोक १७ राजा युधिष्ठिरके भोजन गृहमें सहस्रों दासियां हाथोंमें पात्र लेकर दिनरात अतिथियोंको जिमाया करतीं थीं । इसी तरह महाभारत वनपर्व अध्याय २७ श्लोक १८ में लिखा है कि कौशिक ऋषीका धर्मव्याधने पाद्य आचमनादिसे सत्कार किया । और द्रौपदी रसोई बनाकर अतिथि ब्राह्मणोंको जिमातीथी । उसने दुर्वासा ऋषिकोभी और ऋषियोंके साथ भोजन दिया इसी तरह वाल्मीकि रामायणमें भी लिखा है कि "पाद्यमाचमनीयं च सर्वं प्रादाद्यथाविधि । तामुवाच ततो रामः श्रमणीं धर्म संस्थिताम्" श्लोक ७" राघवःप्राह विज्ञाने तांमनित्यबहिष्कृताम् । अरण्यकांड सर्ग ७४ रामचंद्रजीने शबरीके हाथका जल प्राशन किया मातंगादि ऋषिभी इस शबरीके हाथका अन्नग्रहण करतेथे । (तद्दत्तमाहारादि अंगीकृत्येति—रामाश्रमीटीका) पूर्वकालमें खान पीनेमें कोई भी गडबड नथी । परंतु अब तो ब्राह्मण ब्राह्मणके हाथका भी नहीं-खाते ऐसी पंचायत आपडी है । काश्मीरी ब्राह्मण तो मुसलमानके सकरे चूल्हेपर अन्न पकाकर खाते हैं तद्वत् उर्ण वस्त्रमें लपेटी हुई रोटी खानेमें भी शंका नहीं करते और उसीके वर्तनसे पानी पीलेते हैं, मुसलमानकी बनाई हुई पनीर खाते हैं । उसी प्रकार पंजाबमें ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य वगैरे जातियां कहारका पकाया हुआ अन्न खाते हैं । वायव्य प्रांतमें गौडब्राह्मण बाजारमें कंदोईकी बनाई पूरी खाते हैं । और वह कंदोई कोईभी जातिका हो वे उसकी परवा नहीं करते । कनोजिया ब्राह्मण भी कहारने बेली हुई रोटी तवापर भूनकर खाते हैं । और आपसमें एक दूसरेके हाथका अन्न संबंध हुवे बिना नहीं खाते.

मैथिल लोक वैश्यादिकों के हाथका पकाया हुवा भात नहीं खाते; परंतु रोटी खाते हैं । बंगाली लोक प्रायः सबके हाथका अन्न खाते हैं । उत्कल ब्राह्मणोंकी ऐसी

ही चाल है । जगन्नाथजीमें तो हरएक हर एकके हाथ का खाता है। गौड,ब्राह्मणोंको छोड ये सब ब्राह्मण मांस भक्षण करते हैं, (काश्मीरी, पंजाबी, सारस्वत, कनोजिया मैथिल, बंगांली व उत्कल ब्राह्मण मांस खाते हैं) इन जातियोंमें मांसाहार का निषेध नहीं मानते । (इन जातियों सें सोला वगैरः का विचार नहीं है।) राजपूताने के ब्राह्मणोंमें भी सोला वगैरःका विचार नहीं है । और खाने पीनेमें प्रातिबंध नहीं है । राजपूतानेमें राजा महाराजा सब क्षत्रिय राजा, नापित, कुंभार वगैरह जातियोंके हाथका अन्न खाते हैं, और मसकका पानी पीते हैं और मद्यमांसादि सेवन करते हैं। गुजराती ब्राह्मण और महाराष्ट्र ब्राह्मण इनमें सोला पहरनेकी प्रथा है। परंतु गुजराती ब्राह्मण चौकाके बाहर लाया हुवा अन्न नहीं खाते यह प्रथा महाराष्ट्र ब्राह्मणोंमें नहीं है । ऐसा है तोभी गुजराती ब्राह्मणोंमे ज्ञाति भोजनके समय सडक पर भोजन करनेमें निषेध नही है । तद्वत् महाराष्ट्र ब्राह्मण विद्यार्थी बाजारसे पकाये हुए पदार्थ लेकर खाते हैं। परंतु मद्रासी ब्राह्मणोंमें दूसरेका देखा हुवा अन्नभी अशुद्ध माननेमें आता है। " दृष्टिदोषेण दुष्यति " खाने पीनेकी व्यवस्था धर्मको लेकर नहीं है बरन इसका कुछ पताभी नही लगता ।

वेदोंमें तो अमुकेके हाथका खाना अमुकेके हाथका न खाना इस विषयका उल्लेख हमारे देखनेमें नहीं आया; बल्कि सबके हाथका खाना ऐसा स्पष्ट उल्लेख है ऐसा मैने पहिले कहा है । यह विभिन्नता पौराणिक कालमें प्रचलित हुई । और सांप्र-दायिक लोगोंने तो इस प्रथाको कमाल दर्जेपर पहुंचाई । वैष्णवलोग तो इन्धनको भी धोते हैं परंतु बाजारसे लाया हुआ पिष्ट शर्करा इत्यादि पदार्थ वैसेही उपयोगमें लाते हैं !। वैष्णवलोगोंने इस प्रपंचको बढाकर इतनी फूट आपसमें पैदा की है कि यदि स्त्रीका पति रामानुज संप्रदायी होवे और स्त्री वल्लभसांप्रदायी हो तो स्त्री पुरुषोंमें भी खाने पीनेका व्यवहार नहीं होता. इन पौराणिक मतोंनें हमारा वैदिक धर्म छिन्न भिन्न करदिया है।पूर्वकालमें हमारे देशमें युवावस्थामें विवाह होते थे, परंतु अब वह व्यवस्था पौराणिक शिक्षाओंसे बदल गई है. पूर्व कालमें ऋषि की कन्यायें जन्मभर आविवाहित रहतीं थी । शांडिल्य ऋषि की कन्या धृतव्रता, भरद्वाजकी कन्या श्रुतवती, देखो भा० शल्य गदापर्व अ० ५४ श्लोक ८ और उसी पर्वमें अध्याय ४९

इसी प्रकार महाभारत शांति पर्व अ-३२१ सुलभा राज कन्या । बृहदारण्यकमें गार्गी, वडवा प्रभृति आजन्म ब्रह्मचारिणी रहीं । भारत आदि पर्व अ. १२ कुंती, वनपर्व अ. ५३ दमयंती, आदिपर्व अ. १७१ तपती कन्या, अ. ७६ देव यानी । इसी प्रकार वृद्धकन्या इत्यादि स्त्रियोंनें पूर्ण युवावस्थामें आकर विवाह किये ।

परंतु पौराणिक शिक्षाओंसे तो एक एक दिनके लडके लडकियोंके विवाह होने लगे और ऐसा न किया तो पाप मानने लगे. ऐसी अवस्था प्राप्त होनेसे हमारी सब प्रजा नष्टप्राय हो गई है, वैदिक सिद्धांतानुसार वर्णव्यवस्था गुणकर्म स्वाभावानुसार मानी गई है. ऋ. मं. १० सूक्त १०७ में ब्राह्मण क्षत्रियोंके लक्षण गुण कर्म स्वभावसे ही किये गये हैं। और यह व्यवस्था सृष्टिके आरंभसे महाभारतके समयतक प्रचारमें रही देखो. ऋ. ऐतरेय ब्राह्मण पंचिका २ अध्याय ३ में कवष ऐलूष नामका शूद्र था वह ब्राह्मण हो गया। उसी प्रकारसे महाभारतमें (कक्षीवान् नामका शूद्र था वह भी ब्राह्मण हो गया) देखो महाभारत शान्तिपर्व अध्याय २९७.

देखो ऋ. मंडल १ सूक्त ११६–१२६ इन सूक्तोंका ऋषि कक्षीवान् शूद्र था। सिंधुद्वीप, देवापि, विश्वामित्र वीतिहव्य ये सब क्षत्रिय जातिसे ब्राह्मण हो गये हैं देखो महाभारत शल्य गदापर्व अ. ४० श्लो १० महाभारतमें इस तरहके अनेक उदाहरण हैं। इससे सिद्ध होता है कि गुणकर्म स्वभावसे ही वर्णव्यवस्था है और इसके लिए बहुत प्रमाण हैं। परंतु पवित्र वेदाज्ञाके विरुद्ध सांप्रदायिक रूढिने जन्मसे वर्णव्यवस्था मानकर जातिभेद इतने पैदा किये कि रोटी बेटि व्यवहार भी संकुचित हो गये—यह व्याख्यान बहुत विस्तृत था परन्तु कई कारणोंसे अब वह पुरा नहीं मिला कहीं खो गया इस लिए पाठक इतने पर ही सन्तोष करें॥ इति शम्.

॥ ओ३म् ॥

छठा व्याख्यान.
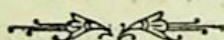
देशाटन.

मुम्बई ता. २९ जुलाई, १९०२.

आयो धर्माणि प्रथमः ससाद ततो वपूंषि कृणुषे **पुरूणि ध्यास्युर्योनिं** प्रथम आविवेशा योवाच मनुदितां चिकेता अथ. ५–१–२। प्रिय बंधुओं और भगिनियाँ। आजके मेरे व्याख्यानका विषय **देशाटन अथवा परदेश गमन** है, सम्भव है आप विचारें कि मुझे इस विषय पर बोलनेका क्यों आवश्यक्ता पड़ी, तो मैं इस विषयमें कहूंगा कि वर्तमान कालमें अपनेमें यह अति संदिग्ध विषय हो गया है,

यदि किसी विषयमें सन्देह उत्पन्न हो जाय तो उस विषयमें यथामति निर्णय कर लेना श्रेयस्कर होता है। यह आपसे पहलेही कह देता हूं कि इस विषयपर मैं जो कुछ कहूंगा, वह वेद और तदनुकूल अन्य ग्रन्थोंके आधारपर कहूंगा; कारण के इस सम्बन्धमें वेदोंमें कुछ लिखा है या नहीं यह जानकर उसके अनुसार वर्ताव करना अपने लिये सब अंशोंमें श्रेयस्कर है। अस्तु।

परदेशगमन अथवा जलपर्यटन इस विषयपर विचार करनेवालोंके वर्तमानमें तीन पक्ष हैं। एक सुधारक, दूसरे कुधारक और तीसरे वैदिक। कुधारकपक्षका कहना है कि यदि एकाद बात शास्त्रसम्मत हो, परन्तु रूढिके विरुद्ध हो, तो वह बात करनेको कभी तैय्यार नहीं होना चाहिये। यह मंडली यद्यपि वेदोंको माननेवाली है परन्तु वेदोंकी आज्ञाकी अपेक्षा रूढिकी ओर इसकी भक्ति अधिक है।

दूसरा सुधारक पक्षः—यह कोईभी बात चाहे वह वेदों और शास्त्रोंमें हो, चाहे न हो, जो वर्तमान स्थितिमें अपने लोगोंका हित करने योग्य होवे वह निस्सन्देह अवश्य करना इस प्रकार माननेवाला है। और इसी कारण परदेशगमन करनेमें कोई हानि नहीं, यह इस पक्षका कहना है।

तीसरा जो पक्ष है वह वैदिक है। इस पक्षका कहना यह है कि वेद और शास्त्रोंसे जो बात सम्मत है वह रूढिमें हो वा न हो, उसको करना मनुष्यमात्रका धर्म है। और तदनुकूल वर्तना चाहिये।

परदेशगमन करनेकी यदि वेद और धर्मशास्त्रोंकी आज्ञा होय तो समुद्रयात्रा करनेमें में कोई हानि नहीं। इन तीनों पक्षोंको ध्यान में रखकर आजके व्याख्यान का विषय कितने महत्त्व का है, और कितना वादग्रस्त है यह आपके ध्यानमें आ जायगा।

मैं आपसे एक बात कहना और उचित समझता हूं, वह यह कि किसी विषयके विवेचन करनेमें—विशेषतः किसी धार्मिक विषयपर विचार करनेमें—मनुष्यको सहनशीलता रखनी चाहिए हिन्दू लोग अति सहनशील हैं। परन्तु वर्तमानमें धर्मके विषयमें उनकी सहनशीलता बिलकुल दृष्टिगोचर नहीं होती। उलटा दुराग्रह मात्र देखनेमें आता है, इससे अपनी और अपने देशकी बहुत हानि होती है। धर्मविषयमें विचार करनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिये सहनशीलता और सत्यशोधकता ये गुण अवश्य होने चाहियें। एकाद बात यदि अपने मतके विरुद्ध होवे तो अपनेको शान्त मनसे सुनना चाहिये, निष्पक्षपातसे उसपर मनन करना चाहिये। परन्तु अत्यन्त दुःखकी बात है कि वर्तमान हिन्दुसमाजका आचरण इससे बिलकुल विरुद्ध है। धर्मसम्बंधमें जब

तक दुराग्रहके स्थान में समाजमें सहनशीलता नहीं आती, तबतक अपनी अधिक अधिक हानि होती जायगी इसमें तिलमात्र सन्देह नहीं ।

समाजमें इस प्रकारकी रुचि उत्पन्न करनेके लिये प्रथम निर्भीक, निष्पक्षपाती, और जिसमें नीतिपूर्ण धैर्य्यपूर्ण रूपसे हो ऐसे धर्मगुरुकी अत्यन्त आवश्यक्ता है । स्वार्थी और मूर्ख धर्मगुरु लोगोंको किस प्रकारका उपदेश देते हैं यह तुम्हारे ध्यानमें आगेके उदाहरणसे सहजमें आ जावेगा ।

रामानुज पंथके एक पंडित थे । वे एक समय राजाके पास गये और कहा-पारमार्थिक कल्याण हो ऐसी आपकी इच्छा हो तो आपको गुरुमंत्र लेना चाहिये, गुरुमंत्र लियेविना स्वर्गप्राप्ति नहीं होगी, इतना ही नहीं परन्तु जिसने गुरु नहीं किया, उसके हाथका जल भी नहीं पीना, ऐसा शास्त्रका वचन है । महाराज आप इसका विचार अवश्य करो, "

पंडितका यह भाषण सुनकर महाराज बोले-" पंडितजी ! आप जो बात कहते हैं वह सत्य है, परन्तु किस प्रकार करूं ? आज मेरी उमर ४० वर्षकी हो गई, आजतक मेरी सारी आयु मद्यमांसका सेवन करते बीती । उसके बिना मेरा गुजर नहीं, अब आप का उपदेश लेऊं तो मुझे यह सब छोडना पडेगा, इस लिये उपदेश लेकर उस अनुसार न चलनेसे उपदेश न लेनाही अच्छा ऐसा में विचारता हूं ।

यह सुनकर पंडितजी हंसने लगे और बोले-" महाराज आपकी यह समझ भूलभरी है; हमारा धर्म गान्धी (पसारीकी) दुकानके समान है, जैसा ग्राहक मिले वैसा उपदेश उसे करना चाहिये । आपकी इच्छा मद्यमांस सेवन करनेकी है सो ठीक है, मैं आपको शाक्तपंथकी दीक्षा दूंगा, यह पंथही ऐसा है कि इसमें मद्यमांसके सेवनसेही मुक्ति मिलती है । "

प्रियबंधु और बहिनो, इस प्रकारके उपदेशक मिलें पीछे क्या बिचारना ? ये पंडित

अन्तः शाक्ता बहिश्शैवाः सभामध्ये च वैष्णवाः ।
नानारूपधराः कौला, विचरन्ति महीतले ।

अन्तःकरणमें शाक्त, वाममार्गी वेद विरुद्ध आचरण करनेवाले, बाहरसे शैव-रुद्राक्ष और भस्म धारण करनेवाले-और सभामें वैष्णव, ये वाममार्गी लोक नाना प्रकारके वेष धरकर पृथ्वीपर घूमते हैं । धर्मोपदेशकी जबतक इस प्रकारकी स्थिति है, तबतक धर्मोन्नति और देशोन्नतिकी बात क्या ? पूर्णतया नीतिमान् और धार्मिक इस प्रकारका धर्मगुरु प्राप्त करनेके पहले अपने आपको सत्यधर्मका ग्राहक बनाना चाहिये यह बात ध्यानमें रक्खो । लोगोंको रुचिकर हो ऐसा उपदेश करना धर्म गुरुका धर्म नहीं है ।

उनका धर्म यह हैं कि जो सत्य है उसका प्रचार करना, पश्चात् समस्त जगत् उसके विरुद्ध होय तो कोई चिन्ता नहीं । आजकल धर्मोपदेशक अपना कर्तव्य नहीं करते। उपदेश करनेका धंधा वर्तमानमें उदरनिर्वाहका एक साधन हो चला है, यह अत्यन्त शोककी बात है।

जानस्टूअर्ट मिलके सुप्रसिद्ध लिबर्टी नामक ग्रन्थमें उसका जीवनचरित्र है, उसमें यह वृत्तांत है कि मिल नोकरी करके अपनी गुजर करता हुआ, कितनेही पत्रोंमें लेख लिखता। एक समय एक गृहस्थने उससे पूछा—" नोकरीमें तुम्हारा जितना समय जाता है उतनी प्राप्ति नहीं होती, इस लिये यह नोकरी छोडकर तुम, एकाद स्वतंत्र पत्र क्यों नहीं निकालते उसमें तुम्हे ठीक प्राप्ति होना संभव है। "

इसपर **मिल**का दिया हुआ उत्तर ध्यानमें रखना चाहिए। उसने कहा—" आपका यह कहना ठीक है, स्वतंत्र पत्र मैं सुभीतेसे चला सकता हूं। परन्तु उसमें मुझे लाभ न होकर मेरी हानि बहुत है। क्यों कि आपको मालुम है समाचारपत्रमें अधिक प्राप्ति करनेके लिये ग्राहक अधिक होने चाहिये ग्राहक प्राप्त करनेके लिये लोगोंको रुचें ऐसे लेख लिखने पड़ते हैं। ऐसा न किया जावे तो कुछ नहीं होता इस लिये स्वतंत्र पत्र निकालनेमें मुझे मेरा विचारस्वातंत्र्य गमाना पड़ेगा। वर्तमानमें इस नोकरीके कारण उदर निर्वाहकी झंझट नहीं करनी पड़ती। इस लिये स्वतंत्र विचारसे स्पष्ट लिखनेमें कोई बाधा नहीं आती।

सारांश अपने धर्मगुरु आज कल धर्मसे जीविका करते हैं । इस लिये जिससे अधिक स्वार्थसिद्धि हो ऐसी बात वे करते हैं। धर्मसम्बंधमें जो सहिष्णुता चाहिये वह नहीं रहती, धर्मगुरु जब तक धर्मपर जीविका करना नहीं छोड़ते तब तक हिन्दुओं की धार्मिक उन्नति होना बिलकुल संभव नहीं।

वर्तमानमें जो सच्चा नीति और धैर्य्यप्रदर्शक निर्भीक, निस्पृही, सत्यनिष्ठ इस प्रकारका एक महात्मा धर्मोपदेशक हो गया।

वेदोंमें मूर्तिपूजा नहीं, "पाषाणादि मूर्तिकी पूजा करना, ईश्वरप्राप्तिका साधन है" इस प्रकार वेदके किसी स्थानमें नहीं लिखा, इसी प्रकार मृतकोंका श्राद्ध करना इसका आधार भी वेदके किसी स्थानमें नहीं। नियोग, अक्षतयोनि स्त्रीका पुनर्विवाह, वेदसम्मत है। ये सब बातें हिन्दू पंडितोंको मान्य नहीं थी परन्तु इस महात्माने स्वयं वेदाध्ययन कर, सूक्ष्मरीतिसे सत्यासत्यका निर्णय किया। सब लोगोंके विरुद्ध होनेपर भी उनकी परवाह नहीं करके मुक्त कंठसे प्रतिपादन किया कि—" पंडितोंका मानना भूलभरा है। **यह महात्मा श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती** हैं। मानसन्मान,

धनप्रतिष्ठा इत्यादि किसी बातकी चिन्ता नहीं करते हुए इस महात्माने प्रचार किया— कि वेदोंका शब्दही सत्य उपदेश है, और इसी उपदेशके अनुसार बर्ताव करनेसे प्राचीन कालमें मनुष्यसमाजने उन्नति की, और अब भी वेदानुकूल बर्ताव करनेसेही उन्नतिका मार्ग मिलेगा, इस महात्माका यह उपदेश जगतके कल्याणके लिये नहीं ऐसा कौन कहता है ?

और एक दूसरे महात्मा हो गये हैं। उन्होंने अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया है। बुद्धके अविश्रान्त परिश्रमसे अधिकांश देश बौद्ध धर्मसे व्याप्त हुआ देखकर **शंकर स्वामी** ब्राह्मण धर्मका वर्चस्व किस प्रकार पुनः स्थापित हो इस पर विचार करने लगे और उन्होंने

समुद्रयात्रास्वीकारः शोधितस्यापि संग्रहः।
इमान् धर्मान् कलियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः ''॥

इस पुराणवचनकी परवा न करके स्मृतियोंका आधार ले शिखा सूत्रादिका त्याग किये हुए बौद्ध लोगोंको फिर शिखा सूत्रधारण करा ब्राह्मण बनाया। इन महात्माका यह काम प्रशंसा करने योग्य नहीं ऐसा कौन कहेगा ? इस महात्मामें विलक्षण नीतिधैर्य्य नहीं था ऐसा कौन प्रतिपादित कर सकता है ?

वेदत्याग, अनृत इत्यादि पातकोंकी गणना शास्त्रोंने महापातक कोटिमें की है। वेदाध्ययनसे पराङ्मुख होकर अन्य कार्योंमें रत रहनेवाला ब्राह्मण सकुटुम्ब शूद्रत्वको प्राप्त होता है ऐसा शास्त्रोंका स्पष्ट आशय होनेपर भी इन महापातकोंका प्रायश्चित्त कराके पवित्र करनेका जो उद्योग स्वामी श्रीशंकराचार्यने किया उसका अपन हिन्दु लोगोंको जरूर विचार करना चाहिये। अनृत आदि महापातकोंको आज खुली रीतिसे करते हुए स्वयं परदेशगमनका निषेध करनेको तैय्यार हैं, क्या यह आश्चर्यकी बात नहीं ?

आपमेंसे बहुत मनुष्योंको मेरा कहना अच्छा नहीं लगेगा। कितनेही तो नापसंद करेंगे। परन्तु शास्त्रकी मर्य्यादा छोड़ आपके अन्तःकरणको प्रसन्न करनेके झगड़ेमें मैं नहीं पड़ूंगा। मैं संन्यासी हूं। जो धर्मशास्त्रसम्मत होगा उसीका प्रतिपादन करूंगा, आपको रुचे या न रुचे।

मैंने इस विषयपर बहुत विचार किया है। परदेशगमन अथवा समुद्रयात्रा करना हानिकारक नहीं अथवा धर्मशास्त्रमें इसका निषेध नहीं है। देशाटन अथवा समुद्रयात्रा करना योग्य नहीं इस प्रकार जो कुधारक लोग कहते हैं वह ठीक नहीं।

समुद्रयात्रा करनेसे मनुष्य धर्मभ्रष्ट होजाता है ऐसा पौराणिक लोगोंका कहना है।

जातिबंधन यह परदेशगमनमें बडी भारी अडचन है । जो कोई विद्या सीखने वा व्यापारधंधा सीखने विलायत चला जावे तो पीछा आनेपर उसे जातिबाहर निकाल देते हैं । जब मैं काशीमें था तो इस विषयपर पंडितोंमें विवाद हुआ । उनके कहनेका तात्पर्य यह था कि—'मनुष्यके विलायत जानेपर खानेपीनेमें गडबड हो जाती है, उन्हें वहां मद्यमांस सेवन करना पड़ता है, अंग्रेजोंके हाथ का पानी पीना पड़ता है, इस लिये ऐसी समुद्रयात्रा करने से धर्म भ्रष्ट होता है, इस लिये इन्हें जातिबाहर करना चाहिये।

अब विचार करना चाहिये कि विलायत जानेवाले ही मद्यमांसका सेवन करते हैं और यहां रहनेवाले नहीं, क्या ऐसा है ? वास्तवमें जिनके लिये मद्य मांस तिरस्कृत है वे न तो विलायत जाकर मद्यमांसका सेवन करते हैं और न यहां रह कर करते है। परन्तु जिन्हें मद्यमांसका सेवन करना है वे इतनेहीके लिये विलायत जावें ऐसा नहीं है। यहां भी बहुतसे ब्राह्मण होटलोंमें मद्यमांस आदि पदार्थोंपर हाथ मारनेमें कसर नहीं करते ! यवन, यूरोपियन आदि, और परधर्मी वेश्याके हाथका भोजन कितनेही करते हैं, इतनाही नहीं किन्तु उसके उच्छिष्ट सामान भी प्रेमसे खाते हैं ! अ:त विरुद्धपक्षी जिन्हे इस बातका विधिनिषेध है उन्हें विलायत गये लोग तो क्या इन लोगोंके हाथका अन्न नहीं ग्रहण करना चाहिये ।

इस विषयमें शास्त्रकी आज्ञा देखो तो यह है कि " **मद्यमांस आदि पदार्थोंका सेवन तो करनाही नहीं** " उसी प्रकार चांडाल आदि नीच कुकर्मी मनुष्योंके हाथका अन्न कभी ग्रहण नहीं करना । परन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इनका परस्परमें अन्न व्यवहार करनेमें अड़चन नहीं। अथवा उसमें कोई हानि नहीं ।

परन्तु आज कल ब्राह्मण आदि वर्णों की भोजनव्यवस्था अत्यन्त विलक्षण हो रही है । उदाहरणार्थ काश्मीरमें बडे२ पंडित और विद्वान् ब्राह्मण मांसभक्षण करते हैं ।

ये मांसभक्षण करनेवाले कश्मीरी पंडित अत्यन्त विद्वान् हो गये हैं । उनमेंसे एकने महाभाष्यपर प्रसिद्ध टीका की है । ये ब्राह्मण मांस खानेमें इतने होशियार हैं कि मुसलमान लोग बकरेके जिस अंगका मांस नहीं खाते, उसतकको ये खा जाते हैं । मुसलमान अपने कपड़ोंमेंसे भोजनकी वस्तु लाते हैं तो यह कश्मीरी ब्राह्मण खा लेते हैं ! इनका चूल्हा कभी अपवित्र नहीं होता, मुसलमानोंतकके चूल्हेपर भी ये प्रसन्नतासे रोटी सेककर खा लेते हैं । जल आदि भरनेके लिये इनके यहां मुसलमान ही होते हैं । इतना सब कुछ है, परन्तु एक कश्मीरी ब्राह्मण यदि यहां आवे तो वह नागर अथवा दक्षिणी ब्राह्मणके हाथका नहीं खावेगा ।

पंजाबमें इस प्रकारकी रीति है कि धीवर (एक जातके शूद्र) भात रोटी पकाते हैं और ब्राह्मण आदि सब उसे खा लेते हैं।

आगरा आदि प्रान्तोंमें गौड़ ब्राह्मणोंमें मांसाहार निषिद्ध माना गया है। परन्तु चोरी छिपे अनेक जन मांससेवन करते हैं। हलवाईकी दूकानकी पूरी तो सब ब्राह्मण पा लेते हैं। पूर्वकी ओर देखो तो कन्नोजिये ब्राह्मणोंमें " नौ कनौजिये और १३ चूल्हे " इस प्रकारकी कहावतही पड़ गई है। कारण कि चूल्हा भ्रष्ट होनेकी इनमें बड़ी धांधली है। एक चूल्हा भ्रष्ट हो जावे तो दुसरा बनाना पड़ता है। इतना होते हुए भी उनमें मांसाहारका प्रचार है यह सत्य है।

अंगरेज लोग अफगानिस्थानमें चढाई करके गये, उनके जनरल लार्ड राबर्ट साहबके साथ सिक्ख लोगोंकी एक पलटन गई थी। उसमें एक पलटन पुरबिये ब्राह्मणोंकी भी थी। एक दिन संध्या समय जनरल साहबने अपनी छावणीके बाहर जाकर देखातो जगह २ चूल्हे सुलगते देखे। यह देखकर यह इतने क्यों सुलगाये गये इसकी तलास करने लगे, तब किसी ने कहा कि ये लोग दूसरेके हाथका बना हुआ बिलकुल नहीं खाते; इस लिये हरेक सिपाहीका चूल्हा अलग २ है। जनरल-साहबको इससे बड़ा आश्चर्य हुआ। वे बोले यह पलटन मेरे कामकी नहीं। लड़ाईके समय यह चूल्हा जलाने बैठेंगे। यह पलटन तुरन्त पीछी भेजी गयी। इस दिन पीछे जो दूसरेके हाथका बना अन्न खा लेते हैं ऐसे मनुष्यही फौज में भरती किये जावें ऐसा अब सरकारी नियम कर दिया है।

बंगालमें कनौजिया ब्राह्मण रेशमी वस्त्र बिलकुल नहीं पहनते, साधारण धोती पहन-कर ये प्रसन्नतासे भोजन कर लेते हैं।

शूद्रोंसे गूंदा हुआ आटा इनके यहां चालु है, इस आटेकी रोटी सिक जानेपर अड़चन पड़ जाती है। एक समय मैं अहमदाबादमें था, वहां एक कनौजिये पंडित आये। वे वहांके सामयिक जज लालशंकरजीके घरपर ठहरे। जज साहबने उनको अपने यहां भोजन करनेका आग्रह किया। परन्तु उन्होने कहा " मैं आपके घर भोजन नहीं कर सकता; हम लोग किसीके हाथ का रांधा हुआ अन्न नहीं खाते, मैं अपना भोजन स्वयं अपने हाथसे बनाऊंगा " पीछे उस कनौजिएके स्वयंपाक करते समय मैं चला गया। तो देखा कि उसकी रोटीका आटा एक घाटी गूंद रहा था। उस घाटीकी घडी हुई रोटी ये पंडित सेकते जाते थे और चूल्हेके पास रखते जाते थे। यह देखकर जज साहबको कितना आश्चर्य हुआ होगा, इसकी कल्पना आप लोग कर सकते है।

मैथिल ब्राह्मणोंके आचार विचार यदि आप देखें तो वे मांससेवन करते हैं इस प्रकार आपको मालूम पडेगा। क्योंकि ये लोग शाक्त हैं। बंगालके लोग तो केवल होटलभक्त हैं यह सब को खबर है। इन लोगोंने अन्य सुधारोंके साथ चोटी रखनेमें भी सुधार किया है। और वह विलक्षण है। कारण कि चोटी सम्बंधी उन्होंने अजब उन्नती की है। यदि आप देखें तो पीछे चोटी रखनेके स्थानमें आगे रखते हैं। इस प्रकार जिसने चोटीको स्वतंत्र कर दी है, उसेही "He is a gentleman" ऐसा कहते हैं। दैवयोगसेही किसीके शिरपर चोटी मिले तो मिले।

आपको मालुम है कि इस बम्बई नगरमें ऐसे मर्य्यादावाले हिन्दु हैं जो नलका पानी कभी नहीं पीते। कारण क्या? यह नल भली बुरी सब जगहोंसे आता है, नाना प्रकारके मनुष्य और अपवित्र वस्तुओंका स्पर्श होता है। इस कारण ये लोग हमेशा कुओंका पानी पीते हैं, परन्तु यह लोग इसका विचार नहीं करते कि बम्बई जैसे शहरमें नलके पानीसे कुएका पानी अत्यन्त खराब होता है। कारण मलमूत्र ले जानेवाली नलियां इस शहरमें जमीनके अन्दर बहुत गहरी होती हैं। यह नलियां हमेशा फूटती रहती हैं। और इनका दुर्गंधिमय पानी जमीनमें पचकर इन कूओंमें जाता है। तब इन कूओंका पानी किस प्रकार पवित्र हो सकता है।

नलका पानी नहीं पीनेवाले ये मर्यादापालन करनेवाले पुरुष उडीसामें जाकर उच्छिष्ट खाते हैं यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध है।

सारांश धर्मसम्बधमें हिन्दू लोगोंकी इतनी निकृष्टदशा हो गई है कि धर्मके नामसे चाहे जो मनुष्य चाहे जो करनेकी कहे कभी कोई उसपर विचार करनेकी झंझटमें नहीं पडेगा।

मैं जगन्नाथ गया था, वहां पंडितोंकी एक सभा हुई। उस सभामें जगन्नाथके विषयमें बहुत चर्चा चली, जगन्नाथकी वास्तविक स्थिति कैसी है? जिसे यह देखना हो वह स्वयं प्रत्यक्ष जाकर देखे। जगन्नाथजीकी प्रदक्षिणा के मार्गमें विमल नामक एक देवी है, नवरात्रिमें इस देवीके सन्मुख बलिदान दिया जाता है, केवल बलिदान देनेके लिये आया हुआ पंडा जगन्नाथके सामने खडा होकर जगन्नाथसे कहता है "महाराज देवी बलि मांगती है" और दूसरा मनुष्य जगन्नाथके नामसे "दो" यह कहके उत्तर देता है। बस उसी समय बलि दी जाती है। यह जगन्नाथकी हालत है। वैष्णव लोगोंको इसपर बराबर विचार करना चाहिये। कि क्यों देवमन्दिरोंको कसाईखाना बना रक्खा है?

राजपुतानामें जाइये, वहां अनेक जातिके ब्राह्मण वस्त्र पहने हुए भोजन करते दिखाई पड़ेंगे। परन्तु गुजरातके लोग रेशमी वस्त्र पहनकर सार्वजनिक मार्गोंमें जाते हैं और उन्हीं वस्त्रोंको पहने गलिगलीओंमे बैठकर भोजन कर लेते हैं।

महाराष्ट्रमें मधुकरी करनेवाले विद्यार्थी सूती वा रेशमी वस्त्र पहन दूसरेके हाथसे पकाया हुआ अन्न घरपर लेजाकर पीछे खाते हैं, परन्तु मद्रासमें तो भोजनपर दृष्टि पड़तेही, वह अपवित्र हो जाता है।

बंगलोरमें मैं एक जजके साथ क्लबमें उतरा था। वहां मुझे एक समय बहुत प्यास लगी, तब मैंने जजसाहबके नोकरसे कहा—" मेरे लिये पानी लाओ "।

जजसाहबने कहा—" आपने यह ठीक नहीं किया, यहां ब्राह्मणके सिवाय किसी दूसरेके हाथका पानी नहीं पीना " निरुपाय उनके ब्राह्मणके आनेतक मुझे प्यासा रहना पड़ा। परन्तु संध्यासमय जब क्लबमें भोजन तैयार हुआ, और ब्राह्मणादि वर्णोंसहित और लोग भोजन करने बैठे तो क्लबमें प्रथानुसार सोडा लेमोनेडकी बोतलें एकके पीछे एक खुलने लगीं। यह देखकर मैंने जजसाहबके पहले नोकरसे पूछा " क्या ब्राह्मणोंने इन बोतलोंमें पानी भरा है ? " तो वह नोकर बोला—" अरे यह पानी तो विलायती ब्राह्मणोंने भरा है, इसमें कोई दोष नहीं है, विलायती वस्तु जितनी हैं वह अति पवित्र होती हैं।"

इस बम्बई नगरमें कितनेही नियम पालनेवालोंकी ऐसी विलक्षण चाल है कि चूल्हेमें जलानेकी लकड़ियां भी धोकर चौकेमें ले जाते हैं। परन्तु यही बज़ारके अन्य पदार्थ यथा गुड़, शक्कर आदि पहले धोकर फिर काममें नहीं लाते! गुड़ किस प्रकार बनता है इसकी आप सबोंको खबर नहीं। गन्नेके रसको पैलकर कढाईमें गर्म करते हैं। इस कामको करनेवाले लोग—ये ढेढ, चमार होते हैं—उबलते हुए इसमें रोटियां डुबो २ कर खाते जाते हैं ओर दूसरी तरफ काम करते जाते हैं। इस प्रकारसे तैय्यार हुआ गुड़ यह मर्य्यादा पुरुष धोकर पवित्र किये विनाही खा जाते हैं।

कैदी लोगोंकी शिखा और जनेऊ छीन ली जाती है इतनाही नहीं, परन्तु उनके खानपानमें भी छुआछुत होती रहती है, परन्तु कैदसे छुटकर आनेपर उन लोगोंको क्या जातिमें नहीं लेते ?

अब आप यह विचार करो कि हिन्दुस्थानके जुदे २ भागोंमें रहनेवाले ब्राह्मण जुदी २ रीति रिवाज बरतते हैं, मद्यमांसका सेवन करते हैं, मुसलमानोंके साथ खान-पानका व्यवहार रखते हैं। क्या आप उन्हें ब्राह्मण नहीं मानते ?

आजकल इस प्रकारकी स्थिति हो गई है कि मद्यमांसआदिका सेवन करनेवाले, अनृत भाषण आदि पाप करनेवाले, वेदाध्ययन छोड़ देनेवाले, ब्राह्मण हो सकते हैं। परन्तु वेदोंकी आज्ञाके विरुद्ध चलकर लोग इनको ब्राह्मण मानते हैं। परन्तु समुद्र-यात्राके लिये वेदोंकी आज्ञा होते हुए भी उसे करनेवाले पतित माने जाते हैं। यह कितने शोकका विषय है ?

अनाचारेण मालीन्यं, अत्याचारेण मूर्खता ।
विचाराचारयोर्योगः सदाचारः स उच्यते ॥

अनाचार, मलिनता और अति आचार मूर्खताका चिन्ह है, परंतु विचारपूर्वक आचारको सदाचार कहते हैं। हिन्दू लोग आज दिन वेदविरुद्ध अनाचार करते हैं। उनमें आज मलिनता भी आ गई है। लकड़ीको धोकर जलाना, चौका देकर उसके अन्दरही बैठा रहना, वृथा अटकाव (छुतछात) का भय करना इयादि अत्याचारोंसे उनकी जो दुर्दशा हो गई, उससे उनकी मूर्खताही प्रकट होती है।

जो आर्य्यलोग समस्त पृथ्वीपर शासन करनेकी शक्ति रखते थे, उनके पुत्र कूपके मेंढककी वृत्ति स्वीकार करनेको तैयार हैं। उनकी जो दुर्दशा हो गई है वह सबकी दृष्टि गोचर हो रही है। जिस समयमें जो करना उचित है, उसके करनेसे धर्मका अति-क्रम नहीं होता, प्रत्युत उसे करनेको अवश्य तत्पर रहना चाहिये, यह सत्य मनुष्य-धर्म है। केवल दुराग्रहसे रूढिका दास बन बैठनेमें सज्जनता नहीं।

सिक्खोंके दशवें गुरु गोविंदसिंहजीके विषयमें कहा जाता है कि उनकी सेना एक बार अफगान मुसल्मानोंके साथ विना अन्नजल ग्रहण किये तीन दिवसतक लड़ती रही। अन्तमें भूखसे लोग तड़फने लगे, पासका अन्न समाप्त हो गया। बाहरसे लानेका मार्ग नहीं रहा। सिक्ख इस प्रकारकी संकट अवस्थाको प्राप्त हो गये । यह देखकर गोविंदसिंहजीने एकदम शत्रुपर टूट पड़नेकी आज्ञा की, सिक्ख लोगोंका आक्रमण अति भयंकर होता है, फिर भूखसे प्राण व्याकुल हैं तो क्या पूछना ? अफगानोंके टुकड़े २ करके उन्होंने उनका नाश कर दिया, उनका सामान जहां था वहीं पड़ा रहा। उस सामानमें अन्न आदि सामग्री बहुत थी, वह सब अनायासही सिक्खोंके हाथ लगी। यह देखकर गुरु गोविंदसिंहजीने अपने मनुष्यों (सैनिकों) से कहा–

"देके चौका कडीकार, अंदर आ बैठे कुडियार
मत भीटेरे मत भीटे, चौका साडा कीये।"

इसका तात्पर्य यह कि "चौका करके, रेखा खींचकर अन्दर बदमाष और लबार

बैठते हैं और फिर कहते हैं कि हमारा चौका छू जायगा परन्तु चौकेका यह रिवाज खोटा है. " यों कहकर उन्होंने एक सूअरका दान्त लेकर उस अन्नपर घुमाया और कहा "चल, निकल मुसलमानी" इतना कहकर अपने आदमियोंको भोजन करनेकी आज्ञा दे दी। इस तरहसे उन्होंने अपने लोगोंके प्राण बचाये । गुरु गोविंदसिंहजी यदि उस अवसरपर ऐसी युक्तिं न करते, तो सिक्खोंकी भयंकर दुर्दशा होती।

सारांश इतनाही है कि जिनके करनेसे जनताका उपकार होवे वे कर्म करने और हानिकारक कर्मोंका त्याग करना, यही मनुष्यका मुख्य कर्तव्य है। देशान्तर जानेसे मनुष्यका आचार भ्रष्ट हो जाता है, यह बात मिथ्या है। चाहे कितनाही बाहर जाया जावे, यदि अपना आचरण पवित्र है, तो कभी भ्रष्ट नहीं होता, परन्तु इस आर्य्यावर्तमें रहकर जो दुष्टाचार करते हैं वे धर्मभ्रष्ट और आचारभ्रष्ट हैं। अस्तु।

इसके अतिरिक्त आप फिर देखिये कि राजपुतानेमें क्षत्रियोंके यहां भोजन बनानेवाले नाई होते हैं, परन्तु इतनेहीसे क्या उन्हें आप क्षत्रिय नहीं मानोगे ?

महाराणा प्रतापसिंहने हिन्दुस्थानकी नाक रक्खी, इस बातको छोटे बड़े सब आज दिन भी अभिमानसे स्मरण करते हैं। इन्हीं राजपूतोंमेंसे महाराजा साहब जयपुर हालमें विलायत गये थे, वे धर्मकी रक्षाके लिये अपनी नौकामें गंगाजल, मिट्टी और भोजन और पीनेके सब पदार्थ यहींसे साथ ले गये थे। और तो क्या बकरे-तक यहांसे ले गये थे। विलायतमें बकरे और मिट्टी भी भ्रष्ट होती है क्या ?

मेरी समझमें हिन्दुओंके विचार बिलकुल बिगड़ गये हैं। वास्तवमें जिनको बहुतसे लोग ब्राह्मण समझते हैं, वे दक्षिणी ब्राह्मणोंकी दृष्टिमें ब्राह्मणही नहीं। मद्रासकी ओरके ब्राह्मण अन्य प्रान्तके ब्राह्मणोंको अशुद्ध समझते हैं; कारण "दृष्टिदोषेन दुष्यति" इस प्रकार दृष्टिदोषसे भी छूत लग जाती है, ऐसी उनकी समझ है । वे अपनेको औरोंसे अधिक (उत्तम) समझते हैं ।

अपना वर्णाश्रमधर्म तो अत्यन्त निकृष्टावस्थामें जा पहुंचा है। मुझे यदि समय मिला तो वर्णाश्रमधर्मकी व्यवस्था किस प्रकार होनी चाहिये इस विषयमें मैं अपने चार शब्द फिर कहूंगा। आठ वर्ष पहले जब मैं यहां आया था, तो वर्णाश्रमधर्मपर एक व्याख्यान दिया था, उस व्याख्यानकी रिपोर्ट लेकर "अनन्त" नामक एक रिपोर्टरने पूनाके "केसरी" में छपाई थी। आनरेबिल जस्टिस रानडेने उसे पढी। लोनावलीमें जब उनसे मेरी भेट हुई तो वे मुझे कहने लगे, "गुणकर्मस्वभावानुसार आप जाति मानते हैं, इस प्रकार आपके व्याख्यानसे प्रतीत होता है, इस विषयमें आपके और मेरे विचार बराबर मिलते हैं।" उस समय मैंने कहा, "हां मैं

गुणकर्मस्वभावानुसार वर्णव्यवस्था मानता हूं, वेदमेंभी इसी प्रकार लिखा है।" इस-पर रानडे महोदय बोले—" जिसके गुणकर्मस्वभाव अछे हों, उसे ब्राह्मण नहीं कहना, सज्जन कहना चाहिये । आज जो ब्राह्मण कहे जाते हैं उन्हें ब्राह्मण मानना बड़ी भूल है। जो ब्राह्मण धर्मात्मा, विद्वान् और गुणसंपन्न हैं वे ही सच्चे ब्राह्मण हैं।"

मिथ्या अभिमानकी घोषणा सुनते २ हिन्दू लोग अपना सर्वस्व खो बैठे हैं। आप नित्य देखते हैं कि—ऊंचींसे ऊंची श्रेणीके हिन्दू एकाद सोल्जरको देखकर डर जाते हैं। अपने लोगोंमें नीचता आ गई है, दुर्गुणसे मनुष्यमें नीचता आती है, और सद्गुणोंसे श्रेष्ठता प्राप्त होती है। हम अपने आपको जितना बड़ा मानते हैं उतने बड़े हो नहीं जाते। बड़े गुणोंसे मनुष्य बड़ा होता है। परस्परकी फूट आप जितनी अधिक बढ़ाओगे उतनीही अधिक आपकी हानि होती जायगी।

अंग्रेजोंने सम्पूर्ण जगत्में आज जो श्रेष्ठता प्राप्त की है, वह उन्होंने परस्परमें भेद नहीं रक्खा इसीसे मिली है।

सन १८५७ में जो घोषणापत्र महाराणी सरकारने प्रकाशित किया था, उसमें यह बात स्पष्ट कही है। "किसी प्रकारका (धर्म, देश, रंग, जाति आदिका) भेद न रखते हुए, मैं अपनी सब प्रकारकी प्रजासे समान बर्ताव करूंगी"। यदि किसी प्रकारका भेदभाव किसी एकाद अधिकारी की ओरसे हुआ है तो यह उसकी भूल है, सरकारकी नहीं। सरकारने नियममें भेद नहीं रक्खा, नियम सबके लिये एकसाही है।

वास्तवमें देखें तो आप जो यह कहते हैं कि परदेशगमन करनेसे मनुष्य भ्रष्ट होता है इसका क्या अर्थ है?

अपनेही देशमें रहकर जो बिन किसी प्रकारकी शंकाके गुड शक्कर खाते हैं, अंग्रेजी औषध पीते हैं, अनेक प्रकारके पशुओंके मांसादिसे बनाया हुआ "सूप" डाक्टरकी सलाहसे उपयोगमें लाते हैं, बड़े २ जानवरोंके पेटमेंसे निकले हुए द्रव्य जो औषधोंमें पड़ते हैं उसको खाते पीते आगा पीछा नहीं देखते, तब तुह्मारी पवित्रता और तुह्मारा धर्म कहां रहा? ब्राह्मणादि वर्णोंमें प्रवेश किये हुए मिथ्या-भिमानको देखकर कबीरने कहा—**जो तू ब्राह्मण ब्राह्मणी जाया, तो और वाट काहे नहीं आया। जो तु ब्राह्मण ब्राह्मणीसे जन्मा** है तो किसी अन्य मार्गसे क्यों नहीं उत्पन्न हुआ?। **तू कस ब्राह्मण हम कस सूद; हम कस लोहु, तुम कस दूध**। तूं ब्राह्मण है तो क्या तेरे में दूध निकलेगा? और हमारे शरीरमेंसे क्या रुधिरमात्र निकलेगा? अपने गुण अच्छे तो आप अछा। बाहरकी पवित्रता यह केवल ढोंग मात्र है, भीतर तो मलमूत्र भरा पडा है। निज देशमें रहकर

अत्यन्त नीच पापकर्म करनेवाले, म्लेच्छ वर्णकी वेश्याके साथ व्यवहार करनेवाले, होटलमें जाकर अभक्ष्य भक्षण करनेवाले, आदि बातें करनेवालोंकी सब जातवालोंकी खबर है। फिरभी यह लोग जातमें रह सकते हैं और रहते हैं, तो फिर विलायत जाकर धर्माचरणसे रहनेवाला एकाद मनुष्य डाक्टर, बारिस्टर, या सिविल सर्वन्ट होकर आतेही जातिबाहर कर दिया जावे यह क्या अच्छा है ? चीन, जापान, ट्रान्सवाल आदि देशोंमें जानेसे अधिक हानि नहीं, परन्तु विलायत जानेमें कौनसा बड़ा पाप लगता है ?। इंग्लंडही बड़े भारी पापसे भरा हुआ है क्या ?

कुधारकोंके जातिभेदकी निष्कारण धांधल मचा देनेसे लोगोंके विचार नितान्त संकीर्ण हो गये हैं। हिन्दुओंके अज्ञानसे उनमें अनेक जुदे २ संप्रदाय बढ रहे हैं। इस कारण एक कुटुम्बके मनुष्योंमें परस्परमें अन्नव्यवहार भी नहीं होता। उदाहरण के लिये एक कुटुम्बमें यदि स्त्री वल्लभसंप्रदायकी हो, और पुरुष रामानुज संप्रदायका, इनमें पतिपत्नीका पवित्र सम्बन्ध होते हुए भी ये एक दूसरेके हाथ-का अन्न नहीं ग्रहण करेंगें। कितनी मूर्खता है ?

इन संप्रदायोंकी धांधल आजकल बहुत बढ गई है, क्या इसमें किसी शास्त्रका आधार कोई दिखाये ? मैं आपसे कहता हूं, ऐसे संकीर्ण विचार अपने पूर्वजोंके नहीं थे, उनके विचार अति उदार थे, वे मनुष्यप्राणीकी एक मानवजाति समझते थे। चारों वर्णोंमें रोटीव्यवहार था इतनाही नहीं, परन्तु बेटीव्यवहार भी था।

जबसे इन संप्रदायोंकी गड़बड़ आरम्भ हुई तबसे बेटीव्यवहार तो क्या रोटी-व्यवहारतक बन्द हो गया।

होते २ यह धांधल इतनी बढ़ गई कि ब्राह्मण ब्राह्मणमें रोटीव्यवहार बंद हो गया। और इसी प्रकार स्थान स्थानमें फूट फैल गई। अपने पूर्वजोंके उदार विचारोंसे पूर्व समयमें जो एक राष्ट्र था, उसके भी टुकड़े २ हो गये। इस जाति-भेदसे आज कितनी हानि हो गई है उसका अनुभव आपको नित्य होता है। शास्त्रोंकी सहायतासे सर्वप्रथम इस जातिबंधनको तोड़ दो, उपरोक्त जातिबन्धनसे अपनेको एक प्रकारकी पराधीनता प्राप्त हो गई है।

मनु कहते हैं-

' सर्वं परवशं दुःखं, सर्वमात्मवशं सुखम् ' ॥ १६० ॥

मनु. अ. ४।

पराधीनताके समान कोई दुःख नहीं, इस लिये आत्मवश स्वतंत्रतारूपी सुखकी इच्छा हो तो गुणकर्मानुसार वर्णाश्रमकी व्यवस्थाका फिरसे प्रचार होना चाहिये।

इन संप्रदायोंका विधान किस शास्त्रमें है ? ब्राह्मण रसोइयोंका काम करें यह किस शास्त्रने कहा है ? पूर्व कालमें ब्राह्मण शूद्रके हाथका बनाया हुआ भोजन करते थे, इस लिये यदि आवश्यक्ता हो तो पचासों उदाहरण शास्त्रोंमेंसे दे सकता हूं। यह भेद वेदोंमें नहीं है, शास्त्रोंमें नहीं है, पुराणोंमेंभी नहीं है । आर्योंमें पहले भोजनव्यवहारमें विधिनिषेध नहीं था । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र ये एक दूसरेके हाथका भोजन करते थे, यह बात पूर्णतया शास्त्रसम्मत है । इतना तो अवश्य है कि मद्यमांस भक्षण करनेवाले और उसी प्रकारसे चांडाल आदि अति नीच कुकर्मी मनुष्यके हाथका भोजन नहीं करना ।

आपस्तम्बीय सूत्रके वैश्वदेव प्रकरणमें इसप्रकार प्रतिपादित किया गया है ।

आर्याधिष्ठाता वा शूद्राः संस्कर्तारः स्युः

अर्थात् आर्यभोजनके स्वामी हों और शूद्र भोजन तैयार करें । जिस समय युधिष्ठिर विराट्के घरपर रहते थे, उस समय द्रोपदीने भीमसे कहा था–

शतं दासी सहस्राणां, यस्य नित्यं महानसे ।
पात्रीहस्तं दिवारात्रमतिथीन् भोजयत्युत ॥

भा. वि. प. अ. १८ ।

अर्थात् जिस युधिष्ठिरकी पाकशालामें लाखों दासियां हाथोंमें पात्र लेकर अनेक अतिथियोंको भोजन परोसतीं थीं, वही युधिष्ठिर आज दूसरोंके दास हो रहे हैं ।

एक समय कौशिक ऋषि धर्म व्याधके घर गये । वहां व्याधने आसनजल आदिसे उनका सत्कार किया, जिसे ऋषिनें स्वीकारा ।

प्रविश्य च गृहं रम्यमासनेनाभिपूजितः ।
पाद्यमाचमनीयं च प्रतिगृह्य द्विजोत्तमः ॥

भा. व. अ. २७

इस श्लोकमें कहे मुताबिक भोजनव्यवहार सब जगह सब वर्णोंमें प्रचलित था । मनुस्मृतिके ९ वें अध्यायमें कहा है–

विप्राणां वेदविदुषां, गृहस्थानां यशस्विनाम् ।
शुश्रूषैव तु शूद्रस्य धर्मो निःश्रेयसः परम् ॥ ३३४ ॥

मनु. श्लो. ३३४ अ. ८ ।

ब्राह्मणोंकी सेवा करना यह शूद्रोंका परम धर्म है । इसी प्रकार भगवद्गीता अध्याय १८ में

" परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् "

अर्थात् सेवा करना यह शूद्रोंका काम है।

जब ऐसा है तब जो वे अन्न रांधे (पकावें) तो क्या हानिसंभव है? मेरे विचारसे जो मूर्ख हैं वेहि शूद्र होनेसे हर प्रकारकी सेवा करें; उनके ऐसा करनेसे अपना भोजनादि सब व्यवहार सरलतासे चलेगा। रामायणमें इस सम्बन्धका प्रमाण—

पाद्यमाचमनीयं च, सर्वं प्रादाद्यथाविधि।
तामुवाच ततो रामः शबरीं धर्मसंस्थिताम्॥

रा. बा. अ. सर्ग. ७४।

अर्थात् पंपासरोवरके पास जब राम गये तो उन्होंने शबरीके हाथका जल ग्रहण किया।

राघवः प्राह विज्ञाते, तां नित्यमबहिष्कृताम्॥

रा. बा. अ. सर्ग ७४।

इसकी टीका करते हुए परम वैष्णव रामाश्रमी स्पष्ट प्रतिपादन करते हैं कि " जब शबरीके दिये हुए जलादिका ग्रहण श्रीरामचन्द्रजीने किया तब शबरी बोली, महाराज मैं आज कृतार्थ हुई। " आप विचार करें, जो इस प्रकार करना वेदविरुद्ध होता तो श्रीरामचन्द्रजीके समान मर्य्यादापुरुषोत्तम कभी ऐसा करते भला! आजकलके महाराजा ऐसा करनेको तैयार होंगे क्या! इसी टीकाकी वृत्तिमें यह लिखा है कि वहाँ रहनेवाले मातंग आदि सब महर्षि " **तद्दत्तमाहारादि अंगीकृत्येति** " वे भीलनीके हाथका अन्न खाते थे। एक समय श्रीरामचन्द्रजी नांवमें बैठकर पार जा रहे थे, तब केवट (धीवर) ने कहा " महाराज भोजन तैयार है। " जो भोजनव्यवहार न होता तो उसको ऐसा कहनेका साहस नहीं होता। श्रीरामचन्द्रजीने उसकी विनती स्वीकार नहीं की, यह बात जुदी है। उन्होंने कहा—" माता पिताकी आज्ञासे १४ वर्ष वनवास करूंगा यह व्रत मैंने लिया है। इस कारण मैं नगरमें नहीं रहूंगा और मुनियोंका भोजन अर्थात् कंद मूलके सिवा और कुछ नहीं खा सकता, इस लिये मैं तेरा अन्न नहीं खाता "

इन प्रमाणोंसे आप सहजमें समझ जावेंगें कि प्राचीन आर्योंमें खानेपीनेकी आजके समान रोक टोक न थी। मद्यमांसका सेवन नहीं करनेवाले सब एक दूसरेके हाथका खाते थे।

वेदमें :भी इसी प्रकार कहा है । अथर्ववेदके नववें कांडमें आतिथि सत्कारका वर्णन है । उसमें लिखा है, अतिथिको सबका अन्न खाना चाहिये । इसका विस्तृत विवरण तैतिरीय ब्राह्मणमें है **"यास्सर्वासु प्रजास्वन्नमत्ति स सर्वा दिशोऽभिजयति** । जो सब प्रजाका अन्न खाते हैं, वे समस्त जगत्‌को जीत लेते हैं । इतने ऊंचे विचारोंकी वेदोंकी आज्ञा होते हुएभी ओर्थोडोक्स हिन्दु उसे नहीं मानते ।

" **शास्त्राद्रूढी बलीयसी** " इस हथियारको सामने रखकर अपनी उन्नतिका मार्ग छोड बैठे हैं । वेदकी आज्ञाके विरुद्ध जो कुछ खोटी रीतरिवाज रूढिमें आई हैं, उनको छोड़ देनेकी शुभ इछा नहीं दिखाई देती । जिसको एक बार पकड लिया वह फिर नहीं छूटती ।

हिन्दुओंकी स्थिति बैरागीके चेलों जैसी हो गई है । दृष्टांत—एक बैरागीने अपने चेलेको उपदेश किया कि " बेटा एक बार पकडके फिर नहीं छोडना । " एक बार वर्षाऋतुमें जाते हुए उसका पांव फिसल गया, परन्तु गिरते २ उसके हाथमें गधेकी पूंछ आगई । चेलेके पूंछ पकडतेही गधा इधर उधर कूदने और दौड़ने लगा । और चेला उसके पीछे २ घसिटने लगा । उसका सारा शरीर छिल गया परन्तु पूंछ नहीं छोडी ! यह देखकर कितनेही विचारवान् कहने लगे 'बाबाजी पूँछ छोड दे, परन्तु वह बोला यह तो तीन कालमें नहीं होगा क्या मेरे गुरुका दिया उपदेश खोटा है' ? यह सुनकर सब लोग " यह मूर्ख है " ऐसा कहकर अपने रस्ते चले गये । इसी प्रकार हिन्दू जो कुछ एक बार स्वीकार कर लेते हैं, सर्वस्व नाश चाहे हो जाय उसे नहीं छोडते । इनपर बरफको गरम कपड़ेमें रहनेकी उपमा ठीक बैठती है । गरम कपड़ेमें रहनेसे बरफ अधिक नहीं पिघलता । कारण कि उष्णताके कारण भीतरकी सरदी तो बाहर नहीं जाती और बाहरकी गर्मी अन्दर नहीं आती, इस लिये बरफ जैसाका तैसा रहता है । हिन्दू ठीक इसी प्रकारके हैं । उनके अन्दर जो एकवार भी घुस गया उसे बाहर कभी नही जाने देंगें और जो किसी प्रकारसे बाहर निकल गया उसे अन्दर नहीं आने देते । हिन्दू समाजका धर्म यही रह गया है । परन्तु सुधारकोंका स्वच्छन्द बर्ताव भी मुझे पसन्द नहीं । एक मराठा गृहस्थ विलायत हो आया, उसकी जातिके अगुआओंनें उससे प्रायश्चित्त कराया, ऐसा करनेमें उसे पंचगव्य पीनेको कहा, तब यह बोला " गोमय और गोमूत्र यह दोनों जिस प्राणीके हैं उसे मैंने विलायतमें खाया है उससे तो शुद्ध हुआ ही नहीं, इ॰ मल मूत्रसे केसे शुद्ध

होऊंगा ?" ऐसे विचारवालोंका प्रायश्चित्त क्या करेगा ? प्रायश्चित्तकी व्यवस्था देनेवालोंको शास्त्रकी आज्ञा क्या है यह मालुम नहीं और प्राश्चित्त लेनेवालेको वह सर्वथैव मान्य नहीं। जो बात अपनी समझमें बिलकुल निरुपयोगी है, और जिसमें कुछ तत्त्वार्थलाभ नहीं वह केवल लोगोंको राजी रखनेके लिये करनेको अपने मत-विरुद्ध तत्पर होना क्या यह बुद्धिमानोंके लक्षण हैं? शास्त्रविरुद्ध स्वतंत्र बर्ताव करनेवाले सुधारकोंको मैं पसन्द नहीं करता।

"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्"

वेद सब धर्मोंका मूल है, इसी लिये वैदिक लोग वेदको मानते हैं, वेद स्वतः-प्रमाण हैं, उनके विरुद्ध हमसे नहीं जा सकता। परन्तु जो अनुचित अर्थ वेदोंके किये गये हैं उनका आदर भी मैं नहीं करता। शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेदके प्रत्येक मंत्रका अर्थ स्पष्ट बतलाता है, उसपर तथा और वेदांगोंके ऊपर विचार करके जो २ यथार्थ अर्थ किये जावे। वेही मुझे मान्य हैं। जब लोग संस्कृत भाषाका अभ्यास करेंगें तबही उन्हें वेदोंके सत्य अर्थोंका पता चलेगा, वर्तमानमें वेदोंमें क्या कहा गया है यह नहीं जाननेसे कोई जो कुछ भी कह दे, अथवा चाहे जैसा मंत्र बोलदे तो उसे ठीक मानकर जनता उसे महा बुद्धिमान् समझती है। वर्तमानमें यह मूर्खता किस प्रकार चल रही है वह एक दृष्टान्तसे समझमें आ जायगा।

एक समय एक धूर्त एक राजनगरके प्रसिद्ध बागमें जाकर, अपने चारो ओर बडे २ ग्रन्थ एकत्र कर ध्यानस्थ होकर बैठ गया। किसीके पूछनेपर कहता "मैं स्वर्गसे आया हूं, मुझे इन्द्रने भेजा है, ये ग्रन्थभी स्वर्गसे उतरे हैं, तुम इन्हें ले जाओ और इनकी पूजा करो।" शनैः २ यह चर्चा समस्त नगरमें फैल गई।

लोगोंके समूहके समूह उसके दर्शनोंको आने लगे। अन्तमें राजाको भी खबर हुई। तब वह भी अत्यन्त नम्रतासे उस धूर्तके दर्शन करने आया। और यथोचित पूजासत्कार कर "आप कहांसे पधारे" इस प्रकार पूछा। इसपर धूर्तने गम्भीर वाणीसे कहा "राजन्, तुम्हारे समीप इन्द्रने मुझे विशेष रूपसे भेजा है, तेरी राजनीति और धर्मप्रीति देखकर इन्द्र अति प्रसन्न हैं। उन्होंने मुझे बुलाकर कहा, जाकर राजाको गुरूपदेश करो, क्यों कि उसके बिना स्वर्गमें आनेकी शक्ति किसीमें नहीं है।

राजाजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और कहा "महाराज अब बिलम्ब क्यों? मुझे शीघ्र उपदेश दीजिये।" वह बोला–"इतने अधिक मनुष्योंके सामने यह नहीं हो सकता।"

राजाने सबको उद्यानके बाहर चले जानेकी आज्ञा दी । जब पासमें कोई न रहा तो अत्यन्त आदरकरके वह धूर्त बोला " महाराज! आपको एक महान् गुरु-मंत्रका उपदेश करनेकी आज्ञा मुझको हुई है, अपना कान इधर करिये ! " राजाने अत्यन्त आतुरतासे ऐसाही किया यह देखकर धूर्तने " **श्रीगणेशाय** नमः । " यह अक्षर उसके कानमें कहे । इस मंत्रका अर्थ क्या है यह पूछनेपर वह बोला, इस मंत्रका अर्थ जिसके ध्यानमें जो आता है वही करता है । परन्तु आप पर इन्द्र की कृपा होनेसे इस मंत्रका सच्चा अर्थ में आज आपसे कहता हूं । परन्तु इस अर्थको आप इस मृत्युलोकके किसी प्राणीसे मत कहना, क्योंकि यह स्वर्गमान्य अर्थ है. इस मंत्रका अर्थ " सतुवेमें गुड रख दो " यह है ! !

राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ, और धूर्तका अति सन्मान किया, और अपार धन देकर आज्ञा मांगी । वह धूर्त तो चला गया, परन्तु राजाने उस दिनसे पीछे जो जो पंडित आवे, उससे श्रीगणेशाय नमः का अर्थ पूछना आरम्भ किया। पंडितगण अत्यन्त आश्चर्यसे कहते " महाराज, इसमें ऐसा क्या महत्त्व है, इसका अर्थ कुछ अधिक गूढ नहीं है श्रीका अर्थ है संपत्ति, यश, कीर्तिवान् भाग्यवान्, गणका अर्थ है संसार, ईशका अर्थ पति, स्वामी, नमःका अर्थ नमस्कार है, अर्थात् इस संसारका स्वामी जो परमात्मा है उसको नमस्कार करता हूं इसका अर्थ यह है ! ! परन्तु राजाको इन अर्थोंसे शान्ति नहीं होती, वह मनमें कहता ये लोग अत्यन्त मूर्ख हैं, इन्हें वास्तविक अर्थका क्या पता । सैंकड़ों पंडित आये, परन्तु राजाका मनभावता अर्थ किसीने नहीं किया । अन्तमें एक चतुर पंडितने विचार किया कि इसमें कुछ भेद है । इसके मूलमें कुछ विलक्षणता है, राजाको जिस अर्थका पता है वह उन्होंने अपनी रानीको विशेषतासे कहा होगा । कारण कि राजाकी प्रीति राणीपर अधिक है । इस प्रकारका तर्क बांधकर वह पंडित उस नगरमें रहने लगा, और रानीकी कृपापात्र एक मालन थी उसका पत्ता किसी युक्तिसे लगा लिया, और उसे अपनी धर्मकी बहन बना लिया, और बहुतसा धन दे करके उसे प्रसन्न कर लिया, कितनेही दिनों पीछे राणीसे श्रीगणेशाय नमः का अर्थ पूछ लेनेकी स्वीकारी उससे ले ली । अवसर देखकर मालणने यह बात रानीसे कही, परन्तु रानी कहने लगी कि इसका अर्थ कदापि किसीसे न कहना ऐसी मुझे आज्ञा है । मालिननें कहा—" बाई-साहब यदि आप मुझे अर्थ नहीं बतावेंगी तो मैं अपने प्राण दे दूंगी ।" बहुतही खट-पट और खींचतान करनेके पीछे निरुपाय होकर राणीने वह अर्थ बतला दिया ।

और उसने तुरन्तही घर जाकर वह अर्थ पंडितको बतला दिया। अवसर देखकर रातके समय यह चतुर भी उस धूर्तके समान पुस्तकें फैलाकर बागमें जा बैठा। कितनेही दिनों पीछे राजाको खबर हुई कि इन्द्रके यहांसे एक पंडित आया है। राजाने विचार किया कि इन्द्रके यहांसेही आया है वा नहीं इसका निर्णय करना चाहिए।

तब वह पंडितके पास जाकर बोला, "महाराज आपको स्वर्गके अर्थकी खबर है।"

पंडितने कहा—'तुम्हारी मर्जी हो उस मंत्रका अर्थ पूछो, तत्काल राजाने "श्री-गणेशाय नमः" का वास्तविक अर्थ क्या है यह पूछा'। पंडित बोला, "राजन् स्वर्गमें रहनेवालोंके अतिरिक्त इसका सच्चा अर्थ कोई नहीं जानता। इन्द्रकी तेरे उपर विशेष कृपा है। इस मंत्रका अर्थ 'सतुवेमें गुड़ रख आओ' यह है।

यह अर्थ सुनतेही राजाको पूर्ण विश्वास हो गया, कि यह पंडित स्वर्गसे आया है। अपने ऊपर राजाकी अपार श्रद्धा देखकर वह पंडित बोला—" इन्द्रने आपको देनेके लिये एक ग्रन्थ भेजा है, उसे स्वीकार करें।" राजाने आदरपूर्वक उसे स्वीकार कर पूछा—"महाराज इसमें क्या कहा है ?" पंडितने उत्तर दिया—" आप थोडे दिन इसका अभ्यास करिये, तब आपको इसमें क्या है, इसका पता भली प्रकार लग जायगा।" पंडितका, राजाको दिया हुआ यह ग्रन्थ लघु कौमदी नामक व्याकरण का ग्रंथ था, राजा उसका अध्ययन भक्तिभावसे करने लगा। थोड़े दिनोंमें राजा स्वयं 'श्रीगणेशाय नमः' का अर्थ करने और समझने योग्य हो गया। तब एक दिन राजासाहबने पंडितजीसे पूछा—महाराज! श्रीगणेशाय नमः का अर्थ 'सतुवेमें गुड़ रख आओ' यह किस प्रकार होता है ?

तात्पर्य, अन्तःकरणमें ज्ञानका प्रकाश होतेही, राजाका भ्रम दूर हो गया, और वह ठग मुझे फंसा गया ऐसा उसे भासने लगा।

आपमें जबतक वेदादि ग्रन्थोंके समझनेकी शक्ति नहीं है, तबतक इस प्रकारके लबार गुरु उनका चाहे जैसे अर्थ करके आपके फंसानेमें कमी न करेंगे। खोटे २ अर्थ करके लोगोंको फंसाना और उनका धन हरण करना यह ब्राह्मण संन्यासी आदि धर्म गुरुओंका धर्म नहीं। संन्यासी तो धर्मके स्थानही हैं। जिन्हें थोड़ेमेंही वेदोंके वास्तविक अर्थ जाननेका मार्ग जाननेकी इच्छा हो उन्हें पंडित गुरुदत्त विद्यार्थीद्वारा प्रसिद्ध किया "टरमिनो-लाजी आफ वेदाज" Terminology of Veadas नामक अंग्रेजी ग्रन्थ

देखना चाहिये । इस ग्रन्थमें वेदार्थ करनेमें आर्ष मार्ग कौनसा है इसका खुलासा संक्षेपमें किया गया है । वेदोंके सरल अर्थ भी किस प्रकार उलटे किये जाते हैं उसका नमूना मैं आप लोगोंको बतलाऊंगा ।

गणानांत्वा गणपतिँ हवामहे । प्रियाणां त्वा प्रियपतिँ हवामहे । निधीनां त्वां निधिपतिँ हवामहे । वसोमम आह मजानि गर्भधमात्त्वमंजासि गर्भधम् ॥ य: २३-१९.

यजुर्वेदके इस मंत्रका अर्थ पंडित महीधरने इतना अधिक विपरीत किया है कि यहां विराजमान अपनी प्रिय बहनोंकी उपस्थितिमें उसका उच्चारण करनेको असमर्थ हूं । गणपति शब्दका अर्थ घोड़ा किया है और **"गर्भधं गर्भ दधाति"** इस प्रकार कहा है । क्या बुद्धिमान् मनुष्य इसे सत्य मानेंगें ? इस मंत्रका वास्तविक अर्थ ऐतरेय ब्राह्मणमें इस प्रकार किया है—

वयं गणानां गणनीयानां पदार्थसमूहानां पतिं पालकं स्वा. मिनं त्वां परमेश्वंर गणपतिं हवामहे गृह्णीमः ।

अर्थात् परमात्मा गणनीय पदार्थोंके पति अर्थात् पालन करनेवाले हैं । उसे हम पूज्य बुद्धिसे ग्रहण करते हैं ।

पौराणिक लोग तो सूंड और दूंदकी एक आकृति बनाकर उसे गणपति समझते हैं । इस गणपतिका जो यह स्वरूप देखनेमें आता है, उसका वर्णन वेदोंमें कहां है क्या कोई मुझे दिखावेगा ?

जिन्होंने परमात्माकी इस प्रकार हंसी की है, वे वेदानुयायी कभी नहीं हो सकते । इसके अतिरिक्त एक बात और शोककी है कि इतने बड़े विशाल दूंदके गणपतिके लिये वाहन छोटासा मूषक दिया है । बिचारे गणपति महाराज तो मूषकपर आरूढ होकर हवा खाने निकले और सामने बिल्ली मिल जावे तो मूषक, और उनपर आरुढ गणपति महाराजकी क्या दशा होगी इसका विचार कभी किसीने किया है ? इससे भी अधिक अज्ञानी कितनेही पौराणिक भक्त हैं, जो केवल गुड़काही गणपति बनाते हैं, और गुड़काही नैवेद्य उसके सामने धरते हैं । गुड़के गणपतिको गुडका नैवेद्य दिखाकर पीछे स्वयं उसे गट्ट कर जाते हैं !

वर्तमानमें वेदोंके अर्थ और उनका विनियोग बिलकुल उलटा करनेमें आता हैं । मैं तो उन्हे कभी नहीं मान सकता । जो अर्थ ऋषियोंने किये हैं वेही मुझे मान्य

हैं। उसके विरुद्ध किसी अर्थको माननेको मैं तैयार नहीं । उन्हींके आधार पर वेदशास्त्रानुकूल जो सुधार होते हैं, वे मुझे स्वीकार हैं और वही सच्चे सुधार हैं।

समुद्रयात्रासबन्धी वेदमंत्रोंके अर्थभी इसी प्रकार उलटे किये गये हैं । परन्तु प्राचीन ऋषियोंनें वेदमंत्रोंके जो अर्थ किये हैं, वे आप देखेंगें तो जानेंगें कि बेदोंमें समुद्रयात्रा करनेकी पूर्ण आज्ञा है । वह मैं आपको बतलाता हूं। यजुर्वेद अध्याय ६ मंत्र २१ वां।

" समुद्रङ्गच्छ स्वाहाऽन्त रिक्षङ्गच्छ स्वाहा "

" इस पर भाष्य—समुद्रवन्ति जलानि यस्मिन् तमुदधिम् गच्छ स्वाहा नौकारचनादि विध्यासिद्धेन यानेन अन्तरिक्षम् आकाशम् गच्छ । "

यह मंत्र समुद्रयात्राका विधायक है। वेदमंत्र कई प्रकारके हैं। जैसे आज्ञा देनेवाले और सम्मति प्रदर्शक, आदि । इस मंत्रमें केवल सम्मातिही नहीं, परन्तु समुद्रयात्राके लिये स्पष्ट आज्ञा दी गई है। कारण गच्छ शब्दका अर्थ " जा " यह है। अनुमति और विधि, इन दोमें विधिवाक्य श्रेष्ठ होते हैं।

यह विषय पूर्व मीमांसाका है । मुझे यहां केवल इतनाही बतलाना है कि समुद्रयात्राके लिये वेदकी आज्ञा है । इसपर कोई शंका करें कि जब वेदमें समुद्रयात्रा करनेकी आज्ञा है तो वह किस प्रकार की जावे इसका विधान भी होना चाहिये । हां विचारसे यदि आप देखेंगे तो विधान अवश्य मिलेगा ।

सुत्रामाणं पृथिविद्यामनेहसँशर्माणमादिति सुँसुप्रसँणीतिम्
दैवीं नावँ स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमारुहेमा स्वस्तये

यजु० अ० २१ मं० ६.

सुत्रामाणं—रक्षण करनेवाली, द्याम् प्रकाशवाली, अनेहसम्—जिससे हानि नहीं इस प्रकारकी, पृथिवीं—मोटी विस्तीर्ण, सुशमणिम्— सुभोभित किये हुए स्थान जिसमें हों, अदितिम्—अखंडित सुप्रणीतिम्—अनेक राजा और प्रजाओंसे युक्त, अर्थात् सब प्रकारके मनुष्य जिसमें होय ॥ दैवीम्—विद्वान् पुरुषोंद्वारा निर्माणित, अथवा दिव्य गुणावाली। नावम्—अर्थात नादेयन्ति प्रेर यन्ति प्रयाताम्—प्रेरणा करनेवाली, नावं, स्वरित्राम्—शोमायमान कलायुक्त और अस्रवन्तीम्—छिद्र रहित; इस प्रकारके लक्षणवाली नावमें, आरुहेम—बैठना चाहिये । यह इस मंत्रका स्पष्ट अर्थ है।

इसपर कोई शंका करे कि इसमें तो बहुतसे मनुष्योंके जानेकी आज्ञा है । इस बम्बई नगरके दोचार हजार सेठ एक साथही जावें तो ठीक, परन्तु अकेले मनुष्यको

समुद्रयात्रा करनेकी आज्ञा वेदमें कहां है ? बात ठीक है, इससे आगेके मंत्रमें ही यह शंका दूर कर दी गई है। उसमें अकेले जाने की भी आज्ञा दी गई है।

सुनावमारुहेयमस्त्रवन्तीमनागसम्। शतारि त्राँ स्वस्तये। यजु अ० २१ मं० ७ यथाऽहं स्वस्तयेऽस्त्रवन्तीमनागसं शतारित्रां सुनाव मारुहेयं तथास्यां युयमप्यारोहत॥

" जिस प्रकारमैं सुखसे छिद्र आदि दोषरहित अनेक यंत्रोंसे युक्त इस प्रकारकी नावमें बैठता हूं उसी प्रकार तुम बैठो "।

इस प्रकार एक दूसरेको उपदेश करनेकी आज्ञा वेदोंमें स्पष्ट मिलती हैं।

पूर्व कालमें वेदोंकी आज्ञानुसार आर्यगण देशदेशांतरोंमें जाते थे, आपको भी उसी प्रकार जाना चाहिये। वेदोंमें और भी कहा है—

मनो निविष्ट मनु सं विशस्व यत्र भूमेर्जुषसे तत्र गच्छ। अथर्व का० १८० अनु० ३ मं० ९

हे मनुष्य तेरी इच्छा हो जहां जा, समस्त पृथ्वी तेरे रहनेके लिये है।

पाराशर स्मृतिमें भी इसी प्रकार कहा है—

॥ वसन्वा यत्र तत्रापि स्वाचारं न विसर्जयेत "

" ब्राह्मणादि वर्ण चाहे जिस देशमें जावें, रहें, परन्तु अपना आचरण नहीं छोड़ें "। जो मनुष्य परदेशगमनके विरोधी हैं, उनकी स्थिति कूपमंडूकोंके समान है। जो इन कूपमंडूकोंकी सुनेंगे तो मुफ्तमें अपनी हानिही कर बैठोगे।

शास्त्रोंमें नौकामें बैठनेकी आज्ञा मात्रही हो ऐसा नहीं है मनुस्मृतिमें यह भी बतलाया गया है कि उस समयमें नौका चलाना जानने वाले चतुर मनुष्य भी भारतवर्षमें थे।

समुद्रयानकुशलाः देशकालार्थदर्शिनः
स्थापयन्ति तु यां वृद्धिं सा तत्राधिगमं प्रति।

मनु० अ० ८

नौका, जहाज आदि बनाने और चलानेमें—निपुण, देशकाल और लाभ—हानि जाननेवाले, जो कर निश्चय करें वह राजाको मान्य होना चाहिये। इसप्रकार अनेक ग्रन्थोंमें लिखा है। केवल लिखाही नहीं है, प्राचीनकालमें अनेक आर्य पुरुषोंने समुद्रयात्रा की है।

आम्लेच्छावधिकां सर्वां सभुङ्क्ते रिपुमर्दनः
रत्नाकरसमुद्रान्तश्चातुर्वर्ण्यजनावृताम् ॥
भा० आदि प० अ० ६८

राजा दुष्यन्तने म्लेच्छोंके अनेक देशोंपर शासन किया था ।
और भीः—

स तु वाजी समुद्रान्तां पर्य्येत्य वसुधामिमाम् ।
अश्वमेध प० अ० ८१

सब देशोंकी अन्तिम सीमातक समुद्रोंको पार करके युधिष्ठिरका घोड़ा गया ।
मनुस्मृतिमें लिखा है—

पौण्ड्काश्चौंड्द्रविड़ाः काम्बोजा यवनाः शकाः ।
पारदाः पल्हवाश्चीनाः किराता दरदाः खशाः ॥
मनु० अ० १०—४४

पौंड्रक आदि अनेक क्षत्रिय थे, परन्तु वेदोंका उपदेश न होनेसे वे शूद्रत्वको प्राप्त हो गये थे । पौण्ड्र अर्थात् जापानी लोग, औंड्रक-उड़ीसामें रहनेवाले, द्रविड़ देशस्थ, कांबोज, हिन्दूकुश पर्वतके उत्तर पश्चिमकोणके यवन, ग्रीसके लोग शका, रोमके रहनेवाले, पल्हवा-ईरानकी पहलकी भाषा जाननेवाले, चीन, किराता-जंगलमें रहनेवाले अनेक लोग, दरद् काकेशस पर्वतके पास रहनेवाले, खशः अर्थात् चीनी तातारी लोग ।

महाकवि कालिदास ज्योतिर्विदाभरण ग्रन्थमें लिखते हैं ।

यो रूमदेशाधिपति शकेश्वरं जित्वा, गृहीत्वोउज्जयनिं समाव्हये ॥

विक्रमादित्यने (शकेश्वर) रोमके राज्य पर चढ़ाई की, और उसके राजाको उज्जैनमें पकड़ लाये, फिर उसको राजनीति क्रिया सिखाकर छोड़ दिया । इससे भी उस समय परदेशगमन होता था यह सिद्ध हुआ या नहीं ! जब तक मनुष्य उत्साहसे एक देशसे दूसरे देशमें नहीं जावेंगे तबतक विद्या, धन, शिल्प, कलाएं आदि उन्हें नहीं प्राप्त होंगी ।

समुद्रयात्रा कियेबिना व्यापारी अधिक धन नहीं प्राप्त कर सकते ।
महाभारत शांतिपर्व अध्याय २९९ देखो ।

" वार्णग्यथा समुद्राद्व यथार्थं लभते धनम् ॥ "

अर्थात् वणिकोंको समुद्रयात्रा किये विना यथार्थ धन नहीं मिलता । इसका

प्रत्यक्ष उदाहरण देखनेको दूर जानेकी आवश्यक्ता नहीं। अंग्रेज भारत वर्षमें किस प्रकार आये यही दृष्टान्त लो ! सर्वप्रथम आर्यावर्तमें पोर्चुगीज आये और यहाँसे गरम मसाला आदि पदार्थ खरीद ले जाकर फ्रेंचोंको बेचने लगे।

फ्रेञ्च वे चीजें अंगरेजोंको बेचते एक समय फ्रेञ्चोंने गरम मसालेकी कीमत बहुत बढा दी। इस पर कितने ही अंगरेजी व्यापारियोंने सोचा कि इतने अधिक मूलपर फ्रेञ्चोंसे माल लेनेके स्थानमें स्वयं हिन्दुस्थान जाकर माल खरीदें तो हमें बड़ा लाभ हो। इस प्रकार निश्चय कर कितनेही व्यापारियोंने बहुतसा रुपया इकठा किया और जहाज लेकर यहाँ आये। यहाँ उन्हें कैसा गरम मसाला मिला है ? उन्हें समुद्र-यात्रा लाभदायक सिद्ध हुई यह सब जानते हैं।

परदेश भयाद् भीता, बहुमाया नपुंसकाः स्वदेशे निधनं यान्ति काकाःका पुरुषा मृगाः ॥ एक कवि कहता है कि शूद्र, नपुंसक, कापुरुष, कव्वा आदि पशु ये सब परदेशके भयसे अपने २ देशोंमें सड मरते हैं। परन्तु शूरवीर पुरुष अन्य देशोंपर आक्रमण कर अपनी सत्ता स्थापित करते हैं।

शाहजहानके समयमें एक अंग्रेज वैद्य भारतवर्षमें आया था। उसने शहाजहांकी कन्याको एक दुःखसे बचाया। बादशहाने उससे पूछा "तू क्या पुरस्कार मांगता है?" तब उस वैद्यने कहा—"**मुझे किसी दुसरी वस्तुकी आवश्यक्ता नहीं है, हमारे देशका जो माल यहां आवे उस पर जकात माफ होना चाहिये।**" बादशाहको इसपर अत्यन्त आश्चर्य हुआ। उसने कहा—"तैंने यह क्या मांगा ?" अपने लिये कुछ धन मांगो, एकाद जागीर मांगो, परन्तु वैद्यराज स्वार्थी नहीं थे, वे बोले—"मुझे और कुछ नहीं चाहिये। जो कुछ मैं मांगता हूं वही दीजिये, बस !"

कितना स्वार्थत्याग कितनी दूरदर्शिता, और कितनी देशभक्ति ? यदि स्वार्थके लिये अपनी जातिग्राम और देशकी हानि करनेवाले मनुष्योंमेंसे वह होता तो इतना स्वार्थत्याग कभी भी नहीं हो सकता था। अपने देशभाइयोंके कल्याणका मार्ग उसे नहीं दिखाई पडता।

अंग्रेजोंने यहाँ आकर देखा तो यहाँके मूर्ख लोग आपसमें झगड़ा बखेड़ा करनेमें मग्न थे, फिर क्या पुछना, उन्होंने तत्काल ही यह झगड़े मिटाये। अधिक क्या ! हमें अनेक उपायोंसे झगड़ोंसे निवृत कर, वेही हमारे जीवन, धन, धाम और धर्मका संरक्षण करते हैं। अपनी दयालु ब्रिटिश सरकारने जिसमें हमें सुख होय ऐसीही

योजना की है, यह बात सत्य है, परन्तु गत २५ वर्षोंमें दुष्कालसे सवा दो करोड़ मनुष्य भूखों मर गये, इस प्रकार मैंने सरकारी रिपोर्टमें ही पढ़ा है । यह क्या ? आप मुझे पूछेंगे तो इसमें सरकारको दोष देने जैसी कोई बात नहीं है । वर्तमानमें राली ब्रदर्स जैसे कितनेही अंगरेज व्यापारियोंके पेट मोटे हो गये हैं, अन्नके पकते देर नहीं कि वह तुरन्तही उनके पेटमें दाखल, तब सृष्टिनियमानुकूल यदि एककी थैली भरेगी तो दूसरेकी खाली हो जायगी, जिसकी थैली खाली रहेगी वही भूखों मरेगा ।

सिक्खों और पेशवाओंके समयमें कठिन प्रसंग आया था । एक राजाने मुसलमान किस तरह मरते हैं, यह देखनेके लिये कितनेही मुसलमानोंको एक नावमें भरके डुबा दिया । मुसलमान बादशाह क्या इससे खराब थे ? नहीं । एक बादशाह तो कुरान लिखकर अपना पोषण करता था, अपने सुखचैनके लिये प्रजाका द्रव्य उड़ाना यह बड़ा पाप समझता था । यह बादशाह कुरान लिखकर मुल्लाओंको दिखलाता । एक समय मुल्लाने कहा कि इसके अमुक भागमें भूल है । बादशाहने शांतिसे अपने लिखे हुएके पास वह लिख लिया, और मुल्लांके कहे मुताबिक उसका पाठ कर दिया। मुल्लांके चले जाने पींछे उसका लिखाया हूआ तो काट दिया और अपना लिखा रहने दिया, इसका कारण पूछनेपर उसने कहा—' उस मुल्लेंको खराब लगे वह काम मैं क्यों करुं ! ' दूसरे भी अप्रसन्न होते हैं इस प्रकारकी समझवाले बादशाह भी यहाँ हो गये हैं ।

पेशवाई शासनमें कितनेही मूर्ख धर्मान्धदुराग्रही ब्राह्मणोंनें शूद्रों पर अत्यन्त अत्याचार किया था । "शूद्र यदि वेदमंत्र सुन ले तो उसके कानमें पिघला हुआ शीशा डालना, वेदका उच्चारण करे तो मुंह बांध देना, हृदयमें धारण करे तो उसे विदीर्ण कर देना, इसप्रकार एक वेदान्तके सूत्रपर चार आचार्योंने जो भाष्य किया है उसका आशय है ।

इसप्रकार चार आचार्योंका अपने संकीर्ण विचारोंके कारण एक मत होकर इस प्रकारकी आज्ञा देनेके पीछे क्या चाहिये ? परन्तु मूल वेदोंमें इस विषयपर क्या लिखा है उसके जाननेकी क्या कोई प्रयत्न (कोशिश) करेगा ? पट्टेसे खाटपर और खाटसे पट्टेपर बैठनेकी जिन्हें आदत पड़ी हुई है, उनके हाथोंसे और अधिक क्या होगा ? वे वेदोंके देखनेका कष्ट क्यों उठावें ?

महाभारतके समयके पीछे हिन्दू राजाओंने बहुत अन्याय किया है, यह कहे बिना मुझसे नहीं रहा जाता । अंगरेज सरकारके सबही काम ठीक हैं, यह कहनेका

मेरा आशय नहीं । परन्तु आपको एक बात लक्षमें रखनी चाहिये, वह यह कि अंगरेज जो कुछ करते हैं, वह नियमसे करते हैं । सबही लार्डलिटनके समान नहीं आते, और लिटनशाही सदाही नहीं चलती। रिपनके समान भी प्रजाहितचिन्तक किसी २ समय आ जाते हैं ।

मैं एकसमय नवसारी प्रान्तके जलालपुर नामक गांवमें गया था, यह गांव अंग्रेजी और गायकवाड सरकारकी हद्दपर है । मेरेपास दोनों राज्योंके निवासी आये, उनसे मैंने पूछा कौनसे राज्यकी प्रजा अधिक सुखी है ? तब उन्होंने कहा—" गायकवाड़ीमें जमीनपर कर बहुत कम हैं, परन्तु कोई २ कारभारी सख्त होते हैं । यद्यपि महाराजासाहब प्रजावत्सल और अत्यन्त दयालु हैं । उन्होंने प्रत्येक कृषकको ५००)रु० बिना व्याजके दिये हैं । अंगरेजी राज्यमें यह सत्य है कि कर अधिक देना पड़ता है; परन्तु अमलदार न्यायी, और सूज्ञ होते हैं, उनका काम नियमपूर्वक होता है । कोई २ खराब और जुल्मी भी आजाते हैं. " जमीनपर कितना कर लेना इस विषयपर मनुस्मृतिमें कहा है—

पञ्चाशत् भाग आदेयो राज्ञा पशुहिरणययोः,
धान्यानामष्टमो भागः षष्ठो द्वादश एव वा ॥ १३० ॥

मनु० अ० ७

बारह मन धान पके तो एक मण राज्य ले लेवे, प्रसंगवश राज्यमें अधिक द्रव्यकी आवश्यक्ता हो तो आवश्यक्तानुसार आठवां भाग ले, परन्तु पंचमांशसे अधिक तो कभी न लेवे ।

व्यापारसे क्या लाभ है, कौनसा माल कहांसे लाना, कौनसा अन्न किस प्रकार अधिक उत्पन्न होय, यह व्यापारियोंको व कृषकको अवश्य जानना चाहिये ।

पंचतंत्रमें लिखा है—

विद्यां वित्तं शिल्पम्, तावन्नाप्नोति मानवः सम्यक् ।
यावद् व्रजति न भूमौ, देशाद्देशांतरं हृष्टः ॥

जबतक मनुष्य एक देशसे दूसरे देशको नहीं जाता तबतक, विद्या धन और कारीगरीके काम उसे भली प्रकार नहीं आते ।

जिसे अपनी उन्नतिकी इच्छा होय, वह मुम्बईके दस बीस श्रीमन्त व्यापारियोंकी कम्पनी बना, जहाज खरीद करनेकी योजना करे तो लाखों रुपयोंका लाभ होय । लिखनेके लिये कागज, कलम, और खडिया दवात चाहिये तो विलायतसे मंगवाओ ।

कपडा, सुई, डोरे भी विलायतसे कपडे सीनेके लिये आवें। सारांश आप प्रत्येक वस्तु विलायतहीसे मंगाते हैं। तो स्वयं जाकर क्यों नहीं लाते ? उसी प्रकार अपने देशकी तैयार हुई वस्तुओंका प्रसार भी यहां जाकर क्यों नहीं करते ? आढतमें जो जोखम होती है, कमिशनमें जो लाखों चले जाते हैं उन्हें क्यों नहीं बचा लेते ?।

यदि हिन्दुओंके स्वतंत्र बैंक्स Banks खुल जांय तो वृद्धि दृढतापूर्षक हो, लोगोंके खानपान और आचारविचारके ऊपर दृष्टि रक्खो, परन्तु स्वार्थसाधु लोगोंकी खोटी बातोंपर विश्वास करके, बैठ जानेकी आवश्यक्ता नहीं।

सुभाषितमें लिखा है।

गेहे तिष्ठन् कुमतिरलसः, कूपकूर्मैः सधर्मः।
किं जानीते भुवनचरितं, किं सुखं चोपभुंक्ते॥

जो आलसी और कुविचारी होते हैं, वे कूपमंडूकके समान घरमें बैठे रहते हैं, देशान्तर भ्रमण करनेके लाभ को वे क्या जानें। देशान्तर जानेसे धर्म नहीं जाता, परन्तु पापाचरणसे धर्म जाता है, आर्यावर्तके बाहरके सब राजा क्षत्रिय थे, परन्तु आचार बिगडनेसे वे वर्तमानमें पतित माने जाते हैं, उन्हें पवित्र कर लेनेकी आज्ञा मनु महाराज देते हैं—

" येषां द्विजानां सावित्री नानूच्येत यथाविधि।
तांश्चारयित्वा त्रीन् कृच्छान्यथा विध्युनापयेत्॥
प्रायश्चित्तं चिकीर्षन्ति विकर्मस्थास्तु ये द्विजाः।
ब्रह्मणा च परित्यक्तास्तेषामप्येतदादिशेत्।

मनु अ० ११–१९१–१९२

जिस द्विजको समयपर गायत्रीमंत्रका उपदेश और उपनयनसंस्कार न हो, उसे तीन कृच्छ्र कराकर यथा विधि शास्त्रानुकूल उपनयन करावे। वेदोंको न पढा हुआ, द्विज प्रायश्चित्तकी इच्छा करे तो उसे भी तीन कृच्छ्रव्रत करावे। इस प्रकार अपने देशके लोगोंको देशाटन करके बाहरके पतित लोगोंको शास्त्रोंकी आज्ञानुसार प्रायाश्चित्त देकर शुद्ध करना चाहिये। इसीसे अपनी वृद्धि होगी।

" गंगा गंगेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति। "

गंगाका नामोच्चारण करनेसे जिनकी शुद्धि हो जाती है, ऐसे अपने हिन्दू भाइयों-

को सैंकड़ो योजन जानेमें कोई हानि नहीं । मेरे प्यारे भाइयो ! आपको यह दुराग्रह छोड़ देना चाहिये ।

"उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्" ।

जो लोग उदारचरित्र हैं, उनके इस पृथ्वीपरके सब लोग कुटुम्बसमान हैं। आपको उदारचरित्र होनेकी इच्छा करनी चाहिये, दुराग्रह और मूर्खतासे आपने अपनी आर्यजातिका कितना नाश कर लिया है, वह आपको देखना चाहिये । विटल गये लोगोंकी संख्या दिन २ भयंकर रीतिसे बढती जा रही है, इसका कारण क्या ? इसके रोकनेका कोई उपाय आप नहीं करते, आप इतने बेखबर होगये हैं कि सिर्फ पिछले ७०० वर्षोंमें आठ करोड़ मनुष्य मुसलमान होगये, १५० वर्षोंमें ५० लाख ईसाई होगये और यह प्रवाह अभी उसी गतिसे चल रहा है, यदि आप गणित जानते हों तो हिसाब करो कि जिस जातिमेंसे मनुष्य नित्य कम होते जाते हैं (निकलते जाते हैं), बढता कोई नहीं, (आता कोई नहीं), उस जातिका जीता रहना बचा रहना क्या संभव है ? अन्तमें वह दिन क्यों न आवेगा जब कि हिन्दु जातिके स्थानमें केवल शून्य रह जावे ? इसका कारण क्या ? कारण प्रत्यक्ष है कि जिसे आपने एक समय नीच मान लिया, उसे कदापि उन्नतिका अवसर न देकर उसे उसी स्थितिमें रखकर दूरही खड़े रखनेकी इच्छा करते हैं । उदाहरणके लिये यदि एकाद चमार अपने पास आने लगे तो आप उसे झिड़ककर दूर हटो देंगें, परन्तु यदि वही चमार ईसाई होकर आवे तो अत्यन्त प्रेमसे "सेक हैन्ड" Shake hand करनेको तैयार हों । जिन्हें यह भेद प्रत्यक्ष दिखता है वे अपने भाई अन्य धर्ममें क्यों नही जावें ? तुम्हारे हाथों अपना अपमान कबतक सहें ?

अन्यधर्मके लोग इसप्रकार उत्तरोत्तर अपनी वृद्धि कर रहे हैं । और अपना भयंकर क्षय हो रहा है ! यदि इसका उपाय न किया तो यह क्षय इसी प्रकार होता रहेगा । अतः हिन्दूजातिके अस्तित्वमें भी शंका है । अब हिन्दू जातिकी मूर्खता पर कहांतक और क्या क्या कहा जावे ? परमात्मा कृपा करेंगे तब ही इससे तरनेका उपाय मिलेगा ।

पांच हजार वर्षोंसे पहले आर्य और दस्यु इन दो जातियोंको छोड़कर और तीसरी जाति नहीं थी, परन्तु आज कल हिन्दुओंमें इतनी जातियां बन गई हैं कि उनकी गिनती नहीं हो सकती । अफगानिस्तानके पठान किसी समयमें भाटि क्षत्रिय थे, और शैव थे, मक्केमें उन्होंने मक्केश्वरकी स्थापना की थी, परन्तु वर्तमानमें वे मक्केश्वर नहीं रहे । पीरसाहब होगये हैं ।

मनुष्यसमाजकी स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि एकाद हितकी बात समझमें आनेपर उसके करनेके लिये रोक न हों तो उसे स्वीकारनेमें कमर बांधकर तैयार होते हैं और यथाशक्ति उसके अनुसार वर्तते हैं।

ब्रिटिश राज्यमें स्वास्थ्य, और भाषण और लेखन स्वतंत्रताका लाभ सबको एकसा मिलता है। पीछे रहे हुए लोग जाग्रत होकर अपना २ कर्तव्य क्या है वह जानने लगे हैं। उनकी आंखोंपर भी पट्टी बंधी हुई थी वह खुल गई है। इस लिये ब्राह्मणोंको भी अब शास्त्रविरुद्ध रोकटोक छोड देनी चाहिये।

उन्हें देशोन्नतिके लिये यूरोप अमरीका आदि देशोंमें जाना चाहिये, और लोगों को भी शास्त्रकी आज्ञा समझकर जाने देना चाहिये, नवशिक्षित लोग उन निषेधोंको नहीं मानकर परदेश गमन करने लग गये हैं। और उन दुराग्रही पंडितोंको अपने स्थानपर ही बैठे रहने दिया है।

जब ऐसा हुआ है, तब कुछ बडे २ शास्त्री जागे हैं, और निरुपाय होकर समुद्र-यात्रामें दोष नही, इस प्रकार कहने लगे हैं। इस प्रकार जब बुद्धिमान शास्त्रियोंने "समुद्र यात्रा निर्दोष है यह निर्धारित किया तो कितनेही ढकोसला शास्त्री इसे माननेको तयार नहीं! वे अपनी मूर्खतासे इस बातको मान्य नहीं करें तो न करें उनकी सन्तानको तो यह माननाही पडेगा।

सारांश:—जिसे " मेरा जन्म सफल हो " यह इच्छा हो वह ध्यानपूर्वक आर्य-वैदिक धर्मका अवलोकन करे। सत्यधर्मके निर्णयके लिये मनुष्यको हठ, दुराग्रह, पक्षपात, मताभिमान, छल, कपट, दम्भ, पाखंड आदि दुर्गुणोंको त्याग कर, न्याय-शीलता, सत्यान्वेषणबुद्धि, सहनशीलता आदि धारणकर विद्यार्थीके समान धर्म जिज्ञासु बनना चाहिये। और धर्मकी परीक्षा करनी चाहिये।

प्रिय बन्धुभगिनियों, आप शान्त मनसे इस बात पर विचार करेंगें, खोटे २ शास्त्रोंका भरोसा करके व्यर्थ दुराग्रहसे परदेश गमनमें बाधा उपस्थित कर अपनी और अपने देशकी उन्नतिमें रोक नहीं उत्पन्न करेंगें ऐसी मुझे आशा है।

परमात्मा आपको सद्बुद्धि दे और आपकी आशा पूरी करे। ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

॥ ओ३म् ॥

सातवाँ व्याख्यान।

क्षत्रिय धर्मपर।

ता. ४-अगस्त स. १९०२

क्षत्री जातीके नेताओंकी प्रार्थनासे कावसजी पटेल होल रोडके पास क्षत्रिय पंच वाडीमें रा. सा. दलपतराम प्राणजीवन खख्खर जे. पी. को सभाकी ओरसे प्रधान नियुक्त करके व्याख्यान करवाया था। श्रोता ओंकी इतनी भीड़ थी कि खड़े रहनेके लिये जगह न थी।

स्वामीजीने व्याख्यानका प्रारंभ करके कहा कि धर्मका उपदेश करनेका काम ब्राह्मणका है। परन्तु धर्मका रक्षण और व्यवस्था करनेका काम क्षत्रीओंका है ऐसा मनु आदि स्मृतिकारोंने लिखा है। जब क्षत्री अपना धर्मत्याग करते हैं तब धर्मका नाश होता है। क्षत्रिय राजाओंकी प्रसिद्धि महाभारत, रामायण इत्यादिमें दिखलाये अनुसार इस देशमेंही नहीं परन्तु सारी पृथ्विमें फैली थी। कोई भी पदार्थ कैसी ही उत्तम दशाको क्यों न प्राप्त हुआ हो अवश्य एक दिन अधम दशाको प्राप्त होता है उसका मरण निश्चय होता है यह कुदरतका कानून है। उसी तरहसे जो क्षत्रीय सारे भूमंडलमें राजा थे वे आज अपना धर्ममूल गये हैं और अधम अवस्थामें पड़े हैं। उनमें अनेक विभाग हो गये हैं। उनकी जाति की संख्या गिनी जाय तो एक दो हजारसे कम नहीं होगी इससे क्षत्रीयोंके गौरव और अभिमानके टुकड़े हो गये हैं। क्षत्रियोंमें वर्तमान समयमें तीन चार जातियें मुख्य हैं। राजपूतानेके क्षत्रियोंमें राठोड़, चोहाण और सिसोदिया आदि मुख्य हैं। काश्मीरमें डोंगरे राजाभी क्षत्रिय है। और यहांके भाटीआ भी क्षत्री हैं। ब्रह्म क्षत्रिय नामक भी एक जाति है खत्री शब्द क्षत्रिय शब्दका अपभ्रंश है। ब्रह्म क्षत्रियका अर्थ क्या? ब्रह्मके संस्कृत शब्दार्थमें ५-६ अर्थ मिलते हैं जैसे इश्वर, वेद, तत्व, ब्रह्मचर्य, ब्राह्मण इत्यादि। अब ब्रह्म क्षत्रियका अर्थ क्या करना' जो क्षत्रीय ब्रह्मका अभ्यास करते हैं, ब्राह्मणोंकी रक्षा करते हैं, जो इश्वरका ज्ञान प्राप्त करते हैं, ब्रह्मचर्य पालनेवाले हैं वा तत्वका जो संशोधन करते हैं इनमेंसे किसको ब्रह्मक्षत्रिय कहना!

भारतके युद्धके पश्चात् ज्ञान कम हो गया, और उनका राज्य ऐश्वर्य आदि न रहने पर भी कुछ क्षत्रियोंने वैदिक धर्म पालन करनेकी प्रतिज्ञा ली उससे उनका नाम ब्रह्मक्षत्रिय पड़ा ।

गीतामें क्षत्रियोंके धर्मके सम्बन्धमें कहा है कि शूरवीरता तेजस्वी, कान्ति, धैर्य, चतुराई, युद्धमें स्थिरता, दान और ईश्वर भाव, होने चाहिये ।

वर्तमान समयमें दयालु ब्रिटिश सरकारने ऐसा प्रबन्ध कर रक्खा है कि किसीको हाथ हिलानेकी जरूरत नहीं है । परन्तु मान लिया जाय कि रूशिया या जर्मनी जैसा महान राज्य हमला करे तो मुझे विश्वास है कि यदि अभी आपके पास शस्त्र नहीं हैं तो भी ब्रिटीश सरकारको सहायता करनेमें आप पीछा करें ऐसे नहीं हैं ।

दान देना क्षत्रियोंका धर्म है । गीतामें लिखा है कि दान उपकारी पुरुषोंको ही देना चाहिये । अन्य अयोग्यको न देना चाहिये । काशीमें पण्डोंको सैंकड़ों रुपये दानमें मिलते हैं उससे वे अनेक अनर्थ करते हैं । इस मुम्बईमें भी जिसको बिना परिश्रम धन मिलता है वे कैसा अनर्थ करते हैं, यह किसीसे छपा नहीं है; जिसको परमात्माने आखें दी है वे सब जानते हैं । दान पात्रको देना चाहिये । यदि कोई कुपात्रको दान देता है तो वैसा दान लेनेवालेको और देनेवालेको पाप लगता है ऐसा शास्त्रोंमें कहा है ।

महाराज मनुने मनुस्मृतिमें लिखा है कि क्षत्रियोंको प्रजाका रक्षण करना चाहिये परन्तु आप स्वयं प्रजा हो फिर किसका रक्षण करोगे ? इसलिये वर्तमान समयमें तुमको अपने कुटुम्बको प्रजा मान उसकी उत्तम तरहसे पालना करनी चाहिये और वह योग्य है । भारत वर्ष अधोगतिको प्राप्त हुआ है उसका यही कारण है कि जैसे ऋषि अपने शिष्योंको शिक्षण देते थे उससे न्यून भी शिक्षण आजकल दिया नहीं जाता । यदि क्षत्रिय अपने कुटुम्बको योग्य शिक्षण दें तो वे भविष्यमें तेजस्वी क्षत्रिय बनें ।

मनुशास्त्रके दूसरे अध्यायमें लिखा है कि ब्राह्मणके पुत्रको आठवे वर्षमें, क्षत्रियके पुत्रको अग्यारवें वर्षमें और वैश्यके पुत्रको १२ वें वर्षमें यज्ञोपवीत संस्कार करना । परन्तु यदि ब्राह्मण पुत्र १६ वर्ष तक क्षत्रियको २२ वे वर्ष तक और वैश्यको २४ वें वर्ष तक यज्ञोपवीत और गायत्री मंत्र दिया जाय तो भी वें वर्णसे पतित नहीं होते । परन्तु इस क्रमसे ज्यादह आयुके हो जाने पर वे आर्य नहीं रह सकते । वे अनार्थ हो जाते हैं । उनको तीन वा छ व्रत करवाने पर फिर स्ववर्णमें लिये जाते

हैं। आप अब भी यज्ञोपवीत धारण करते हैं इससे मुझे अत्यानन्द होता है। तुमको वैदिक संध्या और अग्निहोत्र भी करना चाहिये। विद्या ग्रहण करना भी क्षत्रियोंका आवश्यक धर्म है। इस देशके जिन लोगोको विद्या दी जाती उनमेंसे बहुतसे आपको बुद्धिवान् मिलेंगे। आजकल मुनशीओंकी अपेक्षा आपको क्लार्क ज्यादह मिलेंगे। ब्रेइनसे काम करनेवालोंकी अपेक्षा लिखाये अनुसार लिखने वाले आपको अधिक मिलेंगे।

शास्त्रोंका बुद्धिपूर्वक अर्थ करनेकी जरूरत है। महाराजा युधिष्ठिर कहते हैं कि विद्याद्वारा हम प्रत्येक पदार्थ जान सकते हैं। परन्तु वर्तमान समयमें विद्या पढने पर भी भिन्न २ पदार्थोंके यथावत् स्वरूपको हम नहीं जान सकते। मनु कहते हैं कि धर्ममें संशय हो तो विद्वानोंकी सभामें रक्खो कि जिससे निर्णय हो। परन्तु वर्तमान समयके संस्कृतके विद्वानोंकी दशा देखो उनकी दशा एक दूसरेसे विचित्र है वे दो तीन तरहके हैं। एक वर्गको बाबा वाक्यं प्रमाणं अर्थात् जो लिखा गया वही मानतें हैं। उसका यही अर्थ कि वह बुद्धिपूर्वक कुछ भी नहीं कर सकता। एक ब्राह्मण रात्रीको अमुक गांवमें गया। उसको लोगोंने कहा कि—'बाहर मत सोना; क्योंकि यहा बाघ आता है'। उसने कहा कि—'वह खा सके ये असम्भव है। व्याघका अर्थ तो जो सुंघता हो वही है। इसलिये यदि वह आयेगा तो मुझे सूंघकर जायगा। मुझे क्यों मार डालेगा?' जिस देशमें ऐसे पंडित और उपदेशक होते हैं उस देशका कल्याण कैसे हो? प्राचीन समयमें ऐसी अव्यवस्था होनेपर क्षत्रिय लोग अपनी सत्तासे व्यवस्था करते थे।

महाराजा भर्तृहरि जब राज्यका त्याग कर संन्यासी हो गये थे, उस समय एक स्वार्थीने आकर प्रार्थनाकी कि—' मुझे आपके राज्यमें नौकरी मिल जाय ऐसी भलापन आप राजाको करें '। भर्तृहरीजीने हंसकर उत्तर दिया कि तुमको ज्ञात है कि राजा लोग किसकी बात मानते हैं? वे केवल नट, विनट, गवैये, चुगली करनेवाले और खूबसूरत स्त्रिओंकीही बातोंपर विश्वास करते हैं। मैं उनमेंसे एक भी नहीं हूं तो फिर मेरी बात वह क्यों कर सुनेगा। इससे स्पष्ट होता है कि उस समयके राजाओंकी दशा इस प्रकारकी थीं। और वैसीही दशा आजकल नहीं है ऐसा नहीं। क्षत्रियोंकी दशा जब अच्छी होगी तब सुधार होगा। इस लिये तुमको उन्नति करनी चाहिये। तुम वेदकी पाठशाला खोलो और उसके सत्य अर्थ समझनेका प्रयत्न करो।

अलीगढ़में मर्हूम सर सैयद अहेमदने एक कॉलेज स्थापन की है। वे कुरानके अर्थ उसमें बुद्धिपूर्वक पढ़ाते थे। कुरानमें एक ऐसा उपदेश है कि तुम काफरके

धनको अपना समझो । उनकी स्त्रिओंको भी अपनीं समझो । इसका अर्थ वर्तमान समयके मोलवी ऐसा करते थे कि मुसलमानोंको छोडकर दूसरोंका धन और स्त्रीयें ले लेनीं चाहियें । परन्तु सैयद् अहमद् ये शिखाते थे कि दूसरोंके धनको अपने धनके तुल्य मानो और पवित्र मनसे दूसरोंकी औरतोंको अपनी माताएं और बहीनेके तुल्य जानो । स्वामी दयानंदने कुदरती नियमके और व्याकरणके अनुसार अर्थ किये हैं । उसी तरहसे तुम भी पढाओ । यदि तुम अपने क्षत्रिय धर्मका पालन नहीं करोगे तो फिर नाम मात्रके क्षत्रिय बनना मानो काष्ठमय और चर्ममय मृग होनेके समान है । केवल संस्कृतसे पेटका पोषण आज कल नहीं होता । आज कल अंग्रेजी विद्याकी भी ज़रुरत है । मराठीमें एक कहावत है कि पहीले पोटोबा और फिर वीठोबा । तुम केवल अंग्रेजी भाषा अपने पुत्रोंको पढाओगे तो वे इससे वे धर्म-हीन होंगे इसलिये उनको संस्कृत भाषाद्वारा धर्म पढाओ ।

महाराजा युधिष्ठिर कैसे धर्मात्मा थे ? म. कृष्णने उनको झूठ बोलनेको कहा, परन्तु उनकी जिव्हा उठी नहीं । प्राचीन समयके क्षत्रिय कैसे वीर और धर्मात्मा थे उनका वृत्तांत महाभारतमें है । उनके गुरु उनको ग्रेट नहीं किन्तु गुड बनानेका प्रयत्न करते थे । आज कल " लाडी (पत्नी) वाडी और गाडीके पीछे दौड धाम है । परन्तु वस्तुतः सुख नीतिके अनुकूल चलनेसे और सब स्त्रिओंको माता और बहीनकी तरह समझनेसे मिलता है । इन सब बातें धर्मयुक्त तालीमसे प्राप्त होती हैं ।

जैसे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ विद्वान्‌को गिना जाता है उसी तरहसे जिसके बाहु उत्तम मजबूत हैं वह सर्वोत्तम क्षत्रिय है ऐसा मनुजी कहते हैं । क्षत्रियोंको जितेन्द्रिय रहनेकी जरुरत है । व्यभिचार शराबसे क्षत्रियका बाहुबल नष्ट होके उसका तेज भी नष्ट हो जाता है । भीष्म पितामह बाणोंकी शय्यापर सोते थे । उनको पूँछा गया कि महाराज आपको इतने बाण लगने पर दुःख क्यों नहीं होता । उन्होंने हंसते हुए उत्तर दिया कि मुझे दुःख न होनेका कारण मेरा अखंड ब्रह्मचर्य है । इसलिये तुमको भी ब्रह्मचर्यके पर ध्यान देना चाहिये । संन्यासी और वर्तमानवालोंका मुख्य कर्तव्य है कि जनसमाजकी प्रीति–अप्रीतिकी परवाह न रखके उनके हितमें-ही दृष्टि रखकर भला बुरा जैसा हो ऐसा करना चाहिए । परन्तु अमुक वर्तमान पत्रने मेरे अगले व्याख्यानको जो उलटा रूप दिया है, उससे ज्ञात होता है कि वर्त मान समय सत्यसे दूर है । वर्तमान समयमें ऐसे ब्राह्मण कम हैं, जो मरनेपरभी झूठ न बोलें । आजकल आचार्यों, ब्राह्मणोंने अपनी २ दुकानें खोली हैं । जिस देशमें ऐसा अन्धेर चलता है उस देशपर अनेक कष्ट आते हैं और ईश्वर भी कोप

करे तो उसमें आश्चर्य ही क्या ? तुम्हारी क्षत्रिय ज्ञातिकी ऐसी अधोगति न हो और ईश्वर तुमको चरीतारब और मशहूर बनावे यही मेरी प्रार्थना है ।

तत्पश्चात् एक कवीने कहा कि जैसे श्रीकृष्णने गीतामें कहा है कि–"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत " इत्यादि उसी तरह स्वामी नित्यानन्दजी इस देशमें आर्य धर्मका उत्कर्ष करनेके लिये पधारे हैं । स्वामीजीकी प्रशंसामें एक कविता सुनाई थी, जिसमें प्राचीन ऋषिओंसे स्वामीजीका मुकाबला किया था ।

बाद प्रमुखने कहा कि स्वामीजीने मनु आदिके प्रमाणोंद्वारा क्षत्रियोंके धर्म दिखलाये हैं उसी मार्ग हमारी उन्नति होगी । स्वामीजीने जो कहा है वह सब मनन करने योग्य है । तत्पश्चात् स्वामीजीका उपकार मानके सभा बरखास्त हुई थी ।

इति शम् ।

॥ ओ३म् ॥

आठवा व्याख्यान ।

वेदोंके स्वतःप्रामाण्य और अपौरुषेय सम्बन्धी विचार ।
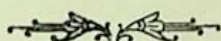
ता. ८ आगस्त १९०२

ब्रह्मचारी श्री रामेश्वरानंदजीस्थापित हिन्दू धर्मसभाकी ओरसे स्वामी श्रीनित्यानंदजीका वेदोंके स्वतःप्रामाण्य तथा अपौरुषेयत्व सम्बधी बिचार, इसविषय पर दिया हुआ व्याख्यान ।

ब्रह्मचारी रामेश्वरानंदजीकी स्थापित की हुई हिन्दू धर्मसभा जो गत दिसम्बर मास में २६ प्रश्नोंके निराकरण करनेके लिये माधवबागमें एक हुई थी, उस सभाकी तरफसे गत शुक्रवारको सांयकालके समय स्वामी श्रीनित्यानंदजीने २६ प्रश्नोंमेंसे प्रथम प्रश्न वेदोंके स्वतःप्रामाण्य और अपौरुषेय संबंधी विचार इस विषयपर गेइटी थियेटरमें व्याख्यान दिया था, नाटकशालाका अधिक भाग भर गया था ।

श्रीमान् डाक्टर पोपट प्रभूरामका भाषण ॥

शुरूमें धर्मसभाके संयुक्त मंत्री डाक्टर पोपट प्रभुरामने सभा करनेके संबंधमें

नोटिस बांचकर सुनाये। नोटिस बांचनेके बाद आगे चलकर उन्होंने कहा कि अनेक लोग बारबार पूछा करते हैं कि ब्रह्मचारी रामेश्वरानंद कौन हैं, इस लिये मैं बतलाता हूं कि वे यहां तुह्मारे सामने पधारे हैं, वे सारस्वत ब्राह्मण हैं, हरद्वारकी तरफ उनका जन्म हुआ था। ११ बरसकी उमरमें इन्होंने हिमालयकी तरफ़ भ्रमण करना शुरू किया था, इसके बाद आप योग करने लगे थे, कितने ही समय पीछे अपने शिष्योंके आग्रहसे वे यहां पधारे थे और अब वे जितनी हो सकती है उतनी धर्मकी सेवा कर रहे हैं। आगे चलकर डा० पोपटने कहा कि धर्मसभाकी ओरसे व्याख्यान देना स्वामीजी नित्यानन्दजीने स्वीकार किया है, इसके लिये सभा उनको धन्यवाद देती है; धर्मसभामें पधारे हुए ३०-४० मेंसे बहुतसे पंडितों और इनके सिवाय और पंडितोंने अपने लेखबद्ध अभिप्राय अबतक भेज दिये हैं; अब और जो पंडितोंके अभिप्राय आ जावेंगे तो ये सब पुस्तकाकारमें प्रसिद्ध कर दिये जायंगे। पं० शिवकुमारजी शास्त्रीका अभिप्राय भी मिल गया है। स्वामीजी श्री नित्यानन्दजीके अभिप्रायोंकी वृद्धि होनेसे पुस्तक बड़ी उपयोगी हो जायगी।

गृहस्थों! गत हिन्दूसभामें प्रमुख स्वर्गवासी वैद्य प्रभुराम जीवनराम थे परन्तु दैवयोगसे अब उनका स्वर्गवास होगया है इस लिये धर्मसभाके उपप्रधान आ० सर भालचन्द्र कृष्णसे आजकी सभामें प्रमुखका पद लेनेके लिये मैं विनती करता हूं। (तालियाँ)

इसके बाद आ. सर भालचन्द्र कृष्णने तालियोंके ध्वनीके बीच प्रमुख स्थान लिया। उन्होंने कहा कि धर्मविषयक स्वामीजीका ज्ञान बहुत उच्चप्रकारका है, धर्मपर उपदेश देनेवाले तो बहुत हैं, परन्तु सच्चा अभिप्राय देकर उसके अनुसार वर्तनेवाले बहुत थोड़े हैं। उन थोड़ोंमेंसे स्वामीजी एक हैं। इसके पश्चात् स्वामी श्रीको व्याख्यान देनेकी विनती की। स्वामी श्री नित्यानन्दजीके उठतेही श्रोताजनोंने उन्हें तालियोंके हर्षनादसे आदर दिया था। उसके बाद उन्होंने नीचे लिखा भाषण किया था।

ओ ३ म् विश्वतश्च क्षुरुत विश्वतो मुखो, विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्। सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रै र्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः॥ यजुः १७-१९

आजके व्याख्यानका विषय डा. पोपट तथा डा. सर भालचन्द्र अर्थात् डाक्टरद्वयने आपको बतला दिया है, तदनुसार वेदोंके स्वतःप्रामाण्य तथा अपौरूषेयत्व

सम्बन्धी विचार यह है । इस विषयपर गत धर्मसभामें विवेचन हो चुका है उसीपर मैं अपना अभिप्राय क्रमशः दूंगा; प्रथमके सात प्रश्न एकही प्रश्नमें आ जाते हैं ।

संन्यासीका फर्ज, सबको खुश रखनेकी मुश्किल ।

परन्तु इन सातों प्रश्नोंपर विवेचना करनेके पहले मैं एक निवेदन करना चाहता हूं, और वह मेरे पहले व्याख्यानोंका अभिप्राय न समझनेसे कितनेही लोगोंकी भूलके संबंधमें है। मैं किसी मनुष्य जाति, व्यक्ति, व समष्टिके साथ राग—द्वेष नहीं रखता हूं । संन्यासीको राग—द्वेष रखनाही उचित नहीं है मेरा अभिप्राय और सिद्धान्त न समझकर बहुत लोगोंने मेरी बाबत असत्य बातें प्रगट की हैं । कोई भी मनुष्य प्रत्येक मनुष्यको तो खुश नहीं कर सकता, कोई न कोई तो अपने पुराने संस्कारोंके कारण नाराज (अप्रसन्न) भी होतेही हैं, जो आदमी सबको प्रसन्न रखनेका प्रयत्न करता है, उसको असत्यही जानना। जंगलमें रहनेवाले महात्मासे महात्मा भी सबको प्रसन्न नहीं कर सकते हैं । कहा है कि—

मुनेरपि वनस्थस्य स्वानि कार्माणि कुर्वतः । उत्पद्यंन्ते त्रयः पक्षाः मित्रोदासीन शत्रवः ॥

इसका अर्थ यह है कि जो महात्मा जंगलमें जाकर तप करते हैं, जिनका समस्त संसारसे कोई संबन्ध नहीं है, उनके संबन्धमें भी तीन पक्ष होते हैं। कोई उनका मित्र, कोई शत्रु, और कोई उनसे उदासीन होता है । जब वनवासी महात्माओंके भी शत्रु होते हैं, तो जो संसारमें उपदेश करते हैं और खासकर लोगोंमें प्रचलित रूढीके विरुद्ध जो कहे, तो रुढीवश लोग जो उससे खुश न हों तो यह स्वाभाविकही है । इससे जो वे विरुद्ध हों तो मुझे इसकी फिकर नहीं है, परन्तु जो मैंने कहा-ही न हो वह मेरे मुखमेंसे निकला कहें, तो यह बलात्कार और जबरदस्तीही कही जावेगी ।

कितनीही समझकी भूलें ।

संसारयात्राके मेरे व्याख्यानमें मैंने यह नहीं कहा था कि—आर्योंको मांसाहार करना चाहिये । मुझसे पूछते हैं, कि आजसे आठ वर्ष हुए मैंने कावसजी इन्स्टीटयूटमें अहिंसापर, महामहोपाध्याप प्रोफेसर झलकीकरके सभापतित्वमें जो व्याख्यान दिया था उसमें मैंने मांसाहारके विरुद्ध कहा था और अब क्यों बदल गया ? मेरा निवेदन है कि इस विषयमें मेरे विचार जो उस समय थे वेही अब भी हैं, मैं मांसाहार बंद

विरुद्ध मानता हूं, और उसको अनुचित समझता हूं। (तालियां) देशाटनविषयक अपने व्याख्यानमें मैंने कहा था कि काश्मीरके पंडित मांसाहारी हैं, सो इसलिये मैंने कहा था कि परदेश जाकर जो हिन्दू लोग मांसाहार करें तो इसी कारणसे जो उनको जाति बाहर किया जाता है तो यह वास्तविक नहीं है; क्योंकि स्वयं हिन्दू पंडित जो जातिके साथ व्यवहार रखते हैं और ऊंचे गिने जाते हैं वेही मांसाहारी हैं। मैंने कुधारक और सुधारक दो शब्द कहे थे। इससे कहा जाता है कि मैंने सुधारकके विरुद्ध पक्षको गालियां दीं परन्तु ऐसा नहीं हैं। सुधारक और कुधारक शब्द एक दूसरेके विरुद्धमें लिखे व बोले जाते मैंने वर्तमानपत्रोंमें पढ़े हैं। यद्यपि कुधारक शब्दका वास्तविक अर्थ औरही होता है, तो भी जो वह उस आशयसे बोला जाता होय तो मैं नहीं जानता। हिन्दू शब्द वेद, उपवेद–रामायण, महाभारत १८ पुराण आदि किसी ग्रन्थमें भी नहीं है, यह फारसी भाषाका शब्द है जिसका अर्थ काफिर काला होता है, तौ भी हालमें वह औरही अर्थमें बोला जाता है। इसी तरहसे मैंने कुधारक शब्दका प्रयोग किया था। मैंने ढकोसले शास्त्री भी कहा था, धतींग करनेवाले शास्त्रियोंको उत्तर हिन्दुस्थानमें ढकोसले शास्त्री कहते हैं, परन्तु इससे यहांके कितनेही शास्त्री जिनको मैं भद्र और योग्य मानता हूं उन्होंने समझा कि यह शब्द मैंने उनके लिये कहा था। जो बिल्कुल असत्य है, मैंने तो उन शास्त्रियोंके लिये जो लोगोंको हानि पहुँचाते हैं यह शब्द कहा था। और कहा जाता है कि मैंने कहा था कि–'शंकर स्वामी वर्णआश्रम नहीं मानते थे' सो मैंने ऐसा कहाही न था; उलटा शंकर स्वामी वर्णआश्रमके इतने अभिमानी थे कि उन्होंने अपने शङ्कर भाष्यमें लिखा है कि–जो शूद्र वर्णका कोई मनुष्य वेदमंत्र सुन ले तो उसके कानोंमें गरम सीसा डाल दिया जाय।

शास्त्रार्थ करनेकी इच्छा

कहा जाता है कि मैं शास्त्रार्थ करनेसे हटता हूँ, मैं खुद किसीको शास्त्रार्थ करनेको चैलेंज नहीं करता (तालियां), परन्तु कदाचित् कोई ओरही मेरी ओरसे चैलेंज दे दे तो और बात है। परन्तु जो कोई मुझे चेलेंज करे तो उसके साथ शास्त्रार्थ करनेसे मै स्वप्नमें भी नहीं डरता हूं, फिर चांहे वह कोई भी क्यों न हो (जोर की तालियां) मैं अब अप्रासंगिक बातें छोड़ दूँगा।

मेरा शरीर भी औरोंकी तरह मलमूत्रका बना है, ऐसा जानकर मैं अपनी प्रशंसासे नहीं फूलता, तथा अपनी निन्दा अप्रशंसासे बुरा नहीं मानता; वेदविरुद्ध मैं कभी कहता नहीं; बुरा कहो, भला कहो, चाहे सो कहो, सत्य कहनेसे मैं कभी नहीं हटता हूं, बुरा

भला कहनेसे मैं अपनी ड्यूटी बजानेसे नहीं हटता हूँ, इतना कहकर मैं अपने विषयपर आऊँगा।

वेदोंका स्वतःप्रामाण्य।

वेदोंके स्वतःप्रामाण्य विषयक विचार सबसे पहले करना है। जैसे सूर्यके देखनेके लिये दीपककी जरूरत नहीं रहती, क्योंकि वह स्वतःसिद्ध स्वप्रकाशस्वरूप है, वैसेही वेद स्वतःप्रमाणरूप है, इस लिये उसको सिद्ध करनेके लिये अन्य प्रमाणोंकी जरूरत नहीं है। इस समय इसपर अधिक बोलनेकी जरूरत नहीं है। वेदोंके पीछे एक एक वेदका एक २ ब्राह्मण इस प्रकार चार ब्राह्मण, ४ उपवेद, चारों वेदोंके उपनिषद, गृह्यसूत्र आदि वेदोंके बाद उत्पन्न हुये(जन्मे) ग्रन्थ अपौरुषेय हैं या नहीं, इस बातका विचार करना रहता है, इस प्रकार वेदादिसंबंधी सात प्रश्न हैं, जिनको मैं एकही व्याख्यानमें पूरा करनेका प्रयत्न करूंगा। हरेक प्रश्नको पूर्ण रीतिसे कहने जांचनेके लिये दो दो घंटे चाहियें; परन्तु समय न होनेसे मैं उस पर संक्षेपमें बोलूंगा। यह विषय शास्त्रीय है, इस लिये सम्भव है कि कितनेही इसको न भी समझ सकें, परन्तु उसको जहांतक बनेगा मैं सरल और स्पष्ट करनेक प्रयत्न करूंगा।

नास्तिक और आस्तिक।

इस संसारमें दो पक्ष हैं; एक आस्तिक और दूसरा नास्तिक। आस्तिक पक्ष, ईश्वर और परलोकको मानता है; परन्तु नास्तिक पक्ष उन दोमेंसे एकको भी नहीं मानता है। आस्तिकोंमें भी दो विभाग हैं; एक पक्ष ईश्वरको मानता है, परन्तु ईश्वरोक्त ज्ञान नहीं मानता; परन्तु दूसरा पक्ष दोनोंको मानता है। हिन्दू, मुसलमान और ईसाई ये दूसरे पक्षमें हैं। यद्यपि हिन्दू वेद, मुसलमान कुरान शरीफ, और ईसाई इंजील अथवा बाइबलको ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं, परन्तु उनका इस विषयमें तो मतभेद नहीं है, कि ईश्वरकी ओरसे ज्ञान प्रगट हुआ है।

ईश्वरीय ज्ञान न माननेवाले आस्तिकके माननेमें दोष।

पहले जो आस्तिक ईश्वरीय ज्ञान माननेवाले नहीं, उनके विषयमें मैं बोलूंगा। जो ईश्वरकोही नहीं मानता वह ईश्वरीय ज्ञान तो कहांसे माने? उसमें उसका दोष नहीं है, परन्तु जो ईश्वरको मानता हुआ भी ईश्वरीय ज्ञान वेद वा अन्य पुस्तकोंको नहीं मानता उसके माननेमें ही एक बड़ा दोष है। परमात्मा अपना माता

पिता है; मातापिताका धर्म है कि-संतानका पालन करै, उसको योग्या शिक्षा दे और उसको सुयोग्य बनावे, इस लिये ईश्वर हमारा माता पिता हो तो उसको चाहिये कि पहले मनुष्योंको ज्ञान देवे;-जो वह ऐसा न करै तो वह माता पिता नहीं कहा जा सकता। जब ईश्वर सब जगत्का स्वामी है तो उसका कानून भी होना ही चाहिये। जबसे दयालु ब्रिटिश सरकारका राज्य इस देशमें हुआ है, तबसे उसने अपने कानून भी प्रसिद्ध किये हैं, उसने बतला दिया कि जो तुम (अमुक) फलाने २ दुष्कर्म करोगे तो तुमको फलानी (अमुक) सजा होगी, वैसा जो ईश्वर सृष्टिका कोई कानून न बनावे और पीछेसे किसीको कानूनविरुद्ध चलनेके कारण सजा करै तो यह वाजवी न समझा जायगा; इससे तो वह अन्यायी कहलावेगा। इस लिये आस्तिक उसको न्यायी मानते हैं उनको, ऐसा मानना ही पड़ेगा, कि वह अपनी सृष्टि-रूपी सरकारको ज्ञानरूपी कानून देवें, जब दो और दो ४ मानते हैं तो ४+४=८ माननेमें उनको क्या बाधा है ? जो कोई ईश्वरके माता पिता मानै तो उसी न्यायसे उसको Revelation भी मानना ही चाहिये।

कोई पूछेगा कि 'क्या ईश्वरने ज्ञानका पुस्तक उपरसे भेजा ? नहीं, शुरूमें ईश्वरने योग्य महात्माओंको ज्ञानीही उत्पन्न किया, परन्तु हालमें जो २ पुस्तक ईश्वरीय होने का दावा करते हैं वे बहुतसी बातोंमें एक दूसरेसे विरुद्ध हैं। तो प्रश्न होता है कि वे परमेश्वरकी ओरसे कैसे हो सकती हैं, हालमें जो थोडा धार्मिक ज्ञान अन्य मतोंमें है वह वेदोंका ही है ॥

ईश्वरीय ज्ञानविरुद्ध डारविनकामत।

मि० डार्विनके पुस्तक पढ़कर कितनेही पढ़े लिखे लोग कहते कहते हैं कि जैसे अत्यन्त छोटे अमीबा नामके जंतुसे बंदर हुआ है और उसमेंसे मनुष्य हुआ है वैसे ही ज्ञान भी धीमे २ प्रगट होकर आजकलकी उन्नत दशाको आजतक पहुंचा है। वे कहते हैं कि शुरूमें मनुष्योंने वृक्षोंकी शाखाओंको एक दूसरीसे जुटी हुई और उनमेंसे वर्षाके दिनोंमें पानी टपकता देखकर वे उसके नीचे खडे रहे, और भींगनेसे बचे। इसपरसे उन्होंने बरसातसे बचनेके लिये चटाईकी तरहके छप्पर गूथनेका ज्ञान प्राप्त किया। फिर किसीको पानीमें डूबते देखकर आदि मनुष्योंको ज्ञान हुआ कि पानीमें न गिरना चाहिये। इस तरह अनुभव होनेसे अग्निसे दूर रहना भी वे सीखे। ज्ञान अपने आप नहीं मिल सकता है, जो लोग कहते हैं कि-'क्रमसे ज्ञान बढ़ा' यदि उन्होंने इतिहास पढ़ा हो तो उनको मालूम होगा कि जंगली लोग हजारों वर्षतक अपनी

नीच दशामें पड़े रहे थे और कितनाही समय हो जानपर भी उन्होंने अपनो सुधार न कर पाया था। जब सं. १४९२ में कोलंबस अमेरिकामें गया, तब वहांके जंगली रेड इन्डियन सभ्य होने लगे; आफ्रिकाके सेमेटिक हबशी लोगोंके देशमें जबतक यूरोपियन लोग न गये थे, तबतक उनको बिल्कुल ज्ञान न हुआ था। परन्तु अमेरिका और आफ्रिका जैसे दूर देशोंमें उदाहरण ढूंढ़नेको जानेकी जरूरत नहीं है। अन्डमानके टापू जहां सबसे घोर पाप करनेवालेको हमारी ब्रिटिश सरकार देश निकालेका दंड करके भेजती है, वहांके लोग अंग्रेजोंके उस देशमें जानेसे पहले बिल्कुल अधम स्थितिमें थे, तब तक वे कपडे पहरना भी न समझते थे, वे सभ्य प्रजाके संसर्गमें आनेसेही कपड़े पहरना सीखे, इसी प्रकार दूसरी जातियोंके अनेकों दृष्टान्त दिये जा सकते हैं। इसके ऊपरसे हमको मानना पड़ता है कि-'नैमित्तिक ज्ञान और सत्संगविना ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता है।' इसलिये मानना पडता है कि आरम्भमें ईश्वरने अवश्य ज्ञान दिया।

भेडियारूपी मनुष्यका एक उदाहरण।

एक समय मैं आगरे और अवधके संयुक्त प्रांतके बरेली नगरमें गया था। वहां एक अनाथालयमें कि जो विशेषकर आर्य समाजकी ओरसे चलाया जा रहा है और उसके उत्तम प्रबंधके कारण सरकारसे प्रत्येक अनाथको २॥ रु. महीनेके हिसाबसे खर्च मिलता है, उसमें मैंने एक भेडियारूपी मनुष्य देखा था। ऐसा अकस्मात् हुआ कि एक गडरियेके लड़केको एक भेड़िया या जिसको संस्कृतमें वृक कहते हैं उठा ले गया 'मांसाहारी कुतो दया ?' अर्थात् मांसाहारीमें दया कहां ? तो भी परमात्माकी अपरंपार दया देखो। उस भेडियेने उस बच्चेको मार न डालकर उसको पाला। वह मादा भेडियां उस बच्चेको दूध पिलाती। इस प्रकार वह बडा हुआ, परन्तु उसको किसीने दो पैरोंसे चलना न सिखाया। इस लिये भेडियेकी तरह वह चार पैरों (दो हाथों पैरोंसे) चला करता था। एक समय मथुराका कलेक्टर शिकार करता २ उस तरफ जा निकला। गडरियेका बच्चा ठंड लगनेसे गुफाके बाहर धूपमें बैठा था। मथुराके कलेक्टरने देखा के तुरंतही वह डरके मारे पेटके बल चलकर गुफामें घुस गया। कलेक्टरने जान लिया कि यह भेड़ियां तो नहीं है। उसने उसको पकड़नेके लिये आदमी भेजे उसने उनको काटनेके लिये प्रयन्त किया और अंतको बडी मुश्किलसे पकडा गया। इस बच्चेकी उस समय दस बरसकी उमर थी। कलेक्टरके हुक्मसे वह इस अनाथालयमें लाया गया था। जब मैंने उसे देखा था उस समय वह ४ वर्षका था। पहले तो वह कच्चाही मांस खा जाता था, परन्तु ४ वर्ष

खानेके बाद वह पकाया हुआ खाने लगा था और नंगेवदन फिरना खराब समझने लगा था। पहले तो एक अक्षर भी नहीं बोल सकता था, परन्तु वह थोडा २ बोल सकता है। यह दृष्टांत क्या सिद्ध करता है ? यही कि नैमितिक ज्ञान न मिलनेसे भाषा और संसारके पदार्थोंका ज्ञान नहीं मिल सकता है।

डार्विनसे विरुद्ध थियोरी।

कोई कहेगा कि ज्ञान धीरे २ बढ सकता है, परन्तु हमारा मानना उससे एक तरह विरुद्ध है। बहुतसे इसाई विद्वान् भी वैसाही मानते हैं। हम तो उनसे उलटा यों भी मानते हैं कि आरम्भमें मनुष्य विद्वान् हुए और फिर बिगड गये। नियम होता है कि-पहले एक चीज अच्छी होती है, पीछेसे बिगड जाती है, उदाहरण लो कि सूर्यमें पहले उष्णता अधिक थी और अब दिनबदिन घटती जाती है। पहले पृथ्विमें अन्न उत्पन्न करनेकी शक्ति अधिक थी, पर अब उतनी नहीं रही। पहले मनुष्योंके शरीर अधिक लम्बे चौड़े थे, अब वे घट गये हैं। पृथ्वीसे खोदकर निकाले हुए मनुष्योंके मस्तक मत्थे बहुत बड़े मिले हैं। इसपरसे अनुमान होता है कि उनमें ज्ञानबुद्धि भी विशेष होगी। ढारविन मतवादी यूं कहते हैं कि उत्क्रांति Evolution के नियमानुसार ज्ञान किशोर अवस्थासे युवावस्थामें और उससे वृद्धावस्थामें अधिक होता है। जितना ज्ञान ३०-३५ वर्षमें होता उतना १९-२० वर्षके बालकको नहीं होता; परन्तु बाल्यास्थासे युवावस्थातक ज्ञान कहांसे प्राप्त हुआ ? यदि आप किसी मनुष्यको जंगलमें रख दें तो ज्ञान कभी नहीं होगा। प्राचीन समयमें सृष्टिके आरम्भमें सब मनुष्य जंगलके समान स्थानोंमेंही थे और यदि सबही अज्ञानी थे ऐसा मानते हैं तो किशोरावस्थामें ज्ञान कहांसे आया क्या गुरूके विना किसीको कभी भी ज्ञान हुआ है ? कालिजोंमें अच्छी पुस्तकोंके होते हुए भी कोई किस प्रकार पढे ? क्या एक वैद्यकी सहायताके विना दूसरा वैद्य स्वयं बनगया। इसलिये ज्ञानका स्त्रोत कहीं न कहीं होनाही चाहिये। मेरा ऐसाही मन्तव्य है कि—समस्त विश्वके मातापिता परमात्माने सृष्टिकी आदिमें अवश्य ज्ञान दिया।

प्रश्न होता है—यदि परमात्माने ज्ञान दिया तो किस प्रकार ? क्या वह पुस्तक-रूपमें ? क्या पुस्तक लिखकर भेजा गया ? या कानमें कहा गया ? मैं कहता हूं कि ईश्वरीय ज्ञान सृष्टिकी आदिमें दिया गया है, न कि अवीचमें। जो ज्ञान सबसे पुराना है उसीका ईश्वरप्रणीत होना संभव है। प्रमाण स्वरूप New testament का नया भाग बने १९०० वर्ष हुए हैं और Old testament का कोई भाग

-३०० वर्ष पहलेका नहीं है वेदोंके अतिरिक्त सबसे पुराना ग्रन्थ पारसियोंके पैगम्बर जरदुस्तकी गाथा है ऐसा पूर्वके साहित्यके अभ्यासियोंका निर्णय है ।

वेदव्यास जरदोश्त ।

पारसियोंका " दसातीर " नामक एक धार्मिक पुस्तक है । उसका अनुवाद गुजरातीमें हो चुका है । एक पारसी सज्जनने इसके संबंधमें मुझे खुलासा वर्णन सुनाया इसमें कहा गया है कि अपने प्रसिद्ध वेदव्यास जिन्होंने वेदान्त फिलासफी पर एक दर्शन लिखा है, उनका शास्त्रार्थ पवित्र जरदोश्तके साथ हुआ और उसमें हार गये जिससे जरदोश्तने उन्हें अपना शिष्य बना लिया! जो कुछ भी हुआ हो, परन्तु कथाप्रसंगमें उनके संवादका वर्णन आया है, महर्षि व्यासका असली नाम कृष्ण द्वैपायन था व्यासका अर्थ गोल कुंडलीके बीचकी लकीर Daimeter है और कृष्ण द्वैपायन वेदोंको व्यासके समान आरपार कर गये थे, अर्थात् उनमें सांगोपांग निपुण थे; इससे " वेद व्यास " यह नाम उनके सन्मानके लिये दिया था

जरदोश्तके पहलेके समयका पता उनके समकालीन वेद व्यासके ग्रंथोंमें मिलता है ।

वेदान्तमें नीचे लिखा सूत्र—

अत एव च नित्यत्वम् (१-३-२९)

अर्थात् वेद नित्य है, इस प्रकार लिखा है और वेदोंका आदि कारण ब्रह्म है इस प्रकार

शास्त्रयोनित्वात् (१-१-३)

इस सूत्रसे बताया है । इस प्रकार वेद व्यासने वेदोंकाही नाम पुकारा है और उस पुस्तकमें उनसे पूर्व ऋषियोंका नाम आया है । इससे सिद्ध होता है कि वेद सबसे प्राचीन पुस्तक है । (करतलध्वनि)

प्रो० मोक्षमूलरकी सम्मति ।

प्रो०मोक्ष मूलर जो सब धर्मोंके गम्भीर अभ्यासी थे अपनी Phisycal religion नामक पुस्तकमें लिखते हैं कि " कोई मुझसे पूछे कि दुनियांमें सबसे प्राचीन पुस्तक कौनसा है तो मैं बिना रोकटोकके अपनी उंगली हिन्दुओंके ऋग्वेदकी तरफ उठाऊंगा ।

(करतलध्वनि) कोई मुझसे पूछे कि–'सबसे प्राचीन धर्म कोन है ' तो भी मेरी ऊंगली हिन्दू धर्मकी ओर उठेगी मैं कहूंगा कि और सब धर्म इस धर्मसे फैले हैं (करतध्वनि)

दूसरे देश और कुलके लोग हजारों कोस दूर होनेपर भी सत्य और न्यायसे वेद सबसे पुराणा पुस्तक हैं ऐसा बताते हैं। परन्तु जो मनुष्य जिस देश और कुलमें होय, उसके संस्कारोंके वशमें वह रहताही है। एक उदाहरण दूंगा—

करवत लेनेपर भी मोचीका मोची।

एक मनुष्यकी यह समझमें आया के काशीमें करोत लेनेसे जीवते जीव शरीरके दो टुकडे करानेसे मुक्ति और मन मांगा परलोक मिलेगा। काशीकी कचोरी गलीमें एक कूआ है, ब्रिटिश सरकारके राज्यके पहले काशी करोतका माहात्म्य चला आता था। वहां मुक्तिकी आशामें जाकर बहुतसे भोले लोग अपनी गर्दन कटाते थे और काशीके पंडे पीछेसे उनकी मिलकियत स्वाहा कर जाते थे।

एक मोची था, वह बिचारा जूते सींतेसींते घबरा गया, उसने सोचा कि काशीमें करोत लेनेसे यह झगडा छूट जायगा (हंसी) वह काशी गया। करोत लेनेके पहले पंडोंने पूछा कि बोल तू अगले जनममें राजा होवेगा ? उसने सोचाकी राजाको शत्रुओंका बहुत भय रहता है और भी अनेक प्रकारके जंजाल और उपाधियां लगी रहती हैं, इसलिये उसने राजा होना नहीं स्वीकारा, पंडोंने पूछां—' क्या तूं आवते जनममें सेठ होगा ? ' (हंसी)

मोची—उसमें भी काम धंधेकी बडी झंझट होती है, जिस प्रकार बंबईके सेठोंको प्रामिसरी नोटोंकी फिकर रहती है (हंसी)। इसलिये यह भी नहीं।

पंडा—तो तूं क्या बनेगा ?

मोची—मुझे तो कुछ नहीं सूझता, सब कुछ सोचनेपर मोची रहनाही अच्छा है करोते दोदो मोचीका मोची हूं। (भारी हंसी) बाईबिलमें लिखा है कि सृष्टिको उत्पन्न हुए फकत छ हजार वर्ष हुए, इसलिये यह मानना कि इससे प्राचीन पुस्तक नहीं हो सकती; कूप मंडूकन्याय है। एक समय भाग्यवश एक हंस कूपपर आया, जिसमें एक मेंडक रहता था। मेंडकने पूछा—' तूं कहांसे आया ? ' हंसने कहा—'मानसरोवरसे।' मेंडकने पूछा—'वह कितना बडा है। हंसने कहा बहुत मोटा—'तो मेंडकने छलांग मारके कहा मैंने छलांग मारी इतना बडा ? हंसने कहा इससे बडा अन्तमें मेंडकने सारे कूए कूपकी प्रदक्षिणा करके पूछा—' क्या इतना बडा ? ' तब भी हंसने मानसरोवर उससे बडा बताया। तब मेंडकने कहा—इससे बडा हो नहीं सकता (हंसी) खिस्तमतावलम्बियोंके बिचार भी इसी प्रकार संकीर्ण हैं ऐसा मुझे अन्ततो गत्वा कहना पडता है

स्वामीजीने अपने भाषणमें बतलाया कि मोचीका धंधा राज्य व्यापारी और ब्राह्मणसे नीच होते हुए भी उसके संस्कार वैसे होनेसे उसने यही मांगा।

प्रोफेसर मोक्षमूलर एक सच्चे भले निष्ठावान् विद्वान् थे, परन्तु उनमें ख्रीष्ट धर्मके संस्कार इतने दृढ थे कि बाइबिलके लिखे मुताबिकही वे अन्य धर्मोंका अनुमान बांधते। बाइबिलमें लिखा है कि सृष्टिको हुए छः हजार वर्ष हुए और उसे सत्य मानकरके उन्होंने वेदोंका सबसे प्राचीन कहते हुए भी फकत ३५०० वर्ष प्राचीन सच्चे भावसे बताये, वे सृष्टिको ही ६००० वर्षसे पुरानी नहीं मानते; फिर किसी पुस्तकको उससे पुरानी कैसे मानें।

मिस्टर तिलक और वेदोंकी प्राचीनता।

इस विषयमें अनेक विद्वानोंने भिन्न २ मत दिये हैं; इनमेंसे एक विद्वान् मराठा ब्राह्मण जातिके हैं। जिस जातिके विरुद्ध में हूं ऐसा कहा जाता है।(हास्य) उनका नाम मिस्टर बाल गंगाधर तिलक है (करतलध्वनी) उन्होंने "ओरायन" नामक ग्रन्थमें "वेद ३५०० वर्षोसे प्राचीन हैं" ऐसा दर्शाया है। महाराज रामचन्द्रके समयमें नक्षत्रोंकी जो स्थिति थी, उसका वर्णन अयोध्याकांडमें रामके वनवास जाते समयके प्रसंगमें है; उसी प्रकार महाभारतके भीष्मपर्वमें युद्धके आरम्भमें नक्षत्रोंका वर्णन है, इसी प्रकार ऋग्वेदमें ऋग्वेदकी उत्पत्तिके समय नक्षत्रोंकी क्या स्थिति थी, उसके संबंधके कुछ मंत्र हैं। मिस्टर तिलकने उन मंत्रोंको उद्धृत किया है और उसमें वर्णित नक्षत्रोंकी स्थिति आजसे छ हजार वर्ष पहले थी इस प्रकार कमसे कम वेद छ हजार वर्ष पूर्व थे। जहांतक मुझे पता है। मिस्टर तिलकने यह मंत्र मोक्षमूलरके पास भेजा था और उन्होंने वेदकी प्राचीनता मिस्टर तिलकके कथनानुसार स्वीकार की।

वेदोंके कमसे कम छ हजार वर्ष पूर्व होनेकी ऐतिहासिक साक्षी।

परन्तु वेद छ हजार वर्ष पूर्व थे, इससे इस विषयकी पूर्ति नहीं होती। आकाशमें ग्रहोंका चक्र घूम फिरकर कुछ हजार वर्षो पीछे उसी स्थानपर आजाता है। सृष्टिके आरम्भसे इस प्रकार नक्षत्र एकही स्थानपर हजारों बार आ चुके हैं। ऐतिहासिक शास्त्रोंमें यज्ञ करते समय अमुक नक्षत्र इस प्रकारकी स्थितिमें था इस प्रकार जो वर्णन आता है, तो उसको सबसे अन्तिम चक्र मानना क्या आवश्यक है ? सृष्टिके आरम्भसें हजारों बार नक्षत्रोंकी परिकमा हो चुकी तो क्या उससे पूर्व मानना उचित नहीं ॥

सबसे अन्तका तो माननाही पड़ेगा ॥

नक्षत्रोंके स्थानसे वेदोत्पत्तिकी तारीख ।

परन्तु कोई कहेंगे कि प्रथम अथवा मध्यकी परिक्रमाके प्रमाण नहीं मिलते। परन्तु बीती हुई घटनाओंके बारेमें पुस्तकोंको छोड़कर क्या प्रमाण दिया जा सकता है ? हिन्दुस्थानमें जिस प्रकार " अकबर अथवा युधिष्ठिर राजा हुए " इसका इतिहासके अतिरिक्त और क्या प्रमाण है, व्यतीत बातोंको जाननेके लिए अपने पास साधन इतिहास ग्रन्थ हैं ।

तब अन्य बातोंमें तो इतिहास प्रमाण माने जावें, परन्तु वेदके विषयमें उसे प्रमाण न मानना इसको न्याय नहीं कह सकते. इससे तो धर्म भावकी न्यूनता प्रकट होती हैं

संस्कृतके शास्त्री और अंगरेजी पढ़े हुए विद्यार्थियोंमें धर्मभाव ।

मैं स्वीकार करता हूं कि वर्तमानके संस्कृत पढ़े हुए शास्त्री धर्मविषयमें भोले तो अवश्य हैं परन्तु सच्चे धर्मभाव रखते हैं । आज तक भी वे प्राचीन शिष्ट सम्प्रदायके अनुसार गुरुचरणोंका स्पर्श किया करते हैं । आजकलके जैंटलमेन विद्यार्थीमें (हंसी) अपने गुरु अथवा प्रोफेसरके प्रति कोई ऊंचा मान नहीं होता । उनकी यह धारणा है कि ये जो हमें पढ़ातें हैं तो हमारे ऊपर कुछ ऐहसान नहीं करते वे अपने शिक्षककी टीका और मजाक वारम्वार करनेसे नहीं चूकते ।

मेरा निजू अनुभव है कि एक स्कूलमें हेडमास्टरका कमरा एकान्तमें था उसके ऊपर लड़कोंने मोटे हरफोंमें Bad Master's room दुष्ट मास्टरका कमरा लिख दिया (हंसी) प्राचीन कालमें इस प्रकारकी धारणा थी कि विद्या पैसा लेकर नहीं परन्तु मुफ्त पढ़ाना । (करतल ध्वनि) यदि कोई पैसा लेकर विद्या पढ़ाता तो ब्राह्मणत्वसे बहिष्कृत होता । और वह ब्राह्मणके आसनपर समानतासे नहीं बैठ सकता । उस समय विद्या मुफ्त होनेसे कोई मूर्ख नहीं रहता था ।

अब मैं अपने विषयपर आता हूं, यदि धर्मभाव और न्यायदृष्टीसे निर्णय किया जावे तो यह सिद्ध है कि संस्कृत ग्रन्थों व इतिहासके प्रमाणोंसे वेद सबसे प्राचीन हैं ।

कितनेही लोग ज्योतिषके ग्रन्थोंको ३,४, हजार वर्षोंकेही पुराने बतलाते हैं परन्तु वे लाखो वर्ष पुराने हैं । इस प्रकार उनमें बताई तारीखसे पता चलता है और संस्कृतके लाखों वर्षों पूर्व बने ग्रन्थोंमें वेदोंका नाम है । यदि उन्हें प्रमाणिक नहीं मानते तो वेदोंके प्रति आपकी अरुचि है इसके सिवाय और क्या कहा जाय ?

वेदोंकी ठीक तारीख ।

वेदोंको प्रकट हुए आज अनुमानसे १९७२९४९००५ वर्ष हुए (करतलध्वनि) तारीखके विषयमें एक प्रमाण दूंगा । ऋषि ग्रन्थोंमें विशेष कर ज्योतिष अवश्य होता है प्रत्येक कृत्यके आरंभमें और कर्मकांड सम्बंधी ग्रन्थोंमें संवत्सरका उपयोग अवश्य होता है प्रत्येक कृत्यके आरम्भमें ब्राह्मण द्विजलोग नीचे लिखे प्रकारसे बोलते हैं ।

ओ३म् अद्य श्री ब्रह्मणो द्वितीये प्रहरार्धे श्वेत वाराह कल्पे वैवस्वत मन्वंतरे अष्टाविंशति कलयुगे कलिप्रथमचरणे इत्यादि । अर्थः—आज श्री अर्थात् ब्रह्मके दूसरे पहरका आधा दिवस हो गया है उसमें श्वेत वाराह कल्पमें वैवस्वत मन्वन्तर है उसमें अठाईसवां कलियुग है इसकी गणना करनेसे ठीक ऊपर कहे अनुसार वर्ष आते हैं ।

वेदोंके संबंधमें सत्यवादी क्या कहते हैं ?

क्रमशः ऋषि अपने शिष्यको इस प्रकार समय बताते हैं । वही में अगर कोई गडबड हो तो साक्षीकी आवश्यकता पडती है । लेखमें कोई गडबड हो तो मैजिस्ट्रैट सत्यवादी साक्षीसे निश्चय करता है । महाराज युधिष्ठिरके समान कोई सत्यवादी साक्षी आपको नहीं मिलनेका ! उनको झूठ बोलनेके लिये राजनीतिज्ञ कृष्णने आग्रह किया, तो उन्होंने कहा—

"न मे वाक अनृतं प्राह नाऽधर्मे धीयते मतिः"

युधिष्ठिर महाराज कहते हैं—"झूठ बोलनेमें मेरी जिव्हा नहीं चलती, अधर्ममें मेरी मति नहीं चलती ।

यह बात सत्यवादी युधिष्ठिर महाराज, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, रामचन्द्र, आदि पुकार पुकारके कहते हैं कि वेद लाखों बरसोंसे है क्या आप यह साक्षी झूठी गिनेंगे ? यह संवत्सर रामचन्द्र और विक्रमादित्यके समयमें प्रचलित था, इसकी सत्यतामें शंका कैसे हो (करतलध्वनि) यदि आप मैजिस्ट्रेटकी दशामें इतनी जबरदस्त साक्षी नहीं मानते तो मैं लाचार हूं, मेरी शक्ति नहीं है कि सृष्टिका आदि काल लाकर आपके सामने रक्खूं ।

वेदोंके स्वतःप्रमाणके संबंधमें ऋषि और शंकरका मत ।

वेद स्वतःप्रमाण है. वसिष्ठ, गौतम, अंगिरा, अत्रि भृगु आदि अति प्राचीन कालके ऋषि इतने सत्यवक्ता और महान् योगी थे कि जो उनके चरित्र पढकर

अभ्यासी और दिग्विजयी हुए हैं उन्होंने वेदोंको अपौरुषेय अथवा पुरुष नहीं परन्तु ईश्वरकृत कहा है। फारसीमें एक कहावत है, जिसका अर्थ यह है-'कि मक्खी हलवाई की दुकानको छोडकर अन्यत्र जाना नहीं चाहती-'

शंकर स्वामीके साहित्यरूपी मिठाईपर जर्मन विद्वान् मक्खियोंकी तरह घूम रही हैं। शंकर स्वामीमें असाधारण नैतिक धैर्य था। जिन शंकरस्वामीने बौद्धधर्ममें गये हुए हिन्दुओंको पीछा वेदधर्ममें मिलाया वे शंकर स्वामी कहते हैं कि चार वेदोंका ज्ञान ईश्वरकी ओरसे है। वे कहते हैं कि-'चार वेद सब विद्याओंका प्रकाश करते हैं; सब विद्याएं उसीमें हैं, इससे प्रतीत होता है कि ईश्वरही इस प्रकार मूलज्ञान दे सके हैं।

मनु महाराज कहते हैं-

" भूतं भव्यं भविष्यच्च सर्वं वेदात् प्रसिध्यति॥ "

९-९ ७॥ मनु अ. १२

भूत, भविष्य और वर्तमान सब वेदोंसे प्रसिद्ध होते हैं। सांख्यदर्शनके कर्ता और Evolution फिलासफीके प्रतिपादक महर्षि कपिल (जिन्हें बहुतसे भूलसे नास्तिक कहते हैं) कहते हैं, निजशक्तिसे प्रादुर्भूत होनेके कारण वेद स्वतःप्रमाण हैं।

इस समय साढे सात बज गये थे, इस लिये स्वामीजीने कहा कि समय हो जानेसे प्राचीन ऋषियोंके मत अधूरे बतला करही आजका व्याख्यान रोकना पड़ता है। वेद स्वतःप्रमाण किस प्रकार हैं और अन्य छ प्रश्नोंके सम्बन्धमें विस्तृत विवेचन मैं कलके व्याख्यानमें करूंगा।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

नववाँ व्याख्यान।
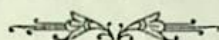
वेदशास्त्रानुसार वर-कन्याके विवाहका समय।
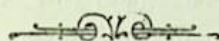
ता. १५ अगस्त १९०२

इस विषयका प्रतिपादन करनेके पहले मुझे आपसे दो तीन बातें कहनी हैं।

मधुपर्क क्या है?

" यज्ञमें मांसाहार करना वेदानुकूल है वा नहीं " इस विषयपर व्याख्यान देते गत दिवस मैंने निवेदन किया था कि–वेदमें पशुहिंसा करनेका कुछ भी नहीं लिखा है, उस समय मैंने " मधुपर्क " शब्दका भी प्रयोग किया था। मुझे कितनेही गृहस्थ पुरुषोंकी ओरसे विनति की गयी है कि–'इस शब्दके अर्थका स्पष्टार्थ करना चाहिये' प्राचीन कालमें ऐसा रिवाज था कि राजा, ऋषि विद्वान् आदि मान्य लोग जब अन्य लोगोंके यहां जाते थे, तो प्रथम उनके पैर धोये जाते थे; तत्पश्चात् आचमन करके मुख्य वस्तुओंका बना हुआ पदार्थ, जिसको आजकल श्रीखंड कहते हैं, और उस समय जिसको मधुपर्क कहते थे, वह प्रसाद खानेको दिया जाता था और ऐसा भी रिवाज था कि सन्मानके तौरपर गौभी भेंट देते थे स्मृतिमें कहा है कि मधुपर्क मधु, दही, घी, पानी और मिश्री इन वस्तुओंसे बनाया जाता था। इसका अर्थ कितने लोग ऐसा करते हैं कि अतिथि किसीके घर आवे तो गायको मारकर उसके रुधिरसे मधुपर्क बनाते थे। परन्तु यह दुष्टोंकी करतूत है। वे लोग भी प्रमाण देते हैं कि " नामांसो मधुपर्को भवति " और उसका अर्थ ऐसा करते हैं कि मांसविना मधुपर्क नहीं होता। परन्तु " न अमांसो मधुपर्को भवति " इस प्रकार जो पदच्छेद करें तो ऊपर कहा अर्थ हो सकता है। परन्तु जो ' अमांसो ' ऐसा पदच्छेद करें तो अर्थ होगा कि जो मांसवाला होय वह मधुपर्क नहीं हो सकता है और यह अर्थ वेदानुकुल है और यह उत्तम तथा सत्य होनेपर भी ऊपरके अर्थके बदले यही क्यों न माना जाय ? मधुपर्कका अर्थ मांसयुक्त होना कूंडा पंथ (वाममार्ग) के समयमें चलता होगा। तुम जानते हो कि वाममार्गी लोग बहुतही भ्रष्ट और मद्यमांसआहारी थे।

" एक सूखा चना मिले तो एक घड़ा मद्य पीऊं ! "

वाममार्गी लोग मद्यमांसके ऐसे शौकिन थे, कि उनके तांत्रिक ग्रन्थोंमें एक वाम-मार्गीने लिखा है कि " **एकेन शुष्कचणकेन घटं पिबामि पिबामि कूपम् यद्याप्रवेन** " इत्यादि—इसका अर्थ यह है कि जो मुझे (वाम मार्गीको) एक सूखा चना मिले तो एक घड़ाभरके मदिरा पिऊँ! जो पकाया चना मिले तो कुआंभर मदिरा पिऊं !! जो रोटीका एक तुकडा मिले तो नदीभर मदिरा पिऊं और जो मछली मिले तो समुद्रभर मदिरा पिऊं (हंसी) यह श्लोक कहता है कि वाम मार्गी मदिरा आदि मादक द्रव्योंके कैसे उपासक थे? कालीतंत्र आदिमें लिखा है कि जो शराव मांस व्यभिचार इत्यादिमें प्रवृत्त हो वही बुद्धिमान और उत्तम मनुष्य है। और जो अज्ञानी होते है वेही मास आदिसे अलग रहते हैं। "**आर्ष ग्रन्थोंमें वाममार्गी श्लोकोंका प्रक्षेप**" वाममार्गी लोगोके ग्रंथोंके ऐसे श्लोक कालक्रमसे आर्ष ग्रंथोंमें भी घुस गये हिन्दुओंकी गपड़ शपड़के कारण जो चाहता उनकी पुस्तकोंमें प्रक्षिप्त कर देता। उदाहरणके तौर हालमें महाभारतमें हजारों ऐसे अध्याय हैं, जिनका नाम निशानतक अनुक्रमणिकामें नहीं है! इस प्रकार महाभारतके हजारों अध्याय व्यासके बनाये हुए नहीं हैं और पीछेसे उसमें डाले गये हैं, यह सिद्ध होता है। क्योंकि कहा है कि " **चतुर्विंशतिसाहस्त्रीं चक्रे भारतसंहिताम् । उपाख्यानैर्विना तावद्भारतं प्रोच्यते बुधैः** " पर्व १ अध्याय १ श्लोक १०१। इस श्लोकमें बतलाया है कि—उपाख्यान छोड़कर २४००० श्लोकोंका महाभारत बनाया गया था। वाल्मिकीरायायणमें भी कितनेही श्लोक पीछेसे मिला दिये गये हैं। महाभारतके भीष्मपर्वमें भगवद्गीता आई है। महाभारतमें गीताके जितने श्लोक हैं, उनसे जुदी पुस्तकाकार विकती गीतामें ४४ श्लोक अधिक हैं। गृह्यसूत्र, मनुस्मृति आदि पुस्तकोंमें भी इसीतरह मांस आदि संबन्धमें पीछेसे श्लोक मिलाये गये हैं। वेदोक्त सत्य शास्त्रोंमें यह बात नहीं है। इसी लिये आर्ष ग्रन्थोंमेंसे जो प्रमाण मैं देता हूं सो जो वेदानुकूल होते है वेही प्रमाण मैं देता हूं और जो वेदविरुद्ध हैं, उनको मैं अप्रमाण मानता हूं। अपने गतव्याख्यानमें जो प्रमाण मैंने दिये थे उनके संबन्धमें भी ऐसा ही समझना चाहिये।

विवाह और लग्नमें भेद

अब मैं अपने विषयपर आऊंगा। 'विवाह' शब्दसे जो हालमें तुह्मारे यहां 'सगाई' होती है सो न समझना। जिसको तुम गुजरातिमें विवाह कहते हो उसका अर्थ उत्तर हिन्दुस्तानमें लग्न होता है संस्कृतमें भी विवाह शब्दका अर्थ लग्नही होता है। इस लिये मैं जहां विवाह शब्दका उपयोग करूं वहां तुमको लग्नही समझना चाहिये।

हालमें जो सगाई होती है उसकी विधि शास्त्रोंमें है नहीं। विवाह एकही बार होता है। मनुमहाराज कहते हैं कि "संस्कृतकन्या प्रपद्यते" अर्थात् कन्याको संस्कारी बनाकर लग्नमें दी जाती है।

"शास्त्रोंमें विवाहका समय"।

विवाहका समय क्या है इसका जवाब देनेसे पहले हम देखेंगे कि धर्मशास्त्रोंमें शिरोमणि वेद इसके संबन्धमें क्या कहते हैं वेदोंमें लड़कियों और लड़कोंके विवाह बड़ी ऊमरमें करना कहा है। वेदोंके पीछे उपनिषद् ब्राह्मण और गृह्य श्रौतसूत्रोंमें विवाहके सबन्धमें क्या कहा है ओर पीछे वैद्यकविद्या और सृष्टिक्रम देखनेसे और प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे विवाहकी उमर क्या होनी चाहिये, तथा बालविवाहसे क्या हानि होती है, यह मैं क्रममे कहूंगा।

"दसवें वर्ष कन्याका विवाह न करें तो मा बाप नरकको जाँय"।

प्राचीन शास्त्रोंमें तो बालविवाहके लिये कोई प्रमाण मिलता नहीं, परन्तु अर्वाचीनकालकी पाराशर स्मृति ओर काशीनाथके शीघ्रबोध वगैरह पुस्तकोंमें इसके प्रमाण देखे जाते हैं। पाराशरी और शीघ्रबोधमें लिखा है कि—

"अष्टवर्षा भवेत् गौरी नववर्षा च रोहिणी।
दशवर्षा भवेत् कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला॥
माता चैव पिता चैव ज्येष्टो भ्राता तथैव च।
त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्॥"

अर्थ—कन्याकी आठवें वर्ष गौरी, नवें वर्ष रोहिणी, और दशवें वर्ष कन्या संज्ञा होती है और इसके बाद रजस्वला होती है। जो उस रजस्वला कन्याको अविवाहित रखकर देखें तो उसके मातापिता तथा बड़ा भाई नरकको जाते हैं। गौरी पार्वतीका नाम है और पार्वतीको माताके समान माना जाता है अर्थात् आठवें वर्ष विवाह करना तो माताके साथ विवाह करने जैसा पाप है और नवें वर्ष रोहिणी जो कृष्णकी माता है उसका भाव उसमें किया जाता है। इसलिये उसका भी निषेध किया गया है। हिन्दु शास्त्रोंमें लिखा है कि—'कन्यादान देना चाहिये'। मैं अब शास्त्रोंसेही सिद्ध करूंगा कि कन्या जबतक अविवाहित होय वहांतक वह कन्याही कहलावे, चाहे फिर वह सौ वर्षकी क्यों न हो? महाभारतमें लिखा है कि—

"कौमारं ब्रह्मचर्यं मे कन्यैवास्मि न संशयः"। अनु. पर्व अ. २०

जबतक ब्रह्मचर्य्य पाला जाय तबतक कन्याको कन्याही कहना चाहिये । ५३ वर्षोंकी बड़ी उमरकी स्त्रीको कन्या कहा है । पराशरके बड़े टीकाकार माधवाचार्य जिन्होंने वेदोंका भाष्य किया है उन्होंने लिखा है, कि ऋतुकाल होने पश्चात् रजोदर्शनसे शुद्ध होने बादही उसको कन्या कहना चाहिये । (तालियोंकी ध्वनि) वह टीकावाली पाराशरस्मृति यहां नहीं मिलती है । परन्तु कलकत्तेकी रॉयल एशियाटिक सोसाइटीकी लायब्रेरीमें मिल सकती है ।

'नव वर्षकी उमरमें रजस्वला कैसे हो सके ?'

ऊपर कही हुई पाराशरीके श्लोकमें दश वर्ष बाद रजस्वला होती है ऐसा जो लिखा है सो वास्तविक है वा कल्पित ? सच पूछो तो वैसा नहीं है; क्योंकि कन्याको १२-१३-१४-वर्षकी उमरमें शरीरावस्थाके अनुसार स्त्रीधर्म प्राप्त होता है, परन्तु 'सब लड़कियोंको दशवें वर्षही रजोदर्शन प्राप्त होता है' यह कहना कितने प्रमादकी बात है । जो दशवर्षकी मर्यादा कल्पित होय तो उसको सच्चे व्यवहारमें उपयोग करना ठीक नहीं है । प्राचीन वैद्यकके ग्रन्थ सुश्रुतमें लिखते हैं कि स्त्रीधर्म जल्दीमें जल्दी बारहवें वर्ष प्राप्त होता है, और ५५ वर्ष पीछे रजोदर्शन बन्द हो जाता है । जो दश वर्षकी उमर मनुको इष्ट होती तो मनु यों किस लिये लिखते कि-"जो कन्याके योग्य लायक वर न मिले तो चाहे जन्मपर्यन्त ब्रह्मचर्य पालन करे, परन्तु नालायक वरके साथ विवाह न करे" (तालियां)। हिन्दुओंके संस्कार करनेकी "संस्कारकौस्तुभ" नामक पुस्तक जिसको सब हिन्दु मानते हैं, उसमें लिखा है कि-

"पिता ऋतून् स्वपुत्र्याश्च गणयेदादितः सुधीः ।
दीनावधि गृहे यत्नात्पालयेच्च रजोवतीम् ॥"

अर्थः—पिता पुत्रीकी ऋतुप्राप्तिकी संख्या ठीक २ गिनता रहे, यह उसका धर्म है और रजोवती कन्याको जितने दिन घरमें रखना लिखा है, उतने दिन घरमें रखकर उसका पालन करना चाहिये ।(तालियां) यह कुछ मेरा कहना नहीं है, परन्तु तुम्हारे शास्त्रकारका कहना है । पाणिनीयकी अष्टाध्यायीमें लिखा है कि- 'कन्यायाः कनीन च' अर्थात् कन्याका जो कुछ होय वह कनीन और कन्यासे कानीन शब्द बना है और जो कन्या दशही वर्षकी होय तो इतनी वयमें उसके पुत्र कैसे हो सक्ता है ? (तालियां) फिर महाभारतमें लिखा है कि '**कानीनः करणो व्यासश्च**' अर्थात् करण और व्यास कन्याके पुत्र थे । पांडवोंकी माता कुन्तीको महाभारतमें कन्या कहा है । जो वह कन्या अर्थात् दश वर्षकी होती तो क्या पांडवोंका उससे जन्म होना युक्त हो सक्ता है ?

विवाह कौन करे? स्वयं कि मावाप?

अबमैं वेद में विवाहका समय बतलाऊंगा, मैं छातीपर हाथ धरके कहूंगा कि कोईभी संस्कृतका पंडित वेदोंमें बतलावे कि—'पुत्र-पुत्रीके विवाह माता-पिता करें'। अखबारोंमें जैसे कितनेही लोग अपना नाम नहीं देते हैं, परन्तु "एक लिखनेवाला" इस प्रकार अपने नाम लिखते हैं और अपना नाम छिपाते हैं (हंसी) वैसे नहीं, परन्तु मैं खोलकर कहता हूं कि जो वेदोंमें ऐसा हो तो कोई भी पंडित बतलावे। सब शास्त्रोंमें दोनोंको युवावस्थामें पहुँचकर अपने आप विवाह करना लिखा है। (जोषसे तालियां) मातापिताका काम पुत्रपुत्रीको पढ़ाना वेदोंमें कहा है, परन्तु उनके विवाह करना वेदोंमें नहीं कहा है। मनु आदिमें ऐसा लिखा है कि—'पुत्रीका विवाह पिता कर दे, परन्तु स्मृतिमें भी पुत्रका विवाह करनेको तो नहीं लिखा है। अस्तु। अब वेदोंमें विवाहका क्या समय कहा है, इसपर मैं आऊंगा। वेदमें लिखा है कि—

सोमो॑ वधूयुर॑भवद॒श्विना॑स्तामु॒भा व॒रा।
सू॒र्यां यत्पत्ये॒ शंस॑न्तीं॒ मन॑सा सवि॒ताद॑दात् ॥८॥ ऋ.१०-८५

सूर्यकी पुत्रीका विवाह और उमर।

सायणाचार्य, कि जिसने वेदोंका भाष्य पौराणिक पद्धतिसे किया है, उसने इसका अर्थ क्या किया है, सो देखें। सायणने भाष्यके उपोद्घातमें तो लिखा है कि वेदोंमें वस्तुविशेषका नाम नहीं है. परन्तु स्वयं भाष्यमें उसने बहुतसे इतिहास तथा बडी निन्द्य बातें लिखी हैं। यहांतक कि मैं उनका उच्चारण भी नहीं कर सक्ता हूं। ऐसा है तो भी वह वेदोंके अर्थ कहांतक बदलेगा? ऊपरके मंत्रका अर्थ उन्होंने ऐसा किया है कि सूर्य भगवान् जो पृथ्वीसे १३-१४ लाखगुना बड़ा है उनकी पुत्री सूर्याका विवाह चंद्रके साथ हुआ! चंद्रमा (सोम) को उसके साथ विवाहकी इच्छा हुई थी उसी समय दो अश्विनोंको (जिनको हिन्दू लोग बड़े वैद्य मानते हैं) भी उसके साथ विवाहकी इच्छा हुई थी, उस समय उसकी उमर क्या थी? जो कि सायणने इस अंशमें अशुद्ध अर्थ किया है तौ भी वे भाष्यमें कहते हैं कि '**पतिकाम्यमानां पर्याप्तयौवनां** इत्यर्थः" अर्थात् वह युवावस्थामें आ गई थी और पतिकी कामना करनेवाली होगई थी। अश्विन उसके साथ विवाह करना चाहते थे, तथा वह चन्द्रके साथ विवाह करना चाहती थी। इससे उसका विवाह उसके पिताने उसके साथ कर दिया। इस मंत्रका इतना अर्थ होते भी

सायणाचार्य इतना तो न छुपा सके कि कन्याका विवाह उसकी इच्छानुसार उसके युवा होने बाद किया गया था। सत्य अर्थ तो और ही है। सूर्याका अर्थ विद्वान् पढ़ी लिखी लडकी होता है। यजुर्वेदके ४० वें अध्यायमें '**असुर्या नाम ते लोका अंधेन तमसा वृताः। तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः**' ॥ ३ ॥ इसमें असुर्यका अर्थ अविद्वान् है, वैसेही सूर्यका अर्थ विद्वान् होता है। वैसी विदुषी स्त्री होय तो स्वयंवर करे। इस स्वयंवरमें अनेक लोग आते हैं। उसमें जिसको वह वरमाला पहनावे, वह उसका पति होवे। स्वयंवरमें जो आते थे, उनमेंसे किसीको भी कन्या पसंद कर सकती थी। अश्विनका अर्थ जैसे माना जाता है वैसे वैद्य नहीं है। ब्राह्मण ग्रन्थोंमें उसका अर्थ स्त्रीपुरुष किया है। तथा उसका अर्थ पृथिवी, आकाश, रात्रि, दिवस, चंद्र, सूर्य, विद्वान्, और अध्वर्यु होता है। जिसको कन्या पसंद करे, उसीके साथ पिता विवाह करा सके। उसको पुत्रीको आज्ञा करनेकी सत्ता नहीं है। वह तो सलाह और सहायताही दे सकता है। ऊपर कहे वेद-मंत्रका सत्य अर्थ ऊपर कहे अनुसारही हो सक्ता है। ऋग्वेदके १०-२७-१२ मंत्रमें लिखा है कि विवाह करनेवालेको कौनसी स्त्री उत्तम लगती है ? जो सुन्दर हो, जो प्रिय पतिकी याचना करती हो वही स्त्री पतिको प्यारी लगती है। वेदमंत्रका अर्थ स्पष्ट करनेको स्वयं सायणने भी एक उदाहरण दिया है। उन्होंने लिखा है कि जैसे दमयंती आदिने स्वयंवर किया था वैसेही दूसरी स्त्रियां भी परस्पर गुण जानके विवाह करें। दश वर्षसे अधिक उमरतक कन्याका विवाह न होनेसे मातापिता नरकमें जाते हैं, यह बात बिल्कुल गलत है।

पांडवोंकी माता कुन्तीका स्वयंवर।

महाभारतमें पांडवोंकी माता कुन्तीके स्वयंवरका वर्णन आया है। उसमें उसको तेज-स्विनी, रूपयौवनकी खान कहकर लिखा है कि उसके साथ विवाह करनेको बहुत राजा उत्सुक थे। जो कुन्ती उस समय दश वर्षकी होती तो उसमें ऊपर कहे हुए गुण कैसे होते? कुन्ती माताने बाल्यावस्थामें नहीं, किन्तु युवावस्थामेंही विवाह किया था, इससे उसके ऐसे बहादुर शूरवीर महान् पुत्र उत्पन्न हुए थे युधिष्ठिर जैसे दृढ धर्मात्मा, अर्जुन जैसे शस्त्रधारी, और भीम जैसे बलवान् पुत्र किसके हुए हैं ? इसका कारण माताके ब्रह्मचर्यके प्रतापके सिवाय और कुछ नहीं है (जोरसे तालियां)।

मुझे नहीं मालूम, मेरे बापको पूछो।

परन्तु आजकल क्या देखा जाता है ? पांच, आठ अथवा दश वर्षकी छोकरी-

का ८–१०–१२ बरसके छोकरेके साथ विवाह किया जाता है । मैं एक उदाहरण दूंगा । उन बिचारे पुत्रों (बालक) को विवाह क्या है, उसका क्या प्रयोजन है, यह बिलकुल नहीं मालूम होता है । आठवर्ष हुए, मैं मुम्बईमें था; उस समय मुझे एक गृहस्थने एक हास्यजनक बात सुनाई थी सो अभीतक मुझे याद है । एक छोटा लड़का शादी करने जाता था । घोड़ेपर बैठे उस लड़केसे उसके एक सम्बन्धीने पूछा- 'अरे ! यह सब क्या होता है ? यह वरघोड़ा क्यों निकला है ?' तब वरराजने कहा " मुझे नहीं मालूम ! (हंसी) मेरे बापसे पूछो । किसका वरघोड़ा निकला है " (ज्यादा हंसी) ।

मइसोरमें विवाहसम्बन्धी कानून ।

उसके बननेका एक हास्यजनक कारण ।

आठ वर्ष हुए, मैं मुम्बईसे चलकर मइसोर गया था । मइसोरके राज्यमें वहाँके पूर्व राजाने ऐसा कानून बनाया था कि १२ वर्षसे कम उमरकी लड़कीका विवाह न किया जाय । मैंने मइसोरके महाराजासाहबसे पूछा कि यह कानून बनानेका क्या कारण है ? श्रीमानोंने उत्तर दिया कि–'छोटी उमरमें विवाह करनेसे जो नुकसान हुआ है, उसका मुझे अनुभव है । एक समय ऐसा हुआ कि मैंने एक पांच वर्षकी छोटी लड़कीका विवाह करते देखा । हमारे राज्यमें नियम है कि विवाह होते समय पहले कन्या वरको एक केला देती है और उसको खिलाकर पीछे आप खाती है । इसका आशय यह है कि स्त्री पहले पतिको भोजन कराकर पीछेसे स्वयं भोजन करे । यह जो पतिसेवाकी मर्यादा है सो व्यवहारिक रीतिसे विवाहके समय साक्षात्कार करना चाहिये । इस ऊपर कहे हुए उदाहरणमें ऐसा हुआ कि उस पांच वर्षकी कन्याको केला दिया गया, परन्तु यह बालिका क्या समझे ? उसने उसका छिलका उतारकर पतिको देनेके बदले आपही खा गई ! (खूब जोरकी हंसी) आगे चलकर महाराजाने मुझे बतलाया कि यह हाल देखकर मुझे बहुतही बुरा लगा और छोटी उमरमें विवाह करनेसे जो अंधेर होता है सो मुझे मालुम हुआ ! उस दिनसे मैंने विवाहकी उमरका कानून बनाया । बिचारी छोटी लड़कीको क्या खबर कि पति किस चिड़ियाका नाम है ? (बड़ी हंसी) ।

अब आर्यावर्त्तमें योद्धा और विद्वान् क्यों नहीं होते हैं ? ।

ब्रह्मचर्यका पालन न करना कुदरतके उत्तम नियमका उल्लंघन करने बराबर है । कुदरतके नियमके विरुद्ध जल्दी विवाह करनेके पक्षमें चाहे हजारों पुस्तकें लिखी

जायँ तो भी क्या कुदरत अपना स्वभाव छोड देगी ? प्राचीन कालमें महान् ऋषि राजा और विद्वान् होते थे; अब क्यों नहीं होते हैं ? क्या आर्यावर्त्तकी भूमिके वायु जलमें परिवर्त्तन हो गया है ? नहीं, हिमालय पर्वत जहां था हालमें भी वहीं है। गंगा और ब्रह्मपुत्रा नदियां भी जैसी थीं वैसीही बहती हैं; तो भी आज आर्यसंतानोंकी स्थितिमें परिवर्त्तन हो गया है, इसका कारण यह है कि पहले ऋषि, राजर्षि, ब्रह्मर्षि अडतालीस वर्षतक ब्रह्मचर्य पालन करते थे; उस समय स्त्रियां भी कमसे कम १६ से २४ वर्षतक ब्रह्मचारिणी रहती थीं इससे उन ब्रह्मचारि मातापिताके संतान बहादुर शूरवीर होते थे।

बालब्रह्मचारी भीष्म पितामह।

महाभारतमें कृष्ण महाराज कहते हैं कि हे युधिष्ठिर ! भीष्म पितामह सारी पांडवसेनासे न डिगे, महाबाहु अर्जुनसे भी न थके; और जब छलकपटसे उनके सामने शिखंडी किया गया तबही वे बाणोंसे विंध गये। अब वे अनेक बाणोंसे विंधे बाणशय्यापर पड़े हैं तो भी अभी कैसे स्वस्थ हैं ? ऐसी असाधारण सहनशक्तिका क्या कारण ? कारण यही कि भीष्मकी माता गंगाका गर्भ जब मजबूत हुआ था तभी उसने भीष्मको धारण किया था। (तालियां) **आर्यावर्त्तमें सबसे महान् ब्रह्मचारी योद्धा श्रीभीष्म हुए हैं**। उनके बाद कोई हुआही नहीं (तालियां)।

" लड़केका लड़का "

आज कल कन्या दशवें बारहवें वर्ष और पुत्र १४ वें १५ वें वर्ष विवाह करते हैं। खुद लड़का और उसका भी लड़का (हंसी) बड़े रोआबसे कहते हैं कि हम तो मर्दके बच्चे हैं परन्तु मर्दका बच्चा तो कुछ भी पुरुषार्थ कर सकता है; लड़केका लड़का क्या कर सकता है ? (हंसी और तालियां) आज कल ते जानें सबही गाय, भैंस, बकरी जैसे नरम हैं। यह तो ठीक है कि अंग्रेज सरकारका राज्य है; फ्रेंच रूसियोंका भय नहीं है। नहीं तो तुम लड़कोंके लड़के क्या कर सक्ते हो ? हिन्दुओंकी कायाशक्तिका नाश ब्रह्मचर्यके नाशसे हुआ है। १२—१३—वर्षकी लड़कीका पेट तो प्रमाणमें बहुत छोटा होना चाहिये। वह हथेलीमें समा जाय (हाथ दिखाकर बतलाया) उसका बच्चा भी उतनाही छोटा हो सके और इसीसे उसके जो बच्चे पैदा होवें भी चुंहे जैसे छोटे पिल्ले जैसेही होंगे। (हंसी)

जमराजाका वारंट।

जो तुम शांत भाव और बुद्धिपूर्वक देखोगे तो तुमको मालूम होगा कि आज कलकी प्रजाके अधिक भागकी आखें गहरी घुस गई, गाल बैठ गये, रंग पीला पड़ गया और शरीर मांसरहितसा होता है। जबतक जवानीकी उमरमें विवाह न किया जाय तबतक देशकी उन्नति नहीं होनेकी। मैं यह सुधारा करनेका आग्रह करता हूं; क्यों कि यह वेदानुकूल है। मैं कुछ ऐसा सुधारक नहीं है हूं कि जिसके लिये वेद और शास्त्रोंमें सम्मति न हो तो भी मैं उसका प्रतिपादन करूं। शास्त्रोंमें ऐसा कुछ भी नहीं लिखा है कि जो तुम कन्याका दशवें वर्ष विवाह न करोगे तो तुम्हारे उपर **यमराजाका वारंट आवेगा** (हंसी)। युरोपिन लोग जबतक जवान नहीं होते, तबतक कुवारे रहते हैं और शायद विवाह भी नहीं करते। यहां नियम कुछ नया नहीं है, परन्तु अपने प्राचीन ऋषि मुनियोंकीही रीति है (तालियां)।

बड़ी वयमें कन्याका विवाह होनेके महाभारतमें दृष्टांत।

महाभारतमें कन्याके बड़ी उमरमें विवाह करनेके अनेक दृष्टांत हैं। उनमेंसे थोड़ेसे यहां दूंगाः— **स समीक्ष्य महीपालः स्वां सुतां प्राप्तयौवनाम्।**
अपश्यदात्मनं कार्यं दमयन्त्याः स्वयंवरम्॥

वनपर्व अ. ५३ श्लोक ८।

वैदर्भीन्तु तथा युक्तां युवतीं प्रेक्ष्य वै पिता।
मनसा चिंतयामास कस्मैदद्यामिमां सुताम्॥

दमयन्तीको जवान हुई उसके पिता राजाने देखी। इसलिये उसने दमयन्तीके स्वयंवरकी इच्छा की। विदर्भ देशकी लोपामुद्रा जब यौवनावस्थामें हुई तो उसके पिताने विचार किया कि इसका विवाह किसके साथ करना चाहिये।

संप्राप्तयौवनां पश्यन् देयां दुहितरं तु ताम्।
स शीलयन् देवयानीं कन्यां संप्राप्तयौवनाम्॥

(भारत आदि. अध्याय ७६, श्लोक २५)

ऊपर कहे अनुसार शुक्राचार्यकी पुत्री देवयानीने ब्राह्मणकुलोत्पन्न होनेपरभी क्षत्रिय राजा ययातिके साथ विवाह किया था। जन्मपर्यंत ब्रह्मचर्य पालन करनेवाली स्त्रियोंके उदाहणभी महाभारतमें दिये हैं। जैसे लोमश ऋषि कि जिनका जैसा दीर्घायुष कोई ऋषि हुआही नहीं, वे भारतके शल्य पर्व ५४ अध्यायमें कहते हैं।

अत्रैव ब्राह्मणी सिद्धा कौमारब्रह्मचारिणी ।
योगयुक्ता दिवं याता तपःसिद्धा तपस्विनी ॥ ६ ॥
बभूव श्रीमती राजन् शांडीलस्य महात्मनः ।
सुता धृतव्रता साध्वी नियता ब्रह्मचारिणी ॥ ७ ॥
सा तु तप्त्वा तपो घोरं दुश्चरं स्त्रीजनेन ह ।
गता स्वर्गं महाभागा देवब्राह्मणपूजिता ॥ ८ ॥

(शल्यपर्व अ. ५४)

लोमश ऋषि युधिष्ठिरसे कहते हैं, इस स्थापनपर शांडिल्य ऋषिकी कन्या धृतवती आजन्मपर्यन्त ब्रह्मचर्य पालन करके तप किया और विद्वानोंसे सत्कार पाकर मोक्षधामको चली गई । फिर कहा है किः—

" भारद्वाजस्य दुहिता रूपेणाप्रतिमा भुवि ।
श्रुतावती नाम विभो कुमारी ब्रह्मचारिणी ॥
साऽहं तस्मिन् कुले जाता भर्तर्यसति मद्विधे ।
विनीता मोक्षधर्मेषु चराम्येका मुनिव्रतम् ॥

महाभारतके ४९ वें अध्यायमें लिखा है कि भारद्वाजकी पुत्रीने भी जन्मपर्यंत कुमारव्रत पाला था । सुलभा नामकी राजपुत्रीने अपने समान कोई पति न पानेसे विवाह न किया था । जो ब्रह्मवादिनी थी और जिसने योगबलसे सीताके पिता महाराजा जनकके होश भुला दिये थे वह भी कुमारी थी । अब जो कन्याका अर्थ दशवर्षकी लड़की ऐसा होता होय तो ऋषिकन्याओंका आजन्म विवाह न करना और ब्रह्मचर्य पालन करना कैसे संभव हो सक्ता है ? परन्तु अब गडबड हो गई है । कितनीही अर्वाचीन पुस्तकोंमें तो यहांतक लिखा है कि **"नग्निका तु श्रेष्ठा"** अर्थात् नंगी फिरती हुई कन्याके साथ विवाह करना सबसे उत्तम है (हंसी) । कडुए कुनबियोंकी जातिमें एक दिनके पुत्रपुत्रियोंका विवाह हो जाता है और मैंने सुना है कि कभी २ तो पेटमेंहि विवाह कर दिये जाते हैं (हंसी) ।

वेदमें विवाहसम्बन्धी परस्पर प्रतिज्ञावाक्यादि ये हैं।

ऋग्वेदके आठवें अष्टकमें वर-कन्या जो (प्रतिज्ञा) एकरार करते हैं, उसका वर्णन किया है । उसमें बतलाया है कि वरको ऐसी प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि—'हे स्त्रि ! मैं तेरा संग इस जन्मभर न छोडूंगा । मैं सदा तुझको सुख दूंगा और तेरे आधीन रहूंगा, स्त्रीको ऐसी प्रतिज्ञ करनी चाहिये कि—'हे पते ! तेरी इच्छाविरुद्ध मैं आचरण न करूंगी,

मैं तेरा सन्मानही करूंगी, मैं तेरा सत्कार अवश्य करती रहूंगी, ऐसी प्रतिज्ञाएं कन्या-बाल्यावस्थामें कैसे कर सक्ती हैं ? सरकारी कानून देखनेसे भी मालूम होगा कि-लड़का १८ वर्षकी उमरके अन्दर अल्पायु (नाबालिग) गिना जाता है और उसकी प्रतिज्ञा प्रमाणमूल नहीं समझी जाती है । छोटे २ अबुद्ध बच्चे तो क्या प्रतिज्ञा कर या समझ सकते हैं ? परन्तु आजकल तो ऐसा अंधेर है कि–'वर मरे कि कन्या मरो, गोरका घर भरो !' आजकल पुत्र–पुत्री तो छोटे होनेसे प्रतिज्ञा पढ़ही नहीं सकते हैं, इससे पुरोहितजीही पढ़लेते हैं । जो बड़ी उमरमें पुरोहितकी पढ़ी प्रतिज्ञाके विरुद्ध चले तो उसका पाप किसके शिरपर ? (पुरोहितके शिरपरकी आवाज) जो वे एक दूसरेको छोड़ें तो भी उसके भागी वे नहीं हो सक्ते; क्योंकि अज्ञानतामें उनका विवाह होता है ।

कन्याकी योग्यता आदिके संवन्धमें वेदमंत्र ।

"इयं नार्युपब्रूते पुल्यान्यावपन्तिका । दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥"

अथर्व. १४–२–६३

वेदमें इस प्रकारकी आज्ञा है कि विवाह करनेवाली स्त्री पुल्यानि, कद्दावर मज्बूत होनी चाहिये और " आवपन्तिका " अर्थात् वह (गृह) संसारकर्म करनेके योग्य होनी चाहिये । उसको प्रार्थना करना चाहिये कि मेरा पति सौवर्षतक जीवे और सौवर्षकी आयुष्यवाला होवे. अथर्व वेदके १४ वे

" प्रबुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासीदीर्घंत आयुः सविता कृणोतु ॥ "

अथर्व. १४–२–७५

इस प्रकार पतिने कन्याके साथ विवाह करके कहना चाहिये कि–" तू बड़ी बुद्धिमती है, अनुभवी है; दीर्घ सौवर्षकी उमर वितानेको तू घर चल और घरकी मालिक हो । सविता परमेश्वर तेरी उमर बड़ी करे " । अथर्ववेदके १४ वें कांडमें कहा है कि—

" चक्रवाकेव दम्पती " अथ. १४–२–६४.

अर्थात् " जैसे चकवाचकवीका एकही जोडा रहता है वैसे पुरुषको भी एकही समयेंमे अनेक विवाह न करना चाहिये. परन्तु आजकल तो अंधेर चल रहा है । ६० वर्षका बुड्ढा आठ वर्षकी लड़कीसे विवाह करे । जब वह बारह वर्षकी हो तब

बुडेकी राम राम सत्य हे (हंसी)। तोभी ऐसी छोटी उमरकी विधवा फिरसे विवाह न कर सके यह कौनसे न्यायकी बात है ! मनुष्य नीतिमें सबसे बढ़कर होशियार और साथ ही दुष्टभी होता है। कोई भी प्राणी विश्वासघात नहीं करता है, परन्तु मनुष्य करता है। सिंहकी गरजसे बकरी डरकर बलवान् मनुष्यके रक्षणमें जाती है परन्तु वह बिचारी यह थोड़ाही जानती है कि ये हज़रत खुद उसका स्वाहा करनेवाले हैं, परन्तु पुरुष कुछ अकेली बकरीकोही नहीं किन्तु अपनी स्त्री, माता, बहनके उपरभी अन्याय करता है। एक आदमीने मुझसे पूछा कि-'स्त्रियोंकी नथनीका मतलब तुम जानते हो ?' मेरे ना कहनेसे उसने कहा कि असलमें बैलकी तरह पुरुष स्त्रियोंके नाथ डालते थे, परन्तु सुधारेके प्रतापसे यह रिवाज मिट गया है। तोभी वह नाथ बदलकर अब सिर्फ नथनीके रूपमें बाकी रह गई है। मेरे कहनेका तात्पर्य इतनाही है कि पुरुषको एकही स्त्रीके साथ बड़ी उमरमें विवाह करना चाहिये और दोनोंके समान सत्त्व (हक) समझकर वर्ताव करना चाहिये। पुरुष चाहे कितनीही उमरतक विवाह करता जाय और स्त्री न करे ऐसा मानना कैसी दुष्टताकी बात है ?

माताके गर्भके संस्कारोंका पुत्रपर असर।

माताका गर्भ मज्बूत होनेसेही संतान मज्बूत हो सकती है। पिताकी अपेक्षा माताके संस्कार संतानपर बहुतही भारी असर करते हैं। मैं एक दृष्टांत दूंगा ! एक समय एक एम्. ए. ने मुझसे पूछा कि-'मैं भूतप्रेत नहीं मानता हूं, मुझे मेरे प्रोफेसरोंने बहुतही समझाया कि भूत कोई वस्तु नहीं है और मुझे निश्चय भी हो गया है; परन्तु मैं अन्धेरेमें जाता हूं तो मुझे भूतकी शंका होती है इसका क्या कारण होगा ?' मैंने उनसे बहुत बातें पूछीं, अंतको मैंने पूछा कि-'तुम्हारी माता पढी है?' उसने कहा-'नहीं फिर मैंने पूछा कि-'वे भूत मानती हैं ? और तुमको लडकपनमें भूतसे डरपा करती थी?' उन्होंने कहा-'हां मैं जब छोटा था, तब मुझे हमेशा कहा करती थी कि फलाने पीपलपर भूत रहता है, इस लिये वहां मत जाना' मैंने कहा कि-'बस यही तुझारे डरका कारण है, हजारों प्रोफेसरोंकी क्या ताकत है कि लडकपनमें माताके घुसेडे भूतको निकाल सकें (हंसी)। चाहे कितनाही प्रोफेसर कहे, परन्तु रातको तो सोनापुर (मरघट) तरफ जाते तो वह डरतेही ! (हंसी)। हालमें हिन्दुओंमें बहुतेरे लडके बेरिस्टर होते हैं, सिविलियन होते हैं, डाक्टर इञ्जिनियर होते हैं; परन्तु आखिरको बन्दा मोची (हंसी) । क्योंकि माताओंकी ओरसे उनको शायदही नहीं उत्तम शिक्षण मिलता है । और छोटे गर्भवाली माता होनेसे संतानोंमे शूरवीरता

नहीं आती है, तथा अधिकांशवे अशिक्षिता होती हैं, इस लिये उनकी तरफ संतानोंकी जैसी चाहिये वैसी पूज्य बुद्धि नहीं होती है। हिन्दु लोग स्त्रियोंके विषयमें बहुतही स्वार्थी हो गये हैं। उन्होंने जाना कि पुत्र तो एम. ए. बी. ए. होकर टके कम वेगा-परन्तु पुत्रीको पढ़ानेमें खर्च हुये रुपये व्यर्थही जांयगे; क्योंकि लड़कीकी जात पराया धन है बड़ी होनेपर पराये घर चली यायगी। इस लिये क्यों पढ़ावें? (हंसी) परन्तु उनकी इतनी दीर्घ दृष्टि नहीं होती है कि जैसी उनकी पुत्री दूसरोंके घर जावेगी वैसेही दूसरोंकी उनके घर आवेगी और जो वे भी इनकी तरह अपनी पुत्रियोंको शिक्षा न दें और इसी तरह अगर माता छोटी उमरकी होवे तो वह अशिक्षित भी होगी इससे सन्तानपर बहुत खराब संस्कार पड़ते हैं। यह तो सब जानते हैं कि बालकपर गर्भमें सबसे बलवान् संस्कार पडते हैं। इस विषयमें मैं फ्रांसकी लडाईका उदाहरण। दूंगा ३०-३२ वर्ष हुए, युरोपमें फ्रैंको-जर्मन लड़ाई हुई थी। उस समय फ्रांसमें स्त्रियोंको और खासकर गर्भवती स्त्रियोंको ऐसा भय लग गया था कि-'कौन जाने जर्मन लश्कर हमको क्या करेगा' माताओंके इस डरका पुत्रों पर बड़ाही भयंकर असर पडा था। यहांतक कि इस अवसरमें जो बालक जन्मे थे, वे अल्पायु तथा डरपोक हुए थे। पिताकी अपेक्षा माताके साथ संतानोंका विशेष संबंध होता है, इस लिये शास्त्रोंमें माताको बालकोंका प्रथम आचार्य कहा है, परन्तु अफसोस है कि हालमें संतानोंके इन आचार्योंमें 'तीनों नदारद' हैं (हंसी)।

ब्रह्मचर्यके संबन्धमें धर्मशास्त्रकी अपेक्षा वैद्यकविद्याकी श्रेष्ठता।

धर्मशास्त्रोंमें जो बात वेदविरुद्ध हो तो वह अमान्य है। जैसे प्रसंगोपात्त वैद्यक-संबंधी कोई बात इन्जिनियरिंगकी पुस्तकमें आई हो और वह वैद्यकके ग्रंथोंसे विरुद्ध हो, तो वैद्यकके ग्रंथकी बातही मानने योग्य समझी जायगी, न कि इन्जिनियरिंगकी। एक शास्त्रका दूसरे शास्त्रसे संबंध होता है। वैद्यकविद्याका जैसे विवाह और ब्रह्मचर्यके साथ संबंध है; वैसेही धर्मशास्त्रोंके साथ भी सबंध है; परन्तु विवाहके विषयमें प्रधानतासे वैद्यकविद्याकाही संबन्ध है। विवाहकी जो ऊमर वैद्यकशास्त्रमें अयोग्य कही हो और धर्मशास्त्रमें जो योग्य कही होय तोभी वह धर्मशास्त्रका कथन मिथ्या समझा जायगा। वैद्यकके ग्रन्थोंमें लिखा है कि-' वर-कन्याकी ऊमर कमसे कम पचीस और सोलह वर्षकी होनी चाहिये, परन्तु दूसरे ग्रंथोंमें उससे बहुत छोटी

उमर लिखी है और वह वैद्यक विद्यासे विरुद्ध होनेके कारण अमान्य होनी चाहिये। धन्वंतरीको हिन्दू लोग ईश्वरका अवतार मानते हैं। वे कहते हैं—

ऊनषोडशवर्षाणामप्राप्तः पञ्चविंशतिः।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भः कुक्षिस्थः स विपद्यते॥
जातो वा न चिरं जीवेत् जीवेत् वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥

कि कमसे कम कन्या सोलह वर्ष और पुरुष पचीस वर्षसे पहिले उनके बीचमें संबंध न होना चाहिये। यदि संबंध होगा तो गर्भ नहीं रहेगा और जो गर्भ रह भी गया तो गिर जायगा। जो संतान हो भी गई तो वह दीर्घजीवी नहीं होगी और जो कदाचित् जीवे तो दुबली पतली रहेगी। इसके अतिरिक्त प्राचीन वैद्यकसंबंधी महान् लेखक चरक, वाग्भट्ट, आदिभी ऐसाही कहते हैं। हम सब प्रत्यक्ष प्रमाणसे देखते हैं कि—'आज कलकी अब्रह्मचारी प्रजा दुर्बला निर्बल और अल्पायु है, मान लो कि धर्मशास्त्रोंमें काली मिर्चका ऐसा वर्णन किया हो कि वह बहुत मीठी होती है, परन्तु इससे क्या उसकी तिखास कुछ मिट जायगी ? इसलिये यदि धर्मशास्त्रमें कुछ नियमविरुद्ध लिखा हो तो उसको ग्रहण करनेसे नुकसानकी जगह कुछ फायदा न होगा। मैं तुमसे देश उन्नतिके लिये कहता हूं कि बालविवाहरूपी डाकिनको तुम छोडो, कि जिससे देशकी उन्नति होय (तालियां)।

श्रीकृष्ण कन्यादानके विषयमें क्या कहते हैं ?

धन्वंतरी ऋषिको ईश्वरका अवतार मानते हुएभी हिन्दुओंमें उनका बहुत मान नहीं है। २४ अवतारोंमें जो सबसे ज्यादा मान्य श्रीकृष्ण हैं, वे स्वयंवरके विषयमें क्या कहते हैं सो मैं कहूंगा। हिन्दू दूसरे अवतारोंको तो ईश्वरकी एक कलारूपही मानते हैं और उनको शिरसा वंद्य मानते हैं। महाभारतमें लिखा है। कि—वसुदेवकी पुत्री सुभद्राका स्वयंवर जब हुआ तो उसमें अनेक राजा एकत्र हुए थे। अर्जुन उस विदुषीपर मोहित होकर उसके साथ विवाह करनेकी इच्छा श्रीकृष्णको दिखाई। कृष्णने कहा कि सब राजाओंको छोड़कर तुमको कैसे कह दूं ? परन्तु एक उपाय है कि—'तुम क्षत्रिय हो और इससे तुममें तामस गुण है; इस लिये यदि तुम चाहते। हो तो सुभद्राको भगा ले जाओ।' अर्जुन रथमें उसको बिठाकर वैसाहि किया। इस जगह शुक्राचार्य लिखते हैं कि—'श्रीकृष्ण समान पोलिटिकल, राजद्वारी, कुशल, थोड़ेही होने चाहियें कि जिन्होंने अपनी बहनको भगा ले जानेका उपदेश किया!!'

(हंसी)। अस्तु सुभद्राके गुप्त हो जानेसे यादवोंमें कोलाहल मच गया। बलभद्र बड़े शूरवीर थे। परन्तु उनमें एक दोष था कि वे भोले थे (हंसी)। उनको क्रोध आया और कहने लगे कि–'हे अर्जुन! मैं तुझे मार डालूंगा' कृष्णने कहा कि–'जरा दृढ़ हो तो। बलभद्रके शान्त होनेपर कृष्णने कहा कि–' हे बलभद्र! अर्जुनने शास्त्रानुसार सुभद्राके साथ आसुर विवाह किया है। वह जरा कनिष्ठ प्रकारका विवाह है। परन्तु तुम कहो तो सही कि उसमें बुरा क्या है? क्या सुभद्राको अर्जुनसे श्रेष्ठ कोई पति मिलता?' उन्होंने कहा कि–'न मिलता तो कन्यादान तो मैं करता!' इसपर कृष्णने कहा:—

" **प्रदानमपि कन्यायाः पशुवत्कोनुमन्यते।**
विक्रयं चाप्यपत्यस्य कः कुर्यात् पुरुषो भुवि॥ भा. आ.अ.२२२

हे बलभद्र! कन्याका दान तो पशु बेचने समान है। कन्याको बेचनेका किसीको (सत्त्व) हक नहीं है। पशु और निर्जीव वस्तुका दान हो सके कि मनुष्यका? मनुष्य बेचना वा दान करना कौन उत्तम समझे? इस लिये तुझारा शोक मिथ्या है। इससे ज्ञात होता है कि उस समय कन्यादानका रिवाज शुरु हुआ होगा; नहीं तो कृष्ण खंडन क्यों करते? कन्याको पूरी उमरकी होकर उसको अपनी इच्छानुसार पति पसंद करके विवाह करना चाहिये। पिता उसको इस विषयमें सलाह और सहायता दे, परन्तु उसको आज्ञा नहीं कर सकता। (तालियां)

पिंगलमें 'धी, श्री, स्त्री' ऐसा एक सूत्र है। प्राचीन ऋषि लोग अपने ग्रन्थोंमें ऐसे सूत्र बनाया करते थे कि जिनमें शब्दलाघव हो और अर्थबाहुल्य हो। श्री, धी, स्त्री, इन तीनोंका अर्थ बुद्धि, धन, तथा स्त्री है। इसका आशय यह है कि इनको जिस क्रमसे सूत्रमें रक्खा है उसी क्रमसे प्राप्त करना चाहिये अर्थात् मनुष्यको प्रथम बुद्धि प्राप्त करके धनप्राप्तिके साधन प्राप्त करने चाहिये और पश्चात्, न कि पहिलेही विवाह करना चाहिये। (तालियां)

" बालविवाहका कारण "।

महाभारत युद्धके पश्चात् देशमें अविद्या तथा कुसंग फैल गये। कालक्रमसे विदेशियोंके आक्रमण शुरु हुए। उनमेंसे कितनेही दुष्ट युवान कन्याओंको उडा ले जाते थे और खासकर अविवाहित कन्याओंको ले जानेमें पुण्य समझते थे। उस समयके पंडितोंने देखा कि इस आफत्‌मेंसे बचनेका यही उपाय है कि कन्याओंका विवाह जल्दी कर देना चाहिये, कि जिससे वे बच तो जांय। परन्तु अब तो सातवें

एडवर्डका राज्य है, इसलिए अब उस रीतिकी जरूरत नहीं है। अब तो उससे नुकसान है। शास्त्रोंमें पुरुषके लिये ज्यादासे ज्यादा ४८ वर्षतक ब्रह्मचर्य पालन करना लिखा है। परन्तु आजकल तो ४८ वर्षमें मरघटकी चितामें घुसनेका समय आता है (हंसी)। परन्तु अब धीरे २ लड़कोंकी उमर २०,२१,२२, वर्ष तथा लड़कियोंकी १४, १५,१६, इस प्रकार बढ़ाना चाहिये (तालियां।) कुछ हमारे लोगही नहीं, किन्तु प्राचीनकालमें और लोगभी ब्रह्मचर्यको लाभ समझते थे। एक समय "लुकमान हकीमकी स्त्रीको पुत्रेच्छा होनेसे उसको पतिसे स्वयं कहनेकी हिम्मत न होनेसे अपने एक लौते पुत्रद्वारा कहलाया कि-'मुझे भाई दूसरा चाहिये।' लुकमानने कहा कि-'एक बारही दुनियादारीमें पड़नेसे मेरी आधी अकल गुम हो गई है, और जो फिर पड़ूं तो बाकी रही आधी भी चली जाय' (हंसी)। इससे ज्ञात होता है कि विद्वान् लोग ब्रह्मचर्यको कितना जरूरी समझते थे। प्राचीन कालमें बिना ब्रह्मचर्यके कोई ब्राह्मणत्वको नहीं पाता था, ब्रह्मचर्यके प्रतापसे हिमसे ढके हिमालयके शिखरोंपर वास करके ऋषि लोग महान् विद्वान् हुए थे।

महान् कार्य करनेवाले ब्रह्मचारी।

ब्रह्मचारी ब्राह्मण भी क्षत्रिय जैसे शूरवीरोंको हरा सकते थे। इसका दृष्टांत परशुराम है। परशुरामने क्षत्रियोंको २१ बार परास्त किया था, परशुराम एक बार राजा दशरथको रास्तेमें मिले; उनको देखतेही दशरथ भयाभीत हो गए। भीष्म जैसे सहनशील, हनुमान् जैसे शक्तिमान्, शंकर और दयानंद, (जोरकी तालियां) जैसे धर्मयोद्धा, शकुनि आदि महान् ब्रह्मचारी थे वेही दुनियामें महान् कार्य करने योग्य हुए। अन्तमें मेरी यही प्रार्थना है कि-"युवावस्थातक ब्रह्मचर्य धारण करके विवाह करनेके लाभोंका उपदेश तुम अपने बहनों, पुत्रियों, तथा भाईयोंको करके उनका तथा अपना परलोक तथा इहलोक सुधारो"--इत्याशास्महे- (तालियां जरी)

॥ समाप्त ॥

दसवाँ व्याख्यान ।

ब्रह्मचारी श्रीरामेश्वरानन्दजीकी स्थापित की हुई धर्मसभाकी ओरसे
ब्रह्मचारी श्रीनित्यानन्दजी महाराजका

विधवाविवाह शास्त्रसम्मत है वा नहीं, इस विषयपर ।

तारीख २० अगस्त १९०२ बुधवारको सांयकालके ६ बजे गेइटी थियेटरमें ऊपर कहा हुआ व्याख्यान दिया गया था। उस समय नाटकशाला श्रोताओंसे बिल्कुल खचाखच भर गई थी और भीड़के मारे जगह न रही थी। लगभग सौ स्त्रियां भी हाजिर थीं। उसके सिवाय कितनेही पारसी गृहस्थ तथा संन्यासी भी पधारे थे। सैकड़ों आदमी गेलेरीमें और दूसरी जगहोंमें जगह न मिलनेसे खड़े सुनते थे। स्वा०के आनेपर तालियां बजाकर उनका सत्कार किया गया था और रंगभूमिपर विराजमान सभावित गृहस्थोंने उठकर उनका मान किया।

डाक्टर पोपट प्रभुरामका भाषण ।

प्रारम्भमें धर्मसभाके संयुक्त मन्त्री डाक्टर पोपट प्रभुरामने कहा 'विधवाविवाह शास्त्रसम्मत है वा नहीं' यह विषय बड़े महत्त्वका है। इतनी भारी संख्यामें आप लोग आज यहां प्रस्तुत हुए हैं, इसलिये आपका मैं उपकार मानता हूं। आजके विषयपर माधवबागमें हुई सभामें अतिशय चर्चा चली थी और यहांपर हम लोग स्वामी श्रीनित्यानन्दजीका अभिप्राय लेनेको एकत्र हुए हैं। आ० डाक्टर सर भालचन्द्रने मुझे हाल अभीही टेलीफोनमें कहलाया है कि मैं जहांतक बनेगा जल्दी आ पहुंचूंगा, परन्तु आज समय थोड़ा होनेसे उनके आनेतक रुक न सकनेसे मैं स्वामीजीसे अपना व्याख्यान आरम्भ करनेको विनीत करता हूँ. इसके पश्चात् तालियोंकी ध्वनिके बीचमें स्वामी श्री नित्यानन्दजी महाराजाने अपना व्याख्यान शुरू करते कहा कि मेरी प्यारी बहिनो और भाइयो आजके व्याख्यानका विषय धर्मसभाके सुयोग्य मंत्रीजीने विदित कर दिया है। विधवाविवाह कोई शास्त्र तथा कोई अशास्त्रीय बतलाते हैं। मैं उसपर निवेदन करनेसे पहिले एक बात कहना चाहता हूँ। पुनर्विवाहके दो भाग हैं। एक अंशमें तो पुनर्विवाहको सब हिन्दू तथा पंडित मानते हैं, दूसरे अंशको कितनेही पंडित मानते हैं; परन्तु बहुतसे नहीं भी मानते। पहिला अंश तो केवल मान्यही नहीं, किन्तु व्यावहारिक है। वह

कौनसा अंश है? मैं कहूँगा कि (रंडवा जिसकी स्त्री मर गई हो उसको रँडवा) कहते हैं और शास्त्रमें विधुर कहते हैं उनका पुनर्विवाह पहला अंश है । इसमें किसी हिन्दू गृहस्थ या पंडितका विरोध नहीं है। एक साठ वर्षका बुड्ढा बारह, व आठ वर्षकी कन्याके साथ विवाह करे तो इसमें आपत्ति नहीं समझी जाती है। मुझे अनुभव है कि बंगालमें कुलीन ब्राह्मण एक पीछे दूसरी इस प्रकार इतनी बार पुनर्विवाह करते हैं, कि बिचारी उन विवाहिता स्त्रियोंको उसके घर जाकर उसके दर्शन करनेकी भी बारी नहीं आती! और मरणपर्यन्त पिताके यहांही रहती हैं। शायद कभी पति अपने श्वशुरके यहां सो भी रुपये लेने जाय तो वह उसको मिल ले तो उसका नसीब! इस प्रकार पुरुषके लिये तो सब रास्ते खुले हैं; बाधा मात्र स्त्रीके लिये है। परन्तु सबही शास्त्री इसके विरुद्धमें नहीं हैं। कितनेही धर्मात्मा संस्कृतज्ञ भी ऐसे हैं जो स्त्रियोंके पक्षमें हैं (तालियां)।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, राजा राममोहन राय आदि

बंगालके सुप्रसिद्ध सुधारक ईश्वरचन्द्र विद्यासागरने सब पंडितोंको बतला दिया था कि स्त्रियोंका पुनर्विवाह शास्त्रविरुद्ध नहीं है; वे केवल मुखवादीही नहीं थे; परन्तु व्यवहारिक थे। उन्होंने अपनी विधवा पुत्रीका पुनर्विवाह करके अपनी दृढ़ सहानुभूति सिद्ध कर दिखाई थी (तालियां)। दक्षिणमें भी विष्णु शास्त्रीने दिखला दिया था कि पुनर्विवाह शास्त्रसम्मत है (तालियां)।

राजा राममोहन राय और सतीका रिवाज।

बंगालके प्रसिद्ध राजा राममोहनराय ने प्रथम यह हिलचल उठाई थी कि—सती रिवाज शास्त्र तथा वेदविरुद्ध है। उन्होंने सरकारसे अरज की कि सतीका रिवाज बुरा तथा शास्त्रविरुद्ध होनेसे बन्द कर देना चाहिये। इसपरसे गवर्नमेंटनें शास्त्रियोंका अभिप्राय मांगा और कहा कि सती होनेका विधान वेदोंमें होय तो बतलाओ। इसपरसे शास्त्री वेदोंको टटोलने लगे। ढूंढते २ एक जगह "अग्रे गच्छ" ऐसा शब्द मिला! उन भले आदमियोंने अग्रेकी जगह अग्ने बतलाया और कहा कि—'अग्निमें जानेकी स्त्रीको आज्ञा है' इस प्रकार सरकारको लिख भेजा तब राजा राममोहन रायने वेदोंके अनेक हस्तलिखित पुस्तक सरकारको भेज दिये और लिखा कि जो मुकाबला किया जाय तो मालूम होगा कि सच तो अग्रे शब्द है और अग्ने शास्त्रियोंने झुंठ लिखा है। राजा राम मोहनरायने अपनी अरजीमें लिखा कि जो शास्त्रोंमें स्त्रीके लिये सती होनेका विधान हो तो पुरुषको भी अपनी स्त्रीके पीछे जल मरना चाहिये (तालियाँ और हंसी)।

जो ऐसाही हो तो उनको भी जल मरनेको कहना चाहिये। शास्त्रसंबन्धि गवर्नमेन्टका निश्चय हो जानेपर सती न होने देनेके लिये कानून बनाया गया। जहां बुरी रीति पड़ गई हो, वहां लोगोंसे अन्याय और अत्याचार होनेमें आश्चर्य नहीं है।

स्त्रियोंकी आधुनिक ग्रन्थोंमें निन्दा।

ईसाइयोंने तो एक बार इतनाही कहा था कि स्त्रियोंमें आत्मा नहीं है (तालियाँ) परन्तु आधुनिक हिन्दु लोग तो उनसे भी आगे बढ़े हुए हैं। उन्होंने अपनी माता बहन पुत्रीतकका इतनी कठोरतासे अनादर किया है कि जिससे हमको अत्यन्त दुःख होता है। पञ्चतन्त्रमें स्त्रियोंके लिये देखो कैसा खराब लिखा है–

**" मधु तिष्ठति वाचि योषितां हृदये हालाहलमेव केवलम्।
अत एव निपीयतेऽधरो हृदयं मुष्टिभिरेव ताड्यते "॥**

इसका अर्थ यह है कि स्त्रीकी वाणीमें तो मधु (मीठापन) है, परन्तु हृदयमें तो हालाहल अर्थात् विष है। जो सचमुच उसके हृदयमें विष होय तो पुत्र जो उसके गर्भमें रहता है उसमें भी जहर क्यों न होना चाहिये? (तालियाँ)। आगे तो इससे भी खराब विशेषण उनको दिये गये हैं और कहा गया है कि क्षणभरके सुखके लिये जैसे भौंरा कमलमें बन्द हो जाता है, वैसेही पुरुष भी स्त्रीके जालमें फँस जाता है।

वेद और मनु स्त्रीके विषयमें क्या कहते हैं?

वेदमें ईश्वरने स्त्री-पुरुषको समान भावसे देखा है। मनु तो दयालु न्यायकारी थे; इससे उनका अभिप्राय ऐसा नहीं है कि–'स्त्री अनीतिवान् पापिनी है'। देखो, मनु महाराज स्त्रीकी कितनी प्रतिष्ठा करते हैं–

**पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा।
पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः॥** अ० ३–५५

अर्थः—पिता, भ्राता, पति और देवर तथा जो अपना कल्याण चाहते हों वे स्त्रियोंको अनेक वस्त्र आभूषण आदिसे प्रसन्न रक्खें (तालियाँ)। मनु स्त्रीको पूजनीय कहते हैं इतनाही नहीं; वे तो उसको देवता देवी तथा लक्ष्मीकी भी उपमा देते हैं। पूजाका अर्थ यह नहीं है कि उसको सिंहासनपर बिठाकर उसपर फूल चन्दन माला नैवेद्य चढ़ावें (बड़ी हंसी)। परन्तु पूजाका अर्थ सत्कार होता है।

स्त्रीका अनादर होनेसे क्या परिणाम होता है ?

जब प्राचीन कालमें स्त्रियोंको पुरुषकी तरह न्याय मिलता था और उनका सत्कार होता था, तब आर्यावर्त देश अनेक प्रकारसे सुखी था; परन्तु जबसे उनका असत्कार, अन्याय तथा अनादर होने लगा तबसे ऋषियोंकी मानी हुई स्त्रीरुपी शक्तियां हिन्दुओं—पर कोप करने लगीं। आज कल जो हिन्दू लोग मानते हैं कि—'देवी कोप करती है' सो सत्य है। हिन्दू, महाकाली देवीको मानते हैं; यह नाम शक्तिवाचक है, परन्तु उसकी जातिपर अन्याय होनेसे क्रुद्ध हो वह शक्तिरूपी देवी अब युरोप, अमेरिका आदि देशोंको चली गई है; उसके साथ दूसरी देवी महासरस्वती भी युरोप चली गई है। इसलिए अब उच्च प्रकारकी विद्याके लिए युरोप जाना पडता है। जब दो देवी बहनें चली गईं तो तीसरी देवी महालक्ष्मी भी प्रयाण कर गई; इसलिए यह देश निर्धन हो गया है (जोरकी तालियाँ)। जो तुम भलाई चाहते हो तो तुमको अपनी बहन—माताओंके साथ असभ्य व्यवहार करना छोड देना चाहिए (तालियाँ)।'

स्त्रियोंके संबन्धमें इतना कहके अब मैं अपने विषयपर आऊँगा।

पुनर्विवाहके लिए वेदका मन्त्र।

" उदीर्ष्वनार्यभिजीवलोकं गतासुमेतमुपशेष एहि।
हस्तग्रामस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभि संबभूथ॥

ऋ० १०।१८।८।

अर्थः—हे (नारी) स्त्री! (गतासुमेतं) निकल गये प्राणवाले प्रेतके (उपशेष) पास तू सोती है अथवा पड़ी है; (उदीर्ष्व) उठ। (अभिजीव लोकं) जीते लोक समुद्रके पास (एहि) आ। (हस्तग्रामस्यदिधिषोः पत्युः) हाथ पकडनेवाले पुनर्विवाह करनेकी इच्छा रखनेवाले पतिके साथ (तव इदं) तेरा यह स्त्रीपन (अभिसंबभूथ) अच्छी तरह होवे। पतिके मरनेसे विधवा उसके प्रेतपर प्यार करती है और वह उसपर लिपट पड़ती है, इस लिए ईश्वर उपदेश करता है कि यह काम निरर्थक है और अब तुझे अपने व्यवहारमें प्रवृत्त हो जाना चाहिए।

पतिसंबन्धी ऋग्वेदका मंत्र–

ऋग्वेदमें लिखा है किः—

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः।
तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः॥

ऋ० १०–८५–४०.

इसके अर्थ जुदी २ तरहसे किये गये हैं। कितनेही ऐसे अर्थ करते हैं कि पहले स्त्री सोमके साथ व्यवहार करे; फिर अग्नि, फिर गन्धर्व, और फिर मनुष्यके साथ। परन्तु असली अर्थ तो यह होता है कि स्त्रीके साथ पहले विवाह करनेवाला पुरुष सोम अर्थात् वह पुष्ट धातुके कारण सोम अर्थात् चन्द्रमातुल्य सुन्दर होता है और ऐसा होनाही चाहिये। जो स्त्रीके साथ रहकर वह मर जावे तो दूसरी बार उसके साथ विवाह करनेवाला गान्धर्व अर्थात् रसिकताको प्राप्त होना चाहिये। तीसरी बार विवाह करे तो इस दफा पति अग्नि होना चाहिये; अर्थात् तपाई हुई धातु जैसा होना चाहिये। चौथी दफा विवाह करनेवाला पति मनुष्य अर्थात् विचारशील होना चाहिये।

पुनर्विवाह उत्तम है वा नहीं ?

मैं बतलाउंगा कि—"पुनर्विवाह उत्तम है कि मध्यम वा निकृष्ट ?" मैं कहूँगा कि—"वेद-मत अनुसार सबसे उत्तम बात तो जन्मपर्यन्त ब्रह्मचर्य पालन करना है" परन्तु यह कोई हंसी खेलकी बात नहीं है। जो ब्रह्मचर्य पालन करनेकी इच्छा न हो तो विवाह कर ले और उस जोडेमेंसे कोई मर जावे तो सबसे उत्तम तो यह है कि विधवा अथवा विधुर ब्रह्मचर्यही पालन करें। परन्तु जो ब्रह्मचर्य न रख सके और संतान न हो तो विधवा स्त्रीके साथ विधुर पुरुष विवाह करे। इसके पश्चात् मैं मनु आदि शास्त्रोंके प्रमाण दूंगा; इससे पहले एक अथर्ववेदका मंत्र दूंगा—

अनेकपतिविषयक वेदमंत्र।

उत यत् पतयो दशस्त्रियाः पूर्वे अब्राह्मणाः।
ब्रह्मा चेद्धस्तमग्रहीत् स एव पतिरेकधा॥ ८॥
ब्राह्मण एव पतिर्न राजन्यो न वैश्यः तत् सूर्यः।
प्रब्रुवन्नेति पञ्चभ्यो मानवेभ्यः॥ ९॥

अ० कां०—५—१७—८—९०.

इसका अर्थ ऐसा है, कि यदि स्त्रीके प्रथमके दश पति अब्राह्मण मूर्ख (अवि-द्वान्) हों तो यह प्रशस्त नहीं है; अर्थात् विद्वान् पतिही उत्तम माना गया है।

जहां ऋषि नियोग करते थे वहां ऐसा मतलब था कि स्त्री अपने वर्णके अथवा उससे श्रेष्ठ वर्णके साथ नियोग करे वही अच्छा समझा जाता था; परन्तु शायद कोई कहे कि तुम यह दस पतियोंका रगडा कहांसे लाये ? तो इसका उत्तर यह है कि

नियोगमें एक पीछे दूसरा पति किया जाता था। इसके अनेक उदाहरण शास्त्रों और इतिहासोंमें मिलते हैं। महाभारतके आदिपर्वमें द्रौपदीके स्वयंवरमें, व्यास और द्रौपदी तथा व्यास और युधिष्ठिरके बीचमें संवाद है, उसमें द्रौपदीके पिताकी तरफसे पूछा गया है, कि-'पांचो पांडव एकही स्त्रीके साथ कैसे विवाह कर सकते हैं?' युधिष्ठिरने इसका उत्तर ऐसा दिया है कि-'यह कोई नई बात नहीं, ऐसे बहुतसे उदाहरण हैं। प्रचेतसके भाईके दशों पुत्र एकही स्त्रीके पति थे फिर दूसरी बार सात एकही पत्नीके पति थे। यह महाभारतका प्रमाण है, जिसको लोग "पांचवा वेद" मानते हैं। जब जीतेजी ५,७,१० पतिके साथ एक स्त्रीके विवाह करनेके उदाहरण महाभारतमें हैं तो फिर नियोगमें एक दूसरेके पीछे थोड़े समयके लिये होवें तो उसमें क्या नवीनता है?'

पुराणमें पुनर्विवाहकी आज्ञा।

पद्मपुराण पातालखंडमें एक कथा है। उसमें लिखा है, कि दिवोदस राजाकी पुत्री, दिव्या देवीका विवाह हो जानेके, पश्चात् विवाहमंडपमेंही उसके पतिका देवलोक हो गया। राजाने शास्त्रियोंसे पूछा कि-'अब क्या करना चाहिये?' यद्यपि पुत्रीका पाणिग्रहण हो गया था, तथापि शस्त्रियोंने पुनर्विवाहकी आज्ञा दी थी। २१,२१ बार स्वयंवर होनेकी कथा महाभारतमें है। एक कन्याका इक्कीसवां पति अर्जुन हुआ था। बहुतसे हिन्दू शास्त्रियोंका मत है कि मनुके अनुसार पुनर्विवाह नहीं हो सकता है। विधवा दो प्रकारकी हैं; (१) जिसने केवल पतिका हाथही पकड़ा हो, (२) जिसने संसार भोगा हो। इनमेंसे पहली मनुके मतानुसार पुनर्विवाह कर सकती है; और दूसरी नियोग कर सकती है। मनु कहते हैं:—

सा चेदक्षतयोनिः स्याद् गतप्रत्यागताऽपि वा।
पौनर्भवेन भर्त्रा सा पुनः संस्कारमर्हति॥ मनु० ९।१७६

अर्थात् जो स्त्री पतिके यहां गई हो, और जाकर आ गई हो, परन्तु जो अक्षतयोनि हो और उसका पति मर गया होय, तो उसका पुनर्विवाह होना चाहिये। इस विषयमें मनुके सातों टीकाकारोंका एकमत है। विशेषमें उनके एक राघवानन्द तो यहांतक कहते हैं कि श्लोककी पहली पंक्तिके अन्तमें, वा शब्द आनेसे ऐसा अर्थ होता हो, कि क्षतयोनि होनेपर भी उसका फिरसे विवाह होना चाहिये (जोरकी तालियां)।

नियोग कब करना चाहिये ?

पतिके मरने पश्चात्ही नहीं, परन्तु पतिकी जिंदगीमें जो संतान न होय, तो संततिके लिये शास्त्रमें नियोग करनेका विधान है; इस विषयको पंडित लोग समझते नहीं हैं, इसीसे स्वयं धोखा खा जाते हैं और दूसरोंको भी भ्रममें डालते हैं । नियोग संतानके लिये है। परन्तु जो संतति होय फिर भी नियोग किया जाय तो मनु कहते हैं: —

ज्येष्ठो यवीयसो भार्य्यां यवीयान्वाऽग्रजस्त्रियम् ।
पतितौ भवतो गत्वा नियुक्तावप्यनापदि ॥ ५८ ॥

मनु. अ. ९

आपत्कालके विना यदि बड़ा भाई छोटे भाईकी स्त्रीके साथ, व छोटा भाई बड़े भाईकी स्त्रीके साथ, नियोग करे तो वे पतित हो जाते हैं, परन्तु संतति न हो तो मनुने लिखा है कि:—

देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्रिया सम्यक् नियुक्तया ।
प्रजेप्सिताधिगन्तव्या सन्तानस्य परिक्षये ॥ ५८ ॥

मनु. अ. ९, श्लो. ५९.

अर्थः—संतानके अभावमें श्वशुर आदिसे आज्ञा लेकर स्त्री सपिण्डके साथ अथवा देवरके साथ नियोग करके, स्त्री इच्छित प्रजा प्राप्त करे.
" देवरो कस्मात् द्वितीय वर उच्यते ? " अर्थात् देवर दूसरा वर कहलाता है । फिर मनुजी लिखते हैं:—

विधवायां नियुक्तस्तु घृताक्तो वाग्यतो निशिः ॥
एकमुत्पादयेत्पुत्र न द्वितीयं कथंचन ॥ ६० ॥

मनुः ॥ अ० ९

अर्थः—विधवा स्त्रीसे मातादिकी आज्ञा लेकर पुरुष रातको मौन होकर शरीरमें घी लगाकर एकही पुत्र उत्पन्न करे; दूसरा नहीं । इससे विदित है कि नियोग केवल प्रजोत्पत्ति के लिए है; विषयवासनाके लिए नहीं ।

रुढी विरुद्ध नियोग और पुनर्विवाह ।

आजकल नियोग और पुनर्विवाह, रीतीके विरुद्ध हैं; इससे कितनेही शास्त्रियोंको बुरा लगेगा । परन्तु हमको देखना चाहिए कि शास्त्रमें क्या लिखा है ? यदि विधवा-विवाह शास्त्रसम्मत है, तो यह बात रुढी व रीतिविरुद्ध हो तो भी, मुझे या आप लोगोंको

माननी चाहिये। वैष्णवोंके शिरोमणि रंगाचार्यने 'दुर्जनकरिपञ्चानन' नामक अपने पुस्तकमें लिखा है कि विधवाविवाह (पुनर्लग्न) शास्त्रसम्मत है । सुधारक और बहुतसे विद्वान् भी ऐसाही कहते हैं, परन्तु कितनेही शास्त्री और आर्थोडाक्स लोग, जो अकलका दखल नहीं रखते, (हंसी) वेही इसके विरुद्ध हैं । शायद् मेरा ऐसा कहना उनको बुरा लगेगा, परन्तु मैं वेदानुकूल कह रहा हूं, इसलिए उनको बुरा या भलालगनेका मुझे रतीभरभी ख्याल नहीं है (तालियां) नियोगका मतलब पुत्रोत्पत्ति है । यह सच्चे पवित्र ऋषियोंकाही काम था । पूर्ण जितेन्द्रियही, इसके योग्य थे, परन्तु आजकल प्रजा विषयासक्तिमें विशेष प्रवृत्त है और जघन्य दरजेकी है; इस लिए उनको नियोग (कठीन) मुश्किल ही प्रतीत होता है ।

नियोग हुए महाभारतके उदाहरण ।

ऋषियोंके विनियोग करनेके अनेक उदाहरण महाभारतमें हैं । खुद महाभारतके कर्ता वेद व्यासने भीष्मपिताकी माता सत्यवतीकी आज्ञासे वंशनाश न होने देनेके लिये विचित्रवीर्यकी स्त्री अंबालिका और चित्रवीर्यकी स्त्री अंबाके साथ नियोग किया था। ये दोनों स्त्रियां काशीके राजाकी पुत्रियां थीं । नियोगकेहि परिणामसे, महान् नीतिकार विदुर उत्पन्न हुए थे। सत्यवतीने कहा था कि-" कौरववंश नाश न हो, इस लिये हे व्यास ! तुमको नियोग करना पडेगा. क्योंकि भीष्म पितामहने कई कारण तथा राज्यके लाभके लिये, ब्रह्मचर्यव्रत लिया है " । इस लिये व्यासजीने नियोग किया ।

ताराका पुनर्विवाह, लोगोंकी गप्प रामके पहले रामायण ।

पुनर्विवाहसबन्धी रामायणमें एक कथा है । रामायणके संबन्धमें लोगोंमें ऐसी गप्प चल रही है कि रामके जन्मसे दस हजार वर्षसे पहले वाल्मीकने रामायण लिखी थी; परन्तु स्वयं रामायणसे यह गप्प झूंठी ठहरती है । रामायणके पहले अध्यायमें ऐसी कथा है, कि एक समय महर्षि वाल्मीक बैठे थे, नारदमुनि इनको मिलने आये । वाल्मीकिने पूछा कि ऐसा कोई पुरुष बताओ, जो सर्वगुणसंपन्न हो; जो ईश्वरका भक्त, शूरवीर, पुरुषार्थी, परोपकारी हो; और एक धर्मको मानने-वाला होय । उसका जीवन चरित्र लिखनेका मेरा विचार है ; नारदने कहा कि ऐसा पुरुष मिलना तो दुर्घट है, परन्तु वैसा एकही पुरुष है; जिसको तुम्हारे कहने अनु-सार मैं गुणवान् समझता हूं । और वह दशरथका पुत्र रामचन्द्र है । (तालियाँ) । आपके कथित बहुतसे गुण राममें घटते हैं । इस लिए उसका जीवनचरित्र शुरू करो । ऐसीही एक गप्प व्यासजीके नियोगके विषयमें है कि उन्होंने नियोग नहीं किया था । किन्तु

दृष्टिमात्रसेही पंडु आदि उत्पन्न होगए यह बात गप्प है । सृष्टिकर्मविरुद्ध रजवीर्यका संयोग हुए विना, प्रजोत्पत्ति नहीं हो सकती है। महाभारतमें साफ लिखा है, कि उन्होंनें नियोग किया था। मनु तो यहांतक लिखते हैं, कि यद्यपि कितनेही लोग ऐसा मानते हैं, कि एक संतान होनेतकही नियोग करना चाहिए । परन्तु दूसरोंका कहना है कि एक सन्तान काफी नहीं है, दूसरा लड़काभी होना चाहिए । क्योंकि एक मर जाय तो दूसरा काम दे । विशेषमें मनुजी कहते हैं, कि नियोगका मतलब सिद्ध हो जानेपर उस स्त्रीको गुरुकी स्त्रीके समान समझना चाहिए ।

नियोगसे हुए पुत्रकी स्थिति ।

मनुजीने बारह प्रकारके पुत्र बताये हैं ।

" **औरसः क्षेत्रजश्चैव** " इत्यादि । मनु० ९-१५९ ।

प्रथमविवाहिता स्त्रीका पुत्र औरस, और नियोगवाली स्त्रीका पुत्र क्षेत्रज होता है । ऊपरके श्लोकमें मनुमहाराज कहते हैं, कि-"सिवाय पिताकी संपत्तिके, बापदादोंकी उपार्जित जायदादमें दूसरे दश प्रकारके पुत्रोंका हिस्सा नहीं पहुंचता । " परन्तु उसमें क्षेत्रज और औरसको बराबर हिस्सा मिलता है ।

नपुंसककी स्त्रीका नियोग ।

मनु महाराज कहते हैं कि जो कोई नपुंसक होय और संतति न होय तो उसका भाई उसकी स्त्रीके साथ नियोग करे; और जो पुत्र नपुंसककी स्त्री नियोगसे होवे, उसको उस नपुंसककी संपत्तिका दायभाग मिले:—

मनुजी कहते हैं, कि जो नियोगकी विधि बतलाई है उसको छोड़कर, और तरहसे संसारका व्यवहार नहीं करना चाहिये । व्यभिचारसे वर्णसंकरप्रजा उत्पन्न करना महापाप है:—

क्या मनुजी नियोगका निषेध करते हैं ?

मनुस्मृतिके नियोगप्रकरणमें यह नीचेका श्लोक आता है:—

नान्यस्मिन् विधवा नारी नियोक्तव्या द्विजातिभिः ।
अन्यस्मिन् हि नियुञ्जाना धर्म्मं हन्युः सनातनम् ॥ अ. ९-६४.

मनुस्मृतिके टीकाकार कुल्लुक भट्ट इस श्लोकका ऐसा अर्थ करते हैं, कि द्विजोंकी विधवाको नियोग नहीं करना चाहिये; परन्तु मनुका सबसे उत्तम टीकाकार मेधातिथि है । उसने मनुस्मृतिके श्लोकोंकी एकवाक्यता सर्वोत्तम रीतिसे की है । वे कहते हैं कि

मनुजीकी नियोगके लिये पूर्ण सम्मति है। राघवानन्द कहते हैं, "अन्यसे" अन्यसे प्रयोजन पतिके कुलसे अन्य जगह नियोग करनेका निषेध है। वेद और ब्राह्मण ग्रन्थोंके टीकाकार माधवाचार्यने पाराशर स्मृतिकी टीका लिखा है। अब वह सब जगह नहीं मिलती। उसमें यह श्लोक नहीं, परन्तु कलकत्तेकी रॉयल एशियाटिक सोसाईटीकी लायब्रेरीमें है। उसमें इन श्लोकोंके अर्थमें लिखा है कि अन्यका मतलब अपनेसे नीचि जाति है, जो पतिसे नीचि जातिके साथ नियोग करे, तो सनातन धर्म नाश होता है। परन्तु अन्यका मतलब न समझनेसे शास्त्री लोगोंने धोखा खाया है, जो मनुजीको नियोग अनिष्ट था, तो आगे चलकर उन्होंने लंबाईके साथ क्यों प्रतिपादन किया; इतनाही नही बलकि उसको नियमानुसार ठहराया! क्या वे ऐसे बुद्धिहीन थे ? कि उसी पृष्टमें दूसरी जगह अपने कहनेके विरुद्ध अभिप्राय देते क्या उन्होंने भांग पी थी! (हंसी)। जो मनुजीको नियोग अभीष्ट न होता तो मनुको माननेवाले व्यास, याज्ञवल्क्य नियोगका प्रतिपादन कैसे करते? आगे चलकर ब्रह्मचारीजीने पुनर्विवाह और नियोग हिन्दू शास्त्रोंके अनुकूल हो इस विषयमें अनेक प्रमाण दिये थे।

पराशरका पुनर्विवाहसम्बन्धि श्लोक।

नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतिते पतौ।
पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते॥

"जो पति अदृश्य हो जाय, मर जाय, संन्यासी हो जाय, नपुंसक हो जाय, पतित हो जाय, तो इन पांच आपत्तियोंमें स्त्री दूसरा पति कर ले" यह स्पष्ट है। परन्तु उसमें प्रतिवाद किया जाता है, कि "पतौ" शब्द व्याकरणकी रीतिसे अशुद्ध है; पति शब्दका सप्तमी एकवचनमें, पत्यौ होता है। परन्तु पाराशरीमें पतौ लिखा है, इससे कहा जाता है, कि पतौका अर्थ पतिके समान आचरण करनेवालेका है। "पति इव आचरति इति पतिः" अर्थात् "जिसकी सगाई हो गई हो, किन्तु विवाह न हुआ हो" परन्तु यह वास्तविक नहीं है। पराशरका मतलब विवाहित पतिही होना चाहिये। प्रथम तो सगाई हुएकी, नपुंसकताकी परीक्षा, विना स्त्रीसंसर्गके नहीं हो सक्ती है। परन्तु श्लोकमें क्लीब शब्द आया है; इससे स्पष्ट है कि स्त्रीपुरुष साथ २ रहते होंगे और वे विवाहित भी अवश्य होंगे। फिर श्लोकमें नारी शब्द है, इस लिए कन्या नहीं हो सक्ती है; क्योंकि जबतक विवाह न हो, तबतक नारी नहीं हो सकती है। क्योंकि शास्त्रमें **नरस्य धर्मा नारी** ऐसी

व्याख्या की है। अब सवाल यह रहा है, कि पत्यौके बदले पतौका प्रयोग हो सके कि नहीं? "**पतिः समास एव**" १-४-८ यह पाणिनिका सूत्र है, परन्तु जो छन्द-व्याकरणके नियमसे छन्दभंग होता होय तो, कभी २ व्याकरणका नियम एक किनारे धर दिया जाता है; इसी रीतिके अनुसार रामायणमें अनेक जगह पत्यौ-की जगह पतौ आया है। छंदभंग न हो इस लिए हिन्दुओंके माननीय श्रीकृष्णने भी गीताके चौदहवें अध्यायकें २३ वें श्लोकमें "**योऽवतिष्ठति नें-गतं**" "अवतिष्ठतेके बदलेअवतिष्ठति लिखा है।" व्याकरणमें परस्मैपद और आत्मनेपद ऐसे दो प्रकारके प्रत्यय होते हैं। इसके अनुसार अव के साथ स्थाधातुको आत्मनेपदका प्रत्यय लगाना चाहिये; परन्तु पाणिनिके '**समवप्रविभ्यः स्थः**' १-३-२२ के अनुसार करनेसे छन्दभंग न होनेके लिये अवतिष्ठतिका प्रयोग किया है, इससे कुछ श्लोक अशुद्ध नहीं होता है। पराशरमें भी पत्यौके प्रयोगसे छंदका भंग होता, इसी लिये लाचार होकर, पतौ लिखा है; अर्थात् पत्यौकाही होता है, यह निःसंशय है। मुम्बईमें अष्टादशस्मृति संग्रह नामकी एक पुस्तक छपी है। मैंने उसे पढा है। पराशरके ऊपरके श्लोकमें विधीयते है, परन्तु अष्टादशस्मृतिवालोंने अपनी मरजीसे न वियते ठोक दिया है (हंसी)। कोई तो अर्थमेंही फेर करता है; परन्तु छापनेवाले भले आदमीने श्लोकही पलट दिया है!

मनुस्मृतिमेंसे पुनर्विवाहसंबन्धि एक श्लोकही उड़ा दिया है।

मनुका पुनर्विवाहके पक्षमें एक श्लोक पहलेसे मनुस्मृतिमें चला आता था, परन्तु पीछे-से विधवाविवाहके विरोधियोंने उसमेंसे वह उड़ा दिया है। परन्तु कितनीही मनुकी प्राचीन टीकाओंमें वह श्लोक है; किन्तु उसमें पाठभेद है। शंकरस्वामीने भी वह श्लोक दिया है, उसमें और पराशरके श्लोकमें भेद इतनाही है, कि उसमें "पतौ" की जगह "तथा" है।

दूसरे प्राचीन ग्रन्थकारोंने मनुस्मृतिमेंसे यह श्लोक लेकर अपने ग्रन्थोंमें लिखा है। और लिख दिया है कि यह "मनुस्मृतिका है"। परन्तु आजकल मनुस्मृतिमें नहीं दिखाई देता है। इससे जान पडता है कि वह उडा दिया गया है।

वह श्लोक यह है—

"नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतिते तथा।
पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते" ॥ मनुः.

इस प्रकार "पतौ" शब्दका शास्त्रीय रगड़ाही "तथा" शब्दके प्रयोगसे

निकल गया। इससे मनुका पुनर्विवाहका विधान स्पष्ट हो जाता है। शास्त्रियोंकी सब दलीलें नष्ट हो जाती हैं।

पुनर्विवाहके सम्बन्धमें रामकी अनुमति।

रामने बालिको जब मार डाला, तब उसकी **विधवा ताराने जिसको हिन्दुलोक सती मानते हैं**, उसके भाई सुग्रीवके साथ विवाह किया था। रामने किष्किंधाकांडमें सुग्रीवकी बड़ी प्रशंसा की है। यदि रामसरीखे धर्मात्मा पुरुष सुग्रीवका विधवाके साथ विवाह पाप समझते, तो क्या वे उसके निकट जाते यह सम्भव है ? रामचन्द्र विधवा-विवाहको शास्त्रमर्यादानुकूल मानते होंगे, ऐसा इससे सिद्ध होता है। फिर आरण्य-कांडमें मारीच राक्षसने सुवर्णमृगका रूप धारण किया था; सीताके कहनेसे राम उसके पीछे शिकार करने गये और रामके हाथों मरते २ मारीचने "हे सीते! हे लक्ष्मण!" की झूंठी पुकार की। सीताने समझा कि हमारे पतिको कुछ हानि पहुंची है; इसलिये उन्होंने जाकर लक्ष्मणसे प्रार्थना की। इस विषयका सीता और लक्ष्मणके बीचमें संवाद चलता है, और लक्ष्मणने जब रामके भयसे होनेकी बात असंभवित ठहराई तब सीताने कहा कि–"तू अपने भाईकी आपत्तिमें, मुझे प्राप्त करनेकी इच्छा रखता है, परन्तु मैं तेरेको नहीं मिलूंगी! देख, मैं अभी प्राण त्यागती हूं।"

> **"प्राह लक्ष्मण दुर्बुद्धे भ्रातुर्व्यसनमिच्छसि ॥**
> **प्रेषितो भरतेनैव रामनाशाभिकांक्षिणा ॥ ३३ ॥**
> **मां नेतुमागतोऽसि त्वं रामनाशे उपस्थिते ।**
> **न प्राप्यसे त्वं मामद्य पश्य प्राणांस्त्यजाम्यहम्" ॥ ३४ ॥**

जो नियोग वा पुनर्विवाहकी चाल रामके समयमें नहीं होती, तो सीता इस तरह न कहती। पीछे जब लक्ष्मण सीताके आग्रहसे चले गये, तब रावण सीताको उठा ले गया। महाभारतमें लिखा है कि–वसिष्ठ ऋषिने राजा सौदासकी स्त्री दमयन्तीके साथ नियोग किया था, इससे अक्षमक पुत्र पैदा हुआ था; और दीर्घतमा ऋषिने बली-राजाकी स्त्री सुदेष्णाके साथ नियोग किया था, यह बात महाभारत आदिपर्व १७६ अध्यायमें है; पुत्र हो जानेपर दीर्घतमा अपने घर चला गया।

क्षत्रिय और परशुराम।

परशुरामने क्षत्रियोंका वंशनाश किया, थोडे क्षत्रिय रह गये, इसलिए क्षत्रिय स्त्रियोंने ब्राह्मणोंके साथ नियोग किये थे; और हालमें जो क्षत्रिय लोग पाये जाते हैं, वे सब ब्राह्मणोंकी औलाद हैं। ऐसा महाभारतमें लिखा है। (तालियाँ)।

विधवाविवाह न होनेसे नुकसान।

इस प्रकार "प्राचीन कालमें नियोग और पुनर्विवाहकी चाल उच्च जातियोंमें थी" यह मैंने संक्षेपसे सिद्ध किया है, परन्तु हाल तो ६० वर्षका बुड्ढा मरनेकी अखीरी घडी सोनापुर (स्मशान) की लकड़ियोंमें दबता २ भी (हंसी) आठ वर्षकी कुवारी लडकीसे विवाह कर सकता है, परन्तु बिचारी आठ बरसकी विधवा विवाह नहीं कर सकती हैं। यहांकी तो मुझे खबर नहीं है, परन्तु उत्तर हिन्दुस्थानमें इस क्रूर बंधनके कारण भाग जाती हैं, और जो गुप्त लीलायें होती हैं, सो तो तुम जानतेही हो। इससे बालहत्या भी होती है। हाय! यह कैसा अन्याय है! परन्तु पुनर्विवाह करके इस पापको रोकना शास्त्रीय नहीं है, यह कहना दुराग्रह और निर्दयता नहीं तो और क्या है? (तालियां)।

हिन्दुओंमें पुनर्विवाहकी वृद्धि।

हालमें हिन्दुओंमें पुनर्विवाह होताही नहीं, यह बात नहीं। मैं छाती ठोकके कहता हूँ कि अब भी कई एक देशोंके सारस्वत ब्राह्मणोंमें पुनर्विवाह होते हैं (जोरकी तालियां)। कौन कहेगा कि–वे ब्राह्मण नहीं हैं?" क्षत्रियों लुवानोंमें भी पुनर्विवाह होते हैं; तब उनको कौन कहेगा कि–'वे क्षत्रिय नहीं हैं'। बिहारमें एक प्रकारके वैश्योंमें भी ऐसाही होता है; तब कौन कहेगा कि–'वे वैश्य नहीं हैं'। शूद्रोंमें तो ऐसा है ही, पर कितने एक द्विजही निषेधके आग्रही हैं। ठेठ रामके समयमें पुनर्विवाहकी चाल थी, सो तो मैंने बता दिया। शायद कोई कहे कि–" पुनर्विवाह करनेवाला सुग्रीव तो बन्दर था; परन्तु यह बात असत्य है। वे कपडे पहनते थे, बोलते थे। यदि बन्दर होते तो कैसे बोलते चालते? वे जंगली स्थितिमें थे। यह उनकी बैठनेकी रीतिसे सिद्ध होता है।

पुनर्विवाहसे जहर पिलानेका डर।

पिछली मनुष्यगणनाके अनुसार इस इलाकेमें लगभग दस लाख आदमी घट गये हैं, जिनमें हिन्दु विशेष हैं। हिंदुस्तानकी मनुष्यवृद्धि चाहे उतनी नहीं बढी, इससे देशको बड़ी हानि हुई है। मैं नम्रतापूर्वक कहता हूँ कि स्त्रियोंको न्यायानुसार पुनर्विवाह करनेकी छूट दी तो नहीं निश्चय कर कहता हूँ, कि–" अभी इससे भी बुरे दिन आवेंगे, और तुम्हारे बुरे हाल होंगे।" कितनेही लोग कहते हैं कि–"दूसरा पति करने दिया जाय तो अपने वर्त्तमान पतिको जहर देकर पुनर्विवाह करेंगी"। परन्तु

बिचारी स्त्रियाँ ऐसी कोमल हैं कि वे ऐसा काम नहीं कर सकतीं। अदालतोंके मुकद्दमोंको देखो, तो मालूम होगा कि, सौ पुरुषोंमें भी एक स्त्री नहीं होती है । (जोरकी तालियाँ)। कुनबी वगैरा और अंग्रेजोंमें पुनर्विवाह होते हैं। परन्तु क्या उनमें जहर देनेके कोई उदाहरण हैं? (तालियाँ)। पारसियोंके विषयमें मुझे मालूम नहीं है, (एक पारसी गृहस्थ उनमें भी रिवाज है) पारसियोंमें भी रिवाज है । ऐसा कहा जाता है तो क्या दूसरे पतिके लिये किसी बाईने प्रथम पतिको जहर दिया है? वे बिचारी स्वभावसे दयालु होती हैं । उनका नाम ही अबला है, वे ऐसे दुष्कृत्य कभी करही नहीं सकती हैं (तालियाँ)। तुम जो दुःखी हो तो अपने कर्मोंके फलसे, परन्तु ईश्वर तो न्यायी और दयालु है । मैं विधवाविवाहका पक्ष करता हूँ, इससे आपको यह न समझना चाहिये कि मेरे कोई विधवा पुत्री है, कि जिसका मैं विवाह करना चाहता हूँ (बड़ी हंसी)। परन्तु नियोग और पुनर्विवाह, वेद और सृष्टिक्रमके अनुकूल हैं। इस लिये मैं उसका पक्ष लेता हूँ (तालियाँ और ध्वनि)। इसके बाद लगभग ७॥ बजे सभा विसर्जन हुई।

इत्यलम्

ग्यारहवाँ व्याख्यान।
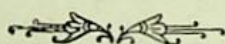
धर्मसभाकी ओरसे अन्तिम व्याख्यान।

ता. २८ अगस्त १९०२.

ब्रह्मचारी श्री रामेश्वरानन्दजीकी सभाकी ओरसे स्वामी श्री नित्यानन्दजीने दिये हुए व्याख्यानोंमेंका अन्तिम व्याख्यान कल ६॥ छ बजे गेइटी थिएटरमें ओनरेबल सर भालचन्द्र कृष्णके प्रधानपदमें दिया था । थिएटर ३ बजेही स्त्री पुरुषोंसे भर गया था। प्रारंभमें डॉ. पोपट प्रभुरामने कहा कि निश्चित किये हुये समयसे आधे घंटेकी देर हुई है इस लिए क्षमा चाहता हूं। धर्मसभाकी ओरसे स्वामीजीका आज अन्तिम व्याख्यान है। स्वामीजीने धर्मसभाके लिये अत्यन्त श्रम लिया है। स्वामीजीके प्रारंभके व्याख्यानको लेकर आजतकके व्याख्यानोंपर बहुत चर्चा हुई है।

स्वामीजीको प्रत्येक प्रश्नोंके सम्पूर्ण उत्तर देनेके लिए अब समय नहीं रहा। धर्म-सभाका उद्देश्य यह है कि-"हिन्दुधर्मके शास्त्रोंमेंसें धर्मके वास्तविक स्वरूपका संशोधन करना"। इस सभाका उद्देश्य दूसरोंको बुरा भला मनाने या कहनेका नहीं है। ब्रह्म-चारी रामेश्वरानंदजीका भी यही हेतु है। स्वामी श्री नित्यानन्दजीके व्याख्यानोंमेंसे यदि सत्यका ग्रहण किया जायगा तो जनसमाजको उससे अधिक लाभ होगा। आज जिस विषयपर स्वामीजी बोलनेवाले हैं, उसमें जैनधर्मका भी कुछ अंश है। परन्तु कई जैनबन्धुओंकी इच्छा इससे विरुद्ध पाकर मैंने स्वामीजीसे प्रार्थना की है कि-"वे जैनधर्मसम्बन्धी अधिक चर्चा नहीं करेंगें; वा उस विषयको छोड देगें।"

यहां जैनधर्मसम्बन्धी ऐसी चर्चा जिससे किसीको बुरा लगे करनेकी न थी, तो भी जैनोंकी खास प्रार्थनासे अब उससम्बन्धी कुछ भी नहीं कहा जायगा। स्वामी श्री नित्यानन्दजी, ब्र. श्रीरामेश्वरानन्दजी तथा सभासदोंकी ऐसी इच्छा है कि तुम सब अपने २ धर्ममें आनन्दसे रहो। परन्तु सत्यासत्य समझने और धर्मका रहस्य जाननेके लिये प्रयत्न करो। स्वामी श्रीने अपने श्रमके बदलेमे कोई भी प्रकारकी भेंट लेनेका इनकार किया है। इससे उनकी सेवामें एक प्रशंसापत्र अर्पण करनेकी मैं प्रार्थना करता हूं। यह अभिनन्दनपत्रलेख सुवर्ण-अक्षरोंमें छप-वाया था और उसमें ब्र. रामेश्वरानन्दजीकी तसबीर भी थी। लेख हिन्दी भाषामें था

सर भालचंद्रने कहा कि माधवबागकी सभामें अन्यान्य पंडितोंके व्याख्यान आपने सुने हैं। स्वामी नित्यानन्दजीने भी दो तीन विषयसम्बन्धी अपने विचार अनेक प्रमाणोंके साथ प्रगट किये हैं। उसका धर्मसभाके विचारोंके साथ एक पुस्तक छपवाया गया। भारतमें अनेक मत मतान्तर होनेके कारण और हरेकके मन्तव्य भी भिन्न २ होनेसे सबको संतोष देना असम्भव है। स्वामीजीने जो श्रम लिया है, इसके लिये सबकी ओरसे मैं उनका आभार मानता हूं।

स्वामी श्री नित्यानन्दजीने अपने व्याख्यानका प्रारंभ करते हुए कहा कि २६ प्रश्नोंमेंसे बाकी रहे हुए विषयोंपर आज विचार करनेका है। दश विषयोंपर बोल-नेके लिए आधा मात्र घंटा है जो हरेक विषयमें कुछ कहनेके लिये कमसे कम २॥ से ३ घंटे चाहिये। परन्तु केवल आधाही कलाक रहनेसे मैं केवल अपना मतही दे सकुंगा। आप जानते हैं कि जो विषय स्पष्टतासे प्रतिपादन किये गये हैं वे भी साररूपही कहे गये हैं। यदि इन्हीं विषयोंपर मुझे लिखनेका तो हो अनेक प्रमाण, दलीलें और रहस्य प्रगट करनेकी आवशकता है; परन्तु व्याख्यानोंमें केवल

भावार्थही स्पष्ट किया गया है । आजकल जो चर्चा रही है उसमें मैं केवल इतनाही कहूंगा कि-" जिसको धर्मका विचार करना हो, उसको धर्मात्मा होना चाहिए अर्थात् काम, क्रोध, राग, द्वेष इत्यादिसे दूर रहकर निष्पक्ष होकर विचार करना चाहिए " । सहनशीलताकी भी उतनीही जरूरत है । गर्म-मिजाज रखनेसे कोईभी कार्य्य नहीं होता । और प्रयत्न भी निकम्मा (निष्फल) जाता है । हमारे धर्ममें वा कोममें यदि कोई महात्मा हो गया हो तो उसका अनुकरण करना चाहिये । महात्मासम्बन्धी दृष्टांत देते हुए स्वामीजीने स्वामी श्री शंकराचार्यजी, स्वामी श्री दयानन्द सरस्वती, गुरु गोविंदसिंहजी, मर्हूम मि. ग्लेडस्टन, महाराणी वीकटोरिया, मि. दादाभाई, मि. ताता, नामदार जज मि. बदरुद्दीन इत्यादिके दृष्टांत दिये थे ।

स्वामीजीने अपने आजके विषयको प्रतिपादन करते हुए कहा कि छः शास्त्रोंका आपसमें विरोध नहीं है । स्वामीजीने अनेक प्रमाणोंसे सिद्ध किया कि एक शास्त्र दूसरे शास्त्रका पुष्टिकर्ता है । स्वामीजीको अपने विषयसम्बन्धी बहुत कुछ कहना था, परन्तु समय न रहनेसे अन्य प्रश्नोंसम्बन्धी आज अधिक कुछ न कह सके । अन्तमें स्वामीजीने कहा कि मेरे व्याख्यानोंमें मैंने कुछ भी पक्षपात वा स्वार्थ नहीं रक्खा है; तो भी किसीको बुरा लगा हो तो मैं क्षमा चाहता हूं ।

गौतम बुद्धने क्षमासम्बन्धी एक दृष्टांत अपने शिष्योंको दिया था, वह मुझे अभी याद आ गया है । एक समय काशीके राजाने अयोध्याका राज ले लिया और वहांके राजा, रानी और राजपुत्रको मरवा डालनेके लिये हिंसकोंके साथ बनमें भेज दिये ! राजाने आगेसे अपने पुत्रको यह उपदेश कर रक्खा था, कि-"यदि तू जीता रहे तो बैरका बदला बैरसे न लेकर प्रीतिसे लेना । क्योंकि अग्नि अग्निसे शान्त नहीं होता । जलसेही शान्त होता है ।" राजपुत्रने इस अमूल्य उपदेशका उपयोग यहांतक किया कि वह काशीके राजाका प्यारा बन गया । एक दिन राजा अपना शिर उसकी गोदमें रखकर सोता था, तब उसको अपने बैरका स्मरण आया-और उसको मारनेके लिये उद्यत हुआ । उतनेमें अपने पिताके शब्द उसको याद आ गये और उसने राजाके मारनेका संकल्प छोड दिया; और अपनी दुष्ट इच्छा राजाको प्रगट की । बुद्धने इस दृष्टांतको देते हुए कहा कि जब क्षत्रियोंमें इतनी दया रही हुई है ' तब आप जैसे साधुओंमें कितनी सहनशीलता होनी चाहिये ! । गौतम बुद्धका यह दृष्टांत ध्यानमें लेकर मैं मेरेपर की गई टीकाओं (आक्षेपों) से बुरा न मानकर उनको भी उतनीही प्रीतिसे चाहता हूं ।

व्याख्यान पूरा होनेपर धर्म्मसभा और श्रोताओंकी तरफसे स्वामीजीका पुष्पमालादिसे बहुतही धूमधामके साथ सत्कार किया गया। इस समय धर्म्मसभाकी तरफसे स्वामीजीको कुछ रूपये भेट करनेका प्रबन्ध किया गया था, परन्तु स्वामीजीने धन्यवादपूर्वक उसको अस्वीकार किया। इसके पश्चात् स्वामीजीके सम्मानके लिए नगरके प्रतिष्ठित सज्जनोंकी तरफसे चार घोड़ोंकी गाड़ी सुसज्जित की गई।

यद्यपि बहुतसे सज्जनोंका आग्रह था कि बम्बईके मुख्य २ बाजारोंसे स्वामीजीका प्रोसेशन निकाला जाय, परन्तु ऐसा करना भी स्वामीजीने अस्वीकार किया और चुपचाप चार घोड़ोंकी गाडीमें बैठकर अपने निवासस्थान (सेठ जय नारायणजी दानी का बंगला) को चले गये.

बारहवाँ व्याख्यान।
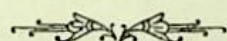
संस्कृत भाषाकी आवश्यकता।
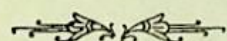
ता. २३ सप्तंबर १९०२.

इस समय भी सुप्रसिद्ध स्वामी श्री नित्यानन्दजीने "संस्कृत भाषाकी आवश्यकता" इस विषयपर एक प्रसंगोपात्त व्याख्यान दिया था।

हम सबको मानना पड़ेगा कि संस्कृत भाषामें अपूर्व गौरव है, परन्तु उसमें मुख्य न्यूनता उसकी कठिनता है। भाषा का मुख्य हेतु ऐसा होना चाहिये कि सूक्ष्मसे सूक्ष्म, व्यापकसे व्यापक और स्थूलसे स्थूल विचार भी स्पष्टतासे अनर्थक वा व्यर्थक हुए बिना सूक्ष्मतासे वक्ता श्रोताको दर्शा सके। प्राचीन संस्कृत विद्या चाहे ऐसी हो, परन्तु ये सब गुण वर्तमान समयमें संस्कृत भाषामें नहीं दीखते। खासकरके आज्ञावाचक शास्त्रोंकी भाषा उपरोक्त गुणोंसे युक्त होनी चाहिये; परन्तु शोकका विषय यही है कि शास्त्रोंकी भाषाकाही अनर्थ और अर्थान्तर द्विअर्थ हो सकता है। हिन्दुओंके धर्मका आज कोई ठिकाणा नहीं है, इसका कारण भी यही है कि प्रत्येक आचार्यने अपने २ स्वार्थके अनुसार अर्थ किये हैं। वस्तुतः शास्त्रोंका अर्थ विद्या और बुद्धिके अनुकूल किया जाय तो द्विअर्थ होनेका कुछ सम्भव नहीं है। परन्तु हिन्दुओंकी एक विचित्र मान्यता ऐसी है कि शास्त्रसम्बन्धमें वे

मनुष्यबुद्धिको निकम्मी मानते हैं । मानो जैसे शास्त्रकर्त्ताओंने अपनी बुद्धि शास्त्र बनाते समय कोई कोनेमें रक्खी हो और उन्होंने ऐसी आज्ञा दी हो कि–"हमारे शास्त्र पढ़ते समय अकलको कोनेमें रखना !"

इस तरहसे सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेसे पता लगता है कि संस्कृत भाषाके शास्त्र यद्यपि द्वि-अर्थी हैं तो भी उसमें दोष भाषाका नहीं है, किन्तु पढ़नेवालोंकी बुद्धिकाही है। स्वाभाविक बात यह है कि जो शब्द शास्त्र लिखनेवालोंने सैंकडों वर्ष पहिले लिखे हों वे उस युगके संयोगोंको ध्यानमें रखकर लिखे होने चाहियें और उन संयोगोंको ध्यानमें रखकर उसके अर्थ भी वर्तमान समयमें करने चाहियें । वर्तमान समयके शास्त्री ऐसा करते नहीं हैं और इसीसे जो बुद्धियुक्त और पादार्थिक विद्यायुक्त अर्थ कहते हैं उनके और शास्त्रीओंके बीचमें अर्थोंके सम्बन्धमें भिन्न मत हो जाता है। संस्कृत व्याकरणमें समाससे भी अनेक अर्थ होनेका सम्भव रहता है, परन्तु जैसे स्वामीजीने दिखलाया कि व्याकरणके नियम ध्यानमें न रखनेसेही अनेक अर्थ होते हैं और इस तरहसे संस्कृतसे अनभिज्ञ लोग संस्कृत भाषाको मोमके जैसी नरम और उसका जैसे अर्थ करो तैसा हो सकता है ऐसा कहकर दोष लगाते हैं । वर्तमान समयके अंग्रेजी भाषाके लेख, सैंकडो वर्षके पश्चात्, शब्दोंके अर्थ समयके परिवर्तन होनेके पश्चात् अर्थ किये जांय तो वे भी उसी तरहसे द्वि-अर्थी होनेका सम्भव रहेगा। वर्तमान समयके कायदेकानून उनके अर्थ या द्विअर्थ न हो सकें इसलिये बहुत ध्यानसे बनानेमें आते हैं । धारा शास्त्री भी अपने स्वार्थकी कोई बात आनेपर उसका किस प्रकार अर्थ करनेका प्रयत्न करते हैं सो सबको ज्ञात है; परन्तु इससे अंग्रेजी भाषामें दोष है ऐसा नहीं माना जाता ऐसाही संस्कृतके सम्बन्धमें है ऐसा स्वामीजीने कहा था। आगे बढ़कर स्वामीजीने कहा कि आर्यावर्तसम्बन्धी प्राचीन उपयोगी विषय और विद्याओंका संशोधनके लिए संस्कृत भाषाकी अति आवश्यकता है। संस्कृत व्याकरणसम्बन्धीसे स्वामीजीने एक शब्द दिखलाकर कहा कि इसमें कइ ढकोसले अर्थात् निरर्थक सूक्ष्मतायें हैं । तिङन्त (क्रियापद) प्रकरणके बहुतसे नियम परस्मैपद और आत्मनेपद सेट् और अनिट्, संप्रसारण धातुओंके दशरूप जैसे कि भ्वादि, अदादि तुदादि अदादि जुहोत्यादि सात प्रकारके कृदन्त aorist इत्यादिमें जो अनेक सूक्ष्म विभाग नियमोपनियम और अपवाद आते हैं वे मेरे विचारानुसार बहुतसे उनमेंसे निकम्मे हैं। उनको याद करनेमें विद्यार्थियोंकी आधी अकल और वय मारी जाती है। उससे भाषाकी सरलता जो भाषाका मुख्य भूषण है, कम हो जाता है । किसी प्रकारके वाक्चातुर्य्यसे उसकी

(भाषाकी) उपयोगिता सिद्ध हो नहीं सकती । संस्कृत लिपि उत्तम होनेसे वह भाषा उत्तम सिद्ध नहीं हो सकती। उसका श्रेष्ठत्व सिद्ध करनेके लिये इतना कहना पर्याप्त नहीं कि वह सर्व भाषाओंकी माता है; क्योंकि पुत्री मातासे भी अधिक लावण्यवती हो सकती है। संस्कृतमें धातुके अनेक रूपोंका होना खटपट है, परंतु वह केवल संस्कृतमें ही नहीं; किन्तु ग्रीक लेटिन आदि सर्व भाषाओंकी यही स्थिति है। हरेक भाषामें अनियमित रूप होतेही हैं; कारण यह है कि भाषा कोई यंत्रमें बनी नहीं। परंतु मि. जॉन स्टुअर्ट मिलके तर्कशास्त्र नामक पुस्तकके कथनानुसार–अनेक मकान एक स्थानपर बननेसे जैसे रास्ता अपने आप बन जाता है. वैसेही भाषाके बननेका प्रकार है। मि. मिलके "Necessity of a Chilorophical Qanguage नामके पुस्तकमें प्रगल्भ विचार प्रकट करनेके लिये भाषामें क्या क्या गुण होने चाहिये वह लिखा है। वे गुण संस्कृत भाषामें प्रायः अधिकतर देखनेमें आते हैं। खासकरके संस्कृतसमासपद्धति ठीक होनेसे वह भाषा अन्य भाषाओंसे सब प्रकार श्रेष्ठ है। यद्यपि भाषाशास्त्रका वेत्ता इस विषयमें प्रमाणभूत माना जाता है तो भी हम अपने अनुभवसे इतना अवश्य कहेंगे, कि संस्कृत भाषा सर्वोत्तम है; अति उपयुक्त है, और उस भाषाके प्रचारकी, खास करके इस देशके लिये अतीव आवश्यकता है इतिशम्।

व्याख्यान १३ वां

संसारकी विचित्र गति।

ता. १५–१२–१९०२

"स्वर्गवासी सेठ जेठाभाई प्रेमजी स्मारक व्याख्यानमाला" का प्रथम व्याख्यान स्वामी श्री नित्यानन्दजी महाराजने कल शाम "आर्यसमाज मन्दिर बम्बई" में दिया था। व्याख्यानके समय श्रोताओंकी इतनी अधिक उपस्थिति हुई थी कि उन्हें मन्दिर में खडे रहनेके लिये भी जगह न थी।

प्रथम आर्यसमाजके प्रधान जीवनदास दयालुदासजीने स्वर्गवासी सेठ जेठाभाई प्रेमजीके ३०००० तीस हजारके दानके विषयमें कुछ विवेचना की; फिर स्वामीजीने नियमानुसार ईश्वरस्तुति करके व्याख्यान प्रारम्भ किया:—

(व्याख्यान)

यह संसार कभी भी एकरस नहीं रहा और न रहताही है; इसलिये इस संसारको विचित्र कहा जाता है और इसी कारण विद्वान् लोग इसे सागर या नाटककी उपमा देते हैं।

जन्म होते समय मनुष्य को " वह कहांसे आया है?" इस बातका ध्यान नहीं रहता है। सब प्राणियोंमें मनुष्ययोनि श्रेष्ठ गिनी जाती है और वास्तव में है भी ऐसा ही; परन्तु सैकडों मनुष्य कहानेवालों में मनुष्य नामको सार्थक करनेवाला एक भी मनुष्य कठिनतासे मिलता है। प्राणी दो तरहके होते हैं- एक हिंसक और दूसरे अहिंसक। हिंसक अपनी आवश्यकतासे भी अधिक हानि करते हैं। भेडियेकी एक बकरीसे तृप्ति हो सकती है; परन्तु वह किसीके बाडे में घुसकर व्यर्थ अनेक बकरियोंका घात करता है। संसारमें भेडिये जैसे भी मनुष्य होते हैं। मनुष्य जो कर्म करता है, उससे उसकी परीक्षा होती है। " संसारमें जन्म पाकर कोई भी अपराध न किया हो" और जिसने बचपनमें बिना गिरे ही चलना सीख लिया हो? ऐसा मनुष्य मिलना कठिन है मनुष्य मात्रमें परिमित शक्ति है; मनुष्य भूलते हैं और ठोकरें खाते हैं। इन विघ्नोंसे मनुष्य को रुक न जाना चाहिए; किन्तु कर्मयोगी बनकर योग्य होते जाना चाहिए। केवल वे ही मनुष्य, मनुष्य कहलानेके योग्य हैं, जो विघ्नोंके आनेपर भी कार्यक्षेत्रमें डटे ही रहते हैं।

तदनन्तर स्वामीजीने " व्याख्यानमाला" के प्रयोजक स्वर्गवासी मि० जेठाभाई प्रेमजी की प्रशंसा की।

स्वर्गवासी उक्त सेठ साहबने १५००० रुपये कन्यापाठशालाको, ३००० रुपये काशी पाठशालाको और (अपने परिवारके लिये १५००० सहस्र मात्र रखकर) शेष श्रीस्वामी दयानन्द कृत 'सत्यार्थप्रकाश' का गुजराती भाषान्तर करवाके कम कीमतमें बेचनेके निमित्त देनेके लिये अपने " मृत्युपत्र" में आदेश किया है। उन्होंने मुझसे दश व्याख्यान देनेके लिये आग्रह किया था। यद्यपि इसके लिये मेरे पास समय नहीं है, तथापि उनके मृत्युपत्रके ट्रस्टियों (संरक्षकों) के विशेष आग्रहसे मैंने व्याख्यान देना प्रारम्भ किया है।

कवियोंने संसारकी विचित्रतापर अनेक काव्य लिखे हैं। मनुष्यको कई २ भांतिके ज्ञान होनेका अभिमान होता है; परन्तु वस्तुतः वह छोटी २ बातोंको भी नहीं जानता; ऐसा देखा गया है। यदि उसने वनस्पति शास्त्रका उत्तम प्रकार

अध्ययन नहीं किया हो तो वह पुष्पकी पंखुडियोंकी बाहरी खूबसूरतीके सिवा उसके संगठनके विषयमें कुछ भी नहीं कह सकता। "हाउस वाइफ" सीरीजके एक पुस्तकमें मैंने एक बात पढी है। उसमें उसका लेखक कहता है कि, मैं जब दश वर्षका था, तब अपनी रक्षिकासे पूछता था कि, दीपककी ज्योति बुझकर कहां गई? वह मुझको कुछ उत्तर न दे सकती थी। गेहूं कहांसे उत्पन्न हुआ यह प्रश्न भी मैंने बाल्यवस्थामें किया था; परन्तु आजतक मेरी शंकाका समाधान नहीं हुआ। विद्युत्का ज्ञान आजतक भी अपूर्ण है। अधिक क्या कहा जाय, अपने आपको भी तो हम नहीं समझते!। आत्मा सम्बन्धमें कई मन्तव्य हैं। सायन्टीफिक विषय सिद्ध होनेसे समझ सकते हैं परन्तु फिलासोफीकी बातें केवल बुद्धिगम्य होनेसे दिमाग फिर जाता है। एक फूलको उठाकर "मेरे हाथमें यह फूल है" इसका निरूपण सायंससे सहजमें हो सकेगा; परन्तु फिलासोफीकी दृष्टिसे (एक पंखेको उठाकर) "यह पंखा है" ऐसा सिद्ध करना भी कठिन होगा। कई (शंकराचार्यादिक) कहते हैं कि "सृष्टिमें जो कुछ है, वह कल्पनामात्रही है"। हर्बर्ट स्पेन्सर कहता है "कि पदार्थोंकी उत्क्रान्ति और अवक्रान्ति होती है, परन्तु सृष्टि कल्पना-मात्र नहीं है।" जब साकार पदार्थोंमें इतना विवाद होता है, तो निराकारकी तो बात ही क्या? और हम अपनेको उस विषयमें अज्ञान समझें तो उसमें क्या आश्चर्य! इस लिये संसारकी प्रथम विचित्रता तो यह है कि हम—आप क्या हैं सो भी हम नहीं जानते।

"पोलीटीकल इकोनोमी" (अर्थशास्त्र) में जिससे अपना अर्थ सिद्ध हो उसको धन कहा है। नोटका दशवा दश हजार मूल्य है, वह कृत्रिम है। नोटोंके प्रभावका कारण राज-सत्ताका धर्म है। संसारमें सबसे श्रेष्ठ साहूकार (महाजन) सरकार है। उसपर विश्वास होनेसे अथवा उसका अधिकार होनेसे कम कीमतके रुपयेका और निकम्मे कागजके नोटका पूरा मूल्य होता है। उसी प्रकार पीतलके टुकडेकी मूर्ति बना, उसपर चन्दन लगा लोग उसको त्रिलोकीनाथ मानते हैं; यह भावभी कृत्रिम है। कल्पना करो कि, मूर्तिकार उस पीतलकी मूर्तिको बेचता है तो उसकी कीमत पीतलके भावके अनुसार ही होगी, यह मूर्तिकी कीमत कल्पित है। इस संसारमें अन्ध विश्वास, भाव और कृत्रिमतासे जो वास्तविक मूल्यसे कईगुणा अधिक मूल्य बढ जाता है; यह संसारकी द्वितीय विचित्रता है।

एक मनुष्य मूर्तिपूजनार्थ एक पैसेकी शर्करा (चीनी) मोल लेता है, पंसारीको शर्कराकी परीक्षा न होनेसे पंसारी उसको फटकडी दे देता है, पुजारी पूर्ण श्रद्धासे

उसका नैवेद्य बनाता है; परन्तु जब वह मनुष्य उसे पूर्ण भावसे (शर्करा समझकर) प्रसादके प्रयोजनसे मुंहमें रखता है उसे शर्कराका स्वाद आताही नहीं है । भैंसके आगे भागवत की कथा करनी निरर्थक है; परन्तु यदि विचार किया जाय तो इसीसे सत्य और असत्य भावनाकी सुस्पष्ट परीक्षा हो जाती है ! लोग रूढिके आधीन होकर जिस अन्धपरम्पराको मानते आये उसीको मान रहे हैं । परन्तु सत्यासत्यका निर्णय परीक्षासे हो जाता है । जसे, सब पुराणोंमें लिखा है कि पृथिवीका वृत्त (परिधि) पचास क्रोड योजन है । परन्तु ज्योतिष शास्त्रमें लिखा है कि वह पचीस हजार माइल है !" इन दोनोंमें झूठा कौन ? पौराणिक या ज्योतिषी, जब तक जांच न की जावे तब तक कुछ न बन पडेगा यदि तर्कसे सिद्ध हो जाय कि वह पचीस हजार मील है तो फिर व्यासजी तो क्या, परन्तु व्यासजीके पिता क्यों न कहें कि "पचास हजार योजन (दो, अब्ज मील) है" किंतु वह मानना अनुचित होगा । यहां यह भी प्रकट कर देना आवश्यक है कि वस्तुतः पुराणोंके कर्ता व्यास नहीं हैं ।

आगे चलकर स्वामीजीने सिद्धान्त शिरोमणि" नामक ग्रन्थके कुछ प्रमाण देकर और उनके अर्थ करके समझाये ।

भास्कराचार्य कहते हैं कि द्वितीयाके दिन चन्द्र जो शृङ्गयुक्त अर्ध वृत्ताकार होता है और उस चन्द्रकी अर्ध वृत्ताकार शिरा जो किसी समय न्यूनाधिक होती है, उसका कारण सूर्यका प्रकाश चन्द्रपर पडना ही है । यदि पृथिवीकी परिधि भागवतादि पुराणोंके अनुसार दो अब्ज मील होती तो ग्रहण ही न हो सकता! पुराणमें लिखा है कि " पृथिवीके बीचमें मेरु पर्वत है और उस मेरु के चारों ओर सूर्य घूमता है" परन्तु भास्कराचार्यके कथनसे सिद्ध होता है कि सूर्य उत्तरायण और दक्षिणायन होता है; इससे भी पुराणोंकी बातें झूठी समझी जाती हैं; । कई मनुष्य अपने धर्मानुसार दो सूर्य मानते हैं । यद्यपि अनेक भांति सिद्ध हो चुका है, कि, पृथिवीपर सूर्य एक ही है; तथापि वे कहते हैं कि दो सूर्योंका होना तो भगवान्ने स्वयं कहा है । क्या वह मिथ्या हो सकता है ? " " हम प्रत्यक्ष देखते हैं सो असत्य हो सकता है; परन्तु हमारे पोथाजीकी बात कैसे असत्य होगी ?" ऐसी अन्धश्रद्धा रखना यह भी संसारकी एक विचित्रता है ।

आकाशकी माप कोई नहीं कर सकता, संस्कृतमें उसको अनन्त कहा है । कई ऐसी बातें हैं जिनको हम देख नहीं सकते; वे केवल बुद्धिगम्य हैं । परन्तु इससे जिसकी परीक्षा हो सके उसकी कुछ भी परीक्षा न करने की जो बान (आदत) पड गई है, वह बहुत बुरी है ।

फिर स्वामीजीने अन्ध विश्वाससे कैसे २ अनर्थ होते हैं सो विदित करानेके लिये अनेक रोचक दृष्टान्त दिये और भर्तृहरिका एक सार्थ श्लोक कहकर जतलायाः—

" भर्तृहरि कहते हैं कि जब मैं पिंगलाके आधीन हो गया अर्थात् कामके वश हो गया तो मुझे अंधेरी रातमें कोई वृद्ध मिल जाता तो वह भी मुझे स्त्री भान होता परन्तु अब मुझे सब जगह ब्रह्मही ब्रह्म दीखता है। " यदि आपको प्रकृतिका सौन्दर्य देखना हो तो आप कालिदासके काव्य देखो। उन काव्यादिकोंसे " सत्य भावना किसमें रखनी ? " सो आपको ज्ञात होगा। कीटपतंगके सदृश और हमारे सदृश अनेक हैं, परन्तु रामचन्द्रसमान महानुभाव कम हुए हैं। फिर हमारे भाव विचित्र हों तो इसमें आश्चर्य क्या ? जैसे सबके उच्चारणमें भिन्नता होती है. वैसे ही सबके मनोगत भावोंमें भी भेद होता है। पिता और पति स्त्रीको प्रेमसे देखते हैं, परन्तु उनके भावोंमें अन्तर होता है; इसका एक दृष्टान्त मैं दूंगा।

एक मांसाहारी अफगान मुझे मिला। उसने मुझसे कहा " कि भला ऐसा कोई मनुष्य हो सकता है, जो मांस न खाता हो ? " मैंने कहा; हां ! ऐसे कई मनुष्य हैं। इसपर उसने कहा, अल्लाह ! अल्लाह !! कोईभी मनुष्य मांस न खाता हो क्या यह संभव है ? वस्तुतः बात तो यह है कि कई मनुष्य जब मांसको अमृत मानते हैं तब कई उसे मलसे भी अधिक भ्रष्ट समझते हैं। त्यागीको यह सुनकर आश्चर्य होता है कि स्त्री मनचकित करनेवाली है " परन्तु दूसरी ओर विषयीको " स्त्रीसे मन चलित नहीं होता " ऐसा सुनकर त्यागीके समान आश्चर्य होता है। संसारकी विचित्रता इससे अधिक क्या हो सकती है ? भर्तृहरिजी कहते हैं कि " पतंगकी दीपकमें और मधुमक्षिकाकी गुड़में मृत्यु होगी " यह बात न जाननेसे वे दीपकादिमें गिरते हैं। प्रत्येक मनुष्य जानता है कि मेरी मृत्यु होगी, पर तो भी दूसरेका धन हरण करनेमें तत्पर रहता है। हिन्दके ब्राह्मण मरे हुए का ही धन लेते हैं; तो ऐसे समयमें वास्तविक मार्ग कहांसे मालूम हो ? जादूगरीकी बनावट असत्य है ऐसा जानते हुए भी लोग मार्गमें तमाशा देखनेके लिये खडे रह जाते हैं; मनुष्य कुछ ऐसेही विचित्र तत्वोंसे भरा हुवा प्रत्येक मनुष्य क्षणभंगुर प्रवृत्तिमें इसी उपमाके साथ फँसता है इसीसे स्वात्माका सूक्ष्मतासे ज्ञान नहीं हो सकता। कायदे कानूनकी सूक्ष्मता वकील लोग दिखलावेंगे,

परन्तु उससे ईश्वरसम्बन्धी ज्ञान मिलता नहीं है । कई थोडा बहुत प्रयत्न करके मि० ब्रेडलोकी तरह छोड देते हैं । रोटी खानेसे भूख मिटती है, उसी प्रकार ईश्वरीय ज्ञानके मिलनेसे मनकी क्षुधा नष्ट हो, तब जानना कि सत्य ज्ञान हुआ । परन्तु वर्तमान समयमें लोगोंको वैसे सुअवसर प्राप्त नहीं होते । किन्तु वैसे आत्मिक और ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करनेके लिये प्रत्येक मनुष्यको प्रयत्न करना चाहिए । आजका व्याख्यान आगे होनेवाले व्याख्यानोंकी मानों भूमिका है, इसवास्ते मैं अधिक न कहूंगा । परन्तु अन्तमें संसारकी विचित्रतासे इतना ही ग्रहण करनेकी प्रार्थना करूंगा कि आप अन्धश्रद्धा न रखते हुए जो कुछ सिद्धान्तकी परीक्षा हो अर्थात् जो कुछ सत्य ठहरे, उसीको ग्रहण करेंगे ।

प्रमुखने दर्शाया कि कई लोग ज्ञातिभोजनादिमें बहुत धन व्यय करते हैं । परन्तु स्वर्गवासी सेठ जेठाभाईने अपने धनको अन्धपरम्परामें खर्च न करके सत्य धर्मके प्रचारार्थ खर्च करनेकी व्यवस्था की है; यह प्रशंसाकी बात है । इत्यादि इत्यादि ।

व्याख्यान १४ वाँ.

मर्हुम सेठ जेठाभाई प्रेमजीके मृत्युपत्रमें की हुई व्यवस्थाके अनुसार स्वामी नित्यानन्दजीने अपना दूसरा व्याख्यान आर्यसमाज मन्दिरमें 'आर्यसमाज क्या है' इस विषयपर दिया; प्रमुखस्थान प्राणजीवनदासने लिया था, स्वामीजीने नियम पूर्वक ईश्वरस्तुति करके अपना व्याख्यान आरंभ किया ।

तारीख १६ डिसेंबर १९०२.

आर्य्यसमाजके सम्बन्धमें कई द्वेषी लोगोंने लोगोंको बहका दिया है, जिससे उससे अनभिज्ञ लोग समाजसे दूर भागते हैं । आर्यसमाजसम्बन्धी जो जो अच्छी बातें हैं, उनको छिपाकर उसे बदनाम करते हैं । स्वामी दयानन्दजी प्रथम संस्कृतमें प्रचार करते थे, परन्तु उस समय अन्यमतवाले पंडित उनके कथनका उलटा

अर्थ करके लोगोंको समझाते थे । इससे उन्हेंभी संस्कृत छोड़कर हिन्दीमें प्रचार करना पड़ा । इसी तरह आर्य्यसमाजसम्बन्धी अन्याय होता हुआ देखकर आर्य्य-समाज क्या है यह कहनेकी आवश्यकता है। कई लोग कहते हैं कि आर्यसमाजी ईसाई जैसे हैं । दूसरी तरहके भी अनर्थ हुए हैं, उन्हें टालनेकी आवश्यकता है ।

प्रत्येक प्रकारके प्राणियोंका स्वभाव ऐसा है कि, अपनी जातिके अन्य प्राणियोंके साथ मिलकर काम करना । जब पशुओंमें ऐसे संस्कार देखे जाते हैं तब उससे उच्च पंक्ति धारण करनेवाले मनुष्योंमें ऐसे संस्कार हों इसमें आश्चर्यही क्या ? एक मनुष्यकी अपेक्षा यदि कई मनुष्य साथ मिलकर कार्य प्रारंभ करें तो वह कार्य शीघ्र होता है; इसी तरह समाजी लोग मिलकर कार्य करें तों बहुत उत्तम कार्य कर सकते हैं । परन्तु जब उन्हीं समाजियोंमें विचारका स्थान विकार ले लेता है, तब उनकी अवस्था बहुत बुरी होती है इतिहासोंके देखनेसे अच्छी तरह ज्ञात होगा कि, भिन्न भिन्न समाजोंके नाश होनेका कारण उनमें विचारोंकी जगह विकारोंकी अधिकता हो गई यही था । वर्तमान समयमें जो आर्यसमाज स्थापन हुआ है, वहभी हिन्दू सोसाइटी है और उसका नाम मैं आर्यसमाज रक्खूंगा; क्योंकि हिन्दू शब्द संस्कृत नहीं किन्तु फारसी है, आजकल हिन्दू शब्दमेंभी विरोध चलता है और उसकी ओर सबका मन आकर्षित हो रहा है । सामाजिक दशा ऐसी बिगड़ी हुई है कि, एक हिन्दूपर अन्याय होता हुआ देखकरभी दूसरा हिन्दू आंख कान बन्द करके चला जाता है । ऐसे कारणोंसे हमें उसे समाज कहते भी लज्जा आती है। क्योंकि समाजमें एकताका अभाव है इससे जानवर (पशु) अच्छे हैं । एक समय मैं जंगलमें भ्रमण कर रहा था उस समय मैंने एक बन्दरको वृक्षके ऊपर चढता देखा । वह आधे वृक्षपर तो चढ गया, पन्तु आगे न जा सका पीछे जो उसने देखा तो एक दो कुत्ते पीछे लगे हुए थे। न वह ऊपर चढ सकता था और न नीचे उतर सकता था । उसने वहां किलकारना आरंभ किया, उसकी आवाज सुननेही दूसरे दस पांच बन्दर वहां आ पहुंचे और कुत्तोंको भगाकर उन्होंने उस बन्दरको बचा लिया । ऐसी एकता प्राणियोंमें भी देखी जाती है; परन्तु मनुष्योंमें इससे विपरीतही दशा देखी जाती है । अन्तिम सातसौ वर्ष में सात कोटी हिन्दू मुसलमान हो गये, परन्तु उन्हें रोकनेके लिये हिन्दुओंने कुछ भी नहीं किया । अबभी दो सौ वर्षमें कितनेही हिन्दू ईसाई होगये यह आप सब जानते हैं । तोभी रोकनेका कुछ प्रयत्न न हुआ । इस प्रकार एकताकी न्यूनतासे भारतको अत्यन्त हानि हुई परन्तु इस हानिसे बचानेके लिये स्वामी दयानन्दने ही केवल अपना कर्तव्य बजाया है । वेदशास्त्रोंके सम्बन्धमें जो जो अनर्थ उत्पन्न किये

गये थे, उनकी पोल प्रकट करनेमें उन्होंने बहुत कष्ट उठाये और अपना यह अभीष्ट प्रसिद्ध करनेके लिये आर्य समाजोंकी भी स्थापना की, आर्यसमाजोंको जो उच्च स्थितिमें रखनेका हेतु स्वामी दयानन्दजीका था वह अभीतक सिद्ध नहीं हुआ; क्योंकि कई हिन्दू उसमें निकम्मी न्यूनताओंको देख उससे लाभ उठाना नहीं जानते। आर्यसमाजोंकी ओरसे वेदोंकी आज्ञाके अनुसार ही काम किया जाता है। यदि कोई सभासद वेद व आर्य समाजकी आज्ञानुसार काम न करे तो उसमें समाजका दोष नहीं है; संसारकी भिन्न भिन्न आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिये नानाप्रकारके समाजोंकी जरूरत है और इसी कारण भिन्न २ व्यापार करने वालोंने समाजें स्थापित की हैं। इस तरह समाजोंके बढ़ जानेसे जातिभेद उत्पन्न हुआ। देशमें जो २ भिन्नतायें प्रगट हुई हैं उन्हें मिटा कर लोगोंको वास्तविक सत्यमार्गपर ले जाना आर्यसमाजका मुख्य उद्देश है।

आर्य समाजका प्रथमोद्देश यह है कि, ईश्वरके सत्यस्वरूपको समझाना कि वह सच्चिदानन्दस्वरूप निराकार है। स्वामी दयानंदजीने भी अपना यही प्रथम कर्तव्य माना था। यदि ईश्वरको निराकारके स्थानपर साकार माना जाय तो फिर उसके भी बनानेवालेकी आवश्यकता है। कई ऐसाभी कहनेको तैयार हैं कि, ईश्वर अपने निराकार स्वरूपसे स्वयं-साकार हुआ, परंतु यह असम्भव है; क्योंकि प्रत्येक पदार्थ में जो गुण होते हैं उससे विपरीत गुण उसमें रह नहीं सकते। कई ऐसाभी कहते हैं कि यदि, ईश्वर निराकार है तो उसने जगत् व सूर्य इत्यादिको कैसे बनाया? ईश्वर सर्वशक्तिमान् है ऐसा सब मानते हैं। वह सर्वशक्तिमान् है अतएव उसे किसी वस्तुको बनानेके लिये हाथ पैरोंकी आवश्यकता नहीं है। यदि पिसी हुई सूक्ष्मचीनीमें बालू मिला दी जाय और किसी विद्वान् रसायन शास्त्रीसे चीनी तथा बालूको पृथक् २ करनेको कहा जाय तो वह कर नहीं सकता। परन्तु एक पिपीलिका (चींटी) इसमेंसे चीनी निकालकर खा जायगी इसका कारण यही है कि उसका मुख (मुंह) अतिसूक्ष्म होनेसे वह चीनीको खा सकती है। उसी तरहसे आप विचारकर देखोगे तो ज्ञात होगा कि, दुनियाके सर्व स्थूल पदार्थोंका मूल स्वरूप अतिसूक्ष्म है। उस सूक्ष्म स्वरूपको साकार तो पकड़ सकेगा नहीं इसी तरह यदि ईश्वर साकार होतो सूक्ष्म पदार्थोंमेंसे पृथ्वी सूर्य आदिको कैसे प्रकट कर सकता? परन्तु वह सर्वशक्तिमान् होनेसे निराकार अवस्थामें ही सब सृष्टिको बना सकता है ईश्वर न्यायकारी और दयालुभी है। क्योंकि ईश्वर कभी अन्याय नहीं कर सकता। उसको न्यायी समझनेमें दयालु शब्द बहुतोंको भ्रांति उत्पन्न करता है कि यदि वह दयालु हो तो

पापियोंको शिक्षा नहीं कर सकेगा। यदि वह योग्य शिक्षा करे तो वही दयालु कैसे माना जाय? परन्तु वास्तविक बात यह है कि, ईश्वर जो न्याय करता है, वह इस दुनियाके न्यायधीशोंकी तरह वेतन अर्थात् किसी फलको प्राप्त करनेके लिये नहीं करता है; केवल निष्काम अर्थात् अपना कुछभी स्वार्थ रखे विना न्याय देता है। यही उसकी दया है। जैसे महात्मा वा सच्चे साधु अपना बुराकरनेवाले बुरा चाहनेवाले वा निन्दा करनेवालेकाभी भला ही चाहते हैं। उसी तरहसे ईश्वरभी है ईश्वर अजन्मा और अनन्त है इससे वह जन्म या अवतार नहीं ले सकता। इस तरहसे ईश्वरके सत्य स्वरूपका जतलाना आर्यसमाजका उद्देश है। अनर्थोंको प्रकट कर सत्य अर्थोंका प्रतिपादन करना, वेदशास्त्रोंका सत्यार्थ समझाना, उसका अभ्यास करना, आर्यसमाजका दूसरा उद्देश है। पुराणोंने वेदसम्बन्धी बहुत अनर्थ किये हैं। इसलिये उनके सत्यार्थ समझानेकी आवश्यकता है। आर्यसमाज या हिन्दु समाजमें कुछभी फर्क नहीं है। भेद केवल इतनाही है कि, भारतवर्षके सब धर्म जो वेदशास्त्रोंका आधार रखते हैं उन वेदोंका सत्यार्थ करके लोगोंको समझानेका धर्म यदि कोई समाज समझता है तो वह केवल आर्यसमाजही है। वेदोंके मन्त्रोंके जो अनर्थ किये गये हैं उन्हें पकड़े कई पंडित व महात्मा अन्धेकी तरह बैठे रहते हैं। परन्तु अपनी आंखें खोल सत्यार्थ जाननेका प्रयत्न नहीं करते; आर्यसमाजी बैठे नहीं रहते। वे वेदका गुप्त रहस्य देखते हैं और उसका प्रचार करते हैं। आर्यसमाज मानता है कि, वेद सत्य है और उसका (पढना) अभ्यास करना हमारा परम धर्म है। स्वामी दयानन्द सरस्वतीने वेदके जो २ अर्थ किये उसकी परीक्षा करके आर्यसमाजने उन२ अर्थोंको ग्रहण किया है। और वैसेही दूसरोंको समझानेके लिये तैयार है। और वे यदि असत्य हों तो छोड़नेके लिये उद्यत है।" स्वामीजीने दृष्टांतोंसे आर्यसमाजके अन्य हेतुओंपरभी विवेचन किया था। आर्यसमाज सबकी उन्नतिमें अपनी उन्नति समझता है। इस विषयपर व्याख्यान देते हुए कहा कि, "इसका अर्थ कि स्वार्थको छोड़ सबकी भलाईमें मन लगाना है। मनुष्यको अपनी उन्नतिसे ही सन्तुष्ट न होना चाहिये; परन्तु सबकी उन्नतिमें अपनी उन्नति समझनी चाहिये। मैं जबतक आर्यसमाजी न था उसको बुरा मानता था। परन्तु सद्भाग्यसे मैं जब उसका रहस्य समझा तब ज्ञात हुआ कि, आर्यसमाज केवल सत्यकाही प्रचार करना चाहता है और उसमें किसीभी प्रकारकी न्यूनता नहीं है। अन्तमें मैं यही चाहता हूं कि, आपभी इन समाजके हेतुओंका रहस्य समझ लो और जब आपको विश्वास हो जाय कि समाज शुभकर्म करनेके लिये स्थापन किया गया है तो अवश्य उसकी तन मन धनसे स-

हायता करो और यहभी ध्यानमें रक्खो कि कुछभी देखे **विना निन्दा न करना।** व्याख्यान समाप्त होनेपर प्रधानने विवेचन किया और स्वर्गवासी जेठा भाईके पिता आजकी सभामें उपस्थित थे उन्हें धन्यवाद दिया गया.

व्याख्यान १५ वाँ.

स्वामीजीका तीसरा व्याख्यान "ईश्वरावतार"

ता. १८-१२-१९०२.

प्रारम्भमें समाजके प्रमुख मि. जगजीवनदासकी प्रार्थनासे वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविंदजीने कुछ विवेचन किया। उन्होंने कहा कि मुम्बईमें अनेक प्रकारके उपदेशक अन्यान्य कारणोंसे आकर अज्ञान लोगोंको बहकाते हैं और इस लिये शोक प्रदर्शित किया प्रमुख स्थान वेद प्रचारिणी सभाके पंडित श्रीमान् बालकृष्णजीको दिया था। स्वामीजीने अपना व्याख्यान प्रारंभ करते कहा कि, मुझे अवतारसे वा आर्यसमाजसे द्वेष नहीं है। आर्यसमाज जो सिद्धान्त मानता है वह केवल स्वार्थ-के लिये नहीं, परन्तु परोपकारके लिये मानता है। जो कोई आर्यसमाजी बनता है, उसको अरथोडाक्स गाली देते हैं। समाजके सभासद् होनेसे उसको अनेक कष्ट झेलने पडते हैं परन्तु सत्यका माहात्म्य विलक्षण है। जो निरपराधी हैं उसको सैकडो मनुष्य अपराधी कहनेपर वे डरते नहीं हैं। और जो वास्तविक अपराधी है यदि उसे सैकडों मनुष्य निरपराधी भी कहें परन्तु उसका अन्तःकरण नहीं मानता। तारीफ या निन्दासे, थरमामेटरका पारा जैसे जाडा या गर्मीसे उपर नीचे जाता है आर्यसमाजि-योंको भी उसी तरह उत्साह रहित न होना चाहिये। सत्यका प्रचार करते समय अख-बारवाले वा लोग कुछभी कहें उनकी परवा न करके अपना काम करते रहना चा-हिये। अन्तमें सत्यकी जय होगी। राम या कृष्णके साथ मुझे द्वेष नहीं है; प्रत्युत उन्हें मैं आदरकी दृष्टिसे देखता हूं और राम या कृष्णको खुद ईश्वर माननेवालोंकी अपेक्षा मैं कृष्णको अनेक सद्गुणयुक्त मानता हूं।

इस संसारकी उत्पत्ति स्थिति और प्रलयकी कर्त्री जो महती शक्ति है वह परमात्मा है। उसका प्रत्यक्ष ज्ञानयोगियोंको ही होता है और लौकिक विद्वानोंको उसका अ-नुमानसे ज्ञान होता है। शास्त्राभ्यास करनेवालोंको उसका शाब्दिक ज्ञान होता है।

वर्तमान समयमें जो ईश्वर प्राप्त करनेके साधन दिखलाये जाते हैं वे वेदवेदांतसे विरुद्ध हैं। वर्तमान समय में मूर्तिपूजा ईश्वर प्राप्तिका प्रथम साधन माना जाता है और मुझे मूर्तियोंके साथ कुछ राग द्वेष नहीं है। क्योंकि मूर्तियोंने आज तक मेरा कुछ भी बिगाड नहीं किया है। आर्यसमाज मूर्तिपूजाका खण्डन करता है, इसकारण उससे कई लोग दूर रहते हैं। वस्तुतः मूर्तिपूजाका खंडन आर्य समाज नहीं परन्तु मूर्तिपूजक स्वयं ही करते हैं। दिवालीके दिनोंमें मूर्तिको स्वच्छ करनेके लिये खटाई इत्यादिसे रगड२ कर साफ करते हैं और ऐसा करते समय मूर्ति टूटभी जाती है। आर्यसमाजी मूर्तिको छूते तक नहीं तो फिर वे खंडन करते हैं ऐसा क्यों कहा जाय? आर्यसमाजियोंने कभी एकभी मूर्ति तोडी नहीं है; मूर्तिका वास्तविक खंडन तो उसके पूजारी ही करते हैं। ईश्वर प्राप्त करनेका साधन मूर्तिपूजा नहीं किन्तु ज्ञान और श्रवण है। वेदमें ईश्वरको नित्य, अजन्मा और अनामय कहा है। स्वामीजीने यहां अनेक प्रमाण वेदके दिये थे और ईश्वरका अवतार हो नहीं सकता ऐसा सिद्ध किया था। ब्रह्मकी सर्व-व्यापकताके लिये एकही उपमा है और वह आकाश है। अब जो पोलमें आ-काश है वह क्या यहांसे दूर जा सकेगा? वेदपर सबसे अधिक आक्षेप करनेवाले जैन हैं। वे कहते हैं कि, जब तुम ईश्वरको सर्वव्यापक मानते हो तो वह हलचल सकता है वा नहीं? यदि नहीं चल सकता तो क्रिया कैसे कर सकता होगा। मैं उनको उत्तर दूंगा कि वस्तुतः ईश्वरमें क्रिया नहीं है; परन्तु जैसे आकर्षण शक्ति अपने निजरूपमें रहते हुएभी असर करती है, उसी तरहसे ईश्वरभी असर कर्ता है। विष्णुके चार हाथ हैं वे वैकुंठमें रहते हैं। उनकी स्त्रीका नाम लक्ष्मी है तथा जय और विजय नामके द्वारपाल हैं। यह सब पौराणिक बातें आप सब जानते हो, इस-लिये कहनेकी जरूरत नहीं है। यदि अमेरिकामें मैं व्याख्यान देता तो मुझे ये बातें विस्तारसे कहनी पडतीं। ऐसा कहनेका भावार्थ यह है कि अवतार मान-नेवाले भगवान्को एक स्थानमें बैठा हुआ मानते हैं। अवतार शब्द "तृ" धातुसे निकला है और अव उपसर्गसे उसका अर्थ उतरनेवाला होता है। अब जो ईश्वरको सर्वव्यापक मानते हैं वे उसको ऊपरसे उतरकर देवकीके गर्भमें गया ऐसा कभी नहीं मानेंगे। क्योंकि उतर वही सकता है, जो नीचेको न हो। चारों वेदोंमें अवतार शब्दतक नहीं है।

मैंनें चारों वेद ध्यान से देखे हैं; उन में ईश्वरके अवतारोंके लिये एक शब्द भी नहीं है। ज्यादह क्या कहा जाय? कई हिन्दू कहते हैं कि तुम स्त्रीको ग्यारह पति

करनेके लिये कहते हो परन्तु यह हमारा कथन नहीं है । पुराणमें विद्या देवीने २१ वार पुनर्लग्न किया ऐसा लिखा है । युधिष्ठिरने अनेक पति होनेके दृष्टांत द्रुपद राजा को सुनाये थे । द्रौपदीके पांच पति थे । तब शास्त्रोंको छिपाकर आर्य समाजको नि-योगके असत्य अर्थ करनेवाला कहना क्या दुष्ट कर्म नहीं है ? पुराणमें एक कथा है कि पृथ्वीपर राक्षसोंने देवोंको अति कष्ट दिया जिससे वे विष्णुके पास गये और पृथ्वीने गौका रूप धारण किया । उसकी प्रार्थना सुन विष्णुने अपनी मूंछके दो बाल दिये जिनमें एक काला था और दूसरा श्वेत । काला बाल देवकीके गर्भमें गया और उससे कृष्ण उत्पन्न हुए और श्वेत बालसे बलभद्र हुए । यही बात अनेक पुराणोंमें है । उनमें कहा है कि, कृष्ण विष्णुकी मूंछके काले बालका अवतार है । परन्तु पीछेसे उसे चंद्रकी सोलह कलाका अवतार कहा है । यह आपसमें कैसा विरोध है! भागवतकी योग्यता इससे जाती रहती है । कई अवतारको गवर्नर जनरलकी उपमा देते हुए कहते हैं कि, जैसे गवर्नर जनरल जेलमें जाता है और कैदी भी जेलमें जाते हैं वैसे ईश्वर भी तब स्वेच्छासे कैदीकी भलाईके लिये कारागृहमें जाता है जब कि जीव देहरूपी बन्धनसे मुक्त नहीं हो सकता, अब जन्मकी थ्यूरीमें हिन्दु क्या मानते हैं । कर्मके अनुसार उत्तम और निकृष्ट शरीर न्यायी ईश्वर देता है । वेदांत का ऐसा अपूर्व दृढ सिद्धांत है कि कर्मके बिना जन्म होता ही नहीं । तब ईश्वरने क्या कर्म किया कि उसको जन्म धारण करनेकी जरूरत हुई । अपने कर्मसे जो करागृहमें पडता है वह अपनी इच्छासे बाहर नहीं निकल सकता । राम स्वयं ही अपने कर्मके लिये क्या कहते हैं । स्वामीजीने रामायणके श्लोकोंके अर्थ दिखलाके कहा कि जब लंकामें लक्ष्मण मूर्छित हुए और हनुमान् ओषधी लेने गये थे, उस समय श्रीरामचंद्रजी अपने मूर्छित भ्राताका शरीर गोदमें लेकर विलाप करते हुए कहते हैं कि हे देव ? मैनें पूर्व जन्ममें बहुत अपराध किये हैं, जिससे ऐसे दुःख उठाने पडते हैं इत्यादि । यह बात वाल्मिकिने लिखी है । उत्तर हिंदुस्थानमें तुलसी कृत रामायणका प्रचार अधिक है और कईयोंका पांडित्य उसमें ही समाप्त हो जाता है । उसमें भी राम कहते है कि मेरे कर्मोंका फल कोई भी मिथ्या नहीं कर सकता । इससे सिद्ध होता है कि गवर्नर जनरल स्वेच्छासे जेलमें जाते हैं । रामादि स्वेच्छासे देहरूपी बंधनमें नहीं गये थे । परन्तु जो कैदीकी तरह कारागृहमें जाते हैं, कैदीके कपडे पहिनते हैं और कामभी करते हैं । राम और कृष्णने भी दुनियामें जन्म पाकर कैदी रूप मनुष्यकी तरह बर्ताव किया है । तो फिर उनको गवर्नर जनरलकी उपमा देना मिथ्या है । क्या गवर्नर जनरल कैदीके कपडे पहिनते हैं? क्या कैदीका काम करते हैं ?

इससे सिद्ध होता है कि, यह दृष्टांत भ्रमयुक्त है अतएव धोखा देनेवाला है। यह संसार बन्धन है ऐसा कहना भी उतना ही हानि कारक है।

वैष्णव भक्त कहते हैं कि वेदोंसे गीता श्रेष्ठ है; परन्तु स्वयं शंकर और कृष्णभी वेदको श्रेष्ठ समझते हैं। अब गीता और वेदमें विरोध हो तो गीताका प्रमाण असत्य और वेदका सत्यही मानना पड़ेगा। गीतामें सब मन्तव्य हैं। रामानुज, वैष्णव, शैव, द्वैत, अद्वैत, भक्ति, ज्ञान सबका उसमें थोडा २ प्रतिपादन है। गीता एक खिचडी है। एक समय एक गवैया मूसल कपडेमें लपेट एक राजाके पास गया। और कपडेमें छिपाया हुआ मूसल दिखाकर कहने लगा कि यह संयुक्त बाजा है। यह अन्यान्य प्रकारके बाजोंके साथही बजता है। राजाने गवैयोंको बुलाया, तब वह नया गवैयाभी मूसलको अंगुलियों लगाकर बजाता हो ऐसा स्वांग करने लगा। राजाने कहा अब उसको बजाने दो। तब गवैयाने कहा कि यह तो संयुक्त बाजा है; अकेला नहीं बजेगा। यह साथही बजता है। चाहे आप बजा देखें। इसी तरहसे गीताकाभी है। गीताका प्रमाण स्वयं कुछ प्रतिपादन नहीं करता, परन्तु दूसरेके साथ जैसा चाहो वैसा बजा लो। मैं इसमें गीताका कोई दोष है ऐसा मैं नहीं कहता; परन्तु वह स्वतः-प्रमाण नहीं मानी जाती। "यदा यदा हि धर्मस्य इत्यादि जो श्लोक हैं, वह वेदांत-दृष्टिसे ठीक हैं। वेदांतके अनुसार सब पदार्थ ब्रह्म हैं। तो पीछे कृष्णने क्या पाप किया कि वह ब्रह्म नहीं? इस श्लोकका ऐसा अर्थ होता है कि, कृष्ण मुक्तात्मा योगी होनेसे अपनी इच्छाके अनुसार जन्म पानेको कहते हैं। मुक्तात्मा योगी ईश्वर-की ओरसे ईश्वरकी तरहही उपदेश कर सकते हैं ऐसाभी कह सकते हैं परंतु कृष्ण स्वयं अपने आपको इश्वर कहें, ऐसे अज्ञानी हों यह असम्भव है। फिर ईश्वरके २४ अवतार कहे हैं! क्या वे सब भारतमेंही हुए? अन्य देशोंमें अवतार क्यों न हुए? उन देशोंने क्या पाप किये भारतमें प्राचीन समयमें अवतार हुए; अब क्यों नहीं होते हैं? जब अधर्म बहुत होता है तब धर्मका स्थापन करनेके लिये अवतार होते हैं ऐसा कहा जाता है। वर्तमान समयमें युधिष्ठिर इत्यादिके समयसे दुःख अधिक है। एक गायभी मरती न थी तोभी उस समय अनेक अवतार हुए और वर्तमान समयमें जबकी लाखों गायें मारी जाती हैं तब ईश्वर अवतार क्यों नहीं लेता? भागवत-कर्ताने ईश्वरके कृष्णावतारपर अनेक कलंक लगाए हैं। उसने मक्खनकी चोरी की ऐसा कहकर फिर उसको महात्मा कहना यह ऐसा है कि मानो हमारे गुरु थोडी शराब पीते हैं ऐसा कबूल करना और कहना कि वे एक बोटल पीते हैं परन्तु नशा

नहीं चढता । ऐसी दलील देकर फिर उसे महात्मा कहने समान है । कृष्णपर महाभारतमें दोषारोपण किया है । मृत्यु वश पडे हुए दुर्योधनको मरा हुआ जानकर कृष्णने उसपर पैर रख " दुष्ट मर गया है ऐसा कहकर जाते हैं । उतनेमें दुर्योधन सचेत होकर कहता है मैं दुष्ट हूं वा तू दुष्ट है यह सुन " ऐसा कहकर कृष्णकी दुष्टता सुनाता है । यह सुनकर कृष्ण लज्जित हुए और दुर्योधन पर देवोंने पुष्प वृष्टिकी । महाभारतमें कृष्णके ऊपर थोडे बहुत सच्चे झूठे दोष लगाये हैं परन्तु भागवतकर्तानि कुछ भी कमी नहीं रक्खी । रामचंद्रके ऊपर दो तीन कलंक हैं। मेरे मन्तव्यानुसार कृष्ण और रामचंद्रकी अपेक्षा भरत अधिक धार्मिक थे । क्योंकि उनपर किसीने कलंक नहीं लगाया ।

मेरा अपना विचार ऐसा है कि कृष्ण महात्मा प्रथम श्रेणीके राजद्वारी (डेप्लोमॅटीस्ट) थे और वे ग्लेडस्टन और प्रिन्सबिस्मार्कको अपने पॉकेटमें रक्खें ऐसे थे । परन्तु उनमें राजद्वारी ही कुशलता केवल नथी वे विद्वान्भी ऐसेही थे । वे वास्तविक श्रेष्ठ थे । वे अर्जुनको कहते हैं कि, जिस तरहसे मैं करता हूं, उसी तरहसे अन्य भी करें इसलिये मुझे सच्चा वर्ताव करना चाहिये । कृष्णके ही युक्त कथनोंसे सिद्ध होता है । कि वे रासलीला तथा गोपलीला जैसी क्रिया करनेवाले नहीं थे वे योगी थे । जो रसिक हैं और व्यभिचार को चाहते हैं उन्होंने कृष्णके ऊपर आक्षेप रक्खे हैं । जो शराब पीना चाहते हैं वे देवीके नामसे पीते हैं । यह एक शराब पीनेकी और देवोंके नामसे अपने आपको निर्दोष ठहरानेकी दुष्ट युक्ति है । कृष्णके ईश्वर होनेसे उन्हें अनेक स्त्री भोक्तृत्व दोष नहीं लगाता है । ऐसा कहना बुद्धिमान् योग्य नहीं समझेंगे । यदि माना जाय कि योग्य है । तोभी उससे वे अपराधी हुए । कृष्ण राम इत्यादि महात्मा थे । उनको ईश्वर माननेवाले ईश्वरके गुण जानते नहीं हैं । यदि रामने रावणको ही मारनेके लिये अवतार लिया हो तो रावणको मारकर फिर क्यों रहे ? रावणको मारनेके लिये जन्म धारण की क्या आवश्यकता थी ? क्या वे रावणमें व्यापक न थे ? क्या रावणको एक क्षणमें मारनेकी उनमें शक्ति नथी ? अवतारके नामसे उनपर अनेक दोष लगाये गये हैं । पुराणोंमें अवतारोंकी विचित्र बातोंका वर्णन बहुत है । समय हो गया है इसलिये मैं अन्तमें यही कहूंगा । कि ईश्वर शरीररहित निराकार, सर्वव्यापक, नित्य, सर्व शक्तिमान् और अजन्मा है । उसने मनुष्य, पशु, मछली इत्यादिका अवतार लिया ऐसा कहना उस परमात्माके

महान् गुणोंको भूल जाना है । प्रत्यक्ष युक्ति और प्रमाणसे विरुद्ध हैं। इसलिये मैं आशा करता हूं कि आप किसी मनुष्यको ईश्वरके बदलेमें न पूजेंगे और उस निराकार परमात्माकोही ज्ञानपूर्वक भक्तिसे पूजोगे ।

अन्तमें प्रधानका आभार मानके सभा विसर्जित हुई ।

व्याख्यान १६ वा।

मूर्तिपूजा वैदिक तथा युक्तिसिद्ध नहीं है ।

स्वामी श्री नित्यानंदजीने इस विषयपर एक प्रभावशाली तथा प्रमाणोंसे भरा-हुआ व्याख्यान ता. २१-१-५ शनिवारके दिन दिया था । उस समय प्रमुखका स्थान जस्टिस चन्दावरकरको दिया गया था श्रोताओंसे हाल बिल्कुल भरा हुआ था आरम्भमें स्वामीजीने कहा मेरा आजका विषय आप लोगोंको विज्ञापन द्वारा जतला दिया गया है । इस विषयपर कुछ कहनेसे पहिले "मनुष्य किसको कहते हैं" सो हमको जानना चाहिये "मत्वाकर्माणि करोति इति मनुष्यः" विचार करके बुद्धि-पूर्वक जो कार्य करे उसको मनुष्य कहते हैं । इस व्याख्याके अनुसार प्रत्येक मनुष्य-को धर्मके कार्योंमें शांति तथा बुद्धिपूर्वक हरेक विषयपर ध्यान देना चाहिये । परन्तु लोग इस विषयमें आजकल जितनी गडबड करते हैं उतनी किसी साधारण विषयमें भी नहीं करते । "जानस्टुअर्टमिल" चार प्रकारके मनुष्य बतलाते हैं (१) अपने मंतव्य विरुद्ध कोई कुछ कहे तो उसको तुरन्त मारनेके लिये खडे होनेवाले । (२) अपने मन्तव्य विरुद्ध कुछ सुनकर भागनेवाले । (३) अपने मन्तव्य विरुद्ध सुनकर वादविवाद करनेके लिये खड़े होनेवाले (४) अपने मन्तव्य विरुद्ध सुनकर शांति पूर्वक उसपर विचार करनेवाले । इनमेंसे चतुर्थ पंक्तिके मनुष्य श्रेष्ठ कहलाते हैं। इसलिये मैं आपसे विनंती करता हूं कि, आजका विषय आप लोग रागद्वेष छोड़-कर सुनें क्योंकि जहां रागद्वेष तथा आग्रह रहते हैं वहांसे धर्म हजारों कोस दूर रहता है । इसलिये यदि जो कुछ अपनेको ठीक न जान पडे तो प्रमुखकी आज्ञानुसार निर्भय होकर बोलना चाहिये । मुझे शोकके साथ कहना पड़ता है कि यह विषय ऐसा है कि, इसका जैसा जंगली मसला और कोई न होगा । क्योंकि हमारे पूर्वजों-को यह ख्याल न था कि, भविष्यत्में हमारी संतति ऐसी गंवार होगी कि ईश्वरके स्थानमें

पत्थर, घास आदि पदार्थोंको पूजने लगेगी। यदि आप वेद तथा उपनिषदादि सत्य शास्त्रोंको पढ़ें तो मालूम होगा कि कहां तो पूर्वजोंका निराकार ब्रह्मका ज्ञान और कहां मूर्तिपूजा ?

इस विषयको समझानेके लिये मैं आपको एक दृष्टान्त दूंगा। एक पत्थर लेकर उसके टुकडे करो। एक टुकड़ेका फूल बनाओ। दूसरेका चूहा। और तीसरेकी गाय बनाओ। पत्थरके फूलके पास एक सच्चा फूल रक्खो। और फिर देखो कि उड़ता हुआ भ्रमर आकर सच्चे फूलपर बैठता है वा पत्थरके फूलपर ! मैं निश्चय करके कहता हूं कि वह सच्चे फूलपरही, आकर बैठेगा। वैसेही बिल्ली सच्चे चूहेपर झपटे मारेगी और पत्थरकी गायभी दूध न देगी। यद्यपि ये पदार्थ हमलोगोंके रोजके देखे हुए हैं और ये बनावटमेंभी उनके जैसे बनी हैं तोभी वे सच्चे पदार्थों जैसे हमारा काम नहीं देते तथा पशु आदिकोभी सच्ची वस्तुको पहचान लेनेकी तथा उसपर बैठने और उससे उपयोग लेनेकी बुद्धि होती है। हमलोगोंकी बुद्धि ऐसी मारी गई है कि सत्य क्या है तथा असत्य क्या है। सोभी हमको मालूम नहीं होता है। वास्तवमें मेरा आक्षेप उनपर नहीं है कि, जिनको सत्यासत्यका ज्ञान नहीं है परन्तु आक्षेप उनपर है कि जो जानते हैं कि सत्य क्या है और असत्य क्या है तो भी अपने आत्माके विरुद्ध बर्ताव करते हैं। उनको मैं तो क्या परन्तु हमारे पूर्वजभी आत्महत्यारे कह गये हैं। जब ऊपर कहे पत्थरके पदार्थ सच्चे पदार्थोंकी तरह हमारा काम नहीं देते हैं तो ईश्वरकी मूर्ति तो किस प्रकार हमको लाभ पहुंचा सकती हैं !

अब हम बिचार करेंगे कि ईश्वरकी मूर्ति हो सकती है या नहीं। कोई फोटोग्राफर कहे कि मुझे हवाका फोटो लेना है अथवा मनका फोटो लेना है तो वह कदापि नहीं ले सकता है। तो जिस चीजकी मूर्ति हम बनाना चाहते हैं तो हमको जानना चाहिये कि वह वस्तु क्या है तथा हमारे पूर्वज भी वेदादि सत्यशास्त्रोंके समयसे महाभारत तथा तत्पश्चात् श्रीमच्छंकराचार्यके समयतक कैसी मानते थे। और उसके पीछे लोग कैसी मानने लगे। यह देखना उचित है। ईश्वरके विषयमें आजकल चार मत हैं। (१) साकारवाद (२) निराकारवाद (३) साकार निराकार (४) निराकार है परन्तु साकार होजाता है। परन्तु अब देखना चाहिए कि इस विषयमें वेद, उपनिषद शास्त्र और युक्ति क्या कहते हैं। वेद और उपनिषदोंमें दो प्रकारके मन्त्र हैं एकतो साकार समझानेवाले दूसरे निराकार समझानेवाले। यह मत कितनेही आदमियोंका है जैसे "सहस्रशीर्षा" इत्यादि उस पुरुषके सहस्र सिर हैं। सहस्र

आंखें तथा सहस्र पग है । और वह परमेश्वर भूमि तथा सब ब्रह्माण्डको व्याप्त करके दश अंगुल (संख्याको) भी उलंघन करके वर्त्तमान है । परन्तु ऐसा अर्थ करनेवालेंसे पुंछना चाहिये कि जो ईश्वरके हजार शिर हों तो दो हजार आंखें होनी चाहिये । और पग हाथभी दो दो हजार होने चाहिए । और आगेका आधा मन्त्र कहता है कि वह परमात्मा सब जगह व्यापक है । अब विचारनेका स्थान है कि जो ईश्वरको हजार शिरवाला साकार मानें तो जहां शिर होंगे वहां पैर न होंगे जहां पैर होंगे वहां हाथ न होंगे तो सर्व व्यापक न रह सकेगा । इस मन्त्रका अर्थ प्राचीन भाष्यकार महीधर जिसको सनातनी लोग प्रमाण मानते हैं इस प्रकार करते हैं:—

सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमि ँ सर्वतः स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ १ ॥

य. ३१ मं. १.

महीधरभाष्यम् ।

अव्यक्तमहदादिविलक्षणश्चेतनो यः पुरुषः पुरुषान्नपरं किञ्चिदित्यादि श्रुतिषु प्रसिद्धः सर्वप्राणिसमष्टिरूपो ब्रह्माण्डदेहो विराजाख्योऽस्ति। कीदृशः; सहस्रशीर्षा, सहस्रशब्दो बहुत्ववाची । संख्यावाचकत्वे सहस्राक्ष इति विरोधः स्यान्नेत्रसहस्रद्वयेन च भाव्यम् । ततः सहस्रमसंख्यानि शीर्षाणि शिरांसि यस्य सः शिरोग्रहणं सर्वावयवोपलक्षणम्। यानि प्राणिनां शिरांसि तानि सर्वाणि तद्देहान्तः पातित्वात् तस्यैवैतिसहस्रशीर्षत्वम्। एवमग्रेपि । सहस्राक्षः सहस्रमक्षीणि यस्य सः । अक्षिग्रहणं सर्वज्ञानेन्द्रियोपलक्षकम् । सहस्रपात्। सहस्रं पादा यस्य सः । पादग्रहणं सर्वकर्मेन्द्रियोपलक्षकम्। सः, पुरुषो भूमिं ब्रह्माण्डलोकरूपां सर्वतः तिर्यकूऊर्ध्वमधश्च स्पृत्वा व्याप्य दशांगुलपरिमितं देशमध्यतिष्ठत् अतिक्रम्यावस्थितः। दाशांगुलमित्युपलक्षणं ब्रह्माण्डाद्बहिरपि सर्वतोव्याप्यावस्थित इत्यर्थः । इत्यादि—

भावार्थः–अव्यक्त महत् आदि विलक्षण विशेषणोंसे युक्त जो चेतन पुरुष है उससे परे कुछ नहीं है यह श्रुतिमें प्रसिद्ध है । ऐसा पुरुष जो सब प्राणियोंके समष्टिरूप ब्रह्माण्ड देहवाला है, उसको विराट् कहते हैं । उसीका वर्णन इस सूक्तमें है । उस पुरुषको सहस्रशीर्षा कहते हैं । इस जगह सहस्र शब्द बहुत्ववाचक है, जो संख्यावाचक लेवें तो आगे सहस्राक्ष शब्द आया है, इससे मंत्रमें वदतोव्याघात (परस्पर विरुद्ध) दोष आता है । क्योंकि जो हजार शिर हों तो दो हजार आंखें होनी

चाहिये इसलिये जिसमें सब प्राणियोंके शिर रहते हों वही सहस्रशीर्षा । सब प्राणिमात्र उससे व्याप्य रूप सम्बन्ध रखते हैं । इसलिये उनके अनेक शिर उसीके शिरोंके समान वर्णन किये गये हैं। इसी प्रकार आगेके सहस्राक्षादि शब्दोंके विषयमेंभी समझना चाहिये। (सहस्राक्षः) जिसके अनेक आंखें हों, आंखके ग्रहणसे सब इन्द्रियोंका ग्रहण होता है । (सहस्रपात्) जिसके असंख्य पैर हैं पात् ग्रहण करनेसे गति (*mobion*) का ग्रहण होता है । वह पुरुष (पुरि—संसारे शेते इति पुरुषः) (परमात्मा) ब्रह्माण्ड-में सब जगह ऊपर नीचे आदि चारों तरफ व्याप्त होकर दशांगुल परिमित देशको भी उल्लंघन किये हुए है अर्थात् ब्रह्माण्डके बाहर भीतर सब जगह व्यापक है । इसी प्रकार पुरुषसूक्तके तीसरे मन्त्रमें भी पादशब्द आया है । पाद् शब्द आनेसे स्वार्थी लोग बिचारे भोले लोगोंको उलटा सीधा समझाते हैं । यथाः—

एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ २ ॥

यजुः अ० ३१ मं० ३.

महीधरभाष्यम् ।

अतीतानागतवर्तमानकालसम्बद्धं जगद्यावदस्ति एतावान् सर्वोपि अस्य पुरुषस्य महिमा स्वकीयसामर्थ्य विशेषो विभूतिः न तु वास्तवं स्वरूपम् । वास्तवपुरुषस्तु अतः अस्मात् महिम्नः जगज्जालात् ज्यायांश्च अतिशयेनाधिकः एतदुभयं स्पष्टीक्रियते । अस्य पुरुषस्य विश्वा सर्वाणि भूतानि कालत्रयवर्तीनि प्राणिजातानि पादश्चतुर्थांशः अस्य पुरुष-स्यावशिष्टं त्रिपात् स्वरूपम् अमृतं विनाशरहितं तत् दिवि द्योतनात्मके स्वप्रकाशे स्वरूपे-ऽवतिष्ठत इति शेषः । यद्यपि सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्मेत्याम्नानात् तस्य परब्रह्मणः इयत्ताया—अभावात् पादचतुष्टयं निरूपयितुमशक्यम् तथापि जगदिदं ब्रह्मरूपापेक्षयाल्पमिति विव-क्षितत्वात् पादोपन्यासः ।

भावार्थः-यह जो पूर्व मन्त्रमें कहा है सो सब परमात्माकी महिमा है । परन्तु उसका वास्तविक स्वरूप तो इससेभी महान् है । आगे इसका स्पष्टीकरण है कि यह त्रिकालाबाधित जगत् तो इस परमपुरुषका चतुर्थांश मात्र है । इस पुरुषके बाकी तीन पाद उसीके रूपमें हैं । यद्यपि सत्यज्ञानमय तथा अनन्तश्रुतिप्रतिपादित ब्रह्मकी इयत्ता—हद—नहीं बांधी न जासकती इसलिये पादचतुष्टयका निरूपण करना अशक्य है । तो भी यह जगत् ब्रह्मकी अपेक्षासे अल्प है । ऐसा कहनेकी इच्छासे पादका अलंकाररूपसे वर्णन किया है ।

जब परमात्मा पृथिवी आदि तत्त्वोंसेभी परे तथा व्यापक है तो फिर साकार कैसे हो सकता है जब सनातनधर्मवालोंके नाममात्र भाष्यकार ईश्वरको साफ शब्दोंमें निराकार ठहराते हैं तो आधुनिक पोथाधारी उसको तोड़ मरोड़कर साकार ठहरानेका यत्न करते हैं। यह भी एक जमानेकी खूबी है। ये लोग ऐसाभी मानते हैं कि वेद ईश्वरने रचे हैं तो क्या ईश्वर ऐसा मूर्ख था कि एक जगह अपने आपको साकार कहे और दूसरी जगह निराकार कहे! यह तो प्रमत्तगीत हुआ। सनातनधर्मी ईश्वर-कोभी "अपने समान" बनाना चाहते हैं। एक दूसरा मन्त्र यजुर्वेदके ४० वें अ-ध्यायमें आया है उसका प्रमाण देकर ये लोग ईश्वरका शरीर ठहराना चाहते हैं। वह मन्त्र यह है:—

सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधा-
च्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥ ३ ॥

ई० प०—८. शङ्करभाष्यम् ।

योऽयमतीतैर्मन्त्रैरुक्त आत्मा स स्वेन रूपेण किंलक्षण इत्याहायं मन्त्रः । सपर्यगात् स यथोक्त आत्मा पर्यगात् परिसमन्तादगाद्गतवानाकाशवद्व्यापीत्यर्थः। शुक्रम् शुद्धम् ज्यो-तिष्मद्दीप्तिमान् इत्यर्थः । अकायमशरीरो लिङ्गशरीरवर्जित इत्यर्थः । अव्रणं अक्षतं । अस्नाविरं स्नावा शिरा यस्मिन्न विद्यन्त इत्यस्नाविरम् । अव्रणमस्नाविरमित्याभ्यां स्थूल-शरीरप्रतिषेधः शुद्धं निर्मलम् विद्यामलरहितामिति कारणशरी प्रतिषेधः । अपापविद्धं धर्माधर्मादिपापवर्जितम् शुक्रमित्यादीनि वचांसि पुलिङ्गत्वेन परिणेयानि ।

यह भाष्य पूनेकी आनन्दाश्रम ग्रन्थमालामें छपी ईशोपनिषद्के शंकर भाष्यमेंसे लिया है।

भावार्थः—पहिलेके मन्त्रोंमें जो आत्माका वर्णन किया है वह कैसा है सो इस मन्त्रमें दिखाया है। यथोक्त आत्मा सर्वव्यापक है। शुद्ध अर्थात् ज्योतिष्मान् अथवा दीप्तिमान् स्वयंप्रकाश है। अकायम् अर्थात् शरीररहित है। आचार्य अकाय शब्दसे लिंग शरीरका प्रतिषेध करते हैं। अव्रण अर्थात् शरीरके सब छिद्रोंसे रहित तथा नाड़ी नसके बन्धनमें न आनेवाला—अव्रण तथा अस्नाविर इन दो शब्दोंसे स्थूल शरीरका प्रतिषेध किया है। शुद्ध अर्थात् अविद्यादि दोषोंसे रहित है। शुद्ध शब्दसे कारण शरीरका प्रतिषेध किया है। वह परमात्मा पाप अर्थात् धर्म और अध-र्मादिसे पापोंसे रहित है। इत्यादि इस प्रकार अर्थ करके जब भगवान् शंकर

उवटाचार्य, ब्रह्मानन्द सरस्वती, शंकरानन्द, पण्डित रामचन्द्र आनन्द भट्टोपाध्याय तथा अनन्ताचार्य ये टीकाकार ईश्वरके तीनों प्रकारके शरीरोंका निषेध करते हैं। तो हमारे सनातनियोंको न जाने क्यों भ्रम हुआ जो मानने लगे कि ईश्वरका शरीर अलौकिक है। व्यासजीके वेदान्त सूत्रपर शंकराचार्यजी लिखते हैं कि:—

करणवच्चेन्न भोगादिभ्यः।

वे० सू० अध्याय २, पाद २, सू० ४०.

शंकरभाष्यम्।

अथ लोकदर्शनानुसारेणेश्वरस्यापि किंचित् करणानामायतनं शरीरं कामेन कल्प्येत, एवमपि नोपपद्यते। स शरीरत्वे हि सति संसारिवद्भोगादि प्रसंगादीश्वरस्याप्यनीश्वरत्वं प्रसज्येत॥

भावार्थः—लोगोंकी तरह ईश्वरका शरीर बनावें तो वहभी नहीं बन सकता है क्योंकि जो ईश्वरका शरीर मानें तो भूख प्यासादि लगेंगे इससे उसका ईश्वरत्वही नहीं रहेगा। इसलिये उस परमात्माका शरीर नहीं होता है।

न स्थानतोऽपि परस्योभयलिंगं सर्वत्र हि॥

वे० सू० अ० ३ पा० २ सू० ११.

शंकरभाष्यम्।

तत्रोभयलिंगश्रुत्यनुग्रहात् उभयलिंगमेव ब्रह्मेत्येवं प्राप्ते ब्रूमः। न तावत् स्वत एव परस्य ब्रह्मणः उभयलिंगत्वमुपद्यते। नह्येकं वस्तु स्वत एव रूपादिविशेषोपेतं तद्विपरीतश्चेत्यवधारयितुं शक्यं विरोधात्।

भावार्थः—श्रुति ब्रह्मको साकार निराकार रूपसे वर्णन करती है। इसलिये कोई कहे कि परमात्मा दोनों प्रकारका हो सकता है तो इसका जबाब यह है कि परब्रह्मका अपना या इस प्रकारका दोनों प्रकारका रूप नहीं हो सकता है क्योंकि एक वस्तु अपने विशेषरूपसे जुदे प्रकारके विरुद्ध गुण होनेके कारण दो प्रकारकी नहीं हो सकती है। जैसी गति है। वैसी स्थिति नहीं है उजाला सो ही अन्धेरा नहीं है। शीतही उष्णता नहीं है। इसके ऊपर भगवान् शंकराचार्य कहते हैं, कि ईश्वरको साकार

मानकर उसकी मूर्ति बनाना सर्वथा वेदविरुद्ध है; इसी पादके चौदवें सूत्रके भाष्यमें शंकराचार्य साफ शब्दोंमें ईश्वरको निराकार ठहराते हैं।

अरूपवदेव हि तत्प्रधानत्वात्।

वे० सू० अ० पा० सू० १४.

शंकरभाष्यम्।

रूपाद्याकाररहितमेव हि ब्रह्मावधारयितव्यं। न रूपादिमत् कस्मात्तत् प्रधानत्वात्। अस्थूलमनण्वह्रस्वमदीर्घम्, अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं, दिव्योह्यमूर्तः पुरुषः स बाह्याभ्यन्तरो ह्यजः यस्मादेवं जातीयकेषु वाक्येषु यथाश्रुतं निराकारमेव ब्रह्मावधारयितव्यम्।

भावार्थः—रूपादि आकाररहित ब्रह्म है इस विषयमें श्रुतिके उदाहरण अस्थूलमनणुअह्रस्व आदि दिये हैं। अर्थात् वह ब्रह्म स्थूल नहीं है, अणु नहीं है छोटा बड़ा नहीं है, विना रूपनाशरहित दिव्य अमूर्तिमान् अज आदि विशेषण युक्त है, इसलिये ब्रह्म निराकारही है।

युक्तिसेभी ईश्वर साकार नहीं ठहरता है; क्योंकि दुनियामें छ वस्तुएं साकार हैं। जैसे पृथ्वी, जल, अग्नि, सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र। बाकी सब निराकार हैं। जो ईश्वर साकार होवे तो इन छमेंसे एकसे वह बना होना चाहिये। कितनेही लोग **अग्निर्मूर्द्धा दिवः** इस मंत्रसे बतलाते हैं कि अग्नि उसका शिर है सूर्य्य चन्द्र उसके नेत्र हैं—इसी वेदके पुरुषसूक्तमें लिखा है कि मनसे चन्द्रमाकी उत्पत्ति हुई है। परन्तु ये सब अलंकार हैं। जैसे नृसिंहके विषयमें लोगोंने अलंकार न समझकर ऐसी कल्पनाकी कि आधा मनुष्य और आधा सिंह और उसी प्रकार चित्रोंमेंभी इसका शरीर बनाने लगे। परन्तु सच पूछो तो उसका अर्थ यह है "सिंहके समान बलवान् पुरुष" यजुर्वेदमें कहा है "**विश्वतश्चक्षुरुत**" आदि य. अ. १७–१९ परमात्माके सब जगह नेत्र, कान, हाथ, पैर, मुख हैं। जो यह मंत्र साकार विषयका ही मानें तो सब जगह होनेसे एक जगह होनेका निषेध होगया। शतपथमें कहा है कि "**बाहुर्वै बलम्**" अर्थात् जहां २ "बाहु" शब्द आवे उंसका अर्थ बल समझना चाहिये। साकार माननेवालोंपर यह प्रश्न होता है कि जो सूर्य्य चन्द्रको नेत्र कहें, तो उसका शिर क्यों नहीं दिखाई देता? परन्तु जो लोग उसको व्यापक मानते हैं, उनके विषयमें यह दोष नहीं आता है।

अब परमात्माको कैसे जानना चाहिये इस विषयमें यजुर्वेदमें कहा है "**वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा**" इत्यादि य० अ० ३२ मं० ८.

महीधर भाष्यम्—वेनः पंडितो विदितवेदान्तरहस्यः तत् ब्रह्म पश्यत् पश्यति जानातीत्यर्थः । इत्यादि ।

उस ब्रह्मको "वेन" अर्थात् पंडित जिसने वेदादि सत्य शास्त्रोंका अर्थ जाना है वही जान सकता है । अर्थात् अज्ञानी जन नहीं जान सकते हैं । ईश्वरको साकार माननेसे उसकी व्यापकतामें भी दोष आता है, इससे वह सर्वज्ञ तथा सर्वान्तर्यामीभी नहीं रह सकता है । साकार पदार्थ हमेशा नाशवान् होता है । शास्त्रोंका यथावत् मर्म न जाननेसे लोग आजकल जैसे मनमें आता है खींचातान करते हैं ।

एक समय एक पंडितजी रसोई करते थे, उनके पास एक शिष्य बैठा था और वहां दहीभी रक्खा था । इतनेमें पंडितजी जरा पानी लेनेको गये और शिष्यको कह गये "कौवेसे दहीकी रक्षा करना" अर्थात् देखना कि कौवा दही खा न जावे । शिष्यने कहा कि अच्छा । पश्चात् कुत्ता आकर दही खा गया । गुरुजीने आकर पूछा कि दही कहां गया ? उसने कहा कि कुत्ता खा गया । गुरुजीने पूछा कि तूने रक्षा क्यों नहीं की ? शिष्यने कहा आपने तो कौवेसे रक्षा करनेको कहा था । इसी प्रकार पूर्वापर समझे बिना अर्थ करनेसेभी अनर्थ होता है । यह बात सत्य तथा धर्मानुकूल है । इसलिये कहता हूं । मुझे कुछ समाजका पक्ष अथवा सनातनधर्म सभाके साथ वैर नहीं है । क्योंकि समाज मुझे कुछ धन नहीं देता, वैसेही सनातन धर्म मंडल कुछ मेरी हानि नहीं करता है । परन्तु ऋषियोंके मतके अनुसार जो धर्म है वही मैं कहता हूं ।

साकार माननेवालोंमें परस्पर विरोध होता है ।

क्योंकि कोई कैसाही स्वरूप बनाता है कोई कैसाही । यह बात हम आजतक प्रत्यक्ष देखते हैं, कि शैव और वैष्णवोंमें कितना विरोध है । इनके शिव और विष्णु पुराणभी एक दूसरोंकी निन्दा करते हैं । जो ईश्वर साकारही हो तो उसके मातापिता कौन होंगे और उनके लियेभी यही प्रश्न होंगे, ऐसा होनेसे अनवस्था दोष आवेगा, इसलिये ईश्वर निराकार है । और उसीको मानना चाहिये, आजतक किसी जगह परब्रह्मकी मूर्ति देखनेमें नहीं आई, हां रामकृष्ण आदिकी तो अवश्य देखनेमें आती हैं । इत्यादि ऊपरके प्रमाणोंसे स्पष्ट मालूम होता है, कि ईश्वर निराकार है जो लोग मूर्तिकोही परब्रह्म मानते हैं वे तो अज्ञान ही हैं ।

कितनेही मनुष्य कहते हैं, कि पाषाणोंमें तो देव नहीं है, परन्तु भावनामें देव है। मैं कहता हूं, कि जो भावना फल देनेवाली हो तो पीतलमें सोनेकी भावना करो, और उसको सोनेके भावसे बेंचो, और फिर देखो क्या हाल होता है पूर्व मीमांसामें कहा है कि जो पदार्थ जैसा हो उसको वैसेही जानने तथा माननेको भावना कहते हैं, शायद कोई कहे कि और चीजोंके बारेमें ऐसा न हो परन्तु ईश्वर साकार है, इसलिये हमारी भावना फलीभूत होती है। कोई भक्त पंसारीके यहां मिश्री लेने गया पंसारीने भूलमें फटकरी दे दी व कहा कि लो ठाकुरजीके भोग लगा लो, पुजारीनेभी शुद्ध भावसे ठाकुरजीके भोग लगाया। फिर सब लोगोंको प्रसाद बांटा। सबके मुंह कडवे हो गये! मेरा कहना इतनाही है, कि जो भावना सचीहि होती तो उस पंसारी भक्त तथा पुजारीकी सच्ची भावना करके भोग लगानेपर सब प्रसाद पानेवालोंके दांत क्यों कडवे हो गये? इससे सिद्ध होता है, कि हमारी भावनासे वस्तुओंके गुणोंमें किसी तरहका फेर नहीं पढ़ सकता हैं, जैसे अन्धेरेमें पडी हुई रस्सीको सांप समझनेसे उसमें जहर नहीं व्याप्त होता है वैसेही जडको ब्रह्म समझनेसे जड पदार्थ ब्रह्म नहीं हो सकता। अब देखना चाहिये, कि वैदिक समयमें मूर्तिपूजाथी वा नहीं यज्ञयागादि जो होते थे उनके उपर बहुतसे ग्रन्थ बने हैं वेदोंमें एकभी ऐसा मंत्र नहीं है कि जिसमें पाषण, अथवा काष्ठ, वा ऐसेही, और किसी पदार्थकी मूर्ति बना कर पूजना कहा हो। भगवद्गीतामें ही कोई मुझे बतावे, तो मैं आजही आर्यसमाजका पक्ष छोड़कर सनातनमंडलका अनुगामी हो जाऊं कितनेही मनुष्य कहते हैं कि यदि परमात्मा निराकार हो, तो उसका ध्यान कैसे हो, इसलिये उसके ध्यानके लिये मूर्ति होनी चाहिये। इसके उत्तरमें इतनाही कहना है, कि ध्यानका और मूर्तिका कुछ सम्बन्ध ही नही हैं, क्योंकि ध्यानके लिये सांख्यमें कहा है—"ध्यानं निर्विषयं मनः" अर्थात् पांचों इन्द्रियोंका विषयोंसे अलग होनाही ध्यान है। मूर्तिको देखना यह चक्षु इंद्रियका विषय है। तथा कृष्णभी गीताके छठे अध्यायमें कहते हैं कि:—

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युंज्याद्योगमात्मविशुद्धये॥ १२॥

गीता अ० ६ श्लोक ११.

न बहुत ऊंचा न बहुत नीचा हो ऐसे आसनपर पहले कुश बिछावे पश्चात् मृग चर्म और ऊपर कपडा बिछा उसपर बैठकर चित्तवृत्तियोंको एकाग्र करके आत्म-शुद्धिके लिये परमात्मा (सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रह्म) का ध्यान करें। आजकल गीता बहुत माननीय समझी जाती है । उसमेंभी जब मूर्तिका विधान नहीं है, तो फिर यह सीढीका पहला डंडा कैसे हो सकता है ? कहींभी इस प्रकार ध्यान करनेका उपदेश नहीं है । साकारका न तो ध्यान होता है जैसे कि यह दीवाल है । इसको देखकर फिर आंखें बंद करके मनमें विचार करूं, कि मेरेपास दीवाल है, और मैं अपना हाथ हिलाऊं । तो क्या यह कल्पितकी दीवाल, मेरे हाथको रोक सकेगी ? क्या यह कोई कह सकता है कि भूख अथवा बुद्धि किस प्रकारकी है । और क्या कोई उनकी मूर्ति बना सकता है ? जब बुद्धि आदि नित्य काममें आनेवाली चीजोंकी मूर्ति नहीं बनाई जा सकती है तो फिर ईश्वरकी मूर्ति तो कैसे बन सकती है ?

वाल्मीकि रामायणमें रामचन्द्रकी मूर्तिपूजा करनेका कहींभी वर्णन नहीं आता है । हां ऐसा वर्णन तो है, कि दोनों काल सन्ध्या करते थे । कोई कहे कि मूर्तिपूजाको ज्ञानप्राप्तिका साधन माननेमें क्या हरज है ? तो इसका जबाब तो वेदोंहीमें दे दिया है कि:—

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्या ँ रताः ॥ ९ ॥

यजु० अ० ४०.

शाङ्करभाष्यम् । अधुना व्याकृताव्याकृतोपासनयोः समुच्चिचीषया प्रत्येकं निन्द्योच्यते । अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये असम्भूतिं सम्भवनं सम्भूतिः सा यस्य कार्यस्य सा सम्भूतिः तस्याः अन्या असम्भूतिः प्रकृतिः कारणमविद्या अव्याकृताख्या तामसम्भूतिमव्याकृताख्यां प्रकृतिं कारणम् अविद्यां कामकर्मबीजभूतामदर्शनात्मिकामुपासते, ते तदनुरूपमेवान्धं तमोऽदर्शनात्मकं प्रविशन्ति । ततस्तस्मादपि भूयो बहुतरमिव तमः प्रविशन्ति, य उ सभूत्यां कार्यब्रह्मणि हिरण्यगर्भाख्ये रताः ।

जो प्रकृति अर्थात् जगत्के जड कारणकी उपासना करते हैं, वे अज्ञानरूपी अन्धकारमें हैं । और ईश्वरके स्थानमें कार्य जगत्की उपासना करते हैं वे उससेभी विशेष अन्धकारमें हैं और जड़ हैं । यजुर्वेदके अध्याय ३२ के तीसरे मन्त्रमें कहा है कि:—

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नामम हद्यशः ।

महीधरः—तस्य पुरुषस्य प्रतिमा प्रतिमानमुपमानं किंचिद्वस्तु नास्ति ।

अर्थात् उस पुरुष (परब्रह्म) की मूर्ति है ही नहीं ।

आजकल पुजारी अथवा साधु ईश्वरके नामसे दान ले आलसी होकर पेट भरते हैं । और दरिद्रता तथा अनाचार बढाते हैं । शीतकालमें ठाकुरजीके सामने आगकी सिगड़ी (अंगठी) रखते हैं । कोई विचार करे तो मालूम होगा कि पत्थरको कभी ठंढया धूप नहीं लगती है । यदि आपका कोई मित्र, आपके फोटोको इस तरह करे, तो आप उसपर कैसे गुस्से होंगे ? जो मूर्तिको देखनेसे ज्ञान होता, तो रामचन्द्रजीकी मूर्ति एक युरोपियनके सामने (जिसने) उसका इतिहास कभी न सुना हो धरो क्या वह उसे देखकर जानेगा कि वे ऐसे पराक्रमी सत्पुरुष थे । इसलिये ज्ञानका साधन मूर्ति नहीं । परन्तु विद्या है। उपनिषद्में कहा है कि " **आत्मा** वारे द्रष्टव्यो श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः " ब्रह्मको जानना सुनना तथा उसका निदिध्यासन करना चाहिये । आप दो बालकोंको लेकर एकको शास्त्र पढावें, और दूसरेको मूर्तिपूजा करावें फिर २५ बर्षके हो जानेपर, उन दोनोंसे, ईश्वरके सम्बन्धमें प्रश्न करें और देखें, कि किसको ईश्वरसम्बन्धी ज्ञान हुवा है । भला जो मूर्तिमें ही ज्ञान मानते हो, तो क्या सूर्य कुछ छोटी मूर्ति है, कि जो दूसरी मूर्ति बनाते हो ? सूर्यको देखकेही ईश्वरका ज्ञान क्यों नहीं होता । ईश्वर निराकार है, इसलिये प्रथम सृष्टिके निराकार पदार्थोंका ज्ञान होना चाहिये, लोग ईश्वरको अपने विचारोंके अनुकूल बनाना चाहते हैं । जो अन्धविश्वास रखना चाहते तथा जिनमें विचार शक्ति नहीं उनको मैं तो क्या ब्रह्माभी नहीं समझा सकते ! कितनेही लोग इस विषयमें अग्निका दृष्टांत देते हैं, कहते हैं कि जैसे अग्नि व्यापक है, इससे वह प्रकटभी हो सकती है ? वैसेही ईश्वर व्यापक होनेपर भी एक जगह प्रकट हो सकता है । इसके उत्तरमें शंकराचार्यही कहते हैं, कि अग्निवर्षणका एक परिणाम है वह घट बढ सकती है। परन्तु ईश्वर एक रस व्यापक है । इसलिये उसमें घटती बढती नहीं हो सकती है। अर्थात् वह किसी जगह विशेष रीतिसे प्रकट नहीं होता है । अग्निकी तरह ईश्वरमें किसी तरहका विकार नहीं होता है क्योंकि वह निर्विकार है । **इति शम्**

इसके पश्चात् सभापति नामदार जज मि० चन्दावर करके प्रकट किये हुए विचार ।

मि० चन्दावरकरने भाषणके विषयमें कहा कि स्वामी नित्यानन्दने जो विचारयुक्त तथा विद्यासे पूरित भाषण दिया है और बडोदेसे खास यहां आये हैं, इसके लिये वे

धन्यवाद योग्य हैं । आजकल जिस प्रश्नपर विशेष चर्चा हो रही है, सो यद्यपि कोई नया विषय नहीं है, तथापि स्वामी नित्यानन्दने तोड़ मरोड़ किये विना तथा विना पिष्ट पेषणके अपने विषयको जिस उच्च शिखरपर पहुँचा दिया है, उसे श्रोताजनोंको एकाग्रचित्त हो सुननेका मौका मिला है. और अच्छे विचार बनानेका अवसर मिला है । मूर्तिपूजा क्या है यह समझे विना तकरार करना व्यर्थ है । लोकमत अनुसार ईश्वरकी पूजा अनेक प्रकारसे की जाती है । और इसीका कारण हिन्दूधर्म अनेक भागोंमें बट जाता है । जिस चीजमें ध्यान लगानेसे ऊंची स्थितिको चढे वही सच्ची मूर्तिपूजा है । बाकी अज्ञानी लोग मूर्तिमेंही ध्यान किया करते हैं, इससे वे ऊंची स्थितिको नहीं पहुंच सकते हैं । मूर्तिसे कुछभी परिपूर्णता नहीं आती है । जैसे कोई विद्यार्थी परिक्षामें पास होनेके लिये अच्छा टाइम टेबल बनाता है और उसके अनुसार नया अलार्म टाइमपीस घडी रखकर रोज क्रम अनुसार अभ्यास चलाता है । परन्तु यदि उसका मनही निर्बल होवे तो यह सब अच्छा ? और टाइम टेबलभी किस कामका ? इसलिये एकही वस्तुमें परमेश्वरको माननेके बदले मनको ऊंची स्थिति में लानेके लिये परमेश्वरको पहचानना सीखना चाहिये । और जब एक ईश्वरमें सच्चा अभिमान आ जाय तो फिर निरर्थक चीजोंकी जरूरत नहीं रहती है । तुकाराम जैसे सच्चे भक्त जब पंढरपुरमें जाते थे तो वहां मंदिरोंके होतेभी उनमें न जाकर अच्छी सभाओंमें जाना पसंद करते थे इससे मस्तककी शक्तियां खिलकर उन्नत होती थीं । ईश्वरभी कहता है, कि जैसे रूपमें जैसे मनमें तुम मेरेपास आओगे, उसी तरहसे मैं तुह्मारे पास आऊंगा और जो तुम पाषाणके साथ आओगे तो मैं तुमको पाषाण दूंगा भगवद्गीतामें कहा है कि ईश्वर तुम्हारे हृदयमें रहता है । बड़े २ वीर पुरुषोंके चरित्रोंके दृष्टांत अपने सामने रखकर काम लेनेसे ही प्रजाकी उन्नति होती है और जो तुम स्वयं मन वचन और कर्मसे पवित्र होगे तो तुम अपने परमेश्वरको प्राप्त कर सकोगे—ऊंचे शिखरपर पहुंचनेके लिये ऊंचे आचरण ग्रहण करनेमें ही पूजाका आशय समाया है—ऐसे विचार फैलाये विना सिद्धि होनेकी नहीं इस बातपर देशके उदयका आधार है । और उसकी चर्चा होनेसे मैं खुशी हुआ हूं—पश्चात् प्रमुखका उपकार मानकर सभाविसर्जन की गई थी ।

व्याख्यान १७ वाँ।
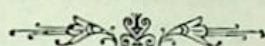
श्रीस्वामी नित्यानंदजीने ता. २७-१०-१८९५ अक्टोबरको लक्ष्मीविलास राजमहल बडोदामें दियेहुए व्याख्यानका सारांशः—

(बडोदावत्सल) का. व. १ स. १९५२.

आरम्भमें स्वामीजीने ईश्वरप्रार्थना करके व्याख्यान देना शुरू किया, उस समय श्रीमान् सरकार दिवानसाहेब बहादुर, श्रीमंत रावसाहेब संपतराव गायकवाड, स्वामी विश्वेश्वरानंदजी उपस्थित थे।

स्वामीजी बोले, सृष्टिमें हम दो वस्तु देखते हैं, एक जड व दूसरी चैतन्य. जड वस्तु बोधरहित है. चैतन्य अर्थात् चलन होना. जड वस्तु याने अत्यंत सूक्ष्म पदार्थसे लेकर अत्यंत प्रचंड पर्वतादि इनकी गणना निर्जीव पदार्थोंमें होती है. सूक्ष्म-दर्शक यंत्रकी सहायता लेकर चैतन्य वस्तुका अब विचार करते हैं.

दृश्य पदार्थ कईएक निर्जीव हैं तोभी वे सृष्टिका नाश क्षणभरमें कर डालते हैं. जैसे अग्नि वायु जल वगैरह निर्जीव हैं, पतंग सजीव है तोभी वह दीपकपर झडप मारकर अपने प्राण गमाता है. अग्निकी सहायतासे आदमी अपनेलिये अन्न पकाता है और उसके प्रकाशसे अन्धकारका निवारण कर लेता है. आगगाडी सरीखे लोकोपयोगी यंत्रमें भाफ उत्पन्न कर लेता है और उसके द्वारा यंत्रमें गति उत्पन्न करता है और वह गति कई कोसतक गाडी चलानेके काममें आती है. तथापि उस यंत्रकी गति रोकनेका काम मनुष्यके विना नहीं हो सकता.

मैं कौन हूं ? इस प्रश्नका उत्तर में आत्मा हूं-ईश्वरके अस्तित्वमें अनेक मत हैं. कोई कहता है ईश्वर है ही नहीं, कोई कहता है यह जगही ईश्वरमय है, कोई कहता है आकाशमें ईश्वर है. किसी बालकपर यदि मेस्मेरिजमका प्रयोग किया जावे तो वह बालक अपना ज्ञान भूलकर उस प्रयोग करनेवालेके स्वाधीन होकर रहता है. उसी प्रकार हम मनुष्योंपर संसारमायाका प्रयोग हुआ है. इसलिये हमारा कर्तव्य इस जगत्में क्या है और यह जगत् क्या वस्तु है इस विषयमें हममें अज्ञान भरा हुआ है. सूक्ष्मदर्शक यंत्रसे अवलोकन करनेपर बहुत सूक्ष्म वस्तुएँ हमें नजर पडती

हैं, परन्तु उनकी यथार्थ कल्पना हमें नहीं होती है. पृथ्वीकी अपेक्षा सूर्यमंडल साढे तेरा लाख गुना बडा है और वह अनंत तारागणोंसे युक्त रहता है. तात्पर्य इस जगतकी उत्पत्ति कैसे हुई, इसका कर्ता कौन है यह विषय बडा गहन है. श्रुतियोंनेभी इस विषयपर अपने हाथ कानोंपर रखे हैं. मनुष्य जातिके शरीरके परिमाणसे उसकी आंखें बहुत छोटी हैं, और उन आखोंकी पुतलियां तो औरभी छोटी हैं, परन्तु, उनसे वह इस जगत्में चाहे जितनी बडी वस्तु देख सकता है. उसी प्रकार यह जगत् इतना प्रचंड और विस्तृत है तोभी उसका, याने, जगत्का ज्ञान उसे अपने ज्ञानचक्षुसे हो जाता है. स्वप्नमेंभी यह जगत् जागृत अवस्थाके सदृश हमें नजर पडता है. परन्तु उस जगत्को देखनेवाली आंखें औरही हैं और वे ज्ञानचक्षु कहलाते हैं. इस विषयपर हर्बर्ट स्पेंन्सर वगैरा बडे बडे तत्ववेत्ता झगड रहे हैं. जो कुछ हो, हालमें हमें तो " मनुष्यका कर्तव्य " इस विषयपर विचार करना है. महाभारत और चरकादिकोंके सर्वमान्य ग्रंथोंमें आत्माका रक्षण प्रथम बतलाया गया है परन्तु मनुष्य जाति यह अपना कर्तव्य योग्य रीतसे करना नहीं जानती. गरीबसे लेकर महाराजातक सबकी एकही अवस्था है. कोई मजदूर पैसेके लालचसे अपनी शक्तिके बाहर बोझा उठाता है, और अपनी तबियत खराब करता है, उसी तरह कोई विद्यार्थी शीघ्र पास होनेके लोभसे और रोजगारके लोभसे अपनी शक्तिसे बाहर परिश्रम करके अपना जीवन गमाता है. उसी प्रकार कई लोग शक्तिके बाहर काम करके और कोई लोग अधिक आहार करके, और ऋतुमानको न देखकर, अपनी प्रकृति खराब कर लेते हैं. रोगी होना प्रारब्धमें नहीं लिखा है, मनुष्य प्रमादसे अपनेको रोगी बना लेता है. मनुष्य शरीरके अवयव घडीके चक्रोंके सदृश हैं, और वे चक्र जब बिगडते हैं, तब वे पहिलेकी नांई दुरुस्त नहीं हो सकते, एक बार प्रकृति बिगडकर रोगग्रस्त हो गई तो वह फिर औषध करनेसेभी पहिलेकीसी नहीं होती, इसलिये प्रकृति निरोगी रखना मनुष्यका आद्यकर्तव्य है.

दूसरा कर्तव्य उद्योग करना. बहुतसे लोग भाग्यवादी बनकर उद्योग नहीं करते परंतु उनकी यह भूल है. बौद्ध व जैन धर्ममें पुनर्जन्म माना है; उसीके अनुरोधसे लोग भाग्यका अवलंब करते हैं. ख्रिस्तधर्मीय लोग प्रारब्ध नहीं मानते. जो लोग प्रारब्धवादी बनकर उद्योग करना छोडते हैं, उनकी स्थिति कच्चे घडेके सदृश है. और उनकी गणना मूर्खोंमें होती है. जो जो वस्तुएँ अपने सामने आती हैं, वे प्रारब्धसे नहीं बनी हैं. उद्योगको छोडकर कोई पुरुष विद्वान् नहीं हुआ है, और

भाग्यके भरोसे उसको विद्या नहीं आती. कितने परमहंस ऐसे होते हैं, कि उनके मुखमें ग्रास छोडना पडता है परंतु वह ग्रास चबानेकी क्रिया उनको खुद करनी होती है अर्थात् उस ग्रासको चबाकर निगलना पडता है. दो सदृश विद्यार्थी, परीक्षामें प्रविष्ट होते हैं, और उनमेंसे एक पास और दूसरा नापास होता है. ऐसे अवसरमें प्रारब्ध मानना पडता है, और हमारे हिंदु धर्मशास्त्रमें उसे बीजरूप माना है. परंतु वह बीजरूप प्रारब्ध सदुद्योगरूपी भूमिमें बोकर अच्छा फलवान् बनाना अपना कार्य है. केवल भाग्यवादी बननेसे फलप्राप्ति नहीं हो सकती। उद्योगके विषयमें हमारे हिन्दुस्थानी लोग बहुत पीछे पडे हुए हैं. वे समुद्रयात्राको धर्मके विरुद्ध मानते हैं, परन्तु यजुर्वेद अ. ६ में समुद्रपर्यटन लिखा है. राजा युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण अमेरिका गये, और वहांसे बकदालभ्य ऋषिको अपने साथ ले आये ऐसा महाभारतमें लिखा है। मनुस्मृतिमें लिखा है कि पूर्व कालमें ब्राह्मण सर्व वर्णोंकी कन्याओंसे विवाह करते थे. काश्मीर देशमें आजभी मुसलमानोंका छुआ अन्न ब्राह्मण खाते हैं. बाल्मीकिय रामायणमें परमपूज्य मार्कंडेय ऋषिका, भिल्लन स्त्री शबरीके हाथसे, रोटी खाना लिखा है. महाराज युधिष्ठिरके गृहमें हजारों दासियां सबको अन्न परसतीं थीं; और वैसेही समुद्रपर्यटन धर्मशास्त्रमें निषिद्ध नहीं माना है। जातिभेदकी प्रथा चलनेसे हमारे समाजमें बडी हानि हो गई है, और हो रही है, परन्तु ईश्वरके यहां मनुष्यजाति एक मानी गई है. ऐसा न होता तो गाय, घोडा, भैंस इनमें जैसा भेद नजर पडता है, वैसा ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यादिकोंमेंभी पडता. बैल और भैंस इनके संयोगसे संतति नहीं होती. परन्तु ब्राह्मण शूद्री इनके संयोगसे संतति होती है. इससे यह सिद्ध होता है, कि जातिभेद जो मनुष्य समाजमें प्रचलित हैं वे झूठ हैं. जाति, कर्मसे मानी गई है. जैसे डाक्टरीका धंदा करनेवालेको डाक्टर कहते हैं, परन्तु उसके पुत्रको डाक्टर नहीं कहते. वैसेही ब्राह्मणके पुत्रको ब्रह्मज्ञान हुवे बिना ब्राह्मण नहीं कह सकते. तात्पर्य यह है कि, इस जातिभेदकी प्रथा समाजमें प्रचलित होनेसे हमारा देश अत्यंत दुर्दशासे भर गया है. यह दुर्दशा उठाकर अपने देशभाइयोंको सत्यमार्गमें लाकर छोडना यह अपना पवित्र और अवश्य कर्तव्य है. चलता है, सो चलने देना, और भाग्यमें जैसा लिखा है, वही होगा, ऐसा विचार करनेसे हमारा देश उच्च श्रेणीपर कभी आरोहण न करेगा.

तीसरा कर्तव्य यह है कि मनुष्योचित प्रकारसे गृहस्थाश्रम करना. आजकल जो हम अपनी प्रजाको अशक्त देखते हैं, इसका कारण बालविवाह है. इस

बालविवाहसे अनेक अनर्थ हो रहे हैं, परन्तु उस तरफ किसीकी दृष्टि नहीं है. ऋग्वेद तथा अथर्वण वेदमें लिखा है, कि कन्या सुशिक्षिता होकर तरुणता प्राप्त करके विवाह करे. विवाहमें कन्याका वय कमसे कम १८ और पुरुषका २५ होना चाहिये परन्तु आजकल इस वेदवाक्यके विरुद्ध शादियां हो रहीं है. ५ या ६ वर्षकी लडकीसे और आठ या नौ वरसके लडकेका लडकीसे विवाह हो जाता है, इस आठ या नौ बरसके लडकेका विवाह क्या है. इसका तनिकभी ज्ञान नहीं रहता. विवाहकार्यमें स्त्रीपुरुषोंमें होनेवाले करार अथवा प्रतिवचन दोनों तरफके उपाध्याय ब्राह्मण आपसमें पढ लेते हैं. महाराजा मैसूरने अपने राज्यमें १२ वर्षके भीतरकी कन्याका विवाह होना सरकारी कायदेसे रोका है. बालविवाहसे बहुत तरहके नुकसान हैं. कन्याका गर्भाशय परिपूर्ण न होनेके कारण उसकी संतान हीनवीर्य होती है. ऐसा वैद्यकशास्त्रोंका निश्चित मत है, तौभी हमलोग आंखें खोलकर इसका विचार नहीं करते !! देखो, सादे कपडेमें बर्फ रखनेसे उसका पानी हो जाता है और ऊनी कपडेमें रखनेसे वैसाका वैसा रहता है. इसी तरह हम लोगोंके मनपर लोगोंका निन्दारूप ऊर्णवस्त्र ऐसा दृढ बैठा है, कि सुधाररूप वायुका उसमें प्रवेश नहीं होने पाता. परन्तु इस प्रकारसे लोगोंकी निन्दाका विचार करनेसे देशकी स्थिति कभी अच्छी नहीं होगी.

अभी थोडे रोज पेश्तर आर्यसमाजने एक पुरुषको जिसने ख्रिस्ती धर्मका अंगीकार किया था, उसे फिर अपने धर्ममें प्रविष्ट कराया. यह उदाहरण विचारने योग्य है. दूसरी बात यह है, कि लडकीका विवाह छोटी उम्रमें होनेसे, उसका विद्याभ्यास बिलकुल नहीं होने पाता. इस कारण उसकी संतानभी शिक्षाविहीन होती है. बच्चेको बालपनमेंभी अच्छी शिक्षा मिलना योग्य है. परन्तु माता अशिक्षित रहनेसे वह उसको शिक्षा देनेमें असमर्थ होती है. माता और पिता दोनोंही सुशिक्षित होने चाहिये. तभी संतान सुयोग्य हो सकती है. छोटे बच्चेको अधिक मिठाई खिलाना अच्छा नहीं है, यदि, उसको वह देनी ही है तो विचार करके देनी चाहिये; यदि ऐसा न किया तो वह बालक मनमानी खा जायगा, और उसका परिणाम अनिष्ट होगा. इसलिये सुशिक्षित मा बापके बालककी इच्छाको बिलकुल दबाकर रखना ठीक नहीं. उसकी बुद्धि बढती जावे इस तरहसे शिक्षा देनी चाहिये. मातापिताओंका उपदेश बालकपर बडा परिणामकारक होता है. इस स्त्रीशिक्षाके विषयमें श्रीमान् महाराजा साहबने बडी कृपा की है (तालियां) आज जो विषय पढाये जाते हैं, वे निरुपयोगी होनेसे, उनमें सुधार होना चाहिये. उसी प्रकार उच्च प्रतिका शिक्षण

देनेमें इंग्रेजी भाषाका ज्ञान आवश्यक हो गया है, उसके सीखनेमेंभी बहुत काल व्यतीत हो जाता है. इसकाभी कुछ विचार होना चाहिये. नीतिशिक्षामेंभी कुछ परिवर्तन होना अवश्य है, और उससे अनुभविक ज्ञान होना चाहिये. मुंहका जमाखर्च किसी कामका नहीं. पाठकगण निर्भय होने चाहिये, अन्यथा वे उपदेश करनेमें असमर्थ होते हैं. उसी तरह सरकारी कामदारभी खुशामदी न होने चाहिये. उनके खुशामदी होनेसे, राजाको योग्य सलाह उनसे नहीं मिलती. और इस प्रकारसे वे राजाके शत्रु बन जाते हैं. राजाको प्रजाका पालन निष्कपट भावसे करना चाहिये, और प्रजाको राजाका योग्य सन्मान करना चाहिये.

मनुष्यजन्म क्षणमें नाश होनेवाला है, और अंतमें उसके साथ कुछभी नहीं जाता है. मुइंमद् गजनवीने अत्यंत क्रूरतासे अपना खजाना भरा और अंत समयमें उसे देखकर खूब रोया. वह बोला इस द्रव्यके प्राप्त करनेमें मुझे कितना अन्याय और कितना भयंकर कृत्य करना पडा था और अब इसका उपभोग कोई दूसराही करेगा. तात्पर्य यह है कि अनीतिसे द्रव्योपार्जन करनेकी अपेक्षा नीतिसे चलकर गरीब रहना अच्छा है और वही सुखका साधन है. इस प्रकार श्रीस्वामीजीने ऊपर बतलाये हुवे विषयपर अपनी अस्खलित वाणीसे श्रोतृसमुदायको तन्मय करके छोडा.

यह भाषण १॥ घंटे हुवा और तबतक श्रीमान् सरकार बडी उत्सुकतासे बैठकर सब भाषण सुनती रही. महाराजा साहेबने स्वामीजीको अपना पूर्व वृत्तांत कहनेको कहा, और स्वामीजीने थोडेमें कुछ कहा. स्वामीजी बोले कि मैं श्रीमाली जातिका ब्राह्मण हूं, और मैं ने काशीजीमें रहकर संस्कृत भाषाका अध्ययन किया. इसके सिवाय मैंने कुछ इंग्रेजी और फारसी भाषाभी पढी है. लोगोंको उपदेशकर उनको सन्मार्गवर्ती बनाना और इस तरहसे लोगोंकी सेवा करना यह मेरे मनका निश्चय हो गया. और यह दीक्षा ले ली।

इस प्रकारसे स्वामीजीका व्याख्यान और उनका आत्मचरित्र सुनकर महाराजने स्वामीजीकी विषयप्रतिपादन करनेकी रीति और उनके सभापाण्डित्यका वर्णन करके उनकी बडी प्रशंसाकी और अपनी प्रसन्नता व्यक्त की.

व्याख्यान १८ वां.

बडोदामें आर्यसमाजकी स्थापना.

यह लेख बडोदा वत्सल ता. ३ जुन स. १८९४ से अनुवाद किया है.

गतांकमें लिखे अनुसार आर्य धर्मप्रचारक श्री. स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी तथा श्री. ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी यहां आये हुए हैं । उनके बडोदामें इस सप्ताह धर्म, ईश्वर, मानव धर्म, पुनर्जन्म और वेद किसको कहते हैं, इन पांच विषयोंपर व्याख्यान हुए । उक्त दोनों महात्मा संस्कृत, इंग्लिश फारसी वगैरह भाषाओंका अच्छा ज्ञान रखते हैं । ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीने उक्त व्याख्यान प्रथम थोडी देरतक संस्कृतमें देकर पश्चात् सर्व साधारणके समझमें आवे इसलिये हिन्दी भाषामें दिये । वेद, स्मृति और पुराणोंका अध्ययन इन्होंने अच्छा किया है । यह उनकी भाषणशैली तथा विषय प्रतिपादनसे मालूम हुआ । इनके दिये हुये व्याख्यान बहुतही बोधदायक और सच्छास्त्रोंके अनुसार थे । उनमें टीका या अपवाद करने योग्यभी बात न थी। इसलिये उक्त व्याख्यान श्रोताओंको बहुतही रुचिकर हुए । लोगोंकी रुचि बढनेके कारणही उक्त व्याख्यानोंमें क्रमक्रमसे श्रोताओंकी संख्या अधिक बढती गई । इन व्याख्यानोंमें कभी कभी बहादुर दिवान साहेब, रा. ब. सर न्यायाधीश साहेब, रा. ब. बडोदा प्रांतके सूबासाहेब रा. ब. आसिस्टंट सरसूबासाहेब आदि बडोदाके प्रतिष्ठितभी आते थे । **उक्त दोनों वक्ता महात्माओंकी कृपासे यहांकी जनताको धर्मविषयक जो यह अपूर्व लाभ हुवा है, उसका लक्षांशभी यहां धर्मविषयमें लक्षावधि रुपये खर्च करके यहांकी जनताको हुवा होगा यह हमको मालूम नहीं होता !** ऐसा होनेपरभी कई वेदशास्त्रशून्य लोगोंने अपना लंगडा टट्टू आगे करनेमें कसर न की । तथापि परिणाम ‘ सत्यमेव जयते ’ इसके अनुसारही हुवा । हमारे धर्म तथा देशकी अवनति कैसे हुई यह बात अब प्रत्येक विद्वान् समझ चुका है । प्राचीन समयमें जिसके कारण यह आर्यावर्त देश सामाजिक, राजकीय और धार्मिक विषयोंमें उन्नतावस्थाको पहुंचा था, उसी सत्यसनातन वैदिक धर्मका (सांप्रतका नामधारी स. धर्म मत समझना) पुनरुत्थान होकर उसके आश्रयमें हम सबोंको रहना ऐसा सबोंकी मनोवृत्तिमें आना स्वाभाविक है । और ऐसा होगा तभी इस देशकी उन्नति होगी अन्यथा नहीं ।

मूल धर्मको भूलकर बीचमें जो नानापंथ चल पडे हैं और जिनके कारण सत्यधर्म छिन्नभिन्न होकर सर्वत्र दंभ, मत्सर, अनीति, स्वार्थ, परोत्कर्षासहिष्णुता, दुष्टबुद्धि, कृतघ्नता, स्वामिद्रोह, हिंसा, मकारत्रयी इत्यादिकोंकी प्रवृत्तिसे मानो शैतानका साम्राज्य चल रहा है ! इन सबोंका विध्वंस होकर मनुष्योंके कल्याणके लिये सर्वत्र सद्धर्मका प्रचार होनाही इस समय उचित है । श्रीस्वामीदयानन्द सरस्वतीजीने प्राचीन वैदिकधर्मका पुनरुद्धार करनेके लिये जो यह सर्वोत्तम मार्ग दिखाया है, उसके देशपर अनन्त उपकार हुए हैं इसमें संदेह नहीं ! थोडेही समयमें इस आर्यावर्त देशके मुख्य मुख्य नगरोंमें सैकडों आर्यसमाज स्थापित हो गए हैं । इसी प्रकार अमेरिका जैसे अत्यन्त सुधरे हुए देशमेंभी उसकी शाखा स्थापित होने लगी है । काश्मीर, पंजाब, राजपूताना आदि प्रांतोंमें बहुतसे लोगोंनें इस अपने मूल आर्यधर्मका अवलंबन करके अनेक पाखंडोंको तिलांजलि देदी है ! इसीलिये उनकी सामाजिक उन्नति प्रतिदिन बढ रही है । दक्षिणमेंभी अनेक नगरोंमें आर्यसमाजकी स्थापना हुई है । परन्तु बडोदा जैसी विस्तीर्ण राजधानीमें ऐसी एकभी उपयुक्त संस्था अभीतक स्थापित न हुई यह आश्चर्यकी बात मालूम होती थी । आश्चर्यका कारण यह है कि, यहां अनेक विद्वान्, सुशिक्षित और समंजस अनेक जातिके लोक बहुत बडी संख्यामें रहते हैं । आजतक उक्त विद्वान् लोग अंधपरंपरासे चलते आये धर्मपर विश्वास रखकर चल रहे थे । उन्होंने कभी इस सर्व कल्याणकारी सत्यसनातन धर्मका विचार नहीं किया उसको भूल गये यह बडे दुःखकी बात थी ! परन्तु यहांके कई समंजस विद्वानोंने यह अपवाद दूर किया और उस संस्थामें अपने स्वतंत्र विचारसे संमिलित हुये यह सूचित करनेमें हमें बडाही आनन्द होता है ।

उक्त दोनों स्वामी महात्माओंने अपने प्राचीन आर्यधर्मके सत्यस्वरूपका श्रोतृसमाजके अन्तःकरणमें भान कराया, इससे यहांके अनेक महाशयोंने यहां आर्यसमाज स्थापन करनेकी दोनोंभी महात्माओंसे प्रार्थना की । उस प्रार्थनाको मान देकर बडोदामें गुरुवार ता. ३१ मे सन १८९४ के दिन सायंकाल पांच बजे उक्त महात्माओंके स्थानपर इकट्ठे हुये महाशयोंके हस्ताक्षर लेकर उन्हें आर्यसभासद् बनाया । उनमेंसे ही अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, मंत्री, उपमंत्री, कोषाध्यक्ष और पुस्तकाध्यक्ष नियत किये गये और उनकी एक अन्तरंग सभा स्थापन की । उस समय बहुतसे महाशय वहां विद्यमान थे । उनमें कई यहांके बडे प्रतिष्ठितभी थे । इस लोगोंके उत्साहको देखकर थोडेही समयमें उक्त संस्थाकी अच्छी उन्नति होगी ऐसा मालूम हुवा इस समाजके मुख्य नियम दस हैं. वे पाठकोंके अवलोकनार्थ यहां लिख देते हैं ।

१ सर्व सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्यासे जाने जाते हैं, उनका आदिमूल परमेश्वर है ।

२ ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, शक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है । उसीकी उपासना करनी योग्य है ।

३ वेद सत्य विद्याओंका पुस्तक है । उसका पढना पढाना और सुनना सुनाना यह सर्व आर्योंका परम धर्म है ।

४ सत्यग्रहण करने और असत्यका त्याग करनेमें सर्वदा उद्यत रहना चाहिये ।

५ सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्यका विचार करके करने चाहिये ।

६ संसारकी उन्नति करना इस समाजका मुख्य उद्देश है । अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना ।

७ सबके साथ प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये ।

८ अविद्याका नाश और विद्याकी वृद्धि करनी चाहिये ।

९ प्रत्येकको अपनीही उन्नतिमें सन्तुष्ट न रहकर सबकी उन्नतिमें अपनी उन्नति समझनी चाहिये ।

१० सर्व मनुष्योंको सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालन करनेमें परतंत्र और प्रत्येक हितकारी नियममें सबोंको स्वतंत्र रहना चाहिये ।

इन दस नियमोंको देखकर सब विचारी तथा धर्मज्ञ मनुष्योंको निश्चय हो जायगा कि, आर्यसमाज किसीको धर्मपराङ्मुख न करके वह प्रत्येक मनुष्यको उसके सत्य सनातन वैदिक धर्मके अनुसारही चलनेको कहता है । उसमेंभी किसीसे वह आग्रह नहीं करता । प्रत्येकको अपनी ज्ञानदृष्टिसे निश्चय करके उचित मालुम होनेपर उसमें प्रविष्ट होना चाहिये । अन्तमें ईश्वर इस संस्थाकी अभिवृद्धि करते हुए इससे चिरायु करे, ऐसा हम अन्तःकरणसे चाहते हैं ।

व्याख्यान १९ वां
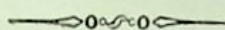
श्रीसयाजीविजय पत्र बडोदासे उध्दृत. ता. २६-१०-१८९५.

मनुष्यका कर्तव्य.

श्री. स्वामी नित्यानन्दजीका श्रीमान् महाराज गायकवाडकी विद्यमानतामें दिया हुवा व्याख्यान.

यह व्याख्यान गतांकमें प्रसिद्ध किये अनुसार शनिवार सायंकाल ५॥ बजे लक्ष्मीविलास राजमहलके छोटे दरबारके हालमें श्रीमान् सरकार महाराज साहेबकी विद्यमानतामें हुवा। उक्त व्याख्यान सुननेके लिये नामदार दीवानसाहेब आदि राज्यके बडे बडे सभ्य अनुमान ५० की संख्यामें आये हुये थे। श्रीमान् महाराज सरकारके सभामें आकर प्रधानासनपर विराजमान होते ही श्री. स्वा. नित्यानन्दजीने व्याख्यान आरम्भ किया। उन्होंने कहा जड और चेतन इन दो वस्तुओंसे मनुष्यप्राणी हुवा है। उसके दो भाग हैं, एक विद्वान् और दूसरा अविद्वान्, विद्वान् मनुष्य अपने ज्ञानके अनुसार वस्तुका जैसा उपयोग करता है वैसा अविद्वान् नहीं कर सकता। अग्नि यह एक पदार्थ है। उससे उपयोग लेनेका ज्ञान शलभ अर्थात् पतंगको न होनेके कारण वह उसपर कूदकर मरता है! साधारण बुद्धिके मनुष्य उस अग्निसे रसोई पकानेका काम लेकर अपना निर्वाह करते हैं। परन्तु फिलॉसफर उसीके तत्वज्ञानसे रेलगाडी जैसे बडे बडे कार्य करते हैं। इसीके अनुसार संसारकी दशा है। रेलगाडीका इंजन प्रत्येक स्टेशनपर खडा रहता है परन्तु उसको यह ज्ञान नहीं कि, यह अमुक स्टेशन है इसी प्रकार संसारमें अज्ञानियोंको यह ज्ञान नहीं कि, मेरा कर्तव्य क्या है। मैं कौन हूं? इस प्रश्नका विचार करके आत्मज्ञान करना, इस मुख्य कर्तव्यको ही मनुष्य भूल गया है। ईश्वरके अस्तित्वविषयमें लोगोंके अनेक मत हैं। कोई कहता है ईश्वर है ही नहीं, कोई कहता है यह संपूर्ण जगत् ईश्वरमय है, कोई कहता है आकाशमें ईश्वर है। किसी बालकपर मेस्मेरिझमका प्रयोग करनेसे वह जैसे अपने आपको भूल जाता है और प्रयोग करनेवालेके अधीन हो जाता है, तद्वत् हमपर सांसारिक मोहका प्रयोग हुवा है। इसलिये अपना कर्तव्य क्या है, जगत् क्या वस्तु

है इत्यादि विषयोंपर विचार करनेका ज्ञान हमारा तिरोभूत हो गया है। सूक्ष्मदर्शक यंत्रसे देखनेपर संसारमें अनेक सूक्ष्मसे सूक्ष्म वस्तुएं दीखती हैं। यदि उक्त यंत्र न न हो तो उन वस्तुओंकी कल्पनाभी हम नहीं कर सकते। पृथ्वीसे सूर्य तेरा लाख गुणा अधिक है और वह अपने नक्षत्रादि परिवारके साथ आकाशमें स्थित है। इसी प्रकार इस संसारकी उत्पत्ति कैसे हुई, उसका कर्ता कौन है इत्यादि विषय इतने गहन हैं कि, बडे बडे विद्वानोंनेभी अपने कानोंपर हाथ रक्खे हैं! मनुष्यके शरीरकी अपेक्षा नेत्र बहुतही छोटे होते हैं और उनसेभी उनकी कनीनिका अतीव सूक्ष्म होती है, तथापि उनसे मनुष्य संसारकी बडीसे बडी वस्तुको देख सकता है। इसी प्रकार यद्यपि जगत् बहुत बडा और विस्तृत है तथापि ज्ञानचक्षुओंसे इतने बडे कल्पनातीत जगत्को मनुष्य देख सकता है। स्वप्नमेंभी जागरितावस्थाके समान अनेक पदार्थ दीखते हैं, परन्तु वे देखनेवाले नेत्र इन नेत्रोंसे भिन्न हैं। इस विषयमें हर्बर्ट-स्पेन्सर जैसे बडे बडे तत्ववेत्ताओंके झगडे चल रहे हैं।

सांप्रत हमको 'मनुष्यका कर्तव्य' इसी विषयका विचार करना है। महाभारतमें तथा चरकादि सर्वमान्य वैद्यक ग्रंथोंमें आत्माका संरक्षण करना यह प्रथम कर्तव्य कहा है। परन्तु इस अपने पहले कर्तव्यका पालन मनुष्य नहीं कर सकता। दरिद्रसे लेकर राजापर्यन्त सबोंकी दशा एकसी है। एक मजदूर धनके लोभसे अपनी शक्तिके बाहर बोझा ढोता है और इससे उसका शारीरिक स्वास्थ्य बिगडता है, वैसाही एक विद्यार्थी ग्रेज्युएट होकर बडे वेतनकी नौकरी मिलनेके लोभसे मर्यादाके बाहर परिश्रम करके शीघ्रही मृत्युके मुखमें गिरता है! कई लोग अपनी शक्तिसे अधिक परिश्रम करके, कई अधिक आहार करके और कई ऋतुचर्याके विरुद्ध वर्तन करके अपना स्वास्थ्य बिगाड लेते हैं। रोगी बनना यह प्रारब्धमें नहीं लिखा है। यह तो मनुष्यकी भूलका परिणाम है। मनुष्यके शरीरके अवयव घडीके चक्रोंके समान हैं। घडीके चक्र एकवार बिगडनेपर वे पूर्ववत् नहीं होते। वैसेही शरीर रुग्ण होनेपर अनेक प्रकारके औषधोपचार करनेसेभी वह पूर्ववत् नीरोग नहीं होता। इसलिये शरीर नीरोग रखना यह मनुष्यका प्रथम कर्तव्य है।

दूसरा कर्तव्य 'उद्योग करना' यह है। बहुतसे लोग प्रारब्धपर विश्वास रखकर उद्योग करना छोड देते हैं। परन्तु यह उनकी बडी भूल है। बौद्ध और जैन मतमें पुनर्जन्म माना है। उसके अनुसार वे लोग प्रारब्धकोही पुरुषार्थसे मुख्य समझते हैं। ख्रिस्तधर्मानुयायी प्रारब्धको मानतेही नहीं हैं। वास्तवमें जो मनुष्य प्रारब्धपरही विश्वास

रखकर पुरुषार्थ करना छोड देता है, उसकी दशा मट्टीके कच्चे घडेके समान होकर वह मूर्ख समझा जाता है। हम संसारके जितने पदार्थ देखते हैं वे प्रारब्धसे उत्पन्न नहीं हुए हैं। उद्योग किये बिना केवल प्राब्धसेही जिसको विद्या प्राप्त हुई हो। क्या ऐसा एकभी मनुष्य संसारमें मिलेगा ? कई परमहंस ऐसे होते हैं कि, वे अपने हाथसे उठाकर नहीं खाते। जब कोई दूसरा उनके मुखमें अन्न डालता है तब वे खाते हैं तथापि दांतोंसे अन्नको चबानेका उद्योग करनाही पडता है। किसी विषयकी परीक्षा देनेके लिये तयार हुए दो विद्यार्थी बराबर एकही गुरुसे अभ्यास करके परीक्षाके लिये बैठते हैं। उनमें एक उत्तीर्ण और दूसरा अनुत्तीर्ण होता। ऐसे प्रसंगपर प्रारब्ध मानना पडता है। हमारे धर्मशास्त्रोंमेंभी प्रारब्धको बीजरूप माना है। परन्तु वह बीजरूप प्रारब्ध सदुद्योगरूप भूमिमें बोकर उससे अच्छे फल पैदा करने चाहिये। उद्योग छोडकर केवल प्रारब्धपर विश्वास रखकर बैठनेसे फलप्राप्ति कभी नहीं हो सकती। उद्योग करनेमें हिन्दुस्थानके लोग सबसे पीछे हैं। समुद्रका प्रवास करना हमारे देशवासी धर्मविरुद्ध मानते हैं। परन्तु यजुर्वेदके छठे अध्यायमें समुद्रपर्यटन करनेके लिये लिखा है। श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर अमेरिकामें जाकर वहांसे बकदालभ्य ऋषिको लाये ऐसा महाभारतमें लिखा है। मनुस्मृतिमें लिखा है कि प्राचीन समयके सभ्य मनुष्य सब वर्णोंकी कन्याओंसे विवाह करते थे। काश्मीरमें आजभी मुसलमानका छुवा अन्न ब्राह्मण खाते हैं। बाल्मीकि रामायणमें किराती (भिल्लन) की बनाई हुई रोटियां मार्कण्डेय ऋषि खाते थे ऐसा लिखा है। धर्मराजाके यज्ञमें दासियां परोसती थीं ऐसा महाभारतमें लिखा है। इसी प्रकार समुद्रपर्यटन करनेमें हमारे शास्त्रकारोंने पाप नहीं माना है। जातिभेदका रगडा हमारे देशमें घुसनेसे देशकी बहुत हानि हो रही है ! वास्तवमें ईश्वरने मनुष्यकी एकही जाति मानी है यह स्पष्ट दिखता है। ऐसा न होता तो जिस प्रकार गाय, भैंस, घोडा आदिमें स्पष्ट भेद है उसी प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रमें दीख पडता ! "बैल और भैंसके संयोगसे संतति उत्पन्न नहीं होती। परन्तु शूद्र और ब्राह्मणीके संयोगसे संतति पैदा होती है। इसलिये मनुष्यके जातिभेद स्पष्टही मिथ्या ठहरते हैं, जाति कर्मानुसार मानी है। जैसे कोई डाक्टरी की विद्या पढता है। उसको डाक्टर कहते हैं, परन्तु उसके पुत्रको कोईभी डाक्टर कह सकता। तात्पर्य यह है कि, मिथ्या जात्यभिमानसे हमारा देश रसातलको पहुंच रहा है। इस मिथ्याभिमानरूप अनर्थसे देशवासियोंको बचाकर सन्मार्गपर लाना यह हमारा कर्तव्य है। जो रूढि चलती आई है वही सच्ची और जो प्रारब्धमें होगा वही

होगा, ऐसा मानकर पुरुषार्थ छोड देनेसे हमारा देश कभी उन्नतावस्थामें नहीं जा सकता ।

मनुष्यका तीसरा कर्तव्य यह है कि ' नियमानुसार गृहस्थाश्रम करना । ' इस समय हम देखते हैं तो हमारी प्रजा अत्यन्त दुर्बल दीख पडती है । इसका मुख्य कारण बालविवाह है । बालविवाहसे अनेक अनर्थ हो रहे हैं, उधर किसीका ख्याल नहीं है । ऋ. अ. ८ और अथर्व० अ. ४ में लिखा है कि कन्या उपवरा होनेपरही उसका विवाह होना चाहिये । विवाहके समय वरकी आयु कमसे कम पचीस वर्षकी होनी चाहिये । और कन्याकी आयु १८ वर्षकी होनी चाहिये । परन्तु आजकलके विवाह उससे विपरीत हो रहे हैं । पांच छः वर्षोंकी कन्या और सात आठ वर्षोंका लडका हुवा कि, उनके विवाहकी तयारियां होने लगती हैं । उन बिचारोंको पतिपत्नी किसे कहते हैं, यह संबंध किसलिये किया जाता है, इस बातका कुछभी ज्ञान नहीं होता ! विवाहके समय वधू और वरकी परस्परमें होनेवाली प्रतिज्ञाएँ पण्डितजीही स्वयं बोल जाते हैं । मैसूरके महाराजने बारह वर्षोंके पूर्व कन्याका विवाह न करनेका कानून प्रचलित किया है । कन्याका गर्भाशय गर्भधारण करनेके योग्य हुये विनाही गर्भाधान हो तो संतान दुर्बल पैदा होती है, यह वैद्यक शास्त्रसे निश्चित होनेपरभी हमारे देशवासियोंकी आंखें नहीं खुलतीं ! बरफ सूती कपडेमें रखनेसे पानी हो जाता है । परन्तु ऊनके वस्त्रमें रखनेसे नहीं होता । इसका कारण यह है कि, सूती वस्त्रमें वायु प्रवेश करता है और ऊनके वस्त्रमें नहीं करता । इस दृष्टांतके अनुसार हमारे देशवासियोंके अन्तःकरणपर लोकनिन्दारूप उनी वस्त्रका वेष्टन ऐसा दृढ लपेटा हुवा है कि, सुधाररूप वायु उसके अन्दर प्रवेशही नहीं कर सकता ! इस प्रकार लोकनिन्दासे डरनेसे देश सुधार कभी नहीं हो सकता । ईसाई धर्ममें गये हुये किसी मनुष्यको आर्यसमाजने पावन करके फिरसे अपने धर्ममें लिया है । इस बातका अनुकरण अन्न सबोंको करना चाहिये । दूसरी बात यह कि बालपनमें कन्याका विवाह करनेसे वह विद्या नहीं पढ सकती । इस प्रकार स्त्रियां अशिक्षितही रह जाती हैं । ऐसी दशामें वे स्वयं अपढ स्त्रियां अपनी संतानको शिक्षण क्या दे सकती हैं । बालकोंको प्रथम घरमेंही शिक्षा अच्छी मिलनी चाहिये । उस शिक्षाको देनेके लिये मातापिता स्वयं शिक्षित होने चाहिये । छोटे बच्चोंको मिठाई खिलाना अच्छा नहीं यह सत्य है, तथापि उनकी इच्छा होनेपर परिमित प्रमाणमें नियमानुसार देनी चाहिये । ऐसा न करनेसे कभी बच्चोंके हाथमें मिठाई आ जावे तो वे अमर्यादित खाकर अपना स्वास्थ्य बिगाड लेते हैं । इसलिये मातापिताको बालकोंकी

इच्छा बिलकुलही न दबाकर उनकी बुद्धि बढती जावे ऐसी शिक्षा देनी चाहिये। मातापिता ही बालकोंके अन्तःकरणोंपर अच्छी बातोंके संस्कार डाल सकते हैं। स्त्री-शिक्षाके विषयमें श्रीमान् महाराजा साहेबने अच्छी व्यवस्था की है ! सांप्रतकी शिक्षामें कई निरुपयोगीभी शिक्षाएँ दी जाती है, उनका सुधार होना चाहिये। ऊंची शिक्षा ग्रहण करनेके लिये इस समय इंग्लिश शिक्षणके सिवाय दूसरा मार्गही नहीं। उस भाषाके समझनेमें हम लोगोंका बहुत समय नष्ट होता है। इसलिये इस विषयमेंभी सुधार होनेकी आवश्यकता है। नीतिशिक्षण केवल मौखिक देनेकी अपेक्षा आनुभविक देना चाहिये। उपदेशक निःस्पृह होने चाहिये, अन्यथा वे सच्चा उपदेश नहीं दे सकते। सरकारी कामवाले मनुष्यभी किसी मिथ्या लल्लोपत्तो करनेवाले न होने चाहिये। राजाके जो आश्रित लोग प्रसंगपर राजाको सच्ची संमति नहीं देते, राजाकी हांमें हां मिलाते हैं वे राजाके हितैषी नहीं किन्तु शत्रु हैं। राजाको प्रजाका पालन निष्कपट होकर करना चाहिये। और प्रजाकोभी राजाको देववत् पूज्य मानना चाहिये। मनुष्यका जीवन क्षणभंगुर है, मरण समय कुछ साथ नहीं आता। महमद गजनवीने बडे बडे भयंकर अनर्थ करके बहुत धन प्राप्त किया। परन्तु मरणके समय वह उस धनकी ओर देखकर रोने लगा ! वह सोचने लगा कि, इस धनके प्राप्त करने कितने प्रयत्न, कितने अन्याय और कितने बुरे कर्म मुझे करने पडे हैं ! परन्तु अब चलते समय वह मेरे साथ न आकर अन्य किसीके हाथमें जायगा ? इसलिये अन्यायसे धन प्राप्तकर धनवान् होनेकी अपेक्षा न्यायसे धन प्राप्त करनेका प्रयत्न करते हुये भी धन न मिले तो निर्धन रहना अच्छा ! वही मनुष्य संसारमें सुखी होगा। इन कर्तव्योंके अनुसार चलनेवालेही मनुष्य सुखी होते हैं।

इस प्रकार बराबर डेढ घंटेतक बडेही प्रभावशाली भाषणसे श्री. स्वा. नित्यानन्दजीने श्रोताओंको आनन्दित करके अपना भाषण समाप्त किया। व्याख्यान समाप्तिपर्यन्त श्री. महाराज बडीही उत्सुकतासे सुनतेही रहे।

इसके अनन्तर श्रीमान् महाराजने श्री. स्वा. नित्यानन्दजीसे अपना जीवनचरित्र संक्षेपसे कथन करनेकी प्रार्थना की। उन्होंने कहा कि, मैं श्रीमाली ब्राह्मण हूं। काशीमें निवास करके मैंने संस्कृतका अध्ययन किया है। इसके सिवाय फारसी और इंग्लिश भाषाकाभी मैंने कुछ अभ्यास किया है। लोगोंको सदुपदेश करके सन्मार्ग दिखानेके लिये और हो सके उतना देशहित करनेका निश्चय करके मैं इस आश्रममें प्रविष्ट हुवा हूं।

इस प्रकार व्याख्यान और उनका संक्षिप्त जीवनचरित्र समाप्त होनेपर श्रीमान् महाराज साहेबने श्री. स्वा. नित्यानन्दजीके विषयप्रतिपादनकी पद्धति, सभामें बोलनेका धैर्य, नदीके प्रवाहके समान न रुकनेवाली उनकी वाणी इत्यादि गुणोंकी बहुतही प्रशंसा करके उक्त व्याख्यानसे मुझे बहुतही आनन्द हुवा यहभी सभा विसर्जन करते हुये उन्होंने प्रकट किया।

व्याख्यान २० वां.

स्वामी श्रीनित्यानंदजीनुं वेदांत फिलोसोफीपर व्याख्यान.

तारिख २६ डिसेंबर १९१२.

ईश्वर प्रार्थना बाद स्वामीजीए जणाव्युं हतुं के मंत्रीजीए मने वेदांत फीलोसोफी संबंधमां कांइ कहेवा कह्यु छे. वेदांत संस्कृत तथा फिलोसोफी बीजी भाषानो छे. वेदांतनो अर्थ प्रथम समजवो जोइए. वेदनो अंत ते वेदांत यातो वेदसार पण वेदांत. आ समयमां वेदांत शब्दथी उपनिषदनुं ग्रहण थाय छे. यजुर्वेदना चालीसमा अध्यायने ईशोपनिषद या तो वाजसनेय उपनिषद गणाय छे. बीजां उपनिषद भगवत्‌गीता ब्रह्मसूत्र विगेरेने वेदांत कहेवामां आव्यां आवा सूक्ष्म विषयमां विशेष कहेवाय तेम नथी. आजकाल शंकराचार्यनी अद्वैत फिलोसोफीने वेदांत कहेवाय छे. पण संस्कृत भणनार जाणे छे के वेदान्तथी शंकरनो अद्वैत तथा विशुद्धाद्वैत, शुद्धाद्वैत विगेरे छे. बे प्रकारनो भाव ते द्वीत अने तेनो भाव ते द्वैत अने तेनो न भाव ते अद्वैत छे. वेदांत संबंधमां टुंकमां कहेवाय छे ते पण अर्धा श्लोकमांज ! ब्रह्ममय जगत् मिथ्या छे अने जीव ते ब्रह्म छे बीजो कोइ नथी. बस एज वेदांत-अद्वैत कहेवाय छे पण वेदांतनो वास्तविक अर्थ–जीव–ईश्वर प्रकृति सर्वे कोइनी समज छे. परिणामवाद जेम के दुधनुं दहिं सुवर्णनुं आभूषण तेम जे कांइ देखाय छे सर्वे कांइ ब्रह्मज छे हरि तेज जगत् अने जगत् छे तेज हरि छे तेमां कांइ भेद नथी. केवळ अज्ञानताथी भुली जीव जीव माने छे पण वास्तवमां ते ब्रह्म छे. आ परिणामवाद छे पण विवर्तवाद ते हालना वेदांतनो वाद गणाय छे. ज्ञानानन्द कहे छे के कृपण एटले थोडी बुद्धिवाळो परिणामवाद माने छे पण ज्ञानीतो विवर्तवादने

माने छे. रज्जुने जोइ सर्पनुं भान थवुं अने दीवाथी ते वास्तवमां रज्जु होवानुं ज्ञान थवुं तेम ब्रह्मनुं ज्ञान थवाथी जगत् रहेतुं नथी ते विवर्तवाद कहेवाय छे. मृग-तृष्णानुं जळ–अने स्वप्न ए विवर्तवादनां दृष्टांतो अपाय छे. अज्ञानथी पोताने ब्राह्मण शूद्र काळो गोरो विगेरे मनाय छे पण पछी ज्ञानथी ते सर्व कांइ रहेतुं नथी. भ्रमथी जीव मनाय छे वास्तवमां ब्रह्मज छे.

द्वैतवादवाळा कहे छे के बेनो भाव ते द्वैत जीव अने ब्रह्मथी अलग ते भावने द्वैत कहेवाय छे एक ते बीजुं थइ शकतुं नथी–ते स्वभावथीज भिन्न छे, जेमके स्थिति, गति, अंधकार, प्रकाश, जड, चेतन, शीत, उष्ण विगेरे एकथी बीजुं थतुं नथी. तेम जीवथी ब्रह्म थइ शकातुं नथी. प्रकृति अनादि छे. आ द्वैत ते मध्वाचार्यनों मत छे.

त्रीजो मत रामानुजाचार्यनो छे. विशिष्टाद्वैत जे विशेषणवाळो छे ते विशिष्ट विशेषता ते खरी जीव छे ते परिधिनी विगेरे छे. व्यापकादि गुण ब्रह्मना छे. तमो-गुणादि प्रकृतिनां विशेषण छे. अने बन्ने एटले जीव अने प्रकृति विशिष्ट करेलो एटले साथे राखीने रहेलो जे ब्रह्म कहेवाय छे ते विशिष्टाद्वैत मत छे.

चोथो शुद्धाद्वैत छे. ते परिणामवादने मळतो छे तेमां कांइ विशेष नवीनता नथी आपणे अंधाधुंधीने छोडी बुद्धिपूर्वक विचार करवो जोइए. प्रथम ते बुद्धिवाद हतो. संस्कृतनुं सायन्स अने हालनो आविष्कृत सायन्स मेळवी स्वामीजीए बताव्युं के अग्निनां बे रूप मनाय छे एक परमाणु अने बीजो संयोगथी थयेलो. परमाणु-रूप अनादि छे. फुंक मारेथी दीवो बुझी गयो–ते क्यां गयो ? पेलो माणस मरी गयो ? माटे गयो क्यां ? ज्यां गयो त्यां तो हशेज ! कोइ कहेशे के गरमी ते गतिनुं परिणाम छे. हवे गरमी ते गति पहेलां हती के नहि. जो न होती तो अभा-वथी भाव थशे ? संसारमां जेनो सात्वनाभाव होय ते वस्तु होयज नहि जेमके सस-लानुं सींग विगेरे, इंग्रेजी विज्ञानपण तेमज कहे छे. संस्कृत सायन्सरूपथी व्यापक छे. पण ते विशेष क्रियाथी प्रकट थाय छे. इंग्रेजी सायन्स कहे छे के पहेलां कांइ न होतुं अने पछी थतुं नथी. कारणथी कार्य थाय छे अने कार्यनो लय पण कारणमां थाय छे.

अद्वैतवादना एवा तार्किक अने कठण सिद्धांतो छे जे समजी पण शकीये तेम नथी. जेमके भेदधिकारमां घडाथी लुगडुं जुदुं छे ते भेद घडामां रहे छे के लुग-डामां रहे छे के बन्नेमां के बन्नेथी अलग ? आ सूत्रने क्यां समजी शकाय.

आप ऋग्वेदनुं दशमुं सूक्त वांचशो ते दुनियानी फिलसोफीथी परे उच्च छे. आप ते सर्वविद्या जाणवा यत्न करशो.

बाद ब्राह्मण आरण्यक उपनिषद् शास्त्र पुराणादि समय आव्यो. छेल्ला वखतमां मुश्केली नडी. झीणी वात समजवी भारे पडे माटे मोटी मोटी वातो लेवा मांडी. बाद कुंभकरणनो हास्य भरेलो किस्सो रामायणमांथी संभळावी बताव्युं के आवा गपोळा सांभळी हास्य कराय छे पण जीव ब्रह्मनी कठण वातो समजतां माथुं पाकी आवे छे.

पुराणोमां सृष्टि उत्पत्ति विगेरेनां वर्णनथी बताव्युं के आवी अरितीथी सूर्यादिनी उत्पत्तिनी मान्यता ते केवी हास्यजनक अने अज्ञान मूलक छे. सोळ अब्ज टन कोलसानी गरमी तो सूर्यनी एक सेकन्डनी गरमी बराबर अने पृथ्वीथी साडातेर लाख गणो मोटो सूर्य ते कोइ छोकरीना गर्भमां क्यांथी आव्यो ?

विषय पर आवतां स्वामीजीए बताव्युं के घणा एम पण हाल कहे छे के सर्व कांइ जडज छे. पहेलां सर्व ब्रह्म छे तेम कहेवातुं सर्वनी घडीआळमां फरक पडे पण सूर्य रूपी ईश्वरनी घडीआळमां कांइ पण फरक पडतो नथी. मी. हक्स्ले विगेरे पाश्चिमात्य विद्वानो पण कोइ शक्तिने तो माने छे पण ते चेतन छे के केम ? तेनो निर्णय नथी. ज्यां सुधी ज्ञान शक्ति छे त्यां सुधी काम थाय छे. निद्रावाळो छोकरो हाथमां पुस्तक पकडी शकतो नथी. शरीरना मोटोरनर्व याने क्रियाजनक तंतुओ काम नाहि करवाथी ते पुस्तक पकडातुं नथी. हालना महान् हिंदी वैज्ञानिक बोसे सर्वमां चेतन व्याप्त मानेलुं छे. पण ते एक छे के बे छे. पोतानी मेळे कोइ जेलमां नथी जतो. जो मायाथी ईश्वर जीव बने तो पछी पाछो ब्रह्म थवा बाद पण ते प्रबळ माया पण लेवा ब्रह्मने पाछो जीव वगळीने बनावशे. वेदमां ब्रह्मने शुद्ध कहे छे. तेने अपापविद्ध कहे छे. शंकराचार्य ते मंत्रनो अर्थ ब्रह्मने सर्व व्यापक सर्वनो उत्पन्न करनार क्रिया नस नाडीथी राहित छे. अज्ञान अविद्याथी पाप रहित छे. ज्या शंकराचार्य ब्रह्मने शुद्ध कहे छे. अने तेवो शुद्ध ब्रह्मज सर्व कांइ बने छे. तो ते मळ अज्ञान विगेरे आव्युं क्यांथी ? जो ब्रह्म ते जगत्नुं अभिन्ननिमित्तोपादानकारण होय तो शुद्ध वेदनी अंदरनुं विशेषण घटी शकतुं नथी. ते युक्तिथी सिद्ध नथी थइ शकतुं. आ विषयमां उपादान कारण विरुद्ध रामानुजे शतदूषणी अने सहस्रदूषणी छे, हवे रज्जुमां सर्प पण घटतो नथी. कारण बीजी वस्तु तो होय छेज तेमां लंबाइ आदि सदृशपणुं होय छे. पण ब्रह्मनी सदृश कोइ नथी. ब्रह्म निराकार चेतन नित्य छे जगत् साकार, जड, अनित्य छे.

जो अज्ञानथी थाय छे तो के अज्ञान कोनुं ? विगेरे प्रश्नोनो उत्तर मळी शकतो नथी. हुं पांत्रीस वर्ष सुधी अद्वैतवादी रह्यो छुं अने सर्व ग्रंथो युक्तिओ तेनी में वांची छे अने हुं प्रतिज्ञाथी कहुं छुं के ते अद्वैतवाद टकी शकतो नथी. शंकराचार्ये पण **तस्यच नित्यत्वात्** द्वैतना भाष्यमां बताव्युं छे. त्यां आगळ तेमनी युक्ति विगेरे चाली शकी नथी. तेमज सूत्रोमां द्वैत साबित शंकराचार्यने पण करवुं पडे छे. जीव अने ब्रह्म मळी जता पण होय तो पण तेनी विद्यमानता जती रहेती नथी. जरा जीव छे तो तेनो अत्यंताभाव–नाश नथी थतो. सांख्यमां कपिलमुनि कहे छे के आत्मा छे–ते नहि होवानुं साधन मळतुं नथी. तेमज बीजा रूपमां पण बदलाइ शकतो पण नथी. तेम प्रकृति पण छे आत्मरूप नथी थइ शकती. ऋग्वेदमां पण एक प्रकृति रूप वृक्ष पर बे स्वरूप जीव ईश्वर एक फळ–याने सुख दुःख भोगवतो अने बीजो प्रकाश करतो पण भोग करतो नथी. गीतामां पण कहे छे के पुरुष बे छे एक क्षर अने बीजो अक्षर छे; सर्व भूतो ते क्षर छे. बीजो कूटस्थ आत्मा ते अक्षर छे आ बेथी पण उत्तम बीजो पुरुष छे तेने परमात्मा कहेवाय छे ते लोकनुं भरण पोषण करे छे. ते नाश रहित–फेरफार रहित तेमज उपर सत्ता याने वशमां राखनार छे. वेदमां कहे छे अजरामर नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाववाळा ईश्वरने जाणी शकता नथी. ते आ सर्वने उत्पादन करे छे ते तमाराथी अन्य अलग छे तेमज तमारी अंदर पण छे. तमो अज्ञानथी ढंकाया छो तेथी जाणी शकता नथी.

श्रुतिओमां बे प्रकारनां वचन मळे छे. तेथी आ बधा वाद उत्पन्न थया छे. पण तेमां ज्यां जीव ब्रह्मथी जुदो छे ते वचन द्वैतवादीए आगळ कर्यां अने शंकराचार्ये एकता बनावनारना उपर आधार बांध्यो पण तेमां मंत्रो गौण मानवानुं नथी. पण तेने समजवां जोइए. जेमके चोपडी आकाशमां छे पण ते आकाश स्वयं नथी तेने अन्वयव्यतिरेक भ[illegible]थी समजेथी सर्वेनो रदियो आवी मळे छे ! हुं पोते चुस्त वेदांती हतो अने ते[illegible] द्वैतनां सर्व पुस्तको वांचेला पण ज्यारे द्वैत परक अने स्वामीजीना सत्यार्थ प्रकाशने वांची घणा विद्वानोने शंका करेली पण कोइ तेनो निर्णय नथी करतुं. पण स्वामीजीएज अन्वय तरिकेनो दाखलो आपी तेनुं समाधान करेलुं छे. अने तेथीज हुं आर्यसमाजी थयो छुं. माटे हुं सत्यरत धर्मने अनुसरी आवी हकीकत शुद्ध हृदय थी कहुं छुं के स्वामी दयानंद जेवी वेदांतनी शंकानुं समाधान कोइ करी शक्या नथी.

———

यतिवर नित्यानन्द ।

(१)

पेय-वस्तुमें पयके तद्वत्, खाद्य-वृन्दमें नव-नवनीत ।
गेय-वस्तुमें गीताके सम, गान-वृन्दमें सुर-संगीत ।
ब्रह्म-ज्ञानमें व्यास-वचन सम, सद्वैद्योंमें था हारीत ।
उनका सम्भाषण हे मित्रो ! मिष्ट, सार-युत और पुनीत ॥

(२)

धन्य नाम गुजरात देशमें थे पहिले कवि-माघ समान ।
अबभी नित्यानँद कोविद सम, होते हैं यति-वर गुणवान ।
माघ प्रबुधने सारा वैभव बुध-कविगणके अर्थ दिया ।
नित्यानँदने सारा सञ्चय, गुरुकुलको शुभदान किया ॥

(३)

देश देशमें धर्म-हेतु वे, दौड़ दौड़के जाते थे ।
भाषण पहिले नारदके सम, सामगान वे गाते थे ।
तन मन धनसे सब भारतमें, उनने धर्मप्रचार किया ।
मृत भारतजनतामें उन्नत जीवनका, सञ्चार किया ॥

माँगीलाल कविकिङ्कर,
छा. नीमच ।

ओ३म्

भाग दूसरा।
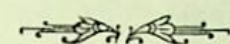
पत्रव्यवहार।
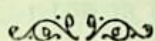
श्री स्वामी नित्यानन्दजी और देशी राज्य।

"यथा राजा तथा प्रजा" की उक्ति अभीतक अपना गौरव स्थिर रक्खे हुए है. "महाजनो येन गतः सः पन्था" ये वाक्य भी गम्भीर अनुभवके पश्चात् प्रचारित किये गये थे. जिस अटल सत्यकी घोषणा इनके द्वारा होती है, वह प्रत्येक व्यक्तिके अनुभवसे प्रमाणित होती रहती है। अस्तु। यदि कोई महानुभाव अपने उद्देशमें उत्कृष्ट सफलता प्राप्त करना चाहे तो यह आवश्यक है कि—वह जहां सर्व साधारणका सहयोग और सहानुभूति प्राप्त करे, वहां राजाओं और महाजनोंके हृदय में भी अपने उद्देश (सिद्धान्त) की सत्यताके गौरवका आदर्श स्थापित कर दे। सर्व साधारणका अनुगमन जहां उस उद्देशकी जड़ें दृढ करेगा, वहां राजाओं और महाजनोंकी भक्ति उसको फलपुष्पसमन्वित और सौन्दर्य्ययुक्त बना देगी।

इसी सिद्धान्तको लक्षमें रखकर महर्षि स्वामी श्री दयानन्दजीने जहां सर्व-साधारणमें प्रचार कर आर्य्यसमाजकी जड़ें पातालतक पहुंचा दीं, वहां उदयपुराधीश मेदपाटेश्वर आर्य्यकुलकमलदिवाकर महाराणा श्री सज्जनसिंहजी, जोधपुरराज्याधीशके अनुज कर्नल सर प्रतापसिंहजी, शाहपुराधीश राजाधिराज श्रीनाहरसिंहजी आदि नरपति, और जस्टिस माधव गोविन्द रानडे आदि महाजनोंको अपना सहयोगी बनाकर इस वृक्षको सुपल्लवित और शान्तिदायक बनाया।

श्री स्वामी नित्यानन्दजीने भी अपना जीवन वैदिक धर्मके प्रचारके लिये अर्पण कर दिया था, अतः जैसा कि पाठक इन पिछुले पृष्ठोंमें पढ चुके हैं; उन्होंने इस उद्देशकी पूर्त्यर्थ कोई अवसर बाकी न छोड़ा।

परमात्माकी वाणी वेदोंके सन्देशको सर्वसाधारणमें घोषित करनेके लिये जहां उन्होंने राजस्थानकी मरुभूमि, बंगालके मलेरियाग्रस्त प्रान्त, पंजाबसा रूक्ष व सजल प्रदेश, और मद्राससे अपरिचित और अनभ्यस्त भाषाभाषी देशभागमें पर्य्यटन किया; वहां राजा महाराजाओं और महाजनोंके हृदयमें भी इस सूर्य्यके प्रकाशकी किरणें पहुंचानेमें कुछ कसर नहीं छोडी।

भारतके बाहर भी स्वामीजीका विचार इस सन्देशको स्वयं पहुंचानेका था; जैसा कि उनकी जापान और नैपालयात्राके प्रयत्नोंसे प्रकट है। परन्तु आकस्मिक और अनिवार्य्य अड़चनोंसे यह भ्रमण नहीं हो सका।

आगेके कुछ पृष्ठोंमें हमारा विचार स्वामीजीके रजवाड़ों और महाजनोंमें प्रचारका संक्षिप्त विवरण उपस्थित करनेका है। आशा है कि वह पाठकोंको रुचिकर होगा और स्वामीजीके परिश्रम और तज्जनित सफलताका बोध करावेगा।

यद्यपि जो कुछ यहां लिखा जावेगा, वह स्थालीपुलाकन्यायसे एक दो चांवल ही होंगे; क्योंकि स्थानका संकोच और लेखककी अयोग्यता, दोनोंही इसमें बाधक हैं।

स्वामीजी और बडौदा राज्य।
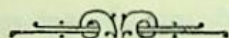
वर्तमान भारत यदि अपने किसी देशी नरपतिपर अभिमान कर सकता है और वास्तवमें करता है तो वह सर्वप्रथम His Highness श्री सयाजीराव गायकवाड़ महाराजा बड़ोदा हैं।

वास्तवमें,

"गुणिगणगणनारम्भे न पतति कठिनी सुसम्भवा यस्य। सा माता यदि सुतिनी वद वन्ध्या कीदृशी भवति ?"

इस उक्तिके भावानुसार आपने अपना जन्म लेना सार्थक कर दिखाया। साधारण मातापिताके यहां जन्म लेकर अपूर्व धैर्य्य, नीति, दया, गौरव और वात्सल्यसे आप अपनी प्रजाका उपकार कर रहे हैं और साथही अपने सहयोगी नरपतियोंके लिये आदर्श हो रहे हैं।

जिस प्रकार अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षाकी घोषणा कर आपने अपने राज्यमें मनुष्यमात्रको ज्ञानामृत पान करनेका प्रबन्ध किया है, अथवा इसी प्रकार जो २

अन्य धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक सुधार आपने अपने राज्यमें किये हैं, उन सबका वर्णन करना हमारा लक्ष्य न रहनेसे हमें पाठकोंके सन्मुख उन्हीं विषयोंका वर्णन करना है; जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध हमारे चरितनायक श्रीस्वामी नित्यानन्दजीसे है । अस्तु ।

श्रीमान् स्वामीजी महाराजके उद्योगसे बडौदा राज्यकी प्रतिष्ठित और सर्वसाधारण जनताकी उपस्थितिमें ता० ३२-५-१८९४ को बड़ौदा नगरमें आर्य्य समाज स्थापित हुआ ।

इस संबन्धमें बाबू गणपतिसिंहजी हेड ड्राफ्टमैन और आर्चीटेक्चर चीफ इन्जीनियर्स आफिसका नामोल्लेख करना आवश्यक है ।

बड़ौदामें आर्यसमाजको दृढ करने और उसकी उन्नतिकी चिन्तामेंही आपने अपने समयका अधिक भाग व्यतीत किया है । श्रीस्वामीजीकी सहायतामें आप सदा तत्पर रहते थे । श्रीमन्त महाराजा साहिब गायकवाडसे भेट होनेके पूर्व स्वामीजी जब २ बड़ौदा आते थे तो आपही उनके निवास और भोजन आदिका प्रबन्ध करते थे । बडौदामें आर्य्यसमाजका बीजारोपण यद्यपि श्रीस्वामीजी महाराजके उपदेशोंके प्रभावसेही हुआ तो भी इतना कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं है कि आर्य्यसमाज बड़ौदा ओर बड़ौदा राज्यमें वैदिक धर्मप्रचारके विस्तार करनेमें धर्ममूर्तिका विशेष उद्योग सदासे रहा है ।

आर्य्य समाजके विरोधमें जब २ किसी प्रकारका कोई भी साधारण या प्रबल आन्दोलन हुआ, आपने उसका बड़ी दृढता, अदम्य उत्साह, प्रशंसनीय नीति और धैर्य्यसे सामना किया । आप दृढ आर्य्य हैं, स्वामीजीकी आपपर अत्यन्त कृपा थी । साथही आपका मान बड़ौदाभरमें छोटेसे लेकर बड़ेतक करते हैं । स्वामीजीको अपने उद्देशकी पूर्तिमें यथावसर आपसे विशेष सहायता मिलती थी ।

आर्य्यसमाज स्थापित होनेके अनुमान एक वर्ष पीछे न्यायमूर्ति रानडे महोदयके आग्रह और परिचयपत्रद्वारा स्वामीजी श्रीमन्त महाराजासाहिब गायकवाड़से मिले । प्रथमही भेटमें महाराजासाहिबपर स्वामीजीकी योग्यता, तेज और विद्वत्ताका अत्यन्त प्रभाव पड़ा और परस्पर मित्रता स्थापित हो गई, जो दिन प्रतिदिन दृढ होती गई ।

वास्तवमें इस भेटसे श्रीमन्त महाराजासाहब और स्वामीजी दोनोंकोही लाभ हुआ । स्वामीजीको एक उन्नत विचार और सुधारक नरपतिकी मित्रतासे अपने उद्देश- (वैदिक-धर्म-प्रचार) की पूर्तिमें अनेक सुविधाएँ प्राप्त हुईं और श्रीमन्त

महाराजा साहबने अपने राज्यमें सामाजिक और धार्मिक सुधार करनेके लिये भिन्न २ विषयोंपर परामर्श लिया । महाराज साहिबके विद्याधिकारी और प्राइवेट सेक्रेटरीसे स्वामीजीका जो पत्रव्यवहार होता रहता था, उससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि स्वामीजीके परामर्शसे बड़ोदा राज्यके शिक्षा विभागमें कई सुधार समय २ पर होते रहते थे । महाराजा साहिब स्वामीजीकी योग्यताको पूर्णतया जान गये थे । अतः उसीके अनुसार आप सदा स्वामीजीका आदरसत्कार किया करते थे । बड़ोदाका राजकीय गेस्टहौस (अतिथिगृह) स्वामीजीकी अभ्यर्थनाके लिए सदा खुला रहता था ।

यह विख्यात है कि रजवाड़ोंमें महाराजोंके साथ भोजन करनेका मान बहुतही अल्पसंख्याक अन्तरङ्ग मित्रों और राजपरिवारके पुरुषोंको यदा कदा प्राप्त हुआ करता है । स्वामीजी जब २ बड़ोदा जाते थे तो महाराजासाहिब प्रायः आपको अपने साथ भोजन करनेके लिये निमंत्रित कर स्वामीजीके प्रति अपनी श्रद्धाका परिचय दिया करते थे । एक इसी बर्तावसे पाठकोंको महाराजा साहबके हृदयमेंके स्वामीजीके मान और गौरवकी सीमाका ज्ञान हो सकता है ।

इस प्रकार महाराजा साहिब जहाँ स्वामीजीका उत्कृष्ट आदर सत्कार करते थे वहां उनकी योग्यतासे पूर्ण लाभ उठानेमें भी पूर्ण उद्योगी थे ।

आपकी इच्छानुसार स्वामीजी श्रीमती मातुश्री चिमनाबाई महाराणी साहिब, राजकुमार, और सौ. राजकुमारी इन्दिरा राजा और अन्य राजपरिवार और अमात्यवर्गको प्रायः धर्मोपदेश दिया करते थे । स्वामीजीके उपदेश बहुधा लक्ष्मीविलास पेलेस, मकरपुरा, न्यायमन्दिर आदि राजमहलोंमें होते थे । और और इन अवसरोंपर राजाज्ञाद्वारा राज्यके प्रतिष्ठित कर्मचारी अपने परिवारसहित उपस्थित रहते थे । उपदेशोंके तत्त्वको हृदयङ्गम कर तदनुसार आचरण करनेके लिए महाराजा साहिबका अपने राज्याधिकारियोंसे नित्य आग्रह रहता था । स्वयं महाराजा साहिब अपने अनेक विचारोंकी दृढता और वास्तविकता जांचनेके लिए स्वामीजीके विचार जानना आवश्यक समझते थे । और इसी निमित्त वे जब कभी प्रवासमें होते तो वहीं स्वामीजीको तार देकर बुलवा लेते थे । जैसा कि स्वामीजीकी नैनीताल, मसूरी, कश्मीर आदि यात्राओंसे प्रगट है । महाराजा साहिब की इच्छानुसार स्वामीजी विशेष २ विषयोंपर प्रायः निबन्ध भी लिखते थे और कभी २ लिखित व्याख्यान दिया करते थे । व्याख्यानोंका विषय धार्मिक और सामाजिक हुआ करता था ।

महाराजासाहबकी प्रेरणासे स्वामीजीने प्रस्तावरूपमें कितने ही लेख लिखे; यथा- " वैदिक विवाहपद्धति, वैदिक संस्कार, आर्य्य त्यवहार (छुट्टियां), पुरोहित-परीक्षा " आदि । स्वामीजी यथावसर शास्त्रीय सम्मति भी देते रहते थे ।

महाराजासाहबकी आज्ञासे स्वामीजीके प्रबन्ध और निरीक्षणमें वेदोंके प्रसद्ध ज्ञाता और सुप्रसिद्ध चित्रकार ' श्रीपाद दामोदर सातवळेकर ' जी-द्वारा सत्यार्थ-प्रकाशका मरहठी अनुवाद हुआ । श्री० सातवलेकरजीके इस कार्य्यसे प्रसन्न होकर महाराजाने उन्हें ३००) रुपये पारितोषक स्वरूप भेट किये थे ।

अन्त्यजोंकी शिक्षा और उनके उत्थानके विषयमें भी महाराजासाहिब स्वामी-जीसे प्रायः परामर्श और सहायता लिया करते थे । यथावसर स्वामीजी अन्त्यज-पाठशालाओंका निरीक्षण करते रहते थे ।

वैदिक कोषकी रचनामें स्वामीजीको सर्व प्रथम १५०००) की सहायता और प्रोत्साहन महाराजा साहबसेही मिली थी । महाराजासाहबके तत्कालीन प्राइवेट सेक्रेटरीने जो प्रशंसात्मक पत्र इस सबन्धमें लिखा था, वह चरित्रके साथ मुद्रित हो चुका है । इसी निमित्त महाराजा साहिबने अपना बनारसका स्थान दिया था ।

स्वामीजीकीही प्रेरणासे महाराजासाहिबने मुम्बई प्रतिनिधिके गुरुकुलके लिए उमरेटमें अपने निजु महल देनेका आज्ञा, अपने खानगी कारव्वारीको दी थी । खा-नगी कारव्वारी श्रीमन्त सम्पतराव गायकवाड़ Bar-at-law (आप महाराजाके अनुज हैं) के पत्रकी प्रतिलिपि नीचे प्रकाशित की जाती है ।

No. 2217.

BARODA,
Khangi Office
13th April, 1911.

Dear Swamijee,

His Highness the Maharaja Saheb has been pleased to direct that some of the buildings at Umreth may be placed at the disposal of Gurukul by nominal rent. I have verbally communicated the order to you. Please let me know the name and address of the person with whom I should communicate before giving effect to the order.

Yours sincerly,
(Sd.) Sampat Rao Gaikawad
Khangi Karbharee.

स्वामीजीकीही प्रेरणासे महाराजासाहिब और उनके अनुज श्रीमन्त सम्पतराव गायकवाड़ Bar-at-Law ने आर्य्यधर्म परिषद्के प्रधानका आसन ग्रहण किया था। उस अवसरपर महाराजासाहबने जो भाषण किया था उसका सार यह है—

" महात्मा संन्यासियो और आर्य्य सज्जनो, कुछ सप्ताहपूर्व श्रीस्वामी नित्यानन्दजी आदि आपके कई एक नेताओंने आपकी परिषद्के सभापतिका स्थान ग्रहण करने और आपके कार्य्यमें सम्मिलित होनेके लिये मुझे पूछा था, परन्तु उस समयही मैं विलायतसे लौटा था और मेरे राज्यका काम अधिक था इस लिये मुझे कहना चाहिये कि ऐसे महान् धर्म और सुधारसम्बंधी विषयोंपर पर्य्याप्त विचार करनेके लिये मेरे पास पर्य्याप्त समय नहीं था। तथापि आज मैं आपके समक्ष सम्मेलनमें भाग लेनेके लिये उपस्थित हुआ हूं और इस लिये यदि प्रसंगानुकूल विचार प्रकट करनेमें त्रुटि मालुम हो तो उसके लिये आप क्षमा करेंगें (करतलध्वनि)।

सज्जनो, हमारी हिन्दी प्रजाका कल्याण तथा उन्नतिसम्बधी प्रत्येक शुभ कार्य्यमें भाग लेने तथा यथाशक्ति सहायता करनेमें मैं अपना धर्म और आनन्द मानता हूं (करतलध्वनि) और विशेषकर मेरे राज्यमें इस प्रकारके कार्य्य हों उनमें उपस्थित होकर सम्मिलित होना मैं अपना प्रथम कर्तव्य समझता हूं।

आर्य समाज हिन्दकी प्रजाकी उन्नति करनेके लिये यथाशक्ति प्रयास करता है। और विविध प्रकारसे देशकी स्थिति सुधारनेके लिए और वेद धर्म और ज्ञानप्रचार करनेके लिए कार्य्य कर रहा है इस निमित्त मेरी हार्दिक सहानुभूति है।

सज्जनो ! आर्य्यसमाज धार्मिक मंडल है। और इस लिए धर्मसम्बन्धी भिन्न दशाओंपर आज मैं संक्षिप्त विवेचन करूंगा। धर्म यह बड़ा विशाल शब्द है, मेरी समझमें ऐसे विशाल क्षेत्रमें सर्वथा न्याय चुकानेके लिए मैं योग्य नहीं, तथापि यथाशक्ति संक्षेपसे कुछ शब्द आपके समक्ष कहूंगा।

प्रथम तो मुझे कहना चाहिए कि दुनियाकी किसी भी प्रजाका निर्वाह धर्म विना शायद ही चलता होगा; उसकी आवश्यक्ता बहुत बड़ी और अनिवार्य्य है। परन्तु इस विषयमें मैं जो कुछ कहूं उसके पहले " धर्म क्या है, उसका हेतु क्या है, और धर्मसे मनुष्य जातिका अभ्युदय होता है अथवा अवनति ? " ये तीन प्रश्न उपस्थित करता हूं। ऐसे महान् निर्णयके लिए मैं ढोंग नहीं करता (नहीं नहीं, आप योग्य हैं की ध्वनि) परन्तु मैं इतना ही कहूंगा कि जो धर्म मनुष्य समाजकी स्थिति उच्चतम नहीं करता और अज्ञान नहीं हटाता वह धर्म, जनसमाजमें कभी आदर नहीं पाता। जो धर्म समाजका हित करता है, वह आदरणीय होता है।

" धर्म ईश्वरकृत है अथवा मनुष्यकृत " इस विषयकी चर्चा करना, इस समय व्यर्थ है, कुछ भी हो उसकी आवश्यक्ता महती है; किन्तु वह ऐसी वस्तु नहीं कि एकदम स्वेच्छानुसार बदल दी जाय। वह सैंकड़ो वर्षोंका परिणाम है। और उसके बदलनेमें भी सदियां हो जाती हैं। धर्म यह कुछ अपना वस्त्र नहीं जो हम इच्छानुसार उसको बदल लेवें और जैसा चाहें वैसा लें। मुझे कहना चाहिए कि अपना धर्म स्वीकार करनेसे प्रथम विचार करना चाहिए। जहां बुद्धिको प्रमाण नहीं माना जाता, उस धर्मका प्रजा नहीं मान्य करती। यहां मैं भिन्न २ धर्मोंके सारासारकी तुलना नहीं करता; हिन्दू धर्म यह आजका विषय है। इस लिए इतनाही कहूंगा आज जिसे हम हिन्दू धर्म मानते हैं, वह वस्तुतः हिन्दू धर्म नहीं, आजका हमारा धर्म हमारे मूल वेद धर्मसे विकृत होकर अनेक प्रकारसे बदल गया है। हम इस समय विकृत धर्मको वास्तविक धर्म मान रहे हैं, जिसका कारण हमारा अज्ञानही है।

आर्य्य समाज मेरे विचारमें वेदिज़्म—वैदिक धर्मका अवलंबन करनेवाली संस्था है। मुझे कहना चाहिये कि यह वैदिक धर्म कालान्तरमें अनेक प्रकारसे विकृतिको प्राप्त हुआ है। उस समयका धर्म उस समयके सांसारिक और राज्यके जीवनका यथार्थ चित्र खींचता है।

वैदिक कालमें हमारे धर्ममें मूर्तिपूजा नहीं थी; तथा पशुयज्ञादि कुछ क्रियायेंभी नहीं थीं। पीछेसे ब्राह्मणोंने यज्ञमें पशुओंका होम करना आरम्भ किया, धर्मके नामपर पशु प्राणी और कभी २ मनुष्योंका भी वध होने लगा और तदनुसार धर्मके निमित्त जीवहत्या प्रविष्ट हुई। बकरे भैंसे आदिका वध करना देशसेवा और पुण्य समझा जाने लगा। ऐसी स्थिति कई सदियोंतक रहनेपर कुछ बुद्धिमान् लोगोंमें विचारजागृति हुई। कि पशु प्राणियोंके वध करनेकी अपेक्षा आत्मसमर्पणमेंही पुण्य है। आत्मसमर्पण विना समाजसेवा नहीं होती। और समाजसेवा विना वास्तविक उन्नति नहीं होती। सद्वर्तन, शान्ति और इन विचारोंका प्रचार करनेके लिये महात्मा बुद्धने जन्म धारण किया; जिन्होंने बाह्य शुद्धिकी अपेक्षा आन्तर्य शुद्धिकी आवश्यक्तापर विशेष उपदेश देकर लोगोंको सिद्धान्तपर चलाया। और संसारकी उन्नतिके लिये भारी प्रयास किया। सज्जनो मुझे कहना चाहिये कि, चाहे जैसे बड़े सुधार हों, और उनके लिये बड़े २ कार्य्य किये जावें; परन्तु जबतक प्रजाके नेता और भद्रगण उसके अनुमोदक और सहायक नहीं होते, तबतक वह कार्य्य नहीं चल सकते (सुनो २ की ध्वनि)। हमारे हिन्दु धर्मके सम्बन्धमें भी ऐसा ही हुआ; प्रजाको सहायता नहीं मिली और वह गति फिर बदली। अज्ञानता और भ्रमोंने घर घेरना आरम्भ किया, उससे परिणाम क्या

हुआ ? हिन्दके चित्रकी ओर ऐतिहासिक दृष्टि डालो; हिन्दमें राजकीय द्वेष हुआ, धार्मिक अवनति हुई और सामाजिक स्थिति भिन्न २ हो गई । प्रजाके बड़े भागने पुरुषार्थ खोया ! और नपुंसकोंकी तरह दैववादी हुए, प्रयत्न करनेकी शक्ति गई, और कार्य्यसिद्धीके लिए ईश्वरकी सहायतानिमित्त नामकी भक्ति और मिथ्या-निवृत्ति बढ़ी । ऐसी शोकजनक स्थिति हुई है। आपको जानना चाहिए, कि ईश्वरीय नियम सदा एकसे ही हैं, प्रत्येक प्रकारके संयोगोंमें भी क्षणिक नहीं और इस लिए उसका पूर्ण अभ्यास करना चाहिए । ये ईश्वरीय नियम ईश्वरीय शक्तिसे पृथक् नहीं हो सकते ।

ईश्वरीय नियमानुसार वर्तन रखना और जगत्के विकासमें आगे बढना हमारा कर्तव्य है (करतलध्वनि) । मैं जानता हूं कि हमारी शक्ति परिमित अर्थात् सीमा-वाली है' परन्तु यह सीमा कहांतक है, यह कहना अति कठिन है । यदि बुद्धि और शक्तिकी सीमा मानले तो वर्तमान जगत् सीनेमेटोग्राफ, वायुयान, बिनातारके तार आदि जो हमको आवश्यक मालुम होते हैं वह साधन कहांसे उत्पन्न होते ? (करतलध्वनि) । यह सिद्ध कर सकते हैं कि मानवी शक्तिकी सीमा नहीं । परिश्रम और बुद्धिसे प्रत्येक मनुष्य कार्यसिद्धि कर सकता है । आप केवल हाथ जोडकर इच्छा और याचना करनेकी अपेक्षा दृढ श्रद्धासे निरन्तर यत्नशील रहेंगे तो अपनी स्थितिमें बहुत सुधार और वृद्धि कर सकेंगे ।

धर्मनिमित्त हमारे देशमें बहुत धनव्यय होता है, परन्तु उसका फल कुछ नहीं । कथा पुराण आदि हम लोग श्रद्धासे सुनते हैं, परन्तु Why & wherefor अर्थात् " क्यों और किस लिये " आदि प्रश्नोंसे स्वयंबुद्धिका उपयोग नहीं करते, यह शोककी बात है । हमारे धर्म्माचार्य्य और महन्त इस विषयपर क्यों न ध्यान दें ? प्रजाकी धार्मिक स्थितिपर दृष्टि डालना उनका कर्तव्य है; अतएव महन्त और पुजारी आदि धर्माचार्य्योंकी स्थिति सुधारनेके लिये मैंने अपने राज्यमें धारा नियत की है । ठीक पूछिये तो धर्माचार्य्य भी पुलिसकी तरह प्रजाके नौकर हैं ।

दूसरी वक्तृतामें महाराजा साहबने अपने श्रीमुखसे वर्णन किया—

" सज्जनों कितने ही ऐसा समझते होगें कि महाराज विलायत हो आये हैं, इस लिये सबको भ्रष्ट करनेका विचार रखते हैं " (नहीं नहींका शब्द) । मैं कहूंगा कि मैं दृढ हिन्दू हूं और हिन्दू धर्मके प्रति मेरा जितना वास्तविक अभिमान थोड़ोंही को होगा (करतलध्वनि) × × × × × आप जिन रीतियोंको धर्म मानते हैं, उन सबको मैं अन्ध श्रद्धासे माननेके लिये तय्यार नहीं, ईश्वरका पारितोषक

(Reason) विचारशक्ति छोड़नेके लिये में तैय्यार नहीं, अन्तमें आपको भी यही बोध देता हूं कि शास्त्रोंमें बहुतसी उत्तम बातें हैं परन्तु बिना विचारे 'बाबा वाक्यं प्रमाणम्' के न्यायानुसार नहीं चलना चाहिये।

अपनी यूरोपयात्रामें भी महाराजा साहिब स्वामीजीका स्मर्ण किया करते थे तथा अपने मंत्रिगणोंद्वारा उचित संदेश भेजते रहते थे।

बाहरसे अन्य धर्मावलम्बी विद्वानोंके आनेपर महाराजा साहिब स्वामीजीसे उनका धार्मिक विषयोंपर शास्त्रार्थ भी कराते थे।

महाराजा साहिबने स्वामीजीसे कुछ समयतक सत्यार्थप्रकाशका अध्ययन किया था।

सारांश, महाराजा साहिब स्वामीजीकी योग्यतासे पूर्ण लाभ उठाते थे और स्वामीजीने भी महाराजा साहिबके समान उन्नतविचार नरपतिकी मित्रता और सहायतासे वैदिक धर्मकी सेवा करनेमें यथाशक्ति उद्योग किया। जिसका परिणाम पूर्ण रूपसे सन्तोषजनक रहा। नीचे कतिपय पत्रोंकी प्रतिलिपि उद्धृत की जाती है, जिससे पाठकोंको ज्ञात होगा कि महाराजा साहब और स्वामीजीके परस्परके बर्तावके विषयमें जो कुछ संक्षेपसे लिखा गया है वह साधार है और उसमें अत्युक्ति नहीं की गई।

(१)

श्रीः

बड़ोदा राजधानी ता. १३—२—१२

स्वस्ति श्रीमद्वेदवेदाङ्गमहोदधिमथनमन्दरायमाणमतीनां परमात्मैकनिष्ठानां नित्यानंदमनुभवतां नित्यानंदयतीनां सन्निधौ,

श्रीमत् गायकवाड़महाराजनिदेशवर्तिनः 'शार्ङ्गपाणि' इत्युपपदधारिणः कृष्णरावशर्मणः सन्तु नमनानि। अथो दन्तस्तु भाषया।

राजा और राजसेवकोंके धर्मके सम्बन्धमें संस्कृत वाङ्मयमें जो २ वचन उपलब्ध होते हैं, उनपरसे एक "राजधर्म" नामका पुस्तक तैयार करनेका कार्य्य हमारी देखरेख नीचे हो रहा है। उस विषयके बहुतसे वचन, स्मृति नीति, पुराण साहित्य और इतिहासके ग्रन्थोंमेंसे संगृहीत हो गये हैं।

वेदोंमेंसे जो कुछ उपलब्ध हुआ है, उसकी नकल आपके तरफ इस पत्रके सोबत भेजी है।

आप इस विषयके परिशीलन निरन्तर करते रहते हो। कृपा करके चारों वेदों

मेंसे राजा और राजसेवकोंके धर्मके सम्बन्धमें आप तसद्दीसलेके कुछ विशेष जो उपलब्ध होय सो भेज देनेकी कृपा करिएगा ।

इस राजकार्य्यमें आपके तरफसे यथा योग्य सहाय्य मिलना इष्ट है । इस पत्रका प्रतिउत्तर हमारे तरफ भेजियेगा—इति शिवम् ।

कृपाकांक्षी—कृष्णराव विनायक शार्ङ्गपाणि

हुजूर कामदार,

URGENT.

No. 357 of 1910–11.

Central Library

Baroda, 4th October, 1911.

To,

Swami Nityanandji

Shant kuti Simla.

Dear sir,

H. H. the Maharaja Saheb has ordered us to prepare a list of Sanscrit books relating to the religion of the Hindus such as the Vedas, Smrities, Puranas etc. which are worth translating in Marathi, Gujrati and Hindi for the use of the general public. I have therefore to request you to kindly send us such a list with remarks against such of them as have been to your knowledge been already translated in Hindi (or English or Gujrati). This information is wanted very urgently by the Maharaja Sahib. You will therefore favour us with your information as soon as possible.

Yours faithfully,

(Sd.)________________

Principal assistant to the Director of State Libraries.

Necessary extract from the 9th Europe trip letter Dated Vicly 31st May 1911.

My dear sir.

3. His Highness the Maharaja Saheb has asked me to send you an article in the American Review of Reviews viz. " Three centuries of the English Bible " I send the printed

article in this cover. His Highness wishes to have a similar effort made to put together in a concise and popular form the religious text books of the Hindus.

He desires you to send this article to the palace librarian who should be requested to prepare a list of book for His Highness's information dealing with religion of the Hindus. *i. e.* the Vedas the Puranas the Smrities etc. His Hihgness wants a list of important books only with a remark against each whether that has already been translated into either English, Gujrati, Marathi or Hindi. The Librarian can take the help of other scholars in drawing up the list and when it is ready please send it up here for Highness' information.

Vicly — I am yours sincerly
(Sd.) G. S. Sardesai,

महाराजाके पत्रकी उक्त प्रतिलिपि स्वामीजीको लाइब्रेरियन महोदयके पत्रके साथ प्राप्त हुई ।

Princess School,
Baroda 25th March 1907.

I have been asked by H. H. the Maharaja Saheb to request you to kindly give some lectures on Hindu religion to Princess Indira Rajá at the School. May I beg to know how long you are going to stay in Baroda and if it would be convenient to you to hold the lectures at about 4-30 every afternoon from tomorrow,

Upon hearing from you I shall let you know finally.

I am yours sincerly,
(Sd.) G. S. Sardesai

BARODA,
27-1-1913.

My dear Swamijee,

I am sending you my note book containing the translation of the Vedic passages and my notes. Kindly go through the whole and make your own notes on the lines which we discussed to day.

I want also a few points from you regarding the development of the Hindu marraige ritual so that I could write a small introduction.

Please read and improve on the notes of the ceremonies at the end of the book. I send you also Griffith's translation of Rigveda (ऋग्वेद) the सूक्त "सत्येनोत्तभिता भूमि is 85 of the 10th Mandal. Every passage is marked at the beginning of my note book when it occurs in the ऋग्वेद.

I send the विवाह विधि चंद्रिका containing the text. All passages at the end and Marathi translation. I shall meet you on Wednesday.

Yours truly
(Sd.) G. S. Sardesai
H. H. the Maharaja Gaikavad's
Secretary's Office Baroda.

श्री स्वामी नित्यानन्दजी नमस्ते ।

विज्ञप्ति.

ता० १६।३।१९०४.

इस पत्रके साथ "अनेक धर्मके तात्पर्य" का लेख आपने श्रीमंत महाराजा साहिबकी इच्छानुसार लिखवाया है, उसकी हस्तलिखित प्रति भेजनेमें आती है ।

हजूर इच्छानुसार लेख समाप्त करनेकी तजवीज आप करेंगे ।

सेवक,

नी. का. आंबेगांवकर ।

DRUMEDION.
23rd June 1896.

Dear sir,

Your letter to the address of His Highness the Maharaj: Saheb Gaikwad is duly recieved. I shall be glad to place i before His Highness in due course.

As regards the Native Holidays and festivals which His Highness wishes to point out has been really necessary accord ing to our religion, I may inform you that there is hurry about the matter. You can supply His Highness with detailed information in regard to the several Hindu Holidays at your

leisure. The information required should contain a classified statement of the Holidays based on the Vedas, the Puranas and the customs together with their origin etc.

The book given by my clerk may be kept with you as long as it is required.

Yours very sincerly,
(Sd.) Dayal singh
Secretary to H. H. the Maharaja
Gaikawad.

२६ फेब्रुआरी १९०४

श्रीयुत स्वामी श्रीनित्यानन्दजी और स्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी,

मु. जमनाबाग;

वि. वि. आपका पत्र ता. १६ का श्रीमंत सरकार महाराजा साहिबकी हुजूरमें पेश किया गया है. श्रीमान्‌का फर्मान हुआ है कि आर्यसमाजके फंडमें रु. १५०० लाहोरमें दिये गये थे, उसकी व्यवस्थाके विषयमें रु. १००० आर्य्य प्रतिनिधि सभाको; और रु. ५०० दयानन्द एँ. वै. कालेजको बांट देनेकी आपकी सिफारिश मंजुर करनेमें आती है सो आपको मालुम होवे ।

Sd.

सेक्रेटरी

Chateau Kapurthala
Mussorie

Revered Swamijee 30-10-1908.

His Highness the Maharaja Gaikwad would like you to prepare for him a short discourse on what, if any thing, can a Hindu Baja do in these days for the good of the people and the country in connection with Religious institutions.

The Maharaja Saheb would like to know the past history on the subject, together with references from our works dealing with such questions.

Please be good enough also to suggest practical remedies to give effect to your opinion in this connection.

Yours obediently,
(Sd.) Baldeoji L. Dhru
Secratary.

No. 663.

Lakshmivilas palace,
Baroda.

Re. The Religious conference. 9-1-10.

Dear Swamijee,

Referring to your note of the 7th instant I am directed to say that the proper thing would be to form a regular committee to discuss the question, along with others, of the subject to be placed before the conference.

The matter is so important and fraught with such momentous issues that it seems doubtful if it will be possible to hold the gathering in February next, as it would leave so little time to consider it in all its aspects and best on that thought upon it, which its nature demands.

His Highness's full sympathies are with the movement and he would therefore wish it a complete success.

Yours truly
(Sd.) Buldeoji L. Dhru
Asst. Secretary.

No, 702.

Indumatimahal,
Baroda, 16-3-1911.

Dear Swamiji,

If not incovenient to you. His Highness the Maharaja Saheb would wish you to come to Baroda for a dày or so in the course of the next few days.

Please inform me as to when you can do so.

Your truly,
(Sd.) Buldeoji L. Dhru
Asst. Secretary.

No. 528.

Baroda 12th January 1912.

Dear Swamijee,

I am directed by H. H. the Maharaja Saheb to acknowledge reciept of the two copies of "Vedic Vivaha Padhati" which you have so kindly sent to His Highness along with your kind letter and to thank you cordially for the sentiments contained therein.

Yours truly,
(Sd.) Buldeoji L. Dhru
Asst. Secratary.

(१)

श्री.

श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामी नित्यानंद–मुक्काम बड़ोदा; विज्ञापना विशेष, आज रोज आपका व्याख्यान यहां होनेवाला था, लेकिन हुजूरने ऐसा फरमाया है के व्याख्यान आज करनेके बदले आते रविवारको करनेकी तकलीफ लेना. तो आप उसपरमाणे आवते रविवारके दिन ह्यां शामको ५ बजे अनेकी कृपा करोगे यही विनंती है–ता. १ नव्हेंबर शुक्रवार सन १८९५ मकरपुरा.

हुजूर कामदार निसबत
श्रीमंत सरकार महाराजा साहेब.

No. 422.

26th March 1904.

Dear Sirs,

Your note of 23rd instant being submitted to His Highness the Maharaja Saheb. His Highness has been pleased to ask you to dine with him at the Laxmi Vilas palace tomorrow Sunday at 10–30 a. m. in the morning. A Carriage will be sent to you in time from the Khangi.

Yours truly
Kanahialal Dis.
for Huzur Kamdar.

Brook Hill 20th June 1901.

My Dear Sir.

His Highness the Maharaja Saheb Gaekwad will be pleased to see you and Swami Nityanand Saraswati along with Raja Jeykrishna Das Bahadur to morrow 21st June at 4–30 in the after noon.

Yours truly,
Manubhai,
Secretary to H.H. Maharaja Gaekwad.

Brook Hill 21st June 1901.

His Highness the Maharaja and others are anxious to hear some learned discourses from you. His Highness the Maharaja Saheb has directed me to request you to make it convenient to deliver one or two discourses here, one of the subjects should be

"The Value of efficacy of *Puranas* in inculcating true ideas of our religion" His Highness will let you know the subject of the other discourse later on. The lecture should be of sufficient length to last for an bour or so in the evening. It is convenient to you to deliver the first discourse on the subject named above this evening after the visit with Raja Jey Krishna Dass is over or later on in evening at this Bungalow, please let me know as I shall have to issue necessary orders for the arrangement.

Yours truly,
(Sd.) Manu Bhai N. Mehta,
Secretary to H. H. Maharaja Gaekwad.

Brook Hill. 23rd June 1901.

My Dear Sir,

His Highness the Maharaja Gaekwad would very much like to have your able lecture delivered here last Friday on the Puranic Teaching reduced to writing. His Highness would like to preserve it in a permanent form. If it is no trouble I may request you to kindly put it down in writing. If you like I would send you a clerk who would note it down under your dictation.

Hoping to be excused for the trouble

I am your Sincerly,
(Sd.) Manubhai N. Mehta,
Secretary to H. H. the Maharaja Gaekwad.

Brook Hill 26th June 1901.

My Dear Swamijee.

I shall send a clerk to you tomorrow for the purpose of noting down the lecture under your dictation. As you are engaged in a public lecture this evening, I have not thought it fit to trouble you this morning.

His Highness would very much like you and Swami Nityanand to dine with him this evening after your public lecture is over. Please let me know if this will be convenient to you.

His Highness would like to trouble you or Swami Nityanand by asking you to deliver the other lecture before Her

Highness tomorrow (Thursday) in the evening at 4-30 P. M. Pray let me know any subject or a Variety of subjects for His Highness to choose from for tomorrow's lecture to be delivered either by your good self or Swami Nityanand Saraswati.

Yours truly,
Manubhai N. Mehta
Secretary to His Highness
Maharaja Gaikwad.

P. S.

If you come here this evening for dinner you can show that Marathi book to His Highness at the time.

(Sd.) M. N.

Brooke Hill,
27th June 1901.

My dear Swamiji,

His Highness the Maharaja Saheb has been pleased to select

Vedant Philosophy for the subject of the lecture to be delivered to day at 4-30. P. M. by Swami Nityanand Saraswati.

Yours truly,.
Manubhai N. Mehta
Secretary to His Highness
Maharaja Gaikwad.

No. 266.

BARODA
Huzur Kamdar's Office,
28th October 1901.

My dear sir,

In reply to your favour of 21st instant, I beg to say that His Highness the Maharaja Saheb has got the report he had asked for on the Benares anna chhatra.

At present the finances of the state are not:in a prosperous condition and we are preparing to meet another compaign against famine which threatens to afflict most of our Dominions A calamity following so close upon the horrors of the dire famine of 1899 must tax the resources of the state to the utmost

pitch and every effort is being made to husband these resources moreover His Highness has lately sanctioned a scheme of a state maintained orphanage where about 300 destitute boys and girls will recieve food and lodging and will be looked after by the state. This will involve an yearly expenditure of Rs. 30,000.

Under these circumstances, I regret, His Highness can not see his way to comply with your wishes however laudable and praise worthy they may be.

His Highness would like you to reserve your request till better times are secured and the finances restored to their prosperous condition.

With kind regards,
I am yours sincerly,
Manubhai N. Mehta,
Secretary to His Highness Maharaja Gaikwad.
Baroda, 28th January 1913.

My dear Swamijee,

His Highness the Maharaja Saheb wants me to talk to you about the Vedic धर्मपरिषद् its scope and objects. May I reuqest you to kindly come over to my office at about 4-30 or Thursday the 30th instant with my literature on the subject.

Yours sincerly,
Manubhai N. Naeb Dewan.
L. V. Palace 8th March 1907.

My dear sirs,

H. H. the Maharaja Saheb asks for the pleasure of your and Swami Vishweshwaranand's company at breakfast tomorrow morning 11 A. M. at L. V. Palace.

Yours sincerly,
(Sd.) —
A. D. Con Duty.
Baroda 14th March 1907.

My dear Swami,

Dr. Pollen is going to give a lecture on "universal language" to day at 5-30 P. M. in the Baroda College Hall of the Baroda College. Mr. Shinde of the Prarthna-samaj is also

giving a lecture on "our duties towards the lowest classes" at 5 P. M. tomorrow in the Nyaya-mandir Hall. I shall be glad if you and Swami Vishweshwaranand attend the lectures.

Yours faithfully,
M. M. Joshi,
for Khangi Karbhari.
Bombay 2nd April 1911.

Dear Swami Nityanandji,

Please come with "सत्यार्थ प्रकाश" of आर्य समाज at 8–45 P. M. today. His Highness would like to hear it.

Yours,
G. Nimbalker,
A. D. C.
Lakshmivilas Palaae,
Baroda 30–1–11.

Dear sirs,

Please come here at 12–30 P. M. tomorrow to discuss the question of examination for a priest before he is put in charge of a Deosthan. Kindly draw a list of books that they should be examined in. This is with a view to improve the general tone of priesthood.

By order

Yours sincerly,
G. R. Nimbalker, Captain
A. D. C.
Secretary's Office,
Baroda 12–4–09.

Revered Swamiji,

Herewith I send your Mss notes on Hindu ceremonies and duties of a king and also a note book in which the same is copied for His Highness's use. It will be better to place this before his Highness on being examined and corrected by you. Hoping to be excused for the trouble and requesting early return.

I am yours very respectfully,
(Sd.) Joshi C. M.
Clerk on duty.

Vidyadhikaree's Office,
Baroda 19th January 1905.

Dear sirs,

I recieved yesterday your note of the 13th instant. At the last meeting of the Dharm shikhshana committee the applications recieved from several persons for writing the books, were considered, but it was found that the contents of none of then were up to the mark. It was therefore decided that Rao Bahadur Manubhai Nandshanker Mehta should sketch out a syllabus of contents that it should be revised by Rao Bahadur Bhandarkar (Naib Dewan) and that copies of it should be sent to certain selected persons for enquiring on what conditions they would take up the writing of the books according to the content prescribed to them. These contents are already sent to the persons appointed and replies from three of them are also recieved.

I send you a copy to enable you to see the plan on which the books are to be written.

Many thanks for your kind congratulations, which I highly appreciate.

Yours truly,
(Sd.)-
Vidyadhikari.

No. 302 of 1905-06.

Office of the Minister of Education,
Baroda Dated 25th July 1906.

Param Hansa Swamiji Vishweshwaranandji .and Nityanandji,

His Highness the Maharaja Saheb desires that a graduate who is one of the members of the Brahma Samaj should be appointed to teach boys and girls of the Antyaja Schools. He will recieve Rs. 100/- as Salary and Rs. 25/- as permanent travelling allowance per mensem. Of course he will have to do the work of supervising Antyaja Schools in the state in addition to the work of teaching. I shall feel highly obliged if you will be kind enough to suggest one or two names of such graduates as are qualified for the work referred to above. Favour of an early reply is solicited.

Yours faithfully,
(Sd.) H. M. Massani,
Ag. Minister of Education,
Baroda State.

No. 2 of 1906-07.

Office of the Minister of Education,
Baroda, Dated 7th August 1906.

To,

Param Hansa Swamiji, Vishweshwaranandji
and Nityanandji C/o Arya Samaj
Simla.

Param Hansa Swamiji,

I am very much thankful to you for your kind letter of the 31st Ultimo as you write even a graduate who is a member of the Arya Samaj would serve our purpose. Of course he ought to teach boys and girls of the Antyaja (Dheds and Bhangies) Schools in the state without reluctance.

You will please arrange to send reply at your earliest convenience.

Yours faithfully,
A. M. Massani,
Ag: Minister of Education,
Baroda State.

अब हम अधिक अवतरण न देकर पाठकोंके अवलोकनार्थ सयाजी–चरितामृतसे महाराजाके विषयमें श्रीस्वामीजीकी सम्मति उद्धृत करते हुए इस प्रसंगसे विराम ग्रहण करते हैं ।

श्रीमान् महात्मा स्वामी नित्यानन्दजीने अपने एक भाषणमें श्री० महाराजाके विषयमें अधोलिखित श्लाघा की थी ।

“ भोजराजाके राज्यमें कुम्हार जैसे लोग भी सूज्ञ और ज्ञानवान् थे, उसके पश्चात् वह समय कहीं भी देखनेमें नहीं आया । परन्तु वह केवल श्री० महाराजाके राज्यमें पुनः देखा जाता है, इस राज्यमें ब्राह्मणसे लेकर चाण्डालतकके लिये अनिवार्य्य और निश्शुल्क शिक्षणकी परिपाटी श्री महाराजने प्रविष्ट की है और श्री० महाराज स्वयं आधुनिक भोज और राम हैं यह कहूं तो अत्युक्ति न होगी । राजाका अर्थ ही ज्ञानप्रकाश फैलानेवाला है । और राजाके सब धर्म और लक्षण श्री० म० में विद्यमान हैं । रामचन्द्रजीका एकवचन, एकपत्नीव्रत और जितेन्द्रियता श्री० महाराजमें पाई जाती है ”। अस्तु ।

स्वामीजी और मईसौर राज्य ।
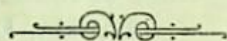
उन्नत भारतीय नरेशोंमें महाराजा बड़ौदाके समान ही महाराजा साहब मईसौर की गणना होती है । समालोचकसमुदायकी सम्मति है, कि यह दोनों राज्य उन्नतिपथमें आशातीत सफलता प्राप्त कर रहे हैं । और इसका सर्व प्रधान कारण दोनों राज्योंके प्रतिभाशाली नरेश हैं; जिनके यशवर्णनके लिए पर्य्याप्त शब्द नहीं मिलते ।

श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महात्मा रानडेके अनुरोधसे वर्तमान मईसौर नरेशके पितासे सन् १८९४ में मिले थे । उक्त महाराजा साहबपर स्वामीजीकी विद्वत्ता और तेजस्विताका जो प्रभाव पड़ा उसका संक्षिप्त विवरण चरित्रके पृष्ठोंमें आ गया है । अतः यहां हम इसे विस्तार न देकर वर्तमान महाराजासाहिबसे जो स्वामीजीका सम्बन्ध रहा, उसके विषयमें अति सूक्ष्मतया निवेदन करनेका साहस करते हैं ।

श्री स्वामीजी वर्तमान महाराजा साहिब श्रीकृष्ण राजा वाडियार बहादुर G. C. S. I. से दो तीन बार वैदिक कोषके लिए सहायता प्राप्त करनेके लिए मिले; इन अवसरोंपर आपने जो २ उपदेश अपने श्रीमुखसे महाराजा-साहिबको दिये होंगे उनके जाननेका कोई साधन नही है । तथापि कोषके निमित्त सहायता प्राप्त करनेके लिए जो एक पत्र आपने महाराजा साहिबके नाम लिखा था, उसके पठनमात्रसे पाठकोंको स्वामीजीके राजा महाराजाओंको उपदेश देनेकी शैलीका बहुत कुछ पता लग जायगा ।

पत्रमें प्रदर्शित गम्भीर भाव, और उनके वर्णन करनेकी शैलीपर अधिक न लिखकर हम नीचे उस पत्रकी प्रतिलिपि उद्धृत करते हैं । इससे पाठकोंको प्रतीत हो जायगा कि यद्यपि स्वामीजीका महाराजा साहब माईसोरसे उतना घनिष्ठ सम्बन्ध तो नहीं था, जितना श्रीमान् बड़ोदा नरेशसे । तथापि अवसर प्राप्त होनेपर वे इस ओर भी अपने लक्ष्यकी सफलताके लिये पूर्ण प्रयत्नशील थे । ऐसी दशामें यह कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं कि मईसोर राज्यकी वर्तमान उन्नतिमें आर्य्य संन्यासी श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराजका भी कुछ भाग है । और वह इतना है कि उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती ।

पत्रकी प्रतिलिपि ।

To,

Shri Krishna Raja Wadiar Bahadur,
G. C. S. I.,
His Highness the Maharaja of Mysore,
MYSORE.

May it Please your Highness.

When your Highness 'illustrious's father was alive, I had the pleasure of seeing your Highness. Swami Vishweshwaranand informed me how pleased he was with the inter view of your Highness so graciously gave him. The Swami tells me that your Highness has been given promise of becoming the wisest, the foremost and the best of Indian rulers. He moved with several leading subjects of your Highness and he has come with a high idea of your Highness' farsighted statesmanship. The future of India depends mainly upon native sovereigns like your Highness. Providence has entrusted the British people with the destinies of her teeming millions. It is only by loyal and cordial cooperation with *the Government of India that Indian sovereigns can serve India and their country well.* It is gratifying to learn that your Highness has fully realised this I hope your Highness will persevere in this policy. I learn that your Highness's brother has returned from his Japan tour. This tour will have a wide reaching effect, both socially and materially. I wish that if for nothing else , to study the chief causes of the educational and material advancement of peoples that your Highness should travel not only to Japan but also to England, America and Germany. This will widen the intellectual Horizon of your Highness and will enable your Highness to take mysore the mother land of Sciences, Arts and industries which must primarily precede good citizenship. I am glad to learn that your Highness is setting an example of Godliness towards your Highness's subjects. Material prosperity is the means of moral and spiritual prosperity. But it can not be a substitute for the latter. I am glad that your Highness is labouring also in the fields of morals and

spirituality. May God the almighty enable you to become the moral and spiritual salvation of India. Our motherland is torn up into thousands of religions and castes. The foundation of all these is the Vedas. Sanskrit is a flexible language various kinds of wrong constructions and interpretations are put upon the Vedas. These interpretations are at the root of the thousands of camps into which, we, the sons of Bharat Varsha are divided. The author of the creation, maintenance, and destruction of worlds is, the Almighty. He is our father. We are all his children, according to the Vedas, the fatherhood of God and the brotherhood of man is well established. The world has borrowed this doctrine from our ancestors and yet they pretend to be original. I and Swami Vishweshwaranand in consultation with late Mr. Ranade Came to the conclusion that a scientific Vedic dictionary should be compiled to help the real interpretation of the Vedas and to make it possible if not now, at some distant future, for bridging the gulf that now exists between the different Aryan religions. His Highness the Maharaja the Gaekawad of Baroda fell in with our views and advanced towards the commencement of this work Rs. 15000/.

Your Highness' palace is the nursery of the greatest Sanskrit scholars in India. Your Highness' Sanskrit College is another and more notable one of this kind. The oreintal library in your Highness' territory is no less. So I hear very good accounts of the patriotic spirit of Messers Raghavendra Rao and Ramkrishna Rao who work under your Highness. I also learn that Messers Mahadev Shastri curator Oriental Library and secratary to your Highness' Sanskrit College and in Sarva Shastri the librarian of the oriental library as men who are really equal for their oriental and occidental scholarship.

Swami Vishweshwaranand tells me that he has entrusted the supervision of the compilation of the Vedic dictionary to Messers Mahadeva Shastry and Sarva Shastry and the Swami tells me that they have generously come forward to superintend the work as a love of labour.

Not only Swami Vishweshwaranand has highly spoken to me of your Highness' laudable virtues, but many patriotic Indian gentlemen of repute and learning share the same views and your life which is embodiment of high ideals shows that your Highness is a true lover of learning and a kind patron of Sanskrit literature. Your name is cherished with profound respect by every Hindu, because you are a pride of the great Hindu nation.

This is an undisputed fact that the Hindu nation cannot progress without the knowledge of the vedas and no one can acquire this knowledge without knowing the meanings of the Vedic words. In order to help in this national advancement, I and Swami have taken in hand the compilation of Vedic dictionary. His Highness the Maharaja of Baroda, has been pleased to grant the sum of 15000/- for this work with the conditions that the first instalment of Rs. 2500/- should be given to Swamijis in order to start the work, but the rest amount be paid in yearly instalments on learning from the swamijees that they have succeeded in getting the remaining sum of Rs. 35000/- from the enlightened Maharajas of India such as the Maharaja of Mysore and others.

On the 20th March 1909, I and Swamiji had the pleasure of seeing His Highness the Maharaja of Baroda and His Highness the Gaikawad was much pleased to learn from us your sterling virtues and high qualities, we informed him, that we had requested His Highness the Maharaja of Mysore to lend us a helping hand. His Highness the Gaekawar who feels a keen interest in this work, enquired from us the help that has been given to us by Their Highness the other Maharaja's and we stated that we hope to get a substantial help from His Highness the Maharaja of Mysore in this monumental and national work.

On our asking the minister of Education, Baroda state to pay us another instalment, he has enquired from us in his recent letter Dated 20th March 1909 about the help that has been given or promised to us for this work.

I trust that your enlightened Highness fully realizes the importance of this Vedic dictionary. His Highness the

Maharaja of Baroda holds the same Views about your Highness' love of learning. Your Highness' late lamented illustrious father had full sympathy with our views and scheme and he was graciously pleased to promise us a good help which we were not able to get owing to His Highness sudden and untimely death, which removed from the Hindu nation its best and the noblest benefactor. We have every reason to believe that your exalted Highness would kindly allow us to associate your illustrious name as a Patron with this immortal work and he graciously pleased to grant us a substantial help by which we may be able to carry on this national and useful work.

It will not be out of place to mention here that His Highness the Maharaja of Baroda has arrived at conclusion through his own appointed committee that the Compilation of the vedic dictionary will cost nearly 50000/– rupees. As this work concerns the whole Hindu Nation His Highness the Gaekawar suggests in his letter of the 14th September 1903 to request your Highness for help. A true copy of His Highness the Gaekwad's letter is attached herewith for your kind perusal and information.

We have commenced this work as your Highness will come to know from the 4 parts of the 1st Volume known as the indexes to the four vedas which have been presented to your Highness. The work of further compilation is in progress in Mysore under the able supervision of Mr. Mahadev Shastri. We are bound to pay the Pandits that have been engaged for the work at Mysore. To push on the work in future in full swing we require a large amount of money no doubt. I and Swami Vishweshwaranandji sincerely and earnestly request your Highness once more to be gracious enough so as to help us with money like the Maharaja of Baroda and to become its kind patron. In addition to this pecuniary aid we request your Highness to allow your state's able Pandits to give us their literary aid.

Mr. Venkat chella Shastry of your Highness' palace and other Pandits are doing the research and compilation duty. We think that if your Highness puts in a word to the great

Pandits of Mysore through the Palace officer and if the latter induce them to spend an hour or two every:day for doing the work this monumental dictionary will become an accomplished fact and your Highness will have the unique glory of bringing into existence a book big, with the possibilities of uniting all the people of India into a religious brotherhood. We are willing to place our labour and the money that we may collect at the disposal of Messers Mahadev Shastry and other Pandits for carrying out this object. It is very necessary to give Pandits of your Highness' Palace opportunities to become useful and distinguished and to do something substantial in return for the help and encouragement they get from the Palace. If this proves agreeable to Your Highness the people of India and Swami Vishweshwaranand and myself in particular will be deeply indebted to Your Highness. We pray that God the Almighty may shower his choicest blessings on your Highness and your Highness' subjects.

Baroda quest House

I beg to subscribe,

Dated, 2nd April 1909.

Your Highness'
Sincere admirer.

स्वामीजी और इन्दोर राज्य ।

माईसोर राज्यके समानहीं इन्दोर राज्यके दो नरेशोंसे स्वामीजीका सम्बन्ध रहा । वर्तमान महाराजके पिता श्रीमान् शिवाजीराव हुलकर स्वामीजीके अनन्य भक्त थे और आपकी उत्कट इच्छा थी कि स्वामीजी केवल इन्दोर राज्यमें ही अपनी पूर्ण शक्ति और योग्यताका उपयोग करें और इस निमित्त आपने स्वामीजीकी सेवामें १०००) मासिक भेंट और राज्यभरमें जहां स्वामीजी पधारें वहां पर खान पान और स्थान आदिका समुचित प्रबन्ध राज्यकी ओरसे किये जानेकी आज्ञा प्रचारित करनेका निश्चय कर लिया था । परन्तु स्वामीजीकी स्वीकृति न पानेसे आप अपनी इस इच्छाको कार्य्यमें परिणत नहीं कर सके । प्रसंगवश इन सबका उल्लेख इस पुस्तकके पूर्व पृष्ठोंमें हो चुका है । वर्तमान महाराज श्री तुकोजीरावका शासनकाल अभी आरम्भही हुआ है । इन दो तीन वर्षोंमेंही आपने

अपनी तेजास्विताका पूर्ण परिचय दिया है। राज्यमें सार्वजनिक अनिवार्य्य शिक्षाका प्रबन्ध करनेके लिये आप आज्ञा दे चुके हैं, और आशा पड़ती है कि शीघ्रही यह कार्य्यरूपमें परिणत होगी। अच्छूत उद्धारसे आपको विशेष सहानुभूति है और इसके लिये आपने उदार होकर अच्छूतोद्धारिणी सभाओंको पुष्कल सहायता दी है, और देते रहते हैं। श्रीस्वामी नित्यानंदजीके प्रति आपकी भक्ति विशेष थी और अपने शासनकालके आरम्भमें ही आपने श्री स्वामीजीको दो बार इन्दोर बुलाया और महीनेपरसे अधिक ठहराकर धार्मिक और सामाजिक राज-प्रजोपयोगी विषयोंपर उपदेश सुने। श्रीमान् महाराजाने स्वामीजीके इन्दोरमें सार्व-जानिक व्याख्यानोंमें भी एक बार प्रधानका आसन ग्रहण करनेकी उदारता प्रकट की थी। वैदिक कोषके सम्पादनमें भी अभीतक आपकी आर्थिक सहायतासम्बन्धी आज्ञा सबसे अधिक है। आपने कोषकी सहायताके लिये ५ से लेकर ८ वर्षतक जबतक कि कोष सम्पूर्ण न हो ४०००) प्रतिवर्ष देनेकी आज्ञा अपने मंत्रीको २६ मार्च १९१३ दी थी। यह आज्ञा अभी तक कार्य्यमें परिणत नहीं हुई है। सारांश, यदि स्वामीजीका देहान्त न होता तो इन्दोर राज्यमें भी स्वामीजी अपना कार्य्य वर्तमान महाराजाकी सहायता और सहयोगसे और भी अधिक स्थिरतासे करते। स्मरण रहे कि श्रीमान् डाक्टर गोविन्दराव चास्करजी, जिन्होंने स्वामीजीके वियोगमें तीसरे दिनही इहलोकलीला संवरण की, इन्दोरमें ही रहते थे।

स्वामीजी और कश्मीर राज्य।

स्वामीजीके जीवनमें यदि किसी घटनाको विशेष महत्व दिया जा सकता है, तो वह स्वामीजीका काश्मीर प्रवास है। महाराजा बड़ौदा महाराजा मईसोर और महाराजा इन्दोर स्वयं सुधारक हैं; धर्मप्रेमी हैं और स्वामीजीके उपदेशोंसे इन नरपतियोंने अपने विचारोंको प्रौढ और उन्नत बनानेमें सहायता ली। वास्तवमें काश्मीरकी अपेक्षा इन तीनों राज्योंमें प्रचार करनेका कार्य्य सरल था। लेखक-की दृष्टिमें तो जो सफलता काश्मीर राज्यकी उस स्थितिमें स्वामीजीने प्राप्त की वह असाध्य नहीं तो अत्यन्त कष्टसाध्य अवश्य थी। हैदराबाद राज्यमें स्वामीजी दो बार गये थे, और दोनों बारही उनके प्रचारकार्य्यमें अडचनें पडीं; परन्तु वहां-पर जो सफलता स्वामीजीको हुई यह पूर्वके पृष्ठोंमें वर्णन की जा चुकी है। इसमें सन्देह नहीं कि हैदराबाद मुसलमानोंकी रियासत है, परन्तु निजाम महोदय जो कि

राज्यके हर्ता कर्ता थे, अपनी धार्मिक उदारताके प्रसिद्ध लिये थे। साथही वहां जो स्वामीजीके प्रचारकार्य्यका विरोध हुआ वह प्रत्यक्ष था और उसके निवारणका उपाय भी सहज साध्य था। परन्तु काश्मीरमें स्थिति बिलकुल विपरीत थी, राज्यकी प्रबन्धकारिणी कौंसिलके प्रधान राजा अमरसिंहजीपर कादियानी सम्प्रदायके प्रधान नेता नूरुद्दीनका प्रभाव पड़ चुका था; ऐसी दशामें जब कि काश्मीर राज्यके तत्कालीन हर्ताकर्तापर विधर्मियोंका रंग चढ़ चुका हो उनकी आशा, उत्साह और अधिकताओंका अनुमान पाठक कर सकते हैं। इस स्थितिमें राजा अमरसिंह जीके विचार इसलाम धर्मसे हटाकर वैदिक धर्मकी ओर लानेका साहस करनेमें भी जिस हृदयकी आवश्यकता है, उसका अनुमान पाठक स्वयं कर लें। परन्तु स्वामीजीने इस कार्य्यको अपने हाथमें लिया और जिस सफलतासे इसे पूर्ण किया, वह आपहीका काम था। स्वामीजीके नीतिपूर्ण, सरल और सत्य उपदेशोंने अपना वही प्रभाव महाराजा अमरसिंहजीके हृदयपर डाला जो कि वांछित था और स्वामीजीकीही चेष्टासे काश्मीर राज्य कार्य्यरूपमें मुसलमानोंके चंगुलमें फंसनेसे बचा।

स्वामीजी और शाहपुरा नरेश।

बड़ोदा, इन्दोर, मैसोर और काश्मीर—नरेशोंसे भेटकर श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजीने वैदिक धर्मप्रचारके लिये नये क्षेत्र तय्यार किये। साथ ही जहां महर्षि श्रीस्वामी दयानन्दजीने अपना प्रभाव डाला था, वहां भी उसको दृढ करनेके लिये स्वामीजीका उद्योग सदा रहता था। इस उद्देश्यसे स्वामीजी महाराजा श्री० नाहर-सिंहजी वर्मा शहापुराधीशसे प्रायः भेट किया करते थे। महाराजाका आर्य्यसमाजसे प्रेम प्रसिद्ध है। आर्य्य समाजके लिये आपकी दृष्टिमें सर्वस्वत्याग भी अनुचित नहीं। एक अवसरपर आपने कहा था कि आर्य्यसमाजके चौकीदारका कार्य्य करनेमें भी अपना गौरव समझता हूं। आप महर्षि दयानन्दजीकी उत्तराधिकारी श्रीमती परोपकारिणी सभाके मंत्री हैं। श्रीमान् स्वामी नित्यानंदजीकी सहायताके लिए आपने उस समय अपना हाथ बढाया था, जब कि स्वामीजीने आर्य्य समाजकी सेवाके लिये अधिक प्रासिद्धि नहीं प्राप्त की थी।

स्वामीजीके धर्मप्रचारसे प्रसन्न होकर महाराजाने संवत १९४५ में निम्न लिखित प्रशंसापत्र दिया था—

॥ ओ३म् ॥

परमहंस परिव्राजक स्वामीजी श्री विश्वेश्वरानन्दजी व ब्रह्मचारीजी श्री नित्या-नन्दजी—नमस्ते ।

इस अरसेमें आपका यहां दो दफे आना हुआ, और आपसे मिलनेसे और धर्म-उपदेश सुननेसे चित्तको बहुत शान्ति हुई; परन्तु आपका यहां ठहरना परोपकारी कामके सबबसे बहुत ही कम हुआ। इस बातका अफसोस रहा। आशा है कि अबके दफा आप आवेंगे तो बड़ी खुशी होगी। चैत सुदि ६१३ शनिवार संवत १९४५ का तारीख १३ अपरेल सन् १८८९ ईस्वी ।

हस्ताक्षर राजाधिराज नाहरसिंहस्य शाहपुरा ।

इसी अवसरपर स्वामीजीकी सहायतार्थ बदाके लिये १२) मासिक नियत किया। पाठकोंके मनोरंजनार्थ इस विषयके पत्रकी भी प्रतिलिपि नीचे दी जाती है ।

॥ ओ३म् ॥

परमहंस परिव्राजक स्वामीजी श्री विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी व ब्रह्मचारीजी श्री नित्यानन्दजी—नमस्ते—

आपका जाना अकसर करके जहां समाजें नहीं है, धर्म—उपदेश करनेके लिये होता है और वहां खर्च वगैरहकी तंगी होती है इस वास्ते मैंने आपके खर्चके लिये १२ रुपये कल्दार माहवार मुकर्रिर किया है; सो आपको सुरू अपरेलसे मिलते रहेंगे। चैत सुदी १३ संवत् १९४५ का तारीख १३ अपरेल १८८९ ई०

हस्ताक्षर राजाधिराज नाहरसिंहस्य ।
शाहपुरा ।

उक्त पत्रमें उल्लिखित सहायता स्वामीजीने बहुत थोड़े समयतक ली। इस पत्रके लिखे जानेके पश्चात् स्वामीजी अनेक वार राजाधिराजसे मिले और आपपर स्वामीजीके उपदेशोंका बहुत प्रभाव पड़ने लगा। राजाधिराजके स्वहस्तलिखित कतिपय पत्रोंके देखनेसे प्रतीत होता है कि आप स्वामीजीके उपदेश सुननेके लिये अति उत्कण्ठित रहते थे जैसा कि पाठकोंको निम्न पत्रके पढनेपर प्रतीत होगा।

॥ ओ३म् ॥

श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामीजी श्री विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी व ब्रह्माचारीजी श्री नित्यानंदजी महाराज समीपेषु ।

आपकी करांकित पत्रिका ता. २३ सितंबरकी लिखी हुई पहुंची—वृत्तान्त मालुम हुआ अजमेरसे आप पहले यहां पधारें; क्यों कि यहांपर आपके सत्योपदेशोंसे प्रजाको व समस्त कर्मचारियोंको बहुत लाभ हुआ है. यानी आपने जो "मनुष्योंको परस्पर वर्ताव कैसा रखना चाहिये" इस विषयमें व्याख्यान दिया और उसमें जो आपने राजा और प्रजाके सम्बन्ध प्रीतिपूर्वक वर्णन किये थे वे प्रशंसनीय थे और इसीके सिलसिलेमें जो आपने यह भी जिकर किया था के कितनेक अखबारवाले न्यायशीला गवर्नमेन्टकी उन बातोंको न समझकर जो कि आखिरमें प्रजाकी भलाईका कारण होती हैं—वगैर सोचे ऐसी दयालु गवर्नमेन्टके मुखालिफ कर रहे हैं सो ये लोग बडा अनुचित कर रहे हैं और उसका परिणाम खराब होगा सो वास्तवमें वैसा ही हुआ। भला आपके खयाल ऐसे पवित्र और दूरदर्शी क्यों न हों ? आप विद्वान् हो और विद्वान् व तत्वज्ञ पुरुषोंका तो यही काम है कि ऐसे २ बुलंद खयालोंसे लोगोंको समझाकर उनको सन्मार्गपर चलावें और इसी विद्वत्तासे आपने मैसूर, बरोदा, जोधपुर, उदैपूर, नाभा, नरसिंहगढ आदि स्थानोंमें प्रतिष्ठा पाई है और योग्य पुरुषोंका मान करना हमारा फर्ज है. आप अवश्य पधारें; क्योंके अलावा आपके व्याख्यानके सुननेके पुरुषार्थप्रकाशके उत्तर भागके विषयमें भी बातचीत करनी है और आपने ग्यारा कापी राजप्रकरणकी भेजी थी, सो मैंने देख ली और उसपर नोट भी कर दिये हैं सो मैं आपके पधारनेपर समझा दूंगा । यह किताब जल्दी तयार होनी चाहिये ।

(Sd) Nahar Siugh.

अन्य देशी रजवाड़े ।

बड़ोदा, मैसूर, कश्मीर, शाहपुरा आदिके नरेशोंसे जो आदर और सन्मान स्वामीजीने प्राप्त किया, वह असाधारण; परन्तु देशी राजाओंमें स्वामीजीका सम्बन्ध प्रायः भारतवर्षके सभी प्रान्तके अधीश्वरोंसे था । उदयपुराधीश मेदपाटेश्वर आर्य्यकुलकमलदिवाकर महाराणा श्री फतेहसिंहजी स्वामीजीके उपदेशोंसे अनेक बार लाभ उठा चुके हैं । नाभानरेश स्वर्गवासी महाराजा हीरासिंहजी, स्वामीजीके अनन्य भक्त थे; अपने सिमला प्रवासमें आप स्वामीजीको प्रायः अपनी कोठीपर बुलाया करते थे और उपदेशामृतपान करते थे । स्वामीजीपर आपकी अति कृपा थी और उन्हें आप वेदान्ती स्वामी कहा करते थे । आपने अपने सन्मुख साधु ईश्वरानन्दको स्वामीजीसे शास्त्रार्थमें परास्त करा या । मोरवीके प्रिन्स हरभामजीसे भी स्वामीजीका घनिष्ट पत्रव्यवहार था, जिसकी प्रतीति पाठकोंको नीचे लिखे पत्रसे हो जायगी ।

Rava vyllas,
Rajkote Kathiawad 19-10-12.

Dear Swamijee,

When I was at Simla some three months ago, I have told you of my scheme to start hostels for Jahgirdar's boys in different places of India.

I also told you that I did not know any of the Panjab jahgirdars who would take lead in such matters. You kindly told me that you would send me a list of such persons and also that you would be going to Lahore in cold weather and would if I went there introduce me to some of them. Please do not forget this. I want to secure men of sterling character who would really work in right carnest and not the meal hermits of modern production.

Yours sincerely,
(Sd) Harbhamji.

श्रीमान् प्रिन्स हरभामजीके द्वारा भी स्वामीजीने महर्षि श्री स्वामी दयानन्दजीकी जन्मभूमिका पता लगानेका उद्योग किया था। इस सम्बन्धमें भी उक्त प्रिन्स महोदयने निम्नपत्र श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीको लिखा था।

Rajkot,
Rawa Vyllas 4th April 1911.

My dear Swami Vishweshwaranand,

I am thaukful to you for your kind letter of the 31st ult. As regards Swamijis Dayanand Saraswatiji's birth place I hear it to be under Morvi but I am ignorant of the definite place. Hitherto I have had no such occasion to make inquiries about the Swamiji's birth place. Now that you naturally lay such inportance on the matter 1 shall enquire and let you know the result as early as possible. As regards my going to Simla this year I may say that hitherto no plan of my movement has been arranged, but if I do go to Simla I shall very willingly see you there.

My best compliments to our friend Swamy Nityanand Saraswati.

Hoping both of you are doing well.

I remain yours sincerely,
(Sd) Harbhanji.

महर्षि दयानन्दजीकी जन्मभूमीके सम्बन्धमें स्वामीजीने बड़ौदा राज्यके सामयिक खानगी कारभारी श्रीमन्त सम्पतराव गायकवाड़ Bar At low (महाराजा साहिब बड़ोदाके अनुज) के द्वारा भी खोज कराई थी । इस सम्बन्धमें ठाकुर साहिब मोरवीके प्राईवेट सेक्रेटरीका एक पत्र नीचे दिया जाता है ।

Morvi 16th April 1911.

Sampat Rao Gaikawad Esq.
Khangi Karbbari Saheb Baroda.

Dear Sir,

I am in receipt of your letter of the 6th Inqiries have at various times been made about the residence and parentage of Swami Dayanandji but beyond the fact that he was a Native of *Mintana* under this state no other item of information has yet been available. All endeavours were made to trace further information but I sincerely regret we have hitherto been unable to get any.

Yours sincerely.

Sd_____________

Private Secretary to His Hishness the Thakore Saheb of Morvi.

नेपालके प्रिन्स नरसिंह रानाजी स्वामीजीके प्रति श्रद्धावान् थे, शिमलाके आसपासकी रियासतोंके अधीश्वर प्राय: स्वामीजीके उपदेशोंसे लाभ उठाते रहते थे । बाराबङ्कीके राजा पृथ्वीपालसिंहजी स्वामीजीको अपने अन्तरङ्ग मित्रोंमें गिनते थे ।

प्रतापगढ अवधकी महारानी श्रीमती रामप्रियाजी स्वामीजीके उपदेशामृत पान करनेको सदा उत्सुक रहती थी । आपके उदार विचार और स्त्रीजाति–उन्नतिकी उत्कट इच्छाका प्रदर्शन इसीसे होता है कि आप शीघ्रही सुसम्पन्न और स्थिर पूंजीसे एक कन्या गुरुकुल खोलनेकी पूर्ण चेष्टा कर रही थीं । और इसी निमित्त आपने प्रयाग आर्य्य समाजके प्रधान ठाकुर गिरीन्द्रसिंहजीको बहुत कुछ उत्साह दिलाया था । परन्तु महारानीके असमय स्वर्गवाससे यह सब विचार जहांके तहाँ रह गये । महारानीको विद्वानोंके साथ संभाषण और उनसे उपदेश ग्रहण करनेमें अत्यन्त आनन्द प्राप्त होता था और ऐसे अवसरका वे पूरा उपयोग लेती थीं । श्रीमतीकी इस रुचिको प्रकट करनेवाले दो एक पत्रोंकी प्रतिलिपी नीचे दी जाती है ।

शिव १

नाभा हाउस सिमला

कोठी नं. (२०)

ता. १६–७–१९१२

श्रीमान् माननीय स्वामी नित्यानंदजी नमस्ते । कल तारीख १७, मास जुलाई बुधवारको स्वामी सत्यानन्दजी व ब्रह्मचारीजीसहित महात्मा मुन्शीरामजीने आठ बजे दिनमें मेरे स्थानको अपने चरणकमलोंसे पावन करके व वेदपाठ व हवनद्वारा मुझको कृतार्थ करनेका वचन प्रदान किया है; अतः आपकी सेवामें प्रार्थना करती हूं और आशा रखती हूं कि स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीसहित आप भी नियमित समयपर अपने शुभागमनसे मुझको कृतकृत्य करेंगें और धन्यवादपात्र होवेंगें–शुभम्

आपकी दर्शनाभिलाषिणी

रानी रामप्रियाजी, प्रतापगढ.

शिव १

नाभा हाउस नं. २२

सिमला ता. ४ ७/१२

श्रीमान् पूज्यपाद स्वामी नित्यानन्दजी नमस्ते ।

कुछ कालसे आपका विशद सुयश मेरे कर्णोंको प्रसादित करके दर्शनाकांक्षी नेत्रोंको प्रतीक्षित व सत्संगाभिलाषी चित्तको परमोत्कंठित कर रहा है । गतवर्षमें जब मैं यहां आई थी, तब भी आप अपने सहवासमें सौष्ठवपूर्वक मेरे ठहरनेके प्रबन्धमें प्रयत्न कर रहे थे; परन्तु कार्य्यवशमें यहां ठहर नहीं सकी. इस समय अस्वस्थ शरीरके कारण वायुजलपरिवर्तनार्थ पुनरागमनका संयोग हुआ है और सुनती हूं कि इस सुअवसरमें मुन्शीरामके सुपुत्र जो कि वर्तमान समयमें गुरुकुलसे आये हैं, मान्यवर परम पूजनीय स्वामी सत्यानंदजी यहां विराजनान हैं । अतः मैं प्रार्थना करती हूं और आशा रखती हूं कि आपके द्वारा प्रशंसित दोनों दिव्य मूर्तियोंके दर्शन व सत्संगसे कृतार्थ की जाऊंगी । यद्यपि अभीतक आपका दर्शन मुझको प्राप्त नहीं हुआ है, परन्तु मेरे हृदयमें आपका सद्भाव ऐसा प्रविष्ट हो गया है; कि जिससे ज्ञात होता है एक प्राचीन परिचय प्रादुर्भूत हो रहा है ।

शुभम्

आपकी दर्शनाभिलाषिणी

रानी रामप्रिया, प्रतापगढ.

राजस्थानप्रवासमें स्वामीजी प्राय: छोटे २ राज्योंमें भ्रमण किया करते थे; इनमें जयपुर राज्यके दांता, खाचरियावास और जोबनेर, कोटा राज्यके कुनाड़ीराज विजयसिंहजी और अजमेरके मसूदा, आदिके अधीश्वरोंपर स्वामीजीका विशेष प्रभाव पड़ा था और ये यथावसर स्वामीजीको अपने ठिकानोंपर बुलाया करते थे। जोबनेरके ठाकुर श्रीमान् कर्णासिंहजीकी स्वामीजीपर विशेष भक्ति थी और आप प्राय: संस्कृतमेंही पत्रव्यवहार करते थे। आप महर्षि दयानन्दकी उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभाके भी सभ्य थे। स्वामीजीके नाम आपके दो संस्कृत पत्रोंकी प्रतिलिपि यहां उद्धृत की जाती है।

ओ३म्

७–१०–९५

जोबनेरत:

श्रीमन् मान्यवरनित्यानन्दब्रह्मचारिभ्यो नमोनम: ।

श्रीमन् पूज्यपादपद्माम्भोजयुगले यन्निवेद्यते तत्स्वीकार्य स्वीकरिष्यते चाधिगत-याथातथ्यैः । भगवन्तं दूरस्थं विद्यामार्तण्डं विज्ञाय प्रथमतो दलं न प्रैष्यम् । इदानीं भवन्तं समीप्यमापन्नमजमीढस्थं विदित्वा हर्षेणात्मनि न प्रभवामि । निमन्त्रये भवन्त-मागमनायाशास्यते च पूज्यवर आगमनं विद्यायोत्सवशोभां वर्द्धयिष्यति । भवदाग-मनं कालत्रितयेऽपि मदीययोग्यतां व्यनक्ति । परोपकृतिश्च भविष्यति । भवदागमने विहिते सतीत्यलमनल्पजल्पनेन भवत्सु ।

भवदागमनाकांक्षी,
कर्णसिंह वर्मा ।

उत्सवश्च कार्तिकशुक्लपक्षीयप्रतिपदि द्वितीयायां च भविता ।

॥ ओ ३ म् ॥

जोबनेरत:

११–१२–९५

श्रीमान् मान्यवरब्रम्हचारिप्रवरेभ्यो नमोनमः । तत्रभवन्तमनतिदूराजमीढ-नगरस्थं निशम्य जातं मे विशिष्टं हृष्टं चेतः । आशासे च पूज्यपादो भवानत्रागम्य मामत्रत्यां च जनतामनुपमव्याख्यानदानेन कृतार्थयिष्यतीति । अत्रत्यजना भव-द्वत्तव्याख्यानजातं स्मृत्वा पुनरपि तच्छ्रवणाय त्वरयन्ते । यदा मया स्वस्थापित-विद्यालयवार्षिकोत्सवो व्यधायि तदा भवद्दर्शनमनुपलभमानोऽहं निरर्थप्रयत्नम-

कृषीति मनस्यकरवम् । तदानीं भवद्नागमनात् स्वीयाभाग्योदय एव कारणत्वेन निर्धारितः । परं पूज्यवर ! भवानन्तिकमेवागतोऽस्मिन्नवसरे भवद्दर्शनेन विना वञ्चितो न स्यामिति विधेयम् ।

नितान्तं भवदीयदर्शनाभिलाषी
कर्णसिंह वर्मा ।

मसूदाराव श्रीमान् ठाकुर बहादुरसिंहजी स्वामीजीके उपदेश सुननेके लिए अजमेर चले आते थे; जैसा कि उनके निम्न लिखित पत्रसे प्रकट होता है ।

॥ ओ३म् ॥

स्वामीजी महाराज श्री विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी, ब्रह्मचारीजी श्री नित्यानन्दजी-समीपेषु नमस्ते—कृपापत्र आपका आया; उसके देखनेसे बहुत हर्ष हुआ । मैं ईश्वर-की कृपासे कुशल क्षेममें हूं और वहां अजमेरमें अवश्यमेव आनेवाला हूं सो आपके दर्शन करनेसे बहुत आनंद प्राप्त होगा और यहांके लायक कार्य लिखेंगें । संवत १९५० का फाल्गुण कृष्ण ३ मु. ता. २२ फरवरी १८९४.

हस्ताक्षर
(Sd.) Bahadur singh C. I. E.
राजस्थान मसूदा

ठाकुरसाहिब दाता भी प्रायः स्वामीजीके दाता न पधारनेपर पत्र लिखकर स्वामीजीकी दर्शनेच्छा प्रकट किया करते थे ।

श्रीमान् विजयसिंहजी कुनाडीराज (कोटा राज्य) की स्वामीजीपर अत्यन्त भक्ति थी और वे समय २ पर स्वामीजीसे पत्रव्यवहार और साक्षात् करके उचित परामर्श किया करते थे । कुनाडीरानाजी और स्वामीजीके पारस्परिक सम्बन्धमें अधिक न लिखकर हम नीचे श्रीमान्के कतिपय पत्रोंको उद्धृत करते हैं । कुनाडी-रानाजीके पत्रोंको अपेक्षाकृत अधिकतासे उद्धृत करनेमें हमारा उद्देश यह है कि पाठकोंको स्वामीजीके भिन्न २ श्रेणीके महानुभावोंसे समान बर्तावका अनुमान हो जावे।

श्रीमान् विजयसिंहजीकी इच्छा थी कि स्वामीजी महाराज बीकानेरमें भी वैदिक-धर्मप्रचार करें; इसी निमित्त आपने अपने मित्र ठाकुर दीपसिंहजीको स्वामीजीकी प्रशंसामें निम्न पत्र लिखा था ।

Ajmer,
2nd March 98.

My Dear Dipsuishji Sahib,

The bearer of this letter are those of which I have already written to you i e Swami Vishweshvaranandji and Bramhchari Nityanandji they are well known persons throughout Hindutan. They are also respected in the native states such as Baroda mysore Oodeypore. I know whenever they go to Oodeypur Maharana hears their lectures late Maharaja mysore and present Gaikwar Baroda also heard their lectures. Their saying is simply about our old vedic religion, I hope you will see them and would try to take them to Durbar Also.

Yours sincerly,
Bijaysingh,
Kunari Kotah.

(१)

॥ ओ३म् ॥

कुनाडी ता. २७–८–९९

श्रीमत् स्वामी महाराज श्री विश्वेश्वरानन्दजी, ब्रह्मचारीजी महाराज श्री नित्यानन्दजीकी सेवामें—कृपापत्र आपका मिला; पढकर अत्यन्त चित्त प्रसन्न हुआ। इन दिनोंमें आपके कोई ठीक स्थान पर बिराजनेका हाल मालुम नहीं होनेसे पत्र नजर न कर सका, सो कसूर माफ करें। यहां आपकी दयासे सर्व प्रकार आनंद है। समाजका काम ठीक तरह चलता है। मकान बनानेकी पक्की तजबीज दर पेश है। एक डाक्टर गुरुदत्तजी बड़े उत्साही आ गये हैं। एक नागरी व संस्कृत स्कूल भी खोला है पर अभीतक लड़के ५ सात ही हैं। उम्मेद है, रफते २ कुछ हो जावेगा। पण्डित सूर्यप्रसादजी पंजाबमें मुनशीरामजीके पास जाना चाहते हैं २०) मासिक पर। इन दिनोंमें कोई नवीन ग्रन्थ बनाया हो तो कृपा कर छपनेपर बख्शें।

राजाधिराज साहिबकी सेवामें मेरा नमस्ते मालूम करें।

ह: विजयसिंह
कुनाड़ी

(२)

॥ ओ३म् ॥

स्वामीजी महाराज श्री विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी, व ब्रह्मचारी महाराज श्री नित्यानन्द सरस्वतीजीकी सेवामें नमस्ते ।

इन दिनोंमें आपका कोई कुशल पत्र नहीं सो बेगसे । पाईनियर पढनेसे मालुम पडा कि आगामी अक्टूबर मासमें जापानकी राजधानी टोकियोमें एशियाके मजहबोंकी एक कान्ग्रेस होनेवाली है; शायद आपको भी यह मालूम हुआही होगा । अगर ऐसा है तो आपको अवश्य इस अवसरपर जापानमें पधारकर वैदिक धर्मकी महत्त्वता को अन्य मतवालोंपर अवश्य प्रगट करना चाहिए और इस अवसरको हाथसे न जाने देना चाहिए—अगर आप किसी विशेष कारणसे न पधार सकें तो किसी आर्य उपदेशकको भिजानेका जरूर यत्न होना चाहिये ।

यहां सब खैरियत है; सनातन धर्मवालोंसे फिर शास्त्रार्थकी बातचीत हो रही है। बलके उन्होंने ही चैलेंज दिया है। सो नियम बनाके उन्होंकी दरख्वास्त माफक भेज दिये हैं हाल उन्होंने मंजूरीकी इतला नहीं दी । अपने यहां स्वामी दर्शनानन्दजी पधारनेको फरमा गये हैं । इनके सिवाय और किनको बुलाया जावे सो अपनी सम्मतिसे इतला बखशें । बहुत दिन हुऐ हैं, सो आप भी अब कृपा करके कभी दरशन दें तो अच्छा है ।

ता. २३—७—२

ह:विजयसिंह

कुनाडी कोटा

(३)

॥ ओ३म् ॥

स्वामीजी महाराज श्री विश्वेश्वरानन्दजी व ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीके सेवामें ।

कृपापत्र आपके २ आये, शास्त्रार्थका अभी कुछ निश्चय नहीं हुआ है; सनातन धर्मवालोंने अभीतक कुछ जवाब नहीं दिया है. उनका जवाब आनेपर फिर इतला व अर्ज की जावेगी. जापान पधारनेका आपने निश्चय कर लिया, इसकी बडी खुशी हुई; ईश्वर आपकी यात्रा सफल करे. पीछे पधारना कितने दिनोंमें होगा सो कृपा करके लिखावें । अंगरेजी जाननेवाले किसीको साथ लिया है वा नहीं ? मेरे देखनेमें बुध

मजहबकी कोई किताब अंगरेजी वा उर्दुमें नहीं आई. कृपादृष्टि बनी रहे. जापान-यात्रा करके बेगा पधारें ।

ता. २६ अगस्त सन् १९०२ ई.

विजयसिंह

कुनाडी

(४)

श्रीमान् स्वा. विश्वेश्वरानन्दजी व ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी महाराज नमस्ते ।

आपके जापानसे वापिस पधारनेका हाल मालूम नहीं हुआ. वहां जानेसे पेश्तर आपके पत्रसे यह मालूम हुआ था कि आप किसी समय कोटा पधारकर कोटे निवासियोंको अपने मनोहर व्याख्यानोंसे अवश्य लाभ पहुँचावेंगे. इस समय हमारे यहां आपके पधारनेकी अति आवश्यकता है; क्योंकि इस साल हमारे यहांकी समाजका सालाना जलसा ता. १४ नवम्बरसे १७ नवम्बरतक होगा और इसमें सनातन धर्मियोंसे शास्त्रार्थकी उम्मेदकी जाती है; इस लिए आशा है कि आप यहां पधारकर हम लोगोंको जरूर लाभ पहुचावेंगें ता. ६ या ७ नवम्बरको वाइसराय भी यहां पधारेंगें; इस लिये उस समयपर यहां बहुतसे और और सरदार भी होंगें । इसी लिये उन्हीं तारीखोंमें जलसा रखकर आपको परिश्रम दिया गया है । आपकी सूचना आनेपर सवारी बारां स्टेशनपर मिलेगी । आपके दर्शनोंकी हमको बहुत दिनोंसे उत्कण्ठा लगी हुई है । अबके सालाना जलसेका निर्भर आपहीके पधारधनेपर है । यह पत्र मैंने अन्तरङ्ग सभाके मेम्बरोंकी स्थितिमें लिखा है. इस लिये आपको सबपरही कृपा करनी चाहिये ।

हः विजयसिंह

कुनाडी.

ता. १० आक्टूबर १९०२

(५)

॥ ओ३म् ॥

स्वामीजी महाराज श्री विश्वेश्वरानन्दजी, ब्रह्मचारीजी महाराज श्री नित्यानन्द-जीकी सेवामें—

इन दिनोंमें आपका कुशल पत्र नहीं आया सो लिखावेंगें। मैं आजकल अखबारोंमें जापानके नवीन मत ग्रहण करनेकी तलाश देखता हूं और ऐसा भी पाया जाता है

कि इस बातके निर्णय करनेके वास्ते एक सभा भी किसी वक्त होनेवाली है; चाहे यह सभा अभी हो वा देरमें हो; लेकिन मैं आर्य्यमित्र पत्रकी सम्मतिसे सहमत हूं कि यहांसे वैदिक मतके प्रचारकोंका एक बृहत् डेपुटेशन अवश्य जापान जाना चाहिये अगर इस बातका उद्योग हो रहा है तो बहुत श्रेष्ठ है; नहीं तो इसका उद्योग आपको अवश्य करना चाहिये ।

ता. २२–७–०६
विजयसिंह
कुनाड़ी कोटा

(६)

॥ ओ३म् ॥

कुनाड़ी ता. १२-८-६

स्वामीजी महाराज श्री विश्वेश्वरानन्दजी, ब्र० म० श्री नित्यानन्दजीकी सेवामें–
कृपापत्र आपका ता० ६ का लिखा हुआ मिला. आपके कुशलताके समाचार पाकर चित्तको बहुत प्रसन्नता हुई । मेरी रायमें जापान जानेके वास्ते सामाजिक डेप्युटेशनका अवश्य यत्न होना चाहिये, मैं इस विषयमें कोशिश कर रहा हूं । मैंने मुन्शीरामजीको भी लिखा है और राजाधिराज साहिब शाहपुराको भी अर्ज की है । राजाधिराज साहिब भी मेरी रायसे सहमत हैं और उन्होंने मेरे पत्रको प्रतापसिंहजी साहिबके पास ईडर भेज दिया है । मेरी राय है कि परोपकारिणी सभाकी तरफसे इस डेप्युटेशन भेजनेका यत्न किया जावे तो सर्वोत्तम है, जैसे के आप फर्माते हैं । इस कार्य्यको पूरा करनेमें जरूर कई बाधाएँ हैं, लेकिन कोशिश तो होनी चाहिये । नेक काममें ईश्वर हमेशः सहायता करता है; अगर परोपकारिणीसे इस डेपुटेशन भेजनेका यत्न न हो सके तो एक बड़ी सभा सामाजिक पुरुषोंकी होकर इस विषयमें विचार होना चाहिये और फिर चन्दा किया जाकर डेपुटेशन भेजा जाना चाहिये । आपको भी इस कार्य्यमें उद्योग फरमाना चाहिए ।

कृपादृष्टि बनी रहे, कुशलपत्र हमेशा बखशबो करें—

द: विजयसिंह,
कुनाड़ी.

(७)

॥ ओ३म् ॥

कुनाड़ी

ता. ५-५-०७

श्रीयुत ब्रह्मचारीजी महाराज श्री नित्यानंदजीकी सेवामें-

कृपापत्र आपका ता. १ मईका लिखा हुवा प्राप्त हुवा। ब्रह्मचारी विवेकानंदजी यहां आये और स्वामी श्री अयोध्यापुरीजी भी उनको यहां मिल गये—मैंनें स्वामीजीको दिवानसाहिबसे मिला दिया है; आशा है उनका काम शीघ्र हो जावेगा। दो चार दिनसे स्वामीजी मिले नहीं; लेकिन मालुम पड़ता है उनके कामका प्रबन्ध ठीक हो जावेगा। मुझसे हो सकेगा जहांतक मैं सहायता देनेमें हाजर हूं।

आपने वैदिक कोश बनाने व काशीमें पाठशाला खोलनेका यत्न फरमाया यह बहुतही उत्तम उद्योग है और मैं उसमें आपकी सफलता चाहता हूं-एक साधु मंडली सुधारनेका यत्न भी किया जावे तो उत्तम है। हिंदुस्थानमें साधुओंकी कमी नहीं है; लेकिन उनके विचार समयानुकूल हों तो उपदेश व उन्नतिकी अच्छी आशा की जाती है। काशीमें साधु लोग बहुत आया व रहा करते हैं; इस वास्ते इस तरफभी तवज्जह होना उचित होगा।

ह: विजयसिंह

कुनाडी (कोटा)

(८)

पाठकगण ! श्री स्वामीजी महाराजका जिन २ रजवाडोंसे सबन्ध रहा, उनमेंसे कुछका उल्लेख करनेका हमने साहस किया है; फिर भी स्थानसंकोच और अल्पज्ञताके कारण कितनोंहीका वर्णन करनेमें हम असमर्थ हैं; उदाहरणके लिये देवास, नरसिंहगड, झालावाड आदिका नाम लिया जा सकता है। इन सबके विवरणके लिये हमारा पाठकोंसे अनुरोध है कि वे चरित्रमें वर्णित विवरणपरही संतोष करें। अस्तु।

॥ ओ३म् ॥

स्वामीजी और योरोपियन विद्वान्।

यूरोप अपने विद्याप्रेम और खोजके लिए प्रसिद्ध है। श्री स्वामी नित्यानन्दजी विद्वान् और सत्यप्रेमी महानुभाव थे। अत: यदि आपका योरोपियन विद्वानोंके साथ

संबन्ध न होता तो यह एक आश्चर्यका विषय होता । शिमला प्रवासमें प्रायः नित्यही स्वामीजी या तो किसी यूरोपियनके यहां स्वयं पधारते थे, अथवा उनमेंसे कोई एक वा अधिक शान्तकुटीपर आते थे। कितनीही योरोपियन महिलाओंनें स्वामीजीसे संस्कृत पढी, कितनेही सज्जनोंने स्वामीजीसे धार्मिक विषयोंपर ऊहापोह की । वैदिक शब्दसूचीके प्रकाशित हो जानेके कारण स्वामीजीकी प्रसिद्धि अमेरिकातक हो चुकी थी; अतः दूर २ देशोंके विद्वान् स्वामीजीसे पत्रव्यवहार रखनेमें अपना गौरव समझते थे । जो सज्जन यात्रार्थ भारतवर्षमें आते थे, वे सुविधा होनेपर स्वामीजीसे अवश्य साक्षात् करते थे । यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि जो कोई भी स्वामीजीसे मिला स्वामीजीकी महान् योग्यता, सरल बर्ताव और गम्भीर विचारोंपर मोहित हो गया और अपने हृदयमें इस दिव्य मूर्तिके लिए आदर मानके भाव ले गया । स्वामीजीकी पैंठ श्रीमान् वाइसरायसे लेकर सर्व साधारणतक थी । श्रीमान् वाइसरायके प्राइवेट सेक्रेटरी, श्रीमान् हारकोर्ट बटलर लेफटेनेंट गवर्नर बर्मा, श्रीमान् ए. अर्ल चीफ कमिश्नर आसाम, श्रीमान् मेजर इ. बार्न्स फारेन डिपार्टमेन्ट आदि अनेक उच्च अधिकारियोंसे स्वामीजीका निरन्तर पत्रव्यवहार और समागम रहता था । कभी २ अपने अतिथियोंके स्वागतार्थ स्वामीजी "टीपार्टी" काभी प्रबन्ध करते थे । हम इसपर अधिक न लिखकर कुछ यूरोपियन उच्च अधिकारी और महिलाओंके कतिपय पत्र नीचे प्रकाशित करते हैं, जिससे कि स्वामीजी और यूरोपियन विद्वानोंका पारस्परिक सम्बन्ध पाठकोंको स्पष्ट और सप्रमाण विदित हो जावे। इस पत्रव्यवहारपर साधारण दृष्टि डालनेसे स्पष्ट प्रतीत हो जायगा कि स्वामजीका मान योरोपियनसमुदायमें विशेष था । सबसे पुराना जो पत्र इस पत्रव्यवहारमें यहां उद्धृत किया जाता है वह ९ दिसम्बर अब्दिष्ठात १८९०का है। यह पत्र जैसा कि उसके पढनेसे प्रतीत होगा, श्रीयुत हेनरी लासन आरचीयोलाजिकल सर्वे पश्चिमी भारतका लिखा हुआ है । जिसमें स्वामीजीको धार्मिक पुस्तकें भेजनेके लिये धन्यवाद दिया गया है । इसी प्रकार प्रत्येक पत्र अपनी २ विशेषता रखता है और उन सबके पाठसे पाठकोंको स्वामीजीके पारस्परिक व्यवहार, सर्व शुभकर्मसहयोग और कार्य्यप्रणालीके विस्तारपर अनुमान करनेका साधन प्राप्त होगा । अस्तु

पत्रोंकी नक्ल (प्रतिलिपि)

Vistor's Card,

Admit Swami Vishweshvaranandji to all meetings of the Legislative council of the Governor-General to be held in the Council Chamber, during the Dehli, of 1914 at 11 a. m.

Issued through the Hon'ble Pandit M. M. Malaviya.

By Order of the President,

W. H. Vincent.

Secretary to the Government
of India,
Legislative Deparment.

T. W. Payne,

Registrar Legislative
Department.

Viceregal Lodge.
Simla, 26th May 1914.

Sir,

I am directed to thank you for your letter of 18th May, conveying congratulations on the occasion of His Excellency the Viceroy's Birthday.

Yours Faithfully,
Asst. Private Secretary to the Viceroy.

Viceregal Lodge, Simla.
19th August 1914.

Dear Sir,

I am desired to thank you cordially on His Excellency's behalf for your letter of 17th august, Adressed to the Private Secretary to the Viceroy and for the loyal expressions contained therein.

Yours Faithfully,
Asst. Pivate Secretary to the Viceroy.

Simla,
6th September 1912.

Dear Sir,

I shall be glad to see you on Saturday at 12–30 at my office in Gorton Castle.

Yours truly,
(Sd) H. Butler.
Education Member
of Council,
at present Leiut. Governer,
Burma.

Department of Education,
Simla, the 26th August 1912.

My dear Sir,

I received your letter of Saturday this morning. You say you have a letter of introduction from Sir Archdale Earle to me. I shall accordingly be glad to see you in office at Gorton castle any morning from 11 O'clock till 3.

I am,
Yours truly,
J. Sharp.

Charles R. Lamman
9 Farar Street
Cambridge, Massachusetts.
W. S. A.

Cable Address;
Indiaman
Boston.

Harvard University.
December, 5 1910.

Gentle men,

I beg that you will accept, on behalf of the University my most sincere thanks for your great kindness in sending me a copy of each of the four volumes of your concordance to the four Vedas. These were duly received some months ago, but extreme pressure of scientific work has prevented my acknowledging them sooner. they are now being beautifully bound, and I am presenting them to the seminary Library for the use of my class.

I had the honor of an interview with his Highness, th Maharaja of Gaikwad, last summer in New york, and was greatly pleased to observe that you are thus Co-operating with him in furthering the progress of scholarship in his dominions and in India generally. These works are of great value and importance for such purposes.

You may be glad and interested to know that I am at present editing the text of Buddha Ghosa's Visuddhi Magga. This will make two volumes of Pali and two of English-translation. I hope also to add a volume a glossary. The Visuddhi is so systematically complete a treatise upon Buddhism, that this glossary if properly made, will be a very complete dictio-

nary of Buddhism. It is very important that this aspect in the developement of the religions of India should be made widely known to the occident. I wish you the best of health and excellent progress in the admirable work which you are doing.

Very Sincerely,
Charles R. Lamman.

Bhamburda, Poona.

9th Dec. 1880.

Dear Sirs,

I have to thank you very much for your kind thoughtfulness in sending me a copy of your pamphlet of the Arya Samaj. Preessure of work has hitherto prevented me from answering your note and also, I am sorry to say, from reading the booklet, but I hope to do so soon.

Thank you also for your kind thoughts of me. I am always glad to meet native gentlemen and to exchange idea with them, more especially as my very work has to do so much with their past history and art.

I Shall be glad to hear occasionally from you when you find time.

Yours Sincerely,
with kind Regards.
(Sd.) Henry Louseus,
Arch. Surveyof,
W. India.

Battsley, Elyisam Hill.
3-8-11.

My dear Swamijis,

Mamy thanks indeed for so kindly sending me the books which I shall much value.

will you both come to see my pictures tomorrow, Friday Evening at 6-30. P. M.

I am Yours Sincerely,
(Sd) A. Earle.

Home Department Simla,
4-8-1911.

My dear Swamijis,

I am very sorry to in form you that my wife is not at all well today and will not be able to see you if you come this evening. As I should like you to make her acquaintance perhaps you will kindly postpone your visit till another day in regard to which I will write to you again, as soon as she has recovered.

I am,
Yours Sincerely,
(Sd) A. Earle.

Home Department, Simla.
31st August 1911.

Dear Swamijis,

Many thanks for your kind letter the 30th instant and for the accompaniments which are very interesting. Many thanks also for the addresses which you have given me.

I am,
Yours Faithfully,
(Sd.) A. Earle.

Battsley,
Simla, the 6th Sept. 1911.

Dear Swamiji,

Many thanks for your letter of the 5th instant. I have made a note of Mr. Mavji's address and return his letter to you as requested.

I am,
Yours Sincerely,
(Sd.) A. Earle.

Battsley,
Simla, the 18th Sept. 1911.

Dear Swamijis,

Many thanks for your kind invitation of the 16th instant. We shall be very happy to come to tea on Tuesday the 26th instant at about 5-45 or 6 P. M.

I am,
Yours Sincerely,
(Sd.) A. Earle.

Home Deparement,
Calcutta, the 11th Jan. 1912.

Dear Swamijis,

It was extremely kind of you to write such a nice letter of congratulations. I did not have the pleasure of seeing you at Dehli, but I suppose that you were there helping the People's Fete.

Hoping that we shall meet again, I am,
Yours Sincerely,
(Sd.) A. Earle.

Home Department,
Calcutta, the 29th Jan. 1912.

Dear Swamijis,

Many thanks for your very nice letter of congratulations. It was extremely kind of you to write. I am,
Yours Sincerely,
(Sd.) A. Earle.

Bombay 4-1912.

To,

The Hon'ble Sir A. Earle,
K. C. I. E. etc,
CALCUTTA.

Dear and Hon'ble Sir A. Earle,

Under impression of your being overwhelmed with congratulations & greetings from your numerous friends and admirers cousequent to His Imperial Majesty the King Emperor having in fitting appreciation & recognition of your meritorious services to the Indian Empire, been graciously pleased to confer upon you the much coveted and unique honor of Knight commandership of the most eminent order of Indian Empire; and of your also being absorbed in reciprocating your acceptance to them we, as Bhikshus (Hermits) had till now refrained from this pleasent and paramount duty of conveying to you our similar, devout expressions for this very auspicious event; and in re-echoing our hearty wishes for a still more brilliant career.

We close this with our fervent prayers to the Giver of all Good to shower upoon you & those dear to you, all the choicest blessings in His Gift.

Yours sincerely,
(Sd.) Vishweshwaranand,
Nityanand.

Shekh Memon Street,
C/o Ramji-Bhagwan Jewellers,
Bombay, 25-1-12.

Dear and Honorable Sir A. Earle,

Your most kind letter of the 12th Instant duly to hand and we are much impressed with the felicitous expressions therein contained.

Yes we were present at the imperial Fetes at Dehli,whose happy termination is indelibly impressed upon every loyal Indian heart, but we purposely avoided trespassing upon your precious time under impression of your being over busy with the important functions of the Coronation Darbar.

We note from journalistic literature with unfeigned gratification your promotion to the :Chief Commissionership of Assam for which we resolicit your kind acceptance of our cordial congratulations this transfer precludes over occasional meetings at:Simla yet we fervently trust not to be erased from your memory consequent to your translation to a remote part of india and that we may surely meet any day during your sojourns to these Hills.

We close this with our sincere good wishes to you and the worthy Lady Earle to whom we beg to be remembered and with our devout prayers for a still more brilliant official career to be awaiting you in near future.

We are,
Yours most Sincerely
S. Vishweshwaranand and
Nityanand (S. D.)

Shanti kuti,
Simla, 10th Aug. 1912.

Honoured Sir,

I beg to acknowledge receipt of your esteemed letter, dated the 31st July 1912, and to express my gratefulness to you for your kindly asking me to refer to the Secretary, Education Department with a View to obtain help from him in connection with the completion of the Vedic Dictionary. As, however, I am not known to Hon'ble Secretary, I pray that you will be kind enongh to grant me a letter of introduction either to him or to the Hon'ble Members which will substantially further the advancement of the cause I have taken up. Taking into account that your sympathies with all matters relating to Education are markedly pronounced, I can justly entertain the hope of receiving one from your honour.

Trusting that you are in the best of health and extremely thanking you for your very kind wishes for our health.

I have the honour to be,
Honoured Sir,
Your most obedient
Servant,
S. N.

To, The Hon'ble Sir Archdale Earle,
K. C. I. E.
Chief Commissioner of Assam.

Longview Simla,
August, 5th 1911.

Dear Swamis,

Forgive my addressing you so late. I am not quite sure of your grand names !

A friend of mine, by name " Alastor " is going to call on you to-morrow afternoon, Sunday about 4-30 O'clock. I hope you will be at home

He is a man interested in all philosophies that help humanity, and very clever at casting horoscopes and all occult matters. If you can tell him of yoga he will he much interested. I am hoping to come and see you soon.

With Greetings from
Lisalle James.

Corst orphan's Hotel,
20th August 1911.

My dear Swamis Vishveshwaranand and Nityanand,

Many thanks for your kind invitation to tea which I shall be very glad to accept for next Friday, the 25th about 5 O'clock. I shall be much interested to see your पुरुषार्थप्रकाश:

Yours Sincerely
(Sd.) J. P. Vidgel.
Director General of archelogical Dept.

Castle Grove,
Simla (W.)
17th Sept. 1911.

Dear Swamis,

It is indeed kind of you to invite me to take tea with you one afternoon this week, but I regret to say I am unable to accept your kind invitation as I have visitors staying in the house at present and moreover am never able to leave office early enough to go out to tea.

Thanking you both for so kindly thinking of me.

Believe me,
Yours Sincerely.
(Sd.) A. C. William.
Brigadier General.

Castle Grove,
Simla, (W.) 12-5-15.

Dear Swamis,

I only get your kind note last night late on my return from Viceregal Lodge, so could not reply before, I am so sorry I can not accept your kind invitation to tea this evening, as I am already engaged having friends coming here to tennis this afternoon.

Yours Sincerely,
(Sd) A. C. William.
Brigadier General.

Grand Hotel,
Calcutta 15-12-7.

Dear Swamijis,

I was very glad to receive your letter saying you were in Call cutta and I hope you will come here to the Grand Hotel, Chouringhee to see us at 3-30 on Wednesday afternoon, the 18th Dec.

The number of our room is 46, and you had better ask for Mrs. Barnes, as I may not then have returned from office:—this does not matter–as Mrs. Barnes has lots of things and she wants to ask you about, before I come.

Hoping you are well and to see you on Wednesday.

Yours Sincerely,
(Sd.) W. Barnes.
Major assist. Secretary to Gov. of
India Foreign.

Grand Hotel 25–12–7.

Dear Swamijis,

Thank you very much for your letter and for the books which I have given to Mrs. Barnes:–they will interest her very much.

I am too much occupied in these days, that I am afraid I cannot fix a time for you to come and to see us-but I will write to you again later–in case you should still in Calcutta, after the Xmas holidays. If by then yon may have left, we must defer our meeting, until we all get to Simla again in the Spring. Then we shall all of us have more leisure.

With all best wishes from us both.

Believe me,
Yours Sincerely.
W. Barnes

Castle Grove,
July, 23–1908.

Dear Swamijis,

I shall be very glad to see you at day time on Sunday morning. Yes I am going home because I have been ill.

Yours,
(Sd.) W. Barnes.

Castle Grove Simla,
28th June 1908.

Dear Swamijis,

I have been at Sir Herbert Risley and he is coming here to tea next Sunday July 5th, and I should much like you and Swami Visheshvaranand to come to see about 4–30 in the afternoon of July 5th. Please bring your books with you that you are working at, to

Sir Herbert Risley cause the mind of work you are doing and how much you have done. I hope you will be able to come.

Yours Sincerely,
(Sd.) W. Barnes.

Castle Grove,
Simla (W.)
April 12th 1908.

Dear Sir,

I am glad to hear that you are well, and now that I know where you are, "I hasten to write to tell you that" when in Indore, at the end of February last, I had the pleasure of our old friend Rao Bahadur Krishna Rao Mulye, I mentioned your case to him, and he then said, that, if yourself and shri Swami Visheshwaranand would write to him and fully explain your claim, he would take true matter in hand, and do his best to help you. I am often walking as far as your house and wishing you and your friend would soon come up to Simla. Perhaps this is a selfish wish though, as it is still very cold and stormy here.

With our kindest regards.

Yours Sincerely,
(Sd.) Maria Engenia Barnes.

Castle Grove,
Simla (W.)
May 7th 1908.

Dear Friend,

I was very glad to hear from your note that you had arrived and that both yourself and shri Swami Nityanand are in the enjoyment of good health.

I must also thank you for the very fine mangoes. Could spare the time to come to see us one Sunday morning perhaps, as all the week days Major Barnes is at the office, and I know he would like to see you.

You will find us in, this coming Sunday from 11 to 1 O'clock and I hope to see you.

With best regards,
Your Sincere friends
(Sd.) Maria Engenia Barnes.

Castle Grove,
Simla (W)
June 7th 1908.

Dear Swamijis,

Herewith two Hydrangea plants which 1 am sending you as a begining for your garden.

Unfortunately I shall not be able to come for my Sanskıit reading for a few days. Hoping that you are both very well.

Yours Sincerely,
Maria Engenia Barnes (S. D.)

Castle Grove,
Simla.
June 18th 1908.

Dear friends and Teachers,

Herewith the little plants I want you to keep in memory of me for your garden.

I must write to thank you both for your great kindness to me, and also to tell you now much.

I regret that our early morning study, has come to such an untimely end. We hope you may be going to Oxford before very long, if so please write to me and we shall try to meet either there or in Rome.

Please come to see Major Barnes on Sunday afternoons when you can, as it is a great Pleasure to him, and also to me to hear about it. With many renewed thanks and the hope of meeting before we die.

Your Sincere Friend,
M. Engenia Barnes. (Sd.)

Grindlay & Co.
54 Parliament St. London W.

August 11th 1908.

Very many thanks for your letter. I am now convalescent an hope to be quite well in a month or two. Am expecting Major Barnes here on the 15th where he will have also to get well. I am sorry, but my poor Sanskrit can not get on without your kind help. Hoping your work is proceeding.

Yours Sincerely,
M. E. Barnes, (Sd).

Saharanpur,
27th October, 1908.

My dear Nityanand,

I was very glad to get your kind letter about interview with Mrs. Malabari. I hope it will lead to some thing good.

Sincerely Yours,
J. M. Carthy Rice.

जो सज्जन गुरुकुल कांगडीसे प्रकाशित वैदिक मेगज़ीन नामक मासिक पत्रका पाठ करते हैं उनसे उसकी अग्र लेखिका श्रीमती " Elizabeth Arnold " का नाम व परिचय छिपा नहीं है। आप धार्मिक विषयोंकी बहुत परिश्रमसे खोज करती हैं। वैदिक मेगज़ीनमें आपके " Thought for the month " स्वाध्यायके लिए वास्तवमें महिनौसे भी अधिक सामग्री उपस्थित करते हैं। अस्तु श्री स्वामीजीके साथ इनका विशेष परिचय था और वैदिकधर्मप्रचारके लिए स्वामीजीकी योग्यतासे ये पूरा लाभ उठाती रहती थीं। अपनी मित्रमंडलीसहित ये स्वामीजीके धर्मोपदेश सुनती थीं। प्रायः विदेशोंसे आये हुए सज्जनों और देवियोंको ये अपने साथ स्वामीजीके यहां शान्तकुटीर पर लेजाकर उनका धर्मोपदेश सुनवाती थीं। इस से भी जो पत्र व्यवहार था उसमेंसे कुछ की नकलें यहां दी जाती हैं इनमें एक पत्र पाठकोंको आर्य्य भाषामें भी मिलेगा जिससे इसी रमणीके आर्य्य भाषाके प्रेमका पता चलता है।

Fallettis Hotel cecil.
Simla.
27 June.

Dear Swami Nityanandji,

I was very pleased to receive your kind letter this morning and your kind present of fruit. There is no food of any kind I like better than mangoes and they taste especially sweet when they are presented by such kind friends. I myself was very sorry that you were not at home when Dr. Denison Ross called at your house. But Swami Visvheshwaranand entertained him in the best possible manner and the Dr. was very pleased with his conversation. I like to come and see you very much but some times it is difficult to let you know before hand when

I can be free, therefore I do not come often. I hope that you enjoyed your littlle Holiday at Karnal with best respects.

Yours Sincerely,
(Sd) Elizabeth Arnold.

Abergeldie,
26th July 1911.

Dear Swamiji, नमस्ते

I have just had a second letter from Mr. Earle in which he says "it was up to the top of Prospect Hill I went, a fakir lives there" etc. etc. He has finally settled Tuesday Aug. 1st and now knows the address. On Monday 31st July I am bringing Miss. Sinedley and Mrs. Cowper to see you. It is the only day therefore I shall be obliged to come both Monday and Tuesday. × × × × With best respects.

Yours Sincerely,
(Sd) Elizabeth Arnold.

Kindest remembrance to Mr. Narayandass (Sessions Judge) and to Mr. Ishardass.

New Cottage, Abergeldie.
27 July 1911.

Dear Swamiji,

I write rather in haste as I am just off to lunch at Barnes court to meet the Raja of Kapurthala and Sir Pertab Singh. After that tea at Mr. James. Alas quietude is far from my life. Please excuse haste. With best respects

Your Sincerely,
(Sd) Elizabeth Arnold.

Thursdy 2nd letter.

Dear Swamiji,

There is a letter for you inside this parcel. Since closing it I hear that Mrs. Cowper cannot come on Monday. As miss Swedly is free Tuesday I shall bring her with me that day instead of coming specially for her on Monday. With best respects.

Sincerely Yours,
(Sd.) Elizabeth Arnold.

New Cottage,
Abergeldie Friday.

पूज्य स्वामीजी माहाराज,

आज मैं नही चलना सकती हूं। तथापी आपके साथ बोलना चाहती हूं। आपको मुमकिन है मेरे पास आना ३ (तीन) बज़जे (आज)?

होटेलमें उपर पथ पर (Cottage तक) आयगा With प्रणाम,

(Sd) Elizaboth Arnold

New Cottage kaithee,
Satend. 9 night.

Dear Swamiji,

Today I was at Dr. Vogels party at Belmore. It was very interesting. Unfortunately Dr. Ross was ill and was not there: I then asked to speak to Dr. Venis and told him that Dr. Ross wanted him to meet you. He was very nice but very sorry that he has to leave Simla early Monday and is engaged all day tomorrow.

I spent a long time with Mrs. Ross and told her that you had invited me to bring up to your house my friend Mrs. Cowper etc. to a tea party and asked her to come too. She accepted with pleasure. So one day this week I am going to bring up to Shant kuti.

Mrs. Cowper.
Mrs. Swedley.
Mrs. James.
Mrs. Ross.

All very nice ladies indeed.

Can I help you about the tea. Because none of these ladies could drink tea made by the Indian way + + I will help you and we can make your tea party successful in many ways. + + +

Yours Sincerely,
(Sd) Elizabeth Arnold.

New Cottage,
Opp. 196 Aunnadale Road.
Kaithee 10th July 1911.

Dear Swami Nityanandji,

+ + + Because I wish to bring Mrs. Earle to see you when you are alone and also Mrs. Cowper and miss Swedley. Let me know at once, as it takes much time to arrange with people who have so many social engagements. I enjoyed my visit to you yesterday very much indeed and shall come again as soon as I can. It was a pity that it rained just then and I got very wet going home.

I shall not forget to ask Dr. Ross to give you the introductory letter to Mr. Kettlewell as soon as he comes back.

With best respects,
Yours Sincerely,
Elizabeth Arnold.

P. S.

+ + + Tomorrow Dr. Vogel comes here for Swami Shankaranand.

25 July.

Dear Swamijis,

I reached home alright and slept beautifully, having much peace after the Sandhya mantras which Swami Nityanand say so beautifully in the twilight.

I have just recieved a very nice letter from Mr. Earle saying "I went to Prospect Hill Yesterday where I had understood that we were to meet." He writes too long a letter to copy all but I may say that if we do not come today at 6 O'clock or thereabout we shall come Aug. 1st (Tuesday) at that time.

So you will see Mr. Earle either today or Aug. 1st quite certainly as I yesterday assured you.

With best respeccts,
Sincerely yours,
(Sd) Elizabeth Arnold.

Abergeidie Hotel.
21 July I A. M.

Just a line to say that Mr. Earle and I are coming to see you Monday evening at about six O'clock. It is also probable that Dr. Ross and some others may come. But Mr. Earle and myself in any case. we shall take tea before leaving Simla.

(Sd) E. Arnold.

Tuesday.

Dear Swamijis,

I have answered Dr. Vogel that I shall go with him and take tea with you on Friday.

Yours sincerely,
(Sd) Elizabeth Arnold.

Falettis Hotel Cecil
Simla Lahore.
May 30.

Dear Swamiji,

It was as I feared Dr. Ross' cold today was too bad for him to go out again after leaving office, but we have fixed Thursday next at same hour to come and see you and hope to find you in. I am very sorry that we could not keep our appointment today. With kind regards and best respects.

Yours sincerley.
(Sd) Elizabeth Arnold.

29 May 1911.
Talettis Cecil Hotel Simla.

Dear Swami Nityanandji,

True to my promise I am writing to say that I shall be coming to see you tomorrow at about 6 O'clock I shall bring with me my friend Dr. Denison Ross to introduce him to you. I have told him about your learning and kindness.

If Swami Vishveshwaranand is there too we should like to see him also. + + + + + + as

I shall be accompanied by Dr. Ross you need not send servant to fetch me. With best respects.

Your sincerely,
(Sd.) Elizabeth Arnold.

4th June 1911.
Cecil Hotel, Simla.

Dear Swami Nityanandji, नमस्ते

I saw Dr. Ross at Viceregal lodge last night but we could not fix up a day to come and see you about a week, as he is going awa} from Simla till about next Saturday. He said that on his return we would try to arrange it. He is so very busy that even when he makes an appointment he is never sure of being able to keep it. You must never think it through rudeness or indifference if we break the appointment I myself alone should like to come and see you again tomorrow evening if you are not otherwise engaged. I spoke to Dr. Vogel about you and your house last night and he has a scholar friend soon coming to Simla whom he will send to see you. With best respects also to Swami Vishveshwaranand.

Yours sincerely,
Elizabeth Arnold.

Talettis Hotel, Cecil, Simla.
21st June 1911.

Dear Swami Nityanandji,

I hope that you will be pleased to hear that Dr. and Mrs. Denison Ross who are having tea with me next Friday have promised to call and pay you a visit after tea. I told them that coming to you would he better than seeing you at the Grand Hotel because they would be able to see your house etc. as well as you. Therefore expect us Friday next about 6 O'clock or just after if convenient.

Yours Sincerely,
Elizabeth Arnold.

Abergeldie,
Saturday.

I recieved a kind letter from you yesterday. I hope that you recieved my card saying that I am coming with Mr. Earle to see you Monday about 6 p. m.

(Sd.) E. A.

Please excuse great haste of Post Card.

अधिक पत्र न देकर अन्तमे इस देवीने जो पत्र श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजको स्वामीजीके मृत्यु समाचार सुननेपर लिखा था उसको उद्धृत करते हैं उसके पाठसे यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि यह देवी स्वामीजीकी योग्यता पर कहां तक मुग्ध थी और उनके व्यवहार वर्तावका प्रभाव आगन्तुको पर कितना अधिक पड़ता था। अस्तु

C/o Thomas Cook Sons,
9th Jan. 1915.

Dear Swami Vishveshwaranandji,

I have Just heard of the death of Swami Shri Nityanandji Maharaj and am writing to express to you my condolence and my own grief.

For I have ever remembered the peaceful hours we spent together at Shant kuti and hoped to have a repetition of them this summer.

Now alas I shall never see you both together again and I do not think that any one can ever fill his place.

He was so gentle so kind and good and so free from all love of intrigue and self interest.

I don't dare to think how lonely you will now be and I am thinking of you often since the day I heard of your great loss.

I am now travelling in the Hills and amongst the Rebaris, but if you will keep me informed of your address I will call and see you if ever I pass your way.

Yours very sincerely,
Elizabeth Arnold.

स्वामी नित्यानन्दजी और भारतीयमहानुभाव.
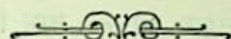
श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजीका राजा महाराजाओं, और यूरोपियन समुदायमें कितना मान और गौरव था, उनके उपदेशोंसे इन दो श्रेणियोंने कितना लाभ उठाया आदिका संक्षिप्त विवरण पूर्व पृष्ठोंमें किया गया है। यहां हम स्वामीजीका सम्बन्ध भारतीय महापुरुषों (नेताओं) से किस प्रकारका था, उसका यत्किंचित् वृत्त उपस्थित करते हैं। "**नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्य्यकर्त्ता**"। यह सत्य ही कहा गया है कि नृपति और जनपद दोनोंके हितकर्ता विरले ही मनुष्य होते हैं। संसारके इतिहासमें राजा और प्रजा दोनोंका आदर प्राप्त होना विरलों ही के भाग्यमें होता है। प्रायः लोकमान्य महात्मा राजमान्य नहीं होते, और राजमान्य महापुरुष प्रजाके अहितकर्ता माने गये हैं।

परन्तु हमारे चरित्रनायक इस साधारण नियमके अपवाद थे। उनकी राजमान्यताके प्रमाण राजा महाराजाओं और योरुपियनोंके पत्रव्यवहारसे मिलते हैं। और लोकमान्यताके सम्बन्धमें यहां लिखा जाता है।

स्वामीजीका परिचय प्रायः सब ही भारतीय नेताओंसे था, विशेषकर उन सज्जनोंसे जो धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनमें विशेष भाग लेते थे।

Indian Social conference के कर्णधार **महात्मा न्यायमूर्ति माधव गोविन्द रानडे और जस्टिस सर नारायण गणेश चन्दावरकर** के प्रधानत्वमें तो स्वामीजीके अनेक व्याख्यान बम्बई नगरमें हुए थे, जिसका वर्णन चरित्रमें यथा स्थान किया जा चुका है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभाके स्वामीजी प्रतिष्ठित साभासद थे और हिन्दी साहित्यके प्रधान विस्तारकर्ता थे।

स्वामीजीके भाषणोंसे हिन्दीको कितना गौरव प्राप्त हुआ उसका वृत्तान्त चरित्रमें जहां स्वामीजीके बंगलोर, माईसोर और कलकत्ता की यात्राओं के वर्णन हैं, स्पष्ट मिलता है।

कितनेही योरोपियन और अन्यभाषाभाषी सज्जन स्वामीजीसे हिन्दीमें पत्रव्यवहार करते थे। इस प्रकारके पत्रोंमेंसे एकका अवतरण योरोपियन महानुभावोंके पत्रमें दिया जा चुका है और विस्तारभयसे केवल एकही पत्र यहां उध्दृत किया जाता है।

यह पत्र श्रीमान् महेशचन्द्रलिखित बंगला हिन्दीका द्योतक है।

पूज्यतमे प्रणतय: सन्तु।

आपको समागम शुनकर अतिशय आनन्द लाभ किया।

आज पांच दिनसे मैं ज्वरसे पीडित भाया अतिशय कातर है। इस लिये स्वयं उपस्थित नहीं हो सका; माप करला।

सेवक महेशचन्द्रस्य

ब्राह्म समाजके नेताओंसे अपनी बंगालयात्रामें स्वामीजी निरन्तर मिलते रहते थे।

सारांश, स्वामीजी प्रत्येक हितकारी कार्यमें सहयोग देनेके अभ्यासी थे और इसी निमित्त यथावसार भिन्न २ महापुरुषोंसे उनका पत्रव्यवहार होता रहता था, जिनमेंसे कुछ के नाम और पत्रोंकी प्रतिलिपि नचि दी जाती हैं।

(१)

वर्तमान भारतीय राजनीतिके भीष्म पितामह श्रीमान् दादाभाई नवरोजीका पत्र

Vesava,
6-2-1910.

Dear Mr. Shapurji,

I shall be very glad to see the swami Nityanandji between 3 and 4.

Yours truly,
(Sd) Dadabhai Naoroji.

(२)

ईस्ट एन्ड वेस्टके सम्पादक प्रसिद्ध समाजसुधारक श्रीमान् बहरामजी एम्. मलबारी स्वामीजीको अत्यन्त मान और आदरकी दृष्टिसे देखते थे। मलबारी महोदय स्वामीजीसे उनके बम्बई और सिमला प्रवासमें प्राय: नित्य ही मिला करते थे। इनसे स्वामीजीका पत्रव्यवहार भी अधिक था। जिसमें सामाजिक विषयोंपर अधिक चर्चा रहा करती थी। सन् १८९० में जब मलबारी महोदय Consent Bill के आन्दोलनमें प्रवृत्त थे तो स्वामीजीने उनको बडी सहायता दी थी, श्रीमान् मलबारी महोदयने इस निमित्त जो सभा भारतमें स्थापित की थी, स्वामीजीने उसके संगठनमें आर्य्य समाजोंको अपने समर्थनपत्रसहित उनका पत्र भेजकर सहायता देनेके लिए प्रेरित किया था, जिसकी प्रतिलिपि यह है।

ओम्

श्रीमानो !

ये पत्र आपके समीप भेजे जाते हैं, इसके चारों विषय मुख्य देशोन्नतिके कारण हैं. यद्यपि कितनेक लोगोंकी सम्मतिसे मी॰ बेहेरामजी मेहेरबानजी मलबारी महाशयने कन्याविवाहके समयकी अवधि बारह वर्षकी रक्खी है, परन्तु आप अपनी सहीमें सोलह वर्षकी अवधीकी सम्मति प्रकाशित कर सकते हैं. हम आशा करते हैं कि, इस देशोन्नतिजनक कार्यकी सिद्धिके लिये आप स्वपत्रकि सहित हस्ताक्षर करके देशोद्धार करेंगे इत्याशास्महे.

विश्वेश्वरानन्द सरस्वती,
ब्रह्मचारी नित्यानन्द.

पत्रोत्तर इस पत्तेपर भेजोः—
मि॰ बहिरामजी मलबारी.
मुंबई.

(Private.)

24, Hornby Road.
Bombay, Nov. 15, 1890.

My Dear Sir,

As you may be aware, the following Resolution were discussed and adopted at a most influential meeting in London, held at Mr. Jeune's, on the 14th of July, 1890, towards raising the position of women in India, by an amendment of some of the marriage laws, without militating against the religious or social observances of any class of the subject population:—

Resolution I.—Proposed by Sir Willian Moore, seconded by—Tupper, Esq., and supported by Dr. Fraser—" That the age of consent should be raised to 12."

Resolution II.—Proposed by Sir Charles Aitchson, and seconded by the Countess of Jersey—" That provision be made for enabling infant marriages to be set aside unless ratified by consent within a reasonable time of the proper age."

Resolution III.—Proposed by Sir William Markby, and seconded by Mr. Gazdar, " That the suit for restitution of conjugal rights, which is founded upon ecclesiastical law, and has been repudiated in its coercive form in all countries of Europe, ought never to

have been introduced into Iudia; that the continued prosecution of such a suit is likely to produce injustice; and that the whole subject requires reconsideration at the hands of the Government, with a due regard to the marriage law and the habits and customs of the people of India. "

Resolution IV.—Proposed by Professor Max Muller, and seconded by Sir John Kennaway, Bart., M. P., " That any legal obstacles that still stand in the way of the re-marriage of widows should be removed. "

With regard to Resolution No. 2 it may be added that the feeling amongst Hindu reformers on this side appears to be that it would be more feasible, and perhaps more convenient, to propose the prohibition of marriage under a certain age, as suggested by Sir T. Madhava Raw and others, failing which Government may not recognize and enforce infant marriages. This explanation is tendered in order to enable you to moke your own choice.

As regards Resolution No. 4 it is hardly necessary to explain that no harm is contemplated to the interests of others while securing her civil rights to the widow. That there is absolutely nothing of a coercive character in the Resolutions will be seen from the prehence of responsible statesmen on our Committee, and of other highly respected English friends. Many of these were averse to legislation five years ago; but seeing that our present proposals for legislation have little to do with social or religious customs as such seeking only to correct the mistakes of law and policy, as inadvertently committed by the British Government, they cheerfully joined the Committee in order to obtain n minimum of legislative relief for the sufferer. Subjoined is a list of the London Committee, up to date:—

The Earl of Northbrook, Lord and Lady Reay, the Marquis and Marchioness of Ripon, the Marquis and Marchioness of Dufferin, the Earl of Kinnaird, Sir Charles and Lady Aitchison, Professor and Mrs. Max Muller, Mr. and Mrs. Ilbert, Mr. and Mrs. Samuel Smith, the Hon. Misses Linnaird, Mr. and Lady Heleu Ferguson, Mr. and Mrs. Jeune, Mr. Dadabbai Naroji, Miss Frances Power Cobbe, Cardinal Manning, Mr. and Mrs. Childere, Mr. Leonard Courtenp, the Countess of Jersey, Dady Hobhouse, Professor Bryce, M. P. Sir William and Lady Muir (Edinburgh). Sir William nnd Lady Wedderburn, the Duke of Westminster, the Lady Leigh, the Kady Edward Cavendish, Mrs. Fawcett, Miss Agnes Garrett, Sir

John Kennaway, Bart., M. P. and Lady Kennaway, Lord and Lady Tennyson, Lord and Lady Wynford, Lady Lyall, Mrs. Frank Morrison, Sir William and Lady Hunter, Sir William and Lady Markby, Sir William Moore, the Hon. Hallam Tennyson and Mrs. Tennyson, Mr. and Mrs. Caine, Miss Marston Miss E. A. Manning, Mr. and Mrs. Percy Bunting, Sir Andrew Clark, Dr. W. S. Playfair, Sir Monier and Lady Williams, the Bishop of Carlisle, the Bishop of Exeter, the Bishop of Durham the Rev. Canon Wilberforce, Dowager Lady Stanley of Alderley, Mr. James Samuelson, the Rev. Mr. Barnett and Mrs. Barnett, the Rev. Dr. Lindsay (Glasgow), Mrs. Josephine Butler, Mrs. Wynford Philips, Mr. Justice Scott and Mrs. Scott, Lord Lawrence, Mr. Samuel Laing, Lady Herschell, Mr. Herbert Spencer, the Countess of Galloway, Miss Louisa Stevenson (Edinburgh), the Dowager Countess of Mayo, Lord Stanley of Alderley, Mr. Justice Kemball and Mrs. Kemball, the Bishop of Liverpool, the Rev. Canon Mc. Cormic, Rev. the Hon. Carr Glen, Sir Henry and Lady Cunningham, Sir Rivers and Lady Thompson, Dr. George Smith, Mrs. Rukhmabai, the Hon. Chandos Leigh, Mrs. Henry Ware, Rev. Prebendary Forrest, Sir George Campbell, Rev. Canon Duckworth, the Dean of Westminster, Mr. and Mrs. Whitley Stokes, Sir James Fitz-James Stephen and Lady Stephen, Duke and Duchess of Argyll, the Duke of Fife, Arch-Bishop Plunket of Dublin, Lord and Lady Randolph Churchill, the Earl of Rosebery, Mrs. (Dr.) Scharlieb, Miss (Dr.) Ellaby, Mr. H. W. Primrose, Mr. Samuel Digby, the Rev. Brooke Lambert, Mrs. W. Dixon (Dublin), the Right Hon. Sir U. K. Shuttleworth, M. P., Mr. and Mrs. Walter Mc. Laren, Mr. and Mrs. Geary, the Rev. Dr. Fraser and Mrs Fraser, Sir F. Forbes Adam and Lady Adam.

It is now proposed to have a committee in India to correspond with this Powerful organisation in London. I have to reqest you, therefore, to lend us your name and of such Lady members of your family and other friends as you could induce to join this work of righteousness and mercy. Please also to state to what extent you are prepared to go with the Committee.

Yours faithfully,

BEHRAMJI M. MALBARI.

जिन सज्जनाको वर्तमान साहित्यसे कुछ भी सम्पर्क है, उनसें (रिव्यू आफ रिव्यूजके स्वर्गीय सम्पादक महात्मा W. I. स्टीडके शब्दों में Best world journalist सर्वश्रेष्ठ सम्पादक) संत निहालसिंहजीका नाम अप्रकट नहीं रह सक्ता।

इस विश्वपरिव्राजकके विचारों और लेखोंको अपने २ समाचारपत्रों, मेगजीन और पुस्तकोंमें स्थान देनेके लिये संसारका प्रत्येक संपादक और लेखक लालायित रहता है। और यदि उसके सौभाग्यसे उसे सफलता प्राप्त होती है तो अपनेको धन्य समझता है। इन श्रीमान् सन्त निहालसिंहजीका प्रेम स्वामीजीपर अति अधिक था। उनके वैदिक कोशके प्रचारके लिये वे सदा उद्यत रहते थे। स्वामीजीकी प्रशंसामें उन्होंने कई समाचारपत्रोंमें लेख लिखे। वैदिक शब्दसूचिकी प्रशंसात्मक समालोचनाएँ संसारके प्रसिद्ध समाचारपत्रोंमें प्रकाशित कीं और इस प्रकार अपने प्रेम और भक्तिका परिचय यथावसर देते रहे। सन्त महाराजके कुछ पत्रोंकी प्रतिलिपि दी जाती है।

C/oThos. cook & Son,
Ludgate Circus,
London May 30-1911.

Dear Swamijis,

You will be glad to learn that my wife and I have reached London safely, and that we will be settled here in our home in two or three days.

I enclose a letter from the editor of the Hindustan Review in which he says that he printed my note about the vedic indexes and Dictionary. You may obtaln the April issue to see what it reads like.

If you will now send me a complete set of the indexes I shall be delighted to interest book-sellers here.

With greetings from both of us.

I am Sincerely yours,
(Sd.) Saint Nihal Singh.
43 Nattinston Road,
Hampstead N. W.
London, England, Sept. 1-1911.

Dear Swamijis,

I am glad to acknowledge receipt of your letter of August 2nd and also of the four volumes of the Vedic Index. I am trying to get some customers for your book, and also to have a notice of it inserted in some English publications. I am quite sure that I will succeed in both these efforts. You will hear from me in the course of time.

Maharaja Gaekwad has gone away from London and is now in Scotland, just before his departure he came up here for a social call and spent over an hour with us. His Highness is in excellent health and spirit, we are still engaged in writing the biography which won't be finished until the end of the year.

Thank you for writing to Raja Munshi Madholal for send ing me a Benarsi Burham Turban I will acknowledge its receipt when it comes. My wife and I send our kindest regard.

Sincerely yours
(Sd) Saint Nihal Singh
Lyallpur Sept. 22-1910

Dear Swamijis,

We reached our destination safely and have been well ever since coming down, but we find that after all the plains are still very hot. Early in the morning and after 6 O'clock in the night it is delightfully cool, but a mid-day abont, all a person can do is to sit under the punkha and keep cool. However, in spite of the heat, we have been constantly on the go. We have been out in the camp studying the working of the canal, along with the executive engineer whose guests we are just now we are in the centre of the desert, about forty miles from Lyallpur we shall return to civilization tomorrow night and right away will continne on our tour.

We have missed you very much since leaving Simla, and we are looking forward to the time when we shall see you again in Bombay.

The letter carrier has just come to demand the mail so I must bring this to an abrupt close. With best wishes from both of us to both of you.

I am sincerely yours,
(Sd) Saint Nihal Singh.
C\o Thos., Cook & Son,
Bombay, Mon. 5-1910.

My Dear Swamijis,

I have been sick in bed for three weeks and my wife has also been ill for about the same length of time.

I have almost completely recovered from illness, but she still continues to be sick. This has prevented my writing to you before this.

I am addressing this letter to Simla not knowing where you may be at present. Did you see the article that appeared with your photogragh in the last (October) number of the Modern Review ? I had the copy sent by the Editor but if you did not get it you can see the magazine at any public library.

With kindest regard I am,

Sincerely Yours,
(Sd) Saint Nihal Singh.

Versova Via Andheri,
November 22-1910.

Dear Swamijis,

Your letter has just arrived. If you will let me know just where you are staying in Malad, Mrs. Singh and I will come up to see you. We are staying not far from you.

Sincerely Yours,
(Sd) Saint Nihal Singh.

Lakshmi Vilas Palace, Baroda.
March, 17, 1911.

My dear swamiji,

I received your note of March 6th but am disappointed in not seeing you at Baroda. When are you coming ?

More than likely we will come to Bombay in a fortnight or three weeks. This leaves us in good health and I trust that both of you are alright.

Sincerely,
(Sd) Saint Nihal Singh.

Chimanbagh,
April 11 1911.

Dear Swamiji's,

I have sent the note about the *Index* and *Dictionary* to the *Hindustan Review*, since you won't be able to get the benefit of my writing if it is to be published in more than one publication at the same time; I will send a new Ms. to the *Indian Review* some time later.

I was not able to leave work and come to Navsari but trust that you got there and are having a useful and pleasant time with H. H.

Sincerely Yours,
(Sd) Saint Nihal Singh.

४

मंगलमूर्ति, परम आदरणीय, हिन्दू विश्वविद्यालयके प्रवर्तक माननीय पंडित मदनमोहन मालवीयजी भी स्वामीजीके विशेष परिचितोंमेंसे हैं । स्वामिजीसे आपका प्रथम परिचय मथुरामें भारत धर्ममहामण्डलके अधिवेशनपर हुआ था । तबसे यह परिचय निरन्तर बढता ही गया और जैसा कि नीचे उद्धृत किये हुए पत्रसे पाठकोंको विदित होगा । ईस्वी सन् १९१३ में तो स्वामीजीके साथ माननीय मालवीयजी का विशेष सम्पर्क रहा था । श्रीमानोंने समय २ पर जो पत्र स्वामीजीको लिखे थे, उनसे प्रतीत होताहै, कि वैदिक कोशकी सहायता के लिए भी आप पूर्ण प्रयत्नवान् थे और इसी निमित्त समय २ पर अनेक वार इस राष्ट्रीय कार्यमें सहायता देनेके लिये निम्न श्रीमानोंको लिखते रहे । (१) महाराजा कासिमबाजार.

(२) श्रीमान् प्रो. राधाकुमुद मुकर्जी.

(३) माननीय लाला सुखवीर सिंहजी.

(४) रारा मुंशी माधेलालजी.

(५) सर नारायण गणेश चन्दावरकर. आदि,

यहां मालवीयजी महाराजके केवल उस पत्रकी प्रतिलिपि दी जाती है, जो उन्होंने स्वामीजीकी मृत्युपर सान्त्वनार्थ श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजको लिखी थी । उससे पाठकोंको पता चलेगा कि माननीय मालवीयजी महाराजके स्वामीजीके विषयमें क्या भाव ओर विचार हैं ।

श्री.

प्रिय स्वामीजी महाराज! दिल्ली १७–२–१४

प्रणाम । स्वामी नित्यानंदजीके परलोकगमनका समाचार सुनकर मुझको जो दुःख हुआ है, उसको मैं शब्दोंमें प्रकाश नहीं कर सकता; स्वामीजीके संनिकट रहनेका और उनको विद्याभ्यास और देशहितचिन्तनमें निरत देखनेका लाभ और सुख मुझको विशेषकर पिछले ही वर्ष प्राप्त हुआ था । किन्तु उनकी उदार प्रकृति और उन्नत मनका उस थोड़े ही समयमें मुझे आपके और उनके अनुग्रहसे बहुत प्रेममय परिचय हो गया था । मेरे अभाग्यसे पिछले कई वर्षोंमें मेरे कई मित्र और सुपरिचित सज्जन अन्य लोकको सिधार गये हैं । और मुझे उनके वियोगसे बहुत दुःख

हुआ है। किन्तु स्वामी नित्यानन्दजीके देहत्यागका समाचार सुनकर मुझे अत्यन्त और विशेष दुःख हुआ है। अबतक जब जब उनका स्मरण आता है, तो उनकी प्रसन्न प्रीतिमय प्रकृति मनकी आंखोंके सामने उपस्थित हो जाती है। और इस सन्तापको ताजा करती है कि क्यों वे इस थोड़ ही समय में चले गये।

मैं सोचता हूं कि जब थोड़े दिनके परिचयमें मुझे उनके बियोगसे इतना दुःख होता है तो आपको जिनका २५ वर्षसे अधिक असामान्य प्रेम और घनिष्ठ सम्बन्ध था, कितना अधिकतर दुःख हुआ होगा। किन्तु आप विशेष ज्ञानवान् हैं। इस लिये आप उसको सहन करनेमें समर्थ हैं। मैंने कई बार आपको पत्रद्वारा अपने दुःख-का संवाद लिखना चाहा पर नहीं लिख सका।

मैं नहीं जानता हूं कि आप अब भी बम्बईमें हैं वा नहीं, किन्तु वहांके पतेसे पत्र भेजता हूं। कृपा कर लिखियेगा कि आप बम्बईसे लौटते कहां आवैंगे। और मुझको आपका दर्शन कब और कहां होगा ?

राधाकान्तकाभी प्रमाण स्वीकार कीजिये आपका अनुगृहीत,

(ह०) मदन मोहन मालवीय.

काशीके सुप्रसिद्ध धनिक आनरेबिल राजा मुंशी माधोलालजी C. S. I. स्वामी-जीके प्रति अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति प्रकट किया करते थे। काशीप्रवासमें स्वामी जी प्रायः आपहीके यहां ठरते थे। स्वामीजीसे आपका पत्रव्यवहार भी निरन्तर रहता था। हम यहाँ राजासाहबके अन्य पत्रोंको उद्धृत न करके केवल जिस पत्रके साथ राजासाहबने श्रीमान् Col. Dundlop smith महोदयके पत्रकी प्रतिलिपि स्वामीजीके पास भेजी थी उसकी नकल यहां देते हैं।

Chowkhumba, Benares.
Dated 16th June 1907.

My Dear Shri Swami Nityanandji,

Many thanks for your letter of the 8th June, I now enclose a copy of the letter which I received from col. Dunlop Smith. This letter I got through your kindness and that of Mr. Malabary, I don't know how to express my ever lasting gratitude to you and Mr. Malabari.

I remain,
Yours very sincerely,
(Sd) Madholal

अब इस सम्बन्धमें अधिक विस्तारसे न लिखकर नीचे उन महानुभावोंकी नामावलि दी जाती है, जिनका स्वामीजीसे विशेष पत्रव्यवहार था और एक दो पत्रोंका अवतरण भी किया जायगा ।

(१) दीवानबहादुर सरदार भगतसिंहजी, दीवान, धौलपुर राज्य.
(२) हिज हाइनेस महाराजा सर रमेश्वर सिंहजी दरभङ्गानरेश
(३) आनरेबिल बाबू मोतीचन्दजी काशी
(४) आनरेबिल रायबहादुर निहालचंदजी, मुजफरनगर
(५) आनरेबिल बाबू सुखबीर सिंहजी, मंत्री भारतवर्षीय हिन्दू सभा.
(६) श्रीमान् बाबू शिवप्रसादजी, गुप्त काशी
(७) श्रीमान् द्विजेन्द्रनाथ टगोर, कलकत्ता
(८) श्रीमान् रावबहादुर बाबासाहिब शिरगांवकर, कोल्हापुर
(९) श्रीमान् स्वामी राममिश्र शास्त्री,
(१०) श्रीमान् पंडित रामनारायणजी मिश्र, हेडमास्टर हरिन्द्र हाईस्कुल, काशी
(११) श्रीमान् पंडित रामावतार पांडेय M. A.
(१२) श्रीमान् राना हीरासिंहजी, रियासत धार्मा,
(१३) रावबहादुर विशनजी खेमजी, शेठ जेठा प्रेमजी, लक्ष्मीदास खीमजी जे. पी.
(१४) श्रीमान् धर्मसी मोरारजी गोकुलदास.
(१५) श्रीमान् चारुचरण विश्वास.
(१६) महामहोपाध्याय श्रीमान् पंडितवर सतीशचन्द्र आचार्य्य, विद्याभूषण M. A.
(१७) श्रीमान् प्रोफेसर विनयकुमार सरकार M. A. कलकत्ता
(१८) श्रीमान् एम्. एन्. बनर्जी. गवर्नमेन्ट प्लीडर, दार्जिलिंग.
(१९) श्रीयुत तारकनाथ दास, अमरीका
(२०) श्रीमती सरला देवी चौधराजी बी. ए. लाहोर
(२१) श्रीमान् वी. आर. शिन्दे, डिप्रेस्ड क्लास मिशन बम्बई.
(२२) आनरेबिल पंडित गोकरणनाथ मिश्र, लखनऊ.
(२३) डाक्टर रंजीतसिंहजी, प्रयाग
(२४) श्रीमान् रा. गोविंद चार्लु, श्रीरङ्गपट्टन.
(२५) श्रीमान् वेङ्कट कृष्ण ऐया, माईसोर

(२६) मिस्टर गणेशवर्मा, रिटायर्ड डिपुटीकलक्टर, बंगलोर
(२७) श्रीमान् लैफटेनेन्ट छोटूसिंहजी, उदयपुर
(२८) श्रीमान् बी वरूश कलकत्ता । आदि.

श्रीमान् बी. आर शिन्दे अन्त्यजोद्धार समिति बम्बईके एक पत्रकी प्रतिलिपि—

Ram Mohan Asram,
Girgaum Bombay.
20th March 1907.

My dear swamiji,

I really felt much for the poor Dhed helpless children you showed me the other day at Baroda I am trying here to open a Boarding house for such intelligent boys and girls with a view to prepare them for the mission work among their own people, but I can't say when I shall succeed. His Highness the Maharaja of Baroda than whom I don't see for the present no other friend of these unfortunate people and who will I hope-it is only a hope-give some substantial help to our mission. If H. H. does some thing the boarding house will be at once started here and I shall immediately after I hear from H. H. ask you to send the orphans to me at parel, with respectful namaskars to swami Vishweshwaranand and yourself and craving the blessings from both of you on our mission. I remain,

Your most sincerely,
(Sd) V. R. shinde.

श्रीमान् प्रोफेसर विनय कुमार सरकार M. A. के पत्र—

Almora 4-9-12.

My dear swamiji,

Many thanks for your kind letter, I am grateful to you for the letters of introduction about my humble self.

I have changed my programme and am going first to Poona, from Poona I shall come up to Bombay and Baroda, I think I shall be at Baroda in the last week of September, I leave Almor a in a day or two. Are you thinking of coming down to Bombay and Guzerat side.

At Poona I shall live with the servants of India people or with Mr. Hari Narayan Apte Anandashram.

Trusting this finds you quite well together with your work.

I remain, sincerely Yours,
(Sd) Benoy,

Bombay 21-9-12.

My Dear Swamiji,

I came to Poona straight from Almora and have come to Bombay. I went to the Samaj, but Swami Nityanandji has left Bombay. I think by this time he is at Simla.

I have to thank you very much for having introduced me to pt. Atma Ramji at Baroda. I have heard from him, and when I go to Baroda i.e. within a week I shall have the honour of calling on him and paying my respects to him. I may live with him also.

May I know if you have written to H. H. Private secretary

Yours sincerly,

(Sd) Benoy K. sirkar.

महामहोपाध्याय श्रीमान् सतीशचन्द्र आचार्य्य विद्याभूषण M. A. महोदयका पत्र

Asiatic Society of Bengal,
57 Park Street Calcutta.

To swami Nityanand,
Swami Vishveshwaranand,

Dear sirs,

Having heard from Mrs. Barnes that you take interest in Buddhism and Vedantism alike, I venture to send you a copy of rules of the Buddhist shrine Restoration Society. If you kindly condescend to help us while on tour, I shall send you all papers connected with our society. Hoping to hear from you.

I remain faithfully, Yours,

(Sd) Satishchandra Vidyabhusen·

श्रीमान् प्रसन्नकुमार गुह मैमनसिंहका पत्र

20th December 1898.

Dear sirs,

I owe you an apology for not replying to your very welcome letter much earlier, the truth is that since receiving your note I was much under the pressure of proefssional works that I could hardly make time to breathe.

We are all sorry to learn that you will not be able to make time to come down here during this winter.

Of course it is extremely difficult for me to say which of the interpretation of the shastras is correct all that I am in a position to see is that *Yours is more reasonable*. But unless you come down the spirit of enthusiasm for vedic studies that you sat on foot will soon die away and people will again plunge themselves into the abyss of Tantrik system.

Yours truly,
(Sd) Prasanna kumar guha.

रावबहादुर श्रीमान् बाबासाइब शिरगांवकर चीफ रेवेन्यू आफिसर कोल्हापुरका पत्र

Kolhapur,
18th Sept. 1902.

My dear,

I received your letter dated 15th instant yesterday and I spoke to the deewan sahib about the contents of it we shall be but too glad to welcome swami Nityanand here and shall see that his stay here is made comfortable in every way and shall arrange for as many lectures as he would wish to deliver here. Let me know a day previous the exact day on which the swami would come here. All his lecturres relate I see from your letter to social and religious matters and we shall be but too glad to hear him.

As you know we can not encourage any lectures that would refer to Politics or send to create a breach between Hindus and Mohamedans. But as the swami does not appear in the least to be working on any such lines and especially as the approval of men like Mr. Chandavarkar is a sufficient guarantee about his views there would be no difficulty about the swami being treated us a state guest so long as he stays here.

Yours sincerely,
(Sd) R. R. Shivegaonkar.

मोरभंजके अधिकारी श्रीमान् हेमेन्द्रनाथ सिंहका पत्र ये महाशय आनरेबल सिंहाकेचचा साइब हैं सेटलमेंट कमिशनर मोरभज्य राज्या, (उडिसा)

13-12-1900.

My dear, MAHATMAS Vishweshwaranand & Nityanand swamis,

It is not often that it is given to me to be in a company such as yours, I am a great sinner, a mere zero where as you are

pious men, pure and devoted to the cause of truth, I therefore miss you greatly now that you are gone.

I am immersed in sin and enveloped in darkness, I want them to denote their lines to self culture and self control and truth.

To be PAHALVANS morally, intellectually, and physically should be the end and aim of our lines. So kindly do not forget my case. I want the addresses etc. of the Aryasamaj school authorities to see if they can help me in attaining my object. We live and die like cattle, let my children live and die like men and devote their lines not to getting and spending but to realizing and earning truth, which alone can make us free.

As Bacon, Newton, Franklin, Edison etc. have demonstrated the immensity and utility of physical forces so we want men to demonstrate in person the power of truth, purity and devotion to humanity.

My ambition is to help my children to pursue truth therefore. But god's Will will triumph in all things.

I hope you will pray to our father and friend in need to help us a little on our way up hill friendless and purseless and alone as we are.

I have looked in every direction for help but have nowhere met with a kindly glance, unless at times I could catch a ray of hope from the unseen face of the unseen. In every petal of a flower, in every smile in a childs face, I read a gospel more reassuring than that any scripture can explain the beating of my heart gives assurance of the presence of a beater in it. It is only a weak and insane brain that Losses sight of this fact. I therefore only wish that this weakness of mind may be cured in the children by sound education and good master like you.

Wherever you & I may be and in spite of our short acquaintance, I hope we shall not forget our kinship in spirit and our spirits may be in touch with each other, I am a born PARAM HANSE married and shackled thought pardon this statement but I only state the truth when I say so.

I hope you will not forget my idea obout the regeneration of India. Truth and religion alone can make one free, also a nation. Let Indians be knowers and guardians of Truth and redemption is bought and had no account of systemic speechifying and self advertising will do any good. The root of national salvation lies there. Let men and women rise in knowledge and grow in spirituality and the days of glory return. Patriotism means self knowledge, self control and self-sacrifice and not crying one's self hoarse over the fault of our friends and paternal Government of the British. May the British never go away should be the prayer of every well wisher of the land and let us thrive and grow under their genial care.

You remember the flower plant writing on the ground in my garden, Satyam, Gyanam Anantam.

सत्यम् ज्ञानम् अनन्तम्

It should be the motto of every patriot and not " Hara Hara Mahadev " etc. the past.

Maharshi Devendra Nath once immensely like my ideas of Indias rebirth.

My best regard to Mr. H. Bezboorove and Mr B. Booroos both of them have heen very kind to me.

Trusting you are well.

I remain,
Yours, fraternally,
(sd) Hemandra Nath sinh.

अन्तमें हम केवल उन दो पत्रोंकी प्रतिलिपि देकर इस प्रसंगको समाप्त करते हैं, जिन्हें स्वामीजीकी सेवामें बीजापुरकी जनता और वसन्त व्याख्यान मालाके मंत्री महोदयने भेजे थे।

वसन्त व्याख्यानमालाके सम्बन्धमें इतना निवेदन करना आवश्यक है कि महाराष्ट्रकी उन्नतिके केन्द्रस्थान पूना नगरमें प्रत्येक वसन्त ऋतुमें संसारके सुप्रसिद्ध विद्वानों द्वारा प्रत्येक विषयपर कुछ व्याख्यान कई वर्षोंसे कराये जाते हैं। इन व्याख्यानोंमें प्रधानपद ग्रहण करना अत्यन्त मान और विद्वत्ताका द्योतक है और स्वामीजीको यह पद स्वीकार करने के लिए व्याख्यान मालाके मंत्री महोदयने यह पत्र लिखा था।

श्री

पुणें केसरी आफिस

नारायण पेठ २७।५।१२

सा. न. वि. वि. येत्या शुक्रवारीं ह्मणजे तारीख ३१ मे १९१२ रोजीं सायंकाळीं साडे सहा वाजतां येथील प्रसिद्ध डॉ. गर्दे यांचें " योगावर " व्याख्यान क्रीडाभुवन मध्यें होण्याचें ठरलें आहे. सदरील प्रसंगीं आपण अध्यक्षस्थान मंडित करावें अशी येथील मंडळीची इच्छा आहे. आपणास या विषयीं श्रीकृष्ण मिशनचे महाराज यांनीं अगाऊ विनंतिहि केली आहे व आपणहि विनंतीस मान देऊन काशीस जाण्याचा बेत थोडा लांबणीवर टाकिला आहे असें कळतें. आपण येथें केव्हां व कोणत्या गाडीनें येणार हें कृपा करून पत्रद्वारें कळवावें. ह्मणजे स्टेशनवर मनुष्य पाठवून आपली सर्व प्रकारची व्यवस्था करणें सोईचें होईल. कळावें, लोभ असावा; हे विनंती.

आपला,

सेक्रेटरी वसंत उत्सव व्याख्यानमाला.

To,

Shrimat Nityanand Saraswati, Swamiji

Khasbag, Kolhapur.

Dear Sir,

we are happy to learn from papers that you are going round the Country with a mission to preach and elucidate the principles of the Aryan Religion. It is also matter of pleasure to us to note that you are going to Japan to take part in the Congress of Religion.

2. Your name has been so widely known as an able discourser on the Religion of the Aryas that we are naturally inspired with a desire to seek an opportunity of hearing your discourses. As you have now come to the side of India we should be excused if we thought of troubling you with a request to extend your tour to this rather out of the way place Bijapur does not often get the opportunity of hearing celebrated speakers.

3. You are aware that Bijapur is a city of ancient, fame and though it cannot now bear to be considered even a Shadow of its former greatness, yet the monument to ancient glory and grand-

our are still preserved. These if nothing else, would besome returnor; you would take tocome hear.

4. We would be highly favoured of a reply as to your intention about coming hear

Yours Sincerely

G. B. Jambhekar. B. A. Mamlatdar.
K. L. Masur. B. A. Chitnis Collector's office.
S. S. Phadnis. B. A. L L. B; Sub-Judge, Raghavendrarao Vakll
S. V. Kowjalgi. B. A. L L. B. Pleader.
P. A. Desai. B. A. L L. B. Pleader.
H. S. Tanksali. Nazit, Judge's-Court.
G. B. Pethe, vakil.

B. R. Tawargere, vakil.
R. V. Khamitkar. R. T. Inspecor
L. N. Gokhale, Tahashildar.
Shesgir Roa Public Prosecutor & Govt Pleader. Bijapur.
G. R. Accountant P. W. D.
P. G. Anklikar. Hd. clerk. P. W. D.
कृष्णाचार्य नेटीव्ह डॉक्टर.
पायप्पा आदप्पा मुत्तीय व्यापारी.
M. R. Kadu Post Master
Jawahirlal Merchent.
S. R. Shinde Hd. Signaller

N. B. All communications, it is requested, may be made to the Under-signed.

१ रामदास विठ्ठलदास दरबार विजापूर.

Bijapur, 12 October 1912.

2 R. B. Naik, Municipnl. Commissioner & Clerk, Executive Enginee'rs offiice Bijapur (Deccan).

॥ ओ ३ म् ॥

आर्य्य समाज और श्री स्वामी नित्यानन्दजी सरस्वती.

आर्य समाजके संस्थापक महर्षि दयानन्दजी सरस्वतीने वैदिक धर्मप्रचारमें अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया। अपना शरीर भी उन्होंने कु-चक्रियोंके चक्रमें आकर विषपानद्वारा त्याग दिया। महर्षिकी स्थावर सम्पत्तिकी स्वामिनी परोपकारिणी सभा इस विचारमें है कि महर्षिके विचार और स्वीकृति पत्रमें उल्लेखकी गई आज्ञाओंका पालन किस प्रकार किया जावे। इसी निमित्त परोपकारिणी सभाका एक अधिवेशन दिसम्बर १८८८ ई० में अजमेर नगरमें करना निश्चित हुआ। इस

अवसर पर परोपकारिणी सभाके अधिकांश सभासद् आये थे । आर्य्यसमाजरूपी नौकाका संचालन किस प्रकार किया जावे इसपर विचार हो रहा था कि सभा मंडपमें गेरुआं वस्त्र धारण किये हुए दो मूर्तियां दृष्टिगोचर हुई ।

इन दिव्य मूर्तियोंके तेजसे सभा मंडपमें उपस्थित सज्जनोंपर एक प्रभाव पड़ा और उन्होंने इनका आदरसहित सत्कार किया । कई सभासदोंकी इच्छा हुई की इन महात्माओंसे कुछ उपदेश श्रवण करें । परन्तु आर्य्यसमाजके कतिपय कर्णधरा पंडितोंने इसका निरोध किया और कहा कि अज्ञात व्यक्तियोंसे इस सभामें बोलनेका अवसर नहीं देना चाहिए । पंडितोंकी इस व्यवस्थापर सभामें बेचैनी फैल गई और राजाधिराज शाहपुराके प्रतिनिधि पंडित हमीरमलजी शर्माने इस व्यवस्थाका अनादर करके सभासदोंसे कहा कि " क्या आर्य्यसमाज गोकलिया गुसांइयोंकी गद्दी है, जहां गुरुमंत्र देनेका अधिकार गुसांईजीको छोडकर अन्य किसीको न हो ! " इसपर सब सभासदोंकी सम्मति और आग्रहसे दोनों दिव्य मूर्तियोंमेंसे एक महात्मा प्लेटफार्म पर खडे होकर आर्य समाजके विषयमें अपने विचार प्रकट करता हुआ अपने ब्रह्मचर्यके तेजसे उपस्थित सभासदोंको अपने विचारोंसे परिचित कराकर मोहित कर देता है । और अपना भाषण " **मैं भी अबसे महर्षि दयानन्दके उद्देशकी पूर्तिमेंही अपना जीवन अर्पण करता हूं** " यह गम्भीर प्रतिज्ञा करके समाप्त करता है ।

पाठक यह व्यक्ति " **ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी** " हैं । आपने अपनी इस प्रतिज्ञाका पालन अपने जीवनकालमें किस प्रकार किया उसका अधिक परिचय पूर्वके पृष्ठोंमें देनेका यत्न किया गया है ।

यहां हम स्वामीजीका सम्बध आर्य समाजके संन्यासी, पंडित और नेताओंसे किस प्रकारका था, उसका संक्षिप्त वर्णन उपस्थित करते हैं । यहां भी हम अपने कथनको अधिक विस्तार न देकर उक्त महानुभावोंने समय २ पर जो पत्र स्वामीजीके पास भेजे थे, उनकी प्रतिलिपि देगें जिससे पाठकोंको स्वामीजीके प्रति आर्य्य संन्यासी, पंडित और नेतृ मंडलके प्रेम, श्रद्धा और भक्तिका वास्तविक स्वरूप प्रकट हो जावे ।

आर्य्य संसारमें श्रीमान् स्वामी सत्यानन्दजी महाराजने अपनी मधुर वाणीके प्रभावसे एक विशेष गौरव प्राप्त कर दिया है । आपकी रामायण और उपनिषदोंकी कथा श्रवण करनेके लिये आर्य्य जगत् विशेषकर पंजाबके समाज निरन्तर लालायित रहते हैं ।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाबके प्रचार विभागका कार्य्य आपके द्वारा विशेष सफलतासे हो रहा है । गुरुकुल कांगडी अथवा पंजाब प्रान्तका कोई भी प्रसिद्ध समाज आपकी उपस्थिति अपने उत्सवकी सफलताके लिए आवश्यक समझता है । स्वामी श्री नित्यानन्दजी महाराजके प्रति आपकी श्रद्धाका अनुमान पाठक नीचे उद्धृत दो तीन पत्रोंसे पूर्ण तयापायेंगे ।

(१)

॥ ओ३म् ॥

श्रीयुत पूज्यवर श्री स्वामीजी

नमस्ते । मैं २० अगस्तको " **मरी** " में पंहुच गया हूं । श्रीमानोंके दर्शन मैं अभाग्योदयसे बारामूलामें नहीं कर सका । दासका अपराध क्षमा कीजियेगा । आपकी प्रतीक्षा लोग " **मरी** " में कर रहे हैं; अतः श्रीमान् शीघ्र दर्शन देवें ।

आपका सेवक

ह. सत्यानन्द

[२]

॥ ओ३म् ॥

श्रीयुत पूज्यवर श्री स्वामीजी नमस्ते ।

आपका कृपापत्र २८ अ. सायंकालको मिला; समाचार विदित हुए । सेवक आपके दर्शनोंकी प्रतीज्ञा अवश्य करेगा । श्रीमन्तोंकी श्री सेवामें " मरी " समाजके मंत्री महाशयकी सविनय प्रार्थना है कि आप दो सि. को पहुंच जावें तो बड़ी कृपा करोगे कारण कि अभी तक श्रीमन्तोंके बिना अन्य किसी उपदेशक के आनेकी निश्चित आशा नहीं है । क्योंकि चार सितम्बरकी शामको " मरी " समाजका नगर किर्तन होगा यदि उस सभय श्रीमंत होगें तो नगर किर्तनकी शोभा चतुर्गुण हो जावेगी । आप जिस दिन मरीमे आवें उस दिनकी ता० सूचित करें ।

आपका सेवक

सत्यानन्द.

(३)

॥ ओ ३ म् ॥ तत्सत्

श्रीयुत परम पूज्य श्री स्वामीजी महाराज नमस्ते । मुझे निश्चय है कि प्राय कुशल पूर्वक हिमालयाश्रममें पंहुच गये हैं अब आपके मनोहर उत्साह जनक और

प्रभावशाली व्याख्यान शिमला आर्य्यसमाजके उत्सवके अवसर पर होंगें। आपका सुन्दर सरल और कोमल स्वभाव तथा प्रेमभाव मुझे सदा स्मरण रहता है। आपकी आनन्ददायिनी सुसङ्गतिसे जो जो मुझे लाभ हुए हैं श्रीमानोंने समय २ पर जो मुझ पर कृपाकी है उन सबके लिए मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं कि आपकी ऐसीही दया दृष्टि मुझ सेवक पर बनी रहेगी। मुझे यहा रहनेके लिये सुन्दर और स्वच्छ मकान बन्दररोडपर मिल गया है। सो मैं यहां पंद्रह बीस दिन तक रहूंगा। यहांके समाजियोंमें परस्पर कलह उत्पन्न हो गया था सो बडे यत्नसे शान्त कराया है। आपके पश्चात् काहनचन्द्रका एक ही व्याख्यान हुआ। मंगलानन्दको शुद्ध करना हैदराबाद सिन्धमें निश्चय हुआ है श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीकी सेवामें नमस्ते मैं आशा करता हूं कि आप आनन्द मंगलसे हैं।

सदा आपका सेवक

सत्यानन्द।

(४)

॥ ओ ३ म् ॥

गुरुकुल काङ्गडी

श्रीयुत माननीय श्री स्वामीमहाराज नमस्ते चिर हुआ आपका कोई समाचार प्राप्त नहीं हुआ। कृपया अपने शुभ समाचारसे अवश्य कृतार्थ किया करें। मैं कुशल पूर्वक यहां हूं जो चार पांच मास कहीं ठहरनेका आपसे विचार किया था वह यहीं पुरा कर लिया है। मैं उत्सव तक यहीं रहूंगा। मुम्बई आर्यसमाजके उत्सवके समय आपके व्याख्यानोंका समाचार आर्य्यप्रकाशमें पढकर चित्तको अति प्रसन्नता प्राप्त हुई इसी प्रकार शुद्धिके समय श्रीमानोंने जो भाषण दिया उसे पढकर हर्ष हुआ। श्रीमान् महात्मा मुंशीरामजी इस समय आपको बहुत स्मरण करते हैं, वे हृदयसे चाहते हैं कि जिन लोगोंने यह बात उड़ा रक्खी है कि आपके और उनके मध्यमें कुछ अनबनसी है वह आपके आगमनसे दूर हो जाय। इसी लिये उन्होंने गुरुकुलके उत्सवके समय विभागमें एक अति उत्तम समयपर श्रीमानोंका व्याख्यान नियत किया है। आप जानते हैं कि उनको दिलकी बीमारी है अभी चार पांच दिन हुए उसका दौरा फिर होगया था इसी लिये वे आपको स्वयं पत्र नहीं लिख सके और मुझे आपका अतीव स्नेही सेवक जानकर कहा कि मैं उनकी ओरसे गुरुकुलके उत्सव पर सादर

निमन्त्रित करनेके अर्थ श्रीमन्तोंकी शोभाशाली सेवामें पत्रद्वारा उपस्थित हो उक्त समय पर पधारनेके लिये विनय करूं। पत्र लिखनेवाले यहां अनेक हैं पर महात्माजीने मुझे इसी लिये कहा कि मैं आपका प्रेमी सेवक हूं और मेरी प्रार्थना आपकी श्रीसेवामें कभी अपमानिता, निरादर, तिरस्कार तथा अस्वीकृत नहीं होगी। मुझे विश्वास है कि श्रीमान् स्वशुभागमनसे मेरे उक्त मर्म धर्मको बनाये रक्खेंगे। मैं इस बातका स्वप्नमें भी संकल्प नहीं करता कि श्रीमन्त मेरे दिये निमंत्रणका अस्वीकार करके मुझे लोगोंके समीप अपमानित और लज्जित न कराएंगें। बहुतसे लोग यह कहते हैं कि आप निमंत्रण पर कदापि नहीं आवेंगे। इस लिये मैं चाहता हूं कि उनका कथन असत्य सिद्ध हो। परन्तु स्वामीजी यह निश्चय जानिये यदि आप न आये तो मैं लोगोंके सम्मुख मुंह दिखानेकोभी नहीं रहूंगा। इस समय आपका आनाएक प्रकारसे मेरी प्रतिष्ठाको स्थिर रखना है। मैं एक बार आपसे विनय बलपूर्वक करचुका हूं और उस समय श्रीमानोंने मेरे निमंत्रणको माना था इस लिये मैं कृतज्ञ हूं। परन्तु यह निमंत्रण उससे भी अधिक आवश्यक जानिये। जहां किसीको अपने पत्रका हठ होता है वहां ही जोर दिया जाता है। नहीं तो इतने बल आग्रह और हठसे किसीको कोई भला मनुष्य काहेको कहता है। आपका धर्म भी यही है कि प्राचीन बातोंको गई बीती करके धर्मके प्यासोंको अपनी मधुर वाणीसे अमृत पान करावें। सचमुच ऐसे अवसर पर आप जैसे मधुरभाषी विद्वान् महात्माओंका आना ही शोभा देता है। यह मेला भी अपने ही ढंगका होता है। यहां पर नगरोंके उत्सवोंसे अनोखी और निराली छवि होती है जिसे देखकर आप स्वयं श्रीमुखसे कह उठेंगें कि निस्सन्देह ऐसी ही है। उत्सव २ मार्चसे आरम्भ हो जायगा। कृपया आप अपने आनेकी तिथिकी सूचना दें। इसमें संशय नहीं कि इतनी दूरसे आते हुए आपको मार्गका कष्ट तो बहुत होगा परन्तु मेरी भी शायद आपकी सेवामें यह अन्तिम ही प्रार्थना है अत एव इसे अवश्य स्वीकार कीजिये मैं यही चाहता था कि एक कोइटा और दूसरे गुरुकुल कांगड़ीके जलसे पर आपके दर्शन करूं सो मनोरथ सिद्ध होगया, अब आपके पत्रकी प्रतीक्षा उत्कण्ठापूर्वक बनी रहेगी।

आपका सदा सेवक

सत्यानन्द।

(५)

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल कांगड़ी
२६ मा १८६५ 1908

श्रीयुत माननीय श्री स्वामीजी महाराज नमस्ते ।

कृपा पत्र आप का प्राप्त हुआ जिसे पढ़कर अति हर्ष उपलब्ध हुआ । भगवन् श्रीमानोंको वैसे तो सर्वत्र ही धर्म कार्य्य है परन्तु इस समय आपका यहां आना अत्यावश्यक समझा गया है । अन्य अनेक कार्य छोडकर भी यहां पधारने का अनुग्रह कीजिये । स्वामीलोग यूं तो सदा स्वेच्छानुसार ही कार्य किया करते हैं, परन्तु समय पडेपर अपने तुच्छसे तुच्छ सेवकोंकी प्रार्थनापर भी महान्से महान् कष्ट उठा कर सहर्ष सहायता करनेमें तय्यार रहते हैं । इसमें सन्देह नहीं कि इतनी दूरसे आने में आप को कष्ट विशेष अवश्य ही होगा, परन्तु कृपया इस बार यदि अत्यन्त कष्ट भी उठाना पडे तो भी आइये । जहां तक मुझे ज्ञात है श्रीमन्त इस कुलके उत्सव पर आगे कभी नहीं आये हैं । इस लिये यहां का दृश्य आप के लिये एक नवीन सा होगा । स्वामीजी, आप जैसे महात्माओंका यह ही धर्म है कि परोपकारार्थ दुःख सुख शीतोष्ण तथा लाभालाभ को विचारमें न लाकर केवल निष्काम भाव से संसारके सुधारार्थ प्रवृत्त हों । इस उत्सवमें देशदेशान्तरोंके हिन्दू नरनारी अच्छी खासी संख्यामें सम्मिलित होंगें, उत्सव का भाग सरस्वती सम्मेलन प्रथम मार्च से आरम्भ हो जायगा जिसमें आपका उपस्थित होना अत्यावश्यक है । आप इस मास की ३० को ही पहुंच जाँय, आपका व्याख्यान उत्सव के अन्तिम दिन के अन्तिम समय विभागमें छापा गया है । चूं कि लाला मुंशीरामजीका दिल कभी कभी धडकने लग जाता है और वे इन दिनों निर्बल भी हैं अत एव आज उन्होंने मुझसे कहा कि उत्सव की कार्य्यवाहीके दूसरे दिन महात्माजीके व्याख्यान के स्थान में भी आप का ही व्याख्यान होगा, अर्थात् अपील भी आपही करेंगें । महात्माजी आप से मिलना बहुत चाहते हैं मुझे पूर्ण विश्वास है कि श्रीमन्त सहस्र कार्य्य भी छोडकर मेरी विनयको स्वीकार करेंगें । यदि आप दैवात न आये तो मुझे तथा अन्य भद्र पुरुषोंको केवल यही नहीं कि निराशता होगी, किन्तु अनेक व्यक्तियोंके सम्मुख हास्यास्पद तथा लज्जास्पद होना पडेगा । मुझे पूर्ण आशा है कि आप अवश्य दर्शन देकर कृतार्थ करेंगें ।

सदा आपका सेवक,

सत्यानन्द ।

(६)

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल काङ्गड़ी
६ फा १८६५

श्रीयुत पूज्यवर श्रीस्वामीजी नमस्ते

मैंने आगे दो पत्र आपकी सेवामें भेजे हैं जिसमें से अन्तिम पत्रका श्रीमानोंने कोई उत्तर नहीं दिया मैं, आपको आज एक ऐसी अवस्थामें बैठकर पत्र लिख रहा हूं कि यदि अवज्ञा हो जाय तो क्षमा करना । मुझे आपके पत्रसे आपके आनेमें सन्देह होता है । सो यदि आप न आये तो मेरे लिए इस बातका प्रभाव हानिकारक होगा मेरी, अवस्थिति आपके न आनेसे निकृष्ट एवं गिर जायगी । यदि आपको मेरा कुछ भी लिहाज और ख्याल है तो इस पत्रके पढते ही आगामी डाकसे अपने आनेकी तिथि सूचित कीजिये । कुछ मुआमला इस प्रकारका है कि आपके न आने से महात्माजीको भी बड़ा कष्ट उठाना पड़ेगा लाला मुंशीरामजीने मुझसे कहा है कि २२ फाल्गुण, ६ मार्च साहित्य सभाके सभापतिका आसन भी आपको ही ग्रहण करना पड़ेगा । इस लिए आप फरवरीके अन्तको ही पहुंचनेका यत्न करें । क्यों कि प्रथम मार्च से कार्य्यवाही आरम्भ हो जायगी ।

महाराज, अन्तमें आपसे फिर विनय है कि चाहे कैसी भी हानि क्यों न हो कृपया मेरे लिए अवश्य आइये ।

सदा आपका सेवक
सत्यानन्द.

मैं पत्र लिखना बन्द करता हूँ फिर जीमें जोश आता है कि कुछ और लिखूं श्रीस्वामीजी जैसे भी हो अवश्य आइये, असंख्य दुःख मिलें तो भी आइये । मैं अब पूरा भरोसा करता हूँ कि आप मेरा यह प्रेमभरा तथा सारगर्भित विनय निष्फल नहीं करेंगें । यदि आप कहीं और सौ कोसके अन्तर पर होते तो मैं स्वयं श्रीमानोंकी शोभाशाली सेवामें उपस्थित होता परन्तु अब मैं पत्रपर विश्वास और भरोसा करता हूं कि आप इसे देखते ही मेरी लाज और अवस्थिति पर ध्यान दे तुरन्त आनेमें प्रयत्नशील होंगें । उपर्युक्त शब्द मैंने अपने जान बूझके समयमें कभी किसीको नहीं लिखे क्यों कि ऐसी

आवश्यकता कभी हुई ही नहीं सो यदि इन शब्दोंने आपपर कोई असर नहीं किया तो सम्भव है कि मेरे दिलमें इस प्रकारके ख्याल उत्पन्न हो जाँय कि आप अपने लिये दूसरे की अवस्थिति मन, आत्मा तथा प्रतिष्ठाको चित्तमें स्थान नहीं देते हैं।

श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी की मृत्युपर स्वामी श्री सत्यानन्द जी ने निम्न पत्र श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीको सान्त्वनार्थ लिखा था। उसकी प्रतिलिपि।

ओ३म्

जालन्धर नगर १०—१—१४

श्रीयुत सम्मानित स्वामीजी महाराज

सादर नमस्ते।

महाराज आपके सेवक को स्वामी नित्यानन्द जी महाराज के देहान्त का महाशोक समाचार सुन कर अत्यन्त दुःख हुआ है। श्री स्वामीजीके वियोगके शब्द जब प्रथम सुने उन से जो मानसवेदना हुई उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हा वह प्रशान्त विशाल प्रसन्न और दिव्य मूर्ति सदा के लिये हमारी आखों से ओझल गई। अहो कष्ट एक सच्चे स्वामी और सुहृद के अब कभी दर्शन न होगें। यह हम सब के अभाग्य हैं कि काल करालने अपने क्रूर हाथ से अकाल में हमारे अमूल्य मुनिमाणि को हम से खोस लिया। श्री स्वामी-जी महाराज पत्रद्वारा मैं आप के साथ क्या सहानुभूति प्रकट करूं जब कि मेरा अपना जी ही नहीं थमता है। यह बात आप से छिपी नहीं है कि स्वर्ग-वासी स्वामी जी के चरणों में मेरी कितनी भक्ति थी और उनका भी कितना अनुराग था इसी से आप मेरे क्लेश का अनुमान कर सकते हैं।

आप ज्ञानी और विचारशील हैं इस लिये मुझे निश्चय है कि भावीकी अटल गति को देखते हुए स्वास्थ्य संभालनेका यत्न करेंगे। स्वामी जी की मृत्युका शोक सारे पंजाब की समाजों ने विशेष रूप से प्रकाशित किया है। इस शोकजनक घटना से इस प्रान्त के आर्यों को जो दुःख हुआ उसकी साक्षी सारे समाचारपत्र दे रहे है।

आपका सेवक

सत्यानन्द।

जिसप्रकार पंजाब प्रान्तमें श्रीस्वामी सत्यानन्द जी महाराज अपने कोकिल कण्ठसे दिये उपदेशोंके कारण सर्वप्रिय हो रहे हैं उसीप्रकार संयुक्त प्रान्तमें श्रीस्वामी अनुभवानन्दजी अपनी गम्भीर और स्पष्ट घोषणाके लिये प्रसिद्ध हैं।

श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराजके प्रति आपकी श्रद्धाका परिचय पाठकोंको नीचेके पत्रसे स्पष्ट मिलेगा। स्वामीजीकी मृत्युके समय आप स्वामीजीके पासही थे।

ओ३म्

श्री १०८ परमपूज्य यतिवर स्वामीजी महाराज,

चरणकमलोंमें सेवककी वारंवार नमस्ते।

भगवन्! बहुत दिन हुए श्रीमानोंने इस अभागे किंकरको अपने कर कमलांकित पत्रद्वारा स्मरण किया था और अपने पवित्र चरणोंमें उपस्थित होनेका आदेश दिया था, परन्तु मैं नहीं लिख सकता कि चाहनेपर भी उत्कट इच्छा होनेपर भी आपकी आज्ञाका पालन करना अपना सौभाग्य एवं धर्म समझकर भी क्यों चरणस्पर्श नहीं कर सका, क्यों आदेशानुसार कार्य नहीं कर सका, क्यों अपनी अभिलाषा पूर्ण नहीं कर सका। उस समय मैं बीमार न था, अच्छा भला था, अवकाश भी था, खर्च भी था, मन भी चाहता था फिर भी न आया; इस विषयमें मैं अपने दुर्भाग्य, आलस्य, विचारशिथिलता एवं बेपरवाहीके बिना और क्या समझ या लिख सकता हूँ। पूज्यवर मुझे श्रद्धेय-यति स्वामी श्री नित्यानन्दजीका सत्संग बीमारीही की दशामें केवल ६-७ दिन हुआ है परन्तु इतनेही समयमें ऐसीही दशामें मुझे उनके उच्चतम विचारों असीम साहस एवं भाजनताका बहुत कुछ पता लगगया।

मुझे आपका सत्संग केवल २-३ दिनका हुआ इस २-३ दिनके चरण-सहवासने मेरे जीवनमें जो परिवर्तन किया उसे मैं ही अनुभव कर सकता हूं। मैं अब भी चाहता हूं कि आपका सत्संग करके कुछ लाभ उठाऊँ; आपके चरण सेवनसे अपने जीवनको और भी उच्च बनाऊं। मैं बराबर चाहता हूं कि प्रातःस्मरणीय श्रद्धास्पद पूज्य यति श्री नित्यानन्दजी की जीवनी लिखनेमें अपने तुच्छ अशक्त किन्तु इच्छुक हाथोंको सम्मिलित करूं। आपके सत्संगसे श्रीस्वामीजीके पुस्तकालयसे अपने विचारों अपने ज्ञान अपने मनको कुछ और उन्नत दशामें देखूं परन्तु क्या करूं कहां जाऊं समाजोंके उत्सव

नहीं छोड़ते चाहता हूं कि बन्द कर दूं आना जाना रोक दूं पर लोग नहीं मानते खुशामद करते हैं सिफारिशें कराते हैं तंग करते हैं और ले जाते हैं।

इधर पूज्यपाद यतिवर मेरे धार्मिक पिता गुरुगरिष्ठ श्रीस्वामी सर्वदानन्दजी एक साधु आश्रमकी चिन्तामें हैं ? और वे इस कार्य्यमें सर्वतोभावेन मुझे साथ लिए हुए हैं । आज २–३ माससे निरन्तर मैं इसी कार्य्यमें लग रहा हूं उनका विचार है कि साधु आश्रम खोलकर आर्य्य संसारमें कार्य्य करने योग्य कुछ नियमपूर्वक संन्यासी तैयार किये जावें तथा च इसी कार्यपर विचार करनेके लिये ४ अक्टोबरको उनकी कुटीपर एक सभा भी हुई थी जिसमें कोई १५ संन्यासी एकत्रित हुए थे उसमें इस विषय पर कुछ विचार हुआ था परन्तु यह सब कुछ दूसरे अधिवेशनमें विचारार्थ छोड़ दिया गया । इसके छोड़ देनेका कारण यह था कि उक्त बैठकमें श्रीस्वामी महानन्द–श्रीस्वामी सत्यानन्द, श्रीस्वामी अच्युतानन्द, एवं आप सम्मिलित न थे अत एव निश्चय हुआ कि अगले अधिवेशनमें सम्मिलित होनेके लिये आप और इन पूज्य महात्माओं से विशेषरूपसे प्रार्थना की जावे । साधु समितिकी यह दूसरी बैठक गुरुकुल वृन्दावनके आगामि उत्सवके साथ २ ही २५ दिसम्बरसे होगी । उसमें विचार यह करना है कि आर्य समाजका काम किस रीति और नीतिसे किया जावे कि उसमें सफलता प्राप्त हो । तथा साधुओंको किस प्रकारसे संसार सेवाके लिये तैयार किया जा सकता है इत्यादि २ । श्रीपूज्य पाद स्वामी सर्वदानन्द जी कहते हैं कि इन बातों पर पूर्ण रीतिसे तभी विचार हो सकेगा जब श्रीमान् जैसे विचारशील अनुभवी सत्पुरुष सम्मिलित होंगें । वे कहते हैं कि श्रीमानोंको सम्मिलित होनेके लिये बलपूर्वक लिखा जावे । ४ अक्टोबर की बैठकमें आगरा निवासी स्वामी श्रीपरमानन्दजी भी सम्मिलित थे । उन्होंने भी इस बातपर बल दिया मेरा विश्वास है कि उन्होंने स्वयं भी आपको इस विषय पर लिखा होगा । आज दस दिनके लगभग हुए कि भरतपुरसे उनका एक पत्र मिला था उससे पता लगा था कि वहां पुरुषार्थप्रकाश छपरहा है और वे उसीको देखनेके लिये वहां गये हुए हैं । उस पत्र में भी उन्होंने लिखा था । मेरी तुच्छ सम्मतिमें यदि आप इसमें सम्मिलित होकर अपनी शुभ सम्मति तथा सद्विचारों से कुछ मार्ग दिखा सकें तो बहुत ही पुण्यका कार्य सम्पादन हो सकता है । मेरा विश्वास है कि यदि आप एवं स्वामी अच्युतानन्द आदि २–४ महापुरुष सम्मिलित हो गये तो यह कार्य्य उच्च रीतिसे सम्पादित हो सकेगा । अतएव

आपसे वारंवार यही प्रार्थना है । गुरुकुलोत्सवके पश्चात् मैं भी तमाम कामोंसे निवृत्त हो चुकूंगा और आशा है कि फिर कुछ आपके चरणसेवनके लिये उद्यत हो जाऊंगा; मैंनें उत्सवोंके झमेलोंको कम करनेका बहुत यत्न कर रक्खा है और सफलमनोरथ भी हो रहा हूं । इसी लिये कह सकता हूं कि दिसम्बर के पश्चात् आपकी पवित्र आज्ञाका पालन कर सकूंगा ।

चरणसेवी

अनुभवानन्द सरस्वती

अमरोहा जि. मुरादाबाद ७–८–१९७१

श्री स्वामी अच्युतानन्दजी महाराजका जिनके व्याख्यान सदा वेदमंत्रोंके प्रेमपूर्ण पाठसे ओतप्रोत रहते हैं परिचय देनेके लिये किन्हीं विशेष शब्दोंकी आवश्यकता नहीं । महर्षि श्री स्वामी दयानन्दजीके जीवनकालके संन्यासियोंमें आप ही एक महात्मा हैं जो आर्यसमाज के सौभाग्य से जीवित हैं । श्री स्वामी आत्मानन्दजी, दर्शनानन्दजी आदि महात्मा तो इस लोकको छोड गये ।

श्री स्वामी नित्यानन्दजी के प्रति आपका कैसा अनुराग और विश्वास था उसका परिचय पाठकोंको निम्न पत्रोंसे मिलेगा ।

॥ ओ३म् ॥

३–१०–१०

मुंबई

श्रीमदनवद्यगुणगणागार पद्मोदार विद्वद्वर परम पूजनीय श्री १०८ श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी वा श्री १०७ श्रीमान् ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी महाराज महोदयो नमस्ते ।

आपका कृपा पत्र मिला बांचकर अति हर्ष हुआ, सेठ माधवजीके लिये जो प्यारे शब्द आपने लिखे उन को बांचकर मैने तो प्रसन्न होना था ही परन्तु माधवजी भी बहुत प्रसन्न हुआ । बोले यह उनकी ही कृपा है । आप श्री के प्रश्नोंका उत्तर यह है कि मैं ने कुछ वेदोंके मंत्र अर्थसहित लिखे हैं उनके छपवानेकी इच्छा है । माधवजीको जो शब्द आपने लिखे बड़े ही सुन्दर थे । आप बुद्धि-सागरको कौन सिखलावे । मुम्बईमें एक माधवजी व एक दो दूसरे भद्रपुरुष सेवक हैं ।.........माधवजी भाईको कामसे फुरसत ही नहीं मिलती रोटी खाकर पीछे थोड़ी देरतक कोई सामाजिक व ईश्वरप्रार्थनादिक कुछ वार्ता-

लाप हो जाता है । आजकल धोबी तालाव पर मास्टर आत्मारामजी गुरुकुलके लिए हर रविवार व्याख्यान देते हैं ।.........मैं चाहता हूँ एक संन्यासाश्रय बनावें उनमें शुद्ध खयालके विद्वान् वा विद्यार्थी संन्यासी रहें । नास्तिकोंको पंचयज्ञोंका उपदेश कर आस्तिक बनावें तथा भोले सनातनियोंको भी वैदिक धर्मका उपदेश करें । आप भी इस में सहानुभूति दें तो काम बने कृपा कर मेरे इन प्रश्नोंका उत्तर लिखें । शिमले में दोनों समाजोंके उत्सव हुए होंगे कौन २ आया क्या २ कार्यवाही हुई । दिवाली पर आप मुंबईमें आओगे या नहीं ? सिमलेमें कबतक रहोगे पीछे कहां जानेका संकल्प है मुम्बईमें आप आओ तो मिलकर मुझे बड़ाही आनन्दहो श्रीस्वामी सत्यानन्दजीको नमस्ते कहें । वह सिमलेमें होंगे आप कृपा कर इस पत्रका उत्तर अवश्य लिखिये तथा श्रीमान् सेठ माधवजी भाईका प्रेमपूर्वक नमस्ते बांचिये । यहां वर्षा बहुत पड़ी है कई दिन बाहर नहीं निकले इसी लिये पत्र देनेमें देरी हुई माफ करियेगाजी.

ह० आपका सदा शुभचिन्तक

स्वामी अच्युतानन्दस्य

॥ ओ३म् ॥

१७–६–११

हरद्वारसे

श्रीस्वामीजीकी मृत्युपर भी आपने एक विस्तृत पत्र श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजके नाम लिखा था जिसमें स्वामीजीके गुणानुवाद करते हुए आप लिखते हैं । बड़ा ही अनर्थ हुआ आपको तो बड़ा शोक हुआ होगा परन्तु यह आर्य संन्यासियोंको जो आगे ही बहुत न्यून संख्यामें हैं बड़ा ही शोक हुआ आपकी जोड़ी न रही आप अकेले रह गये । सब आर्य जनता शोकमें मग्न है । जो सुनता है हाय हाय कर रहा है कभी सिमलेमें गये तो श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराज कभी न मिलेंगे इत्यादि ।

श्रीस्वामीजीका पत्रव्यवहार और मेल आर्य्य समाजके अतिरिक्त अन्य संन्यासियोंसे भी था, उनमेंसे केवल एक पत्र यहां दिया जाता है । जो स्वामीजीकी मृत्युपर श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराजके नाम लिखा गया था ।

ओ३म् ।

देहली १५-१-१४

श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज ओम् आनन्द जय जय ।

भगवन् यहाँके लोगोंसे स्वामी नित्यानन्दजी महाराजके शरीरका स्वर्गवास होना सुना गया है पता नहीं कहाँ तक यह सत्य है, पहले ही पुरुषोंसे सुनकर चित्त निश्चय नहीं करता था परन्तु कल यह सुना गया कि अखबारों मासिक पत्रोंमें भी स्वामीजीका तिरोधान होना छप गया है, इस सूचनाको सुनते ही चित्तको तीव्र चोट लगी है । यद्यपि अपने अति प्रेम मूर्ति, और सहृदय स्वामी नित्यानन्दजी जैसे देश हितैषीके शरीरका शीघ्र लोप होना अति खेद देनेवाला है और नारायण जैसे असंग पुरुष पर भी अति तीव्र चोट लगा गया है पर जब नारायण दूसरी ओर देखता है कि स्वामीजी अपने जीवनका आदर्श अति उत्तम रीतिसे निभा कर छोड़ गये हैं । अपने आश्रम तथा अपने उद्देश और जीवनको आरम्भसे लेकर अन्त तक एक समान उत्तम रीतिसे व्यतीत करके और ऐसे अतुल आदर्श छोड़कर आनकी आनमें (ततक्षण) हो सबके हाथपर हाथ मारकर शान्तिसे लोप हो गये हैं तो इस ओर पर दृष्टि आनेसे चित्तको शान्ति प्रसन्नता और स्वास्थ्य प्राप्त होता है । और ऐसे भी विचाराजावे तो शोकका कोई स्थान दृष्टिगोचर नहीं होता; क्यों कि किसके शरीरको कालवश नहीं होना है । हमारी तुम्हारी सब की बारी आनी है निस्सन्देह शोक इस अज्ञान पर तो अवश्य आता है कि ऐसे प्रेममूर्ति शरीरोंको हाथसे जाता देख कर भी हरामी चित्त यह नहीं मानता है कि अन्य शरीरोंका भी कल यही हाल होनेवाला है और यह संसार इसी प्रवाहसे बह रहा है कोई शरीर नित्यके लिये स्थायी नहीं । सब ही मरनेके लिए उत्पन्न हुए हैं और अपनी दशा तथा भूलपर शोक करनेके स्थान पर दूसरोंकी मृत्युपर शोक कर रहा है मानो यह नित्य जीते रहनेका ठेका लेकर शायद आया है । इस चित्तकी दशा पर तो शोक अवश्य होना चाहिये । यद्यपि शोक यहां नहीं किया जाता बाहर अन्य पर शोक किया जाता है । आशा है कि आप भी अपने खेदित चित्तको अपनी ही ओर लगायेंगे ओर प्रियतम स्वामीजी के तिरोधानपर दृष्टि न देकर उनके शुभ आदर्श को सामने रखते हुए प्रसन्न और हर्षितचित्त रहेंगें । यदि शोक करना मन को भाये भी तो चित्तको अपनी ही दशापर शोक करने में लगावेंगे जिससे स्वामी

जी का लोप चित्तको खूब उपदेश देता रहे और हम सब के जीवन में एक बिजली सी उत्पन्न कर दे जिससे अपना चित्त रंगा जावे और स्वामी नित्यानन्द जी का तिरोधान सब को भूल जावे।

स्वामी नित्यानन्दजी और आपका प्रेमात्मा

आ एस, नारायण स्वामी प्रेमधाम,

बड़ादरीबा—देहली।

श्री स्वामी अच्युतानन्दजी महाराजके पत्रोंसे पता चलता है कि उन्होंने हरिद्वारमें संन्यासाश्रम स्थापित करनेके लिये भूमि प्राप्त कर ली परन्तु पत्रमें उल्लिखित कारणोंसे वे उसे वहां स्थापित नहीं कर सके थे। यहां स्वामी क्षेमानन्दजी का एक पत्र उद्धृत किया जाता है जिससे स्वामी प्रकाशानन्दजीके विचारोंका पता पाठकोंको मिल जावे।

ओ३म्

नालापानी ए. रायपुर

जि. देहरादून।

सेवामें मान्यवर श्री १०८ स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज शान्त कुटी सिमला पूज्यवर स्वामीजी नमस्ते।

आजकी डाकमें मैंने आपकी सेवामें २ पुस्तिका प्रेषित की हैं। जिसके अवलोकनसे आपको ज्ञात होगा कि हरिद्वारसे ऊपर गंगाके तटपर आज दो वर्ष हुए एक साधु आश्रम खोला गया था जिसमें १८०००) रु० व्यय हो चुके हैं परन्तु इसकी दशा शोचनीय है।

श्री १०८ स्वामी नित्यानन्दजीके स्वर्गधाम पधारनेके पूर्व उन्होंने स्वामी प्रकाशानन्दजीसे इस प्रकारका आश्रम स्थापन करनेकी इच्छा प्रगट की थी और अब भी समाचारपत्रोंमें उक्त स्वामीजीकी यादगारमें साधु आश्रम स्थापन करनेका चर्चा जारी है।

यद्यपि आपके पास वैदिककोशका काम अधिक है इसमें कोई संदेह नहीं तथापि यदि आप चाहते हैं कि श्रीस्वामी नित्यानन्दजीकी यादगार साधु आश्रमके नामसे हरिद्वारमें बनाया जावे तो स्वामी प्रकाशानन्दजी उपर्युक्त आश्रम आपके समर्पण करने और सर्व प्रकार सहायता देनेको तैयार हैं। अबके शीत कालमें जब आप नीचे आवें तो उस स्थानको देख लें यदि सर्व प्रकार अनुकूल समझा जावे तो इसको भले प्रकार उन्नत किया जावे। इस आश्रमकी

कमेटीके मेम्बरोंकी भी इच्छा है कि येन केन प्रकारेण इस आश्रमको सच्चा साधु आश्रम बनाना चाहिये और इसीमें सच्चे साधु उपदेशक भी तैय्यार किये जावें।

आप उचित समझें तो इस विषयको आगामी साधु सम्मेलनमें प्रविष्ट करादें। कृपा कर उत्तर प्रदान कीजिये।

आपका आज्ञाकारी
क्षेमानन्द।
आनन्दाश्रम नालापानी देहरादून।

आर्य्य समाजके प्रायः सब ही संन्यासी श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराजके प्रति आदर और श्रद्धाके भाव रखते थे। जब कभी आपसे उत्सवोंपर अथवा अन्य प्रसंग वश भेट होती तो अति प्रेमसे धर्मचर्चा और आर्य्य जगतकी गतिपर विचार हुआ करते। श्री स्वामी सर्वदानन्दजी, दर्शनानन्दजी, मुनीश्वरानन्दजी, परमानन्दजी, आत्मानन्दजी आदि सब ही संन्यासी महात्मा स्वामीजीसे अपने विचार परिवर्तन किया करते थे। स्वामीजीके निरीक्षणमें रहनेके लिये आर्य जगत्का समस्त संन्यास मण्डल कितना उत्सुक था, उसका पता स्वामी श्रीअनुभवानन्दजी, श्रीसत्यानन्दजी श्रीअच्युतानन्दजी, और श्रीप्रकाशानन्दजी महाराजके संन्यासाश्रम और साधु आश्रमकी स्थापना सम्बन्धी विचारोंसे चलता है। अपने सहयोगियों और समानता वालोंसे इतना गौरव आदर प्राप्त करना स्वामी श्रीनित्यानन्दजी महाराजकी योग्यता और उदारताको सूर्य्यवत् प्रकाशित करते हैं।

आर्य्य संन्यासियोंमें स्वामी श्रीनित्यानन्दजी महाराजका जो गौरव था वह पूर्वपृष्ठोंमें बतलाया गया है। यहां हम आर्य्य पंडितों और उपदेशकोंके कतिपय पत्र उद्धृत करते हैं जिनसे पाठकोंको प्रतीत होगा कि स्वामीजीको मान और गौरव देनेमें पंडित और उपदेशक गण भी अपना सौभाग्य समझते थे। यद्यपि आर्यजगतमें प्रवेश करते समय श्रीस्वामीयुगलोंका विरोध पंडितोंने ही किया था।

डी. ए. वी. कालेज लाहोरका नाम और काम आज कौन भारतवासी है जो नहीं जानता। ऋषि दयानन्दके इस स्मारकने विश्वमें अपनी यशपताका लहरा दी है। इसके सर्वस्व प्रातःस्मरणीय परम वन्दनीय लोकमान्य महात्मा श्रीहंसराजजीने जो त्याग इस संस्थाके लिये किया है। उसका आदर्श सामने रख कर हीन ओर पतित भारत आज दिन भी सभ्य संसारमें अपना मस्तक उठा रहा है। लोकमान्य लाला लाजपतिरायजीने अपनी united states of America नामक पुस्तकेमें जहां ,(negro) हबशियोंके पुनरुत्थानका वर्णन

किया है वहां परम त्यागी और सदा परिश्रमी बुकरटी० वाशिंगटनकी पूर्ण प्रशंसा करते हुए वे अपनी आलोचनात्मक सत्यतापूर्ण सम्मति देते हैं कि मैं अपने देशके रत्न लाला हंसराजजी पर ऐसे सौ बुकरवाशिंगटन वार सकता हूं कारण जिस स्थितिमें जिस उच्च आदर्शको उन्होंने सामने ला खड़ा किया है वह उनका ही काम था। देखा पाठक एक अनुभवी प्रवासी आर्य्य आपके समाजके एक सेवक और उसके निरन्तर परिश्रमसे फली फूली संस्थाके बारेमें क्या सम्मति देते हैं। डी. ए. वी कालेजकी वर्तमान अवस्थाका अस्तित्वमें लाना हबशियोंके सुधारनेसे भी अधिक परिश्रम साध्य माना गया है। इसी आर्य्यजगत्के प्यारे डी. ए. वी. कालेजमें धर्मशिक्षाका भार (जिसके लिए अन्य कालेजोंके होते हुए भी इस कालेजकी स्थापनाकी गई है) श्रीपंडित आर्यमुनिजी और प्रो. राजारामजी पर है।

आर्यसमाजमें आज यदि कहीं शास्त्रार्थकी आवश्यकता होती है तो सब ओरसे दृष्टि हटकर श्रीपंडित आर्य मुनिजीपर ही पड़ती है. आप प्रसिद्ध तार्किक हैं; आपने भारतके प्रायः सबही प्रान्तोंमें भ्रमण किया है सन्देहवादसे पूरित बंगालप्रान्तमें जहां पश्चिमी शिक्षाका प्रभाव विशेष पड़ा है. आपके उपदेश श्रद्धा और भक्तिसे सुने जाते हैं। अत: हम सर्व प्रथम श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराजके विषयमें आपकी क्या सम्मति थी। उसका उल्लेख करते हैं। नीचे जो पत्र दिया जाता है उसमें राय ठाकुरदत्तजी धवनकी प्रेरणासे आपने अपने स्वतंत्र विचार लेखबद्ध किये हैं। अतः उसपर किसी प्रकारकी टीका टिप्पणी न कर उसकी यथार्थ प्रतिलिपि नीचे दी जाती है।

पं० आर्यमुनीजीका अभिप्राय।

अद्वैत वीथी, पथिकैरुपास्या, । अद्वैतसिंहासनलब्धदीक्षा, ॥
शठेन केनापि वयं हठेन । दासीकृता गोपवधूविटेन, ॥

यह मधुसूदन स्वामीका श्लोक है, जिन्होंने अद्वैतसिद्धि संक्षेपशारीरिककी टीका, गीतापर मधुसूदनी टीका इत्यादि अनेक अद्वैतवादके मण्डनके ग्रन्थ लिखे हैं। प्रसंग यह है कि उक्त स्वामी ऐसे पक्के वेदान्ती होकर भी कृष्णजीके भक्त थे, जिससे भेदवादका गन्ध आता है। परन्तु हम जिन स्वामी श्रीनित्यानन्दजीका तर्क विषय यहां कुछ विचार लिखना चाहते हैं, उनके सिद्धान्त द्वैत-

वादके ऐसे पक्के थे जो अन्य किसी साधु वा स्वामीमें नहीं पाये जाते हैं, हमको इनके शारीरिक भाष्यके पुस्तकपर इनके स्वहस्तलिखित कुछ टिप्पण ऐसे मिले हैं जिनको यहां उद्धृत करके हम इनके मतकी प्रबलता दिखलाते हैं। आरम्भणाधिकरणमें इन्होंने यह लिखा है कि इसमें जो स्वामी शंकराचार्यजीने परिणाम और विवर्त दोनोंको माना है यह ठीक नहीं। क्योंकि जो वस्तु विवर्त है वह परिणत नहीं होती जैसे कि रज्जुका विवर्त सांप है सो वह सांप किसी अन्यका परिणाम नहीं और परिणाम वादकी परिभाषा भी सांख्यों की है। वेदान्तियोंकी नहीं प्रबल युक्ति इसमें यह है कि परिणामात् इस सूत्रसे सूत्रकारने परिणाम वादको माना है। पर निवर्त्तको कही नहीं माना. इससे यह पाया जाता है कि श्री स्वामी नित्यानन्दजीने वेदान्तसूत्रोंका बहुत गहरी छानबीनसे अनुशीलन किया था जिससे ऐसे २ वेदान्तशास्त्रके गूढ मर्मोंको टिप्पणीरूपमें लिखा। उनका बोध केवल प्रतीकों इत्यादिसे ही स्फुट नहीं अपितु जो उन्होंने अपने जीवनमें शास्त्रार्थ किये उनसे भी उनका पांडित्य सर्वसाधारणमें प्रसिद्ध है।

शंकर मतमें एक अन्य बड़ा भारी दोष यह पकड़ा है जो इसी आरम्भणाधिकरणमें उन्होंने टिप्पण किया हुआ है जिसमें स्वामी शंकराचार्य्यजीने ईश्वरको भी कल्पित माना है और यह वेद उपनिषद और वेदान्तसूत्रोंमें कहीं भी नहीं अर्थात् यह सिद्धान्त वेदान्तके आर्ष ग्रन्थोंके सर्वथा विरुद्ध है। पर वेदान्ती यह मानते हैं कि जब ब्रह्म में स्वाश्रय और स्वविषय होकर माया रहती है तो ब्रह्मको अपने ब्रह्मभावसे गिराकर ईश्वर बना देती है। इसलिए इनके मत में ईश्वर सादि और कल्पित है। पर यदि यह विचार किया जाय कि ईश्वरको किसने कल्पना किया है तो उसका उत्तर देना वेदान्तियोंके लिये अति कठिन हो जाता है क्यों कि ईश्वर तो स्वयं अपने आपकी कल्पना कर ही नहीं सकता, इसलिए उसकी कल्पना करनेवाला कोई उससे भिन्न कल्पित माना जायगा .यदि ब्रह्मको कल्पित मानें तो यह बन नहीं सकता क्यों कि कल्पनाकी शक्ति मायासे आती है और वह शुद्ध ब्रह्ममें नहीं इसी प्रकार जगत् कर्तृत्त्व अर्थात् जगत्के बनानेकी शक्ति भी ब्रह्ममें तभी आती है जब वह मायाके साथ मिलता है अन्यथा नहीं। इत्यादि वेदान्तकी गहरी बातोंको ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी भली भांति मानते थे, इस लिए उन्होंने शाँकर भाष्य पर टिप्पणी व अपने नोट लिख दिये। यह भी यहां स्मरण रखने योग्य बात है कि केवल न्याय वेदान्तके पढ लेनेसे वेदान्तका पण्डित नहीं हो जाता। वेदा-

न्तार्थके अनुशीलन करनेके लिए बड़ी योग्यताकी आवश्यकता है। जो साधारण पुरुषोंमें नहीं होती परन्तु किसी २ असाधारण भाव रखनेवाले पुरुषविशेष में होती है जैसी कि ब्रह्मचारीजीमें थी।

शंकरभाष्य अध्याय ३। ३। ३३ के सूत्रमें एक और नोट मिलता है जिसमें स्वामी शंकराचार्य्यजीने यह लिखा है कि भगवान् सूर्य्य हजार वर्ष जगत्के अधिकारको रखता हुआ फिर अमुक पदवीको प्राप्त होता है। इसपर स्वामी नित्यानन्दजीका यह नोट है " शंकरभ्रमः " यह शंकराचार्य्यजीका भ्रम है। जिससे यह पाया जाता है कि स्वामी शंकराचार्य्यजीमें पौराणिक भाव थे। इसी अभिप्रायसे उन्होंने इस जड़ सूर्य्यको देवताविशेष माना है केवल इतना ही नहीं आगे भी ३। ३। १० में प्रतिमादिकोंमें विष्णुका अध्यास करना लिखा है। अध्यासके अर्थ एक प्रकारकी भावनाके होते हैं, इस पर भी ब्रह्मचारीजीका बड़ा जोरदार नोट पाया जाता है प्रतिमामें विष्णुका अध्यास करना पौराणिक समयकी झलक है. वैदिक व उपनिषदोंके समयमें मूर्तियोंमें विष्णुबुद्धि करनेका कथन कहीं भी नहीं पाया जाता।

एक सबसे विचित्र बात ब्रह्मचारीजीके नोटोंमें यह है कि उन्होंने यह सिद्ध किया है कि स्वामी शंकराचार्यजीने जो जैमिनि, पतञ्जलि, कणाद, गौतम और कपिल इन पांचों दर्शनोंका खंडन किया है। वह वेदान्तसूत्रोंके आशयसे सर्वथा विरुद्ध है। क्यों कि वेदान्तसूत्रोंमें कोई ऐसा सूत्र नहीं पाया जाता जिसमें कपिल, कणाद और गौतम जैमिनिका नाम आता, हो जिन सूत्रोंमें आया है उनमें इनके मत की पुष्टि की है खंडन नहीं। × × × × × .

एक नई बात ब्रह्मचारी जीने यह की है जो आर्य्यसमाजके दार्शनिक लोगोंको याद रखने योग्य है। वह यह है " **यावदधिकारमस्थितिराधिकारिकाणाम्** । " इस सूत्रसे ब्रह्मचारीजीने मुक्तिसे लौटना सिद्ध किया है. है वह इस प्रकारकी मुक्तिके अधिकारी जो पुरुष हैं उनकी मुक्तिके अधिकार पर तभी तक स्थिति रहती है जब तक उसअधिकारकी आयु नियत की गई है। इससे स्पष्ट सिद्ध है कि मुक्ति नित्यनहीं। ध्यान देने योग्य यहां यह बात है कि, संन्यासी और स्वतंत्र होते हुए उनका निज मत आर्य्य समाजका मन्तव्य था।जो लोग यह कहा करते हैंकि आर्य समाजके दार्शनिक सिद्धान्तोंमें संन्यासियोंका और पंडितोंका निश्चय होना कठिन है। उन लोगोंको ब्रह्मचारी-

जीके इस निश्चयसे शिक्षा लेनी चाहिए। कि जो **विद्वान् और आप्त पुरुष होते हैं वे किसी लोभ और लालचसे किसी सिद्धान्तका आश्रयण नहीं करते** किन्तु अपने सद्भाव और पक्केनिश्चयसे सिद्धान्तको स्वीकार करते हैं। जैसा कि ब्रह्मचारीजीने किया था।

इनकी शंकर भाष्यकी टिप्पणियोंसे यह प्रतीत होता है कि इन्होंने शंकर भाष्यको वारंवार पढ़ा था। और जिसका फल यह हुआ कि इनको इन सूत्रोंके स्वतंत्र अर्थ करने भी आते थे। जैसा कि इन्होंने "देवादिवदपि लोके" इस सूत्रकी टिप्पणीमें लिखा है। "जिस प्रकार दिव्य शक्तिवाला पुरुष अपने विद्यावलसे किसी पदार्थका आविष्कार कर लेता है, इस प्रकार परमात्माभी अपनी दिव्य शक्तिसे नानाप्रकारके कार्य्य बना देता है।" शंकराचार्यजीने इसके यह अर्थ किये हैं कि जिस तरह देवताविशेष अपनी दिव्यशक्तिसे अभावसे भाव कर देता है, इस पर ब्रह्मचारीजीने लिखा है कि पौराणिक पोप लीला है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि ब्रह्मचारीजीको पौराणिक मिथ्या कथाओंसे अत्यन्त ग्लानि थी। यद्यपि प्रायः सभी सामाजिकों के इस प्रकारके भाव होते हैं तथापि ब्रह्मचारीजीमें यह भाव सराहनीय इस लिये थे कि वे पण्डित होकर मिथ्याके खंडनमें ऐसे साहसयुक्त थे कि उन्होंने बड़ी २ राजकीय सभाओंमें इन भावोंको छिपाया नहीं किन्तु अति बल पूर्वक प्रकाशित किया, जैसा कि राजपूताना बून्दी और कोटाका इतिहास सब सामाजिकोंको विदित है। कि समाजिक भावोंके प्रकाश करनेके कारण उनको राज्यसे बहिष्कार भी किया गया परन्तु उन्होंने अपने धर्मके मुकाबले पर इस अपमानकी अणुमात्र भी परवा नहीं की। इस प्रकारका इतिहास तो उनका और स्थलोंमें भी पाया जाता है परन्तु हम यहां उनके वेदान्त फिलासफी विषयक निश्चयकी पराकाष्ठा दिखलानेके लिये प्रवृत हुए हैं। वह यह है कि उक्त श्रीब्रह्मचारीजीकी एक टिप्पणी इस विषय पर पायी जाती है कि "**क्या शंकर सिद्धान्त परस्पर विरुद्ध नहीं ?**" इसको लिखते हुए ब्रह्मचारीजी यों लिखते हैं "शंकर भाष्यके चतुः सूत्रीमें स्वामी शंकराचार्य्य जीने यह माना है कि जीता हुआ पुरुषभी इस शरीरके वन्धनसे रहित हो सकता है वह इस प्रकार कि यह शरीर केवल अज्ञानसेही बना हुआ है। जब वह अज्ञान मिट जाता है तो रज्जुसर्पसमान यह शरीर भी अधिष्ठानके ज्ञानसे नाशको प्राप्त हो जाता है। यहां स्वयं ही स्वामी शंकराचार्य्यने यह पूर्वपक्ष उठाया है, कि शरीरतो

कर्मोंके भोगसे बना हुआ है फिर उसका विना भोगके नाश कैसे हो सकता है। इस स्थलमें शरीरके कर्म नैमित्तिक होनेका स्वामीजीने इस प्रकार खण्डन किया है।कि जिन कर्मोंसे यह शरीर बना वह कर्म पहले पहल कहांसे आये। क्यों कि कर्म तो तब बनेंगे जब कोई शरीर होगा। यदि इसी शरीरसे कर्म उत्पन्न हुए तो वह शरीर फिर कहांसे बना ? वह भी किन्हीं कर्मोंसे बना होगा। इस प्रकार कर्म हो तो शरीर बने और शरीर हो तो कर्म बने यह दोनों एक दूसरेके सहारे होनेके कारणही कर्म नहीं इस लिये कर्मोंसें शरीरकी उत्पत्ति मानना अन्धपरम्परा है। इस प्रकार स्वामी शंकराचार्य्यजीने अपने मतकी पुष्टि करनेके लिये यहां शास्त्रीय मर्य्यादाको छोड़ दिया है। आगे जाकर दूसरे अध्यायमें "प्रयोजनत्वाधिकरण" में फिर यही प्रश्न उत्पन्न हुआ कि कोई दुःखी और कोई सुखी, कोई राजा और कोई रंक क्यों बना ? वहां इसी सवालको उठाकर यह उत्तर दिया है कि यह सब कर्मोंके सबबसे जीवोंके सुखदुःख और शरीरोंमें भेद है।

इस प्रकार शास्त्रोंके गूढ सिद्धान्तोंके श्री ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी **पूर्ण पंडित** थे, यह बात इनके शंकरभाष्यके नोटोंसे स्पष्ट प्रतीत होती है। जो विस्तारके भयसे हम विशेष नहीं लिखते।

कुछ नोट हमको और मिले हैं जिनमें ब्रह्मचारीजी साहित्यका Research अर्थात् अनुसन्धान करते थे। जिसमें उन्होंने पता लगाया है, कि जिसको महाभारतमें काम्यकवन, द्वैतवन और मित्रवन लिखा है, ये सब स्थान चन्द्रभागा नदीके तटपर मुलतानके पास थे एवं कई एक सूत्र इतिहासकी छानबीन करनेके लिये व्याकरणसे भी निकाले हुए भिन्न २ स्थानों पर नोट रूपसे पाये गये हैं। यदि उन सबको इकट्ठा कर लिया जावे तो इतिहासका अनुसंधान करनेवालोंके लिए बड़ी सुविधा हो जाती है। गुरुकुल काङ्गड़ी (जिसकी शिक्षाप्रणाली पर उसके परीक्षणकालमें ही समस्त विद्वत्समुदाय मोहित हो गया है) के वेद महोपाध्याय पंडित शिवशङ्करजी काव्यतीर्थ जिन्होंने मौलिक अनुसन्धानसे आर्य्यसाहित्यके गौरवको बढाया है। जिनकेजातिनिर्णय, ओंकारनिर्णय, वेदेतिहासनिर्णय, बृहदारण्य और छान्दोग्य उपनिषदोंके भाष्य उनकी अगाध विद्वत्ताका प्रमाणदे रहे हैं, श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराजके परम भक्त थे। आप अपने पत्रोंमें (यदि स्वामीजीके ओरसे किंचित् विलम्बसे

उत्तर मिलता तो) "मैं अधन्य हूँ" ऐसा प्रायः लिखा करते थे। स्वामीजीके वैदिक कोषके सम्पादनमें भी आपने कुछ समय तक कार्य किया था।

महाविद्यालय ज्वालापुरकी पंडितमंडली जिसमें श्री पंडित गङ्गादत्तजी, भीमसेनजी, नरदेवजी शास्त्री वेदतीर्थ, पद्मसिंहजी साहित्यमर्मज्ञ आदि विद्वान् अग्रगण्य हैं स्वामीजीसे निरन्तर पत्रव्यवहार किया करते थे। स्वामीजी आर्य विद्वत् सभाके प्रधान थे। सामवेदभाष्यकार पंडित तुलसीरामजी स्वामी मेरठ निवासी, पं० दौलतरामजी अभ्यासी, पं० बिहारीलालजी शास्त्री B. A., पं० ब्रह्मानन्दजी, पं० रुद्रदत्तजी सम्पादकाचार्य्य, पं० बद्रीदत्तजी, यज्ञदत्तजी आदि पंजाब और युक्त प्रान्तके समस्त पंडित और उपदेशक स्वामीजीसे वार्तालाप और पत्रव्यवहारद्वारा अपना सम्बन्ध रखते थे। राजस्थानके पंडित गणपति शर्मा और मुम्बई प्रतिनिधिके पं० बालकृष्णजी शर्मा भी स्वामीजीके अनन्य भक्त थे। श्री पं० बालकृष्णजी शर्मा तो स्वामीजीके साथ मुम्बई प्रान्तके प्रवासमें प्रायः रहे थे अतः आप पर स्वामीजीकी विशेष कृपा थी।

पंजाब आर्य्य प्रतिनिधिसभाके मुख्य उपदेशक श्री पंडित पूर्णानन्दजी स्वामीजीसे कैसी आशाएँ रखते थे, उसका अनुमान पाठकोंको पंडितजीके निम्न पत्रसे होजायगा।

॥ ओ३म् ॥

श्रीमान् मान्यवर स्वामी १०८ नित्यानन्द सरस्वती जी नमस्ते

हमारे जलसेमें एक भी उपदेशक नहीं आया, हमारी बड़ी भद्द हुई है। कृपया जैसा हो अब आपको कष्टहो चाहे मृत्यु भी हो जावे परन्तु बटाला समाजपर तथा मुझपर कृपा कर जरूर आवें। यदि आप अब न आये तो न केवल बाटाला समाजका नुकसान होगा किन्तु इस प्रान्तके कुल समाजोंपर बुरा असर होगा। आप पर पूर्ण विश्वास रखकर यह पत्र लिखा है। जो महरबानी है वह मुझपर रखें जरूर। सर्वथा कष्टकी अवस्थामें आपकेपास यह पत्र और ये महाशय भेजे हैं। जरूर २ कृपा करें

भवदीय पूर्णानंद उपदेशक १५—१०

स्वामी जीकी मृत्युपर श्री पंडित पूर्णानन्दजी आपके जीवन की कुछ घटनाएँ लिखकर स्वामी श्री विश्वेश्वरानन्द जी महाराजके पास भेजी थीं अपने उस

पत्रके अन्तमें आप लिखते हैं; **स्वामी जी का स्वभाव अति मृदु, रंगरूप अति मनोहर, भाषण अति प्रिय, वैदिक धर्मके पक्के सहायक, महर्षि श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के एक मात्र पक्के भक्त, सर्व गुण सम्पन्नथे, श्री स्वामी नित्यानन्दजीकी मृत्युसे आर्यसमाज की बडी हानि हुई है यह ऐसी हानि है जिसका पूर्ण करना आर्य-समाजके लिये असंभव है। मैंने स्वामी नित्यानन्दजी के सन्मान पूर्वक प्रचारका तरीका मुम्बई आदि नगरोंमें देखा मुझे बिना संकोचके यह कहना पडता है कि श्री स्वामी १०८ दयानन्द सरस्वतीके पश्चात् आर्यसमाजमें आर्य गौरवसे बोलने और आर्य मर्य्यादाके रखने में जैसे श्री स्वामी नित्यानन्दजी हुए ऐसा और अभीतक कोई नहीं हुआ** श्री स्वामीजी महाराज मुझसे अति प्रेम रखते थे। मैं यदि आर्य्य समाजका इतिहास लिखूंगा तो स्वामी नित्यानन्दजीके कामकी विस्तार पूर्वक आलोचना अवश्य करूंगा

ह० पूर्णानन्द उपदेशक, पंजाब सभा।

इस प्रकार पाठकों को अति सूक्ष्म रूप से आर्य पंडितोंसे स्वामी जीका सम्बन्ध था इसका दिग्दर्शन करा हम आर्य नेताओंके सम्बन्धपर प्रकाश डालनेका उद्योग करते हैं।

स्वामी श्री नित्यानन्दजी और आर्यनेता।

महर्षि श्री स्वामी दयानन्दजी सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य्य समाज आज अपना गौरव विश्वके प्रत्येक भागमें विस्तृत कर चुका है। इस मिशनकी पूर्तिके लिये जहां आर्य संन्यासी और पंडित उपदेशकोंने अपना सारा समय दे दिया है वहां आर्य्य गृहस्थभी इस पवित्र संस्थाकी निस्वार्थ भाव से सेवा करनेमें किसीसे पीछे नहीं रहे हैं। हमारा विश्वास है और इसमें कोई अत्युक्ति नहीं कि जो विचार बीज रूपसे आर्य संन्यासी और उपदेशकोंने जनता के समक्ष अपने उपदेशोंमें दरसाये उन सब को फल पुष्पसमन्वित छायादार सघन वृक्षके स्वरूपमें कार्यद्वारा उपस्थित कर देनेका श्रेय आर्य गृहस्थोंको है। अपने गृहस्थके नित्य कार्योंसे अवसर निकाल कर (जो एक साधारण मध्यवित्त गृहस्थीके लिये जीवन संग्राम के वर्तमान क्षेत्रमें अति कठिन समस्या है) ये आर्य गृहस्थ

अपना तन मन धन सामाजिक संस्थाओंके अर्पण करते दृष्टिगोचर होते हैं. भारत कीवर्तमान धार्मिक राजनैतिक और सामाजिक अनेक संस्थाएं इस विषय में आर्य समाज की समता नहीं कर सकतीं ।

अनेक आर्य गृहस्थोंने तो अपने कुटुम्बके भरण पोषणके साथ २ स्थानान्तरमें जाकर उपदेशका कार्य्य भी अपने जिम्मे ले रक्खा है । स्थानिक संस्थाओंका निरीक्षण संचालन और पोषण वे ही करते हैं । इसके बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं । जो भी कोई सहृदय समस्त भारतमें फैले हुए सैकड़ों गुरुकुल कालेज, हाईस्कूल महाविद्यालय, ब्रह्मचर्य्याश्रम कन्या पाठशाला आदि शिक्षणसंस्था । औषधालय, अनाथालय, प्रेस, पुस्तकालय और वाचनालय आदि सार्वजनिक संस्थाओंका निरीक्षण करता है वह इसकी सत्यतामें सन्देह नहीं कर सकता ।

श्री स्वामी नित्यानन्दजी महाराजका सम्बन्ध इन आर्य गृहस्थोंसे और भी घनिष्ठ था, वे इनकी अड़ीपर सहायता करनेको सदा उद्यत रहते थे, स्कूलों, गुरुकुलों और अनाथालयोंकी सहायताके लिये वे अनेक डेपुटेशनोंमें सम्मिलित हुए और अच्छी आर्थिक सहायता प्राप्त की । जहां आर्य्यसमाजका निजका स्थान नहीं वहां समाज मन्दिर बनानेके लिये वे विशेष उद्योगी रहते थे ।

आर्य्य नेताओंसे स्वामीजीका सम्बन्ध स्पष्ट बतलानेके लिये हम अब कतिपय पत्र उध्दृत करते हैं ।

कौन भारतवासी है जो भारतके बालकोंकी शिक्षाप्रणालीपर विचार करते हुए महात्मा मुंशीरामजी और गुरुकुल कांगडीका स्मरण आदरसहित न करे । प्रायः यह शब्द सुने जाते हैं कि नदीका प्रवाह ऊपरकी ओर नहीं फेरा जा सकता परन्तु जो सज्जन आज २०—२५ वर्षोंसे शिक्षा की गतिका निरीक्षण कर रहे हैं वे भली भाँति जानते हैं कि आर्य्यसमाजने शिक्षासरिताको ऊपरकी ओर अर्थात् उस प्राचीन आदर्शकी ओर जहां उसका उद्गम स्थान है लेजानेके लिये कितना घोर परिश्रम किया है और संतोषका विषय है, कि यह परिश्रम अनेक अंशोंमें सफलता प्राप्त करनेके लक्षण प्रकट कर रहा है । इस परिश्रमी समुदायमें सर्व प्रथम प्राचीन आदर्शके अनुसार अनेक अंशोंमें एक सच्चा गुरुकुल स्थापित करनेका श्रेय महात्मा मुंशीरामजीको है । यद्यपि

गुरुकुल काङ्गडीके खुलनेके पहले सिकन्दराबाद आदि स्थानोंमें एक दो गुरुकुल खुल चुके थे। परन्तु आजकल जो सफलता, गौरव, और प्रभावका आदर्श गुरुकुल काङ्गडीने समस्त संसारके विद्वानोंके हृदयोंपर स्थापित किया है वह उसीका भाग है। और इस सिद्धिके साधनमें जो भगीरथ श्रम और त्याग महात्माजीको करना पड़ा है। वह अत्यन्त सराहनीय और अनुकरणीय है। श्रीस्वामी नित्यानन्दजी सरस्वती और महात्माजीका पारस्परिक व्यवहार जाननेके लिये, महात्माजीके नीचेके पत्र पढ़िये।

जालन्धर २७-६-९६

मान्यवर-नमस्ते—

सु. शंकराचार्य आज यहां आगया हैं-यदि आप इस पत्रको देखते ही यहां चले आवें तो बड़ा काम हो-यह लाहोर नहीं है कि टालमटोल कर सके यहां उनकी अच्छी प्रतिष्ठा हो सकती है-पत्र देखते ही आइये यहां अब ठन्ढ है

भवदीय
मुन्शीराम।

जालन्धर शहर १ अगस्त ९५

श्रीयुत पूज्यवर मान्यवर ब्रह्मचारीजी महाराज-नमस्ते-बहुत कालसे आपका कोई पत्र मुझे नहीं आया, आपके तथा स्वाभीजीके पुरुषार्थ तथा शारीरिक व्यवस्थाके समाचार अखबारोंसे ज्ञात होते रहे हैं। श्रीमान् मुद्दतसे आपने पंजाब देशकी सुध नहीं ली इस प्रान्तमें अबके वर्ष आपका आना अत्यावश्यक है। आप उत्तरमें कहेंगे कि पंजाब प्रतिनिधिके पास तो अब बहुत उपदेशक हैं फिर हमारी क्या आवश्यकता है किन्तु आप जानते हैं कि जो श्रद्धा सामाजिक तथा अन्यान्य पुरुषोंकी आपसे महात्माओंपर होती है वह साधारण उपदेशकोंपर होना सम्भव नहीं हैं-इसमें सन्देह नहीं कि आप बम्बई आदि प्रान्तोंमें बड़ा काम कर रहे हैं किन्तु यदि पंजाब देशमें आपने ३ मास लगा दिये, तो उनसे इस ओरकी आर्यसमाजें पुष्ट होकर यहां प्रतिनिधि सभाको ऐसा उन्नत कर सकेंगे, कि जिससे वैदिक धर्मकी महती वृद्धि होना सम्भव होगा। यदि आप यहां आवें तो वेदप्रचारका जो बड़ीभारी स्कीम बनने लगी है उसमें आपकी सम्मतिसे बड़ा लाभ हो। शिमला आर्यसमाजका वार्षिकोत्सव ३१ अगस्त तथा १ सेप्टेम्बरको है यदि आप प्रथम वहां आजांय, तो

मैं भी वहां होऊंगा वहांसे इकट्ठे कुछ काल भ्रमण करेंगे । आपकी सेवामें रहनेसे मुझे भी कुछ लाभ होगा, आप मुझपर जैसी कृपा रखते थे और श्री स्वामीजीका जैसा अनुग्रह रहता था उससे आशा पड़ती है कि आप दासकी विनयको स्वीकार कर उसे कृतार्थ करेंगे ।

आपका दास
मुन्शीराम प्रधान ।

आ. प्र. नि. सभा पाञ्चाल देश ।
जालन्धर शहर
२० नवेम्बर ।

मान्यवर नमस्ते-आपका कृपापत्र पहुंचा धन्यवाद देता हूं-आरामुरादाबाद जाकर स्वास्थ्यकी बहुत हानि हुई-अब कुछ अच्छा है-**लाहोर आ. सके वार्षिकोत्सव पर आपका पधारना अत्यावश्यक है क्योंकि** मैं भी दुर्बल हूं बोल न सकूंगा । कृपापूर्वक अवश्य आइये ।

भवदीय मुंशीराम

जालन्धर शहर
ओं. १२-१२-९६

मान्यवर श्रीयुत स्वामीजी तथा ब्रह्मचारीजीकी सेवामें । मुंशीरामका सविनय नमस्ते पहुंचे-विद्वद्वर-आर्यसमाज जलन्धरकी आज्ञानुसारमें मैं आप महोदयोंकी सेवामें आ. स. जलन्धर नगरके ग्यारहवें वार्षिकोत्सवमें पधारनेके लिये यह निमंत्रण भेजता हूं । नगरकीर्तन २५ दिसम्बरको होगा, व्याख्यान आदि २६ तथा २७ दिसेंम्बरको होगें लाहोरमें आपके न आनेसे बहुतसे सज्जन उदासीन थे यदि आप जलन्धरपर अनुग्रह करें तो ठीक हो ।

भवदीय कृपाकांक्षी
मुन्शीराम ।

जलंधर नगर
१७-८-१९००

मान्यवर ब्रह्मचारीजी-नमस्ते-

आपका कृपापत्र आज मुझे मिला । दहलीमें प्रचार बडे समारोहसे हुआ, मंडलवालों तथा दर्भंगानरेशने शास्त्रार्थ करना स्वीकार न किया । इसका प्रभाव

बहुत पड़ा, आप आते तो विशेष आनन्द होता, कुल वृत्तान्त पंडित रुद्रदत्तजी लिखेंगे ! स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी मिले थे, उनका भी एक उपदेश संस्कृत तथा देशभाषामें हुआ था, आप कभी २ इधर कृपा किया करें।

भवदीय
मुन्शीराम।

॥ ओ३म् ॥

जालंधर शहर
१८ जनवरी १८९६

श्रीयुत मान्यवर ब्रह्मचारीजी—नमस्ते

× × × × ×

आप कृपा करके स्वामीजीको पंजाबमें आनेके लिए प्रेरित करें, और मेरी ओरसे भी सविनय निवेदन करें। पंजाबमें आपका एक दौरा आवश्यक है। नेपालसे अभी कोई उत्तर नहीं आया जब आवेगा तो आपको सूचित करूंगा।

मुझे शोक है कि उत्सवके झगड़ेके कारण मैं पूरा आतिथिसत्कार नहीं कर सका—मुझे आशा है कि आप मेरे हृदयके भावको जानते हुए मुझे क्षमा करेंगे और पंजाबमें आनेका प्रबन्ध अवश्य करेंगे।

श्री स्वामीजी महाराजकी सेवामें नमस्ते।

आपका
मुन्शीराम।

जालन्धर शहर १४ अगस्त

मान्यवर स्वामीजी तथा ब्रह्मचारीजीकी सेवामें मुंशीरामका नमस्ते पहुँचे। विद्वद्वर ? चौधरी ठाकुरदासजीके पत्रसे ज्ञात हुआ कि स्वामीजीको किंचित् ज्वरादिका विकार हो गया था इससे चित्त उस ओर लगा है, कृपया सूचित करें कि अब शरीरकी अवस्था कैसी है।

आपका विचार चम्बे जानेका ज्ञात हुआ इस समय मुझे बड़ी कठिनाईका सामना है मुझे बवासीरने बहुत ही सताया है और निर्बल भी बहुत हूँ। किन्तु समाजोंकी भी सुध लेना है। एक एक तिथि पर दो २ स्थानोंपर वार्षिकोत्सव रक्खे गये हैं। अतएव यदि आप सहायता करें तो इस समय काम हो सकता है। × × × × × कृपा कर १ या २ सेप्तेम्बरको अमृतसर मास्टर

आत्मारामके पास चले जावें, × × × × वजीराबादसे आपके साथ डेपुटेशनके कुल उपदेशक मिल जावेंगे। × × × × × कृपापूर्वक मेरे विनयको स्वीकार कीजिये। उत्तर आवश्य भेज दीजिये।

आपका दास
मुन्शीराम।
गुरुकुल कार्य्यालय
१७-२-१९०२

श्रीयुत ब्रह्मचारी जी की सेवा में मुन्शिराम की नमस्ते पहुंचे—

मान्यवर चिरकालके पश्चात् आज फिर आप की सेवामें पत्र प्रेषित करनेका अवसर मिला है. आपको ज्ञात हो गया होगा कि मैं गुरुकुलको इस स्थानमें खोलनेका प्रबन्ध करनेके लिये आया हूं गुरुकुल के लिये मकान बन रहे हैं २४ मार्च सं. १९०२ पूर्णिमा होली को गुरुकुलका प्रारम्भिक संस्कार होगा, इस अवसर पर सर्वसाधारण को निमंत्रण नहीं दिया जावेगा किन्तु २१,२२ तथा २३ मार्च को चारों वेदोंके मंत्रोंद्वारा हवन होगा और २४ मार्च को opening ceremoney (ओपिनिंग् सेरीमनी) होगी। इस संस्कार का सारा प्रबन्ध मेरे अधीन किया गया है और **मैंने निश्चय किया है कि प्रारम्भिक संस्कार का अन्तिम व्याख्यान आप देवें। और गुरुकुलको** open करें। स्वामी विश्वेश्वरनन्द को भी साथ लावें। मैं इस समय धनहीन हूं केवल गुरुकुलके कामको आवश्यक समझ कर सांसारिक प्राप्ति अस्वीकार कर यहां आया हूं आप यदि मुझपर कृपा करेंगे तो अनुग्रह होगा। यदि आना स्वीकार करें तो मुझे सूचित करें २१ से पहले किस तिथि पर आप हरिद्वार पहुंचेंगें यदि आप किसी कारण न आ सकें तो उत्तर शीघ्र दीजियेगा।

भवदीय
मुन्शीराम
मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल ११ सेप्तेम्बर।

श्रीमान् स्वामीजी नमस्ते।

मैं कुशल पूर्वक यहां पंहुचगया × × × मेरे आनेसे तीन दिन पहले सिस्टर एलिजेबेथ काठियावाड़को चली गई। चलते हुए जो पत्र मुझे लिख गई उसका

कुछ अंश आपके तथा श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजीके विज्ञापनार्थ यहां लिखता हूं आप उसका अनुवाद किसी आर्य भाईसे सुन लें।

" In this place and with your people, I feel an air of sincerity and real brotherhood, which so far has been wanting in my Indian experiences and I am feeling it very much to go away. Please tell Swami Nityanandji that I am in Kathiawad until they hear from me... ......I particularly wish my Shant Kuti Swames of whom I am the sister, to go on corresponding with Dr. Ross, Mr. Earle, and especially with Dr. Vogel. They may simply now do as English people do one with the other, and now and again with a simple but friendly little note saymig quite shortly in English fashion.

× × × × × × ×

Tell my Swamies that it is neither necessary nor advisable to go to so much expense for our tea, i.e. not for them,these scholars and learned people and such are always allowed the gresatest simplicity. nothing more is needed than tea, milk, sugar, and hot water. I phum or currant cake (not seed) I wish them all success in dispelling ignoranee......... I want the Swamies to frequently meet their English friend, whom I brought to them.

अभी मेरा शरीर अच्छा नहीं है और कार्य भी बहुत है इस लिए मैं भी बस करता हूं।

आपका दास
मुंशीराम ।

॥ ओ ३ म् ॥

गुरुकुल ३-५-०८

श्रीमन्नमस्ते,

आपका कृपापत्र मुझे कल सायंकालका मिला।

* * * *

(३) आप लाहोर आर्य समाजके वार्षिकोत्सवको न भूलें, उस समय आपकी उपस्थितिसे अत्यन्त लाभ होगा। यदि आपके निवासस्थानका पता लगा तो फिर लिखूंगा।

(४) गुरुकुलके वार्षिकोत्सव पर भी अवश्य दर्शन देनेकी प्रतिज्ञा करें ।

*　　*　　*　　*

(६) सद्धर्म प्रचारको जिस पतेसे आज्ञा करें पहुँचा करे ।

आपका दास
मुंशीराम ।

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल २७ कार्तिक.

श्रीमान् स्वामीजी महाराज,

नमस्ते । आपका कृपापत्र कल पहुँचा × × × × × × आप प्रचारकमें पढ़भी चुके होंगे कि मैंने आपके उपदेशोंसे लाभ उठाया है । गुरुकुलकी यथा शक्ति सेवाके अतिरिक्त सब कार्योंसे निवृत्त हो रहा हूँ । × × × विशेष मिलने पर निवेदन करूंगा ।

आपका दास
मुंशीराम ।

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल २ श्रावण । ६८

श्रीमन् मान्यवर स्वामीजी नमस्ते ।

मैंने प्रचारकपत्रके प्रबंधकर्ताको कह दिया है । आजहीगत सप्ताहके अङ्क एक पैकेट में आपकी सेवा में पंहुच जायंगे । आगेके लिये भी आप के नाम प्रचारक सिमलाके पतेसे पंहुचता रहेगा । यहां सर्वथा कुशल है । मैं सिमलामें दो मास रहना चाहता हूं । तो क्या शान्तकुटीका एक कमरा मुझे मिल सकता है ? मुझे विशेष लेखकाकामकरना है । जो यहां होना कठिन है । आपका उत्तर आनेपर निश्चय करके लिखूंगा ।

आपका दास **मुंशीराम ।**

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल ११ अगस्त

श्रीमान् स्वामीजी महाराज नमस्ते

आपकी आज्ञाका उलंघन कैसे कर सकता हूं " कहां कि चरण कहौ कहां माथा " तुलसी । कालिका से अन्तिम ट्रेनमें १५ अगस्त मंगल को बैठ-

कर जतोघ रेलवे स्टेशन पर उतरूंगा सीधा आपकी सेवामें पहुँचूंगा इस विचार से कि अगस्तके अन्त में पंहुचना है अपनी तोशक कम्बलादि गुड्स ट्रेनसे भेज चुका हूं। अतएव पंहुचते ही एक सप्ताह के लिये बिछौना और पर्याप्त कम्बल चाहिये जिसका आपको ही फिक्र है। श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी-की सेवामें नमस्ते।

आपका दास
मुंशीराम।

॥ ओ३म् ॥

तिथि १३ पौष १९६८

सेवामें

श्रीमान् स्वामी नित्यानन्द सरस्वतीजी महाराज नमस्ते।

आप का तार कल सायंकाल मिला था, जिसका उत्तर दिया गया। गुरुकुल को धन की बडी आवश्यकता है, × × × × × × × × × आप निश्चय जानें कि आप के साथ मैं अब गाढ सम्बन्ध ही रख रहा हूं। मुझे अपना सेवक ही समझें।

आर्य्यावर्तीय सार्वदेशिक सभा के गताधिवेशन में आप को प्रतिष्ठित सभा-सद बनाया गया है। आशा है कि आप मंत्रीका पत्र आनेपर स्वीकार करेंगें। आप के सभा में होनेसे सभाको बहुत लाभ पहुंचेगा।

आपका दास
मुंशीराम

स्वामीजीकी मृत्युपर जो शोक महात्माजीको हुआ उसका अनुमान निम्न तार और पत्र से हो सकता है।

"Thunder struck with news, Swami Nityanand's death, irreparable loss to Arya Samaj, order me if any service."

(Sd.) Munshi Ram.

॥ ओ३म् ॥

२७ पोष १९७०.

My dear brother Mr. Desai,

Your telegram last evening gave me a great shock, I can not tell you what I have felt, O! the loss is irreparable, and how sudden.

I am sorry I could not serve him in his last moment, I have wired to swami Vishweshwaranandji Maharaj. Tell him that I am at his service, if I can do any thing to carry on late Swami's work, if I can be of the least help I am ready for it. I can not write more for my heart is full.

Very sincerely Your,

(Sd) Munshi Ram.

॥ ओ३म् ॥

२७ पौष १८७०

आर्य्यजगत्में श्रीमान मास्टर आत्मारामजी अमृतसरी, एज्युकेशनल इन्सपेक्टर बड़ोदाके शुभ नाम और कामसे कौन परिचित नहीं । अपने गृहस्थको आदर्श रीतिसे संचालित करते हुए आप उपदेश, लेख और वर्ताव तीनों प्रकारसे आर्य्य समाजकी अनवरत सेवा कर रहे हैं । वैदिक विवाहादर्श संस्कारचन्द्रिका, सृष्टिविज्ञान, बलप्राप्ति, ब्रह्मयज्ञ आदि अनेक खोज और विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ लिखकर प्रायः शून्य आर्य्यसाहित्य भंडारकी पूर्ति करनेमें आपका श्रम प्रशंसनीय है । शास्त्रार्थ करनेकी आपकी सौम्य शैली निराली ही है । विपक्षीतक आपकी सरलता और युक्तिवादका सिक्का मानते हैं । बड़ौदा आनेके पूर्व आपने पंजाबकी आर्य्य प्रतिनिधि सभाके मंत्री रहकर पंजाबकी आर्य्य समाजोंमें वेद प्रचारका वह निरन्तर स्रोत बहा दिया था कि उसके पश्चात् उतने वेगसे वेदप्रचारका कार्य्य पंजाबमें अभी तक नहीं हुआ ऐसी अनेक आर्य्यसज्जनोंकी सम्मति है । आर्य्यपथिक प्रातःस्मरणीय पंडित लेखरामजी, और विज्ञानशिरोमणि पंडित गुरुदत्तजी M. A. विद्यार्थीके सहायोगसे आपने बहुत लाभ उठाया है । श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराजसे भी आप अत्यन्त प्रेम करते थे । स्वामीजीकी ही प्रेरणासे आप बडौदा राज्यमें अन्त्यज पाठशालाओंके इन्स्पेक्टर नियत होकर आजसे अनुमान १० वर्ष पहले पधारे थे । जिन सज्जनोंने स्वामीजीका बड़ोदा राज्यके विद्याधिकारी महोदयका पत्रव्यवहार (जो पूर्व पृष्ठोंमें मुद्रित हो चुका है) पढ़ा है उन्हें इतना बतला देना पर्याप्त होगा कि जो दो इन्स्पेक्टर विद्याधिकारी महोदयने स्वामीजीसे मांगे थे तो स्वामीजीने मास्टर साहबको ही इस निमित्त भेजा था । यहां आकर आपने अन्त्यजोंको शिक्षित करनेमें वह चमत्कार दिखलाया जो समयकी वर्तमान गति और भारतकी स्थितिके देखते हुए अभूतपूर्व कहा जाना चाहिए । वह भारत सन्तान जो शताब्दियोंसे अक्षरज्ञानशून्य थी, जिनका संसारका

ज्ञान केवल उनकी कुटी और ग्रामतक ही परिमित था आज एक स्वरसे प्रातः सायं वेद मंत्रों और अपने उद्धारकर्त्ता श्रीमन्त गायकवाड महाराजके गुण कीर्तन करती दृष्टि पडती है। जिन सज्जनोंको यह स्वर्गीय दृश्य देखना हो वे कृपाकर बडौदेका अन्त्यज छात्राश्रम अवश्य देखें।

श्रीमान् मास्तर साहब स्वामीजीकी कृपाओंके अत्यन्त ही कृतज्ञ हैं। वे जो पत्र स्वामीजीको लिखा करते उस में स्वामी जी के गुणानुवादसहित अपने साथ की गई कृपाके लिए कृतज्ञता प्रकाशित करते रहते थे। जब २ स्वामीजी बड़ौदे पधारते थे तो मास्टर साहबके यहां ही ठहरते थे। स्वामीजीसे मास्टर साहबका अनेक विषयों पर पत्रव्यवहार रहता था। कभी आर्यविद्यासभा, गुरुकुल देवलाली मुम्बईकी आर्य संस्थाओंके सम्बन्धमें तो कभी बडोदा राज्यमें आर्य्यसमाजके प्रचारके साधन पर, कभी पंजाबकी समाजों और प्रतिनिधियोंके कार्यक्रमपर यह पत्रव्यवहार इतना अधिक है कि लेखक उसमें से किसे उद्धृत करे और किसे नकरे इस कठिन समस्याको हल करनेमें असमर्थ होकर केवल दो पत्र जो अनायास हीउसमेंसे आ गये उद्धृत करता है।

ओ३म्

अमृतसर ता. १३–८–१९६६

श्रीमान् परोपकारी मान्यवर ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी नमस्ते।

मैं कुशलक्षेमसे हूं। आशा है कि आप श्री स्वामी विश्वेश्वरनन्दजी महाराज के सहित आनन्दपूर्वक होंगें। आप को ज्ञात होगा कि सितम्बर का मास आरम्भ होनेवाला है और यही मास है जिसमें कि आर्य समाजोंको पुष्ट करनेके लिये श्रीमती प्रतिनिधि सभा पंजाब विद्वानोंके डेप्युटेशन बनाकर वेद प्रचारके लिये पंजाब की समाजोंको उत्साह दिलाया करती है।

श्रीमान् मान्यवर लाला मुंशीरामजी प्रधान श्रीमती प्रतिनिधि सभा (यद्यपि वह रोगग्रस्त हैं) इसी मास में दौरा करेंगे। मेरी धर्मपत्नी ऐसी दशामें है कि मैं उसको छोडकर इस मासमें कहीं भ्रमणके लिये समाजों-में नहीं जा सकता–पंडित रामभजदत्त जी वकालत की परीक्षाकी तैयारीमें मग्न होनेके कारण कहीं जा नहीं सकते, इस लिए यदि आप तथा श्रीमान् स्वामीजी कृपा करके लाला मुंशीरामजीके साथ एक चक्कर लगा दें तो समाजोंको बहुत लाभ होगा। आप निश्चय जानिये कि इस समय आपकी सहायता अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि समाजें कमजोर पड़ रही हैं और काम

करनेवाले पुरुष बहुत थोड़े हैं। आपको तकलीफ होगी इसमें सन्देह नहीं, परन्तु इस समय आपकी तकलीफ आपके लगाये हुए आर्यसमाजरूपी वृक्षको नव जीवन प्रदान करनेवाली है । आप जैसे बुद्धिमानोंको विस्तारपूर्वक लिखना अनुचित जानकर लेखको बन्द करता हूँ। पूर्ण आशा करता हुआ कि आप इस निवेदनको स्वीकार करके सितम्बर मासमें श्रीमान् प्रधानजीके साथ भ्रमणसे समाजोंको अमृत वर्षासे प्रफुल्लित करनेके लिए त्रुटि न करके श्रीमती आर्य्यप्रतिनिधि सभा पंजाबको कृतार्थ करेंगे। श्रीस्वामीजी महाराजको मेरी नमस्ते वांचें।

आपका शुभचिन्तक
आत्माराम,
मंत्री आर्य्य प्रतिनिधि सभा
पंजाब—अमृतसर।

॥ ओ ३ म् ॥

बड़ोदा १३—१०—१०

श्रीमान् पूज्यवर परोपकारी देशहितकारी आर्यसमाजभूषण विश्वरत्न श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी तथा श्रीस्वामी नित्यानंद सरस्वतीजी— नमस्ते मुझे डाक्टर कल्याण दासजीके पत्र से यह ज्ञात हुआ कि आप १२, १३ नवम्बरको बम्बई गुरुकुलके उत्सव पर नहीं आवेंगे।

मेरी सम्मतिमें आपका इस अवसर पर पधारना अति आवश्यक है । आप दोनों महानुभावोंके विना यह काम ऐसा ही है जैसा कि शरीर विना शिरके। क्या मैं आपसे निवेदन कर सकता हूँ कि आप सौ काम भी छोड़कर पधारें बिना आपके मेरी सम्मतिमें तो उत्सव ही नहीं करना चाहिए । और मैं तो डाक्टर साहबको यही सम्मति दूंगा कि यदि स्वामीजी नहीं आते तो उत्सव ही मुलतबी कर दें। मैं पूर्ण आशा करता हूँ कि आप स्वयं पधारकर उस वृक्षको जिसका बीज स्वयं अपने हाथोंसे ईंटोंमें बोया है अवश्य सेचन करेंगे यदि आप नहीं करेंगे तो यह वृक्ष कदापि जीवित नहीं रह सकता और उत्सवका करना व्यर्थ है।

आपका शुभचिन्तक
आत्माराम,
कारेलीबाग

स्वामीजीकी मृत्युपर जो तार और पत्र मास्टर साहबने श्रीस्वामी विश्वेरानन्दजी महाराज और डाक्टर कल्याणदासजीको लिखे उनकी नकल यह है.—

India's great Sanscrit scholar, social reformer, Arya Samaje's reputed sanyasi leader, orator, learned preacher mahatma Swami Nityanandji's loss is irreparable, may God grant peace to the departed grant soul and solaee to Mahatma Swami Vishweshwaranandji.

Atmaram.

॥ ओ३म् ॥

सोजित्रा (बड़ौदा स्टेट)
ता. १४-१-१४

शोक ! शोक ! ! महाशोक ! ! !

श्रीमान् पूज्यवर परोपकारी देशहितैषी आर्यसमाजभूषण विद्यारत्न श्रीमहात्मा स्वामी विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी महाराज नमस्ते ।

पूज्यपाद श्रीमहात्मा स्वामी नित्यानन्दजी महाराजकी अकाल मृत्युके हृदयविदारक शोक समाचारको सांझ वर्तमानमें पढ तथा श्री डाक्टर कल्याणदासजीके तारद्वारा जान मनको अति दुःख हुआ । जब मन शोकसे कुछ होशमें आया तो उसी समय सहानुभूतिका तार डा० जी को बंबई दिया और खयाल था कि आप शिमलेसे चले हुए होंगे और बम्बई शीघ्र आनेवाले हैं । पर जहां तक मालूम हुआ आप बम्बई नहीं आये और आप किस स्थान पर हैं यही पता ठीक नहीं लगा और सांझ वर्तमानमें यह भी लिखा हुआ था कि आप कहां हैं इसका पता नहीं । मैं तो आपकी सेवामें उपस्थित होना चाहता था पर जब आप बम्बई आये नहीं तो कहां जाऊं ठीक पता न मालूम होनेसे यह पत्र शिमलेके पतेसे ही लिखा है । कृपा कर अपना ठीक पता लिखें । ताकि मैं आपकी सेवामें हाजिर हो सकूं । स्वामीजी आप पर तो सच मुच वज्रप्रहार हुआ । आपके मनको तो अत्यन्त खेद हुआ है । आप तो क्षण २ में उनको याद करके शोकसागरमें डूब जाते होंगे । आप ईश्वरभक्त हैं बड़े अनुभवी और तपस्वी हैं । आप अपने मनको शान्त करेंगें, आपसे धैर्य्यवान्को आपसे ज्ञानीको मैं इस पत्रद्वारा क्या धैर्य्य दिला सकता हूं । फिर भी आप से प्रार्थना करता हूँ कि धैर्य्य करे विना इसके कोई उपाय नहीं ।

आपका शु. चि.
आत्माराम.

OM Sojitra, Date 11-1-19.

My dear Dr. Kalyan Dasji,

Namestay.

I learnt yesterday evening from daily Sangh Vartman of the 9th current, the heart rending news of the sad death of our revered and beloved Swami Nityanandji. It is a sudden and unexpected shock that has fallen like a hail stone on my mind, I had the opportunity of seeing the Swamiji while he was going to Broach on the Baroda Ry Stn. Thongh he was rather weak but it never occurred to my mind that he will die so soon. God's will must be done & there is no help for its It has given me entire satisfaction that you spared no pain. To attend and nurse him for days together on his sick bed. This speaks Volumes is favour of your pure Aryan heart.

When Shri Swami Vishwsharananadji is expected to reach Bombay? I am anxious to see him soon, kindly let me know his present address. The probable date of his arrival at Bombay on his arrival at Bombay I am sure to see him & your self.

We shall discuss about the will of Swamiji as I had the opportunity of disconssion with him for hours on Sadhu Ashram scheme, whiie he was at Baroda last year in the month of January.

Yours most Sincerely.

(Sd) Atmaram.

पंजाबके अन्य आर्य पुरुषोंसे भी स्वामीजीका पत्रव्यवहार और वार्तालाप यथावसर निरन्तर होता रहता था जिनमेंसे कतिपय नाम नीचे दिये जाते हैं।

(१) महात्मा हंसराजजी B. A. प्रधान डी. ए. वी कालेज.

(२) मिस्टर रोशनलालजी B. A. Bor-at-law

(३) चौधरी रामभजदत्तजी B. A. प्लीडर,

(४) भक्त ईश्वरदासजी M. A. advocate

(५) राय ठाकुरदत्तजी धवन रिटायर्ड जज

(६) लाला रलारामजी गुरुकुल गुजरांवाला

(७) लोकमान्य लाला लाजपतिरायजी

(८) कुंवर जनमेजयजी

(९) डाक्टर परमानन्दजी

(१०) मास्टर वजीरचंदजी आर्यमुसाफिर

(११) लाला साईदासजी,

(१२) मास्टर दुर्गाप्रसादजी लाहोर
(१३) लाला रामकृष्णजी जालन्धर
(१४) चौधरी जयकृष्णजी अमृतसर
(१५) पं. जगन्नाथजी निरुक्तरत्न
(१६) लाला कर्मचन्द्रजी सर्राफ अमृतसर
(१७) सर्दार गोपालसिंहजी अमृतसर
(१८) भाई रामसिंहजी दुआ, अमृतसर
(१९) लाला काशीराम वैद्य लाहोर
(२०) लाला बालकरामजी ठेकेदार लुधियाना,
(२१) बा. उमराव सिंहजी लुधियाना,
(२२) लाला जीवनदासजी लाहोर
(२३) लाला ठाकुरदासजी होशियारपुर
(२४) लाला गङ्गारामजी प्लीडर सियाल कोट
(२५) लाला देवराजजी कन्यामहाविद्यालय जालंधर इत्यादि

अब केवल मिस्टर रोशनलालजी बैरिस्टर, भक्त ईश्वरदासजी advocate आदिके दो एक पत्र और उद्धृत किये जाते हैं।

॥ ओ३म् ॥

लाहोर ११ नवम्बर १९०९

श्री १०८ श्रीस्वामी ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीको नमस्ते,

उत्तरमें देरीके लिए बहुत २ क्षमा माँगता हूँ, यह देरी कारणवशात् हुई है, पटियालामें अभी कुछ नहीं हुआ है, सब भाई खुश हैं; क्योंकि निरपराध हैं। पहली दिसम्बरतकमुकदमा चलेगा। सुना है कि कोई जाली चिठ्ठी बड़ोदा समाजके नामकी बनवाई है, पर झूठ अदालतमें न चलेगा, इटावे की तरह दूधका दूध और पानीका पानी हो जावेगा, सब भाई ईश्वरने चाहा तो छूट जावेंगें। आप कब लाहोर पधारेंगे कृपया जल्दी लिखिये, और आपके लेक्चरका क्या विषय होगा, आना अवश्यमेव चाहिए, ज्यादा नमस्ते।

शुभचिन्तक कृपापात्र

रोशनलाल

॥ ओ३म् ॥

लाहोर ।
ता. ११-११-१९१२

श्री १०८ श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्दजी व ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी महाराज,
नमस्ते,

कृपापत्र मिला धन्यवाद देता हूं, श्रीमान् महाराजाधिराज महाराजा बड़ोदासे आनरेबिल मिस्टर सिंहाके हमराह मिला था, महाराजा साहबको शायद यह मालूम नहीं है कि सिंहा साहब और मैं रिश्तेदार हैं । श्रीमान् महाराजा साहबसे जो मैंने निवेदन किया था वही श्री स्वामीजी महाराज तथा आपसे भी निवेदन है, कि आप वेदकी डिक्सनेरी बनाकर जब फ़ुरसत पावें तब दूसरा यह महान् कार्य हाथमें लें कि जितने पुराणादिक ग्रन्थ हैं उनमेंसे कूड़ा करकट छांट असली सोना वेदमतकी कसौटीपर कसके निकालकर अलहदा कर दें । जैसे ईसाइयोंने बाइबिलमेंसे authorised version अलग कर दिया और apochripha यानी जो माननीय नहीं है वह भाग अलग कर दिया इससे जो लाभ होगा सो विदित ही है । आप मुझसे अधिक सोच सकते हैं । मैंने श्रीमान् महाराजाधिराजको भी यही प्रेरणा की थी ।

आपका दास
रोशनलाल ।

॥ ओ३म् ॥

मसूरी
गार्डेन काटेज
९-६-९६

विद्वद्वर परमपूजनीय श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्द तथा ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी की सेवामें सविनय नमस्तेके पश्चात् निवेदन है कि श्रीयुत बड़ौदाधीश इस वर्तमान मासके अन्ततक यहांसे चले जावेंगे । जहांतक मुझे जान पड़ा है उनकी स्थिति इस स्थानमें २० जून तक अवश्य रहेगी । तत्पश्चात् अर्थात् २१ से ३० जूनतक वह यहांसे चले जावेंगे ।

आपकी आनेकी यदि अभिमति हो तो आप मेरे स्थानपर ठहर सकते हैं । परन्तु आपको इसमें इतना खेद अवश्य होगा कि मेरा स्थान बाजारसे जिसके

निकटमें बड़ौदाधीश ठहरे हैं ३ मीलसे कुछ अधिक है । मुझे इस स्थानका प्रबन्ध करना इस कारण पड़ा कि मेरा दफ्तर इसी तरफ है ।

आपका
रलाराम,
(एक्जीक्यूटिव इंजीनियर ।
E. B. S. Ry. Rai Bahadur C. E. इत्यादिना

॥ ओ३म् ॥

श्रीस्वामीजी नमस्ते ।

निवेदन है कि मैं लाहोरसे यहांपर कुछ दिनोंसे आया हुआ हूं और कुछ दिन यहीं ठहरूंगा । जब मैं सिमले आया था तो आपकी कोठी पर भी दर्शनोंके लिये गया था, मगर आपके दर्शन न हुए । मेरा बिचार जो यहांपर तपोवन है उस जगह एक आश्रम खोलनेका है जिसमें कोई गृहस्थ ब्राह्मण रहकर वैदिक कर्म यज्ञ आदि करे और लोगोंमें भी प्रचारार्थ वैदिक कर्मका सुयोग्य जनोंको सिखावे ।

इस समय मैं सिमले नहीं आऊंगा । लौटते समय अगर आप दर्शन दें तो बहुत अनुग्रह हो, और आजकल मैं पंडित हरिनन्दके साथ कुछ यजुर्वेदका अवलोकन करता हूं परन्तु उसमें उन कोशोंकी हमें जरूरत है जो कि प्रकृति प्रत्यय दिखलाकर शब्दोंके अर्थ लिखते हों । व्युत्पत्तिलभ्य अर्थकी अधिक आवश्यकता है सो आप कृपया उन पुस्तकोंकी लिष्ट लिखें जो कि हमें इस कार्य्यमें मददें और कहांसे मिल सकेंगी यह भी लिखें ।

आपका कृपाभिलाषी भक्त ईश्वरदास,
रावलपिंडी ।

॥ ओ३म् ॥

कन्या महाविद्यालय
जालंधर नगर ३-१०-१०

श्री स्वामीजी महाराज ।

नमस्ते—आपको स्त्रीशिक्षासे और विशेष करके इस संस्थासे पहिलेहीसे प्रेम रहा है, और हम सबकी यह इच्छा रही है कि आपके अनुभवसे लाभ उठाया जावे । अतःआपकी सेवामें निवेदन है कि आप सिमलेसे लौटते हुए

अवश्य ही इस महाविद्यालयको देखनेके लिये समय निकालें और अम्बालेसे इस ओर एक दो दिनके लिये अवश्य आवें। आप जैसे महान् पुरुषोंकी संगतिसे लाभ अवश्य होगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप हमको इससमय निराश न करेंगे।

आपका दर्शनाभिलाषी **जेठामल** मंत्री।

Dharampura Delhi.
19th June, 1909.

Sri Swami Brahmchariji Maharaj Nityanandji,

Namaste,

Many thanks for your kind letter, × × × × × Perhaps you know that a great ceremony of purification (Shudhhi) of an English gentleman who was a captain in his Majesty's army and is a resident of Scotland is going to take place from the 25th to 28th instant. We invited you verbally on behalf of the Samaj on the occasion of your last visit to Delhi and I invite you again on behalf of the Samaj and myself. It is expected that you will honour us on the occasion by your graccius presence as the gentleman who is going to embrace the vedic religion is anxious to see the Rishis and Munis having read and heard much of the mahatmas of yore. I shall be highly obliged if you kindly express your willingness by return of post so that I may make every arrangement for your convenience in my Bungalow.

Yours fraternally,
(Sd) Girdharilal,
Delhi.

आर्य्य सिद्धान्तोंका प्रचार अभीतक भारतके पंजाब, युक्तप्रान्त, राजस्थान आदि हिन्दीभाषी प्रान्तोंमें ही (बंगाल बम्बई मद्रास आदि प्रान्तोंकी अपेक्षा) अधिक हुआ है। कारण आर्य्य भाषाको छोड़ कर अन्य भाषाओंमें आर्य्य साहित्य नहीं के समान है। आर्य्यउपदेशकोंका तो नितान्त ही अभाव है, चारो ओर दृष्टि फैलाने पर भी आर्य्य भाषाके अतिरिक्त अन्य भाषा में वक्तृता देनेवाले उपदेशक नहीं मिलते, ऐसी दशामें जो विद्वान् अंगरेजी आदि भाषाओंमें आर्य्य साहित्यका प्रचार करनेमें प्रयत्नशील हैं उनकी इन सेवाओंके लिये आर्य्य जगत् अत्यन्त आभारी है।

इसी प्रकारके नर रत्न पंडित गंगा प्रसादजी M. A. डिपूटीकलेक्टर हैं। आप के रचित Fountain head of religion और Caste syetem ये दो

ग्रन्थ अपने ढंगके निराले ही हैं। श्री स्वामी नित्यानन्दजी महाराजके प्रति आप की भी अत्यंत श्रद्धा थी। सामवेद भाष्यकार, संयुक्त प्रान्तकी प्रतिनिधि सभाके प्रधान, गीता, उपनिषदादिके सुप्रसिद्ध व्याख्याता स्वर्गवासी श्री पंडित तुलसीरामजी स्वामीके हृदय में स्वामीजीके प्रति जो भाव थे वे उनके आगे उद्धृत पत्रोंसे पाठकों को विदित होंगे।

इसी प्रकार प्रायः सब ही संयुक्त प्रान्तके सुप्रसिद्ध आर्य्य सज्जनोंसे स्वामी जीका सुहृद वर्ताव था। जिनमें, रायबहादुर बाबू आनन्दस्वरूपजी कानपुर, बाबू ज्योतिः स्वरूप जीं देहरादून, पंडित भोजदत्तजी शर्मा आगरा, लाला सालिगरामजी वकील आगरा, पंडित केशवदेवजी शास्त्री M. D. काशी, साहू श्याम सुन्दरजी मुरादाबाद, पंडित भगवान् दीनजी, श्रीयुत मदन मोहन जी सेठ M.A.LL.B मुंशी नारायण प्रसादजी बा. व्रजनाथजी B. A. आदिके नाम विशेष उल्लेख योग्य हैं हम यहां अधिक विस्तारसे न लिखकर उपर्युक्त महानुभावोंके कतिपय पत्र और पत्रांश जो उन्होंने स्वामीजीके प्रति और मृत्युपर लिखेथे उद्धृत करते हैं।

॥ ओ३म् ॥

अन्दरकोट
मेरठ शहर
१७–९–०४

मान्यवर स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी तथा ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी नमस्ते।

× × × × × × × × एक दूसरी प्रार्थना है, लगभग ५ वर्ष हुए, मेरा विचार एक अंगरेजीपुस्तक लिखनेकाया, जिसका विषय यह है कि वेदही अपौरुषेय और सब धर्मके मूल पुस्तक हैं। संसारमें जितने मतमतान्तर हैं उनमें जो सत्य है वह सब वेदोंहीसे लिया गया है। मैंने आधीसे अधिक पुस्तक लिख भी ली थी शेष आधी या तिहाई तब से वैसे ही पड़ीरही अवकाशवश अब मेरा विचार उसकी पूर्ति करके छपवानेका है। उसके लिये जन्द अवस्थाकी जो पार्सियोंकी धर्मपुस्तक है आवश्यकता है। उसका अंगरेजीमें जो अनुवाद (Sacred books of the East Series में) छपा है वह मैंने कुल पढ़ा है और उसके नोट लेलिये हैं। पर मुझको असल जन्द भाषाके ग्रन्थकी आवश्यकता है। चाहे गुजराती अक्षरोंमें हो वा फारसीमें। यदि यह ग्रन्थ न हो तो केवल एक भागसे भी काम हो जायगा। उसके

साथ यदि उसका अनुवाद हो तो और भी अच्छा है। आप अपने भ्रमणमें किसी पारसी महाशयसे पूछके लिख सकते हैं कि वह ग्रन्थ कहां मिल सकता है। यदि कोई महाशय अपना निज ग्रन्थ आपके द्वारा दे सकें तो मैं थोड़े समयमें लौटा दूँगा। आशा है कि आप इसमें उद्योग करेंगे जिससे मैं चिर बाधित रहूंगा।

आपका दयापात्र
गङ्गाप्रसाद
डिप्टीकलक्टर लैन्सडाउन (गढवाल)

॥ ओ३म् ॥

कैम्प (गढवाल)
८—२—०४

परममान्य महोदय ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी नमस्ते—

× × × × × मैं अपनी वेदविषयक पुस्तक जिसका पहले पत्रमें कुछ वर्णन किया था लिख रहा हूं। × × × × यदि आप जानते हों तो यह भी कृपया लिखिये कि **आजकल** पार्सी लोग (१) पुनर्जन्म को मानते हैं या नहीं और (२) मांस भक्षण को कैसा समझते हैं। कृपया उत्तरसे अनुगृहीत कीजिये, क्या आप गुरुकुल कांगडी के उत्सवपर पधारेंगे? यदि ऐसा हो तो अहोभाग्य; क्यों कि मेरा भी जानेका विचार है, आप के दर्शन-लाभ हो जावेंगे।

आपका दयापात्र
गङ्गाप्रसाद

॥ ओ३म् ॥

गढवाल
कैम्प (लछमन झूला)
२४ फरवरी १९०४

विज्ञातिविज्ञ मान्यवर महोदय श्रीस्वामीविश्वेश्वरानन्द तथा ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी नमस्ते—आपका १६ ता. का कृपापत्र पहुंचा × × × × × जन्दावस्ताके लिये जो आपने उद्योग किया सो भी बडा अनुग्रह किया, पर इतना लिखना उचित समझता हूं कि मुझको जन्दावस्ताके किसी प्राचीन भाग की आवश्यकत

है, जैसे गाथा या बन्दीदाद आदि संपूर्ण ग्रंथ चाहे न हो एक भाग से काम चल जायगा पर मूल देखना चाहता हूं। यदि रोमन अक्षरोंमें हो तो अच्छा है। नहीं तो उर्दू या गुजरातीमें सही साथ ही उसका भाषान्तर हो तो अच्छा है। × × मेरे योग्य कार्य हो तो अवश्य लिखिये।

कृपाभिलाषी

गङ्गाप्रसाद।

॥ ओ३म् ॥

गोरखपुर

१९-८-६

मान्यवर महोदय नमस्ते।

छ माससे मेरी बदली गोरखपुर को हो गई है। आपका ९ ता. का पत्र गढ़वाल से यहां प्रेरित होकर मेरे पास कल पहुंचा, इस से पूर्व एक पत्र बम्बई आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्रीजीका आर्य प्रकाश के लेखसहित आया।

आर्य्यपत्रिकाका लेख भी मैंने देखा है। यह आप लोगोंका सौजन्य है, जो मुझको इस कार्य्यके योग्य समझा; पर मैं वास्तवमें ऐसे महत्कार्यके योग्य नहीं, इसके अतिरिक्त मैंने सामाजिक पत्रोंको छोड़ कर और किसी समाचारपत्रमें जापानमें धर्मान्दोलन विषयका समाचार नहीं पढा, एक बेर एडवोकेटमें अवश्य पढा था। पर उसमें यह भी छपा था कि अलीगढके कोई मुसलमान विद्वान् वहां गये तो उन्होंने कोई विशेष आन्दोलनकी चर्चा वहां नहीं पायी, एक दो साल हुए तब भी ऐसीही चर्चा उठी थी, स्वामी रामतीर्थजी जापान गये पर केवल झूठी जनश्रुति पाई गई। पं० रामभजदत्त और डा० परमानन्द भी वृथा लाहोरसे बम्बई तक गये थे। यह ज्ञात नहीं होता कि इस बेर अवश्य ही कोई धर्मान्दोलनकी सभा जापानमें होगी इसका कैसे निश्चय हुआ, मैंने बम्बईसे भी पूछा है, यदि आपको ज्ञात हो तो कृपया सूचित कीजिये। यह भी लिखिये कि यदि सभा होगी तो उसका प्रोग्राम क्या निश्चित हुआ है। केवल व्याख्यान होंगे–जैसे चिकागोमें हुए थे–या कुछ विचार या संवाद भी होगा, यह सभा कब होगी, कितने दिन रहेगी–इत्यादि.

यहां मुझको अधिक पत्र देखने नहीं मिलते, कृपया यह भी लिखिये कि लाला

हंसराजजी आदिका कैसा विचार है। वे लोग अधिक विचार करके कार्य्यमें उद्यत होते हैं। सभाचाहिहो पर यहबात कम समझमें आती है कि जापानी लोगोंने इस लिये यह सभा कराई हो कि उसके विचार वा परिणामके अनुकूल धर्म अङ्गी-कृत करें। मैंने अपना पुस्तक अंग्रेजीमें समाप्त करके छपनेको पं. विष्णुलाल शर्मा M. A. के पास भेज दिया है। जब तक अंगरेजीमें न छप जावे जापानीमें उसका होना भी दुःसाध्य है। मैं पंडित विष्णुलालजीको लिखता हूं कि यथा सम्भव जल्दी छपनेका उद्योग करें। शोककी बात है, आर्यसमाजके लिटरेचरमें अंगरेजीके पुस्तक बहुतही कम हैं।

सत्यार्थप्रकाशके दो समुल्लास ७ म वा अष्टमका यदि जापानीमें अनुवाद हो सके तो अच्छा है पर १३ वा १४ समुल्लासकी मेरी मसझमें ऐसी बड़ी आवश्यकता नहीं है।

भवदीय

गङ्गाप्रसाद।

श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराजकी मृत्युपर स्वामी तुलसीरामजीके कष्टका अनुमान निम्न ३ पत्रोंके पाठसे हो सकेगा।

॥ ओ३म् ॥

१०-१-१९१४

हा हतोस्मि! यह दुर्घटना, जिसने स्वामीजी नित्यानन्दजीका हमसे सदाको बिछोहा होगया, न केवल मेरे जैसे उनके कृपा भाजनोंको किन्तु सारे देश और वैदिकधर्मको एक सुचिरकालिक घातक धक्का है। आर्योंके पाप अभी इतने कम नहीं हो गये कि उनको ऐसे दुःखोंका सामना न करना पड़े।

हा! अब कौन आन्तरिक और बाह्य विघ्नोंसे वैदिक धर्मको बचाने और देशके श्रीमानोंको स्पष्ट परन्तु सम्मानसहित सदुपदेश देनेके लिये समर्थ होगा। श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीको अब धैर्य्यके साथ उनके शेष कार्य्यको हाथमें लेना चाहिए। विशेष मनको संभाल कर लिखूंगा।

तुलसीराम स्वामी।

॥ ओ३म् ॥

१२-१-१४

श्रीस्वामी श्रीविश्वेश्वरानन्दजी महाराजकी सेवामें ।

सदुःख नमस्ते ।

श्रीस्वामीजीके स्वर्गारोहणसे, उन्होंने तो अपना कर्तव्य यहां भी पालन किया, वहाँ भी तज्जन्य उत्तमफलभागी हुए, हा, हम अपने कर्मोंके फल-भोगार्थ न जाने कबसे यमराज की ताकमें थे परमात्माकी इच्छा। आपको ऐसा सहचर अब कहाँ ? भारतीय राजाओ अब ऐसा स्पष्टभाषी उपदेशक कहाँ ? सब मन्दभागी हैं । क्या करें। श्रीमन् अब उनके शोकका अन्त नहीं लग सकता ! आप विद्वान् और परोपकारी हैं । उनके आरम्भ किये वेद-कोषादिके कार्यका भार आप पर अनिष्टहीं आ पड़ा उसे मुम्बईमें एक सभा करके, डाक्टर देसाई आदि सज्जनोंको व्यवस्थित करना चाहिए। वे आपके और परमपद्गत स्वामीजीके कार्यमें सेवासे विमुख न होंगे । तथापि उनसे कहिए कि जो कार्य मेरे योग्य हो मैं भी उपस्थित हूँ। स्वामीजीकी यादगार उससे ज्यादा क्या होगी,

तु. रा. स्वामी ।

॥ ओ३म् ॥

१२—१—१४

श्री डाक्टर साहब नमस्ते

कहते लिखते शोकसे कलम विचलती है, उस दिन कार्ड भी कठिनतासे लिखा गया, तार लिखनेवाला पास न था, मेरठ में आज भारी शोक सभा है, सारे देशमें रुदन मचा है और मचेगा पर स्वामी नित्यानन्दकी छबि अब कहां ।

गुरुकुल नासिक, विद्यासभा, सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा, आर्य्य प्रतिनिधि सभाएं, आर्य्य समाजें, सब देखतेही रह गये, हा हताः स्मः ॥

अब आप उस प्रान्तके विशेषतः और अन्य प्रान्तोंके भी विद्वान् पुरुषोंको जमाकरके स्वामीजीके छोडे कार्य्य खासकर वेदकोषकी पूर्त्यर्थ तथा उनके स्म-र्णार्थ सभा करें.

श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीको दुसरा पत्र दीजिये और उनसे मेरी प्रार्थना कीजिये कि धैर्य धारकर शेष कार्यमें बद्ध परिकर हों ।

कोषमें क्या और कहां २ तक कार्य्य हुआ है। सभा करनेके पूर्व स्वामीजी महाराज खोज करके संपादन करावें ऐसी प्रार्थना है।

तु. रा. स्वामी

श्रीमान् पंडित भोजदत्तजी शर्मा सम्पादक मुसाफिरका शोक सहानुभूति प्रदर्शकपत्र।

॥ ओ३म् ॥

दफतर मुसाफिर आगरा।
१५-१-१४

श्रीमान् पूज्यपाद श्रीस्वामीजी महाराज नमस्ते श्रीस्वामी, आज जो क्लेश सामाजिक दुनियामें मेरे परम हितकारी मान्य श्रीस्वामी नित्यानन्द सरस्वतीजी महाराजकी जुदाईसे होरहा है वह मैं कमजोर क्या लिख सकता हूं या जो नुक़सान आर्य्यसमाजको श्रीमान्के बिछुडनेसे हुआ है उसका लिखना मेरी ताकतसे वाहर है, सामाजिक लोगोंकी हाय हाय बतला रही है कि जो दो वर्षसे धक्के लग रहे हैं उनको सबसे सहती रही मगर यह जबरदस्त धक्का नाकाबिल बरदाश्त है और खास कर आपको जो अपने सुयोग्य व काबिल फख्र शिष्यके वियोगसे दुःख प्राप्त हुआ है, उसको आपकी आत्माके सिवाय दूसरी आत्मा कब अनुभव कर सकती है। श्री स्वर्गवासीजीका अन्तिम बार आगरेमें आकर मेरे अपवित्र घरको पवित्र करना और मुझको घरपर न पाकर बार २ मुझको याद करना और मेरे कुटुम्बका तुच्छ भोजन करके अपनी प्रसन्नतासे कृतार्थ करना मैं अभागी जो घर आये देवताके दर्शनोंसे महरूम रहा जिन्दगी भर न भूल सकूंगा, क्या मैं अब अपने प्रेमी बुजुर्गके दर्शन कर सकता हूं? नहीं। फिर मैं ऐसे बुजुर्गकी जुदाई और अपनी दुर्भाग्यता पर क्या करूं। कुछ नहीं कर सकता हूं, अगर कुछ कर सकता हूं तो यह कि सब शान्तिकी भारी शिला छाती पर रखकर अपने उस कुटुम्बसहित जिसे वो विशाल मूर्ति अपनी मधुर वाणी, और अपनी महात्मा वृत्तिसे उनकी आत्माको मोहित कर गये हैं उस कुटुम्बसहित आपके रुदनमें सम्मिलित होता हूं और सच यह है कि दुनियाका रोना धोना तो दो दिनका है मेरी आत्मा तो उस परम हितकारीके लिये सारी उम्र रोती रहेगी। ईश्वरसे प्रार्थी हूं कि परमात्मा उस परमहंसके दर्शन करावे और आप उनपर जैसी

कृपादृष्टि रखते थे हम निरक्षरोंकी आशाओंको पूर्ण करके कृतार्थ करते रहें ताकि अशान्तचित्तको शान्ति होती रहे । बस और क्या लिखूं ।

आपका
भोजनदत्तशर्मा ।

रायबहादुर बाबू आनन्द स्वरूपजी कानपुरका पत्र

Cawnpur, 13-2-14.

Poojyavar Swami Visheshwaranandji,

Many thanks for your kind letter of congratulation on the coufirmation of the title which I never coveted for and which I believe I hardly deserved. I owe it to the kind wishes of my elders and friends rather than to any merits of my own.

I cannot confess in words how keenly sorry I feel for the los the Arya samaj has suffered in the death of the venerable Swami Nityanandji. It was in November last that I had the good fortune of meeting him and he was pleased to stay at my place. I noticed that some thing was wrong with his lungs but I never thought that the worst was in store and the cruel hand of death will separate the Swami from us for ever. May God bless his soul and give you strength to overcome the grief and shock you have suffered.

Yours obediently,
(Sd) Anand Swaroop,
Pleader.

श्रीमान् नारायणदासजी, M. A.

(Retired Divisional Judge)
Judicial Secretary,
H. H. the Maharajah Alwar.
Camp Rajgarh,
Alwar state.
13 January, 14.

Shreeman Swamiji,

It is with the profoundest grief and most heartrending shock that I have read in the Arya Patrika of the passing away so suddenly of Brahmcharee Nityanandji your lifelong companion and co-adjutor and the universally respected preacher of the Arya Samaj. Little I knew when he honoured me with his visit in October last that it

would be the last occasion when I would see him in this world and sit at his feet to profit by his learning and his sage counsel and his soulstirring updesh; One by one the old pillars of the Samaj are giving way-quitting for, us for ever what place can never be filled, Such is the world and such is God's will and we have to bow before His Divine Decree. But the passing away of such good souls cannot but engender feelings of pain and anguish in those who had the privelege of coming across them.

This loss is the loss of the whole country. But yet he was so dear to you. I write this letter to assure you how deeply I have been pained to hear this most stirring news.

May his soul rest in peace.

Yours with all
respect and admiration, sincerely,
Narayandas,

श्रीमान् ज्वाला सहायजी सेसन्स जज—लुधीयानाका पत्र

Indhiana,
Jan. 28–1914.

My dear Swami Vishweshwaranandji,

I have been extremely sorry to hear of the death of Swami Nityanandji. A general mourning has been observed in various parts of India which is decidedly a great tribute to his ascetic life and scholarly attainments. By his death the cause of Sanskrit literature has suffered much and it is a pity that he left his works unprinted specially the vedic lexicon. I was very much impressed with what I saw of him at Simla and I shall decidedly miss him much.

You must be feeling very much depressed but you are thoroughly aware of the uncertainty of human life. May God give you courage to bear up this loss.

Yours Sincerely
Jwala Sahay.

श्रीमान् स्वामीजी महाराजको समाजोंके वार्षिकोत्सव पर पधारनेकी प्रार्थना सम्बन्धी १०–२० पत्र प्रायः नित्यही मिला करते थे। उनमें स्वामीजीसे उत्सव-पर पधारनेके लिए किस प्रकारकी आवश्यकता प्रकटकीजाती थी उसका एक उदाहरण तो श्री पंडित पूर्णानन्दजी हेड उपदेशक पंजाब प्रतिनिधि सभाके उपदेशकका पत्र है (जो इससे पूर्व अन्यत्र मुद्रित हो चुका है।) यहां हम उदाहरणस्वरूप और दो चार पत्र उद्धृत करते हैं।

॥ ओ३म् ॥

आर्य समाज
बुलन्दरशहर ९–१०–१२

श्रीमान् स्वामीजी महाराज—नमस्ते,

आपका कृपापत्र ता० ९–१०–१२ का प्राप्त हुआ, पढ़ कर खेद हुआ कि आप अभी निश्चित नहीं करते हैं कि यहां पधारेंगे। मुझे यह बतानेकी आज्ञा दीजिए कि यहां आपके वायदेसे जो श्रीमान्ने देहलीमें दिया था बड़ा हर्ष हुआ था, और सभासदोंके जी बढ़ गये थे और बहुत सारे नगरनिवासियोंको यह शुभ समाचार सुनाकर उनके चित्तकों प्रफुल्लित कर दिया था। अब उनसे यह कहना कि श्रीमान् नहीं पधारेंगे उनके चित्तको दुखाना होगा। यहां बिलकुल उत्सवकी शोभा श्रीमानोंके न पधारनेसे जाती रहेगी। समाजने खूब यत्न करके ४००) से अधिक जमा कर लिया है और कुछ और भी हो जावेगा। आप लिखिये कि श्रीमान्को इस समय सफर खर्चके लिए क्या भेज दिया पावे।

श्री स्वामी धर्मदेवजीको मैंने लिखा था उन्होंने इसी शर्तपर कि आप पधारेंगें आना स्वीकार कर लिया है। ४०) उनको मनी आर्डरद्वारा भेज दिये गये हैं। आप से बारम्बार प्रार्थना है कि श्रीमान् अवश्य पधारने की कृपा करें। अन्यथा नगरनिवासियोंकी बडी निराशा होगी। आशा है आपका कृपा पत्र चित्त प्रसन्न करनेवाला शीघ्र प्राप्त होगा।

दर्शनाभिलाषी–मदन मोहन सेठ।

सब सभासद् भी इस समय यहां उपस्थित हैं वह भी सविनय निवेदन करते हैं कि श्रीमान् अवश्य पधारनेकी कृपा करेंगें।

म. म. सेठ

॥ ओ३म् ॥

संख्या ११५ ता. २।१२।०२

कार्यालय श्रीमती आर्य्यप्रति निधिसभा संयुक्त प्रान्त व अवध महाशयवर नमस्ते।

आपका कृपापत्र आया। निवेदन है कि आपका काशी जाना अत्यन्तही आवश्यक है, वहांका वार्षिकोत्सव भी निश्चित हो गया है। उन्हीं तारीखोंमें होगा जो कुछ भी प्रोग्राम बनावें उसमें बनारस को अवश्य स्थान मिलना चाहिये मुझे

लिखनेकी आवश्यकता नहीं है कि यदि अधिवेषनकी कार्यवाहीमें कुछ भी त्रुटि हुई तो संपूर्ण सामाजिक दुनियापर बुरा असर पड़ेगा। अवश्य पधारनेका संकल्प कीजिये और स्वीकारीसे सूचना दी जिये ताकि फिकर दूर हो।

भवदीय श्यामसुंदर
मंत्री सभा

॥ ओ३म् ॥

सं. १९५७ ता. १०।१२।०२ बनारस

श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराज

भगवन् नमस्ते।

आपका पत्र आज प्राप्त हुआ, पढ कर अत्यन्त खेद हुआ। कोई न कोई ऐसा कारण अवश्य होगा कि जिससे आप बनारस चलनेमें रुकावट प्रतीत करते हैं। अन्यथा आप अपने पत्रमें इस प्रकार कभी न लिखते, परन्तु तो भी मैं यह अवश्य कहूंगा कि आपके बनारसके अवसर पर उपस्थित होनेसे जो शुभ परिणाम निकलेगा वा आपके इस अवसर पर न होनेसे जो कुछ हानि हो सकती है वह अपनी गुरुतामें आपके किसी अन्य स्थानमें उन दिवसोंमें होनेके लाभ वा न होनेकी दशामें हानिसे कदाचित् अधिक निकलेगी, यह ठीक है कि मेरे लिये इस प्रकार न्यूनाधिक बतलाना इस हेतुसे किसी अंशमें साहस मात्र है कि मैं आपके सरकमस्टैन्सैजसे अभिज्ञ नहीं हूं परन्तु बनारसके अवसरपर आपके होने न होनेसे क्रमशः लाभहानिकी संभावनाको मैं अवश्य पूर्ण रीतिपर अनुभव कर सकता हूं। और कह सकता हूं कदाचित् ही यदि आप पुनः विचारेंगे तो बनारसके अवसर पर आनेके संकल्पमें विकल्प करनेका स्थान प्रतीतहो।

लिखनेकी आवश्यकता नहीं है कि प्रत्येक कार्य्यके लिये एक विशेष पुरुष होता है और प्रत्येक पुरुषके लिये एक विशेष कार्य्य, आप कृपया विचार दृष्टिसे देखें और बतलावें कि आपकी उपस्थितिकी न्यूनताको सर्वांशमें किस प्रकार आपकी उपस्थितिके बिना दूर किया जा सकता है। अतएव आप निश्चय रखिये कि बनारसके अवसरकी आवश्यकताकी दृष्टिसे जिसे आप भी अवश्य अनुभव करते होंगे और जिसके लिये मेरे पास बीसियों स्थानोंसे पत्र आ रहे हैं कि सामाजिक सम्पूर्ण महापुरुषोंका इस अवसर पर होना अत्यन्त

आवश्यक है। मैं आपकी स्वीकृतिके लिये वैसे ही आशापूर्वक लिखता हूं। जैसे कि पहले पत्रमें आशा प्रकट की थी, मुझे विश्वास है कि इसके पहुँचनेसे प्रथम ही कदाचित् आपने बनारसका संकल्प कर लिया हो। अन्यथा इस पत्रके पहुँचनेपर उत्तरमें आप अवश्य अपनी गमनसंकल्पसूचनासे मुझे वर्तमान खेदसे निकालकर हर्षित करेंगे। यदि २५ दिसम्बरके दोपहर व शामतक भी आप पधारेंगें और केवल २६ दिसम्बरको वहां निवास करेंगे तो भी सारे कार्य्य ठीक हो जावेंगें।

मंत्री.

॥ ओ३म् ॥

आर्यसमाज सियाल कोट

८।४।१२

पूज्यपाद श्रीस्वामीजी महाराज !

विनयपूर्वक नमस्तेके पश्चात् निवेदन है कि आर्यसमाज स्यालकोटका वार्षिकोत्सव २६, २७, २८, २९ अप्रेल अथवा १५, १६, १७, १८ वैशाख संवत् १९६९ को होना नियत हुआ है, जिसका विज्ञापन समाचारपत्रोंमें दिया गया है। सियालकोटमें सिक्खोंका बड़ा भारी उत्सव हुआ है जो आज समाप्त होगा। इस अवसरपर उनको एक लाख रुपयेके लगभग दान भी प्राप्त हुआ है और प्रचार भी बड़ा भारी हुआ है। उन्होंने अर्थात् सिक्खोंनें इस अवसरपर वक्तृता अथवा दयानन्द चरित्र आदि अनेक पुस्तकों अर्थात् ट्रैक्टोंके बांटनेसे आर्य्यसमाजके विरुद्ध अत्यन्त पुरुषार्थसे काम किया है। अब सर्वसाधारणकी आँखें आर्यसमाजके वार्षिकोत्सव पर लग रही हैं कि देखें आर्यसमाज उस विषयके दूर करनेका जो कि सिक्खों तरफसे आर्यसमाजके विरुद्ध फैलाया गया है क्या उपाय करता है। अतः श्रीमानोंकी सेवामें जो **आर्य्यसमाजके सच्चे रक्षक और हितैषी हैं** अत्यन्त नम्रतापूर्वक सविनय प्रार्थना की जाती है कि कृपया उत्सवमें पधार कर आर्य्य पुरुषों और सर्व साधारणको जो कि श्रीमानोंके व्याख्यानरूपी अमृतरसके लिये अत्यन्त पिपासा व व्याकुलता प्रकट कर रहे हैं कृतार्थ करें। बड़े २ शहरों पर तो श्रीमान् कृपा करते ही हैं। अबके सियालकोट और जिलेके अन्य ग्रामीण श्रद्धालु आर्य सेवकों पर भी कृपादृष्टि कीजिये। श्रीमान् परिव्राजकाचार्य्य हैं और समस्त मनुष्य श्रीमानोंकी प्रजा हैं। अतएव

श्रीमानोंको सारी प्रजाका एक जैसा अधिकार मानते हुए सब पर एक जैसी दृष्टि रखते हुए किसीको भी निराश नहीं करना चाहिये। इस लिये हमें पूर्ण आशा है कि हमें भी निराश नहीं करेंगे। किन्तु हमारी व्याकुलताको दूर करनेके लिये पत्रप्राप्तिपर अति शीघ्र स्वीकृति प्रकट करके कृतकृत्य करेंगे।

उत्तराभिलाषी दास,
गंगाराम प्लीडर.।
मंत्री आर्य्यसमाज, सियालकोट.

॥ ओ३म् ॥

५७१ आर्य समाज लाहोर

सेवामें

श्रीमान् स्वामी विश्वेरानन्द तथा ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी हैदराबाद (दक्षिण) महाशयजन नमस्ते।

आर्य्य समाज लाहोरका १७ वां वार्षिक उत्सव २४ तथा २५ नवम्बर ९४ को होना करार पाया है। आपकी सेवामें निवेदन है कि आप इस मौके पर इस समाजके सभासदों और लाहोरके लोगों और बाहरसे आये हुए विद्वान् पुरुषों तथा राजाओं आदिको अपने मनोहर व्याख्यानोंसे आनन्दित करें। आपको शायद ज्ञात है कि इस उत्सवके बाद याने उन्हीं दिनोंमें हिन्दुस्थानके बड़े लाट लाहोरमें आकर दर्बार करेंगे, उस मौके पर पंजाबके सब राजा यहीं होंगे। इस लिए आप जैसे विद्वानोंका उत्सवके समय पर यहां होना अत्यन्त आवश्यक है। आशा है कि आप जरूर कृपा करेंगे और अपने शुभागमनकी तिथिसे मुझे सूचित करेंगे।

आपका, आर्य्य भाई।
केदारनाथ थापर
मंत्री
बछोवाली आर्य्य समाज लाहोर.

॥ ओ३म् ॥

सं० ५५ १५-१-९६
आर्यसमाज, लाहोर,

श्रीयुत मान्यप्रद परम सुयोग्य ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी नमस्ते,

प्रार्थना है, कि यहां शारदा मठके महन्तजी जो शंकराचार्य्यके नामसे प्रसिद्ध अपनेको कहते हैं और जगत्गुरु भी स्वयं बने हैं हिन्दुओंमें प्रतिष्ठा उक्त

स्वामीकी बहुत है आये हैं, सो कृपा करके यदि आप यहां आना स्वीकार करें तो आर्य्यसमाज लाहोर शास्त्रार्थ करनेके लिये तत्पर होवे । आपके आनेकी अत्यन्त आवश्यकता है। कृपा करके पत्रोत्तरसे कृतार्थ करें।

आपका शुभचिन्तक
केदारनाथ थापर
मंत्री आर्य्यसमाज लाहोर

सं० ७७ ता. ३१-१-९६

आर्य्यसमाज लाहोर

सेवामें

श्रीमान् स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी और श्रीमान् ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी उदयपुर महामान्यवरजी नमस्ते।

आपका पत्र आया समाचार ज्ञात हुआ, श्रीस्वामी शङ्कराचार्य्यजीके साथ यहां लाहोरमें लेक्चरोंकी छेड़ छाड़ हो रही है और शास्त्रार्थके लिये भी ख़त किताबत होरही है इस वास्ते आपके व्याख्यानोंकी लाहोर जैसे शहरमें ऐसे मौके पर बहुत ही आवश्यकता समझी गई है । क्योंकि आप जैसे विद्वानोंके लेकचरों और उपदेशोंकी अधिकतासीर होती है इस वास्ते आप दोनों महात्माओंकी सेवामें साविनय निवेदन है कि आप कृपा करके पत्र देखते ही लाहोर पधारें और आगमनकी इत्तिला दें । आपके इस अनुग्रहका समाज अतिशय धन्यवाद करेगी ।

आपका आर्य्य भाई
केदारनाथ थापर
मंत्री आ. स. लाहोर

॥ ओ३म् ॥

पिशावर
१-१-९६

श्रीमान् कृपालुजी नमस्ते,

ईश्वरकी कृपासे अब श्री स्वामीजी दयानन्द सरस्वतीजीके पश्चात् केवल आप के आसरे समाजोंकी उन्नति और वैदिक मतका यथार्थ प्रचार है । और आपका परिश्रम, नम्रभाव, निरभिमानता से प्रचार-व्याख्यानशक्ति विद्या सूर्य्य-

वत् प्रकाशमान् हैं—कृपा करके इस प्रान्तके समाजोंमें एकबार अब समीप आ चुके हैं—दर्शन देवें और सत्य प्रचारसे इस प्रान्तके जीवोंको सफल करें।

आपका दर्शनाभिलाषी
सीताराम
मंत्री

लाहोर २४–११–९४

महाराज स्वामीजी तथा ब्रह्मचारीजी नमस्कार,

आपके दो पत्र आये मैनें समझा आप वहांसे चले गये होंगें इस कारण उत्तर नहीं दिया सो क्षमा करेंगे। निस्सन्देह आप ही सम्प्रति आर्य्यधर्मके स्तम्भ हैं। नहीं तो हम लोगोंकी बहुत ही दुर्दशा होती। हम लोगोंके लिए आप ऐसा क्लेश सहते फिरते हो, उत्सवपर आपके दर्शन नहीं हो सके। भगवत् फिर कभी आपके चरणाविन्दके दर्शन करावेगा, यहां स्कूल बनाया है जिसमें वेदके मंत्र ४०० लड़कोंको पढाये जाते हैं। आपका भेजा हुआ विद्यार्थी उसमें पढता है।

चरणसेवक
दुर्गाप्रसाद

मद्रास, बम्बई, बंगाल और बिहार प्रान्तमें जिस अतिकालतक आर्यसमाजका प्रचार श्रीस्वामीजी महाराजने किया उसका वर्णन जीवन चरित्रके पृष्ठोंमें यथास्थान आचुका है। बम्बईमें तो स्वामीजीने अपना वह प्रभाव और प्रेम स्थापित किया था कि उतना अभी तक किसी आर्योपदेशकने किया है ऐसा नहीं कहा जा सकता। मुम्बईके पारसी, भाटिया, मारवाडी, खोजे आदि व्यापारी-समुदाय, डाक्टर, वकील, इंजीनियर, जज आदि सुशिक्षित समुदाय जिस प्रेम और विश्वासके साथ स्वामीजीके उपदेशको ग्रहण करते थे वह अवर्णनयि है; श्रीयुत सेवक लालजी कृष्णलालजी, डाक्टर कल्याणदासजी देसाई, हरिश्चिन्द्र तुळाजी, जेठाभाई प्रेमजी, सेठ लक्ष्मीदासजी J. P., डाक्टर सर भालचन्द्र कृष्णजी भाटवडेकर, न्यायमूर्ति रानडे, काशीनाथ त्र्यम्बक तेलङ्ग, सर नारायण गणेश चन्द्रावरकर, महामति श्रीमान् बहरामजी एम्. मलाबारी और अनेक मान्य सज्जन स्वामीजीसे निरन्तर पत्रव्यवहार रखते थे।

बम्बई आर्यसमाजके स्वामीजी प्रथमश्रेणीके मानाधिकारी सभासद थे। स्मरण रहे आर्यसमाज की स्थापना सर्व प्रथम बम्बईमें ही हुई थी। आर्य विद्यासभाके वे प्रधान थे और मुम्बई प्रान्तके गुरुकुलके सर्वस्व थे।

मुंबईप्रान्त और नगरसे स्वामीजीका घनिष्ट सम्बन्ध था, अतः पत्रव्यवहार भी अधिक यहींके सज्जनोंसे रहता था। बिहार और बंगालप्रान्तमें प्रचारके निमित्त स्वामीजी निरन्तर पूरे एक २ वर्षतक भ्रमण किया करते थे।

यहां रायबहादुर रलारामजी एग्जीक्यूटिव इंजीनियर E. B. S. Ry. बाबू महावीर प्रसादजी, सेठ जयनारायणजी पोद्दार, रामचन्द्रजी पोद्दार, शङ्करनाथजी पण्डित, आनरेबिल बाबू बालकृष्ण सहायजी आदि अनेक आर्य्य सज्जनोंसे स्वामीजीकी घनिष्ठता स्थापित हो गई थी।

उपर्युक्त सज्जन सदा स्वामीजीकी योग्यतासे लाभ उठाते थे और स्वामीजी इनकी सहायता और सहयोगसे अपने उद्देश की पूर्तिमें बहुत अधिक सुविधा पाते थे।

॥ ओ३म् ॥

स्वामीजी और राजपुताना और मालवाके आर्य सज्जन।

अन्तमें हम स्वामी श्री नित्यानन्दजीका सम्बन्ध राजपूतानेके आर्य्य सज्जनोंके साथ कैसा था इसपर प्रकाश डालते हैं।

वीरप्रसू राजस्थानकी भूमिमें ही श्री स्वामीजीने जन्मग्रहण किया था, हिन्दुओंके अन्तिम सम्राट् महाराजा पृथ्वीराजकी राजधानी अजमेर नगरमें ही आपने सर्व प्रथम परोपकारिणी सभाके अधिवेशनमें आर्य्यसमाजकी सेवा करनेकी घोषणा की थी और अपने अन्तिम समयमें भी राजस्थान ही की आर्य्यसमाजोंमें आपने विशेष प्रचार किया था।

महर्षि श्री स्वामी दयानन्दजीकी मृत्यु अजमेर नगरमें सं० १९४० विक्रमी में हुई थी। अजमेर आर्य्यजगत्में एक विशेष गौरवका आसन ग्रहण किये हुए है। जितना सामाजिक कार्य्य यहां होता दिखाई पड़ता है उतना अन्य स्थानोंमें नहीं होता। महर्षि श्री स्वामी दयानन्दजीकी सम्पत्ति वैदिक यंत्रालय यहींपर है, उनकी स्थानापन्न श्रीमती परोपकारिणी सभाका केन्द्र (Head quafer) यहीं है, एक डी. ए. वी. हाईस्कूल, दो आर्य्यकन्या पाठशालाएँ, एक अनाथालय, एक ब्रह्मचर्य्याश्रम, विधवाश्रम, परोपकारी औषधालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बोर्डिङ्ग हाउस आदि अनेक आर्यसंस्थाओंका संचालन यहां केवल आर्य्यसमाज और उसके सतत उत्साही सभासदोंद्वारा हो रहा है।

इन सब संस्थाओंकी स्थापना, वृद्धि और स्थितिमें श्रीस्वामी नित्यानन्दजी महाराज का भी थोडा बहुत हाथ था यह बात चरित्रके पाठकोंसे छिपी नहीं है। महर्षि श्री स्वामी दयानन्दजी के जीवन काल में और उनकी मृत्युके पीछे भी अजमेर प्रत्येक प्रकारकी सामाजिक स्फूर्तिका केन्द्र रहा है।

यहां के सुयोग्य आर्य्य सज्जन (जिनमें स्वर्गवासी मुंशी पद्मचन्द्रजी, बाबू शिवप्रसादजी, बा. मथुराप्रसादजी और बाबू रामबिलासजी शारदा आदि अग्रगण्य हैं, सदा सामाजिक कार्योंमें तत्पर रहे।

आर्य्य प्रतिनिधि सभा राजस्थानने जितना कार्य्य श्रीमान बाबू रामविलासजी शारदा के मंत्रित्व में रजवाडों और अन्यत्र वैदिक धर्मप्रचारार्थ किया उतना किसी और समयमें नहीं हुआ यह सत्य है।

इसमें श्रीमान् बाबू जी का निरन्तर परिश्रम, समय की उपज और उसका उपयोग, गम्भीरविचार उत्साह और त्याग आदि तो कारण हैं ही परन्तु श्री स्वामी नित्यानन्दजी महाराज का आप के साथ जो सहयोग रहा वह भी भुलाया नहीं जा सकता।

श्री स्वामीजी महाराज का श्रीमान् बाबूजी के साथ इतना गाढ प्रेम और विश्वास था कि वह शब्दोंमें प्रकट नहीं किया जा सकता।

स्वामी जी चाहे मद्रास में हो, चाहे बंगालमें, या कश्मीर में सारांश कहीं भी हों बाबूजीसे पत्रव्यवहार अवश्य रखते थे, बाबूजी के निमंत्रणपर कार्य्य करनेके लिये अपने अन्य सौ काम छोडकर चले आते थे।

स्वामीजीके साथ श्रीमान् बाबूजी का पत्रव्यवहार क्या है, आर्य्य समाजके तत्कालीन इतिहास का एक सच्चा और संक्षिप्त विवरण है।

आर्य्य समाजमें समाचारपत्रोंका अभाव तो वर्तमान में भी असह्य हो रहा है। आजसे १० वर्ष पूर्व तो और भी अधिक शोचनीय दशा थी।

उस दशामें बाबूजीके पत्रव्यवहारसे पता चलता है कि आर्य जगत्में कहां क्या हो रहा है इस की पूरी खबर बाबूजी रखते थे। और जो आवश्यक समझते थे उस की सूचना श्री स्वामी जी को देते रहते थे।

सिमलेमें रहनेके पूर्व स्वामी जी की सारी डाक स्थिररूप से बाबू जी की मार्फत आती थी।

बाबूजी के दिये हुए प्रोग्राम के अनुसार स्वामी जी को कार्य्य करना ही पडता था। प्रायः ऐसे अवसर बहुत आये हैं कि स्वामी जी अन्य आवश्यक कार्य्योंको छोडकर बाबूजी का तार या पत्र पाते ही लौट पडे हैं।

जिन दिनों आर्य समाजका वह भीषण घरू संग्राम जिसे मांस और घासका झगडा प्रसिद्ध किया जाता है चल रहा था। उस समय बाबू जी के ही द्वारा स्वामी जी को दोनों पक्षोंकी कार्य्य प्रणालियोंके सच्चे समाचार मिलते थे।

बाबू जी की ही सहायता और सहयोगसे स्वामी जी इस अग्नि को जो अधिकांशमें राजस्थान में भी फैल चुकी थी शान्त करनेमें समर्थ हुए।

यह कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं है कि जिन दिनों बाबूजी राजस्थान प्रतिनिधि सभा और आर्य्यसमाज अजमेरमें अधिकारी रूपसे कार्य्य करते थे तो अन्य समाजों और प्रतिनिधि सभाओंपर इतना गौरव था कि बाबूजीके निर्णयपर सबकी दृष्टि रहती थी और उसीका अनुसरण किया जाता था।

जिन चार सज्जनोंके शुभ नाम हम ऊपर लिख चुके हैं उन्हींके अनुपम त्याग और परिश्रमके कारण अजमेरको आर्य्य जगत्में यह प्रतिष्ठा प्राप्त हुई इसके कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं।

अधिक विस्तार न करके अब हम केवल श्रीमान् बाबू रामबिलासजी शारदाके १०—५ पत्रोंकी नकल यहां देते हैं। बाबूजीके कितनेही पत्र इतने सूक्ष्म और केवल संकेतोंके आधारपर लिखे रहते थे कि यदि उनको स्पष्ट करनेके लिये व्याख्या की जावे तो एक पृथक् पुस्तकका सामान होजाए। अतः यहां विस्तारभयसे इस कार्यसे हाथ खींचकर केवल ऐसेही पत्रोंकी प्रतिलिपि दी जाती है। जिनका आशय सहज ही समझमें आ जावे।

॥ ओ३म् ॥

२९—८—९४

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज

नमस्ते।

इन दिनोंमें आपका कोई कृपा पत्र नहीं आया, इसका क्या कारण है? आपके लेखानुसार सब कार्य्यवाही कर दी गई है सो ज्ञात होगी। × × ×

यह उचित समझा गया है कि समाजकी रजिस्ट्री करा ली जावे, जिससे किसीका साहस ही फिर न हो, इस कारण आपको परिश्रम दिया जाता है कि आप कृपाकर अपने सेवकों द्वारा दरियाफ़्त करके लिखें कि ब्रह्मसमाजकी रजिस्ट्री किस कानूनसे हुई—रानडे की राय भी इसमें ले लेवें और बम्बई समाजकी रजिस्ट्री किस कानूनसे हुई उसका एक मसविदा भी यदि हो सके तो भिजवा दें, बड़ी कृपा होगी। यह कार्य्य बड़ा ही आवश्यक है। बोर्डिङ्ग हाउसके लिए प्रबन्ध हो रहा है। और सब कार्य्य ठीक २ चल रहे हैं पर प्रेसमें गड़बड़ है और सभासद् लोगोंका विचार है कि इसके कार्य्यको छोड़ दें जिससे चित्तको खेद तो न हो, फिर परोपकारिणीके थोड़ेसे सभासद् जो इसको येन केन प्रकारसे बन्द करना चाहते हैं और झगड़ा डालते हैं चाहे वैसे करें विशेष मैं इस पत्रमें नहीं लिख सकता, जब आप पधारेंगे तब निवेदन करूँगा, रजिस्ट्री सम्बन्धी व अनेक कार्य्योंके लिए हमको बम्बई वालोंसे काम पड़ता रहेगा सो आप कृपा कर थोड़ेसे भद्र पुरुषोंसे परिचय करा दें ताकि सुगमता हो, सेठ लक्ष्मीदास खेमजीको मैं धन्यवादका पत्र लिखनेवाला हूँ कि उन्होंने आपको सहायता दी। अन्य २ भद्र पुरुषोंके नाम भी मुझको लिखें कि जो यदि मैं पत्र दूँ तो उसका उत्तर भी देवें। + + + + + + + + चौथा भाग भी निकल गया इसमें ऋग्वेदसे बकरे और घोड़ेको मारना सिद्ध किया है, और लालचन्द्र विद्याभास्करके नामसे छपा है— + + + + + आप कृपा करके अपने व्याख्यानों आदिके अन्य समाचार भी लिखें। और रजिस्ट्री व भद्र पुरुषोंसे पत्रव्यवहार करानेके विषयको न भूलें। लाला मुंशीरामजीका विचार सब प्रान्तोंके खासकर आर्य्य पुरुषोंकी एक कमेटी लाहोरमें उस समयपर जब कि गवर्नर जनरलका बड़ा दरबार होगा करनेकी है सो आपको अवश्य पधारना पड़ेगा। विशेष क्या लिखूं। उन्होंने आपके पधारनेकी आवश्यकता प्रगट की है और मेरी जिम्मेवरी की है। उत्तर शीघ्र देना। अपने राजस्थानसे ४ मनुष्य कौन २ जावें सो भी लिखना। सेठ लछीरामजी, व रा. रा. लक्ष्मीदासखेमजी व अन्य आर्य्य पुरुषोंको मेरा नमस्ते कह दें बाबू सुंदरलालजीसे भी नमस्ते कह दें और ओंकारलालजीसे भी

आपका कृपाकांक्षी

राम विलास सारदा

॥ ओ३म् ॥

१८-१०-९४

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज !

नमस्ते ।

कृपापत्र आपका आया, अति अनुगृहीत किया, क्या मेरे दो पत्र आपको हैदराबादमें नहीं मिले ? उनमें सब वृत्तान्त था, आपने वैदिक धर्मके लिए जो परिश्रम किया है वो सारी आर्य्य दुनिया जानती है आपकी अबकी कार्यवाहीने कुटिल नीतिवालोंको खूब नीचा दिखलाया आप कृपाकर नवम्बरमें लाहोर अवश्य पधारें मेरा भी विचार जानेका है, कई बातें आपसे कहनी हैं जो पत्र मैं नहीं लिख सकता + + + + + शाहपुराधीशजी आगरे में हैं। कोटा समाजने उपदेशक की आवश्यकता जाहिर की थी उस पर पं. भूमित्र शर्माको भेजा था, १० व्याख्यान उनके वहाँ हुए अब आनेवाले हैं—आर्य्यवर्त पत्रकी दशा ठीक नहीं है इसकी सहायता होनी चाहिए नहीं तो टूट जायगा । इस दौरेमें जो २ वैदिक धर्मके प्रेमी आपको मिलें उनका पता कृपा कर मुझको लिखते रहें कि समय पर काम आवें सबको नमस्ते ।

आपका कृपापात्र

रामविलास सारदा

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज नमस्ते ।

अजमेर ११-१२-९४

इन दिनोंमें आपकी विशेष कृपा रही कि ३ पत्र आपने लिखे इसका जितना धन्यवाद दूं थोड़ा है आपके पत्रोंके पढनेसे जो आनन्द मुझको हुआ वो लिखनेसे बाहर है । एक पत्र तो आपका गत रविवारको समाजमें पढकर सुनाया था, क्यों कि बह बड़ा उत्साहजनक और पबलिकके योग्य था, मैं पत्र देने में कभी सुस्ती नहीं करता हूं पर समाचार जरा संकोचके साथ लिखने पड़ते हैं । क्यों कि कई वारदातें मुझपर हो चुकी हैं। आपने लिखा कि प्रोग्राम भेज दिया सो यहां तो पंहुचा नहीं है परन्तु मैं जिन २ स्थानोंके नाम आपने लिखे पत्र अवश्य भेज दूंगा और यहां भी अच्छी तैयारी की जायगी, परोपकारिणीके अधिवेशनकी तिथि नियत तो हो गई परन्तु देखिये सफल होता है या नहीं यहां बोर्डिङ्ग हाउस खुल गया उसके समाचार ज्ञात हुए ही होंगे और सर्व कार्य्य पूर्ववत्

चल रहे हैं पंडित भूमित्र आजकल सुजाणगढ शेखावाटीमें उपदेश कर रहे हैं शायद वहां अच्छा समाज स्थापित हो जाय + + + + + आपने मांसके रगडे को शान्त करनेके लिये लिखा सो ठीकही है। सब लोक यही चाह रहे हैं परन्तु मुझको तो यह होता नहीं दिखता वरन बढता दिखता है। यहां एक सप्ताहसे खबर गरम है कि दूसरा समाज खुलेगा, यदि मांस भक्षणको जायज़मानलें तो सब झगडा निबटता है, परन्तु अन्य मत वालोंको तो मुँह दिखानेलायक फिर नहीं आर्य रहेंगे+ + + + + + आप जो२ समाजें स्थापित करते हैं उनकी व्यवस्था ठीक रखनेका आपने क्या प्रबन्ध किया है, आप जब तक उस प्रान्तमें हैं तब तक तो जोश रहेगा पीछे पूना समाजके समान सुस्त हो जायंगे सो आप प्रबन्ध अवश्य करें महाराजा साहबके पूरे२ टाइटिल्स आदि लिखकर भेजें। मैंने बंगलोर समाजको पत्र लिखा था उत्तर नहीं आया। इन दिनों पाठशालाको रावलजी व कुंवरजीने अच्छी सहायता दी है। प्रोग्राम नहीं आया शीघ्र भिजवावें देर न करें। यदि महाराजाके साथ कोई आर्यपुरुष हो तो उसका नाम लिखें ताकि सुभीताहो, प्राईवेट सेक्रेटरीका क्या नाम है, आर्यवर्तमें पत्रका तर्जुमा छपेगा। यदि व्याख्यानोंके विषयमें जो समाचार पत्रोंने छापा है वो पत्र भेज दें तो अति कृपा होगी। मेरे योग्य सेवा लिखते रहें।

आपका दर्शनभिलाषी
रामविलास

॥ ओ३म् ॥

अजमेर ४-५-९६

श्रीमान् स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज नमस्ते—

कृपाकार्ड आपका पहुँचा, मैं उसके पूर्वही लिख चुका था, कि आर्यवर्तका उस प्रान्तसे निकलना ही उत्तम है, यहां पहलेसे ही बहुत काम उठाये हुए हैं, और काम करनेवाले थोड़े हैं, यदि किसी प्रकारसे नागरीका पत्र कहींसे नहीं निकलेगा तो लाचार यहांसे निकालना पड़ेगा, क्योंकि बिना इसके काम नहीं चल सकता। आपको पूरा २ परिश्रम करना पड़ेगा, शायद अपील आपके नामसे ही करनी पड़े २०० ग्राहकोंके दाम पेशगी आजावें तो काम चल निकले कृपा कर लाला मुंशीराम व जमनादासजीसे कहकर किसी योग्य आदमीकी अरजी ३०) रु. मासिकवाली जगह पर शीघ्र भिजवावें। बड़ा हर्ज

हो रहा हैं, एक आदमी २०) मासिकपर जोधपुरके लिये चाहिये अंगरेजी व भाषा जाननेवाला हो, जमनादासजीने पत्रका उत्तर नहीं दिया, अंधकार हटता हटता हटेगा। गणपतसिंहजी अलमोडे गये। रेलपर मिले थे, आपका किधर जानेका विचार है। पंजाबके हाल लिखें।

आपका **रामबिलास।**

॥ ओ३म् ॥

अजमेर २९—६—९६

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज—नमस्ते।

आपके दो कृपा कार्ड प्राप्त हुए, बड़ौदेके समाचारोंसे आनन्द हुआ, जो त्योहारोंके विषयमें पूछा गया है सो बहुत कुछ तो आपको पहलेसे ही ज्ञात होगा। यदि उचित समझें तो त्यौहारमालानामी छोटीसी पुस्तकसे कुछ मदद लें। + + + + + यहांके सब कार्य्य उत्तमतासे चल रहें हैं, बोर्डिंग उन्नतिपर है लड़कोंकी संख्या बढ आनेके कारण मसूदारावजीकी लाल फाटकके पासवाली कोठी २५) मासिकपर ली है, आर्य्यवर्त अभीतक नहीं निकला इस कारण यहांकी समाजका विचार पत्र निकालनेका हुआ है, एक उपसभा इस कार्य्यके लिये नियत हुई है।

बा. मथुराप्रसादजीकी तबदीलीका शोक है परन्तु समाजको कोई हानि नहीं पहुँची है समाजकी हाजरी आजकल बढ रही है, ५ हप्तोंसे १०० के लगभग श्रोता हो जाते हैं। मांसप्रचारकोंने अपना समाज अलग खोल लिया है। + + वे डरते इतने हैं कि अपने विज्ञापन मर " अहिंसा परमो धर्मः " यह लिखा है। धोकेबाजी की पोल कबतक चलेगी? सीतलप्रसाद सेक्रेटरी और रघुवीरसिंह प्रधान हुए हैं। एक प्रकारसे अच्छा हुआ कि समाज रातादिनके रगड़ोंसे बची। वो अपनी उन्नति करेंगें और समाज अपनी, आप कृपा कर पंजाबके हालात लिखें, समाजोंकी क्या दशा है, होशियारपुरका क्या हाल है + + आपकी पुस्तकोंका पारसल अभी तक बम्बईसे नहीं आया, पुरुषार्थप्रकाशकी एक भी कापी पुस्तकालयमें नहीं है। ग्राहक लौट लौट जाते हैं। इसका कुछ प्रबन्ध करें, मेरीरायमें नई छपवाना आरम्भ कर दें। कृपाकर उत्तर शीघ्र दें। जलंधरका वृत्तान्त लिखें।

आपका दर्शनाभिलाषी
रामविलास सारदा।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर १६-११-९६

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज नमस्ते।

कृपापत्र आपका आया, अति अनुगृहीत किया। आपका यह लिखना ठीक है कि समाजके विरुद्ध जितने पुस्तक बने हैं उन सबका उत्तर छपना चाहिये। अब प्रश्न है कि इस कार्यको कौन करे और कैसे? आप जब अजमेर पधारेंगे तब इसपर पूरा २ विचार किया जायगा।

राजस्थान की समाजों को पुष्ट करने का जो आपने वादा किया है उस के लिये अनेकानेक धन्यवाद, धार समाज के दो पत्र आये हैं जिनमेंसे एक आप की सेवामें भेजता हूं। यदि वहां शास्त्रार्थ ठहर गया तो आप को कृपा कर ५-७ दिन के लिये जाना होगा। फिर आप लौट कर बडोदे आ सकते हैं। क्योंकि संन्यासीके मुकाबलेमें पंडितोंकी कदर कुछ नहीं होती है। यह काम आपके ही बूते का है यदि आप सहायता न देंगें तो समाज टूट जावेगा।

\+ + + + + + +

आपका कृपाकांक्षी

रामबिलास।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर ता. ३-११-९६

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज नमस्ते—

कृपापत्र आपका आया था, परन्तु मैं कई कार्य्योंमें फँसा हुआ था, इस कारण उत्तर न दे सका। कृपा कर क्षमा करना, धारसे पत्र आया है, मंत्रीने बडी घबराहट प्रगट की है, और अपनी नौकरी चली जाने और समाज टूट जानेकी संभावना लिखी है, इन सब बातोंपर विचार कर यदि आप वहां जाना स्वीकार करें तो कृपा कर उनको तार दे दें। खरचा सब प्रतिनिधिका होगा, यहां कल एक कायस्थ जो कोटेमें ईसाई हो गया था, बडी धूमधामसे शुद्ध किया गया ६०० व ७०० श्रोता थे, आप होते तो और भी आनन्द रहता और प्रसन्न होते गणपतसिंह जी को नमस्ते कह दें। पंडित हमीरमलजी यहां आये थे। आप धार से यहां सीधे पधारें तो सब कुछ ठीक हो जावे।

आपका कृपाकांक्षी

रामबिलास सारदा।

॥ ओ३म् ॥

ता. ९–१–९७

मान्यवर स्वामीजी ब्रह्मचारीजी महाराज नमस्ते—

कृपा कार्ड आपका आया, अति आनन्द हुआ । इस के पूर्व आप की सेवामें दो पत्र नीमचके पतेपर भेज चुका हूं । कृपाकर इनका सविस्तार उत्तर प्रदान करें। आपकी तथा आपके विद्यार्थीकी बहुत सी डाक नीमच भेजी थी, अब उदयपुर भेजा करूंगा । कृपा कर उदयपुर समाजकी दशा ठीक करनेका यत्न करें। समाजें ठीक रहीं तो सब कुछ है नहीं तो थोडे दिनोंमें इतिश्री समझें । जब आप उदयपुरसे इधर पधारनेका विचार करें तो मुझसे अवश्य मिल जावें । कई बातें आप से कहनी हैं जो पत्रमें नहीं लिख सकता ।

आपका कृपाकांक्षी
रामविलास सारद ।
मंत्री
आर्य्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान ।

॥ ओ३म् ॥

सं. ५३ ता. २७ जनवरी ९७

मान्यवरजी नमस्ते—

कृपा कार्ड आप का आया, अति अनुगृहीत किया । इस पत्र के साथ एक पत्र जो ग्वालियरसे आया है सेवामें अवलोकनार्थ भेजता हूं । कृपा कर इस पर विचार करें । मेरी रायमें आपको इस स्थानपर पधारना चाहिए + + + + अजमेर समाज का उत्सव करके आप पधारें और अपने साथ एक तथा दो मनुष्य मास्टर वजीरचन्द्रजी आदि को भी ले जावें वे आप की आज्ञानुसार इधर उधर लोगोंसे मिलकर खूब कार्य्य करेंगें । यदि हो सके तो कोई पत्र भी बडौदे और बम्बई से मंगवा लें विशेष क्या लिखूं आप स्वयं सब जानते हैं । सामाजिक कार्य्य बदस्तूर है ।

आपका कृपाकांक्षी
रामविलास शारदा ।
मंत्री आर्य प्रतिनिधि अजमेर ।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर ३--२--८७

महाराज नमस्ते ।

आजकी डाकसे मुलतानसे आई हुई चिट्ठी भेजता हूं । उन लोगोंने उसके लिए बड़ी ताकीद की है, ऐसे अवसर पर आपको उनकी सहायता करनी चाहिए। वहां के आदमी बड़े श्रद्धालु और सच्चे आर्य्य हैं। उनकी हिम्मत बढ़ाना चाहिए × × × × विशेष क्या लिखूं ? उनकी सहायता अवश्य करें यहां योग्य सेवा लिखें ।

आपका रामविलास सारदा ।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर १८--२--९७

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी नमस्ते—

कृपापत्र आपका आया वृत्त ज्ञात हुआ, उस स्थान पर अजमेरके उत्सवके पश्चात् आपका पधारना अत्यावश्यक है । नैपालके कमान्डर इन चीफ यहां ठहरे हैं उनसे भी आपकी बात चीत हो जायगी, और आपसे एक आवश्यक विषय पर वार्तालाप करना है इस लिए आपका प्रथम अजमेर में पधारना आवश्यक है और लाभदायक है। आप अजमेरका उत्सव करके फौरन पधार जावें । जो आवश्यक बात है वो मैं पत्र में नहीं लिख सकता । मिलने पर निवेदन करूंगा । सबको नमस्ते कह दें । उदयपुरसे कौन २ महाशय पधारेंगे आना अवश्य चाहिए ।

आपका कृपाकांक्षी
रामविलास सारदा ।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर २२--३--९७

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी नमस्ते ।

आपका कृपा कार्ड प्राप्त हुआ, वृत्त ज्ञात हुआ, यह पढ़ कर अत्यन्त शोक प्राप्त हुआ कि राहदारीके कारण आपको नेपालसे पीछे लौटना पड़ा और आपको व्यर्थ कष्ट उठाना पड़ा । पंडित लेखरामजीकी मृत्युपर शोक प्रकट करनेको यहां सभा हुई थी जिसमें चन्दा अनुमान ३००) के हो गया है। कुछ

हीं दिवस पहले वार्षिकोत्सवपर ५००) रु. का चंदा हुआ ही था। तो भी यहांके महाशयोंका उत्साह सराहनीय है। ठाकुर साहब जोबनेरने भी १००) देनेका वादा किया है। जोधपुर, शाहपुरमें भी चंदा हो रहा है। इससे प्रतीत होता है कि राजस्थान में भी अच्छी सहायता हो जावेगी आपने पुस्तक बनाकर बडौदे भेजी या नहीं ? शिमला जानेके बदले यदि आप ग्वालियर पधारते तो ठीक था।

आपका रामविलास सारदा।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर २९।५।९७

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज नमस्ते।

इन दिनोंमें आपका कोई कृपापत्र नहीं आया, इसका क्या कारण है, आशा है कि ईश्वरकी कृपासे सब प्रकार कुशल होंगे, आपके लेखानुसार आपकी डाक तो सब भेज ही देता हूं आशा है कि आपके पास सब पहुंचती होगी, पाठशालाका डेपुटेशन जोधपुर गया था महाराजा प्रतापसिंहजीने बड़ा प्रेम प्रकट किया। विलायत जानेकी तैयारीके कारण १००) डेपूटेशनको मार्ग-व्ययही मिला, विशेष सहायताके लिये विलायतसे पीछे आकर देनेकी प्रतिज्ञा की है। आपके लिये ग्वालियर धार देवास आदिसे बुलानेके पत्र आते हैं मेरी सम्मतिमें ग्रीष्म न्यून होने पर ग्वालियर पधारना अत्यन्त उपयोगी होगा, सामाजिक समाचार सामान्य हैं। ग्वालियर अवश्य पधारें। मौके हाथसे न जाने दें। यहां योग्य सेवा लिखें।

आपका कृपाकांक्षी
रामविलास सारदा।

॥ ओ३म् ॥

२९।१०।०२

मान्यवर स्वामीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज नमस्ते।

कृपापत्र आपका आया, समाचार पढ अति हर्ष हुआ, मैं तो निवेदन कर चुका हूं कि जब आप दिल लगाकर प्रचार करेंगे तो अवश्य उत्तम फल निकलेगा। आपने इस फूँके हुए जोशको कायम रखनेके लिये क्या उपाय सोचा है क्या आर्य्यसमाज स्थापित हो सकता है या अन्य व्यवस्था हो सकती है ? क्योंकि प्रायः देखा गया है कि, आप इतना परिश्रम करके जोश फैलाते

हैं परन्तु थोड़े दिनोंके पश्चात् लोग शान्त हो जाते हैं। कृपा कर कुछ सोचें। मेरी रायमें यदि आप उचित समझें तो माइसोरको फिर संभालें और ट्रावनकोर के राजाओंको भी ठीक करें। यदि यह सम्भव नहो तो आप राजगढ़को हाथमें लें, ग्वालियरमें धर्मप्रचारका कुछ यत्न करें।

यहां आपकी कृपासे सब कार्य्य पूर्ववत् चल रहे हैं। अनाथालय उन्नति पर है। २४० अनाथ हैं। हाकिम लोग बड़े प्रसन्न हैं। स्कूलका इनाम गत मंगलको कमिश्नरसाहबने बांटा था, सब बड़े २ आदमी जलसेमें आये थे।

पंड्या मोहनलालजीने २७ दिसम्बरको दिल्लीमें परोपकारिणी करनेका विचार किया है क्योंकि रायमूलराजनी वहीं है परन्तु मुझे यह होती हुई नजर नहीं आती। क्योंकि नियमविरुद्ध है, इसके अतिरिक्त सर्व साधारणके लिये ऐसे अवसरपर मकान आदिका प्रबंध नहीं हो सकता। यहां योग्य सेवा लिखें।

आपका

रामविलास सारदा।

पाठक! स्थानका संकोच लेखकको अब अधिक अवतरण न देनेको बाध्य कर रहा है। श्रीमान् बाबूजीका एक २ पत्र कितना संक्षिप्त और सारगर्भित है वह आप जानही चुके। स्वामीजी की मृत्युपर भी सर्व प्रथम स्वामीजीका एक परोपकारी स्मारक स्थापित करनेका प्रस्ताव बाबूजीनेही किया था। इस सबन्धमें जो पत्र श्रीमान् स्वामी श्री विश्वेश्वरानन्दजी महाराजकी सेवामें बा-बूजीने भेजा था वह ओर उद्धृत कर हम इस प्रकरणको समाप्त करते हैं।

॥ ओ३म् ॥

परोपकारी औषलालय

अजमेर ता ११-१-१४

श्रीमान् स्वामीजी महाराज नमस्ते।

हम इस औषधालय कमेटीके सब सभासद श्री स्वामी नित्यानन्दजीकी मृ-त्युपर शोक प्रकाशित करते हैं। आप स्वयं हमारे उपदेशदाता हैं अतः हम आपको विशेष क्या निवेदन करें? विपत्तिमें धैर्य्य धरनाही विद्वानोंका कर्तव्य है। इस सभाके प्रस्तावकी प्रतिलिपि इस पत्रके साथ प्रेषित करता हूं। उक्त स्वामीजीके स्मारकके लिये आज की सभामें ४०० का चंदा होगया है।

आपका कृपाकांक्षी रामविलास शारदा।

प्रधान

पाठकोंको सूचनाके लिये जिस प्रस्तावका उल्लेख इस पत्रमें किया गया है उसकी प्रतिलिपि भी यहां दी जाती है। कहना नहीं होगा कि इस भवनका एक अंश तयार भी हो गया है और परोपकारी औषधालय वर्तमानमें उसीमें है।

॥ ओ३म् ॥

श्रीमान् स्वामी नित्यानन्द सरस्वतीजीकी

यादगार।

नित्यानन्द परोपकारी भवन।

परमपदप्राप्त श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराजने जो सेवा सारे देशकी—विशेष कर आर्य्यसमाजकी की है वह किसी से छिपी नहीं है। यह हमारा अभाग्य है, कि ऐसा विद्वान्, योग्य व मधुरभाषी उपदेशक, नीतिज्ञ वक्ता व दिव्यमूर्त्ति संन्यासी इतनी शीघ्र विना अपना कार्य्य सम्पूर्ण किये के ही हमारे में से उठ जावे। भारतजननी जितने आंसू अपने इस चमकते हुए लाल के लिये बहावे; थोड़े हैं, परन्तु कर्म की गति बलवान् है, जो होना था वह तो हो ही गया, अब केवल रोने से क्या है अब हमारा कर्त्तव्य है कि इस महान् पुरुषकी याद में, जिसने अपनी सारी आयु देशसेवा में व्यतीत की अपनी कुछ कृतज्ञता प्रगट करें। प्रशंसनीय स्वामीजी वैद्यकविद्या के बड़े प्रेमी व सहायक थे, जब २ अजमेर में पधारते थे तब २ श्रीमान् वैद्य रामदयालुजी के औषधालय को अवश्य अवलोकन करते थे और अपनी प्रसन्नता प्रकट किया करते थे, जब से दीन दुखिया निराश्रित लोगोंके दुःखों को दूर करने के लिये परोपकारी औषधालय स्थापित किया गया और इस द्वारा सेवकमण्डली बनाकर ऐसे २ रोगोंमें (जैसे निमोनिया आदि) जहां रात्रि दिवस बीमार की निगरानी व ठीक ढंग व समयपर औषधि देनेकी अत्यन्त अवश्यकता होती है विचार प्रकट किया तो स्वामीजी ने बहुत पसन्द किया और अपनी सहानुभूति प्रकट की, शोक कि उक्त स्वामीजी का देहान्त ऐसे ही रोग (निमोनिये) से अकस्मात् हुआ है, इसलिए इससे बढ़कर और उनका क्या स्मारक हो सकता है कि परोपकारी औषधालय एक भवन तय्यार करे, जहां उक्त सेवकमंडली तय्यार

की जावे । इसके अतिरिक्त स्वामीजी महाराज का अजमेर के साथ खास सम्बन्ध रहा है यह अजमेर उनके आचार्य्य स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी के परमपद प्राप्त करने का स्थान है यह वह स्थान है । जहां उन्होंसे आर्य्यसमाज की सेवा करने की प्रतिज्ञा भी श्रीमती परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन के समय कराई गई थी और जिसको उन्होंने और उनके योग्य गुरु श्री० स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी ने पूरी २ निभाई, अब सर्व्व देशभक्तों व स्वामीजी के प्रेमी सज्जनों व पबलिक से निवेदन है कि इसके लिये दिल खोलकर सहायता देवे ताकि शीघ्र ही "नित्यानन्द परोपकारी भवन" तय्यार हो जावे, जिसमें सेवकलोक बीमारों की किस प्रकार देखभाल व सेवा करनी चाहिए इस विद्याको प्राप्त करके सर्व साधारण के उपयोगी हों । इस कार्य्य के लिये कम से कम १००००) **रुपये की आवश्यकता होगी** । श्री० स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज के इस असह्य दुःख में जो उनको अपने इकलोते सपूत शिष्यके वियोग से हुआ शरीक होते हुए निवेदन है कि वह इस स्मारक के कार्य्य में इस सभा को पूरी २ सहायता देंगे और इसको सम्पूर्ण करवा देंने ।

निवेदक—

रामविलास शारदा म्यूनीसिपल कमिश्नर अधिष्ठाता परोपकारी औषधालय.
लादूराम ठेकेदार प्रधान परोपकारी औषधालय.
कन्हैयालाल बी. ए., एल० टी. मन्त्री परोपकारी औषधालय.
जगरूप उपमन्त्री परोपकारी औषधालय.
नथमल तिवाड़ी क्लर्क लोको सुप्रिंटेंडेंट्स आफिस.
सुगनचन्द्र नाहर ट्रेवेलिङ्ग इन्सपेक्टर ऑफ अकाउंटस.
मिट्ठनलाल भार्गव बी. ए., एल एल. बी. वकील.
गौरीशङ्कर बी. ए. बैरिस्टर एट-ला.
चुन्नीलाल गुप्त क्लर्क आडिट आफिस.
हरिश्चन्द्र त्रिवेदी मैनेजर वैदिक-मन्त्रालय.
राधेलाल (मास्टर) गवर्नमेण्ट हाईस्कूल.

परोपकारिणी सभाके जिस अधिवेशनमें श्रीस्वामी महाराजने आर्य्यसमाजकी सेवा करनेकी प्रतिज्ञा की उसमें स्वामीके भाषणके वास्ते श्रीमान् पंडित हमीर-

मलजी शर्माने कितना उद्योग किया था उसका वर्णन जीवन चरित्रमें यथा स्थान आ चुआ है। पाठकोंको यह भी ज्ञात है कि जब श्रीस्वामीजी महाराज सर्वप्रथम शाहपुरा पधारे थे तब ही से श्रीमान् पंडित हमीरमलजीसे परिचय और अत्यन्त स्नेह हो गया था, यह स्नेहभाव स्वामीजी महाराजके जीवन-पर्यन्त उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया और श्रीस्वामी विश्वेश्वरानन्द जी महाराजसे भी उसी प्रकारका सम्बन्ध चला आ रहा है। श्रीमान् पंडितजीके सुपुत्र श्रीमान् पंडित रामचन्द्रजी शर्मा इन्जीनियरके नामसे आर्य्यजगत् भली भांति परिचित हो चला है। आपकी विद्वत्ताके विषयमें इतना ही कहना अलंग होगा कि गत दो वर्षोंसे गुरुकुल वृन्दावनके उत्सवोंपर आप जो व्याख्यान सन्ध्याके मंत्रोंके अर्थोंपर व्याख्यासहित दे रहे हैं उनकी प्रशंसा वैदिक साहित्यके विद्वानोंनें एक स्वरसे की है।

आप भी श्रीमान् पंडित हमीरमलजी शर्माके समान श्रीमान् स्वामी जी महाराजकी सहायता करनेको रात्रिन्दिवा तत्पर रहते हैं।

श्रीमान् स्वामी नित्यानन्दजी महाराजकी मृत्युके पश्चात् तो आपने उनके छोड़े हुए प्रत्येक कामकी पूर्ति करनेके लिए श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज की आज्ञा पालन करना अपना परम कर्तव्य समझ लिया है।

श्री पंडित शिवशङ्करजी काव्यतीर्थके सम्पादनमें वैदिककोषका कार्य्य आपके ही निवास स्थान पर होता रहा है। और अब भी वैदिक कोषसम्बन्धी समस्त पत्र आपही की रक्षामें है।

पुरुषार्थ प्रकाशकी तीसरी आवृत्ति भी आपके ही प्रबन्धसे छपी।

सारांश आप हर तरहसे स्वामीजीके मिशनकी पूर्तिमें तत्पर हैं।

पाठक अनुमान कर सकते हैं कि ऐसी दशामें इनके पत्र कितने अधिक होगें परन्तु हम तो संक्षेपमें परिचय देनेको बाध्य हैं। अतः केवल ५ पत्रोंकी नकल यहां दी जाती है।

॥ ओ३म् ॥

शाहपुरा ता. ९-१२-९४

श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामीजी महाराज श्री १०८ श्री विश्वेश्वरानन्दजी व ब्रह्मचारीजी महाराज श्री १०८ श्री नित्यानन्दजीकी सेवामें साविनय नमस्ते ज्ञात हो।

तदनन्तर प्रार्थना यह है कि इन दिनों कुशल पत्र आपका कोई आया नहीं मगर एक पत्र आपका श्रीमानोंके पास आया, आपने जो समाजके हाल लिखे उसको दृष्टिगोचर करके श्रीमानोंने आज्ञा दी कि स्वामीजीको धन्यवाद पत्र लिख दो, क्यों कि ऐसे स्थान पर जाकर समाज स्थापित की और आज्ञा दी हैं कि स्वामीजीसे प्रार्थना करो कि "राजधर्मप्रकरण" की कापियां जितनी बनी हों उतनी ही अवलोकनार्थ भेजियेगा, और बाकी आगे भी कोशिश करते रहियेगा, और कृपा करके हैदराबादके हाल लिखियेगा यानी जो लेख मित्रविलासने लिखा है सो कहां तक ठीक है और यदि हो भी गई हो तो क्या हर्ज है। आप परोपकारी हैं और अब आप वहां कबतक विराजेंगे। सुननेमें आया है कि महीशूराधीश अजमेर इलाहाबादकी तरफ पधारेंगे, आप भी साथ पधारेंगे या नहीं × × × ×

भवदीयानुचरानुचर

हमीरमलशर्मा।

॥ ओ३म् ॥

शाहपुरा १३–११–९७

श्रीमान् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामीजी महाराज श्री १०८ विश्वेश्वरानन्दजी, व ब्रह्मचारीजी महाराज श्री १०८ श्री नित्यानन्दजी महाराजकी सेवामें सविनय नमस्ते ज्ञात हो।

पत्र आपका आया और श्रीमानोंके कर्णगोचर सब समाचार कर दिये गये। आलारामके विषयमें श्रीमानोंने फर्माया कि महाराजको लिख दें कि समाजोंके बागी न होनेके तो कई सबूत हैं। जैसे प्रथम तो जोधपुरसमाजके प्रधान महाराज प्रतापसिंहजीकी, व शाहपुरा समाजके राजाधिराजकी भक्ति बृटिश सरकारके साथ कैसी है सो सब हिन्दमें प्रसिद्ध है और अन्य २ समाजोंके सभापति जैसे मूलराजजी M. A. और बाबू दुर्गाप्रसादजी आदि कितनेक महाशय सरकारके साथ कैसी खैर ख्वाही रखते हैं और समाजकी किताबें वह उसूलसे भी जाहिर है कि समाजोंकी भक्ति सरकारके साथ कैसी है और भी दृष्टान्त मौजूद हैं कि अजमेरमें श्रीमद्दयानन्द स्कूलके छात्रोंको जब २ इनाम मिला तब कमिश्नर मारटंडेल साहबने अपने हाथोंसे ही इनाम तकसीम किया, और व्याख्यान देकर समाजके उत्साहको बढाया, और जब मारटंडेल साहब

जोधपुर तशरीफ ले गये और यहां की समाजने वहां डेपुटेशन भेजा तब भी साहब मौसूकने मदद दी और अजमेरमें भी उन्हीं साहबने रेलवे कम्पनीसे छे सो रुपये सालानाकी मदद दिलवाई। यदि समाजें बागी होती तो उक्त कारवाइयां साहबबहादुर क्यों करवाते? और जो यहां लायक विशेष कार्य हो शीघ्र लिखें।

आपका
हंभीरमल शर्मा।

॥ ओ३म् ॥

शाहपुरा २२-५-९८

श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामीजी महाराज श्री १०८ श्री विश्वेश्वराचन्दजी तथा ब्रह्मचारीजी महाराज श्री १०८ श्रीनित्यानन्दजीकी सेवामें सविनय नमस्ते ज्ञात हो।

तदनंतर निवेदन यह है कि आपका कोई पत्र कई दिन हुए वांकानेरमें हस्त गत न हुआ और ता० ११ को यहां आने पर भी तलाशकी तो मालूम हुआ कि आपका कोई कुशल समाचार नहीं आया। सो क्या कारण है। हम लोगोंको चिन्ता है, कृपया शीघ्र कुशल समाचारोंसे विज्ञ कीजियेगा।

श्रीमान् मय दोनों महाराज कुमारोंके इस माहके शुरूसे आबू विराजते हैं और अभी अच्छी बारिश होनेतक विराजेंगे। और सब कुशल क्षेममें हैं और श्रीमानोंने बड़े लड़केके वास्ते रुड़की ओवरासियरी सीखने का हुक्म दिया है। सो यदि आप कर सकें तो कोई उचित प्रबन्ध करें और इस काममें मदद दें। और एक दफा आपने फरमाया था कि अथर्ववेद पर भाष्य हो गया है सो श्रीमानोंने आज्ञा दी है कि उसका पता व कीमत दर्याफ्त करो। इस लिए निवेदन है कि आप कृपा करके उसका तथा छओं शास्त्रोंके भाष्योंकी अलग २ कीमत तथा मिलनेका पता लिखियेगा × × × × ×

भवदीयानुचरानुचर
हमीरमलशर्मा

॥ ओ३म् ॥

शाहपुरा १४-१-९९ ई०

श्रीमान् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामीजी महाराज श्री १०८ श्री विश्वेश्वरानन्द सरस्वतीजी व ब्रह्मचारीजी महाराज श्री १०८ श्री नित्यानन्जी की सेवामें सविनय नमस्ते ज्ञात हो।

तदनंतर प्रार्थना यह है कि दासने श्रीमानोंसे प्रार्थना की तो हुक्म दिया है कि एक ग्राम खीचन धर्मशालाके ताल्लुक है, वह स्वामीजी महाराज अपने अधिकार में ले लें और सदावर्त बांटते रहें। और एक नया तलाव नामक ग्राम खाकखीका है ७०० बीघा जमीन है सो यह भी खरीदलें ऐसा फर्माया है + + + + + + और श्रीमानोंने यह भी हुक्म दिया है कि यहां की समाज आपहीके अधिकार में रहे यानी १०० महावार जो समाजके है वह भी आपहीके अधिकारमें रहेगा और फर्माया है छापाखाना भी अपनी तरफ से खोलदें * *

आपका
हमीरमलशर्मा।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर-१३-६-१०

श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामीजी महाराज श्री १०८ श्री विश्वेश्वरानन्दजी व ब्रह्मचारीजी महाराज श्री १०८ श्री नित्यानन्दजीकी सेवामें सविनय नमस्ते।

आगे निवेदन यह है कि चिरकालसे न शुभ दर्शन हैं न कृपापत्र है सो ऐसी स्वकृपाका पात्र तो नहीं हूं।

आपको विदित होगा कि आपके दो बालक एक कनिष्ट पुत्र व एक पौत्र ८ वर्षकी अवस्थाको प्राप्त हो गये हैं—अब समयका व शिक्षाप्रणालीका वहुत परिवर्तन होगया है व इससे भी विशेष होनेवाला है अतः आपसे प्रार्थना है कि इनके लिये धर्म व अर्थ दोनों साधनेवाली शिक्षा किस प्रकारकी हो सकती है और कहां मिल सकती है यह कृपा कर आज्ञा करावें। आज

कलकी स्थितिमें साधारण मनुष्योंके लिये यह जान लेना अति कठिन है कि बालकोंके लिये गुरुकुलकी शिक्षा लाभदायक है वा स्कूली तालीम ही ठीक है, दूसरे गुरुकुलकी शिक्षा लाभदायक है तो कौनसा गुरुकुल विशेष अनुकूल होगा इत्यादि ।

अहो भाग्य है कि आर्यसमुदायके विद्वन् मंडलके परम योग्य शिरोमणियोंकी कृपा है फिर क्या कठिनता है—आप कृपा करके सब स्थितिका विचार कर उचित व उपयोगी सम्मति देवें । दूसरा निवेदन यह भी है कि बम्बई प्रान्तमें गुरुकुल कब खुलनेवाला है । और उसके स्थानके लिये क्या सावरमती अहमदाबादकी आशा कर सकते हैं क्यों कि यह स्थान राजस्थान प्रान्तको भी अनुकूल होगा, और इस स्थानके लिये मेरी निजकी अभिलाषा विशेष है।

गुरुकुलकी शिक्षाकी यद्यपि सब कोई प्रशंसा करते हैं पर गुरुकुलके पढे हुओंका भविष्य जीवन किस प्रकारका होगा किस प्रकारसे उनका निर्वाह होगा इन बातोंका अनुमान नहीं बांध सका हूं। सो कृपया इन संशयोंकी निवृति भी करावें । आजकल यद्यपि संस्कृत भाषाका प्रचार कुछ भी नहीं हुआ है, तब भी नोकरीके लिये पंडित लोग भटक रहे हैं।

श्रीमती परोपकारिणी सभाके आगामि अधिवेशनका स्थान व समयका प्रयाग व बड़े दिनोंका प्रस्ताव कर श्रीमान् मंत्रीजीने सभासदोंकी सम्मति माँगी है । सो निश्चित होनेपर निवेदन करूँगा । आशा करता हूँ कि इस बृहत् अवसरपर आपका तथा श्रीमान् शाहपुराधीशजीका तो वहां पधारना होवेगा ही, पर ईश्वरकृपासे यदि मैं भी हाजिर हो सका तो यथाशक्य सेवाका प्रयत्न करूँगा ।

शंकर शर्माका सविनय
प्रणाम ज्ञात हो ।

श्रीमानोंका
उत्तराभिलाषी दास
हमीरमल शर्मा ।

श्रीमान् स्वामीजी महाराजकी मृत्युपर जो शोककी घटा श्रीमान् पंडीतजीके कुटुम्बमें छा गई उसका अनुमान इस पत्रसे पाठक कर लें ।

॥ ओ३म् ॥

अजमेर ।
९-१-१४

श्रीमान् स्वामीजी महाराज–सविनय प्रणाम ।

अन्नदाताजी आज किसका मुँह देखा, कैसा दिन उगा, सारे घरमें अंधकार छा गया ।

हाय चाहते हैं आपको धीरज देना और हमारा धीरज छुटा जाता है ।

हे प्रभो ! हे नाथ ! ! क्या ये दिन अभी देखनेको था, हाय अभी कल तो हमको छोड़कर अहमदाबाद गये थे, हाय वो वादे कब पूरे होंगे कि "शर्मा लौटते हुए तुमसे मिलेंगे ।"

हाय ! उनके वो निमंत्रण कि "अबके गर्मीमें शिमला आना" हृदयको काटें डालते हैं । हे स्वामिन् ! ये क्या हो गया ? एकदम किधर सूर्य्य अस्त हो गया? हे भगवन् धैर्य्यके सिवाय अब और कुछ चारा है । हे स्वामी ! हम तो रोयेंगे ओर फिर रोयेंगे पर आप ज्ञानी हैं आप त्यागी हैं आप साधु हैं बस क्या विशेष "ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो"

आपके सेवक
आपके बाल बच्चे
हमीर मल ।
रामचन्द्र ।
रामचन्द्रकी माता ।

राजस्थान प्रान्तके प्रत्येक स्थानसे स्वामीजीका ऐसा सम्बन्ध था मानों स्वामीजी वर्षोंसे वहीं निवास करते हों । अजमेरमें श्रीमान् मास्टर कन्हैयालालजी B. A. L. S. पंडित वंशीधरजी शर्मा M. A. L. L. B. श्रीमान् गौरीशंकरजी B. A. Bar-at-law, श्रीमान् बाबू हरविलासजी शारदा B. A. M. R. A. S. Hindu Superiority, History of Ajmer, Maharana kumbha, आदि विश्वप्रशंसित ग्रन्थोंके रचयिता,श्रीयुत केशवदेवजी गुप्त आदि

अनेक सज्जन स्वामीजीको अत्यन्त प्रिय थे। अजमेरमें स्वामीजी घंटों इन सज्जनोंसे धार्मिक सामाजिक और देश उन्नतिके विषयोंपर वार्तालाप और विचार करते रहते थे। पत्रव्यवहार भी यथावसर होता ही था। भरतपुरके डाक्टर सुखदेवजी वर्मा, बा. महेशस्वरूपजी, बा. हीरालालजी, आर्य्यमित्र सभाके समस्त सभासद स्वामीजीके सेवा करनेके प्रत्येक अवसरकी प्रतीक्षा उत्कट अभिलाषासे करते रहते थे।

जयपुरके श्रीमान् ठाकुर नन्दकिशोर सिंहजी member the Council बाबू रामलालजी आदि सज्जन स्वामीजी के प्रति कितने श्रद्धालु थे इसका वर्णन चरित्रमें आही चुका है।

नसीराबाद के ठाकुर हीरासिंहजी, डाक्टर ओकारसिंहजी, नींवाज स्टेट के मैनेजर बाबू गणेशनारायणजी सोमाणी B. A. नीमच के सेठ मांगीलालजी और फूलचंदजी, उदयपुर के श्रीमान् ठाकुर जगन्नाथ सिंहजी, बाबू रामनारायणजी, और सुगनचंदजी आदि अनेक सज्जन स्वामी जी के अत्यन्त भक्त थे और प्रत्यक्ष और पत्रद्वारा अपनी २ धार्मिक पिपासा तृप्त करने का यत्न करते रहते थे।

धार और देवास की समाजें तो अपना जीवन ही स्वामीजीके उपदेशोंके प्रभाव से स्थिर रख सकी हैं। इन्दोरमें भी स्वामी जी के कम भक्त नहीं थे।

हां इन्दोरमें वे अनन्य भक्त थे जिन्होने स्वामी जी के देहत्याग का समाचार पाते ही शोक में व्याकुल होकर अन्न जल त्याग दिया और तीसरे ही दिन स्वामीजीका अनुसरण किया उनका शुभ नाम (पाठक भूले नहीं होंगे) था.

श्रीमान् डाक्टर गोविंदरावजी चास्कर।

इनके अतिरिक्त पंडित शंभूदयालजी आदि अनेक सज्जन थे जो स्वामीजी महाराज के अत्यन्त भक्त थे।
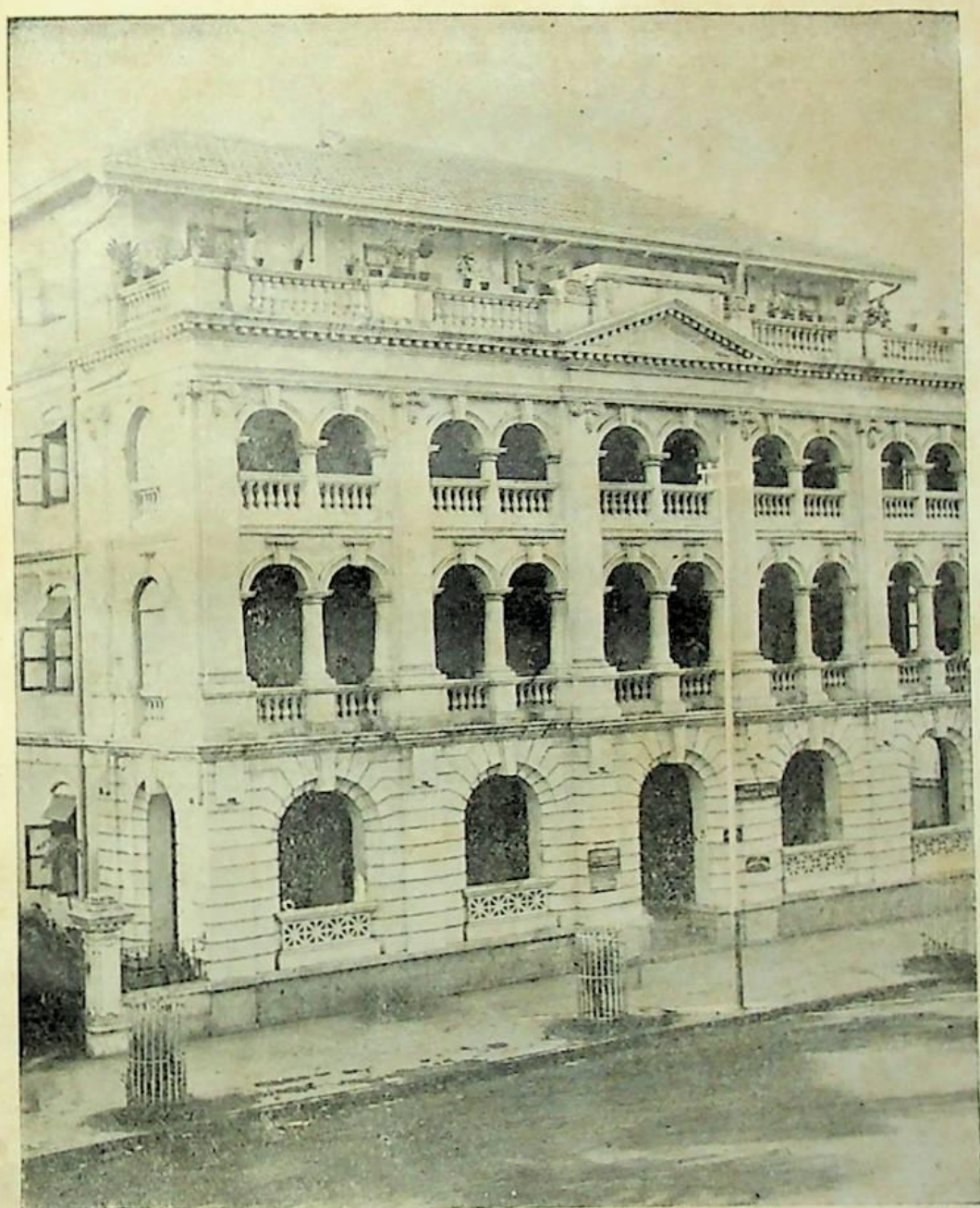
श्री नित्यानंद फ्री रीडींग रुम एन्ड लायब्रेरी–आर्य भवन

nesium complicating Crohn's disease of the small intestine and colon, includ-
ing, in one instance, life-threatening neurological manifestations. The
symptoms included nervousness, irritability, aggressive behavior, paresthesias,
muscular weakness, fatigue, vertigo, hallucinations, confusion and stupor.
The clinical signs of magnesium depletion involved unusual hyper-reactiveness

HYPOMAGNESEMIA COMPLICATING REGIONAL ENTERITIS. Gerlach, K. & Kirsner, J.B.*, Department of Medicine, University of Chicago, Chicago, Illinois, U.S.A.

Symptomatic hypomagnesemia may accompany many disorders of the gastro-